नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरुभ्यो नमः

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

भाग 09



आगम - ५

'भगवती' मूलं एवं वृत्तिः [२]

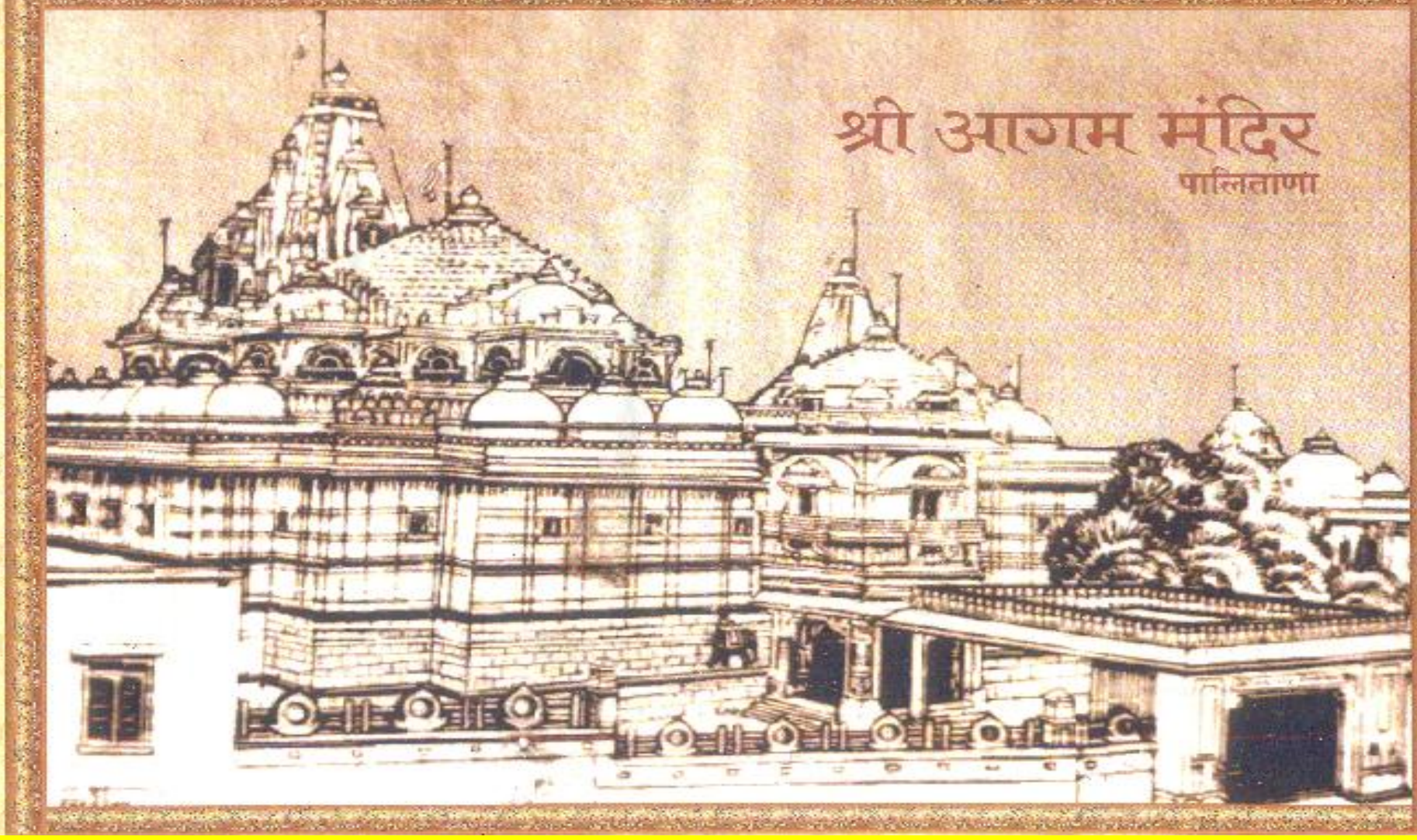
मूल संशोधक :- पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

अभिनव-संकलनकर्ता :- आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

पूज्य शासनप्रभावक आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से

'वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था' पालिताणा

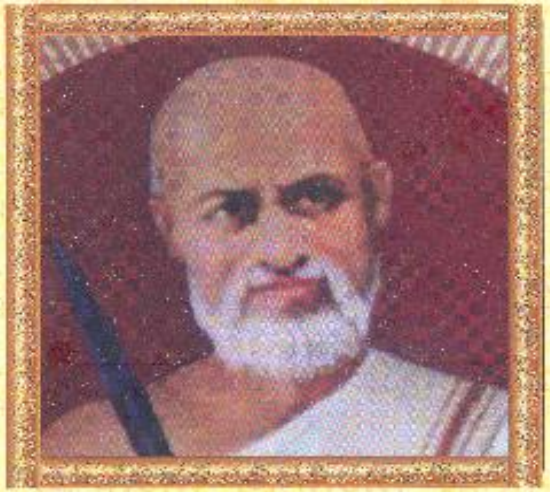
ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता



नमो नमो निम्मलदंसणस्स

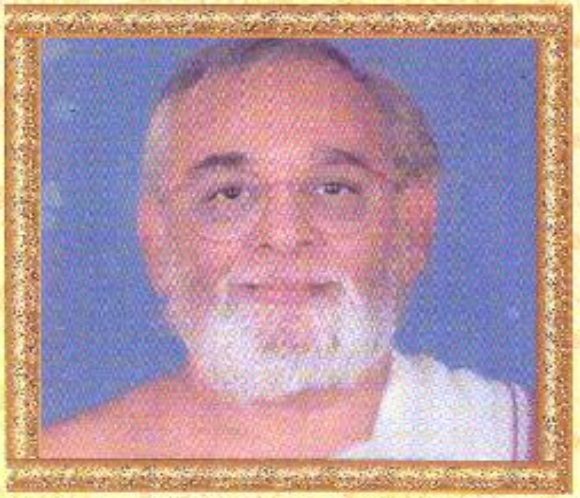
सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक



पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता



आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदाबाद Mo 9825598855 / 9825306275



आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“भगवती” मूलं एवं वृत्ति: [भाग-2]

(अपरनाम- “व्याख्याप्रज्ञप्ति”) शतक- ७ से ११

[मूलं एवं अभयदेवसूरि रचित वृत्ति:]

[आद्य संपादक: - पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर-सूरीश्वरजी म॰ सा॰]

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ **मुनि दीपरत्नसागर** (M.Com., M.Ed., Ph.D.,श्रुतमहर्षि)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५

‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-९

श्री आगमोद्धारक-वाचना-शताब्दी-वर्ष-निमित्त ‘आगम-वृत्ति-मुद्रण-प्रोजेक्ट’

सामाचारी-संरक्षक, ज्ञानधनी, आगम-संशोधक, तीव्र-मेधावी, समाधिमृत्यु-प्राप्त, बहुमुखीप्रतिभाधारक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

◆ जिन्होने शुद्ध-श्रद्धा, सम्यक्-श्रुत आराधना, यथाख्यातचारित्र के प्रति गति और अंत समय देह-ममत्व के त्याग के द्वारा कायोत्सर्ग नामक अभ्यंतर-तप कि मिशाल कायम कि है ऐसे बहुश्रुत आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी महाराज का परिचय कराना मेरे लिए नामुमकिन है, फ़िर भी गुरुभक्ति बुद्धि से श्रद्धांजली स्वरुप एक मामुली सी झलक पैस करने का यह प्रयास मात्र है |

◆ चारित्र-ग्रहण के बाद अल्प कालमे जो अपने गुरुदेव की छत्रछाया से दूर हो गये, तो भी गुरुदेव के स्वर्ग-गमन को सिर्फ़ कर्मो का प्रभाव मानकर अपने संयम के लक्ष्य प्रति स्थिर रहते हुए अकेले ज्ञान-मार्ग कि साधना के पथ पर चले | पढाई के लिए ही कितने महिनो तक रोज एकासणा तप के साथ बारह किल्लोमिटर पैदल विहार भी किया | लेकिन अपने मंझिल पे डटे रहे, और परिणाम स्वरुप संस्कृत एवं प्राकृत भाषा का, प्राचीन लिपिओ का, व्याकरण-न्याय-साहित्य आदि का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया | जैन आगमशास्त्रो के समुद्र को भी पार कर गए|

◆ एक अकेला आदमी भी क्या नहीं कर शकता? इस प्रश्न का उत्तर हमें इस महापुरुष के जीवन और कवन से मिल गया, जब वे चल पड़े देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण के स्थापित पथ पर. बिना किसी सहाय लिए हुए सिर्फ अकेले ही "जैन-आगम-शास्त्रो" को दीर्घजीवी बनाने के लिए अनेक हस्तप्रतो से शुद्ध-पाठ तैयार किये | दो वैकल्पिक आगम, कल्पसूत्र और निर्युक्तिओ को जोड़कर ४५ आगम-शास्त्रो को संशोधित कर के संपादित किया | फिर पालीताणामें आगम मंदिर बनवाकर आरस-पत्थर के ऊपर ये सभी आगम-साहित्य को कंडारा, सूरतमें ताम्रपत्र पर भी अंकित करवाए और "आगम मंजूषा" नाम से मुद्रण भी करवा के बड़ी बड़ी पेटीमें रखवा के गाँव गाँव भेज दिए | वर्तमानकालमे सर्व प्रथमबार ऐसा कार्य हुआ |

◆ सिर्फ मूल आगम के कार्य से ही उन के कदम रुके नही थे, उन्होंने आगमो की वृत्ति, चूर्णि, निर्युक्ति, अवचूरी, संस्कृत-छाया आदि का भी संशोधन-सम्पादन किया | उपयोगी विषयो के लिए उन्होंने एक लाख श्लोक प्रमाण संस्कृत-प्राकृत नए ग्रंथो की रचना भी की | कितने ही ग्रंथो की प्रस्तावना भी लिखी | ये सम्यक्-श्रुत मुद्रित करवाने के लिए आगमोदय समिति, देवचंद लालभाई इत्यादि विभिन्न संस्था की स्थापना भी की |

◆ ज्ञानमार्ग के अलावा सम्मेतशिखर, अंतरीक्षजी, केशरियाजी आदि तीर्थरक्षा कर के सम्यक-दर्शन-आराधना का परिचय भी दिया | राजाओं को प्रतिबोध कर के और वाचनाओ द्वारा अपनी प्रवचन-प्रभावकता भी उजागर करवाई | बालदिक्षा, देवद्रव्य-संरक्षण, तिथि-प्रश्न इत्यादि विषयोमे सत्य-पक्षमें अंत तक दृढ़ रहे | जैनशासन के लिए जब जरुरत पड़ी तब अदालती कारवाईओ का सामना भी बड़ी निडरता से किया था |

◆ सागरानंदजी के नाम से मशहूर हो चुके पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजीने अपने परिवार स्वरुप ७०० साधू-साध्वीजी भी शासन को भेट किये |

...ये थे हमारे गुरुदेव "सागरजी"... ***.....मुनि दीपरत्नसागर...***

संयमैकलक्षी, उपधान-तप-प्रेरक, चारित्र-मार्ग-रागी, प्रवचन-पटु, सुपरिवार-युक्त

पूज्य गच्छाधिपतिआचार्यदेव श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

*** परमपूज्य आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी के पाट-परंपरामे हुए तिसरे गच्छाधिपति थे पूज्य आचार्य श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी, जो एक पून्यवान् आत्मा थे, दीक्षा ग्रहण के बाद अल्पकालमे ही एक शिष्य के गुरु बन गये | फ़िर क्या ! शिष्यो कि संख्या बढती चली, बढ़ते हुए पुन्य के साथ-साथ वे आखिर 'गच्छाधिपति' पद पे आरूढ़ हो गए | इस महात्मा का पुन्य सिर्फ शिष्यों तक सिमित नही था, वे जहा कहीं भी 'उपधान-तप' की प्रेरणा करते थे, तुरंत ही वहां 'उपधान' हो जाते थे | प्रवचनपटुता एवं पर्षदापुन्य के कारण उन के उपदेश-प्राप्त बहोत आत्माओने संयम-मार्ग का स्वीकार किया | खुद भी संयमैकलक्षी होने के कारण चारित्रमार्ग के रागी तो थे ही, साथसाथ ज्ञानमार्ग का स्पर्श भी उन का निरंतर रहेता था | आप कभी भी दुपहर को चले जाइए, वे खुद अकेले या शिष्य-परिवार के साथ कोई भी ग्रन्थ के अध्ययन-अध्यापनमें रत दिखाई देंगे |

*** ये तो हमने उनके जीवन के दो-तीन पहेलु दिखाए | एक और भी अनुसरणीय बात उन के जीवनमें देखने को मिली थी- 'आराधना-प्रेम'. कैसी भी शारीरिक स्थिति हो, मगर उन्होंने दोनों शाश्वती ओलीजी, [पोष}दशमी, शुक्ल पंचमी, त्रिकाल देववंदन, पर्व या पर्वतिथि के देववंदन आदि आराधना कभी नहीं छोड़ी | आखरी सालोमें जब उन को एहसास हो गया की अब 'अंतिम-आराधना' का अवसर नजदीक है, तब उन के मुहमें एक ही रटण बारबार चालु हो गया- "*अरिहंतनुं शरण, सिद्धनुं शरण, साधुनुं शरण, केवली भगवंते भाखेला धर्मनुं शरण* " इसी चार शरणो के रटण के साथ ही वे समाधि-मृत्यु-रूप सम्यक् निद्रा को प्राप्त हुए थे | ऐसे महान् सूरिवर को भावबरी वंदना |

*** मुनि दीपरत्नसागर...

◆◆◆ श्री वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था, पालिताणा ◆◆◆

पूज्यपाद आनंदसागर-सूरीश्वरजी की बौद्धिक-प्रतिभा का मूर्तिमंत स्वरुप ऐसी इस संस्था की स्थापना विक्रम-संवत १९९९ मे महा-वद ५ को हुइ| *पूज्य आचार्य हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से* जिन की तरफ़ से इस *सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि* के लिए संपूर्ण द्रव्य-सहाय की प्राप्ति हुइ |

शिल्प-स्थापत्य, शिलोत्कीर्ण आगम और समवसरण स्थित नयनरम्य ४५ चौमुख जिन-प्रतिमाजी से सुशोभित ऐसा ये 'आगममंदिर' है, जो शत्रुंजय-गिरिराज कि तलेटीमे स्थित है | वर्तमान २४ जिनवर, २० विहरमान जिनवर और १ शाश्वत मिलाकर ४५ चौमुखजी यहा बिराजमान है | जहां ४० समवसरण की रचना मेरु पर्वत के तिनो काण्ड के वर्णो के अनुसार चार अलग-अलग रंगो के आरस-पत्थर से बना है, देवो द्वारा रचित समवसरण के शास्त्र वर्णन-अनुसार आगम-मंदिर कि समवसरण का स्थापत्य है | ऐसी अनेक विशेषता से युक्त ये आगममंदिर है |

**** मुनि दीपरत्नसागर...*

'सागर-समुदाय-एकता-संरक्षक, तीर्थ-उद्धार-कार्य-प्रवृत्त, गुणानुरागी'

इस "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग १ से ४० के संपूर्ण अनुदान के प्रेरणादाता

पूज्य शासनप्रभावक आचार्य श्री हर्षसागरसूरिजी महाराज साहेब

पूज्यपाद स्व॰ गच्छाधिपति देवेन्द्रसागर-सूरीश्वरजी के विनयी शिष्य एवं दो गच्छाधिपतिओ के मुख्य सहायक के रुपमे 'सागर समुदाय' के सुचारु संचालक पूज्य हर्षसागरसूरिजी, जिन की प्रेरणा से ये "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" के मुद्रण के लिए संपूर्ण द्रव्यराशि प्राप्त हुई , उनका अत्यल्प परिचय यहां करेंगे| समुदाय-एकता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हुए ये महात्मा *समुदाय के साधु-साध्वीजी* की आवश्यकताओकी पूर्ती के लिए भी प्रवृत्त रहेते है, प्राचीन-अर्वाचीन तीर्थो के जीर्णोद्धार एवं विकाश के लिए भी उत्साहित रहेते है, ज्ञान-क्षेत्र अछूता न रहे इसीलिए अनुमोदना, अनुदान एवं समय मिलने पर शास्त्र-वांचनमें भी रूचि रखते है | समुदाय के जरूरतमंद साध्वीजी भगवंतो के आवास का विषय हो या साध्वीजी के विहारमें मजदूर का वेतन चुकाना हो, ऐसे छोटे-छोटे कार्यो के प्रति भी उन का लक्ष्य रहेता है | दर्शन-शुद्धि के लिए जब उन्होंने समग्र भारतवर्ष के १०० साल तक के पुराने जिनालयो में १८ अभिषेक की प्रेरणा की, उस वक्त लगभग सभी अभिषेक-सामग्री की द्रव्य-शुद्धि का ख़याल रखते हुए अपनी मेधावी बुद्धि का परिचय दिया था, साथमे अनुकंपा भाव से पुजारी या विधि करानेवाले को यत्किंचित् बहुमान प्रगट करते हुए कुछ धन-राशि प्रदान करवाई |

ऐसे बहुगुण-संपन्न महात्मा पूज्य आचार्यश्री हर्षसागर-सूरिजी को हम भावभरी वंदना करते हुए इस श्रुतकार्य का प्रारंभ करने जा रहे है |

**** मुनि दीपरत्नसागर*

[कात्रेज]पूना, शंखेश्वर, कपडवंज, प्रभासपाटण आदि स्थानोमे आगममंदिर के प्रेरक, कर्मग्रंथ अभ्यासु, निस्पृह महात्मा

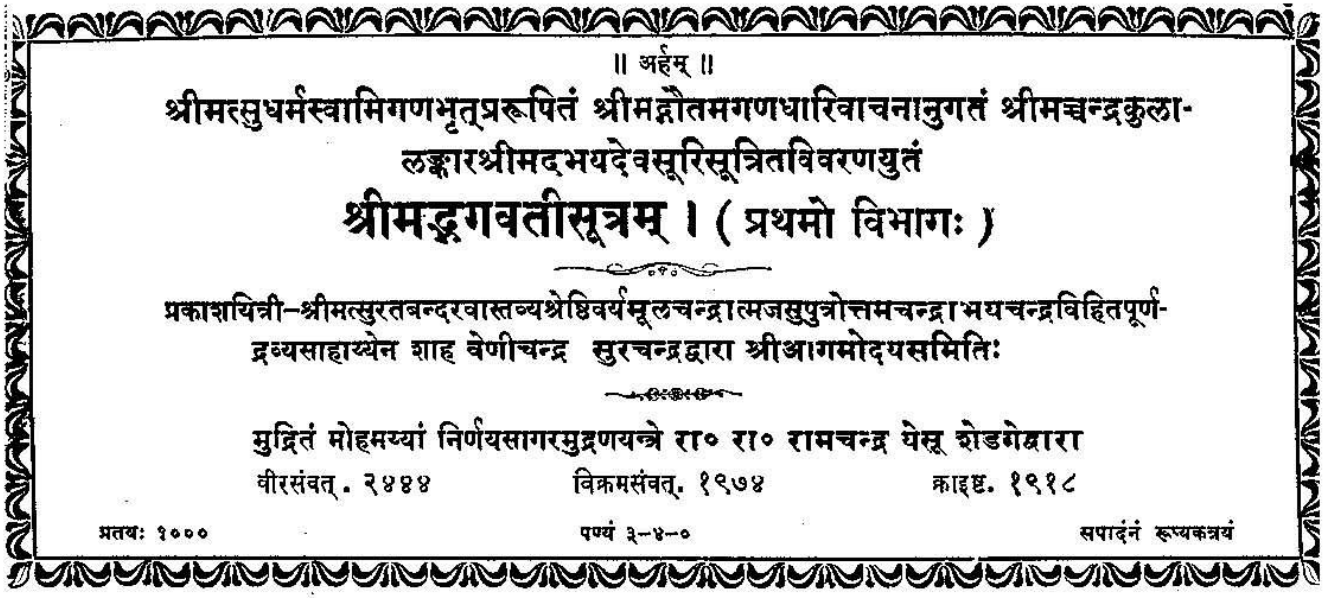
पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्य श्री दौलतसागर-सूरीश्वरजी महाराज साहेब

(एवं) अजातशत्रु, स्वाध्याय-रसिक, प्रशांतमूर्ती और अपने गुरु के प्रीतिपात्र

परम पूज्य आचार्य श्री नंदीवर्धनसागर-सूरिजी महाराज साहेब

इस पवित्र श्रुत-कार्यमे दोनो सूरिवरो का स्मरण करते हुए कोटि कोटि वंदना के साथ

.....मुनि दीपरत्नसागर

	“भगवती”– अंगसूत्र-५ [मूलं+वृत्ति:] शतक [–], वग्र्ग [–], अंतर्-शतक [–], उद्देशक [-], मूलं [–]
प्रत सूत्रांक [–] दीप अनुक्रम [–]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] “भगवती” मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:  ॥ अर्हम् ॥ श्रीमत्सुधर्मस्वामिगणभृत्प्ररूपितं श्रीमद्गौतमगणधारिवाचनानुगतं श्रीमच्चन्द्रकुला- लङ्कारश्रीमदभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीमद्भगवतीसूत्रम् । (प्रथमो विभागः) प्रकाशयित्री–श्रीमत्सुरतबन्दरवास्तव्यश्रेष्ठिवर्यमूलचन्द्रात्मजसुपुत्रोत्तमचन्द्राभयचन्द्रविहितपूर्ण- द्रव्यसाहाय्येन शाह वेणीचन्द्र सुरचन्द्रद्वारा श्रीआगमोदयसमितिः मुद्रितं मोहमय्यां निर्णयसागरमुद्रणयन्त्रे रा० रा० रामचन्द्र येसू शेडगेद्वारा वीरसंवत्. २४४४ विक्रमसंवत्. १९७४ क्राइष्ट. १९१८ प्रतयः १००० पण्यं ३–४–० सपादंनं रूप्यकत्रयं Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	भगवती-[अङ्ग]सूत्रस्य मूल “टाइटल पेज”

मूलांक::	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
♦	शतकं - १		..♦	.....शतकं - ३		..♦	.....शतकं - ५	
००१	उद्देशक: ०१ चलन		१७०	उद्देशक: ०२ चमरोत्पात		२६४	उद्देशक: ०९ राजगृह	
०२६	उद्देशक: ०२ दु:ख		१७८	उद्देशक: ०३ क्रिया		२७१	उद्देशक: १० चन्द्रमा	
०३४	उद्देशक: ०३ कांक्षाप्रदोष		१८४	उद्देशक: ०४ यान		♦	शतकं - ६	
०४६	उद्देशक: ०४ कर्मप्रकृति		१८९	उद्देशक: ०५ स्त्री		२७२	उद्देशक: ०१ वेदना	
०५२	उद्देशक: ०५ पृथ्वी		१९१	उद्देशक: ०६ नगर		२७७	उद्देशक: ०२ आहार	
०६९	उद्देशक: ०६ यावंत		१९३	उद्देशक: ०७ लोकपाल		२७८	उद्देशक: ०३ महा-आश्रव	
०७९	उद्देशक: ०७ नैरयिक		२०१	उद्देशक: ०८ देवाधिपति		२८६	उद्देशक: ०४ सप्रदेशक	
०८५	उद्देशक: ०८ बाल		२०५	उद्देशक: ०९ इन्द्रिय		२९१	उद्देशक: ०५ तमस्काय	
०९४	उद्देशक: ०९ गुरुत्व		२०६	उद्देशक: १० परिषद्		३००	उद्देशक: ०६ भव्य	
१०२	उद्देशक: १० चलत		♦	शतकं - ४		३०२	उद्देशक: ०७ शाली	
♦	शतकं - २		२०७	उद्देशका: १-४ लोकपाल-विमान		३१३	उद्देशक: ०८ पृथ्वी	
१०५	उद्देशक: ०१ स्कंदक		२१०	उद्देशका: ५-८लोकपालराजधानी		३१७	उद्देशक: ०९ कर्म	
११८	उद्देशक: ०२ समुद्घात		२११	उद्देशक: ०९ नैरयिक		३२०	उद्देशक: १० अन्ययूथिक	
११९	उद्देशक: ०३ पृथ्वी		२१२	उद्देशक: १० लेश्या		♦..	शतकं - ७....	०१५
१२२	उद्देशक: ०४ इन्द्रिय		♦..	शतकं - ५.....		३२७	उद्देशक: ०१ आहार	०१५
१२३	उद्देशक: ०५ अन्यतीर्थिक		२१५	उद्देशक: ०१ रवि		३३९	उद्देशक: ०२ विरति	०30
१३८	उद्देशक: ०६ भाषा		२२०	उद्देशक: ०२ वायु		३४५	उद्देशक: ०३ स्थावर	०४०
१३९	उद्देशक: ०७ देव		२२३	उद्देशक: ०३ जालग्रंथिका		३५१	उद्देशक: ०४ जीव	०४६
१४०	उद्देशक: ०८ चमरचंचा		२२५	उद्देशक: ०४ शब्द		३५३	उद्देशक: ०५ पक्षी	०४८
१४१	उद्देशक: ०९ समयक्षेत्र		२४१	उद्देशक: ०५ छद्मस्थ		३५५	उद्देशक: ०६ आयु	०४९
१४२	उद्देशक: १० अस्तिकाय		२४४	उद्देशक: ०६ आयु		३६१	उद्देशक: ०७ अनगार	०६०
♦..	शतकं - ३.....		२५३	उद्देशक: ०७ पुद्गल		३६५	उद्देशक: ०८ छद्मस्थ	०६६
१५१	उद्देशक: ०१ चमरविकुर्वणा		२६२	उद्देशक: ०८ निर्ग्रन्थीपुत्र		३७१	उद्देशक: ०९ असंवृत	०७१

मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
..♦	.....शतकं - ७	----	..♦	.....शतकं - १०	----	..♦	.....शतकं - १२	
३७७	उद्देशक: १० अन्यतीर्थिक	०८८	४८२	उद्देशक: ०३ आत्मऋद्धि	४३८	५४२	उद्देशक: ०५ अतिपात	
♦	शतकं - ८	०९७	४८७	उद्देशक: ०४ श्यामहस्ती	४४३	५४६	उद्देशक: ०६ राहू	
३८१	उद्देशक: ०१ पुद्गल	०९७	४८८	उद्देशक: ०५ देव	४४६	५५०	उद्देशक: ०७ लोक	
३८९	उद्देशक: ०२ आशीविष	१२१	४९०	उद्देशक: ०६ सभा	४५४	५५२	उद्देशक: ०८ नाग	
३९७	उद्देशक: ०३ वृक्ष	१६९	४९३	उद्देशका: ०७-३४ अंतर्द्वीप	४५६	५५४	उद्देशक: ०९ देव	
४००	उद्देशक: ०४ क्रिया	१७४	♦	शतकं - ११	४५८	५६०	उद्देशक: १० आत्मा	
४०१	उद्देशक: ०५ आजीविक	१७५	४९४	उद्देशक: ०१ उत्पल	४५८	♦	शतकं - १३	
४०५	उद्देशक: ०६ प्रासुकआहार	१८७	४९९	उद्देशक: ०२ शालूक	४६८	५६३	उद्देशक: ०१ पृथ्वी	
४१०	उद्देशक: ०७ अदत्तादान	१९९	५००	उद्देशक: ०३ पलाश	४६८	५६७	उद्देशक: ०२ देव	
४१२	उद्देशक: ०८ प्रत्यनिक	२०५	५०१	उद्देशक: ०४ कुम्भिक	४६८	५६८	उद्देशक: ०३ नरक	
४२२	उद्देशक: ०९ प्रयोगबन्ध	२२९	५०२	उद्देशक: ०५ नालिक	४६८	५६९	उद्देशक: ०४ पृथ्वी	
४३०	उद्देशक: १० आराधना	२७५	५०३	उद्देशक: ०६ पद्म	४६९	५८४	उद्देशक: ०५ आहार	
♦	शतकं - ९	२९१	५०४	उद्देशक: ०७ कर्णिक	४६९	५८५	उद्देशक: ०६ उपपात	
४३८	उद्देशक: ०१ जम्बू	२९१	५०५	उद्देशक: ०८ नलिन	४६९	५८९	उद्देशक: ०७ भाषा	
४४०	उद्देशक: ०२ ज्योतिष्क	२९४	५०६	उद्देशक: ०९ शिवराजर्षि	४७०	५९३	उद्देशक: ०८ कर्मप्रकृति	
४४४	उद्देशका: ०३-३० अंतर्द्विप	२९७	५१०	उद्देशक: १० लोक	४८४	५९४	उद्देशक: ०९ अनगारवैक्रिय	
४४५	उद्देशक: ३१ असोच्चा	३०१	५१४	उद्देशक: ११ काल	५०६	५९५	उद्देशक: १० समुद्घात	
४५१	उद्देशक: ३२ गांगेय	३१९	५२५	उद्देशक: १२ आलभिका	५११	♦..	शतकं - १४.....	
४६०	उद्देशक: ३३ कुण्डग्राम	३५३	♦..	शतकं - १२.....		५९६	उद्देशक: ०१ चरम	
४७१	उद्देशक: ३४ पुरुषघातक	४२१	५२९	उद्देशक: ०१ शंख		६००	उद्देशक: ०२ उन्माद	
♦..	शतकं - १०.....	४२६	५३४	उद्देशक: ०२ जयंति		६०३	उद्देशक: ०३ शरीर	
४७३	उद्देशक: ०१ दिशा	४२६	५३७	उद्देशक: ०३ पृथ्वी		६०७	उद्देशक: ०४ पुद्गल	
४७७	उद्देशक: ०२ संवृतअनगार	४३१	५३८	उद्देशक: ०४ पुद्गल		६१२	उद्देशक: ०५ अग्नि	

मूलांक::	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
..♦	.....शतकं - १४		..♦	.....शतकं - १७		..♦	.....शतकं - १९	
६१५	उद्देशक: ०६ आहार		७०६	उद्देशक: ०४ क्रिया		७७०	उद्देशक: ०८ निर्वृत्ति	
६१८	उद्देशक: ०७ संश्लिष्ट		७०८	उद्देशका: ६-११ पृथ्व्यादिकाय		७७४	उद्देशक: ०९ करण	
६२४	उद्देशक: ०८ अंतर		७१५	उद्देशक: १२ एकेन्द्रिय		७७५	उद्देशक: १० व्यंतर	
६३१	उद्देशक: ०९ अनगार		७१६	उद्देशका:१३-१७ नागादिकुमार		♦	शतकं - २०	
६३६	उद्देशक: १० केवली		♦	शतकं - १८		७७९	उद्देशक: ०१ बेईन्द्रिय	
♦	शतकं - १५		७२१	उद्देशक: ०१ प्रथम		७८१	उद्देशक: ०२ आकाश	
६३७	--गोशालक		७२७	उद्देशक: ०२ विशाखा		७८३	उद्देशक: ०३ प्राणवध	
♦	शतकं - १६		७२८	उद्देशक: ०३ माकंदीपुत्र		७८५	उद्देशक: ०४ उपचय	
६६०	उद्देशक: ०१ अधिकरण		७३३	उद्देशक: ०४ प्राणातिपात		७८६	उद्देशक: ०५ परमाणु	
६६६	उद्देशक: ०२ जरा		७३६	उद्देशक: ०५ असुरकुमार		७८९	उद्देशक: ०६ अंतर	
६७०	उद्देशक: ०३ कर्म		७४०	उद्देशक: ०६ गुडवर्णादि		७९२	उद्देशक: ०७ बन्ध	
६७२	उद्देशक: ०४ जावंतिय		७४२	उद्देशक: ०७ केवली		७९३	उद्देशक: ०८ भूमि	
६७३	उद्देशक: ०५ गंगदत्त		७४९	उद्देशक: ०८ अनगारक्रिया		८०१	उद्देशक: ०९ चारण	
६७७	उद्देशक: ०६ स्वप्न		७५०	उद्देशक: ०९ भव्यद्रव्य		८०३	उद्देशक: १० आयु	
६८२	उद्देशक: ०७ उपयोग		७५३	उद्देशक: १० सोमिल		♦	शतकं - २१	
६८३	उद्देशक: ०८ लोक		♦..	शतकं - १९.....		८०६	वग्गं: १ शाली-आदि	
६८७	उद्देशक: ०९ बलिन्द्र		७५८	उद्देशक: ०१ लेश्या		८१५	वग्गा:२-८ मूलअलसी, वंश,	
६८८	उद्देशक: १० अवधि		७६०	उद्देशक: ०२ गर्भ			इक्षु,सेडिय, अम्ररुह, तुलसी	
६८९	उद्देशक: ११-१४ द्विपादि०		७६१	उद्देशक: ०३ पृथ्वी		♦	शतकं - २२	
♦..	शतकं - १७.....		७६५	उद्देशक: ०४ महाश्रव		८२२	वग्गा:१-६ताड,निम्ब,अगस्ति	
६९३	उद्देशक: ०१ कुंजर		७६६	उद्देशक: ०५ चरम			वेंगन, सिरियक,पुष्पकलिका	
६९९	उद्देशक: ०२ संयत		७६८	उद्देशक: ०६ द्वीप		♦	शतकं - २३	
७०३	उद्देशक: ०३ शैलेशी		७६९	उद्देशक: ०७ भवन		८२९	वग्गा:१-४आलू,लोही,आय,पाठा	

मूलांक::	विषय:	पृष्ठांक	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
♦	शतकं - २४	१६१३	♦	शतकं - २८	१८८०	♦	शतकं - ३५	१९३२
८३५	**उद्देशक: ०१ नैरयिक**	१६१३	९९२	**उद्देशका: १-११ जीव आदि--**	१८८०	१०४४	**एकेन्द्रिय शतकानि-१२**	----
८४३	**उद्देशक: ०२ परिमाण**	१६३९		**जाव २६ शतक**	----	♦	शतकं - ३६	१९४४
८४४	**उद्देशक: ०३-११नागादिकुमारा**	१६४५	♦	शतकं - २९	१८८३	१०५८	**बेन्द्रिय शतकानि-१२**	----
८४६	**उद्देशक: १२-१६ पृथ्व्यादि**	१६४९	९९५	**उद्देशका: १-११ जीव आदि--**	१८८३	♦	शतकं - ३७	१९४६
८५३	**उद्देशक: १७-२० बेईन्द्रियादि**	१६७०		**जाव २६ शतक**	----	१०६१	**त्रिन्द्रिय शतक**	----
८५७	**उद्देशक: २१-२४ मनुष्यादि**	१६८८	♦	शतकं - ३०	१८८७	♦	शतकं - ३८	१९४६
♦	शतकं - २५	१७०७	९९८	**उद्देशका: १-११ समवसरण,**	१८८७	१०६२	**चतुरिन्द्रिय शतक**	----
८६१	**उद्देशका: १-१२ लेश्या, द्रव्य,**	१७०७		**लेश्या आदि**	----	♦	शतकं - ३९	१९४६
	संस्थान, युग्म,पर्यव, निर्गन्थ	---	♦	शतकं - ३१	१८९९	१०६३	**असंज्ञीपंचेन्द्रिय शतकानि**	----
	संयत, ओघ, भव्य, अभव्य,	---	१००३	**उद्देशका: १-२८ युग्म, नरक,**	१८९९	♦	शतकं - ४०	१९४७
	सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि	---		**उपपात आदि विषयका:**	----	१०६४	**संज्ञीपंचेन्द्रिय शतकानि**	----
♦	शतकं - २६	१८६०	♦	शतकं - ३२	१९०५	♦	शतकं - ४१	१९५४
९७५	**उद्देशका: १-११ जीव, लेश्या,**	१८६०	१०१६	**उद्देशका: १-२८ नारक्स्य---**	१९०५	१०६८ से	**उद्देशका: १-१९६ राशियुग्म,**	----
	पखिय, दृष्टि, अज्ञान, ज्ञान,	---		**उद्वर्तन, उपपात, लेश्यादि**	----	---१०७९	**त्र्योजराशि, द्वापरयुग्मराशि**	----
	संज्ञा,वेद,कषाय,उपयोग,योग	---	♦	शतकं - ३३	१९०६		**कल्योजराशि इत्यादि**	----
♦	शतकं - २७	१८७९	१०१८	**एकेन्द्रिय शतकानि-१२**	१९०६		**----------**	**---**
९९१	**उद्देशका: १-११ जीव आदि--**	१८७९	♦	शतकं - ३४	१९१२	१०८० से	**उपसंहार गाथा**	१९६१---
	जाव २६ शतक	---	१०३३	**एकेन्द्रिय शतकानि-१२**	१९१२	---१०८६	परिसमाप्त:	---१९६५

[भगवती- मूलं एवं वृत्ति:] इस प्रकाशन की विकास-गाथा

यह प्रत सबसे पहले "(श्रीमद्) भगवतीसूत्र" के नामसे सन १९१८ (विक्रम संवत १९७४) में आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित हुई, इस के संपादक-महोदय थे पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी (सागरानंदसूरिजी) महाराज साहेब |

इसी प्रत को फिर से दुसरे पूज्यश्रीओने अपने-अपने नामसे भी छपवाई, जिसमे उन्होंने खुदने तो कुछ नहीं किया, मगर इसी प्रत को ऑफसेट करवा के, अपना एवं अपनी प्रकाशन संस्था का नाम छाप दिया. जिसमे किसीने पूज्यपाद् सागरानंदसूरिजी के नाम को आगे रखा, और अपनी वफादारी दिखाई, तो किसीने स्वयं को ही इस पुरे कार्य का कर्ता बता दिया और श्रीमद्सागरानंदसूरिजी तथा प्रकाशक का नाम ही मिटा दिया |

✣हमारा ये प्रयास क्यों? ✣ आगम की सेवा करनेके हमें तो बहोत अवसर मिले, ४५-आगम सटीक भी हमने ३० भागोमे १२५०० से ज्यादा पृष्ठोमें प्रकाशित करवाए है, किन्तु लोगो की पूज्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी के प्रति श्रद्धा तथा प्रत स्वरुप प्राचीन प्रथा का आदर देखकर हमने इसी प्रत को स्केन करवाई, उसके बाद एक स्पेशियल फोरमेट बनवाया, जिसमे बीचमे पूज्यश्री संपादित प्रत ज्यों की त्यों रख दी, ऊपर शीर्षस्थानमे आगम का नाम, फिर शतक-वग्र्ग-उद्देशक-मूलसूत्र- आदि के नंबर लिख दिए, ताँकि पढ़नेवाले को प्रत्येक पेज पर कौनसा शतक, उद्देशक आदि चल रहे है उसका सरलता से ज्ञान हो शके, बायीं तरफ आगम का क्रम और इसी प्रत का सूत्रक्रम दिया है, उसके साथ वहाँ 'दीप अनुक्रम' भी दिया है, जिससे हमारे प्राकृत, संस्कृत, हिंदी गुजराती, इंग्लिश आदि सभी आगम प्रकाशनोमें प्रवेश कर शके | हमारे अनुक्रम तो प्रत्येक प्रकाशनोमें एक सामान और क्रमशः आगे बढते हुए ही है, इसीलिए सिर्फ क्रम नंबर दिए है, मगर प्रत में गाथा और सूत्रों के नंबर अलग-अलग होने से हमने जहां सूत्र है वहाँ कौंस [-] दिए है और जहां गाथा है वहाँ ||-|| ऐसी दो लाइन खींची है|

हमने एक अनुक्रमणिका भी बनायी है, जिसमे प्रत्येक शतक, वग्र्ग एवं उद्देशक लिख दिये है और साथमें इस सम्पादन के पृष्ठांक भी दे दिए है, जिससे अभ्यासक व्यक्ति अपने चहिते शतक या विषय तक आसानी से पहुँच शकता है | अनेक पृष्ठ के नीचे विशिष्ठ फूटनोट भी लिखी है, जिसमे उस पृष्ठ पर चल रहे ख़ास विषयवस्तु की, मूल प्रतमें रही हुई कोई-कोई मुद्रण-भूल की या क्रमांकन सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है |

शासनप्रभावक पूज्य आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी म०सा० की प्रेरणासे और श्री वर्धमान जैन आगममंदिर, पालिताणा की संपूर्ण द्रव्य सहाय से ये 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' भाग-९ का मुद्रण हुआ है, हम उन के प्रति हमारा आभार व्यक्त करते है |

.....मुनि दीपरत्नसागर.

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२६०] + गाथा

दीप अनुक्रम [३२७-३२८]

॥ अथ सप्तमशतकम् ॥

व्याख्यातं जीवाद्यर्थप्रतिपादनपरं षष्ठं शतम्, अथ जीवाद्यर्थप्रतिपादनपरमेव सप्तमशतं व्याख्यायते, तत्र चादावे-वोद्देशकार्थसङ्ग्रहगाथा—

आहार १ विरति २ थावर ३ जीवा ४ पक्खी य ५ आउ ६ अणगारे ७ ।
छउमत्थ ८ असंवुड ९ अन्नउत्थि १० दस सत्तमंमि सए ॥ १ ॥

'आहारे'त्यादि, तत्र 'आहार'त्ति आहारकानाहारकवक्तव्यतार्थः प्रथमः १ 'विरइ'त्ति प्रत्याख्यानार्थो द्वितीयः २ 'थावर'त्ति वनस्पतिवक्तव्यतार्थस्तृतीयः ३ 'जीव'त्ति संसारिजीवप्रज्ञापनार्थश्चतुर्थः ४ 'पक्खी य'त्ति खचरजीवयोनि-वक्तव्यतार्थः पञ्चमः ५ 'आउ'त्ति आयुष्कवक्तव्यतार्थः षष्ठः 'अणगार'त्ति अनगारवक्तव्यतार्थः सप्तमः ७ 'छउमत्थ'त्ति छद्मस्थमनुष्यवक्तव्यतार्थोऽष्टमः ८ 'असंवुड'त्ति असंवृतानगारवक्तव्यतार्थो नवमः ९ 'अन्नउत्थिय'त्ति कालोदायि-प्रभृतिपरतीर्थिकवक्तव्यतार्थो दशमः १० इति ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एवं वदासी–जीवे णं भंते ! कं समयमणाहारए भवइ ?, गोयमा ! पढमे समए सिय आहारए सिय अणाहारए बितिए समए सिय आहारए सिय अणाहारए ततिए समए सिय आहारए सिय अणाहारए चउत्थे समए नियमा आहारए, एवं दंडओ, जीवा य एगिंदिया य चउत्थे समए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ सप्तम-शतकं आरब्धः

अत्र सप्तम शतके प्रथम-उद्देशक: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [२६०] + गाथा

दीप अनुक्रम [३२७-३२८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥२८७॥

सेसा ततिए समए ॥ जीवे णं भंते ! 'कं समयं सव्वप्पाहारए भवति ?, गोयमा ! पढमसमयोववन्नए वा चरमसमए भवत्थे वा एत्थ णं जीवे णं सव्वप्पाहारए भवइ, दंडओ भाणियव्वो जाव वेमाणियाणं ॥ (सूत्रं २६०) ॥

'कं समयं अणाहारए'त्ति परभवं गच्छन् कस्मिन् समयेऽनाहारको भवति ? इति प्रश्नः, उत्तरं तु यदा जीव ऋजुगत्योत्पादस्थानं गच्छति तदा परभवायुषः प्रथम एव समये आहारको भवति, यदा तु विग्रहगत्या गच्छति तदा प्रथमसमये वक्रेऽनाहारको भवति, उत्पत्तिस्थानानवाप्तौ तदाहारणीयपुद्गलानामभावाद्, अत आह–'पढमे समए सिय आहारए सिय अणाहारए'त्ति, तथा यदैकेन वक्रेण द्वाभ्यां समयाभ्यामुत्पद्यते तदा प्रथमेऽनाहारको द्वितीये त्वाहारकः, यदा तु वक्रद्वयेन त्रिभिः समयैरुत्पद्यते तदा प्रथमे द्वितीये चानाहारक इत्यत आह–'बीयसमये सिय आहारए सिय अणाहारए'त्ति, तथा यदा वक्रद्वयेन त्रिभिः समयैरुत्पद्यते तदाऽऽद्ययोरनाहारकस्तृतीये त्वाहारकः, यदा तु वक्रत्रयेण चतुर्भिः समयैरुत्पद्यते तदाद्ये समयत्रयेऽनाहारकश्चतुर्थे तु नियमादाहारक इतिकृत्वा 'तइए समए सिय' इत्याद्युक्तं, वक्रत्रयं चेत्थं भवति–नाड्या बहिर्विदिग्व्यवस्थितस्य सतो यस्याधोलोकादूर्ध्वलोके उत्पादो नाड्या बहिरेव दिशि भवति सोऽवश्यमेकेन समयेन विश्रेणितः समश्रेणीं प्रतिपद्यते द्वितीयेन नाडीं प्रविशति तृतीयेनोर्ध्वलोकं गच्छति चतुर्थेन लोकनाडीतो निर्गत्योत्पत्तिस्थाने उत्पद्यते, इह चाद्ये समयत्रये वक्रत्रयमवगन्तव्यं, समश्रेण्यैव गमनात्, अन्ये त्वाहुः–वक्रचतुष्टयमपि संभवति, यदा हि विदिशो विदिश्येवोत्पद्यते तत्र समयत्रयं प्राग्वत् चतुर्थे समये तु नाडीतो निर्गत्य

७ शतके उद्देशः १ अनाहारा-ल्पाहारसम यः सू२६०

॥२८७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समश्रेणिं प्रतिपद्यते पञ्चमेन तूत्पत्तिस्थानं प्राप्नोति, तत्र चाद्ये समयचतुष्टये वक्रचतुष्टयं स्यात्, तत्र चानाहारक इति, इदं च सूत्रे न दर्शितं, प्रायेणेत्थमनुत्पत्तेरिति। 'एवं दंडओ'त्ति अमुनाऽभिलापेन चतुर्विंशतिदण्डको वाच्यः, तत्र च जीवपदे एकेन्द्रियपदेषु च पूर्वोक्तभावनयैव चतुर्थे समये नियमादाहारक इति वाच्यं, शेषेषु तृतीयसमये नियमादाहारक इति, तत्र यो नारकादित्रसस्रसेष्वेवोत्पद्यते तस्य नाड्या बहिस्तादागमनं गमनं च नास्तीति तृतीयसमये नियमादाहारकत्वं, तथाहि—यो मत्स्यादिर्भरतस्य पूर्वभागादैरवतपश्चिमभागस्याधो नरकेषूत्पद्यते स एकेन समयेन भरतस्य पूर्वभागात्पश्चिमं भागं याति द्वितीयेन तु तत ऐरवतपश्चिमं भागं ततस्तृतीयेन नरकमिति, अत्र चाद्ययोरनाहारकस्तृतीये त्वाहारकः, एतदेव दर्शयति–'जीवा एगिंदिया य चउत्थे समये सेसा तइयसमए'त्ति ॥ 'कं समयं सव्वप्पाहारए'त्ति कस्मिन् समये सर्वाल्पः–सर्वथा स्तोको न यस्मादन्यः स्तोकतरोऽस्ति स आहारो यस्य स सर्वाल्पाहारः स एव सर्वाल्पाहारकः, 'पढमसमयोववन्नए'त्ति प्रथमसमय उत्पन्नस्य प्रथमो वा समयो यत्र तत् प्रथमसमयं तदुत्पन्नं–उत्पत्तिर्यस्य स तथा, उत्पत्तेः प्रथमसमय इत्यर्थः, तदाहारग्रहणहेतोः शरीरस्याल्पत्वात्सर्वाल्पाहारता भवतीति, 'चरमसमयभवत्थे व'त्ति चरमसमये भवस्य–जीवितस्य तिष्ठति यः स तथा, आयुषश्चरमसमय इत्यर्थः, तदानीं प्रदेशानां संहृतत्वेनाल्पेषु शरीरावयवेषु स्थितत्वात्सर्वाल्पाहारतेति ॥ अनाहारकत्वं च जीवानां विशेषतो लोकसंस्थानवशाद्भवतीति लोकप्ररूपणसूत्रम्–

किंसंठिए णं भंते ! लोए पन्नत्ते ?, गोयमा ! सुपइट्ठगसंठिएलोए पन्नत्ते, हेट्ठा विच्छिन्ने जाव उप्पिं उड्ढमुइंगागारसंठिए, तेसिं च णं सासयंसि लोगंसि हेट्ठा विच्छिन्नंसि जाव उप्पिं उड्ढमुइंगागारसंठियंसि उप्पन्न-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२६१]

दीप अनुक्रम [३२९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १

॥२८८॥

नाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली जीवेवि जाणइ पासइ अजीवेवि जाणइ पासइ तओ पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेइ ॥ (सूत्रं २६१) ॥

'सुपइट्ठगसंठिए'त्ति सुप्रतिष्ठकं शरयन्त्रकं तच्चेह उपरिस्थापितकलशादिकं ग्राह्यं, तथाविधेनैव लोकसादृश्योपपत्तेरिति, एतस्यैव भावनार्थमाह–'हेट्ठा विच्छिन्ने'इत्यादि, यावत्करणात् 'मज्झे संखित्ते उप्पिं विसाले अद्धे पलियंकसंठाणसंठिए मज्झे वरवयरविग्गहिए'त्ति दृश्यं, व्याख्या चास्य प्राग्वदिति ॥ अनन्तरं लोकस्वरूपमुक्तं, तत्र च यत्केवली करोति तदर्शयन्नाह–'तंसी'त्यादि । 'अंतं करेइ'त्ति, अत्र क्रियोक्ता, अथ तद्विशेषमेव श्रमणोपासकस्य दर्शयन्नाह—

समणोवासगस्स णं भंते ! सामाइयकडस्स समणोवासए अच्छमाणस्स तस्स णं भंते ! किं ईरियावहिया किरिया कज्जइ संपराइया किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! समणोवासयस्स णं सामाइयकडस्स समणोवासए अच्छमाणस्स आया अहिगरणीभवइ आयाहिगरणवत्तियं च णं तस्स नो ईरियावहिया किरिया कज्जइ संपराइया किरिया कज्जइ, से तेणट्ठेणं जाव संपराइया ॥ (सूत्रं २६२) समणोवासगस्स णं भंते ! पुव्वामेव तसपाणसमारंभे पच्चक्खाए भवति पुढविसमारंभे अपच्चक्खाए भवइ से य पुढविं खणमाणेऽण्णयरं तसं पाणं विहिंसेज्जा से णं भंते ! तं वयं अतिचरति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु से तस्स अतिवायाए आउट्टति । समणोवासयस्स णं भंते ! पुव्वामेव वणस्सइसमारंभे पच्चक्खाए से य पुढविं खणमाणे अन्नयरस्स रुक्खस्स मूलं छिंदेज्जा से णं भंते ! तं वयं अतिचरति !, णो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु तस्स अइवायाए आउ-

६ शतके उद्देशः १ लोकसंस्थानं सामायिके क्रिया प्रत्याख्यातव धेऽप्यक्रिया सू२६१-२६२-२६३

॥२८८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२६२-२६४]

दीप अनुक्रम [३३०--३३२]

इति। (सूत्रं)२६३। समणोवासए णं भंते! तहारूवं समणं वा माहणं वा फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभेमाणे किं लब्भइ ?, गोयमा! समणोवासए णं तहारूवं समणं वा जाव पडिलाभेमाणे तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा समाहिं उप्पाएति, समाहिकारएणं तमेव समाहिं पडिलभइ। समणोवासए णं भंते! तहारूवं समणं वा जाव पडिलाभेमाणे किं चयति ?, गोयमा! जीवियं चयति दुच्चयं चयति दुक्करं करेति दुल्लहं लहइ बोहिं बुज्झइ तओ पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेति (सूत्रं २६४)

'समणे'त्यादि, 'सामाइयकडस्स'त्ति कृतसामायिकस्य, तथा 'श्रमणोपाश्रये' साधुवसतावासीनस्य-तिष्ठतः 'तस्स ण'न्ति यो यथार्थस्तस्य श्रमणोपासकस्यैवेति, किलाकृतसामायिकस्य तथा साध्वाश्रयेऽनवतिष्ठमानस्य भवति साम्परायिकी क्रिया, विशेषणद्वययोगे पुनरैर्यापथिकी युक्ता निरुद्धकषायत्वादित्याशङ्क्या अतोऽयं प्रश्नः, उत्तरं तु 'आयाहिकरणी भवति'त्ति आत्मा–जीवः अधिकरणानि–हलशकटादीनि कषायाश्रयभूतानि यस्य सन्ति सोऽधिकरणी, ततश्च 'आयाहिकरणवत्तियं च णं' ति आत्मनोऽधिकरणानि आत्माधिकरणानि तान्येव प्रत्ययः–कारणं यत्र क्रियाकरणे तदात्माधिकरणप्रत्ययं साम्परायिकी क्रिया क्रियत इति योगः॥ श्रमणोपासकाधिकारादेव 'समणोवासगे'त्यादि प्रकरणम्, तत्र च 'तसपाणसमारंभे'त्ति त्रसवधः 'नो खलु से तस्स अतिवायाए आउट्टइ'त्ति न खलु असौ 'तस्य' त्रसप्राणस्य 'अतिपाताय'वधाय 'आवर्त्तते' प्रवर्तते इति न सङ्कल्पवधोऽसौ, सङ्कल्पवधादेव च निवृत्तोऽसौ, न चैष तस्य संपन्न इति नासावतिचरति व्रतं, 'किं चयइ?'त्ति किं ददातीत्यर्थः 'जीवियं चयइ'त्ति जीवितमिव ददाति, अन्नादि द्रव्यं यच्छन्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥२८९॥

जीवितस्यैव त्यागं करोतीत्यर्थः, जीवितस्येवान्नादिद्रव्यस्य दुस्त्यजत्वात्, एतदेवाह– 'दुच्चयं चयइ'त्ति दुस्त्यजमेतत्, त्यागस्य दुष्करत्वात्, एतदेवाह– दुष्करं करोतीति, अथवा किं त्यजति–किं विरहयति ?, उच्यते, जीवितमिव जीवितं कर्म्मणो दीर्घा स्थितिं 'दुच्चयं'ति दुष्टं कर्म्मद्रव्यसञ्चयं 'दुक्करं'ति दुष्करमपूर्वकरणतो ग्रन्थिभेदं, ततश्च 'दुल्लभं लभइ'त्ति अनिवृत्तिकरणं लभते, ततश्च 'बोहिं बुज्झइ'त्ति 'बोधिं' सम्यग्दर्शनं 'बुध्यते' अनुभवति, इह च श्रमणोपासकः साधूपासनामात्रकारी ग्राह्यः, तदपेक्षयैवास्य सूत्रार्थस्य घटमानत्वात्, 'तओ पच्छ'त्ति तदनन्तरं सिद्ध्यतीत्यादि प्राग्वत् अन्यत्राप्युक्तं दानविशेषस्य बोधिगुणत्वं, यदाह–"अणुकंपऽकामणिज्जरबालतवे दाणविणए" त्यादि, तद्यथा–"[1]केई तेणेव भवेण निवुया सव्वकम्मओ मुक्का । केई तइयभवेणं सिज्झिस्संति जिणसगासे ॥ १ ॥ " त्ति ॥ अनन्तरमकर्म्मत्वमुक्तमतोऽकर्म्मसूत्रम्—

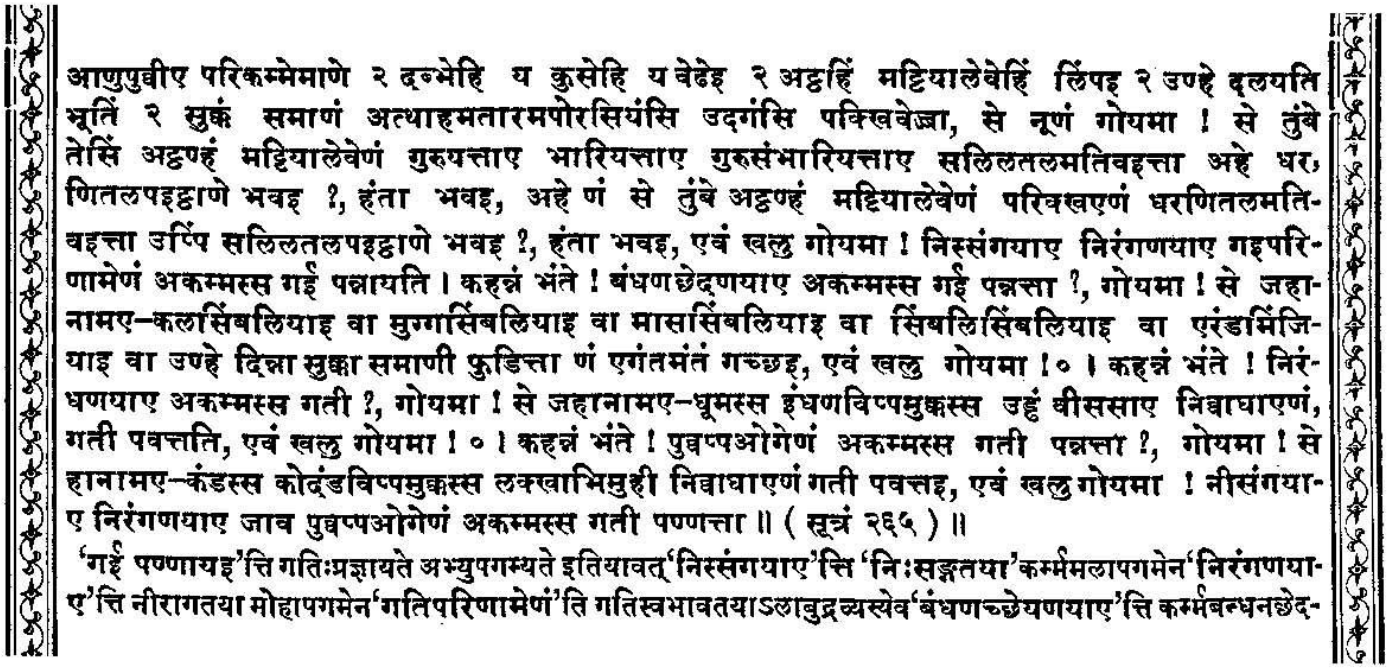
अत्थि णं भंते ! अकम्मस्स गती पन्नायति ?, हंता अत्थि ॥ कहन्नं भंते ! अकम्मस्स गती पन्नायति ?, गोयमा ! निस्संगयाए निरंगणयाए गतिपरिणामेणं बंधणछेयणयाए निरंधणयाए पुव्वपओगेणं अकम्मस्स गती पन्नत्ता ॥ कहन्नं भंते ! निस्संगयाए निरंगणयाए गइपरिणामेणं बंधणछेयणयाए निरंधणयाए पुव्वप्पओगेणं अकम्मस्स गती पन्नायति ?, से जहानामए–केइ पुरिसे सुक्कं तुंबं निच्छिड्डं निरुवहयंति

१ अनुकम्पाकामनिर्जराबालतपोदानविनय (विभङ्गैः) । २ केचित्तेनैव भवेन सर्वकर्मतो मुक्ता निर्वृताः केचित्तृतीयभवेन जिनसकाशे सेत्स्यन्ति ॥ १ ॥

७ शतके उद्देशः १ सामायिके क्रियादान-फलंसू२६३ २६४

॥२८९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



आणुपुवीए परिकम्मेमाणे २ दब्भेहि य कुसेहि य वेढेइ २ अट्ठहिं मट्टियालेवेहिं लिंपइ २ उण्हे दलयति भूतिं २ सुक्कं समाणं अत्थाहमतारमपोरसियंसि उदगंसि पक्खिवेज्जा, से नूणं गोयमा ! से तुंबे तेसिं अट्ठण्हं मट्टियालेवेणं गुरुयत्ताए भारियत्ताए गुरुसंभारियत्ताए सलिलतलमतिवइत्ता अहे धरणितलपइट्ठाणे भवइ ?, हंता भवइ, अहे णं से तुंबे अट्ठण्हं मट्टियालेवेणं परिक्खएणं धरणितलमतिवइत्ता उप्पिं सलिलतलपइट्ठाणे भवइ ?, हंता भवइ, एवं खलु गोयमा ! निस्संगयाए निरंगणयाए गइपरिणामेणं अकम्मस्स गई पन्नायति । कहन्नं भंते ! बंधणछेदणयाए अकम्मस्स गई पन्नत्ता ?, गोयमा ! से जहानामए–कलसिंबलियाइ वा मुग्गसिंबलियाइ वा माससिंबलियाइ वा सिंबलिसिंबलियाइ वा एरंडमिंजियाइ वा उण्हे दिन्ना सुक्का समाणी फुडित्ता णं एगंतमंतं गच्छइ, एवं खलु गोयमा ! ० । कहन्नं भंते ! निरंधणयाए अकम्मस्स गती ?, गोयमा ! से जहानामए–धूमस्स इंधणविप्पमुक्कस्स उड्ढं वीससाए निवाघाएणं, गती पवत्तति, एवं खलु गोयमा ! ० । कहन्नं भंते ! पुव्वप्पओगेणं अकम्मस्स गती पन्नत्ता ?, गोयमा ! से हानामए–कंडस्स कोदंडविप्पमुक्कस्स लक्खाभिमुही निवाघाएणं गती पवत्तइ, एवं खलु गोयमा ! नीसंगयाए निरंगणयाए जाव पुव्वप्पओगेणं अकम्मस्स गती पण्णत्ता ॥ (सूत्रं २६५) ॥

'गई पण्णायइ'त्ति गतिःप्रज्ञायते अभ्युपगम्यते इतियावत्'निस्संगयाए'त्ति 'निःसङ्गतया'कर्म्ममलापगमेन'निरंगणयाए'त्ति नीरागतया मोहापगमेन'गतिपरिणामेणं'ति गतिस्वभावतयाऽलाबुद्रव्यस्येव'बंधणच्छेयणयाए'त्ति कर्म्मबन्धनछेद-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥२९०॥

नेन एरण्डफलस्येव 'निरन्धणताए'त्ति कर्मेन्धनविमोचनेन धूमस्येव 'पुव्वपओगेणं'ति सकर्म्मतायां गतिपरिणामवत्त्वेन बाणस्येवेति ॥ एतदेव विवृण्वन्नाह– 'कहन्न' मित्यादि, 'निरुवहयं'ति वाताद्यनुपहतं 'दब्भेहि य'त्ति दर्भैः समूलैः 'कुसेहि य'त्ति कुशैः–दर्भैरेव छिन्नमूलैः 'भूइं भूइं'न्ति भूयो भूयः 'अत्थाहे'त्यादि, इह मकारौ प्राकृतप्रभवावतः अस्ताधेऽत एवातारेऽत एव 'अपौरुषेये' अपुरुषप्रमाणे 'कलसिंबलियाइ वा' कलायाभिधानधान्यफलिका 'सिंबलि'त्ति वृक्षविशेषः 'एरंडमिंजिया' एरण्डफलम् 'एगंतमंतं गच्छइ'त्ति एक इत्येवमन्तो–निश्चयो यत्रासावेकान्त एक इत्यर्थः अत्तमन्तं भूभागं गच्छति, इह च बीजस्य गमनेऽपि [यत्] कलायसिंबलिकादेरिति यदुक्तं तत्तयोरभेदोपचारादिति, 'उड्ढंवीससाए'त्ति ऊर्द्धं 'विस्रसया' स्वभावेन 'निव्वाघाएणं'ति कटाद्याच्छादनाभावात्॥ अकर्म्मणो वक्तव्यतोक्ता, अथाकर्म्मविपर्ययभूतस्य कर्म्मणो वक्तव्यतामाह—

दुक्खी भंते ! दुक्खेणं फुडे अदुक्खी दुक्खेणं फुडे ?, गोयमा ! दुक्खी दुक्खेणं फुडे नो अदुक्खी दुक्खेणं फुडे । दुक्खी णं भंते ! नेरतिए दुक्खेण फुडे अदुक्खी नेरतिए दुक्खेणं फुडे ?, गोयमा ! दुक्खी नेरइए दुक्खेणं फुडे नो अदुक्खी नेरतिए दुक्खेणं फुडे, एवं दंडओ जाव वेमाणियाणं, एवं पंच दंडगा नेयव्वा–दुक्खी दुक्खेणं फुडे १ दुक्खी दुक्खं परियायइ २ दुक्खी दुक्खं उदीरेइ ३ दुक्खी दुक्खं वेदेति ४ दुक्खी दुक्खं निज्जरेति ५॥ (सूत्रं २६६) ॥

' दुक्खी भंते ! दुक्खेण फुडे'त्ति दुःखनिमित्तत्वात् दुःखं–कर्म्म तद्वान् जीवो दुःखी भदन्त ! दुःखेन–दुःखहेतु-

७ शतके उद्देशः १ अकर्मगतिः सू २६५ दुःखी स्पृष्ट दुःखः सू २६६

॥२९०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२६६]

दीप अनुक्रम [३३४]

त्वात् कर्म्मणा–स्पृष्टो बद्धः 'नो अदुक्खी'त्यादि, 'नो' नैव अदुःखी–अकर्म्मा दुःखेन स्पृष्टः, सिद्धस्यापि तत्प्रसङ्गादिति, 'एवं पंच दंडका णेयव्व'त्ति 'एवम्' इत्यनन्तरोक्ताभिलापेन पञ्च दण्डका नेतव्याः, तत्र दुःखी दुःखेन स्पृष्ट इत्येक उक्त एव १, 'दुक्खी दुक्खं परियायइ'त्ति द्वितीयः,तत्र 'दुःखी' कर्म्मवान् 'दुःखं' कर्म्म 'पर्यादत्ते' सामस्त्येनोपादत्ते, निधत्तादि करोतीत्यर्थः २, 'उदीरेइ'त्ति तृतीयः ३, 'वेएइ'त्ति चतुर्थः ४, 'निज्जरेइ'त्ति पञ्चमः ५, उदीरणवेदननिर्जरणानि तु व्याख्यातानि प्रागिति ॥ कर्म्मबन्धाधिकारात्कर्म्मबन्धचिन्तान्वितमनगारसूत्रं, अनगाराधिकाराच्च तत्पानकभोजनसूत्राणि—

अणगारस्स णं भंते ! अणाउत्तं गच्छमाणस्स वा चिट्ठमाणस्स वा निसियमाणस्स (वा) तुयट्टमाणस्स वा अणाउत्तं वत्थं पडिग्गहं कंबलं पायपुंछणं गेण्हमाणस्स वा निक्खिवमाणस्स वा तस्स णं भंते ! किं ईरियावहिया किरिया कज्जइ ? संपराइया किरिया कज्जइ ?, गो० नो ईरियावहिया किरिया कज्जति संपराइया किरिया कज्जति । से केणट्ठेणं० ?, गोयमा ! जस्स णं कोहमाणमायालोभा वोच्छिन्ना भवंति तस्स णं ईरियावहिया किरिया कज्जइ नो संपराइया किरिया कज्जइ, जस्स णं कोहमाणमायालोभा अवोच्छिन्ना भवंति तस्स णं संपरायकिरिया कज्जइ नो ईरियावहिया, अहासुत्तं रीयमाणस्स ईरियावहिया किरिया कज्जइ उस्सुत्तं रीयमाणस्स संपराइया किरिया कज्जइ, से णं उस्सुत्तमेव रियति, से तेणट्ठेणं० ॥(सूत्रं २६७) अह भंते ! सइंगालस्स सधूमस्स संजोयणादोसदुट्ठस्स पाणभोयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ?, गोयमा ! जे णं निग्गंथे वा निग्गंथी वा फासुएसणिज्जं असणपाण ४ पडिगाहित्ता मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववन्ने आहारं आहारेति एस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णं गोयमा ! सइंगाले पाणभोयणे, जे णं निग्गंथे वा निग्गंथी वा फासुएसणिज्जं असणपाण ४ पडिगाहित्ता महया २ अप्पत्तियकोहकिलामं करेमाणे आहारमाहारेइ एस णं गोयमा ! सधूमे पाणभोयणे, जे णं निग्गंथे वा २ जाव पडिग्गहेत्ता गुणुप्पायणहेउं अन्नदव्वेण सद्धिं संजोएत्ता आहारमाहारेइ एस णं गोयमा ! संजोयणादोसदुट्ठे पाणभोयणे, एस णं गोयमा ! सइंगालस्स सधूमस्स संजोयणादोसदुट्ठस्स पाणभोयणस्स अट्ठे पन्नत्ते । अह भंते ! वीतिंगालस्स वीयधूमस्स संजोयणादोसविप्पमुक्कस्स पाणभोयणस्स के अट्ठे पन्नत्ते ?, गोयमा ! जे णं णिग्गंथो वा जाव पडिगाहेत्ता अमुच्छिए जाव आहारेति एस णं गोयमा ! वीतिंगाले पाणभोयणे, जे णं निग्गंथे निग्गंथी वा २ जाव पडिगाहेत्ता णो महया अप्पत्तियं जाव आहारेइ, एस णं गोयमा ! वीयधूमे पाणभोयणे, जे णं निग्गंथे निग्गंथी वा २ जाव पडिगाहेत्ता जहालद्धं तहा आहारमाहारेइ एस णं गोयमा ! संजोयणादोसविप्पमुक्के पाणभोयणे, एस णं गोयमा ! वीतिंगालस्स वीयधूमस्स संजोयणादोसविप्पमुक्कस्स पाणभोयणस्स अट्ठे पन्नत्ते।(सूत्रं २६८)अह भंते!खेत्तातिक्कंतस्स कालातिक्कंतस्स मग्गातिक्कंतस्स पमाणातिक्कंतस्स पाणभोयणस्स के अट्ठे पन्नत्ते ?, गो० जे णं निग्गंथे वा निग्गंथी वा फासुएसणिज्जंणं असणं४अणुग्गए सूरिए पडिग्गाहित्ता उग्गए सूरिए आहारमाहारेति एस णं गोयमा ! खित्तातिक्कंते पाणभोयणे, जे णं निग्गंथो वा २ जाव साइमं पढमाए पोरिसीए पडिग्गाहेत्ता पच्छिमं पोरिसिं उवायणावेत्ता आहारं आहारेइ एस णं गोयमा ! कालातिक्कंते पाणभोयणे, जे णं निग्गंथो वा २ जाव साइमं पडिगाहित्ता परं अद्धजोयण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२६७--२६९]

दीप अनुक्रम [३३५--३३७]

मेराए वीइक्कमावइत्ता आहारमाहारेइ एस णं गोयमा ! मग्गातिक्कंते पाणभोयणे, जे णं निग्गंथो वा निग्गंथी वा फासुएसणिज्जं जाव साइमं पडिगाहित्ता परं बत्तीसाए कुक्कुडिअंडगपमाणमेत्ताणं कवलाणं आहारमाहारेइ एस णं गोयमा ! पमाणाइक्कंते पाणभोयणे, अट्ठकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाहारेमाणे अप्पाहारे दुवालसकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाहारेमाणे अवड्ढोमोयरिया सोलसककुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाहारेमाणे दुभागप्पत्ते चउवीसं कुक्कुडिअंडगप्पमाणे जाव आहारमाहारेमाणे ओमोदरिए बत्तीसं कुक्कुडिअंडगमेत्ते कवले आहारमाहारेमाणे पमाणप्पत्ते, एत्तो एक्केणवि गासेणं ऊणगं आहारमाहारेमाणे समणे निग्गंथे नो पकामरसभोई इति वत्तव्वं सिया, एस णं गोयमा ! खेत्तातिक्कंतस्स कालातिक्कंतस्स मग्गातिक्कंतस्स पमाणातिक्कंतस्स पाणभोयणस्स अट्ठे पन्नत्ते ॥ (सूत्रं २६९) ॥

तत्र च 'वोच्छिन्ने'त्ति अनुदिताः, 'सइंगालस्स'त्ति चारित्रेन्धनमङ्गारमिव यः करोति भोजनविषयरागाग्निः सोऽङ्गार एवोच्यते तेन सह यद्वर्त्तते पानकादि तत् साङ्गारं तस्य 'सधूमस्स'त्ति चारित्रेन्धनधूमहेतुत्वात् धूमो–द्वेषस्तेन सह यत्पानकादि तत् सधूमं तस्य 'संजोयणादोसदुट्ठस्स'त्ति संयोजना–द्रव्यस्य गुणविशेषार्थं द्रव्यान्तरेण योजनं सैव दोषस्तेन दुष्टं यत्तत्तथा तस्य 'जे णं'ति विभक्तिपरिणामाद्यमाहारमाहारयतीति सम्बन्धः 'मुच्छिए'त्ति मोहवान् दोषानभिज्ञत्वात् 'गिद्धे'त्ति तद्विशेषाकाङ्क्षावान् 'गढिए'त्ति तद्गतस्नेहतन्तुभिः संदर्भितः 'अज्झोववन्ने'त्ति तदेकाग्रतां गतः 'आहारमाहारेइ'त्ति भोजनं करोति 'एस णं'ति 'एषः' आहारः साङ्गारं पानभोजनं, 'महया अप्पत्तियं'ति महदप्रीतिकम्-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२६७--२६९]

दीप अनुक्रम [३३५--३३७]

अप्रेम 'कोहकिलामं'ति क्रोधात्क्रमः– शरीरायासः क्रोधक्रमोऽतस्तं, 'गुणुप्पायणहेउं'ति रसविशेषोत्पादनायेत्यर्थः, वीइंगालस्स'त्ति वीतो गतोऽङ्गारो–रागो यस्मात्तद्वीताङ्गारं, 'खेत्ताइक्कंतस्स'त्ति क्षेत्रं–सूर्यसम्बन्धि तापक्षेत्रं दिनमित्यर्थः तदतिक्रान्तं यत्तत् क्षेत्रातिक्रान्तं तस्य, 'कालाइक्कंतस्स'त्ति कालं–दिवसस्य प्रहरत्रयलक्षणमतिक्रान्तं कालातिक्रान्तं तस्य, 'मग्गाइक्कंतस्स'त्ति अर्द्धयोजनमतिक्रान्तस्य 'पमाणाइक्कंतस्स'त्ति द्वात्रिंशत्कवललक्षणमतिक्रान्तस्य, 'उवाइणावित्त'त्ति उपादापय्य–प्रापय्येत्यर्थः परं 'अद्धजोयणमेराए'त्ति अर्द्धयोजनलक्षणमर्यादायाः परत इत्यर्थः 'वीतिक्कमावेत्त'त्ति व्यतिक्रमय्य–नीत्वेत्यर्थः, 'कुक्कुडिअंडगपमाणमेत्ताणं'ति कुक्कुट्यण्डकस्य यत् प्रमाणं–मानं तत् परिमाणं–मानं येषां ते तथा, अथवा कुकुटीव–कुटीरमिव जीवस्याश्रयत्वात् कुटी–शरीरं कुत्सिता अशुचिप्रायत्वात् कुटी कुकुटी तस्या अण्डकमिवाण्डकं–उदरपूरकत्वादाहारः कुक्कुट्यण्डकं तस्य प्रमाणतो मात्रा–द्वात्रिंशत्तमांशरूपा येषां ते कुक्कुट्यण्डकप्रमाणमात्रा अतस्तेषामयमभिप्रायः–यावान् यस्य पुरुषस्याहारस्तस्याहारस्य द्वात्रिंशत्तमो भागस्तत् पुरुषापेक्षया कवलः, इदमेव कवलमानमाश्रित्य प्रसिद्धकवलचतुःषष्ट्यादिमानाहारस्यापि पुरुषस्य द्वात्रिंशता कवलैः प्रमाणप्राप्ततोपपन्ना स्यात्, न हि स्वभोजनस्यार्द्धं भुक्तवतः प्रमाणप्राप्तत्वमुपपद्यते, प्रथमव्याख्यानं तु प्रायिकपक्षापेक्षयाऽवगन्तव्यमिति। 'अप्पाहारे'त्ति अल्पाहारः साधुर्भवतीति गम्यम्, अथवाऽष्टौ कुक्कुट्यण्डकप्रमाणमात्रान् कवलानाहारम् 'आहारयति' कुर्वति साधौ 'अल्पाहारः' स्तोकाहारः, चतुर्थांशरूपत्वात्तस्य, एवमुत्तरत्रापि 'आहारेमाणे' इत्येतत्पदं प्रथमैकवचनान्तं सप्तम्येकवचनान्तं वा व्याख्येयम्। 'अवड्ढोमोयरिय'त्ति अवमस्य–ऊनस्योदरस्य करणमवमोदरिका, अपकृष्टं–किञ्चिदू-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२६७--२६९]

दीप अनुक्रम [३३५--३३७]

नमर्द्धं यस्यां साऽपार्द्धा द्वात्रिंशत्कवलापेक्षया द्वादशानामपार्द्धरूपत्वात् अपार्द्धा चासाववमोदरिका चेति समासः सा भवतीत्येवं सप्तम्यन्तव्याख्यानं नेयं, प्रथमान्तव्याख्यानं तु धर्म्मधर्म्मिणोरभेदादपार्द्धावमौदरिकः साधुर्भवतीत्येवं नेतव्यं, 'दुभागप्पत्ते'त्ति द्विभागः–अर्द्धं तत्प्राप्तो द्विभागप्राप्त आहारो भवतीति गम्यं, द्विभागो वा प्राप्तोऽनेनेति द्विभागप्राप्तः साधुर्भवतीति गम्यम्, 'ओमोयरिय'त्ति अवमोदरिका भवति धर्म्मधर्म्मिणोरभेदाद्वाऽवमोदरिकः साधुर्भवतीति गम्यं, 'पकामरसभोइ'त्ति प्रकामं–अत्यर्थं रसानां– मधुरादिभेदानां भोगी–भोक्ता प्रकामरसभोगीति ॥

अह भंते ! सत्थातीयस्स सत्थपरिणामियस्स एसियस्स वेसियस्स समुदाणियस्स पाणभोयणस्स के अट्ठे पन्नत्ते ?, गोयमा ! जे णं निग्गंथे वा निग्गंथी वा निक्खित्तसत्थमुसले ववगयमालावन्नगविलेवणे ववगयचुयचइयचत्तदेहं जीवविप्पजढं अकयमकारियमसंकप्पियमणाहूयमकीयकडमणुद्दिट्ठं नवकोडीपरिसुद्धं दसदोसविप्पमुक्कं उग्गमुप्पायणेसणासुपरिसुद्धं वीतिंगालं वीतधूमं संजोयणादोसविप्पमुक्कं असुरसुरं अचवचवं अदुयमविलंबियं अपरिसाडीं अक्खोवंजणवणाणुलेवणभूयं संयमजायामायावत्तियं संजमभारवहणट्ठयाए बिलमिव पन्नगभूएणं अप्पाणेणं आहारमाहारेति एस णं गोयमा ! सत्थातीयस्स सत्थपरिणामियस्स जाव पाणभोयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥ (सूत्रं २७०)॥ सत्तमसए पढमो उद्देसो समत्तो ७-१॥

'सत्थातीतस्स'त्ति शस्त्राद्–अग्न्यादेरतीतं–उत्तीर्णं शस्त्रातीतम्, एवंभूतं च तथाविधपृथुकादिवदपरिणतमपि स्यादत आह– 'सत्थपरिणामियस्स'त्ति वर्णादीनामन्यथाकरणेनाचित्तीकृतस्येत्यर्थः, अनेन प्रासुकत्वमुक्तम्, 'एसियस्स'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥२९३॥

एषणीयस्य गवेषणाविशुद्ध्या वा गवेषितस्य 'वेसियस्स' त्ति विशेषेण विविधैर्वा प्रकारैरेषितं–व्येषितं ग्रहणैषणाग्रासैषणा-विशोधितं तस्य, अथवा वेषो–मुनिनेपथ्यं स हेतुर्लाभे यस्य तद्वैषिकम्–आकारमात्रदर्शनादवासं न त्वावर्ज्जनया, अनेन पुनरुत्पादनादोषापोहमाह, 'सामुदाणियस्स' त्ति ततस्ततो भिक्षारूपस्य, किंभूतो निर्ग्रन्थः? इत्याह–'निक्खित्तसत्थमुसले' त्ति त्यक्तखड्गादिशस्त्रमुशलः 'ववगयमालावन्नगविलेवणे' त्ति व्यपगतपुष्पमालाचन्दनानुलेपनः, स्वरूपविशेषणे चेमे न तु व्यवच्छेदार्थे, निर्ग्रन्थानामेवंरूपत्वादेवेति, 'ववगयचुयचइयचत्तदेहं' ति व्यपगताः–स्वयं पृथग्भूता भोज्यवस्तुसंभवा आगन्तुका वा कृम्यादयः च्युता–मृताः स्वत एव परतो वाऽभ्यवहार्यवस्त्वात्मकाः पृथिवीकायिकादयः 'चइय' त्ति त्याजिता–भोज्यद्रव्यात् पृथक्कारिता दायकेन 'चत्त' त्ति स्वयमेव दायकेन त्यक्ता–भक्ष्यद्रव्यात्पृथक्कृता 'देहा' अभेदविवक्षया देहिनो यस्मात् स तथा तमाहारं, वृद्धव्याख्या तु व्यपगतः–ओघतश्चेतनापर्यायादपेतः च्युतः–जीववक्रियातो भ्रष्टः च्यावितः–स्वत एवायुष्कक्षयेण भ्रंशितः त्यक्तदेहः–परित्यक्तजीवसंसर्गजनिताहारप्रभवोपचयः, तत एषां कर्म्मधारयोऽतस्तं, किमुक्तं भवति ? इत्याह– 'जीवविप्पजढं' ति प्रासुकमित्यर्थः 'अकयमकारियमसंकप्पियमणाहूयमकीयगडमणुद्दिट्ठं' अकृतं–साध्वर्थमनिर्वर्तितं दायकेन, एवमकारितं दायकेनैव, अनेन विशेषणद्वयेनानाधाकर्म्मिकउपात्तः 'असङ्कल्पितं' स्वार्थं संस्कुर्वता साध्वर्थतया न सङ्कल्पितम्, अनेनाप्यनाधाकर्म्मिक एव गृहीतः, स्वार्थमारब्धस्य साध्वर्थं निष्ठां गतस्याप्याधाकर्म्मिकत्वात्, न च विद्यते आहूतं–आह्वानमामन्त्रणं नित्यं मद्गृहे पोषमात्रमन्नं ग्राह्यमित्येवंरूपं कर्म्मकराद्याकारणं वा साध्वर्थं स्थानान्तरादन्नाद्यानयनाय यत्र सोऽनाहूतः–अनित्यपिण्डोऽनभ्याहृतो वेत्य-

७ शतके उद्देशः १ शस्त्रातीतादेरर्थः सू २७०

॥२९३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

र्थः, स्पर्द्धा वाऽऽहृतं तन्निषेधादनाहूतो, दायकेनास्पर्द्धया दीयमानमित्यर्थः, अनेन भावतोऽपरिणताभिधानएषणादोषनिषेध उक्तोऽतस्तम् 'अक्रीतकृतं' क्रयेण साधुदेयं न कृतम्, अनुद्दिष्टम्–अनौद्देशिकं, 'नवकोडीपरिसुद्धं'ति इह कोटयो विभागास्ताश्चेमाः–बीजादिकं जीवं न हन्ति न घातयति घ्नन्तं नानुमन्यते ३, एवं न पचति ३ न क्रीणाति ३ इत्येवंरूपाः, 'दसदोसविप्पमुक्कं'ति दोषाः–शङ्कितम्रक्षितादयः 'उग्गमुप्पायणेसणासुपरिसुद्धं'ति उद्गमश्च–आधाकर्म्मादिः षोडशविधः उत्पादना च–धात्रीदूत्यादिका षोडशविधैव उद्गमोत्पादने एतद्विषया या एषणा–पिण्डविशुद्धिस्तया सुष्ठु परिशुद्धो यः स उद्गमोत्पादनैषणासुपरिशुद्धोऽतस्तम्, अनेन चोक्तानुक्तसङ्ग्रहः कृतः, वीताङ्गारादीनि क्रियाविशेषणान्यपि भवन्ति, प्रायोऽनेन च ग्रासैषणाविशुद्धिरुक्ता, 'असुरसुरं'ति अनुकरणशब्दोऽयम्, एवमचवचवमित्यपि, 'अदुयं'ति अशीघ्रम् 'अविलंबियं'ति नातिमन्थरं 'अपरिसाडिं'ति अनवयवोज्झनम् 'अक्खोवंजणवणाणुलेवणभूयं'ति अक्षोपाङ्गनं च–शकटधूर्क्षणं व्रणानुलेपनं च–क्षतस्यौषधेन विलेपनं अक्षोपाङ्गनव्रणानुलेपने ते इव विवक्षितार्थसिद्धिरशनादिनिरभिष्वङ्गतासाधर्म्याद्यः सोऽक्षोपाङ्गनव्रणानुलेपनभूतोऽतस्तं, क्रियाविशेषणं वा, 'संजमजायामायावत्तियं'ति संयमयात्रा–संयमानुपालनं सैव मात्रा–आलम्बनसमूहांशः संयमयात्रामात्रा तदर्थं वृत्तिः–प्रवृत्तिर्यत्राहारे स संयमयात्रामात्रावृत्तिकोऽतस्तं संयमयात्रामात्रावृत्तिकं वा यथा भवति संयमयात्रामात्रा प्रत्ययो यत्र स तथाऽतस्तं संयमयात्रामात्राप्रत्ययं वा यथा भवति, एतदेव वाक्यान्तरेणाह– 'संयमभारवहणट्ठयाए'त्ति संयम एव भारस्तस्य वहनं–पालनं स एवार्थः संयमभारवहनार्थस्तद्भावस्तत्ता तस्यै, 'बिलमिव पन्नगभूएणं अप्पाणेणं'ति बिले इव–रन्ध्रे इव 'पन्नगभूतेन'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सर्प्पकल्पेन आत्मना करणभूतेनाहारमुक्तविशेषणम् 'आहारयति' शरीरकोष्ठके प्रक्षिपति, यथा किल बिले सर्प्प आत्मानं प्रवेशयति पार्श्वानसंस्पृशन् एवं साधुर्वदनकन्दरपार्श्वानसंस्पृशन्नाहारेण तदसञ्चारणतो जठरबिले आहारं प्रवेशयतीति, 'एस णं'ति 'एषः अनन्तरोक्तविशेषण आहारः शस्त्रातीतादिविशेषणस्य पानभोजनस्य 'अर्थः–अभिधेयः प्रज्ञप्त इति ॥

॥ सप्तमशते प्रथमोद्देशकः ॥ ७–१ ॥

प्रथमोद्देशके प्रत्याख्यानिनो वक्तव्यतोक्ता द्वितीये तु प्रत्याख्यानं निरूपयन्नाह—

से नूणं भंते ! सव्वपाणेहिं सव्वभूएहिं सव्वजीवेहिं सव्वसत्तेहिं पच्चक्खायमिति वदमाणस्स सुपच्चक्खायं भवति दुपच्चक्खायं भवति ?, गोयमा ! सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं पच्चक्खायमिति वदमाणस्स सिय सुपच्चक्खायं भवति सिय दुपच्चक्खायं भवति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सव्वपाणेहिं जाव सिय दुपच्चक्खायं भवति ?, गोयमा ! जस्स णं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं पच्चक्खायमिति वदमाणस्स णो एवं अभिसमन्नागयं भवति इमे जीवा इमे अजीवा इमे तसा इमे थावरा तस्स णं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं पच्चक्खायमिति वदमाणस्स नो सुपच्चक्खायं भवति दुपच्चक्खायं भवति, एवं खलु से दुपच्चक्खाई सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं पच्चक्खायमिति वदमाणो नो सच्चं भासं भासइ मोसं भासं भासइ, एवं खलु से मुसावाई सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं तिविहं तिविहेणं असंजयविरयपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे सकिरिए असंवुडे एगंतदंडे एगंतबाले यावि भवति, जस्स णं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं पच-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तम-शतके प्रथम-उद्देशकः समाप्तः

अथ सप्तम-शतके द्वितीय-उद्देशकः आरम्भः

प्रत सूत्रांक [२७१]

दीप अनुक्रम [३३९]

क्खायमिति वदमाणस्स एवं अभिसमन्नागयं भवइ–इमे जीवा इमे अजीवा इमे तसा इमे थावरा, तस्स णं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं पच्चक्खायमिति वदमाणस्स सुपच्चक्खायं भवति नो दुपच्चक्खायं भवति, एवं खलु से सुपच्चक्खाई सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं पच्चक्खायमिति वयमाणे सच्चं भासं भासइ नो मोसं भासं भासइ, एवं खलु से सच्चवादी सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं तिविहं तिविहेणं संजयविरयपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे अकिरिए संवुडे एगंतपंडिएयावि भवति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव सिय दुपच्चक्खायं भवति ॥ (सूत्रं २७१)

'से नूण' मित्यादि, 'सिय सुपच्चक्खायं सिय दुपच्चक्खायं'इति प्रतिपाद्य यत्प्रथमं दुष्प्रत्याख्यानत्ववर्णनं कृतं तद्यथासङ्ख्यन्यायत्यागेन यथाऽऽसन्नतान्यायमङ्गीकृत्येति द्रष्टव्यं, 'नो एवं अभिसमन्नागयं भवति'त्ति 'नो' नैव 'एवम्'इति वक्ष्यमाणप्रकारमभिसमन्वागतं–अवगतं स्यात्, 'नो सुपच्चक्खायं भवति'त्ति ज्ञानाभावेन यथावदपरिपालनात् सुप्रत्याख्यानत्वाभावः, 'सव्वपाणेहिं'ति सर्वप्राणेषु ४ 'तिविहं'ति त्रिविधं कृतकारितानुमतिभेदभिन्नं योगमाश्रित्य 'तिविहेणं'ति त्रिविधेन मनोवाक्कायलक्षणेन करणेन 'असंजयविरयपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे'त्ति संयतो–वधादिपरिहारे प्रयतः विरतो–वधादेर्निवृत्तः प्रतिहतानि–अतीतकालसम्बन्धीनि निन्दातः प्रत्याख्यातानि चानागतप्रत्याख्यानेन पापानि कर्माणि येन स तथा, ततः संयतादिपदानां कर्म्मधारयस्ततस्तन्निषेधाद् असंयतविरतप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा, अत एव 'सकिरिए'त्ति कायिक्यादिक्रियायुक्तः सकर्म्मबन्धनो वाऽत एव 'असंवुडे'त्ति असंवृताश्रवद्वारः,अत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२७१]

दीप अनुक्रम [३३९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥२९५॥

एव 'एगंतदंडे'त्ति एकान्तेन–सर्वथैव परान् दण्डयतीत्येकान्तदण्डः, अत एव 'एकान्तबालः' सर्वथा बालिशोऽज्ञ इत्य-र्थः ॥ प्रत्याख्यानाधिकारादेव तद्भेदानाह—

कतिविहे णं भंते ! पच्चक्खाणे पन्नत्ते ?, गोयमा ! दुविहे पच्चक्खाणे पन्नत्ते, तंजहा–मूलगुणपच्चक्खाणे य उत्तरगुणपच्चक्खाणे य । मूलगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! दुविहे पन्नत्ते, तंजहा–सव्व-मूलगुणपच्चक्खाणे य देसमूलगुणपच्चक्खाणे य, सव्वमूलगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा–सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं जाव सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं । देसमूलगुण-पच्चक्खाणे णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा–थूलाओ पाणाइवायाओ वेरमणं जाव थूलाओ परिग्गहाओ वेरमणं । उत्तरगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! दुविहे पन्नत्ते, तंजहा–सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणे य देसुत्तरगुणपच्चक्खाणे य, सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! दसविहे पन्नत्ते, तंजहा–अणागय १ मइक्कंतं २ कोडीसहियं ३ नियंटियं ४ चेव। सागार ५ मणागारं ६ परिमाणकडं ७ निरवसेसं ८ ॥ १ ॥ साकेयं ९ चेव अद्धाए १० पच्चक्खाणं भवे दसहा । देसुत्तरगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! सत्तविहे पन्नत्ते, तंजहा–दिसिव्वयं १ उवभोगप-रीभोगपरिमाणं २ अन्नत्थदंडवेरमणं ३ सामाइयं ४ देसावगासियं ५ पोसहोववासो ६ अतिहिसंविभागो ७ अपच्छिममारणंतियसंलेहणाझूसणाराहणता (सूत्रं २७२)

७ शतके उद्देशः २ जीवादिज्ञा ता सुप्रत्या-ख्यानः मू-लोत्तरभे-दाःसू २७१ २७२

॥२९५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्याखानस्य मूल-उत्तरगुणरूप भेदा:

प्रत सूत्रांक [२७२] + गाथा

दीप अनुक्रम [३४०--३४२]

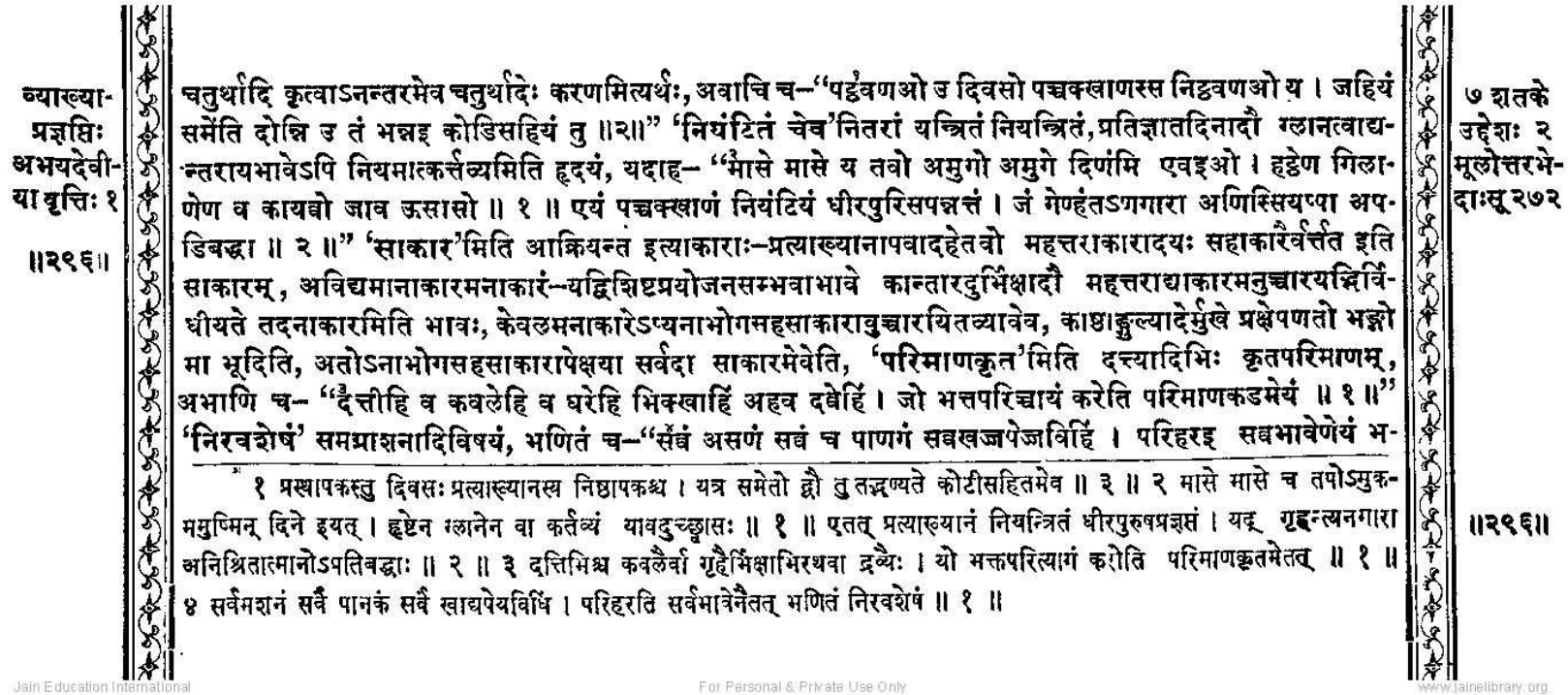
'कतिविहे ण'मित्यादि, मूलगुणपच्चक्खाणे य'त्ति चारित्रकल्पवृक्षस्य मूलकल्पा गुणाः–प्राणातिपातविरमणादयो मूलगुणास्तद्रूपं प्रत्याख्यानं–निवृत्तिर्मूलगुणविषयं वा प्रत्याख्यानं–अभ्युपगमो मूलगुणप्रत्याख्यानम् 'उत्तरगुणपच्चक्खाणे य'त्ति मूलगुणापेक्षयोत्तरभूता गुणा वृक्षस्य शाखा इवोत्तरगुणास्तेषु प्रत्याख्यानमुत्तरगुणप्रत्याख्यानं, 'सव्वमूलगुणे'त्यादि, सर्वथा मूलगुणप्रत्याख्यानं सर्वमूलगुणप्रत्याख्यानं देशतो मूलगुणप्रत्याख्यानं देशमूलगुणप्रत्याख्यानं, तत्र सर्वमूलगुणप्रत्याख्यानं सर्वविरतानां, देशमूलगुणप्रत्याख्यानं तु देशविरतानाम् ॥ 'अणागय'गाहा, अनागतकरणादनागतं, पर्युषणादावाचार्यादिवैयावृत्त्यकरणेनान्तरायसद्भावादारत एव तत्तपःकरणमित्यर्थः, आह च–"होही पज्जोसवणा मम य तया अंतराइयं होज्जा। गुरुवेयावच्चेणं १ तवस्सि २ गेलण्णयाए वा ३ ॥१॥ सो दाइ तवोकम्मं पडिवज्जइ तं अणागए काले। एयं पच्चक्खाणं अणागयं होइ नायव्वं ॥ २॥"[1] इति, एवमतिक्रान्तकरणादतिक्रान्तं, भावना तु प्राग्वत्, उक्तं च–"पज्जोसवणाइ तवं जो खलु न करेइ कारणज्जाए। गुरुवेयावच्चेणं १ तवस्सि २ गेलण्णयाए वा ३ ॥ १ ॥ सो दाइ तवोकम्मं पडिवज्जइ तं अइच्छिए काले। एयं पच्चक्खाणं अतिकंतं होइ नायव्वं ॥२॥" ति, कोटीसहितमिति–मीलितप्रत्याख्यानद्वयकोटि

---

१ भविष्यति पर्युषणा मम च तदाऽन्तरायो भविष्यति। गुरुवैयावृत्त्येन तपस्विवै० ग्लानतया वा ॥ १ ॥ तदिदानीं तपःकर्म प्रतिपद्ये तदनागते काले। एतत् प्रत्याख्यानं अनागतं भवति ज्ञातव्यं ॥ २ ॥ २ पर्युषणायां तपो य एव न अकार्षं कारणजाते। गुरुवैयावृत्त्येन तपस्विवै० ग्लानतया वा ॥१॥ तदिदानीं तपःकर्म प्रतिपद्ये तदतिक्रान्ते काले। एतत् प्रत्याख्यानमतिक्रान्तं भवति ज्ञातव्यं ॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्याखानस्य मूल-उत्तरगुणरूप भेदा:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥२९६॥

चतुर्थादि कृत्वाऽनन्तरमेव चतुर्थादेः करणमित्यर्थः, अवाचि च–"पट्ठवणओ उ दिवसो पच्चक्खाणस्स निट्ठवणओ य । जहियं समेंति दोन्नि उ तं भन्नइ कोडिसहियं तु ॥२॥" 'नियंटितं चेव'नितरां यन्त्रितं नियन्त्रितं,प्रतिज्ञातदिनादौ ग्लानत्वाद्यन्तरायभावेऽपि नियमात्कर्त्तव्यमिति हृदयं, यदाह– "मासे मासे य तवो अमुगो अमुगे दिणंमि एवइओ । हट्ठेण गिलाणेण व कायवो जाव ऊसासो ॥ १ ॥ एयं पच्चक्खाणं नियंटियं धीरपुरिसपन्नत्तं । जं गेण्हंतऽगगारा अणिस्सियप्पा अपडिबद्धा ॥ २ ॥" 'साकार'मिति आक्रियन्त इत्याकाराः–प्रत्याख्यानापवादहेतवो महत्तराकारादयः सहाकारैर्वर्त्तत इति साकारम्, अविद्यमानाकारमनाकारं–यद्विशिष्टप्रयोजनसम्भवाभावे कान्तारदुर्भिक्षादौ महत्तराद्याकारमनुच्चारयद्भिर्विधीयते तदनाकारमिति भावः, केवलमनाकारेऽप्यनाभोगसहसाकारावुच्चारयितव्यावेव, काष्ठाकुल्यादेर्मुखे प्रक्षेपणतो भङ्गो मा भूदिति, अतोऽनाभोगसहसाकारापेक्षया सर्वदा साकारमेवेति, 'परिमाणकृत'मिति दत्त्यादिभिः कृतपरिमाणम्, अभाणि च– "दत्तीहि व कवलेहि व घरेहि भिक्खाहिं अहव दवेहिं । जो भत्तपरिच्चायं करेति परिमाणकडमेयं ॥ १ ॥" 'निरवशेषं' समग्राशनादिविषयं, भणितं च–"सव्वं असणं सव्वं च पाणगं सवखज्जपेज्जविहिं । परिहरइ सवभावेणेयं भ-

१ प्रस्थापकस्तु दिवसः प्रत्याख्यानस्य निष्ठापकश्च । यत्र समेतो द्वौ तु तद्भण्यते कोटीसहितमेव ॥ ३ ॥ २ मासे मासे च तपोऽमुकमुष्मिन् दिने इयत् । हृष्टेन ग्लानेन वा कर्तव्यं यावदुच्छ्वासः ॥ १ ॥ एतत् प्रत्याख्यानं नियन्त्रितं धीरपुरुषप्रज्ञप्तं । यद् गृह्णन्त्यनगारा अनिश्रितात्मानोऽप्रतिबद्धाः ॥ २ ॥ ३ दत्तिभिश्च कवलैर्वा गृहैर्भिक्षाभिरथवा द्रव्यैः । यो भक्तपरित्यागं करोति परिमाणकृतमेतत् ॥ १ ॥ ४ सर्वमशनं सर्वं पानकं सर्वं खाद्यपेयविधिं । परिहरति सर्वभावेनैतत् भणितं निरवशेषं ॥ १ ॥

७ शतके उद्देशः २ मूलोत्तरभेदाःसू २७२

॥२९६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्याखानस्य मूल-उत्तरगुणरूप भेदा:

णियं निरवसेसं ॥ १ ॥" 'साएयं चेव'त्ति केतः–चिह्नं सह केतेन वर्त्तते सकेतं, दीर्घता च प्राकृतत्वात्, सङ्केतयुक्तत्वाद्वा सङ्केतम्–अङ्गुष्ठसहितादि, यदाह–"[1]अंगुट्ठमुट्ठिगंठीघरसेऊसासथिबुगजोइक्खे । भणियं सकेयमेयं धीरेहिं अणंतणाणीहिं ॥ १ ॥" 'अद्धाए'त्ति अद्धा–कालस्तस्याः प्रत्याख्यानं–पौरुष्यादिकालस्य नियमनम्, आह च–"[2]अद्धापच्चक्खाणं जं तं कालप्पमाणछेएणं । पुरिमड्ढपोरुसीहिं मुहुत्तमासद्धमासेहिं ॥ १ ॥" 'उवभोगपरिभोगपरिमाणं'ति उपभोगः–सकृद्भोगः, स चाशनपानानुलेपनादीनां, परिभोगस्तु पुनः पुनर्भोगः, स चाशनशयनवसनवनितादीनाम्, 'अपच्छिममारणंतिय-संलेहणाझूसणाराहणय'त्ति पश्चिमैवामङ्गलपरिहारार्थमपश्चिमा मरणं–प्राणत्यागलक्षणम्, इह यद्यपि प्रतिक्षणमावीची-मरणमस्ति तथापि न तद्गृह्यते, किं तर्हि ?, विवक्षितसर्वायुष्कक्षयलक्षणं इति, मरणमेवान्तो मरणान्तस्तत्र भवा मारणा-न्तिकी संलिख्यते–कृशीक्रियतेऽनया शरीरकषायादीति संलेखना–तपोविशेषलक्षणा ततः कर्म्मधारयाद् अपश्चिममा-रणान्तिकसंलेखना तस्या जोषणं–सेवनं तस्याराधनम्–अखण्डकालकरणं तद्भावः अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणा-राधनता, इह च सप्त दिग्व्रतादयो देशोत्तरगुणा एव, संलेखना तु भजनया, तथाहि–सा देशोत्तरगुणवतो देशोत्तरगुणः, आवस्यके तथाऽभिधानात्, इतरस्य तु सर्वोत्तरगुणः साकारानाकारादिप्रत्याख्यानरूपत्वादिति संलेखनामविगणय्य

१ अङ्गुष्ठमुष्टिग्रन्थिगृहस्वेदोच्छ्वासस्तिबुकज्योतिष्काः । भणितं संकेतमेतत् धीरैरनन्तज्ञानिभिः ॥ १ ॥ २ तत् अद्धाप्रत्याख्यानं यत् कालप्रमाणच्छेदेन । पूर्वार्धपौरुषीभ्यां मुहूर्त्तमासार्धमासैः ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्याखानस्य मूल-उत्तरगुणरूप भेदा:

प्रत सूत्रांक [२७२]

दीप अनुक्रम [३४०--३४२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी या वृत्तिः १ ॥२९७॥

सप्त देशोत्तरगुणा इत्युक्तम्, अस्याश्चैतेषु पाठो देशोत्तरगुणधारिणाऽपीयमन्ते विधातव्येत्यस्यार्थस्य ख्यापनार्थ इति ॥ अथोक्तभेदेन प्रत्याख्यानेन तद्विपर्ययेण च जीवादिपदानि विशेषयन्नाह—

जीवा णं भंते ! किं मूलगुणपच्चक्खाणी उत्तरगुणपच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी ?, गोयमा ! जीवा मूलगुणपच्चक्खाणीवि उत्तरगुणपच्चक्खाणीवि अपच्चक्खाणीवि। नेरइया णं भंते ! किं मूलगुणपच्चक्खाणी० पुच्छा ?, गोयमा ! नेरइया नो मूलगुणपच्चक्खाणी नो उत्तरगुणपच्चखाणी अपच्चक्खाणी, एवं जाव चउरिंदिया, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य जहा जीवा, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा नेरइया ॥ एएसि णं भंते ! मूलगुणपच्चक्खाणी उत्तरगुणपच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी य कयरे २ हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा मूलगुणपच्चक्खाणी उत्तरगुणपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा अपच्चक्खाणी अनंतगुणा। एएसि णं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा पंचेंदियतिरिक्खजोणिया मूलगुणपच्चक्खाणी उत्तरगुणपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा अपच्चक्खाणी असंखिज्जगुणा। एएसि णं भंते ! मणुस्साणं मूलगुणपच्चक्खाणीणं० पुच्छा, गोयमा ! सव्वत्थोवा मणुस्सा मूलगुणपच्चक्खाणी उत्तरगुणपच्चक्खाणी संखेज्जगुणा अपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा। जीवा णं भंते ! किं सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी देसमूलगुणपच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी ?, गोयमा ! जीवा सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी देसमूलगुणपच्चक्खाणी अपच्चक्खाणीवि। नेरइयाणं पुच्छा, गोयमा ! नेरइया नो सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी नो देसमूलगुणपच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी, एवं जाव चउरिंदिया। पंचिंदि-

७ शतके उद्देशः २ मूलोत्तरभेदेषु दण्डका अल्पबहुत्वचित्ताच सू २७३

॥२९७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्याख्यान-विषयक; अल्प-बहुत्वं

प्रत सूत्रांक [२७३]

दीप अनुक्रम [३४३]

यतिरिक्खपुच्छा, गोयमा! पंचिंदियतिरिक्ख० नो सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी देसमूलगुणपच्चक्खाणी अपच्चक्खाणीवि, मणुस्सा जहा जीवा, वाणमंतरजोइसवेमाणिया जहा नेरइया। एएसि णं भंते! जीवाणं सव्वमूलगुणपच्चक्खाणीणं देसमूलगुणपच्चक्खाणीणं अपच्चक्खाणीण य कयरे२हिंतो जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी देसमूलगुणपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा अपच्चक्खाणी अणंतगुणा। एवं अप्पाबहुगाणि तिन्निवि जहा पढमिल्लए दंडए, नवरं सव्वत्थोवा पंचिंदियतिरिक्खजोणिया देसमूलगुणपच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा। जीवा णं भंते! किं सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणी देसुत्तरगुणपच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी?, गोयमा! जीवा सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणीवि तिन्निवि, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य एवं चेव, सेसा अपच्चक्खाणी जाव वेमाणिया। एएसि णं भंते! जीवाणं सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणी अप्पाबहुगाणि तिन्निवि जहा पढमे दंडए जाव मणूसाणं॥ जीवा णं भंते! किं संजया असंजया संजयासंजया?, गोयमा! जीवा संजयावि असंजयावि संजयासंजयावि तिन्निवि, एवं जहेव पन्नवणाए तहेव भाणियव्वं, जाव वेमाणिया, अप्पाबहुगं तहेव तिण्हवि भाणियव्वं॥ जीवा णं भंते! किं पच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी० पच्चक्खाणापच्चक्खाणी?, गोयमा! जीवा पच्चक्खाणीवि एवं तिन्निवि, एवं मणुस्साणवि तिन्निवि, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया आइल्लविरहिया सेसा सव्वे अपच्चक्खाणी जाव वेमाणिया। एएसि णं भंते! जीवाणं पच्चक्खाणीणं जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा पच्चक्खाणी पच्चक्खाणापच्चक्खाणी असंखे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्याख्यान-विषयक; अल्प-बहुत्वं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥२९८॥

ञ्जगुणा अपच्चक्खाणी अणंतगुणा, पंचेंदियतिरिक्खजोणिया सव्वत्थोवा पच्चक्खाणापच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा, मणुस्सा सव्वत्थोवा पच्चक्खाणी पच्चक्खाणापच्चक्खाणी संखेज्जगुणा अपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा ॥ (सूत्रं २७३)

'जीवा ण'मित्यादि, 'पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य जहा जीव'त्ति मूलगुणप्रत्याख्यानिन उत्तरगुणप्रत्याख्यानिनोऽप्रत्याख्यानिनश्च, नवरं पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो देशत एव मूलगुणप्रत्याख्यानिनः, सर्वविरतेस्तेषामभावात्, इह चोक्तं गाथया—"तिरियाणं चारित्तं निवारियं अह य तो पुणो तेसिं। सुबइ बहुयाणं चिय महव्वयारोवणं समए ॥ १ ॥" परिहारोऽपि गाथयैव–"महव्वयसब्भावेऽविय चरणपरिणामसंभवो तेसिं। न बहुगुणाणंपि जहा केवलसंभूइपरिणामो ॥ २ ॥"त्ति ॥ अथ मूलगुणप्रत्याख्यानादिमतामेवाल्पत्वादि चिन्तयति–'एएसि ण'मित्यादि, 'सव्वत्थोवा जीवा मूलगुणपच्चक्खाणी'ति देशतः सर्वतो वा ये मूलगुणवन्तस्ते स्तोकाः, देशसर्वाभ्यामुत्तरगुणवतामसङ्ख्येयगुणत्वात्, इह च सर्वविरतेषु ये उत्तरगुणवन्तस्तेऽवश्यं मूलगुणवन्तः, मूलगुणवन्तस्तु स्यादुत्तरगुणवन्तः स्यान्तद्विकलाः, य एव च तद्विकलास्त एवेह मूलगुणवन्तो ग्राह्याः, ते चेतरेभ्यः स्तोका एव, बहुतरयतीनां दशविधप्रत्याख्यानयुक्तत्वात्, तेऽपि च मूलगुणेभ्यः सङ्ख्यातगुणा एव नासङ्ख्यातगुणाः, सर्वयतीनामपि सङ्ख्यातत्वात्, देशविरतेषु पुनर्मूलगुणवद्भ्यो भिन्ना

१–तिरश्चां चारित्रं निवारितमथ च तत्पुनस्तेषां समये बहूनां महाव्रतारोपणं श्रूयत एव ॥ १ ॥ २–तेषां महाव्रतसद्भावेऽपि चरणपरिणामो न यथा बहुगुणानामपि केवलसंभूतिपरिणामः ॥ २ ॥

७ शतके उद्देशः २ मूलोत्तरभेदेषु दण्डका अल्पबहुत्व चित्ताच सू २७३

॥२९८॥

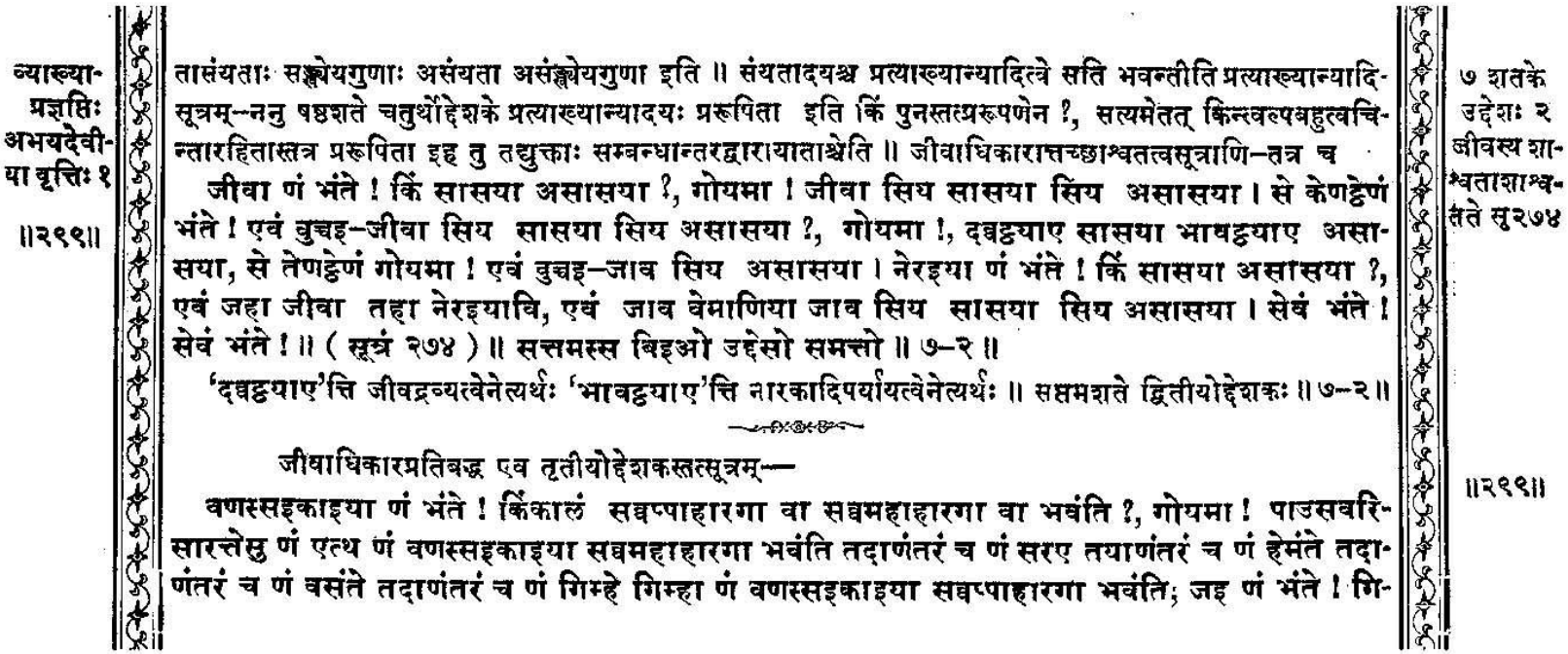
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्याख्यान-विषयक; अल्प-बहुत्वं

अप्युत्तरगुणिनो लभ्यन्ते, ते च मधुमांसादिविचित्राभिग्रहवशाद्बहुतरा भवन्तीतिकृत्वा देशविरतोत्तरगुणवतोऽधिकृत्योत्तरगुणवतां मूलगुणवद्भ्योऽसङ्खातगुणत्वं भवति, अत एवाह–'उत्तरगुणपच्चक्खाणी असंखेज्जगुण'त्ति, 'अपच्चक्खाणी अणंतगुण'त्ति मनुष्यपञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च एव प्रत्याख्यानिनोऽन्ये त्वप्रत्याख्यानिन एव, वनस्पतिप्रभृतिकत्वात्तेषामनन्तगुणत्वमिति । मनुष्यसूत्रे 'अपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणे'ति यदुक्तं तत्संमूर्च्छिममनुष्यग्रहणेनावसेयमितरेषां सङ्खातत्वादिति । 'एवं अप्पाबहुगाणि तिन्निवि जहा पढमिल्लए दंडए'त्ति तत्रैकं जीवानामिदमेव, द्वितीयं पञ्चेन्द्रियतिरश्चां, तृतीयं तु मनुष्याणाम्, एतानि च यथा निर्विशेषणगुणादिप्रतिबद्धे दण्डके उक्तानि एवमिह त्रीण्यपि वाच्यानि, विशेषमाह–'नवर'मित्यादि, 'पंचेंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य एवं चेव'त्ति यथा जीवाः सर्वोत्तरगुणप्रत्याख्यानादय उक्ता एवं पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो मनुष्याश्च वाच्याः, इह च पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चोऽपि सर्वोत्तरगुणप्रत्याख्यानिनो भवन्तीत्यवसेयं, देशविरतानां देशतः सर्वोत्तरगुणप्रत्याख्यानस्याभिमतत्वादिति ॥ मूलगुणप्रत्याख्यानिप्रभृतयश्च संयतादयो भवन्तीति संयतादिसूत्रम्–'तिन्निवि'त्ति जीवास्त्रिविधा अपीत्यर्थः, 'एवं जहेवे'त्यादि, 'एवम्' अनेनाभिलापेन यथैव प्रज्ञापनायां तथैव सूत्रमिदमध्येयं, तच्चैवम्–'नेरइया णं भंते ! किं संजया असंजया संजयासंजया ?, गोयमा ! नो संजया असंजया नो संजयासंजये'त्यादि । 'अप्पा'इत्यादि, अल्पबहुत्वं संयतादीनां तथैव यथा प्रज्ञापनायामुक्तं 'तिण्हवि'त्ति जीवानां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां मनुष्याणां च, तत्र सर्वस्तोकाः संयता जीवाः, संयतासंयता असङ्खेयगुणाः, असंयतास्त्वनन्तगुणाः, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चस्तु सर्वस्तोकाः संयतासंयताः असंयता असङ्खेयगुणाः, मनुष्यास्तु सर्वस्तोकाः संयताः संय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्याख्यान-विषयक; अल्प-बहुत्वं



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥२९९॥

तासंयताः सङ्ख्येयगुणाः असंयता असंङ्ख्येयगुणा इति ॥ संयतादयश्च प्रत्याख्यान्यादित्वे सति भवन्तीति प्रत्याख्यान्यादि-सूत्रम्–ननु षष्ठशते चतुर्थोद्देशके प्रत्याख्यान्यादयः प्ररूपिता इति किं पुनस्तत्प्ररूपणेन ?, सत्यमेतत् किन्त्वल्पबहुत्वचि-न्तारहितास्तत्र प्ररूपिता इह तु तद्युक्ताः सम्बन्धान्तरद्वारायाताश्चेति ॥ जीवाधिकारात्तच्छाश्वतत्वसूत्राणि–तत्र च

जीवा णं भंते ! किं सासया असासया ?, गोयमा ! जीवा सिय सासया सिय असासया । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–जीवा सिय सासया सिय असासया ?, गोयमा !, दव्वट्ठयाए सासया भावट्ठयाए असा-सया, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–जाव सिय असासया । नेरइया णं भंते ! किं सासया असासया ?, एवं जहा जीवा तहा नेरइयावि, एवं जाव वेमाणिया जाव सिय सासया सिय असासया । सेवं भंते ! सेवं भंते ! ॥ (सूत्रं २७४) ॥ सत्तमस्स बिइओ उद्देसो समत्तो ॥ ७–२ ॥

'दव्वट्ठयाए'त्ति जीवद्रव्यत्वेनेत्यर्थः 'भावट्ठयाए'त्ति नारकादिपर्यायत्वेनेत्यर्थः ॥ सप्तमशते द्वितीयोद्देशकः ॥ ७–२ ॥

७ शतके उद्देशः २ जीवस्य शा-श्वताशाश्व-तते सू२७४

जीवाधिकारप्रतिबद्ध एव तृतीयोद्देशकस्तत्सूत्रम्–

वणस्सइकाइया णं भंते ! किंकालं सव्वप्पाहारगा वा सव्वमहाहारगा वा भवंति ?, गोयमा ! पाउसवरि-सारत्तेसु णं एत्थ णं वणस्सइकाइया सव्वमहाहारगा भवंति तदाणंतरं च णं सरए तयाणंतरं च णं हेमंते तदा-णंतरं च णं वसंते तदाणंतरं च णं गिम्हे गिम्हा णं वणस्सइकाइया सव्वप्पाहारगा भवंति; जइ णं भंते ! गि-

॥२९९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तम-शतके द्वितीय-उद्देशक: समाप्त:

अथ सप्तम-शतके तृतीय-उद्देशक: आरम्भ:

प्रत सूत्रांक [२७५, २७७]

दीप अनुक्रम [३४५, ३४७]

म्हासु वणस्सइकाइया सव्वप्पाहारगा भवंति, कम्हा णं भंते ! गिम्हासु बहवे वणस्सइकाइया पत्तिया पुप्फिया फलिया हरियगरेरिज्जमाणा सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणा उवसोभेमाणा चिट्ठंति ?, गोयमा ! गिम्हासु णं बहवे उसिणजोणिया जीवा य पोग्गला य वणस्सइकाइयत्ताए वक्कमंति विउक्कमंति चयंति उववज्जंति, एवं खलु गोयमा ! गिम्हासु बहवे वणस्सइकाइया पत्तिया पुप्फिया जाव चिट्ठंति। (सूत्रं २७५) से नूणं भंते ! मूला मूलजीवफुडा कंदा कंदजीवफुडा जाव बीया बीयजीवफुडा ?, हंता गोयमा ! मूला मूलजीवफुडा जाव बीया बीयजीवफुडा। जति णं भंते ! मूला मूलजीवफुडा जाव बीया बीयजीवफुडा कम्हा णं भंते ! वणस्सइकाइया आहारेंति कम्हा परिणामेंति ?, गोयमा ! मूला मूलजीवफुडा पुढविजीवपडिबद्धा तम्हा आहारेंति तम्हा परिणामेंति कंदा कंदजीवफुडा मूलजीवपडिबद्धा तम्हा आहारेइ तम्हा परिणामेइ, एवं जाव बीया बीयजीवफुडा फलजीवपडिबद्धा तम्हा आहारेइ तम्हा परिणामेइ॥ (सूत्रं २७६) अह भंते ! आलुए मूलए सिंगबेरे हिरिली सिरिलि सिस्सिरिली किट्टिया छिरिया छीरिविरालिया कण्हकंदे वज्जकंदे सूरणकंदे खेलूडे अदए भद्दमुत्था पिंडहलिद्दा लोही णीहू थीहू थिरुगा मुग्गकन्नी अस्सकन्नी सीहंढी मुसुंढी जे यावन्ने तहप्पगारा सव्वे ते अणंतजीवा विविहसत्ता ?, हंता गोयमा ! आलुए मूलए जाव अणंतजीवा विविहसत्ता ॥ (सूत्रं २७७)

'वणस्सइकाइया णं भंते !'इत्यादि, 'किंकालं'ति कस्मिन् काले 'पाउसे'त्यादि प्रावृडादौ बहुत्वाज्जलस्नेहस्य महाहारतोक्ता, प्रावृट् श्रावणादिर्वर्षारात्रोऽश्वयुजादिः 'सरदे'ति शरत् मार्गशीर्षादिस्तत्र चाल्पाहारा भवन्तीति ज्ञेयं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ग्रीष्मे सर्वाल्पाहारतोक्ताऽत एव च शेषेष्वप्यल्पाहारता क्रमेण द्रष्टव्येति, 'हरितगरेरिज्जमाणे'ति हरितकाश्च ते नीलका रेरिज्जमानाश्च–देदीप्यमाना हरितकरेरिज्यमानाः 'सिरिए'त्ति वनलक्ष्म्या 'उसिणजोणिय'त्ति उष्णमेव योनि-र्येषां ते उष्णयोनिकाः, 'मूला मूलजीवफुड'त्ति मूलानि–मूलजीवैः स्पृष्टानि व्याप्तानीत्यर्थः, यावत्करणात् 'खंधा खं-धजीवफुडा एवं तया साला पवाला पत्ता पुप्फा फल'त्ति दृश्यम् ॥ 'जइ ण'मित्यादि, यदि भदन्त ! मूलादीन्येवं मूला-दिजीवैः स्पृष्टानि तदा 'कम्ह'त्ति 'कस्मात्' केन हेतुना कथमित्यर्थः वनस्पतय आहारयन्ति ?, आहारस्य भूमिगतत्वात् मूलादिजीवानां च मूलादिव्याप्त्यैवावस्थितत्वात् केषाञ्चिच्च परस्परव्यवधानेन भूमेर्दूरवर्त्तित्वादिति, अत्रोत्तरं, मूलानि मूलजीवस्पृष्टानि केवलं पृथिवीजीवप्रतिबद्धानि 'तम्ह'त्ति 'तस्मात्' तत्प्रतिबन्धाद्धेतोः पृथिवीरसं मूलजीवा आहार-यन्तीति, कन्दाः कन्दजीवस्पृष्टाः केवलं मूलजीवप्रतिबद्धाः 'तस्मात्' तत्प्रतिबन्धात् मूलजीवोपात्तं पृथिवीरसमाहार-यन्तीत्येवं स्कन्धादिष्वपि वाच्यम् ॥ 'आलुए'इत्यादि, एते चानन्तकायभेदा लोकरूढिगम्याः, 'तहप्पगार'त्ति 'तथा-प्रकाराः' आलुकादिसदृशाः 'अणंतजीव'त्ति अनन्ता जीवा येषु ते तथा 'विविहसत्त'त्ति विविधा–बहुप्रकारा वर्णा-दिभेदात् सत्त्वा येषामनन्तकायिकवनस्पतिभेदानां ते तथा, अथवैकस्वरूपैरपि जीवैरेषामनन्तजीविता स्यादित्याशङ्क्याया-माह–विविधा–विचित्रकर्म्मतयाऽनेकविधाः सत्त्वा येषु ते तथा, 'विविहसत्त (चित्ताविहि)'त्ति क्वचिद् दृश्यते तत्र विचित्रा विधयो–भेदा येषां ते तथा ते सत्त्वा येषु ते तथा ॥ जीवाधिकारादेवेदमाह—

सिय भंते ! कण्हलेसे नेरइए अप्पकम्मतराए नीललेसे नेरइए महाकम्मतराए ?, हंता सिया, से केणट्ठेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं वुचइ–कण्हलेसे नेरइए अप्पकम्मतराए नीललेसे नेरइए महाकम्मतराए ?, गोयमा ! ठितिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव महाकम्मतराए । सिय भंते ! नीललेसे नेरइए अप्पकम्मतराए काउलेसे नेरइए महाकम्मतराए ?, हंता सिया, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचति–नीललेसे अप्पकम्मतराए काउलेसे नेरइए महाकम्मतराए ?, गोयमा ! ठितिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव महाकम्मतराए । एवं असुरकुमारेवि, नवरं तेउलेसा अब्भहिया एवं जाव वेमाणिया, जस्स जइ लेसाओ तस्स तत्तिया भाणियव्वाओ, जोइसियस्स न भन्नइ, जाव सिय भंते ! पम्हलेसे वेमाणिए अप्पकम्मतराए सुक्कलेसे वेमाणिए महाकम्मतराए ?, हंता सिया, से केणट्ठेणं० सेसं जहा नेरइयस्स जाव महाकम्मतराए ॥ (सूत्रं २७८) ॥

'सिय भंते ! कण्हलेसे नेरइए'इत्यादि, 'ठितिं पडुच्च'त्ति, अत्रेयं भावना–सप्तमपृथिवीनारकः कृष्णलेश्यस्तस्य च स्वस्थितौ बहुक्षपितायां तच्छेषे वर्त्तमाने पञ्चमपृथिव्यां सप्तदशसागरोपमस्थितिर्नारको नीललेश्यः समुत्पन्नः, तमपेक्ष्य स कृष्णलेश्योऽल्पकर्मा व्यपदिश्यते, एवमुत्तरसूत्राण्यपि भावनीयानि । 'जोइसियस्स न भन्नइ'त्ति एकस्या एव तेजोलेश्यायास्तस्य सद्भावात् संयोगो नास्तीति ॥ सलेश्या जीवाश्च वेदनावन्तो भवन्तीति वेदनासूत्राणि—

से नूणं भंते ! जा वेदणा सा निज्जरा जा निज्जरा सा वेदणा ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जा वेयणा न सा निज्जरा जा निज्जरा न सा वेयणा ?, गोयमा ! कम्म वेदणा णोकम्म निज्जरा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव न सा वेदणा । नेरइयाणं भंते ! जा वेदणा सा निज्जरा जा निज्जरा सा वेयणा ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३०१॥

गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ नेरइयाणं जा वेयणा न सा निज्जरा जा निज्जरा न सा वेयणा ?, गोयमा ! नेरइयाणं कम्म वेदणा णोकम्म निज्जरा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव न सा वेयणा, एवं जाव वेमाणियाणं । से नूणं भंते ! जं वेदेंसु तं निज्जरिंसु जं निज्जरिंसु तं वेदेंसु ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जं वेदेंसु नो तं निज्जरेंसु जं निज्जरेंसु नो तं वेदेंसु ?, गोयमा ! कम्मं वेदेंसु नोकम्मं निज्जरिंसु, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो तं वेदेंसु, नेरइया णं भंते ! जं वेदेंसु तं निज्जरिंसु ? एवं नेरइयावि एवं जाव वेमाणिया । से नूणं भंते ! जं वेदेंति तं निज्जरेंति जं निज्जरिंति तं वेदेंति ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जाव नो तं वेदेंति ?, गोयमा ! कम्मं वेदेंति नोकम्मं निज्जरेंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो तं वेदेंति, एवं नेरइयावि जाव वेमाणिया । से नूणं भंते ! जं वेदिस्संति तं निज्जरिस्संति जं निज्जरिस्संति तं वेदिस्संति ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं जाव णो तं वेदेस्संति ?, गोयमा ! कम्मं वेदिस्संति नोकम्मं निज्जरिस्संति, से तेणट्ठेणं जाव नो तं निज्जरिस्संति, एवं नेरइयावि जाव वेमाणिया । से णूणं भंते ! जे वेदणासमए से निज्जरासमए जे निज्जरासमए से वेदणासमए ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जे वेयणासमए न से निज्जरासमए जे निज्जरासमए न से वेदणासमए ?, गोयमा ! जं समयं वेदेंति नो तं समयं निज्जरेंति जं समयं निज्जरेंति नो तं समयं वेदेंति, अन्नम्मि समए वेदेंति अन्नम्मि समए निज्जरेंति अन्ने से वेदणासमए अन्ने से निज्जरासमए, से तेणट्ठेणं जाव

७ शतके उद्देशः ३ लेश्याकर्म सू २७८ वेदनानिर्जरे सू २७९

॥३०१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२७९]

दीप अनुक्रम [३४९]

न से वेदणासमए न से निज्जरासमए । नेरइयाणं भंते ! जे वेदणासमए से निज्जरासमए जे निज्जरासमए से वेदणासमए ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नेरइयाणं जे वेदणासमए न से निज्जरासमए जे निज्जरासमए न से वेदणासमए ?, गोयमा ! नेरइया णं जं समयं वेदेंति णो तं समयं निज्जरेंति जं समयं निज्जरंति नो तं समयं वेदेंति अन्नम्मि समए वेदेंति अन्नम्मि समए निज्जरेंति अन्ने से वेदणासमए अन्ने से निज्जरासमए, से तेणट्ठेणं जाव न से वेदणासमए एवं जाव वेमाणिया ॥ (सूत्रं २७९) ॥

'कम्म वेयण'त्ति उदयं प्राप्तं कर्म्म वेदना धर्मधर्म्मिणोरभेदविवक्षणात्, 'नोकम्मं निज्जरे'ति कर्म्माभावो निर्जरा तस्या एवंस्वरूपत्वादिति 'नोकम्मं निज्जरेंसु'त्ति वेदितरसं कर्म नोकर्म तन्निर्जरितवन्तः, कर्म्मभूतस्य कर्म्मणो निर्जरणासम्भवादिति ॥ पूर्वकृतकर्म्मणश्च वेदना तद्वत्ता च कथञ्चिच्छाश्वतत्वे सति युज्यत इति तच्छाश्वतत्वसूत्राणि, तत्र च

नेरइया णं भंते ! किं सासया असासया ?, गोयमा ! सिय सासया सिय असासया, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नेरइया सिय सासया सिय असासया ?, गोयमा ! अव्वोच्छित्तिणयट्ठयाए सासया वोच्छित्तिणयट्ठयाए असासया, से तेणट्ठेणं जाव सिय सासया सिय असासया, एवं जाव वेमाणिया जाव सिय असासया। सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति ॥ (सूत्रं २८०) ॥ ७–३ ॥

'अव्वोच्छित्तिणयट्ठयाए'त्ति अव्यवच्छित्तिप्रधानो नयोऽव्यवच्छित्तिनयस्तस्यार्थो–द्रव्यमव्यवच्छित्तिनयार्थस्तद्भावस्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२८०, २८१]

दीप अनुक्रम [३५०, ३५१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३०२॥

त्ता तयाऽव्यवच्छित्तिनयार्थतया–द्रव्यमाश्रित्य शाश्वता इत्यर्थः, 'वोच्छित्तिणयट्ठयाए'त्ति व्यवच्छित्तिप्रधानो यो नय-स्तस्य योऽर्थः–पर्यायलक्षणस्तस्य यो भावः सा व्यवच्छित्तिनयार्थता तया २–पर्यायानाश्रित्य अशाश्वता नारका इति ॥ सप्तमशते तृतीयोद्देशकः ॥ ७–३ ॥

तृतीयोद्देशके संसारिणः शाश्वतादिस्वरूपतो निरूपिताश्चतुर्थोद्देशके तु तानेव भेदतो निरूपयन्नाह—

रायगिहे नगरे जाव एवं वदासी–कतिविहा णं भंते! संसारसमावन्नगा जीवा पन्नत्ता ?, गोयमा! छव्विहा संसारसमावन्नगा जीवा पन्नत्ता, तंजहा—पुढविकाइया एवं जहा जीवाभिगमे जाव सम्मत्तकिरियं वा मिच्छत्तकिरियं वा ॥ सेवं भंते सेवं भंतेत्ति। जीवा छव्विह पुढवी जीवाण ठिती भवट्ठिती काए। निल्लेवण अणगारे किरिया सम्मत्तमिच्छत्ता ॥ १ ॥ (सूत्रं २८१) ॥ ७–४ ॥

'कतिविहा ण'मित्यादि, 'एवं जहा जीवाभिगमे'त्ति एवं च तत्रैतत्सूत्रम्–'पुढविकाइया जाव तसकाइया, से किं तं पुढविकाइया ?, पुढविकाइया दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–सुहुमपुढविकाइया बायरपुढविकाइया'इत्यादि, अन्तः पुनरस्य–'एगे जीवे एगेणं समएणं एक्कं किरियं पकरेइ, तंजहा–सम्मत्तकिरियं वा मिच्छत्तकिरियं वा' अत एवोक्तं 'जाव सम्मत्ते' त्यादि, वाचनान्तरे त्विदं दृश्यते–"जीवा छव्विह पुढवी जीवाण ठिती भवट्ठिती काए। निल्लेवण अणगारे किरिया सम्म-त्त मिच्छत्ता ॥ १ ॥" इति, तत्र च षड्विधा जीवा दर्शिता एव, 'पुढवि'त्ति षड्विधा बादरपृथ्वी श्लक्ष्णा १ शुद्धा २–वालुका ३ मनःशिला ४ शर्करा ५ खरपृथिवी ६ भेदात्, तथैषामेव पृथिवीभेदजीवानां स्थितिरन्तर्मुहूर्त्तादिका यथा-

७ शतके उद्देशौ ३-४ शाश्वतेतर-ते सू २८० जीवभेदा-दि सू २८१

॥३०२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तम-शतके तृतीय-उद्देशक: समाप्त:

अथ सप्तम-शतके चतुर्थ-उद्देशक: आरम्भ:

प्रत सूत्रांक [२८१] + गाथा

दीप अनुक्रम [३५१--३५२]

'खहयरे'त्यादि, 'जोणीसंगहे'त्ति योनिः–उत्पत्तिहेतुर्जीवस्य तया सङ्ग्रहः–अनेकेषामेकशब्दाभिलाप्यत्वं योनिसङ्ग्रहः, 'अंडय'त्ति अण्डाज्जायन्ते अण्डजाः–हंसादयः, 'पोयय'त्ति पोतवद्–वस्त्रवज्जरायुवर्जिततया शुद्धदेहा योनिविशेषाज्जाताः पोतादिव वा–बोहित्थाज्जाताः पोता इव वा–वस्त्रसंमार्जिता इव जाताः पोतजाः–वल्गुल्यादयः 'संमुच्छिम'त्ति संमूर्च्छेन–योनिविशेषधर्मेण निर्वृत्ताः संमूर्च्छिमाः–हिकादयः। 'एवं जहा जीवाभिगमे'त्ति एवं च तत्रैतत्सूत्रम्–'अंडया तिविहा पन्नत्ता, तंजहा–इत्थी पुरिसा नपुंसया, एवं पोययावि, तत्थ णं जे ते संमुच्छिमा ते सव्वे नपुंसगा'इत्यादि, एतदन्तसूत्रं त्वेवम्–'अत्थि णं भंते ! विमाणाइं विजयाइं जयंताइं वेजयंताइं अपराजियाइं ?, हंता अत्थि, ते णं भंते ! विमाणा केमहालया पन्नत्ता ?, गोयमा ! जावइयं च णं सूरिए उदेइ जावइयं च णं सूरिए अत्थमेइ यावताऽन्तरेणेत्यर्थः एवंरूवाइं नव उवासंतराइं अत्थेगइयस्स देवस्स एगे विक्कमे सिया से णं देवे ताए उक्किट्ठाए तुरियाए जाव दिव्वाए देवगईए वीईवयमाणे २ जाव एगाहं वा दुयाहं वा उक्कोसेणं छम्मासे वीईवएज्ज'त्ति, शेषं तु लिखितमेवास्ते, तदेव च पर्यन्तसूत्रतया यावत्करणेन दर्शितमिति। वाचनान्तरे त्विदं दृश्यते–जोणिसंगहलेसा दिट्ठी णाणे य जोग उवओगे । उववायठिइसमुग्घायचवणजाई-कुलविहीओ ॥ १ ॥ तत्र योनिसङ्ग्रहो दर्शित एव, लेश्यादीनि त्वर्थतो दर्श्यन्ते–एषां लेश्याः षड् दृष्टयस्तिस्रःज्ञानानि त्रीणि आद्यानि भजनया अज्ञानानि तु त्रीणि भजनयैव योगास्त्रयः उपयोगौ द्वौ उपपातः सामान्यतश्चतसृभ्योऽपि गतिभ्यः स्थिति-रन्तर्मुहूर्त्तादिका पल्योपमासङ्ख्येयभागपर्यवसाना समुद्घाताः केवल्याहारकवर्ज्जाः पञ्च तथा च्युत्वा ते गतिचतुष्टयेऽपि यान्ति तथैषां जातौ द्वादश कुलकोटीलक्षा भवन्तीति (जीवा० सू० ९६–९७–९८–९९) ॥ सप्तमशते पञ्चम उद्देशकः संपूर्णः ७-५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२८१, २८२] + गाथा

दीप अनुक्रम [३५१--३५४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी या वृत्तिः १ ॥३०३॥

योगं द्वाविंशतिवर्षसहस्रान्ता वाच्या, तथा नारकादिषु भवस्थितिर्वाच्या, सा च सामान्यतोऽन्तर्मुहूर्त्तादिका त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमान्ता, तथा कायस्थितिर्वाच्या, सा च जीवस्य जीवकाये सर्वाद्धमित्येवमादिका, तथा निर्लेपना वाच्या, सा चैवं-प्रत्युत्पन्नपृथिवीकायिकाः समयापहारेण जघन्यपदेऽसङ्ख्याभिरुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभिरपह्रियन्ते, एवमुत्कृष्टपदेऽपि, किन्तु जघन्यपदादुत्कृष्टपदमसङ्ख्येयगुणमित्यादि। 'अणगारे'त्ति अनगारवक्तव्यता वाच्या, सा चेयम्—अविशुद्धलेश्योऽनगारोऽसमवहतेनात्मनाऽविशुद्धलेश्यं देवं देवीमनगारं जानाति?, नायमर्थ(समर्थः) इत्यादि। 'किरिया सम्मत्त मिच्छत्ते'ति एवं दृश्यः—अन्ययूथिका एवमाख्यान्ति—एको जीव एकेन समयेन द्वे क्रिये प्रकरोति सम्यक्त्वक्रियां मिथ्यात्वक्रियां चेति, मिथ्या चैतद्विरोधादिति (जीवा० सू० १००–१०१–१०२–१०३–१०४) ॥ सप्तमशते चतुर्थोद्देशकः ॥ ७–४ ॥

चतुर्थे संसारिणो भेदत उक्ताः, पञ्चमे तु तद्विशेषाणामेव योनिसङ्ग्रहं भेदत आह—

रायगिहे जाव एवं वदासी–खहयरपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं भंते! कतिविहे णं जोणीसंगहे पण्णत्ते?, गोयमा! तिविहे जोणीसंगहे पण्णत्ते, तंजहा–अंडया पोयया संमुच्छिमा, एवं जहा जीवाभिगमे जाव नो चेव णं ते विमाणे वीतीवएज्जा । एवंमहालयाणं गोयमा! ते विमाणा पन्नत्ता ॥ 'जोणीसंगह लेसा दिट्ठी नाणे य जोग उवओगे । उववायठितिसमुग्घायचवणजातीकुलविहीओ ॥ १ ॥ सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति (सूत्रं २८२) ॥ ७–५ ॥

७ शतके उद्देशः ५ योनिसंग्रहादिः सू २८२

॥३०३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तम-शतके चतुर्थ-उद्देशक: समाप्त:

अथ सप्तम-शतके पंचम-उद्देशक: आरम्भ: एवं समाप्त:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२८३, २८६]

दीप अनुक्रम [३५५--३५८]

अनन्तरं योनिसङ्ग्रहादिरर्थ उक्तः, स चायुष्मतां भवतीत्यायुष्कादिनिरूपणार्थः षष्ठः—

रायगिहे जाव एवं वदासी–जीवे णं भंते! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते! किं इहगए नेरइयाउयं पकरेति उववज्जमाणे नेरइयाउयं पकरेइ उववन्ने नेरइयाउयं पकरेइ ?, गोयमा ! इहगए नेरइयाउयं पकरेइ नो उववज्जमाणे नेरइयाउयं पकरेइ नो उववन्ने नेरइयाउयं पकरेइ, एवं असुरकुमारेसुवि एवं जाव वेमाणिएसु । जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किं इहगए नेरइयाउयं पडिसंवेदेति उववज्जमाणे नेरइयाउयं पडिसंवेदेति उववन्ने नेरइयाउयं पडिसंवेदेति ?, गोयमा ! णेरइए णो इहगए नेरइयाउयं पडिसंवेदेइ उववज्जमाणे नेरइयाउयं पडिसंवेदेइ उववन्नेवि नेरइयाउयं पडिसंवेदेति एवं जाव वेमाणिएसु । जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किं इहगए महावेदणे उववज्जमाणे महावेदणे उववन्ने महावेदणे ?, गोयमा ! इहगए सिय महावेयणे सिय अप्पवेदणे उववज्जमाणे सिय महावेदणे सिय अप्पवेदणे अहे णं उववन्ने भवति तओ पच्छा एगंतदुक्खं वेयणं वेयति आहच्च सायं । जीवे णं भंते ! जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए पुच्छा, गोयमा ! इहगए सिय महावेदणे सिय अप्पवेदणे उववज्जमाणे सिय महावेदणे सिय अप्पवेदणे अहे णं उववन्ने भवइ तओ पच्छा एगंतसायं वेयणं वेदेति आहच्च असायं, एवं जाव थणियकुमारेसु । जीवे णं भंते जे भविए पुढविकाएसु उववज्जित्तए पुच्छा, गोयमा ! इहगए सिय महावेयणे सिय अप्पवेयणे, एवं उववज्जमाणेवि, अहे णं उववन्ने भवति तओ पच्छा वेमायाए वेयणं वेयति एवं

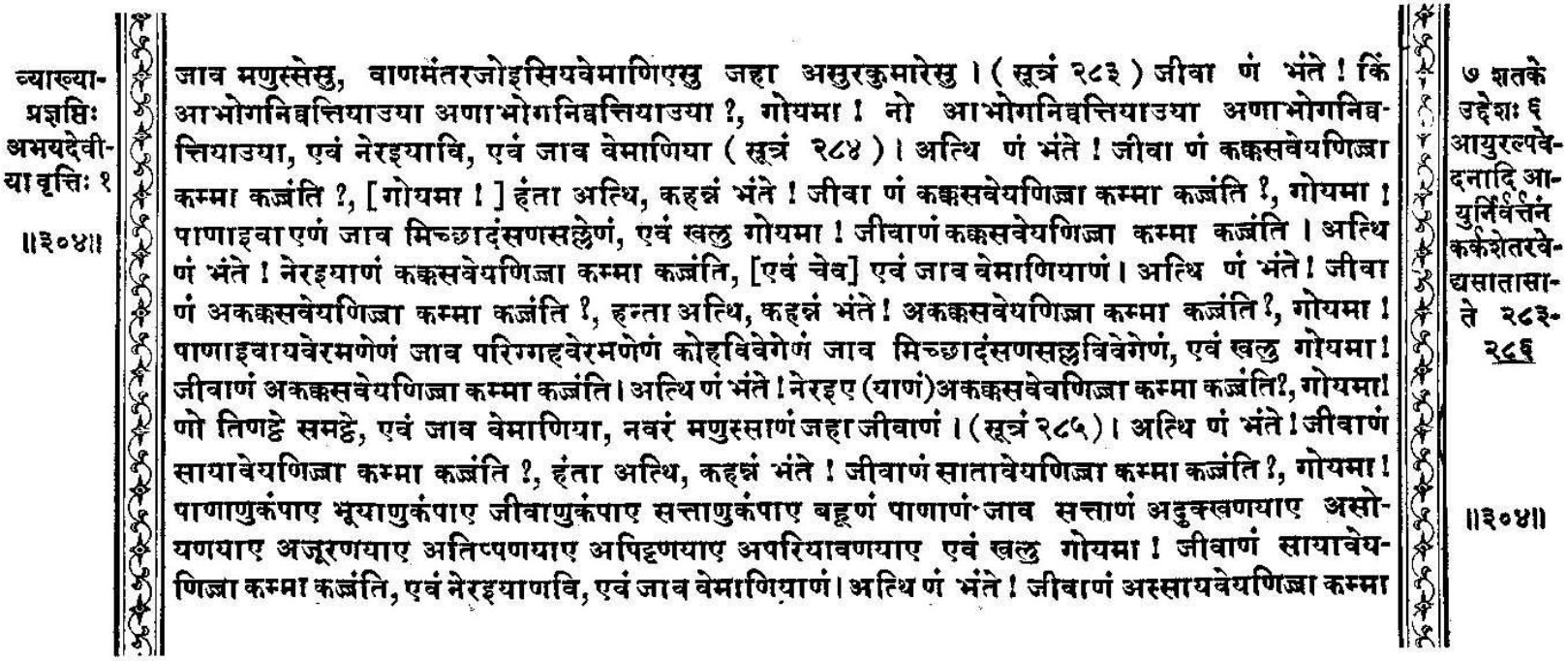
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ सप्तम-शतके षष्ठं-उद्देशक: आरम्भ:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२८३, २८६]

दीप अनुक्रम [३५५--३५८]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

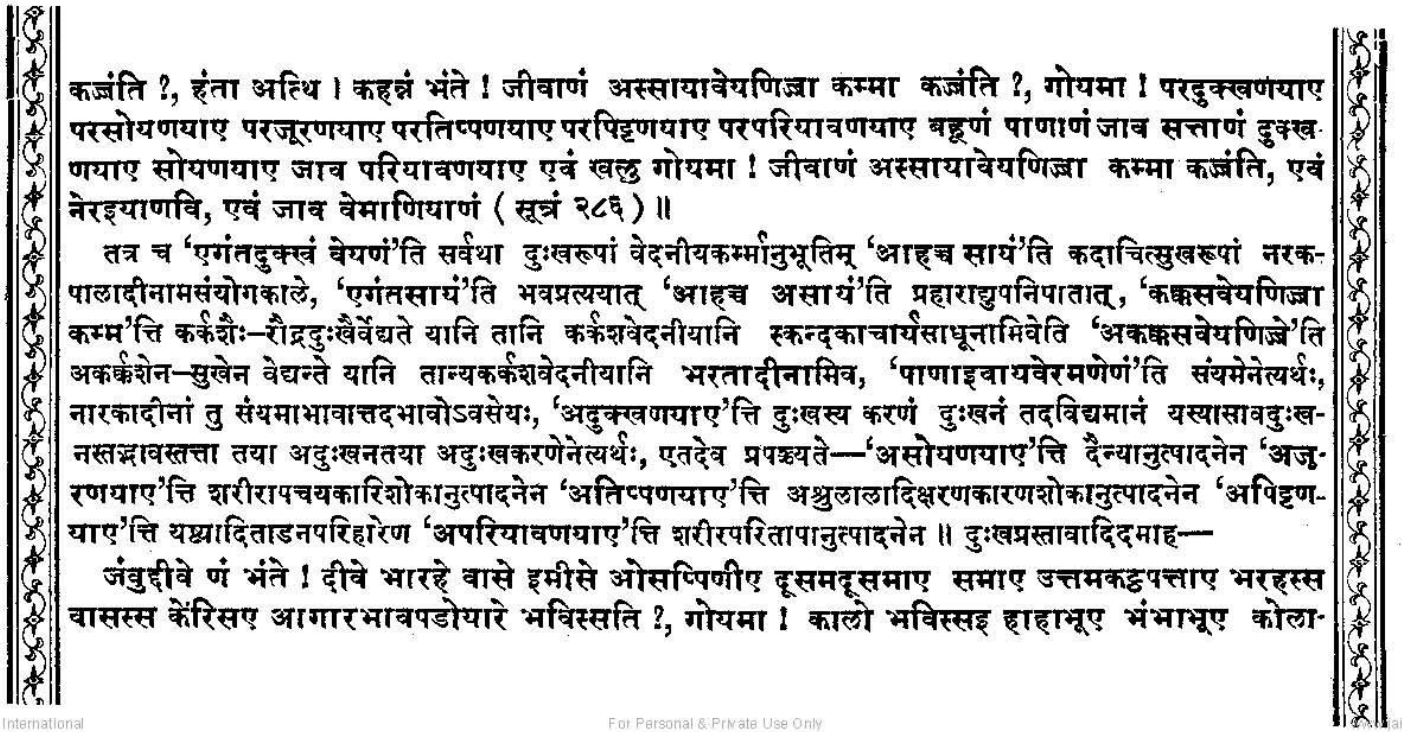
॥३०४॥

जाव मणुस्सेसु, वाणमंतरजोइसियवेमाणिएसु जहा असुरकुमारेसु । (सूत्रं २८३) जीवा णं भंते ! किं आभोगनिवत्तियाउया अणाभोगनिवत्तियाउया ?, गोयमा ! नो आभोगनिवत्तियाउया अणाभोगनिवत्तियाउया, एवं नेरइयावि, एवं जाव वेमाणिया (सूत्रं २८४) । अत्थि णं भंते ! जीवा णं कक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?, [गोयमा !] हंता अत्थि, कहन्नं भंते ! जीवा णं कक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?, गोयमा ! पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेणं, एवं खलु गोयमा ! जीवाणं कक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति । अत्थि णं भंते ! नेरइयाणं कक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति, [एवं चेव] एवं जाव वेमाणियाणं । अत्थि णं भंते ! जीवा णं अकक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?, हन्ता अत्थि, कहन्नं भंते ! अकक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?, गोयमा ! पाणाइवायवेरमणेणं जाव परिग्गहवेरमणेणं कोहविवेगेणं जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगेणं, एवं खलु गोयमा ! जीवाणं अकक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति । अत्थि णं भंते ! नेरइए (याणं) अकक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे, एवं जाव वेमाणिया, नवरं मणुस्साणं जहा जीवाणं । (सूत्रं २८५) । अत्थि णं भंते ! जीवाणं सायावेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?, हंता अत्थि, कहन्नं भंते ! जीवाणं सातावेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?, गोयमा ! पाणाणुकंपाए भूयाणुकंपाए जीवाणुकंपाए सत्ताणुकंपाए बहूणं पाणाणं जाव सत्ताणं अदुक्खणयाए असोयणयाए अजूरणयाए अतिप्पणयाए अपिट्टणयाए अपरियावणयाए एवं खलु गोयमा ! जीवाणं सायावेयणिज्जा कम्मा कज्जंति, एवं नेरइयाणंवि, एवं जाव वेमाणियाणं । अत्थि णं भंते ! जीवाणं असायवेयणिज्जा कम्मा

७ शतके उद्देशः ६ आयुरल्पवेदनादि आयुर्निर्वर्त्तनं कर्कशेतरवेद्यसातासाते २८३-२८६

॥३०४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



कज्जंति ?, हंता अत्थि । कहन्नं भंते ! जीवाणं अस्सायावेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?, गोयमा ! परदुक्खणयाए परसोयणयाए परजूरणयाए परतिप्पणयाए परपिट्टणयाए परपरियावणयाए बहूणं पाणाणं जाव सत्ताणं दुक्खणयाए सोयणयाए जाव परियावणयाए एवं खलु गोयमा ! जीवाणं अस्सायावेयणिज्जा कम्मा कज्जंति, एवं नेरइयाणवि, एवं जाव वेमाणियाणं (सूत्रं २८६) ॥

तत्र च 'एगंतदुक्खं वेयणं'ति सर्वथा दुःखरूपां वेदनीयकर्म्मानुभूतिम् 'आहच्च सायं'ति कदाचित्सुखरूपां नरकपालादीनामसंयोगकाले, 'एगंतसायं'ति भवप्रत्ययात् 'आहच्च असायं'ति प्रहाराद्युपनिपातात्, 'कक्कसवेयणिज्जा कम्म'त्ति कर्कशैः–रौद्रदुःखैर्वेद्यते यानि तानि कर्कशवेदनीयानि स्कन्दकाचार्यसाधूनामिवेति 'अकक्कसवेयणिज्जे'ति अकर्कशेन–सुखेन वेद्यन्ते यानि तान्यकर्कशवेदनीयानि भरतादीनामिव, 'पाणाइवायवेरमणेणं'ति संयमेनेत्यर्थः, नारकादीनां तु संयमाभावात्तदभावोऽवसेयः, 'अदुक्खणयाए'त्ति दुःखस्य करणं दुःखनं तदविद्यमानं यस्यासावदुःखनस्तद्भावस्तत्ता तया अदुःखनतया अदुःखकरणेनेत्यर्थः, एतदेव प्रपञ्चयते—'असोयणयाए'त्ति दैन्यानुत्पादनेन 'अजूरणयाए'त्ति शरीरापचयकारिशोकानुत्पादनेन 'अतिप्पणयाए'त्ति अश्रुलालादिक्षरणकारणशोकानुत्पादनेन 'अपिट्टणयाए'त्ति यष्ट्यादिताडनपरिहारेण 'अपरियावणयाए'त्ति शरीरपरितापानुत्पादनेन ॥ दुःखप्रस्तावादिदमाह—

जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए दूसमदूसमाए समाए उत्तमकट्ठपत्ताए भरहस्स वासस्स केरिसए आगारभावपडोयारे भविस्सति ?, गोयमा ! कालो भविस्सइ हाहाभूए भंभाभूए कोला-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	दुषम-सुषमः आरकस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [२८७]

दीप अनुक्रम [३५९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३०५॥

हलब्भूए समयाणुभावेण य णं खरफरुसधूलिमइला दुविसहा वाउला भयंकरा वाया संवट्टगा य वाइंति, इह अभिक्खं धूमाइंति य दिसा समंता रउस्सला रेणुकलुसतमपडलनिरालोगा समयलुक्खयाए य णं अहियं चंदा सीयं मोच्छंति अहियं सूरिया तवइस्संति अदुत्तरं च णं अभिक्खणं बहवे अरसमेहा विरसमेहा खारमेहा खट्टमेहा अग्गिमेहा विज्जुमेहा विसमेहा असणिमेहा अप्पवणिज्जोदगा वाहिरोगवेदणोदीरणापरिणामसलिला अमणुन्न-पाणियगा चंडानिलपहयतिक्खधारानिवायपउर वासं वासिहिंति। जे णं भारहे वासे गामागरनगरखेडकब्बडम-डंबदोणमुहपट्टणासमागयं जणवयं चउप्पयगवेलगए खहयरे य पक्खिसंघे गामारन्नपयारनिरए तसे य पाणे बहुप्प-गारे रुक्खगुच्छगुम्मलयवल्लितणपव्वगहरितोसहिपवालंकुरमादीए य तणवणस्सइकाइए विद्धंसेहिंति पव्वयगिरि-डोंगरउच्छलभट्टिमादीए वेयड्ढगिरिवज्जे विरावेहिंति सलिलबिलगदुग्गविसमं निण्णुन्नयाइं च गंगासिंधुवज्जाइं समीकरेहिंति॥ तीसे णं भंते! समाए भरहवासस्स भूमीए केरिसए आगारभावपडोयारे भविस्सति?, गोयमा! भूमी भविस्सति इंगालब्भूया मुम्मुरभूया छारियभूया तत्तकवेल्लयभूया तत्तसमजोतिभूया धूलिबहुला रेणु-बहुला पंकबहुला पणगबहुला चलणिबहुला बहूणं धरणिगोयराणं सत्ताणं दोनिक्कमा य भविस्सति॥ (सूत्रं२८७)

'जंबुद्दीवे ण'मित्यादि, 'उत्तमकट्ठपत्ताए'त्ति परमकाष्ठाप्राप्तायाम्, उत्तमावस्थायां गतायामित्यर्थः, परमकष्टप्रा-प्तायां वा, 'आगारभावपडोयारे'त्ति आकारभावस्य-आकृतिलक्षणपर्यायस्य प्रत्यवतारः–अवतरणम् आकारभावप्रत्यवतारः 'हाहाभूए'त्ति हाहाइत्येतस्य शब्दस्य दुःखार्त्तलोकेन करणं हाहोच्यते तद्भूतः–प्राप्तो यः कालः स हाहाभूतः 'भंभाभूए'त्ति

७ शतके उद्देशः ७ दुष्षमदुष्ष-मारकः सू २८७

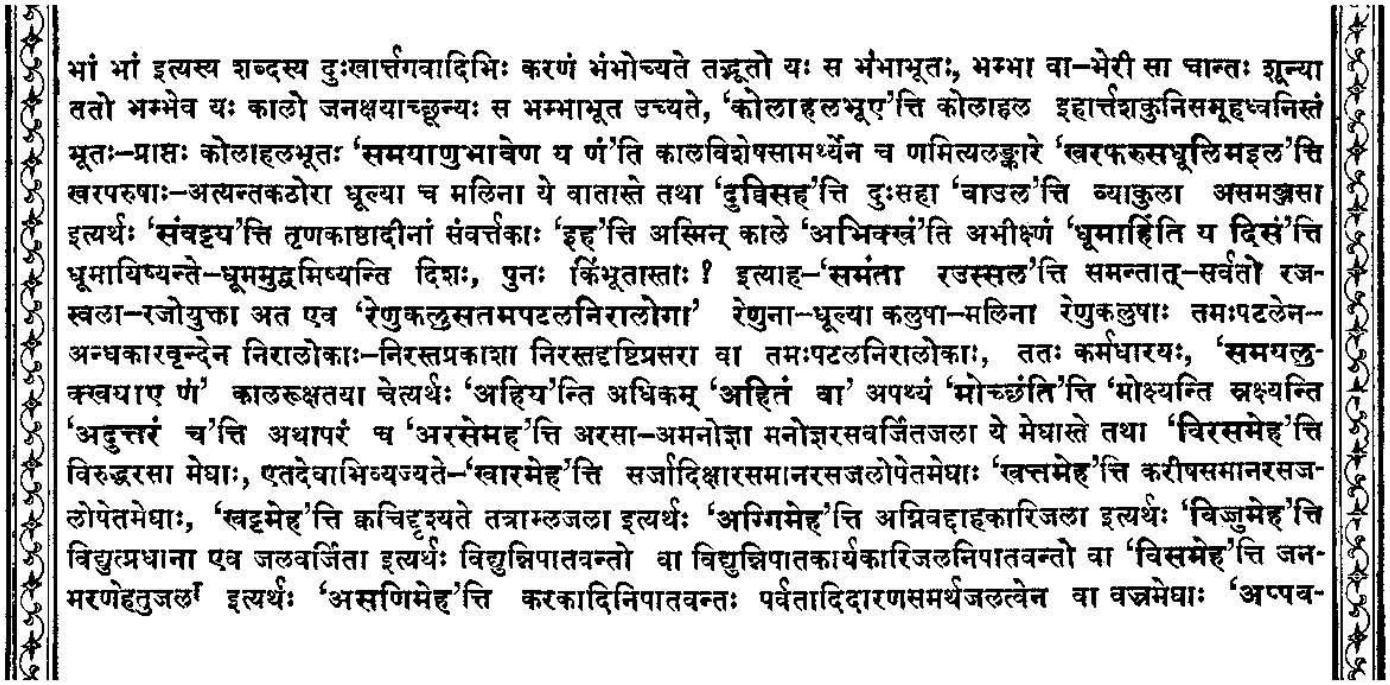
॥३०५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुषम-सुषम: आरकस्य वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२८७]

दीप अनुक्रम [३५९]



भां भां इत्यस्य शब्दस्य दुःखार्त्तगवादिभिः करणं भंभोच्यते तद्भूतो यः स भंभाभूतः, भम्भा वा–भेरी सा चान्तः शून्या ततो भम्भेव यः कालो जनक्षयाच्छून्यः स भम्भाभूत उच्यते, 'कोलाहलभूए'त्ति कोलाहल इहार्त्तशकुनिसमूहध्वनिस्तं भूतः–प्राप्तः कोलाहलभूतः 'समयाणुभावेण य णं'ति कालविशेषसामर्थ्येन च णमित्यलङ्कारे 'खरफरुसधूलिमइल'त्ति खरपरुषाः–अत्यन्तकठोरा धूल्या च मलिना ये वातास्ते तथा 'दुविसह'त्ति दुःसहा 'वाउल'त्ति व्याकुला असमञ्जसा इत्यर्थः 'संवट्टय'त्ति तृणकाष्ठादीनां संवर्त्तकाः 'इह'त्ति अस्मिन् काले 'अभिक्खं'ति अभीक्ष्णं 'धूमाहिंति य दिसं'त्ति धूमायिष्यन्ते–धूममुद्गमिष्यन्ति दिशः, पुनः किंभूतास्ताः ? इत्याह–'समंता रउस्सल'त्ति समन्तात्–सर्वतो रजस्वला–रजोयुक्ता अत एव 'रेणुकलुसतमपडलनिरालोगा' रेणुना–धूल्या कलुषा–मलिना रेणुकलुषाः तमःपटलेन–अन्धकारवृन्देन निरालोकाः–निरस्तप्रकाशा निरस्तदृष्टिप्रसरा वा तमःपटलनिरालोकाः, ततः कर्मधारयः, 'समयलुक्खयाए णं' कालरूक्षतया चेत्यर्थः 'अहिय'न्ति अधिकम् 'अहितं वा' अपथ्यं 'मोच्छंति'त्ति 'मोक्ष्यन्ति स्रक्ष्यन्ति 'अदुत्तरं च'त्ति अथापरं च 'अरसेमह'त्ति अरसा–अमनोज्ञा मनोज्ञरसवर्जितजला ये मेघास्ते तथा 'विरसमेह'त्ति विरुद्धरसा मेघाः, एतदेवाभिव्यज्यते–'खारमेह'त्ति सर्जादिक्षारसमानरसजलोपेतमेघाः 'खत्तमेह'त्ति करीषसमानरसजलोपेतमेघाः, 'खट्टमेह'त्ति क्वचिद्दृश्यते तत्राम्लजला इत्यर्थः 'अग्गिमेह'त्ति अग्निवद्दाहकारिजला इत्यर्थः 'विज्जुमेह'त्ति विद्युत्प्रधाना एव जलवर्जिता इत्यर्थः विद्युन्निपातवन्तो वा विद्युन्निपातकार्यकारिजलनिपातवन्तो वा 'विसमेह'त्ति जनमरणेहेतुजलाः इत्यर्थः 'असणिमेह'त्ति करकादिनिपातवन्तः पर्वतादिदारणसमर्थजलत्वेन वा वज्रमेघाः 'अप्पव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुषम-सुषम: आरकस्य वर्णनं

णिज्जोदग'त्ति अपातव्यजलाः 'अजवणिज्जोदए'त्ति क्वचिद् दृश्यते तत्रायापनीयं–न यापनाप्रयोजनमुदकं येषां ते अयापनीयोदकाः 'वाहिरोगवेदणोदीरणापरिणामसलिल'त्ति व्याधयः—स्थिराः कुष्ठादयो रोगाः–सद्योघातिनः शूलादयस्तज्जन्याया वेदनाया योदीरणा सैव परिणामो यस्य सलिलस्य तत्तथा तदेवंविधं सलिलं येषां ते तथाऽत एवामनोज्ञापनीयकाः 'चंडानिलपहयतिक्खधारानिवायपउरं'ति चण्डानिलेन प्रहतानां तीक्ष्णानां—वेगवतीनां धाराणां यो निपातः स प्रचुरो यत्र वर्षे स तथाऽतस्तं 'जेणं'ति येन वर्षेण करणभूतेन पूर्वोक्तविशेषणा मेघा विध्वंसयिष्यन्तीति सम्बन्धः 'जणवयं'ति मनुष्यलोकं 'चउप्पयगवेलए'त्ति इह चतुष्पदशब्देन महिष्यादयो गृह्यन्ते गोशब्देन गावः एलकशब्देन तु उरभ्राः 'खहयरे'त्ति खचरांश्च, कान्? इत्याह—'पक्खिसंघे'त्ति पक्षिसङ्घातान्, तथा 'गामारण्णपयारनिरए'त्ति ग्रामारण्ययोर्यः प्रचारस्तत्र निरता ये ते तथा तान्, कान्? इत्याह—'तसे पाणे बहुप्पयारे'त्ति द्वीन्द्रियादीनित्यर्थः, 'रुक्खे'त्यादि, तत्र वृक्षाः–चूतादयः गुच्छाः–वृन्ताकीप्रभृतयः गुल्माः–नवमालिकाप्रभृतयः लता–अशोकलतादयः वल्ल्यो–वालुङ्कीप्रभृतयः तृणानि–वीरणादीनि पर्वगा–इक्षुप्रभृतयः हरितानि–दूर्वादीनि औषध्यः–शाल्यादयः प्रवालाः–पल्लवाङ्कुराः अङ्कुराः–शाल्यादिबीजसूचयः ततो वृक्षादीनां द्वन्द्वस्ततस्ते आदिर्येषां ते तथा तांश्च, आदिशब्दात् कदल्यादिवलयानि पद्मादयश्च जलजविशेषा ग्राह्याः, कानेवंविधान्? इत्याह–'तणवणस्सइकाइए'त्ति बादरवनस्पतीनित्यर्थः 'पव्वए'त्यादि, यद्यपि पर्वतादयोऽन्यत्रैकार्थतया रूढास्तथापीह विशेषो दृश्यः, तथाहि–पर्वतननात्–उत्सवविस्तारणात्पर्वताः–क्रीडापर्वता उज्जयन्तवैभारादयः गृणन्ति–शब्दायन्ते जननिवासभूतत्वे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुषम-सुषम: आरकस्य वर्णनं

नेति गिरयः–गोपालगिरिचित्रकूटप्रभृतयः, डुङ्गानां–शिलावृन्दानां चौरवृन्दानां चास्तित्वात् डुङ्गराः–शिलोच्चयमात्ररूपाः 'उच्छ(त्थ)ल'त्ति उत्–उन्नतानि स्थलानि धूल्युच्छ्रयरूपाण्युच्छ(त्थ)लानि, क्वचिदुच्छब्दो न दृश्यते,'भट्ठि'त्ति पांश्वादिवर्जिता भूमयस्तत एषां द्वन्द्वस्तत्स्ते आदिर्येषां ते तथा तान्, आदिशब्दात् प्रासादशिखरादिपरिग्रहः 'विरावेहिंति'त्ति विद्रावयिष्यन्ति, 'सलिले'त्यादि सलिलविलानि च–भूमिनिर्झरा गर्त्ताश्च–श्वभ्राणि दुर्गाणि च–खातवलयप्राकारादिदुर्गमाणि विषमाणि च–विषमभूमिप्रतिष्ठितानि निम्नोन्नतानि च–प्रतीतानि द्वन्द्वोऽतस्तानि ॥ 'तत्तसमजोइभूय'त्ति तप्तेन–तापेन समाः–तुल्याः ज्योतिषा–वह्निना भूता–जाता या सा तथा 'धूलीबहुले'त्यादौ धूली–पांशुः रेणुः–वालुका पङ्कः–कर्दमः पनकः–प्रवलः कर्दमविशेषः, चलनप्रमाणः कर्दमश्चलनीत्युच्यते,'दुन्निक्कम'त्ति दुःखेन नितरां क्रमः–क्रमणं यस्यां सा दुर्निक्रमा ॥

तीसे णं भंते ! समाए भारहे वासे मणुयाणं केरिसए आगारभावपडोयारे भविस्सति ?, गोयमा ! मणुया भविस्संति दुरूवा दुवन्ना दुगंधा दुरसा दुफासा अणिट्ठा अकंता जाव अमणामा हीणस्सरा दीणस्सरा अणिट्ठस्सरा जाव अमणामस्सरा अणादेज्जवयणपच्चायाया निल्लज्जा कूडकवडकलहवहबंधवेरनिरया मज्जायातिक्कमप्पहाणा अकज्जनिच्चुज्जता गुरुनियोगविणयरहिया य विकलरूवा परूढनहकेसमंसुरोमा काला खरफरुसझामवन्ना फुट्टसिरा कविलपलियकेसा बहुण्हारु[णि]संपिनद्धदुद्दंसणिज्जरूवा संकुडियवलीतरंगपरिवेढियंगमंगा जरापरिणतव्व थेरगनरा पविरलपरिसडियदंतसेढी उब्भडघडमुहा विसमनयणा वंकनासा वंगवली-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२८८]

दीप अनुक्रम [३६०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः१

॥३०७॥

विगयभेसणमुहा कच्छूकसराभिभूया खरतिक्खनखकंडूइयविक्खयतणू दद्दुकिडिभसिझफुडियफरुसच्छवी चित्तलंगाटोलागतिविसमसंधिबंधणउक्कुडुअट्ठिगविभत्तदुब्बलकुसंघयणकुप्पमाणकुसंठिया कुरूवा कुठाणासणकुसेज्जकुभोइणो असुइणो अणेगवाहिपरिपीलियंगमंगा खलंतवेज्झलगती निरुच्छाहा सत्तपरिवज्जिया विगयचिट्ठा नट्ठतेया अभिक्खणं सीयउण्हखरफरुसवायविज्झडिया मलिणपंसुरयगुंडियंगमंगा बहुकोहमाणमाया बहुलोभा असुहदुक्खभोगी ओसन्नं धम्मसण्णसम्मत्तपरिब्भट्ठा उक्कोसेणं रयणिप्पमाणमेत्ता सोलसवीसतिवासपरमाउसो पुत्तनत्तुपरियालपणयबहुला गंगासिंधूओ महानदीओ वेयड्ढं च पव्वयं निस्साए बावत्तरिं निओदा बीयं बीयामेत्ता बिलवासिणो भविस्संति॥ ते णं भंते ! मणुया किमाहारमाहारेंति ?, गोयमा ! ते णं काले णं ते णं समए णं गंगासिंधूओ महानदीओ रहपहवित्थराओ अक्खसोयप्पमाणमेत्तं जलं वोज्झिहिंति सेवि य णं जले बहुमच्छकच्छभाइन्ने णो चेव णं आउयबहुले भविस्सति, तए णं ते मणुया सुरुग्गमणमुहुत्तंसि य सूरत्थमणमुहुत्तंसि य बिलेहिंतो २ निद्धाइत्ता मच्छकच्छभे थलाइं गाहेहिंति सीयायवतत्तएहिं मच्छकच्छएहिं एक्कवीसं वाससहस्साइं वित्तिं कप्पेमाणा विहरिस्संति॥ ते णं भंते ! मणुया निस्सीला निग्गुणा निम्मेरा निप्पच्चक्खाणपोसहोववासा ओसण्णं मंसाहारा मच्छाहारा खोदाहारा कुणिमाहारा कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिंति ? कहिं उववज्जिहिंति ?, गोयमा ! ओसन्नं नरगतिरिक्खजोणिएसु उववज्जंति, ते णं भंते ! सीहा वग्घा वगा दीविया अच्छा तरच्छा परस्सरा निस्सीला

७ शतके उद्देशः ६ षष्ठारकवर्णनंसू २८८

॥३०७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुषम-सुषम: आरकस्य वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२८८]

दीप अनुक्रम [३६०]

तहेव जाव कहिं उववज्जिहिंति ?, गोयमा ! ओसन्नं नरगतिरिक्खजोणिएसु उववज्जिहिंति, ते णं भंते ! ढंका कंका विलका मद्दुगा सिही निस्सीला तहेव जाव ओसन्नं नरगतिरिक्खजोणिएसु उववज्जिहिंति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति (सूत्रं २८८) ॥ सत्तमस्स छट्ठो उद्देसओ ॥ ७–६ ॥

'दुरूव'त्ति दुःस्वभावा 'अणाएज्जवयणपच्चायाय'त्ति अनादेयवचनप्रत्याजाते येषां ते तथा, प्रत्याजातं तु जन्म, 'कूडे'त्यादौ कूटं–भ्रान्तिजनकद्रव्यं कपटं–वञ्चनाय वेषान्तरादिकरणं 'गुरुनिओगविणयरहिया य'त्ति गुरुषु–मात्रादिषु नियोगेन–अवश्यंतया यो विनयस्तेन रहिता ये ते तथा, चः समुच्चये 'विकलरूव'त्ति असम्पूर्णरूपाः 'खरफरुसउज्झामवण्ण'त्ति खरपरुषाः स्पर्शतोऽतीवकठोराः ध्यामवर्णा–अनुज्ज्वलवर्णास्ततः कर्म्मधारयः 'फुट्टसिर'त्ति विकीर्णशिरोजा इत्यर्थः 'कविलपलियकेस'त्ति कपिलाः पलिताश्च–शुक्लाः केशा येषां ते तथा 'बहुण्हारुसंपिणद्धउद्दंसणिज्जरूव'त्ति बहुस्नायुभिः संपिनद्धं–बद्धमत एव दुःखेन दर्शनीयं रूपं येषां ते तथा 'संकुडियवलीतरंगपरिवेढियंगमंगा' सङ्कुटितं वलीलक्षणतरङ्गैः परिवेष्टितं चाङ्गं येषां ते तथा, क इव ? इत्यत आह—'जरापरिणयव्व थेरयणर'त्ति जरापरिगतस्थविरनरा इवेत्यर्थः, स्थविराश्चान्यथाऽपि व्यपदिश्यन्त इति जरापरिणतग्रहणं, तथा 'पविरलपरिसडियदंतसेढी' प्रविरला दन्तविरलत्वेन परिशटिता च दन्तानां केषाञ्चित्पतितत्वेन भग्नत्वेन वा दन्तश्रेणिर्येषां ते तथा 'उब्भडघडमुह'त्ति उद्भटं–विकरालं घटकमुखमिव मुखं तुच्छदशनच्छदत्वाद्येषां ते तथा 'उब्भडघाडामुह'त्ति क्वचित्तत्र उद्भटे–स्पष्टे घाटामुखे–शिरोदेशविषयौ येषां ते तथा 'वंकवलीविगयभेसणमुह'त्ति वङ्कं–वक्रं पाठान्तरेण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुषम-सुषम: आरकस्य वर्णनं

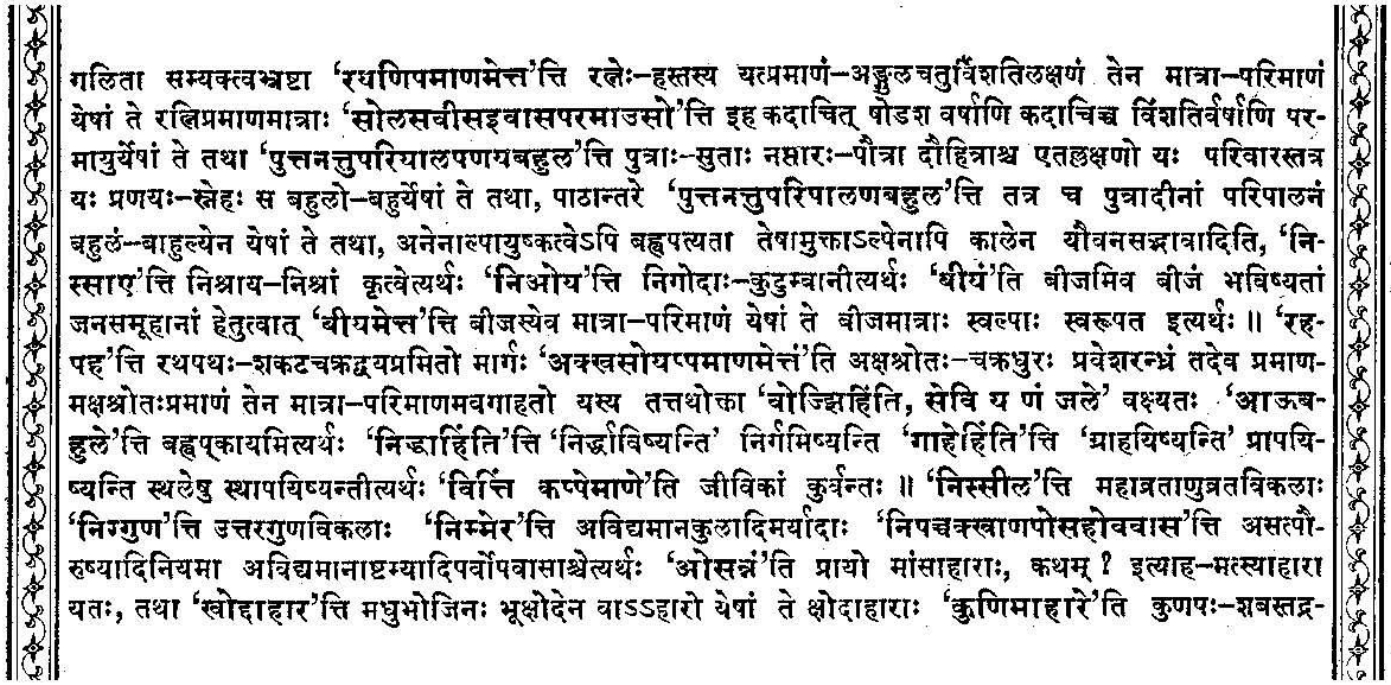
व्यङ्गं–सलाञ्छनं वलिभिर्विकृतं च बीभत्सं भेषणं–भयजनकं मुखं येषां ते तथा'कच्छूकसराभिभूया'कच्छूः–पामणा(मा) तया कशरैश्च–खशरैरभिभूता–व्याप्ता ये ते तथा, अत एव 'खरतिक्खनखकंडुइयविक्खयतणु'त्ति खरतीक्ष्णनखानां कण्डूयितेन विकृता–कृतव्रणा तनुः–शरीरं येषां ते तथा, 'दद्दुकिडिभसिंझफुडियफरुसच्छवि'त्ति दद्रुकिडिभसिध्मानि क्षुद्रकुष्ठविशेषास्तत्प्रधाना स्फुटिता परुषा च छविः–शरीरत्वग् येषां ते तथा, अत एव 'चित्तलंग'त्ति कर्बुरावयवाः, 'टोले'त्यादि, टोलगतयः–उष्ट्रादिसमप्रचाराः पाठान्तरेण टोलाकृतयः–अप्रशस्ताकाराः विषमाणि ह्रस्वदीर्घत्वादिना सन्धिरूपाणि बन्धनानि येषां ते विषमसन्धिबन्धनाः उत्कुटुकानि–यथास्थानमनिविष्टानि अस्थिकानि–कीकसानि विभक्तानीव च–दृश्यमानान्तरालानीव येषां ते उत्कुटुकास्थिकविभक्ताः अथवोत्कुटुकस्थितास्तथास्वभावत्वाद्विभक्ताश्च–भोजन विशेषरहिता ये ते तथा, दुर्बला–बलहीनाः कुसंहननाः–सेवार्त्तसंहननाः कुप्रमाणाः–प्रमाणहीनाः कुसंस्थिताः–दुःसंस्थानाः, तत एषां 'टोलगे'त्यादिपदानां कर्मधारयः, अत एव 'कुरूव'त्ति कुरूपाः 'कुट्ठाणासणकुसेज्जकुभोइणो'त्ति कुत्सिताश्रयविष्टरदुःशयनदुर्भोजनाः 'असुइणो'त्ति अशुचयः स्नानब्रह्मचर्यादिवर्जितत्वात्, अश्रुतयो वा शास्त्रवर्जिताः, 'खलंतविज्झलगइ'त्ति स्खलन्ती–स्खलन्ती विह्वला च–अदेवितदा गतिर्येषां ते तथा अनेकव्याधिरोगपीडितत्वात् 'विगयचेट्ठानट्ठतेय'त्ति विकृतचेष्टा नष्टतेजसश्चेत्यर्थः 'सीए'त्यादि शीतेनोष्णेन खरपरुषवातेन च 'विज्झडिय'त्ति मिश्रितं व्याप्तमित्यर्थः मलिनं च पांशुरूपेण रजसा द्रव्यरजसेत्यर्थः 'उग्गुंडिय'त्ति उद्धूलितं चाङ्गं २ येषां ते तथा 'असुहदुक्खभागि'त्ति दुःखानुबन्धिदुःखभागिन इत्यर्थः 'ओसण्ण'ति बाहुल्येन 'धम्मसण्ण'त्ति धर्म्मश्रद्धाऽवसन्ना-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुषम-सुषमः आरकस्य वर्णनं

प्रत सूत्रांक [२८८]

दीप अनुक्रम [३६०]



गलिता सम्यक्त्वभ्रष्टा 'रयणिपमाणमेत्त'त्ति रत्नेः–हस्तस्य यत्प्रमाणं–अङ्गुलचतुर्विंशतिलक्षणं तेन मात्रा–परिमाणं येषां ते रत्निप्रमाणमात्राः 'सोलसवीसइवासपरमाउसो'त्ति इह कदाचित् षोडश वर्षाणि कदाचिच्च विंशतिर्वर्षाणि परमायुर्येषां ते तथा 'पुत्तनत्तुपरियालपणयबहुल'त्ति पुत्राः–सुताः नप्तारः–पौत्रा दौहित्राश्च एतल्लक्षणो यः परिवारस्तत्र यः प्रणयः–स्नेहः स बहुलो–बहुर्येषां ते तथा, पाठान्तरे 'पुत्तनत्तुपरिपालणबहुल'त्ति तत्र च पुत्रादीनां परिपालनं बहुलं–बाहुल्येन येषां ते तथा, अनेनाल्पायुष्कत्वेऽपि बहुपत्यता तेषामुक्ताऽल्पेनापि कालेन यौवनसद्भावादिति, 'निस्साए'त्ति निश्राय–निश्रां कृत्वेत्यर्थः 'निओय'त्ति निगोदाः–कुटुम्बानीत्यर्थः 'धीयं'ति बीजमिव बीजं भविष्यतां जनसमूहानां हेतुत्वात् 'बीयमेत्त'त्ति बीजस्येव मात्रा–परिमाणं येषां ते बीजमात्राः स्वल्पाः स्वरूपत इत्यर्थः ॥ 'रहपह'त्ति रथपथः–शकटचक्रद्वयप्रमितो मार्गः 'अक्खसोयप्पमाणमेत्त'त्ति अक्षश्रोतः–चक्रधुरः प्रवेशरन्ध्रं तदेव प्रमाणमक्षश्रोतःप्रमाणं तेन मात्रा–परिमाणमवगाहतो यस्य तत्तथोक्ता 'वोज्झिहिंति, सेवि य णं जले' वक्ष्यतः 'आऊबहुले'त्ति बहूप्कायमित्यर्थः 'निद्धाहिंति'त्ति 'निर्द्धाविष्यन्ति' निर्गमिष्यन्ति 'गाहेहिंति'त्ति 'ग्राहयिष्यन्ति' प्रापयिष्यन्ति स्थलेषु स्थापयिष्यन्तीत्यर्थः 'वित्तिं कप्पेमाणे'ति जीविकां कुर्वन्तः ॥ 'निस्सील'त्ति महाव्रताणुव्रतविकलाः 'निग्गुण'त्ति उत्तरगुणविकलाः 'निम्मेर'त्ति अविद्यमानकुलादिमर्यादाः 'निपच्चक्खाणपोसहोववास'त्ति असत्पौरुष्यादिनियमा अविद्यमानाष्टम्यादिपर्वोपवासाश्चेत्यर्थः 'ओसन्न'ंति प्रायो मांसाहाराः, कथम् ? इत्याह–मत्स्याहारा यतः, तथा 'खोदाहार'त्ति मधुभोजिनः भूक्षोदेन वाऽऽहारो येषां ते क्षोदाहाराः 'कुणिमाहारे'ति कुणपः–शवस्तद्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	दुषम-सुषम: आरकस्य वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२८८]

दीप अनुक्रम [३६०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी या वृत्तिः १ ॥३०९॥

सोऽपि वसादिः कुणपस्तदाहाराः । 'ते णं'ति ये तदानीं क्षीणावशेषाश्चतुष्पदाः केचन भविष्यन्ति 'अच्छ'त्ति ऋक्षाः 'तरच्छ'त्ति व्याघ्रविशेषाः 'परस्सर'त्ति शरभाः, 'ढंक'त्ति काकाः 'मद्दुग'त्ति मद्गवो–जलवायसाः 'सिहि'त्ति मयूराः ॥ सप्तमशते षष्ठः ॥ ७–६ ॥

अनन्तरोद्देशके नरकादावुत्पत्तिरुक्ता, सा चासंवृतानाम्, अथैतद्विपर्ययभूतस्य संवृतस्य यद्भवति तत्सप्तमोद्देशके आह–

संवुडस्स णं भंते ! अणगारस्स आउत्तं गच्छमाणस्स जाव आउत्तं तुयट्टमाणस्स आउत्तं वत्थं पडिग्गहं कंबलं पायपुंछणं गेण्हमाणस्स वा निक्खिवमाणस्स वा तस्स णं भंते ! किं ईरियावहिया किरिया कज्जइ संपराइया किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! संवुडस्स णं अणगारस्स जाव तस्स णं ईरियावहिया किरिया कज्जइ णो संपराइया किरिया कज्जइत्ति । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ–संवुडस्स णं जाव संपराइया किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! जस्स णं कोहमाणमायालोभा वोच्छिन्ना भवंति तस्स णं ईरियावहिया किरिया कज्जइ, तहेव जाव उस्सुत्तं रीयमाणस्स संपराइया किरिया कज्जइ, से णं अहासुत्तमेव रीयइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो संपराइया किरिया कज्जइ ॥ (सूत्रं २८९) ॥ रूवी भंते ! कामा अरूवी कामा ?, गोयमा ! रूवी कामा समणाउसो ! नो अरूवी कामा । सचित्ता भंते ! कामा अचित्ता कामा ?, गोयमा ! सचित्तावि कामा अचित्तावि कामा । जीवा भंते ! कामा अजीवा कामा ?, गोयमा ! जीवावि कामा अजीवावि

७ शतके उद्देशः ७ संवृतक्रियाः २८९ काम-भोगः २९०

॥३०९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

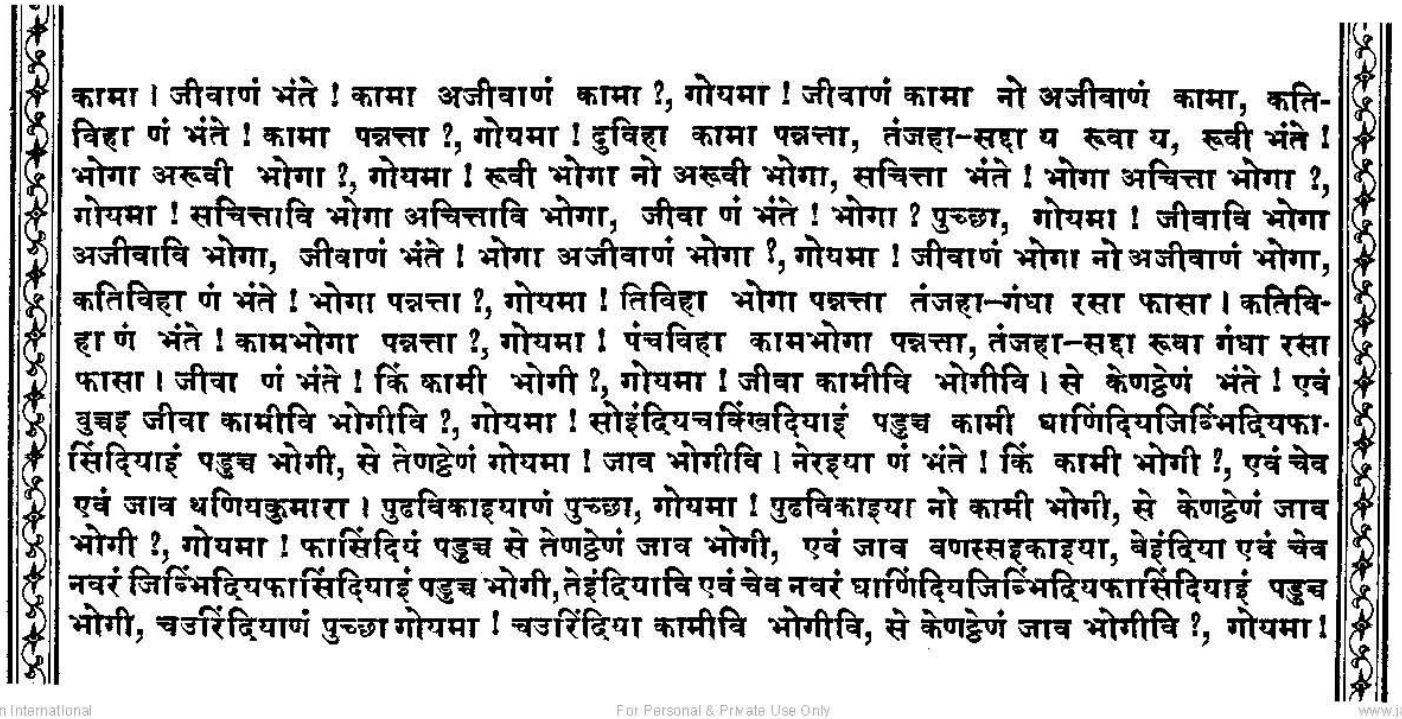
अत्र सप्तम-शतके षष्ठं-उद्देशक: समाप्त:

अथ सप्तम-शतके सप्तम-उद्देशक: आरम्भ:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२८९--२९०]

दीप अनुक्रम [३६१-३६२]



कामा । जीवाणं भंते ! कामा अजीवाणं कामा ?, गोयमा ! जीवाणं कामा नो अजीवाणं कामा, कति-
विहा णं भंते ! कामा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा कामा पन्नत्ता, तंजहा–सद्दा य रूवा य, रूवी भंते !
भोगा अरूवी भोगा ?, गोयमा ! रूवी भोगा नो अरूवी भोगा, सचित्ता भंते ! भोगा अचित्ता भोगा ?,
गोयमा ! सचित्तावि भोगा अचित्तावि भोगा, जीवा णं भंते ! भोगा ? पुच्छा, गोयमा ! जीवावि भोगा
अजीवावि भोगा, जीवाणं भंते ! भोगा अजीवाणं भोगा ?, गोयमा ! जीवाणं भोगा नो अजीवाणं भोगा,
कतिविहा णं भंते ! भोगा पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा भोगा पन्नत्ता तंजहा–गंधा रसा फासा । कतिवि-
हा णं भंते ! कामभोगा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा कामभोगा पन्नत्ता, तंजहा–सद्दा रूवा गंधा रसा
फासा । जीवा णं भंते ! किं कामी भोगी ?, गोयमा ! जीवा कामीवि भोगीवि । से केणट्ठेणं भंते ! एवं
वुच्चइ जीवा कामीवि भोगीवि ?, गोयमा ! सोइंदियचक्खिंदियाइं पडुच्च कामी घाणिंदियजिब्भिंदियफा-
सिंदियाइं पडुच्च भोगी, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव भोगीवि । नेरइया णं भंते ! किं कामी भोगी ?, एवं चेव
एवं जाव थणियकुमारा । पुढविकाइयाणं पुच्छा, गोयमा ! पुढविकाइया नो कामी भोगी, से केणट्ठेणं जाव
भोगी ?, गोयमा ! फासिंदियं पडुच्च से तेणट्ठेणं जाव भोगी, एवं जाव वणस्सइकाइया, बेइंदिया एवं चेव
नवरं जिब्भिंदियफासिंदियाइं पडुच्च भोगी, तेइंदियावि एवं चेव नवरं घाणिंदियजिब्भिंदियफासिंदियाइं पडुच्च
भोगी, चउरिंदियाणं पुच्छा गोयमा ! चउरिंदिया कामीवि भोगीवि, से केणट्ठेणं जाव भोगीवि ?, गोयमा !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३१०॥

चक्खिंदियं पडुच्च कामी घाणिंदियजिब्भिंदियफासिंदियाइं पडुच्च भोगी, से तेणट्ठेणं जाव भोगीवि, अवसेसा जहा जीवा जाव वेमाणिया ॥ एएसि णं भंते ! जीवाणं कामभोगीणं नोकामीणं नोभोगीणं भोगीण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा कामभोगी नोकामीनोभोगी अणंतगुणा भोगी अणंतगुणा ॥ (सूत्रं २९०) ॥

'संवुडे'त्यादि ॥ संवृतश्च कामभोगानाश्रित्य भवतीति कामभोगप्ररूपणाय 'रूवी'त्यादि सूत्रवृन्दमाह–तत्र रूपं–मूर्त्तता तदस्ति येषां ते रूपिणः, तद्विपरीतास्त्वरूपिणः, काम्यन्ते–अभिलष्यन्ते एव न तु विशिष्टशरीरसंस्पर्शद्वारेणोपयुज्यन्ते ये ते कामाः–मनोज्ञाः शब्दाः संस्थानानि वर्णाश्च, अत्रोत्तरं–रूपिणः कामा नो अरूपिणः, पुद्गलधर्मत्वेन तेषां मूर्त्तत्वादिति, 'सचित्ते'त्यादि, सचित्ता अपि कामाः समनस्कप्राणिरूपापेक्षया, अचित्ता अपि कामा भवन्ति, शब्दद्रव्यापेक्षयाऽसञ्ज्ञिजीवशरीररूपापेक्षया चेति । 'जीवे'त्यादि, जीवा अपि कामा भवन्ति जीवशरीररूपापेक्षया, अजीवा अपि कामा भवन्ति शब्दापेक्षया चित्रपुत्रिकादिरूपापेक्षया चेति । 'जीवाण'मित्यादि, जीवानामेव कामा भवन्ति कामहेतुत्वात्, अजीवानां न कामा भवन्ति तेषां कामासम्भवादिति । 'रूवि'मित्यादि, भुज्यन्ते–शरीरेण उपभुज्यन्ते इति भोगाः–विशिष्टगंधरसस्पर्शद्रव्याणि 'रूविं भोग'त्ति रूपिणो भोगा नो अरूपिणः पुद्गलधर्मत्वेन तेषां मूर्त्तत्वादिति । 'सचित्ते'त्यादि, सचित्ता अपि भोगा भवन्ति गन्धादिप्रधानजीवशरीराणां केषाञ्चित्समनस्कत्वात्, तथाऽचित्ता अपि भोगा भवन्ति केषाञ्चिद्गन्धादिविशिष्टजीवशरीराणाममनस्कत्वात्, 'जीवावि भोग'त्ति जीवशरीराणां विशिष्टगन्धा-

७ शतके उद्देशः ७

॥३१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिगुणयुक्तत्वात्, 'अजीवावि भोग'त्ति अजीवद्रव्याणां विशिष्टगन्धादिगुणोपेतत्वादिति ॥ 'सवत्थोवा कामभोगि'त्ति ते हि चतुरिन्द्रियाः पञ्चेन्द्रियाश्च स्युस्ते च स्तोका एव, 'नो कामी नो भोगि'त्ति सिद्धास्ते च तेभ्योऽनन्तगुणा एव, 'भोगि'त्ति एकद्वित्रीन्द्रियास्ते च तेभ्योऽनन्तगुणा वनस्पतीनामनन्तगुणत्वादिति ॥ भोगाधिकारादिदमाह—

छउमत्थे णं भंते ! मणूसे जे भविए अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववज्जित्तए, से नूणं भंते ! से खीणभोगी नो पभू उट्ठाणेणं कम्मेणं बलेणं वीरिएणं पुरिसक्कारपरक्कमेणं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए ?, से नूणं भंते ! एयमट्ठं एवं वयह ?, गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे, पभू णं उट्ठाणेणवि कम्मेणवि बलेणवि वीरिएणवि पुरुसक्कारपरक्कमेणवि अन्नयराइं विपुलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए, तम्हा भोगी भोगे परिचयमाणे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवइ । आहोहिए णं भंते ! मणुस्से जे भविए अन्नयरेसु देवलोएसु एवं चेव जहा छउमत्थे जाव महापज्जवसाणे भवति । परमाहोहिए णं भंते ! मणुस्से जे भविए तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झित्तए जाव अंतं करेत्तए ?, से नूणं भंते ! से खीणभोगी सेसं जहा छउमत्थस्सवि । केवली णं भंते ! मणुस्से जे भविए तेणेव भवग्गहणेणं एवं जहा परमाहोहिए जाव महापज्जवसाणे भवइ ॥ (सूत्रं २९१) ॥

'छउमत्थे ण'मित्यादि सूत्रचतुष्कं, तत्र च 'से नूणं भंते ! से खीणभोगि'त्ति 'से'त्ति 'असौ' मनुष्यः 'नूनं' निश्चितं भदन्त ! 'से'त्ति अयम(था)र्थः अथशब्दश्च परिप्रश्नार्थः 'खीणभोगि'त्ति भोगो जीवस्य यत्रास्ति तद्भोगि–शरीरं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२९१]

दीप अनुक्रम [३६३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३११॥

तत्क्षीणं तपोरोगादिभिर्यस्य सः क्षीणभोगी क्षीणतनुर्दुर्बल इतियावत्, 'णो पभु'त्ति न समर्थः 'उट्ठाणेणं'ति ऊर्द्ध्वीभवनेन 'कम्मेणं'ति गमनादिना 'बलेणं'ति देहप्रमाणेन 'वीरिएणं'ति जीवबलेन 'पुरिसक्कारपरक्कमेणं'ति पुरुषाभिमानेन तेनैव च साधितस्वप्रयोजनेनेत्यर्थः 'भोगभोगाइं'ति मनोज्ञशब्दादीन् 'से नूणं भंते ! एयमट्ठं एवं वयह' अथ निश्चितं भदन्त ! एतम्–अनन्तरोक्तमर्थमेवम्–अमुनैव प्रकारेण वदथ यूयम् ? इति प्रश्नः, पृच्छतोऽयमभिप्रायः–यद्यसौ न प्रभुस्तदाऽसौ भोगभोजनासमर्थत्वान्न भोगी अत एव न भोगत्यागीत्यतः कथं निर्जरावान् ? कथं वा देवलोकगमनपर्यवसानोऽस्तु ?, उत्तरं तु 'नो इणट्ठे समट्ठे'त्ति, कस्माद् ?, यतः 'पभू णं से'त्ति स क्षीणभोगी मनुष्यः 'अन्नतराइं'ति एकतरान् कांश्चित्क्षीणशरीरसाधूचितान्, एवं चोचितभोगभुक्तिसमर्थत्वाद्भोगित्वं तत्प्रत्याख्यानाच्च तत्त्यागित्वं ततो निर्जरा ततोऽपि च देवलोकगतिरिति। 'आहोहिए णं'ति 'आधोऽवधिकः' नियतक्षेत्रविषयावधिज्ञानी 'परमाहोहिए णं'ति परमाधोऽवधिकज्ञानी, अयं च चरमशरीर एव भवतीत्यत आह—'तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झित्तए'इत्यादि ॥ अनन्तरं छद्मस्थादिज्ञानवक्तव्यतोक्ता, अथ पृथिव्याद्यज्ञानिवक्तव्यतोच्यते—

जे इमे भंते ! असन्निणो पाणा, तंजहा–पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया छट्ठा य एगतिया तसा, एए णं अंधा मूढा तमंपविट्ठा तमपडलमोहजालपडिच्छण्णा अकामनिकरणं वेदणं वेदंतीति वत्तव्वं सिया ?, हंता गोयमा ! जे इमे असन्निणो पाणा जाव पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया छट्ठा य जाव वेदणं वेदेंतीति वत्तव्वं सिया ॥ अत्थि णं भंते ! पभूवि अकामनिकरणं वेदणं वेदंति ?, हंता गोयमा ! अत्थि, कहन्नं भंते !

७ शतके उद्देशः ७

॥३११॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पभूवि अकामनिकरणं वेदणं वेदेंति ?, गोयमा ! जे णं णो पभू विणा दीवेणं अंधकारंसि रूवाइं पासित्तए जे णं नो पभू पुरओ रूवाइं अणिज्झाइत्ता णं पासित्तए जे णं नो पभू मग्गओ रूवाइं अणवयक्खित्ता णं पासित्तए [जे णं नो पभू पासओ रूवाइं अणुलोइत्ता णं पासित्तए जे णं नो पभू उड्ढं रूवाइं अणालोएत्ता णं पासित्तए जे णं नो पभू अहे रूवाइं अणालोयएत्ता णं पासित्तए] एस णं गोयमा ! पभूवि अकामनिकरणं वेदणं वेदेंति ॥ अत्थि णं भंते ! पभूवि पकामनिकरणं वेदणं वेदेंति ?, हंता अत्थि, कहन्नं भंते ! पभूवि पकामनिकरणं वेदणं वेदंति ?, गोयमा ! जे णं नो पभू समुद्दस्स पारं गमित्तए जे णं नो पभू समुद्दस्स पारगयाइं रूवाइं पासित्तए जे णं नो पभू देवलोगं गमित्तए जे णं नो पभू देवलोगगयाइं रूवाइं पासित्तए एस णं गोयमा ! पभूवि पकामनिकरणं वेदणं वेदेंति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥ (सूत्रं २९२) ॥ सत्तमस्स सत्तमो उद्देसओ समत्तो ॥ ७–७ ॥

'जे इमे'इत्यादि, 'एगइया तस'त्ति 'एके' केचन न सर्वे संमूर्च्छिमा इत्यर्थः 'अंध'त्ति अंध इवान्धा–अज्ञानाः 'मूढ'त्ति मूढाः तत्त्वश्रद्धानं प्रति एत एवोपमयोच्यन्ते 'तमंपविट्ठ'त्ति तमः प्रविष्टा इव तमःप्रविष्टाः 'तमपडलमोहजालपडिच्छन्न'त्ति तमःपटलमिव तमःपटलं–ज्ञानावरणं मोहो–मोहनीयं तदेव जालं मोहजालं ताभ्यां प्रतिच्छन्ना–आच्छादिता ये ते तथा 'अकामनिकरणं'ति अकामो–वेदनानुभावेऽनिच्छाऽमनस्कत्वात् स एव निकरणं–कारणं यत्र तदकामनिकरणम् अज्ञानप्रत्ययमिति भावस्तद्यथा भवतीत्येवं 'वेदनां' सुखदुःखरूपां वेदनं वा–संवेदनं 'वेदयन्ति' अनु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवन्तीति ॥ अथासञ्ज्ञिविपक्षमाश्रित्याह—'अत्थी'त्यादि, अस्त्ययं पक्षो यदुत 'पभूवि'त्ति प्रभुरपि सञ्ज्ञित्वेन यथाव-द्रूपादिज्ञाने समर्थोऽप्यास्तामसञ्ज्ञित्वेनाप्रभुरित्यपिशब्दार्थः 'अकामनिकरणम्' अनिच्छाप्रत्ययमनाभोगात्, अन्ये त्वाहुः—अकामेन—अनिच्छया 'निकरणं' क्रियाया—इष्टार्थप्राप्तिलक्षणाया अभावो यत्र वेदने तत्तथा तद्यथा भवतीत्येवं वेदनां वेदयन्तीति प्रश्नः, उत्तरं तु 'जे णं'ति यः प्राणी सञ्ज्ञित्वेनोपायसद्भावेन च हेयादीनां हानादौ समर्थोऽपि 'नो पहु'त्ति न समर्थो विना प्रदीपेनान्धकारे रूपाणि 'पासित्तए'त्ति द्रष्टुम्, एषोऽकामप्रत्ययं वेदनां वेदयतीति सम्बन्धः, 'पुर-ओ'त्ति अग्रतः 'अणिज्झाएत्ता णं'ति 'अनिर्ध्याय' चक्षुरव्यापार्य 'मग्गओ'त्ति पृष्ठतः 'अणवयक्खित्ता णं'ति 'अन-वेक्ष्य' पश्चाद्भागमनवलोक्येति ॥ अकामनिकरणं वेदनां वेदयतीत्युक्तम्, अथ तद्विपर्ययमाह—'अत्थि ण'मित्यादि, 'प्रभुरपि' सञ्ज्ञित्वेन रूपदर्शनसमर्थोऽपि 'पकामनिकरणं'ति प्रकामः—ईप्सितार्थाप्राप्तितः प्रवर्द्धमानतया प्रकृष्टोऽभि-लाषः स एव निकरणं—कारणं यत्र वेदने तत्तथा, अन्ये त्वाहुः—प्रकामे—तीव्राभिलाषे सति प्रकामं वा अत्यर्थं निकरणम्—इष्टार्थसाधकक्रियाणामभावो यत्र तत् प्रकामनिकरणं तद्यथा भवतीत्येवं वेदनां वेदयतीति प्रश्नः, उत्तरं तु 'जे ण'मि-त्यादि, यो न प्रभुः समुद्रस्य पारं गन्तुं तद्गततद्द्रव्यप्राप्त्यर्थं सत्यपि तथाविधशक्तिवैकल्यात्, अत एव च यो न प्रभुः समु-द्रस्य पारगतानि रूपाणि द्रष्टुं, स तद्गताभिलाषातिरेकात् प्रकामनिकरणं वेदनां वेदयतीति ॥ सप्तमशते सप्तमः ॥७–७॥

सप्तमोद्देशकस्यान्ते छाद्मस्थिकं वेदनमुक्तमष्टमे त्वादावेव छद्मस्थवक्तव्यतोच्यते, तत्र चेदं सूत्रम्—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तम-शतके सप्तम-उद्देशक: समाप्त:

अथ सप्तम-शतके अष्टम-उद्देशक: आरम्भ:

प्रत सूत्रांक [२९३--२९४]

दीप अनुक्रम [३६५--३६६]

छउमत्थे णं भंते ! मणूसे तीयमणंतं सासयं समयं केवलेणं संजमेणं एवं जहा पढमसए चउत्थे उद्देसए तहा भाणियव्वं जाव अलमत्थु ॥ (सूत्रं २९३) ॥ से णूणं भंते ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समे चेव जीवे ?, हंता गोयमा ! हत्थिस्स कुंथुस्स य, एवं जहा रायप्पसेणइज्जे जाव खुड्डियं वा महालियं वा से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव समे चेव जीवे (सूत्रं २९४) ॥

'छउमत्थे ण'मित्यादि, एतच्च यथा प्राग् व्याख्यातं तथा द्रष्टव्यम् ॥ अथ जीवाधिकारादिदमाह—'से णूण'मित्यादि, 'एवं जहा रायप्पसेणइज्जे'त्ति, तत्र चैतत्सूत्रमेवं–समे चेव जीवे, से णूणं भंते ! हत्थीओ कुंथू अप्पकम्मतराए चेव अप्पकिरियतराए चेव अप्पासवतराए चेव कुंथुओ हत्थी महाकम्मतराए चेव ४ ?, हंता गोयमा ! । कम्हा णं भंते ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समे चेव जीवे ?, गोयमा ! से जहानामए–कूडागारसाला सिया दुहओ लित्ता गुत्ता गुत्तदुवारा निवाया निवायगंभीरा अहे णं केई पुरिसे पईवं च जोइं च गहाय तं कूडागारसालं अंतो २ अणुपविसेइ २ तीसे कूडागारसालाए सव्वओ समंता घणनिचियनिरन्तरनिच्छिड्डाइं दुवारवयणाइं पिहेति तीसे य बहुमज्झदेसभाए तं पईवं पलीवेज्जा, से य पईवे कूडागारसालं अंतो २ ओभासति उज्जोएइ तवइ पभासेइ नो चेव णं कूडागारसालाए बाहिं, तए णं से पुरिसे तं पईवं इड्ढरेणं पिहेइ, तए णं से पईवे इड्ढरस्स अंतो २ ओभासेइ नो चेव णं इड्ढरस्स बाहिं, एवं गोकिलंजएणं गंडवाणियाए पच्छिपिडएणं आढएणं अद्धाढएणं पत्थएणं अद्धपत्थएणं कुलवेणं अद्धकुलवेणं चउब्भाइयाए अट्ठभाइयाए सोलसियाए बत्तीसियाए चउसट्ठियाए, तए णं से पुरिसे तं पईवं दीवगचंपणएणं पिहेइ, तए णं से पईवे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [२९३--२९४]

दीप अनुक्रम [३६५--३६६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३१३॥

तं दीवगचंपणयं अंतो २ ओभासइ नो चेव णं दीवगचंपणयस्स बाहिं नो चेव णं चउसट्ठियाए बाहिं जाव नो चेव णं कूडागारसालाए बाहिं, एवामेव गोयमा ! जीवेवि जारिसियं पुव्वकम्मनिबद्धं बोंदिं निवत्तेइं तं असंखेज्जेहिं जीवपएसेहिं सचित्तीकरेइ' शेषं तु लिखितमेवास्ति, अस्य चायमर्थः–कूटाकारेण–शिखराकृत्या युक्ता शाला कूटाकारशाला 'दुहओ लित्ता' बहिरन्तश्च गोमयादिना लिप्ता 'गुत्ता' प्राकाराद्यावृता 'गुत्तदुवारा' कपाटादियुक्तद्वारा 'निवाया' वायुप्रवेशर-हिता, किल महद्गृहं प्रायो निवातं न भवतीत्यत आह—'निवायगंभीरा' निवातविशालेत्यर्थः 'पईवं' तैलदशाभाजनं 'जोइं'ति अग्निं 'घणनिचयनिरन्तरं निच्छिड्डाइं दुवारवयणाइं पिहेति' द्वाराण्येव वदनानि–मुखानि द्वारवदनानि पिधत्ते, कीदृशानि कृत्वा ? इत्याह–घननिचितानि कपाटादिद्वारपिधानानां द्वारशाखादिषु गाढनियोजनेन तानि च तानि निरन्तरं कपाटादीनामन्तराभावेन निश्छिद्राणि च–नीरन्ध्राणि घननिचितनिरन्तरनिश्छिद्राणि 'इड्डुरेणं'ति गन्त्रीदञ्च-नकेन 'गोकिलंजएणं'ति गोचरणार्थं महावंशमयभाजनविशेषेण डल्लयेत्यर्थः 'गंडवाणियाए'त्ति 'गण्डपाणिका' वंशम-यभाजनविशेष एव यो गण्डेन–हस्तेन गृह्यते डल्लातो लघुतरः 'पच्छिपिडएणं'ति पच्छिकालक्षणपिटकेन आढका-दीनि प्रतीतानि नवरं 'चउब्भाइय'त्ति घटकस्य–रसमानविशेषस्य चतुर्थभागमात्रो मानविशेषः 'अट्ठभाइया' तस्यैवाष्ट मभागमात्रो मानविशेषः एवं 'सोलसिया' षोडशभागमाना 'बत्तीसिया' तस्यैव द्वात्रिंशद्भागमात्रा 'चतुष्षष्टिका' तस्यैव चतुःषष्टितमांशस्वभावा पलमिति तात्पर्यं 'दीवगचंपएणं'ति दीपकचम्पकेन दीपाच्छादनेन कोशिकेनेत्यर्थः, एतच्च सर्वमपि वाचनान्तरे साक्षाल्लिखितमेव दृश्यत इति ॥ जीवाधिकारादिदमाह—

७ शतके उद्देशः ८ हस्तिकुन्थू समौसू२९४

॥३१३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [२९५--२९६]

दीप अनुक्रम [३६७--३६८]

नेरइयाणं भंते ! पावे कम्मे जे य कडे जे य कज्जइ जे य कज्जिस्सइ सव्वे से दुक्खे जे निज्जिन्ने से सुहे ?, हंता गोयमा ! नेरइयाणं पावे कम्मे जाव सुहे, एवं जाव वेमाणियाणं (सूत्रं २९५) ॥ कति णं भंते ! सन्नाओ-पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! दस सन्नाओ पन्नत्ताओ, तंजहा–आहारसन्ना १ भयसन्ना २ मेहुणसन्ना ३ परिग्गहसन्ना ४ कोहसन्ना ५ माणसन्ना ६ मायासन्ना ७ लोभसन्ना ८ लोगसन्ना ९ ओहसन्ना १०, एवं जाव वेमाणियाणं ॥ नेरइया दसविहं वेयणिज्जं पच्चणुभवमाणा विहरंति, तंजहा–सीयं उसिणं खुहं पिवासं कंडुं परज्झं जरं दाहं भयं सोगं ॥ (सूत्रं २९६) ॥

'नेरइयाण'मित्यादि, 'सव्वे से दुक्खे'त्ति दुःखहेतुसंसारनिबन्धनत्वाद् दुःखं 'जे निज्जिन्ने से सुहे'त्ति सुखस्वरूप-मोक्षहेतुत्वाद्यन्निर्जीर्णं कर्म तत्सुखमुच्यते ॥ नारकादयश्च सञ्ज्ञिन इति सञ्ज्ञा आह—'कति ण'मित्यादि, तत्र सञ्ज्ञानं सञ्ज्ञा–आभोग इत्यर्थः मनोविज्ञानमित्यन्ये संज्ञायते वाऽनयेति सञ्ज्ञा वेदनीयमोहनीयोदयाश्रया ज्ञानदर्शनावरणक्ष-योपशमाश्रया च विचित्राहारादिप्राप्तये क्रियैवेत्यर्थः, सा चोपाधिभेदाद्विद्यमाना दशप्रकारा भवति, तद्यथा–'आहा-रसन्ने'त्यादि, तत्र क्षुद्वेदनीयोदयात् कावलिकाद्याहारार्थं पुद्गलोपादानक्रियैव संज्ञायतेऽनया तद्वानित्याहारसञ्ज्ञा, तथा भयमोहनीयोदयाद्भयोद्भ्रान्तदृष्टिवचनविकाररोमाञ्चोद्भेदादिक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनयेति भयसञ्ज्ञा, तथा पुंवेदाद्युदयान्मै-थुनाय रुद्याद्यङ्गालोकनप्रसन्नवदनसंस्तम्भितोरुवेपथुप्रभृतिलक्षणा क्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनयेति मैथुनसञ्ज्ञा, तथा लोभोद-यात्प्रधानभवकारणाभिष्वङ्गपूर्विका सचित्तेतरद्रव्योपादानक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनयेति परिग्रहसञ्ज्ञा, तथा क्रोधोदयादावे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शगर्भा प्ररूक्षनयनदन्तच्छदस्फुरणादिचेष्टैव सञ्ज्ञायतेऽनयेति क्रोधसञ्ज्ञा, तथा मानोदयादहङ्कारात्मिकोत्सेककक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनयेति मानसञ्ज्ञा, तथा मायोदयेनाशुभसङ्क्लेशादनृतसंभाषणादिक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनयेति मायासञ्ज्ञा, तथा लोभोदयाल्लोभसमन्विता सचित्तेतरद्रव्यप्रार्थनैव सञ्ज्ञायतेऽनयेति लोभसञ्ज्ञा, तथा मतिज्ञानावरणक्षयोपशमाच्छब्दाद्यर्थगोचरा सामान्यावबोधक्रियैव सञ्ज्ञायते वस्त्वनयेति ओघसञ्ज्ञा, एवं शब्दाद्यर्थगोचरा विशेषावबोधक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनयेति लोकसञ्ज्ञा, ततश्चौघसञ्ज्ञा दर्शनोपयोगो लोकसञ्ज्ञा तु ज्ञानोपयोग इति, व्यत्ययं त्वन्ये, अन्ये पुनरित्थमभिदधति—सामान्यप्रवृत्तिरोघसञ्ज्ञा लोकदृष्टिस्तु लोकसञ्ज्ञा, एताश्च सुखप्रतिपत्तये स्पष्टरूपाः पञ्चेन्द्रियानधिकृत्योक्ताः, एकेन्द्रियादीनां तु प्रायो यथोक्तक्रियानिबन्धनकर्मोदयादिरूपा एवावगन्तव्या इति ॥ जीवाधिकारात्—'नेरइये'त्यादि, 'परज्झ'त्ति पारवश्यम् ॥ प्राग् वेदनोक्ता सा च कर्म्मवशात् तच्च क्रियाविशेषात् सा च महतामितरेषां च समेवेति दर्शयितुमाह—

से नूणं भंते ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समा चेव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जति ?, हंता गोयमा ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य जाव कज्जति । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव कज्जइ ?, गोयमा ! अविरतिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं जाव कज्जइ (सूत्रं २९७ ॥ आहाकम्मण्णं भंते ! भुंजमाणे किं बंधइ ? किं पकरेइ ? किं चिणाइ ? किं उवचिणाइ ? एवं जहा पढमे सए नवमे उद्देसए तहा भाणियव्वं जाव सासए पंडिए पंडियत्तं असासयं, सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति ॥ (सूत्रं २९८) सत्तमसयस्स अट्ठमउद्देसो ॥ ७–८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [२९७--२९८]

दीप अनुक्रम [३६९--३७०]

'से नूणं भंते ! हत्थिस्से'त्यादि, अनन्तरमविरतिरुक्ता सा च संयतानामप्याधाकर्म्मभोजिनां कथञ्चिदस्तीत्यतः पृच्छति-'अहे'त्यादि, 'सासए पंडिए पंडियत्तं असासयं'ति अयमर्थः–जीवः शाश्वतः पण्डितत्वमशाश्वतं चारित्रस्य भ्रंशादिति ॥ सप्तमशतेऽष्टमोद्देशकः ॥ ७–८ ॥

पूर्वमाधाकर्मभोक्तृत्वेनासंवृतवक्तव्यतोक्ता, नवमोद्देशकेऽपि तद्वक्तव्यतोच्यते, तत्र चादिसूत्रम्—

असंवुडे णं भंते ! अणगारे बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू एगवन्नं एगरूवं विउव्वित्तए ?, णो तिणट्ठे समट्ठे । असंवुडे णं भंते ! अणगारे बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू एगवन्नं एगरूवं जाव हंता पभू । से भंते ! किं इहगए पोग्गले परियाइत्ता विउव्वइ तत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विउव्वति अन्नत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वइ ?, गोयमा ! इहगए पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वइ नो तत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वइ नो अन्नत्थगए पोग्गले जाव विकुव्वति, एवं एगवन्नं अणेगरूवं चउभंगो जहा छट्ठसए नवमे उद्देसए तहा इहावि भाणियव्वं, नवरं अणगारे इहगयं इहगए चेव पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वइ, सेसं तं चेव जाव लुक्खपोग्गलं निद्धपोग्गलत्ताए परिणामेत्तए ?, हंता पभू, से भंते ! किं इहगए पोग्गले परियाइत्ता जाव नो अन्नत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वइ ॥ (सूत्रं २९९) ॥

'असंवुडे ण'मित्यादि, 'असंवृतः' प्रमत्तः 'इहगए'त्ति इह प्रच्छको गौतमस्तदपेक्षया इहशब्दवाच्यो मनुष्यलोक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तम-शतके अष्टम-उद्देशकः समाप्तः

अथ सप्तम-शतके नवम-उद्देशकः आरम्भः

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी या वृत्तिः १

॥३१५॥

स्ततश्च 'इहगतान्' नरलोकव्यवस्थितान् 'तत्थगए'त्ति वैक्रियं कृत्वा यत्र यास्यति तत्र व्यवस्थितानित्यर्थः 'अन्नत्थगए'त्ति उक्तस्थानद्वयव्यतिरिक्तस्थानाश्रितानित्यर्थः 'नवरं'ति अयं विशेषः–'इहगए'इति इहगतः अनगार इति इहगतान् पुद्गलानिति च वाच्यं, तत्र तु देव इति तत्रगतानिति चोक्तमिति ॥ अनन्तरं पुद्गलपरिणामविशेष उक्तः, स सङ्ग्रामे सविशेषो भवतीति सङ्ग्रामविशेषवक्तव्यताभणनाय प्रस्तावयन्नाह—

णायमेयं अरहया सुयमेयं अरहया विन्नायमेवं अरहया महासिलाकंटए संगामे २ ॥ महासिलाकंटए णं भंते ! संगामे वट्टमाणे के जइत्था के पराजइत्था ?, गोयमा ! वज्जी विदेहपुत्ते जइत्था, नवमल्लई नवलेच्छई कासीकोसलगा अट्ठारसवि गणरायाणो पराजइत्था ॥ तए णं से कोणिए राया महासिलाकंटकं संगामं उवट्ठियं जाणित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! उदाइं हत्थिरायं पडिकप्पेह हयगयरहजोहकलियं चाउरंगिणिं सेणिं सन्नाहेह २ त्ता मम एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह । तए णं ते कोडुंबियपुरिसा कोणिएणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ जाव अंजलिं कट्टु एवं सामी ! तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति २ खिप्पामेव छेयायरियोवएसमतिकप्पणाविकप्पेहिं सुनिउणेहिं एवं जहा उववाइए जाव भीमं संगामियं अउज्झं उदाइं हत्थिरायं पडिकप्पेंति हयगय जाव सन्नाहेंति २ जेणेव कूणिए राया तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छइत्ता करयल० कूणियस्स रन्नो तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से कूणिए राया जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ मज्जणघरं अणु-

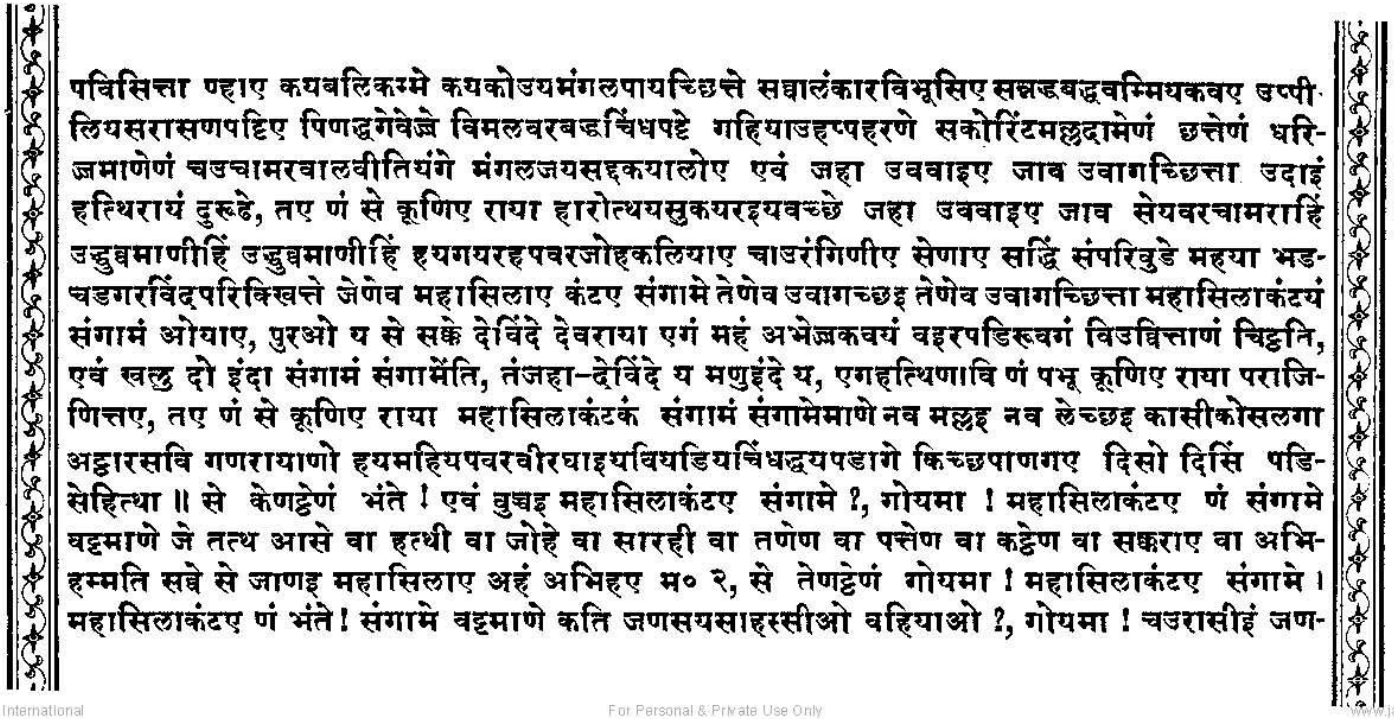
७ शतके उद्देशः ९ इहातादिपुद्गलाद्वैक्रियं सू२९९ महाशिलाकण्टकःसू ३००

॥३१५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३००]

दीप अनुक्रम [३७२]



पविसित्ता ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए सन्नद्धबद्धवम्मियकवए उप्पी-
लियसरासणपट्टिए पिणद्धगेवेज्जे विमलवरबद्धचिंधपट्टे गहियाउहप्पहरणे सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरि-
ज्जमाणेणं चउचामरवालवीतियंगे मंगलजयसद्दकयालोए एवं जहा उववाइए जाव उवागच्छित्ता उदाइं
हत्थिरायं दुरूढे, तए णं से कूणिए राया हारोत्थयसुकयरइयवच्छे जहा उववाइए जाव सेयवरचामराहिं
उद्धुव्वमाणीहिं उद्धुव्वमाणीहिं हयगयरहपवरजोहकलियाए चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे महया भड-
चडगरविंदपरिक्खित्ते जेणेव महासिलाए कंटए संगामे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता महासिलाकंटयं
संगामं ओयाए, पुरओ य से सक्के देविंदे देवराया एगं महं अभेज्जकवयं वइरपडिरूवगं विउव्वित्ताणं चिट्ठति,
एवं खलु दो इंदा संगामं संगामेंति, तंजहा–देविंदे य मणुइंदे य, एगहत्थिणावि णं पभू कूणिए राया पराजि-
णित्तए, तए णं से कूणिए राया महासिलाकंटकं संगामं संगामेमाणे नव मल्लइ नव लेच्छइ कासीकोसलगा
अट्ठारसवि गणरायाणो हयमहियपवरवीरघाइयविवडियचिंधद्धयपडागे किच्छपाणगए दिसो दिसिं पडि-
सेहित्था ॥ से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ महासिलाकंटए संगामे ?, गोयमा ! महासिलाकंटए णं संगामे
वट्टमाणे जे तत्थ आसे वा हत्थी वा जोहे वा सारही वा तणेण वा पत्तेण वा कट्ठेण वा सक्कराए वा अभि-
हम्मति सव्वे से जाणइ महासिलाए अहं अभिहए म० २, से तेणट्ठेणं गोयमा ! महासिलाकंटए संगामे।
महासिलाकंटए णं भंते! संगामे वट्टमाणे कति जणसयसाहस्सीओ वहियाओ ?, गोयमा ! चउरासीइं जण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाशीलाकंटकं संग्रामं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३१६॥

सयसाहस्सीओ वहियाओ। ते णं भंते ! मणुया निस्सीला जाव निप्पच्चक्खाणपोसहोववासा रुट्ठा परि-कुविया समरवहिया अणुवसंता कालमासे कालं किच्चा कहिं गया कहिं उववन्ना ?, गोयमा ! ओसन्नं नरग-तिरिक्खजोणिएसु उववन्ना (सूत्रं ३००) ॥

'णायमेय'मित्यादि, ज्ञातं सामान्यतः 'एतत्' वक्ष्यमाणं वस्तु 'अर्हता' भगवता महावीरेण सर्वज्ञत्वात्, तथा 'सुयं'ति स्मृतमिव स्मृतं स्पष्टप्रतिभासभावात्, विज्ञातं विशेषतः, किं तत् ? इत्याह–'महासिलाकंटए संगामे'त्ति महा-शिलैव कण्टको जीवितभेदकत्वात् महाशिलाकण्टकस्ततश्च यत्र तृणशलाकादिनाऽप्यभिहतस्याश्वहस्त्यादेर्महाशिलाकण्ट-केनेवाभ्याहतस्य वेदना जायते स सङ्ग्रामो महाशिलाकण्टक एवोच्यते, द्विर्वचनं चोल्लेखस्यानुकरणे, एवं च किलायं सङ्ग्रामः सञ्जातः—चम्पायां कूणिको राजा बभूव, तस्य चानुजौ हल्लविहल्लाभिधानौ भ्रातरौ सेचनकाभिधानग-न्धहस्तिनि समारूढौ दिव्यकुण्डलदिव्यवसनदिव्यहारविभूषितौ विलसन्तौ दृष्ट्वा पद्मावत्यभिधाना कूणिकराजस्य भार्या मत्सराद्दन्तिनोऽपहाराय तं प्रेरितवती, तेन तौ तं याचितौ, तौ च तद्भयाद्वैशाल्यां नगर्यां स्वकीयमातामहस्य चेटकाभिधानस्य राज्ञोऽन्तिकं सहस्तिकौ सान्तःपुरपरिवारौ गतवन्तौ, कूणिकेन च दूतप्रेषणतो मार्गितौ, न च तेन प्रेषितौ, ततः कूणिकेन भाणितं–यदि न प्रेषयसि भो ! तदा युद्धसज्जो भव, तेनापि भाणितम्–एष सज्जोऽस्मि, ततः कूणिकेन कालादयो दश स्वकीया भिन्नमातृका भ्रातरो राजानश्चेटकेन सह सङ्ग्रामायाहूताः, तत्रैकैकस्य त्रीणि २ हस्तिनां सहस्राणि, एवं रथानामश्वानां च, मनुष्याणां तु प्रत्येकं तिस्रः २ कोटयः, कूणिकस्याप्येवमेव, एनं च व्यतिकरं ज्ञात्वा

७ शतके उद्देशः ९ महाशिला-कण्टकः सू ३००

॥३१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाशीलाकंटकं संग्रामं

प्रत सूत्रांक [३००]

दीप अनुक्रम [३७२]

चेटकेनाप्यष्टादश गणराजा मिलिताः, तेषां चेटकस्य च प्रत्येकमेवमेव हस्त्यादिपरिमाणं, ततो युद्धं संप्रलग्नं, चेटकराजश्च प्रतिपन्नव्रतत्वेन दिनमध्ये एकमेव शरं मुञ्चति, अमोघबाणश्च सः, तत्र च कूणिकसैन्ये गरुडव्यूहः, [ग्रन्थाग्रं ७०००] चेटकसैन्ये च सागरव्यूहो विरचितः, ततश्च कूणिकस्य कालो दण्डनायको युद्ध्यमानस्तावद्गतो यावच्चेटकः, ततस्तेनैकशरनिपातेनासौ निपातितो, भग्नं च कूणिकबलं, गते च द्वे अपि बले निजं निजमावासस्थानम्, एवं च दशसु दिवसेषु चेटकेन विनाशिता दशापि कालादयः, एकादशे तु दिवसे चेटकजयार्थं देवताराधनाय कूणिकोऽष्टमभक्तं प्रजग्राह, ततः शक्रचमरावागतौ, ततः शक्रो बभाण–चेटकः श्रावक इत्यहं न तं प्रति प्रहरामि नवरं भवन्तं संरक्षामि, ततोऽसौ तद्रक्षार्थं वज्रप्रतिरूपकमभेद्यकवचं कृतवान्, चमरस्तु द्वौ सङ्गामौ विकुर्वितवान्–महाशिलाकण्टकं रथमुशलं चेति ॥ 'जइत्थ'त्ति जितवान् 'पराजइत्थ'त्ति पराजितवान् हारितवानित्यर्थः 'वज्जि'त्ति 'वज्री' इन्द्रः 'विदेहपुत्ते'त्ति कोणिकः, एतावेव तत्र जेतारौ नान्यः कश्चिदिति 'नव मल्लइ'त्ति मल्लकिनामानो राजविशेषाः 'नव लेच्छइ'त्ति लेच्छकिनामानो राजविशेषा एव 'कासीकोसलग'त्ति काशी–वाणारसी तज्जनपदोऽपि काशी तत्सम्बन्धिन आद्या नव कोशला–अयोध्या तज्जनपदोऽपि कोशला तत्सम्बन्धिनो नव द्वितीयाः, 'गणरायाणो'त्ति समुत्पन्ने प्रयोजने ये गणं कुर्वन्ति ते गणप्रधाना राजानो गणराजाः सामन्ता इत्यर्थः, ते च तदानीं चेटकराजस्य वैशालीनगरीनायकस्य साहाय्याय गणं कृतवन्त इति ॥ अथ महाशिलाकण्टके सङ्गामे चमरेण विकुर्विते सति कूणिको यदकरोत्तद्दर्शनार्थमिदमाह—'तए णं'इत्यादि, ततो' महाशिलाकण्टकसङ्गामविकुर्वणानन्तरमुदायिनामानं 'हत्थिरायं'ति हस्तिप्रधानं 'पडिकप्पेह'त्ति सन्नद्धं कुरुत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाशीलाकंटकं संग्रामं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३१७॥

'पच्चप्पिणह'त्ति प्रत्यर्पयत निवेदयतेत्यर्थः, 'हट्ठतुट्ठ' इह यावत्करणादेवं दृश्यम्–'हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया नंदिया पीइमणा'इत्यादि, तत्र हृष्टतुष्टं–अत्यर्थं तुष्टं हृष्टं वा–विस्मितं तुष्टं च–तोषवच्चित्तं–मनो यत्र तत्तथा तद् हृष्टतुष्टचित्तं यथा भवति इत्येवमानन्दिता–ईषन्मुखसौम्यतादिभावैः समृद्धिमुपगताः, ततश्च नन्दिताः–समृद्धितरतामुपगताः प्रीतिः–प्रीणनं–आप्यायनं मनसि येषां ते प्रीतिमनसः 'अंजलिं कट्टु'त्ति, इदं त्वेवं दृश्यम्–'करयलपरिग्गहियं दसणहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु' तत्र शिरसाऽप्राप्तं–असंस्पृष्टं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वेत्यर्थः 'एवं सामी ! तहत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेंति'त्ति एवं स्वामिन् ! तथेति आज्ञया इत्येवंविधशब्दभणनरूपो यो विनयः स तथा तेन वचनं राज्ञः सम्बन्धि 'प्रतिशृण्वन्ति' अभ्युपगच्छन्ति 'छेयायरिओवएसमइकप्पणाविगप्पेहिं'ति छेको–निपुणो य आचार्यः–शिल्पोपदेशदाता तस्योपदेशाद् या मतिः–बुद्धिस्तस्या ये कल्पनाविकल्पाः–कृतिभेदास्ते तथा तैः प्रतिकल्पयन्तीति योगः 'सुनिउणेहिं'ति कल्पनाविकल्पानां विशेषणं नरैर्वा सुनिपुणैः, 'एवं जहा उववाइए'त्ति तत्र चेदं सूत्रमेवम्–'उज्जलनेवत्थहत्थपरिवच्छियं' उज्ज्वलनेपथ्येन–निर्मलवेषेण 'हत्थं'ति शीघ्रं परिपक्षितः–परिगृहीतः परिवृतो यः स तथा तं, सुसज्जं 'चम्मियसन्नद्धबद्धकवइयउप्पीलियवच्छकच्छगेवेज्जगबद्धगलगवरभूसणविराइयं' चर्म्मणि नियुक्ताश्चार्म्मिकास्तैः सन्नद्धः–कृतसन्नाहश्चार्म्मिकसंनद्धः बद्धा कवचिका–सन्नाहविशेषो यस्य स बद्धकवचिकः उत्पीडिता–गाढीकृता वक्षसि कक्षा–हृदयरज्जुर्यस्य स तथा ग्रैवेयकं बद्धं गलके यस्य स तथा वरभूषणैर्विराजितो यः स तथा ततः कर्म्मधारयोऽतस्तम् 'अहियतेयजुत्तं विरइयवरकण्णपूरसललियपलंबावचूलचामरोयरकयंधयारं' विरचिते वरकर्णपूरे–प्रधानकर्णाभरण-

७ शतके उद्देशः ९ महाशिला-कण्टकः सू ३००

॥३१७॥

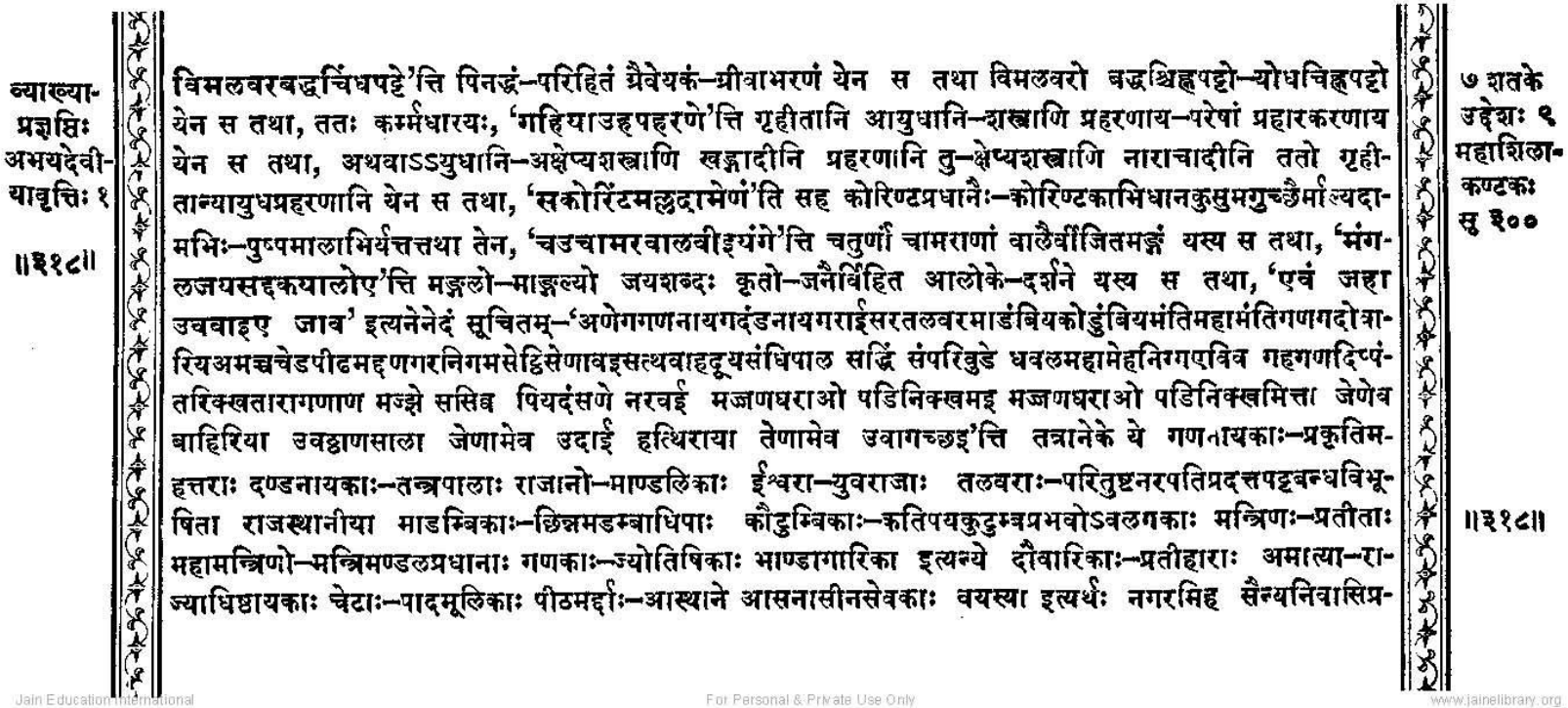
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	महाशीलाकंटकं संग्रामं

विशेषो यस्य स तथा सललितानि प्रलम्बानि अवचूलानि–यस्य स तथा चामरोत्करेण कृतमन्धकारं यत्र स तथा ततः कर्मधारयोऽतस्तं, 'चित्तपरिच्छोयपच्छयं' चित्तपरिच्छोको–लघुः प्रच्छदो–वस्त्रविशेषो यस्य स तथाऽतस्तं 'कणगघडियसुत्तगसुबद्धकच्छं' कनकघटितसूत्रकेण सुष्ठु बद्धा कक्षा–उरोबन्धनं यस्य स तथा तं 'बहुपहरणावरणाभरियजुज्झसज्जं' बहूनां प्रहरणाना(मस्यादीना)मावरणानां च–स्फुरककण्टकादीनां भृतो युद्धसज्जश्च यः स तथाऽतस्तं 'सछत्तं सज्झयं सघंटं' 'पंचामेलियपरिमंडियाभिरामं' पञ्चभिरापीडिकाभिः–चूडाभिः परिमण्डितोऽभिरामश्च–रम्यो यः स तथाऽतस्तम् 'ओसारियजमलजुयलघंटं' अवसारितं–अवलम्बितं यमलयुगलं–द्वयं घण्टयोर्यत्र स तथाऽतस्तं 'विज्जुपिणद्धं व कालमेहं' भास्वरप्रहरणाभरणादीनां विद्युत्कल्पना(त्वात्)कालत्वाच्च गजस्य मेघसमतेति 'उप्पाइयपव्वयं व सक्खं' औत्पातिकपर्वतमिव साक्षादित्यर्थः 'मत्तं मेहमिव गुलुगुलंतं' 'मणपवणजइणवेगं' मनःपवनजयी वेगो यस्य स तथाऽतस्तं, शेषं तु लिखितमेवास्ति, वाचनान्तरे त्विदं साक्षाल्लिखितमेव दृश्यत इति, 'कयबलिकम्मे'त्ति देवतानां कृतबलिकर्म्मा 'कयकोउयमंगलपायच्छित्ते'त्ति कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तानीव दुःस्वप्नादिव्यपोहायावश्यं कर्त्तव्यत्वात् प्रायश्चित्तानि येन स तथा, तत्र कौतुकानि–मषीपुण्ड्रादीनि मङ्गलानि–सिद्धार्थकादीनि 'सन्नद्धबद्धवम्मियकवए'त्ति सन्नद्धः संहननिकया तथा बद्धः कशाबन्धनतो वर्मितो वर्म्मतया कृतोऽङ्गे निवेशनात् कवचः–कङ्कटो येन स तथा, ततः कर्मधारयः, 'उप्पीलियसरासणपट्टिए'त्ति उत्पीडिता–गुणसारणेन कृतावपीडा शरासनपट्टिका–धनुर्दण्डो येन स तथा, उत्पीडिता वा–बाहौ बद्धा शरासनपट्टिका–बाहुपट्टिका येन स तथा, 'पिणद्धगेवेज्ज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	महाशीलाकंटकं संग्रामं



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १

॥३१८॥

विमलवरबद्धचिंधपट्टे'त्ति पिनद्धं–परिहितं ग्रैवेयकं–ग्रीवाभरणं येन स तथा विमलवरो बद्धश्चिह्नपट्टो–योधचिह्नपट्टो येन स तथा, ततः कर्म्मधारयः, 'गहियाउहपहरणे'त्ति गृहीतानि आयुधानि–शस्त्राणि प्रहरणाय–परेषां प्रहारकरणाय येन स तथा, अथवाऽऽयुधानि–अक्षेप्यशस्त्राणि खड्गादीनि प्रहरणानि तु–क्षेप्यशस्त्राणि नाराचादीनि ततो गृहीतान्यायुधप्रहरणानि येन स तथा, 'सकोरिंटमल्लदामेणं'ति सह कोरिण्टप्रधानैः–कोरिण्टकाभिधानकुसुमगुच्छैर्माल्यदामभिः–पुष्पमालाभिर्यत्तत्तथा तेन, 'चउचामरवालवीइयंगे'त्ति चतुर्णां चामराणां वालैर्वीजितमङ्गं यस्य स तथा, 'मंगलजयसद्दकयालोए'त्ति मङ्गलो–माङ्गल्यो जयशब्दः कृतो–जनैर्विहित आलोके–दर्शने यस्य स तथा, 'एवं जहा उववाइए जाव' इत्यनेनेदं सूचितम्–'अणेगगणनायगदंडनायगराईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियमंतिमहामंतिगणगदोवारियअमच्चचेडपीढमद्दणगरनिगमसेट्ठिसेणावइसत्थवाहदूयसंधिपाल सद्धिं संपरिवुडे धवलमहामेहनिग्गएविव गहगणदिप्पंतरिक्खतारागणाण मज्झे ससिव पियदंसणे नरवई मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ मज्जणघराओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणामेव उदाई हत्थिराया तेणामेव उवागच्छइ'त्ति तत्रानेके ये गणनायकाः–प्रकृतिमहत्तराः दण्डनायकाः–तन्त्रपालाः राजानो–माण्डलिकाः ईश्वरा–युवराजाः तलवराः–परितुष्टनरपतिप्रदत्तपट्टबन्धविभूषिता राजस्थानीया माडम्बिकाः–छिन्नमडम्बाधिपाः कौटुम्बिकाः–कतिपयकुटुम्बप्रभवोऽवलगकाः मन्त्रिणः–प्रतीताः महामन्त्रिणो–मन्त्रिमण्डलप्रधानाः गणकाः–ज्योतिषिकाः भाण्डागारिका इत्यन्ये दौवारिकाः–प्रतीहाराः अमात्या–राज्याधिष्ठायकाः चेटाः–पादमूलिकाः पीठमर्दाः–आस्थाने आसनासीनसेवकाः वयस्या इत्यर्थः नगरमिह सैन्यनिवासिप्र-

७ शतके उद्देशः ९ महाशिलाकण्टकः सू ३००

॥३१८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाशीलाकंटकं संग्रामं

कृतयः निगमाः–कारणिका वणिजो वा श्रेष्ठिनः–श्रीदेवताऽध्यासितसौवर्णपट्टविभूषितोत्तमाङ्गाः सेनापतयो–नृपतिनिरूपितचतुरङ्गसैन्यनायकाः सार्थवाहाः प्रतीताः दूता–अन्येषां राजादेशनिवेदकाः सन्धिपालाः–राज्यसन्धिरक्षकाः, एतेषां द्वन्द्वस्ततस्तैः, इह तृतीयाबहुवचनलोपो द्रष्टव्यः 'सद्धिं'ति सार्द्धं सहेत्यर्थः, न केवलं तत्सहिततत्वमेव अपि तु तैः समिति–समन्तात् परिवृतः–परिकरित इति, 'हारोत्थयसुकयरइयवच्छे' हारावस्तृतेन–हारावच्छादनेन सुष्ठु कृतरतिकं वक्षः–उरो यस्य स तथा,'जहा चेव उववाइए'त्ति तत्र चैवमिदं सूत्रम्—'पालंबपलंबमाणपडसुकयउत्तरिज्जे'इत्यादि तत्र प्रालम्बेन-दीर्घेण प्रलम्बमानेन–झुम्बमानेन पटेन सुष्ठु कृतमुत्तरीयं–उत्तरासङ्गो येन स तथा, 'महया भडचडगरवंदपरिक्खित्ते'त्ति महाभटानां विस्तारवत्समूहेन परिकरित इत्यर्थः 'ओयाए'त्ति 'उपयातः' उपागतः 'अभेज्जकवयं'ति परप्रहरणाभेद्यावरणं 'वइरपडिरूवगं'ति वज्रसदृशम् 'एगहत्थिणावि'त्ति एकेनापि गजेनेत्यर्थः 'पराजिणित्तए'त्ति परानभिभवितुमित्यर्थः । 'हयमहियपवरवीरघाइयविवडियचिंधद्धयपडागे'त्ति हताः–प्रहारदानतो मथिता–माननिर्मथनतः प्रवरवीराः–प्रधानभटा घातिताश्च येषां ते तथा, विपतिताश्चिह्नध्वजाः–चक्रादिचिह्नप्रधानध्वजाः पताकाश्च–तदन्या येषां ते तथा, ततः कर्म्मधारयोऽतस्तान्, 'किच्छपाणगए'त्ति कृच्छ्रगतप्राणान्–कष्टपतितप्राणानित्यर्थः 'दिसो दिसिं'ति दिशः सकाशादन्यस्यां दिशि अभिमतदिक्त्यागाद्दिगन्तराभिमुखेनेत्यर्थः, अथवा दिगेवापदिग् नाशनाभिप्रायेण यत्र प्रतिषेधने तद्दिगपदिक् तद्यथा भवत्येवं, 'पडिसेहित्थ'त्ति प्रतिषेधितवान् युद्धान्निवर्त्तितवानित्यर्थः ॥

णायमेयं अरहया सुयमेयं अरहया विन्नायमेयं अरहया रहमुसले संगामे, रहमुसले णं भंते ! संगामे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाशीलाकंटकं संग्रामं, रथमुशलं संग्रामं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३०१--३०४]

दीप अनुक्रम [३७३--३७६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३१९॥

वट्टमाणे के जइत्था के पराजइत्था ?, गोयमा ! वज्जी विदेहपुत्ते चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया जइत्था नव मल्लई नव लेच्छई पराजइत्था, तए णं से कूणिए राया रहमुसलं संगामं उवट्ठियं सेसं जहा महासिलाकंटए नवरं भूयाणंदे हत्थिराया जाव रहमुसलसंगामं ओयाए, पुरओ य से सक्के देविंदे देवराया, एवं तहेव जाव-चिट्ठंति, मग्गओ य से चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया एगं महं आयासं किढिणपडिरूवगं विउव्वित्ताणं चिट्ठइ, एवं खलु तओ इंदा संगामं संगामेंति, तंजहा–देविंदे य मणुइंदे य असुरिंदे य, एगहत्थिणावि णं पभू कूणिए राया जइत्तए तहेव जाव दिसो दिसिं पडिसेहित्था । से केणट्ठेणं भंते ! रहमुसले संगामे २ ?, गोयमा ! रहमुसले णं संगामे वट्टमाणे एगे रहे अणासए असारहिए अणारोहए समुसले महया जणक्खयं जणवहं जणप्पमद्दं जणसंवट्टकप्पं रुहिरकद्दमं करेमाणे सव्वओ समंता परिधावित्था से तेणट्ठेणं जाव रहमुसले संगामे । रहमुसले णं भंते ! संगामे वट्टमाणे कति जणसयसाहस्सीओ वहियाओ ?, गोयमा ! छन्नउतिं जणसयसाह-स्सीओ वहियाओ । ते णं भंते ! मणुया निस्सीला जाव उववन्ना ?, गोयमा ! तत्थ णं दस साहस्सीओ एगाए मच्छीए कुच्छिंसि उववन्नाओ, एगे देवलोगेसु उववन्ने, एगे सुकुले पच्चायाए, अवसेसा ओसन्नं नर-गतिरिक्खजोणिएसु उववन्ना । (सूत्रं ३०१) कम्हा णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया चमरे असुरिंदे असुरकु-मारराया कूणियस्स रन्नो साहेज्जं दलइत्था ?, गोयमा ! सक्के देविंदे देवराया पुव्वसंगतिए चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया परियायसंगतिए, एवं खलु गोयमा ! सक्के देविंदे देवराया चमरे य असुरिंदे असुरकुमारराया

७ शतके उद्देशः ९ ३०१ रथ-मुसल सं सू३०२इन्द्र सान्निध्यं

॥३१९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रथमुशलं संग्रामं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०१--३०४]

दीप अनुक्रम [३७३--३७६]

कूणियस्स रन्नो साहिज्जं दलइत्था ॥(सूत्रं३०२) बहुजणे णं भंते ! अन्नमन्नस्स एवमाइक्खंति जाव परूवेंति एवं खलु बहवे मणुस्सा अन्नयरेसु उच्चावएसु संगामेसु अभिमुहा चेव पहया समाणा कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! जण्णं से बहुजणो अन्नमन्नस्स एवं आइक्खति जाव उववत्तारो भवंति जे ते एवमाहंसु मिच्छं ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि–एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं वेसाली नामं नगरी होत्था, वण्णओ, तत्थ णं वेसालीए णगरीए वरुणे नामं णागनत्तुए परिवसइ अड्ढे जाव अपरिभूए समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे छट्ठं छट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तए णं से वरुणे णागनत्तुए अन्नया कयाइ रायाभिओगेणं गणाभिओगेणं बलाभियोगेणं रहमुसले संगामे आणत्ते समाणे छट्ठभत्तिए अट्ठमभत्तं अणुवट्टेति अट्ठमभत्तं अणुवट्टेत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ २ एवं वदासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठावेह हयगयरहपवर जाव सन्नाहेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं से कोडुंबियपुरिसा जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सच्छत्तं सज्झयं जाव उवट्ठावेंति हयगयरह जाव सन्नाहेंति २ जेणेव वरुणे नागनत्तुए जाव पच्चप्पिणंति, तए णं से वरुणे नागनत्तुए जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छति जहा कूणिओ जाव पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए सन्नद्धबद्धे सकोरेंटमल्लदामेणं जाव धरिज्जमाणेणं अणेगगणनायग जाव दूयसंधिपाल सद्धिं संपरिवुडे मज्जणघराओ पडिनिक्खमति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रथमुशलं संग्रामं

प्रत सूत्रांक [३०१--३०४]

दीप अनुक्रम [३७३--३७६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥९२०॥

पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ २ हयगयरह जाव संपरिवुडे महया भडचडगर० जाव परिक्खित्ते जेणेव रहमुसले संगामे तेणेव उवागच्छइ२त्ता रहमुसलं संगामं ओयाओ, तए णं से वरुणे णागणत्तुए रहमुसलं संगामं ओयाए समाणे अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ–कप्पति मे रहमुसलं संगामं संगामेमाणस्स जे पुव्विं पहणइ से पडिहणित्तए अवसेसे नो कप्पतीति, अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगेण्हइ अभिगेण्हइत्ता रहमुसलं संगामं संगामेति, तए णं तस्स वरुणस्स नागनत्तुयस्स रहमुसलं संगामं संगामेमाणस्स एगे पुरिसे सरिसए सरिसत्तए सरिसव्वए सरिसभंडमत्तोवगरणे रहेणं पडिरहं हव्वमागए, तए णं से पुरिसे वरुणं णागणत्तुयं एवं वयासी–पहण भो वरुणा ! णागणत्तुया ! प० २, तए णं से वरुणे णागणत्तुए तं पुरिसं एवं वदासी–नो खलु मे कप्पइ देवाणुप्पिया ! पुव्विं अहयस्स पहणित्तए, तुमं चेव णं पुव्वं पहणाहि, तए णं से पुरिसे वरुणे णागणत्तुएणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे धणुं परामुसइ २ उसुं परामुसइ उसुं परामुसित्ता ठाणं ठाति ठाणं ठिच्चा आययकन्नायतं उसुं करेइ आययकन्नायतं उसुं करेत्ता वरुणं णागणत्तुयं गाढप्पहारी करेइ, तए णं से वरुणे णागनत्तुए तेणं पुरिसेणं गाढप्पहारीकए समाणे आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे धणुं परामुसइ धणुं परामुसित्ता उसुं परामुसइ उसुं परामुसित्ता आययकन्नायतं उसुं करेइ आययकन्नायतं० २ तं पुरिसं एगाहच्चं कूडाहच्चं जीवियाओ ववरोवइ, तए णं से वरुणे णागणत्तुए तेणं पुरिसेणं गाढप्पहारी-

७ शतके उद्देशः ९ ३०३युद्ध-हतदेवत्व प्रघोषहेतु

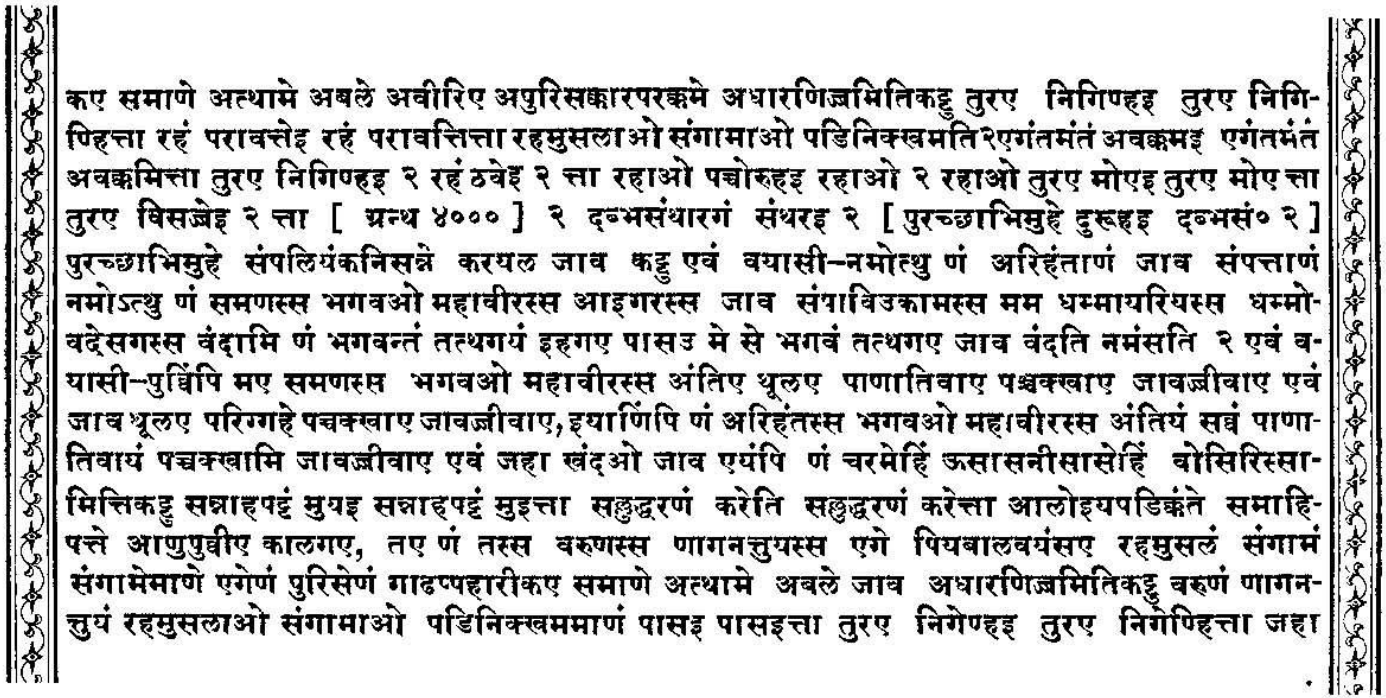
॥३२०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रथमुशलं संग्रामं

प्रत सूत्रांक [३०१--३०४]

दीप अनुक्रम [३७३--३७६]



कए समाणे अत्थामे अबले अवीरिए अपुरिसक्कारपरक्कमे अधारणिज्जमितिकट्टु तुरए निगिण्हइ तुरए निगिण्हित्ता रहं परावत्तेइ रहं परावत्तित्ता रहमुसलाओ संगामाओ पडिनिक्खमति २एगंतमंतं अवक्कमइ एगंतमंतं अवक्कमित्ता तुरए निगिण्हइ २ रहं ठवेइ २ त्ता रहाओ पच्चोरुहइ रहाओ २ रहाओ तुरए मोएइ तुरए मोएत्ता तुरए विसज्जेइ २ त्ता [ग्रन्थ ४०००] २ दब्भसंथारगं संथरइ २ [पुरच्छाभिमुहे दुरूहइ दब्भसं० २] पुरच्छाभिमुहे संपलियंकनिसन्ने करयल जाव कट्टु एवं वयासी–नमोत्थु णं अरिहंताणं जाव संपत्ताणं नमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स आइगरस्स जाव संपाविउकामस्स मम धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स वंदामि णं भगवन्तं तत्थगयं इहगए पासउ मे से भगवं तत्थगए जाव वंदति नमंसति २ एवं वयासी–पुव्विंपि मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए थूलए पाणातिवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए एवं जाव थूलए परिग्गहे पच्चक्खाए जावज्जीवाए, इयाणिंपि णं अरिहंतस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं सव्वं पाणातिवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए एवं जहा खंदओ जाव एयंपि णं चरमेहिं ऊसासनीसासेहिं वोसिरिस्सामित्तिकट्टु सन्नाहपट्टं मुयइ सन्नाहपट्टं मुइत्ता सल्लुद्धरणं करेति सल्लुद्धरणं करेत्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालगए, तए णं तस्स वरुणस्स णागनत्तुयस्स एगे पियबालवयंसए रहमुसलं संगामं संगामेमाणे एगेणं पुरिसेणं गाढप्पहारीकए समाणे अत्थामे अबले जाव अधारणिज्जमितिकट्टु वरुणं णागनत्तुयं रहमुसलाओ संगामाओ पडिनिक्खममाणं पासइ पासइत्ता तुरए निगेण्हइ तुरए निगेण्हित्ता जहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रथमुशलं संग्रामं, वरुण-नागपुत्रस्य एकावतारित्वं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०१-३०४]

दीप अनुक्रम [३७३-३७६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी या वृत्तिः १ ॥३२१॥

वरुणे जाव तुरए विसज्जेति पडिसंथारगं दुरूहइ पडिसंथारगं दुरूहित्ता पुरत्थाभिमुहे जाव अंजलिं कट्टु एवं वयासी–जाइं णं भंते ! मम पियबालवयस्सस्स वरुणस्स नागनत्तुयस्स सीलाइं वयाइं गुणाइं वेरमणाइं पच्चक्खाणपोसहोववासाइं ताइ णं ममंपि भवंतुत्तिकट्टु सन्नाहपट्टं मुयइ २ सल्लुद्धरणं करेति सल्लुद्धरणं करेत्ता आणुपुव्वीए कालगए, तए णं तं वरुणं णागणत्तुयं कालगयं जाणित्ता अहासन्निहिएहिं वाणमंतरेहिं देवेहिं दिव्वे सुरभिगंधोदगवासे वुट्ठे दसद्धवन्ने कुसुमे निवाडिए दिव्वे य गीयगंधव्वनिनादे कए यावि होत्था, तए णं तस्स वरुणस्स णागनत्तुयस्स तं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवज्जुतिं दिव्वं देवाणुभागं सुणित्ता य पासित्ता य बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेति–एवं खलु देवाणुप्पिया ! बहवे मणुस्सा जाव उववत्तारो भवंति ॥ (सूत्रं ३०३) वरुणे णं भंते ! नागनत्तुए कालमासे कालं किच्चा कहिं गए कहिं उववन्ने ?, गोयमा ! सोहम्मे कप्पे अरुणाभे विमाणे देवत्ताए उववन्ने, तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाणि ठिती पन्नत्ता, तत्थ णं वरुणस्सवि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिती पन्नत्ता। से णं भंते ! वरुणे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं करेहिति ! वरुणस्स णं भंते ! णागणत्तुयस्स पियबालवयंसए कालमासे कालं किच्चा कहिं गए? कहिं उववन्ने ?, गोयमा ! सुकुले पच्चायाते। से णं भंते! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छहिति कहिं उववज्जहिति?, गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं करेंति। सेवं भंते! सेवं भंते ! त्ति॥(सूत्रं३०४) सत्तमस्स णवमो उद्देसो॥७।९॥

७ शतके उद्देशः ९ ३०४वरुणस्येकावतारिता

॥३२१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वरुण-नागपुत्रस्य एकावतारित्वं

प्रत सूत्रांक [३०१--३०४]

दीप अनुक्रम [३७३--३७६]

'सारुद्ध'त्ति संरुष्टाः मनसा 'परिकुविय'त्ति शरीरे समन्तादृर्शितकोपविकाराः 'समरवहिय'त्ति सङ्ग्रामे हता 'रहमुसले'त्ति यत्र रथो मुशलेन युक्तः–परिधावन् महाजनक्षयं कृतवान् असौ रथमुशलः 'मग्गओ'त्ति पृष्ठतः 'आयसं'ति लोहमयं 'किढिणपडिरूवगं'ति किठिनं–वंशमयस्तापससम्बन्धी भाजनविशेषस्तत्प्रतिरूपकं–तदाकारं वस्तु 'अणासए'त्ति अश्वरहितः 'असारहिए'त्ति असारथिकः 'अणारोहए'त्ति 'अनारोहकः' योधवर्जितः 'महताजणक्खयं'ति महाजनविनाशं 'जणवहं'ति जनवधं जनव्यथां वा 'जणपमद्दं'ति लोकचूर्णनं 'जणसंवट्टकप्पं'ति जनसंवर्त्त इव–लोकसंहार इव जनसंवर्त्तकल्पोऽतस्तम् । 'एगे देवलोगेसु उववन्ने एगे सुकुलपच्चायाए'त्ति एतत्स्वभावत एव वक्ष्यति । 'पुव्वसंगइए'त्ति कार्त्तिकश्रेष्ठ्यवस्थायां शक्रस्य कूणिकजीवो मित्रमभवत् 'परियायसंगइए'त्ति पूरणतापसावस्थायां चमरस्यासौ तापसपर्यायवर्त्ती मित्रमासीदिति ॥ 'जन्नं से बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ' इत्यत्रैकवचनप्रक्रमे 'जे ते एवमाहंसु' इत्यत्र यो बहुवचननिर्देशः स व्यत्ययापेक्षोऽवसेयः 'अहिगयजीवाजीवे'इत्यत्र यावत्करणात् 'उवलद्धपुन्नपावा' इत्यादि दृश्यं 'पडिलाभेमाणे'त्ति, इदं च 'समणे निग्गंथे फासुएणं एसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थपडिग्गहकंबलरओहरणेणं पीढफलगसेज्जासंथारएणं पडिलाभेमाणे विहरइ' इत्येवं दृश्यं, 'चाउग्घंटं'ति घण्टाचतुष्टयोपेतम् 'आसरहं'ति अश्ववहनीयं रथं 'जुत्तामेव'त्ति युक्तमेव रथसामर्थ्येति गम्यं 'सज्जेह'मित्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं–'सघंटं सपडागं सतोरणवरं सणंदिघोसं सकिंकिणीहेमजालपेरंतपरिक्खित्तं' सकिङ्किणीकेन–क्षुद्रघण्टिकायुक्तेन हेमजालेन पर्यन्तेषु परिक्षिप्तो यः स तथा तं 'हेमवयचित्ततेणिसकणगनिउत्तदारुयागं' हैमवतानि–हिमवद्गि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वरुण-नागपुत्रस्य एकावतारित्वं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३२२॥

रिजातानि चित्राणि–विचित्राणि तैनिशानि–तिनिशाभिधानवृक्षसम्बन्धीनि स हिमवतीति तद्ग्रहणं कनकनियुक्तानि–नियुक्तकनकानि दारूणि यत्र स तथा तं **'संविद्धचक्कमंडलधुरागं'** सुष्ठु संविद्धे चक्रे यत्र मण्डला च–वृत्ता धूर्यत्र स तथा तं **'कालायससुकयनेमिजंतकम्मं'** कालायसेन–लोहविशेषेण सुष्ठु कृतं नेमेः–चक्रमण्डलमालाया यन्त्रकर्म–बन्धनक्रिया यत्र स तथा तम्, **'आइन्नवरतुरयसुसंपउत्तं'** जात्यप्रधानाश्वैः सुष्ठु संप्रयुक्तमित्यर्थः, **'कुसलनरच्छेयसारहिसुसंपग्गहियं'** कुशलनररूपो यश्छेकसारथिः–दक्षप्राजिता तेन सुष्ठु संप्रगृहीतो यः स तथा तं, **'सरसयबत्तीसयतोणपरिमंडियं'** शराणां शतं प्रत्येकं येषु ते शरशतास्तैर्द्वात्रिंशता तोणैः–शरधिभिः परिमण्डितो यः स तथा तं,**'सकंकडवडेंसगं'** सह कङ्कटैः–कवचैरवतंसैश्च–शेखरकैः शिरस्त्राणभूतैर्यः स तथा तं,**'सचावसरपहरणावरणभरियजोहजुद्धसज्जं'** सह चापशरैर्यानि प्रहरणानि–खड्गादीनि आवरणानि च–स्फुरकादीनि तेषां भृतोऽत एव योधानां युद्धसज्जश्च–युद्धप्रगुणो यः स तथा तं, **'चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव'**त्ति, वाचनान्तरे तु साक्षादेवेदं दृश्यत इति, **'अयमेयारूवं'**ति प्राकृतत्वादिदम् **'एतद्रूपं'** वक्ष्यमाणरूपं **'सरिसए'**त्ति सदृशकः–समानः **'सरिसत्तए'**त्ति सदृशत्वक् **'सरिसवए'**त्ति सदृग्वयाः **'सरिसभंडमत्तोवगरणे'**त्ति सदृशी भाण्डमात्रा–प्रहरणकोशादिरूपा उपकरणं च–कङ्कटादिकं यस्य स तथा, **'पडिरहं'**ति रथं प्रति **'आसुरुत्ते'**त्ति आशु–शीघ्रं रुसः–कोपोदयाद्विमूढः **'रूप लुप विमोहने'** इति वचनात्, स्फुरितकोपलिङ्गो वा, यावत्करणादिदं दृश्यं **'रुट्ठे कुविए चंडिक्किए'**त्ति तत्र **'रुष्टः'** उदितक्रोधः **'कुपितः'** प्रवृद्धकोपोदयः **'चाण्डिकितः'** सञ्जातचाण्डिक्यः प्रकटितरौद्ररूप इत्यर्थः **'मिसिमिसीमाणे'**त्ति क्रोधाग्निना दीप्यमान इव, एकार्थिका

७ शतके उद्देशः ९

॥३२२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	वरुण-नागपुत्रस्य एकावतारित्वं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०१--३०४]

दीप अनुक्रम [३७३--३७६]

वैते शब्दाः कोपप्रकर्षप्रतिपादनार्थमुक्ताः 'ठाणं'ति पादन्यासविशेषलक्षणं 'ठाति'त्ति करोति 'आययकण्णायतं'ति आयतः–आकृष्टः सामान्येन स एव कर्णायतः–आकर्णमाकृष्ट आयतकर्णायतस्तम्,'एगाहच्चं'ति एका हत्या–हननं प्रहारो यत्र जीवितव्यपरोपणे तदेकाहत्यं तद्यथा भवति, 'कूडाहच्चं'ति कूटे इव तथाविधपाषाणसंपुटादौ कालविलम्बाभावसाधर्म्यादाहत्या–आहननं यत्र तत् कूटाहत्यम् 'अत्थामे'त्ति'अस्थामा' सामान्यतः शक्तिविकलः 'अबले'त्ति शरीरशक्तिवर्जितः 'अवीरिए'त्ति मानसशक्तिवर्जितः 'अपुरिसक्कारपरक्कमे'त्ति व्यक्तं नवरं पुरुषक्रिया पुरुषकारः–पुरुषाभिमानः स एव निष्पादितस्वप्रयोजनः पराक्रमः 'अधारणिज्जं'ति आत्मनो धरणं कर्त्तुमशक्यम् 'इतिकट्टु'त्ति इतिकृत्वा इतिहेतोरित्यर्थः 'तुरए णिगिण्हइ'त्ति अश्वान् गच्छतो निरुणद्धीत्यर्थः 'एगंतमंतं'ति 'एकान्तं' विजनम् 'अन्तं' भूमिभागं 'सीलाइं'ति फलानपेक्षाः प्रवृत्तयः ताश्च प्रक्रमाच्छुभाः 'वयाइं'ति अहिंसादीनि 'गुणाइं'ति गुणव्रतानि 'वेरमणाइं'ति सामान्येन रागादिविरतयः 'पच्चक्खाणपोसहोववासाइं'ति प्रत्याख्यानं–पौरुष्यादिविषयं पौषधोपवासः–पर्वदिनोपवासः 'गीयगंधव्वनिनाए'त्ति गीतं गानमात्रं गन्धर्वं–तदेव मुरजादिध्वनिसनाथं तल्लक्षणो निनादः–शब्दो गीतगन्धर्वनिनादः ॥ 'कालमासे'त्ति मरणमासे मासस्योपलक्षणत्वात् कालदिवसे इत्याद्यपि द्रष्टव्यं 'कहिं गए कहिं उववन्ने'त्ति प्रश्नद्वये 'सोहम्मे'त्याद्येकमेवोत्तरं गमनपूर्वकत्वादुत्पादस्योत्पादाभिधानेन गमनं सामर्थ्यादवगतमेवेत्यभिप्रायादिति । 'आउक्खएणं' आयुःकर्मदलिकनिर्जरणेन 'भवक्खएणं'ति देवभवनिबन्धनदेवगत्यादिकर्मनिर्जरणेन 'ठिइक्खएणं'ति आयुष्कादिकर्म्मणां स्थितिनिर्जरणेनेति ॥ सप्तमशते नवमोद्देशकः सम्पूर्णः ॥ ७–९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तम-शतके नवम-उद्देशकः समाप्तः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३०५]

दीप अनुक्रम [३७७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३२३॥

अनन्तरोद्देशके परमतनिरास उक्तो दशमेऽपि स एवोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदं सूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नगरे होत्था वन्नओ, गुणसिलए चेइए वन्नओ, जाव पुढविसिलापट्टए वण्णओ, तस्स णं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदूरसामंते बहवे अन्नउत्थिया परिवसंति, तंजहा–कालोदाई सेलोदाई सेवालोदाई उदए नामुदए तम्मुदए अन्नवालए सेलवालए संखवालए सुहत्थी गाहावई, तए णं तेसिं अन्नउत्थियाणं अन्नया कयाइं एगयओ समुवागयाणं सन्निविट्ठाणं सन्निसन्नाणं अयमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था–एवं खलु समणे नायपुत्ते पंच अत्थिकाए पन्नवेति, तंजहा–धम्मत्थिकायं जाव आगासत्थिकायं, तत्थ णं समणे नायपुत्ते चत्तारि अत्थिकाए अजीवकाए पन्नवेति, तंजहा–धम्मत्थिकायं अधम्मत्थिकायं आगासत्थिकायं पोग्गलत्थिकायं, एगं च समणे णायपुत्ते जीवत्थिकायं अरूविकायं जीवकायं पन्नवेति, तत्थ णं समणे णायपुत्ते चत्तारि अत्थिकाए अरूविकाए पन्नवेति, तंजहा–धम्मत्थिकायं अधम्मत्थिकायं आगासत्थिकायं जीवत्थिकायं, एगं च णं समणे णायपुत्ते पोग्गलत्थिकायं रूविकायं अजीवकायं पन्नवेति, से कहमेयं मन्ने एवं?, तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव गुणसिलए चेइए समोसढे जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणंसमएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूईणामं अणगारे गोयमगोत्तेणं एवं जहा बितियसए नियंठुद्देसए जाव भिक्खायरियाए अडमाणे अहापज्जत्तं भत्तपाणं पडिग्गहित्ता रायगिहाओ जाव अतुरियमचवलमसंभंतं जाव रियं सोहेमाणे सोहेमाणे तेसिं अन्नउ-

७ शतके उद्देशः १० ३०५ कालोदायिप ति बोधः

॥३२३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

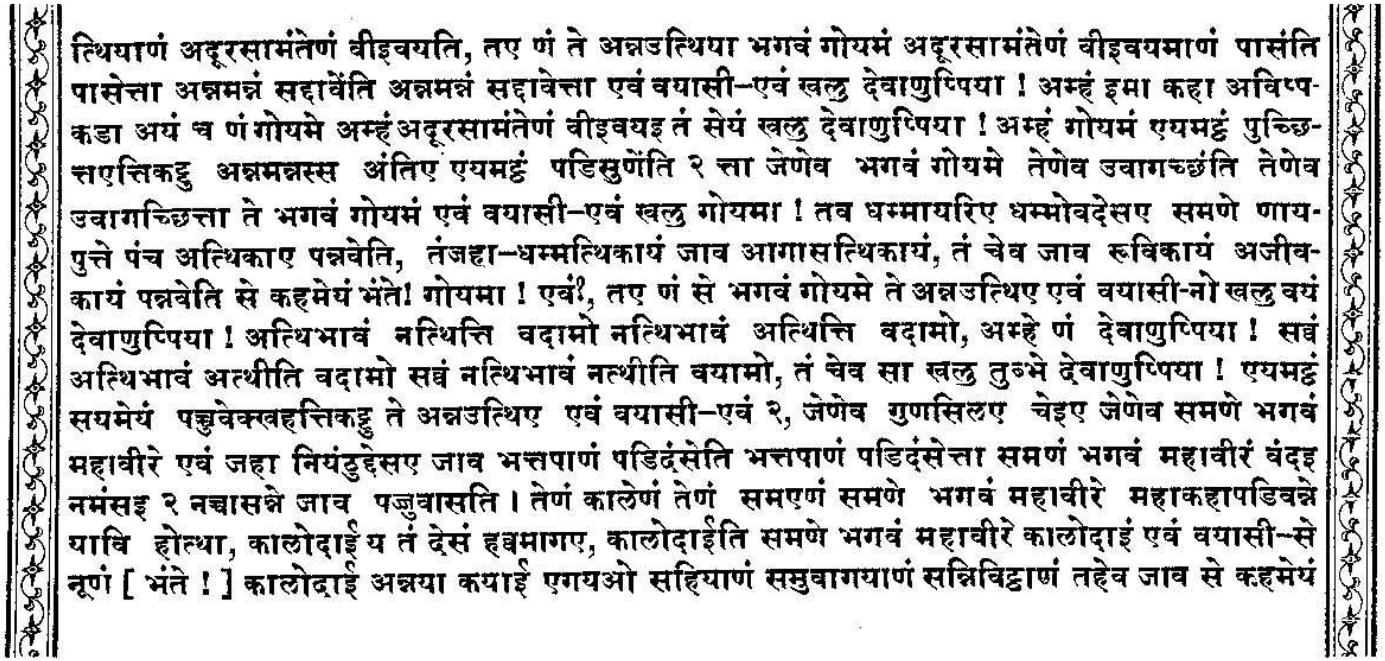
अथ सप्तम-शतके दशम-उद्देशक: आरम्भ:

कालोदायी-श्रमणस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०५]

दीप अनुक्रम [३७७]



त्थियाणं अदूरसामंतेणं वीइवयति, तए णं ते अन्नउत्थिया भगवं गोयमं अदूरसामंतेणं वीइवयमाणं पासंति पासेत्ता अन्नमन्नं सद्दावेंति अन्नमन्नं सद्दावेत्ता एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमा कहा अविप्पकडा अयं च णं गोयमे अम्हं अदूरसामंतेणं वीइवयइ तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं गोयमं एयमट्ठं पुच्छित्तएत्तिकट्टु अन्नमन्नस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति २ त्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता ते भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! तव धम्मायरिए धम्मोवदेसए समणे णायपुत्ते पंच अत्थिकाए पन्नवेति, तंजहा–धम्मत्थिकायं जाव आगासत्थिकायं, तं चेव जाव रूविकायं अजीवकायं पन्नवेति से कहमेयं भंते! गोयमा ! एवं?, तए णं से भगवं गोयमे ते अन्नउत्थिए एवं वयासी-नो खलु वयं देवाणुप्पिया ! अत्थिभावं नत्थित्ति वदामो नत्थिभावं अत्थित्ति वदामो, अम्हे णं देवाणुप्पिया ! सवं अत्थिभावं अत्थीति वदामो सवं नत्थिभावं नत्थीति वयामो, तं चेव सा खलु तुब्भे देवाणुप्पिया ! एयमट्ठं सयमेयं पच्चुवेक्खहत्तिकट्टु ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–एवं २, जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे एवं जहा नियंठुद्देसए जाव भत्तपाणं पडिदंसेति भत्तपाणं पडिदंसेत्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ २ नच्चासन्ने जाव पज्जुवासति । तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे महाकहापडिवन्ने यावि होत्था, कालोदाईय तं देसं हव्वमागए, कालोदाईति समणे भगवं महावीरे कालोदाइं एवं वयासी–से नूणं [भंते !] कालोदाई अन्नया कयाई एगयओ सहियाणं समुवागयाणं सन्निविट्ठाणं तहेव जाव से कहमेयं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कालोदायी-श्रमणस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०५]

दीप अनुक्रम [३७७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १

॥३२४॥

मन्ने एवं ?, से नूणं कालोदाई अत्थे समट्ठे ?, हंता अत्थि तं०, सचे णं एसमट्ठे कालोदाई अहं पंचत्थिकायं पन्नवेमि, तंजहा–धम्मत्थिकायं जाव पोग्गलत्थिकायं, तत्थ णं अहं चत्तारि अत्थिकाए अजीवत्थिकाए अजीवतया पन्नवेमि तहेव जाव एगं च णं अहं पोग्गलत्थिकायं रूविकायं पन्नवेमि, तए णं से कालोदाई समणं भगवं महावीरं एवं वदासी–एयंसि णं भंते ! धम्मत्थिकायंसि अधम्मत्थिकायंसि आगासत्थिकायंसि अरूविकायंसि अजीवकायंसि चक्किया केइ आसइत्तए वा १ सइत्तए वा २ चिट्ठइत्तए वा ३ निसीइत्तए वा ४ तुयट्टित्तए वा ५ ?, णो तिणट्ठे०, कालोदाई एगंसि णं पोग्गलत्थिकायंसि रूविकायंसि अजीवकायंसि चक्किया केइ आसइत्तए वा सइत्तए वा जाव तुयट्टित्तए वा, एयंसि णं भंते! पोग्गलत्थिकायंसि रूविकायंसि अजीवकायंसि जीवाणं पावा कम्मा पावकम्मफलविवागसंजुत्ता कज्जंति !, णो इणट्ठे समट्ठे कालोदाई !, एयंसि णं जीवत्थिकायंसि अरूविकायंसि जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जंति ?, हंता कज्जंति, एत्थ णं से कालोदाई संबुद्धे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतियं धम्मं निसामेत्तए एवं जहा खंदए तहेव पव्वइए तहेव एक्कारस अंगाइं जाव विहरइ (सूत्रं ३०५)

'तेण'मित्यादि, 'एगयओ समुवागयाणं'ति स्थानान्तरेभ्य एकत्र स्थाने समागतानामागत्य च 'सन्निविट्ठाणं'ति उपविष्टानाम्, उपवेशनं चोत्कुटुकत्वादिनाऽपि स्यादत आह–'सन्निसन्नाणं'ति संगततया निषण्णानां सुखासीनानामिति यावत् 'अत्थिकाए'त्ति प्रदेशराशीन् 'अजीवकाए'त्ति अजीवाश्च–ते अचेतनाः कायाश्च–राशयोऽजीवकायास्तान् 'जीव-

७ शतके उद्देशः १० ३०५ कालोदायिप्रतिबोधः

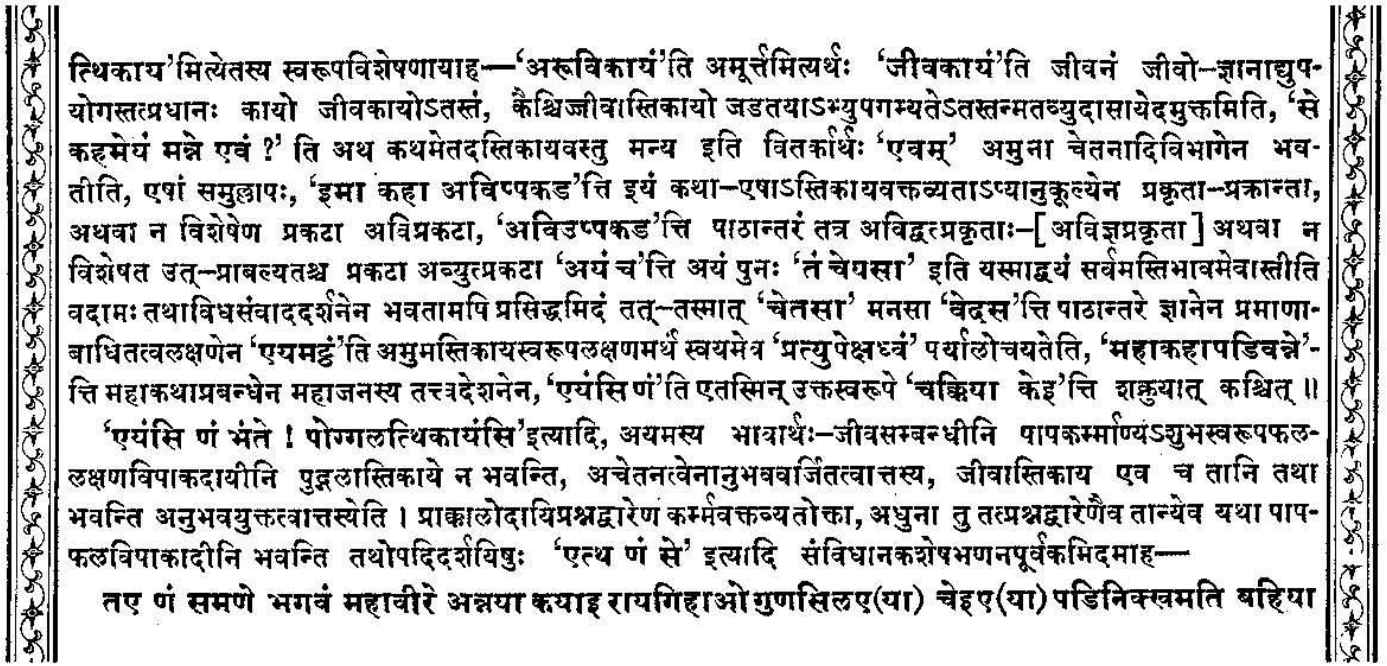
॥३२४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कालोदायी-श्रमणस्य कथा

प्रत सूत्रांक [३०५]

दीप अनुक्रम [३७७]



त्थिकाय'मित्येतस्य स्वरूपविशेषणायाह—'अरूविकायं'ति अमूर्त्तमित्यर्थः 'जीवकायं'ति जीवनं जीवो–ज्ञानाद्युपयोगस्तत्प्रधानः कायो जीवकायोऽतस्तं, कैश्चिज्जीवास्तिकायो जडतयाऽभ्युपगम्यतेऽतस्तन्मतव्युदासायेदमुक्तमिति, 'से कहमेयं मन्ने एवं ?' ति अथ कथमेतदस्तिकायवस्तु मन्य इति वितर्कार्थः 'एवम्' अमुना चेतनादिविभागेन भवतीति, एषां समुल्लापः, 'इमा कहा अविप्पकड'त्ति इयं कथा–एषाऽस्तिकायवक्तव्यताऽप्यानुकूल्येन प्रकृता–प्रक्रान्ता, अथवा न विशेषेण प्रकटा अविप्रकटा, 'अविउप्पकड'त्ति पाठान्तरं तत्र अविद्वत्प्रकृताः–[अविज्ञप्रकृता] अथवा न विशेषत उत्–प्राबल्यतश्च प्रकटा अव्युत्प्रकटा 'अयं च'त्ति अयं पुनः 'तं चेयसा' इति यस्माद्वयं सर्वमस्तिभावमेवास्तीति वदामः तथाविधसंवाददर्शनेन भवतामपि प्रसिद्धमिदं तत्–तस्मात् 'चेतसा' मनसा 'वेदस'त्ति पाठान्तरे ज्ञानेन प्रमाणाबाधितत्वलक्षणेन 'एयमट्ठं'ति अमुमस्तिकायस्वरूपलक्षणमर्थं स्वयमेव 'प्रत्युपेक्षध्वं' पर्यालोचयतेति, 'महाकहापडिबन्ने'त्ति महाकथाप्रबन्धेन महाजनस्य तत्त्वदेशनेन, 'एयंसि णं'ति एतस्मिन् उक्तस्वरूपे 'चक्किया केइ'त्ति शक्नुयात् कश्चित् ॥

'एयंसि णं भंते ! पोग्गलत्थिकायंसि'इत्यादि, अयमस्य भावार्थः–जीवसम्बन्धीनि पापकर्म्माण्यऽशुभस्वरूपफललक्षणविपाकदायीनि पुद्गलास्तिकाये न भवन्ति, अचेतनत्वेनानुभववर्जितत्वात्तस्य, जीवास्तिकाय एव च तानि तथा भवन्ति अनुभवयुक्तत्वात्तस्येति । प्राक्कालोदायिप्रश्नद्वारेण कर्म्मवक्तव्यतोक्ता, अधुना तु तत्प्रश्नद्वारेणैव तान्येव यथा पापफलविपाकादीनि भवन्ति तथोपदिदर्शयिषुः 'एत्थ णं से' इत्यादि संविधानकशेषभणनपूर्वकमिदमाह—

तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ रायगिहाओ गुणसिलए(या) चेइए(या) पडिनिक्खमति बहिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कालोदायी-श्रमणस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०६]

दीप अनुक्रम [३७८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३२५॥

जणवयविहारं विहरइ, तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नगरे गुणसिले णामं चेइए होत्था, तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ जाव समोसढे परिसा पडिगया, तए णं से कालोदाई अणगारे अन्नया कयाइ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी अत्थि णं भंते ! जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जंति ?, हंता अत्थि । कहण्णं भंते ! जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जंति ?, कालोदाई से जहानामए केइ पुरिसे मणुन्नं थालीपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाउलं विससंमिस्सं भोयणं भुंजेज्जा तस्स णं भोयणस्स आवाए भद्दए भवति तओ पच्छा परिणममाणे परि० दुरूवत्ताए दुगंधत्ताए जहा महासवए जाव भुज्जो २ परिणमति एवामेव कालोदाई जीवाणं पाणाइवाए जाव मिच्छादंसणसल्ले तस्स णं आवाए भद्दए भवइ तओ पच्छा विपरिणममाणे २ दुरूवत्ताए जाव भुज्जो २ परिणमति, एवं खलु कालोदाई जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवाग० जाव कज्जंति । अत्थि णं भंते ! जीवाणं कल्लाणा कम्मा कल्लाणफलविवागसंजुत्ता कज्जंति ?, हंता अत्थि, कहन्नं भंते ! जीवाणं कल्लाणा कम्मा जाव कज्जंति ?, कालोदाई ! से जहानामए केइ पुरिसे मणुन्नं थालीपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाकुलं ओसहमिस्सं भोयणं भुंजेज्जा, तस्स णं भोयणस्स आवाए नो भद्दए भवइ, तओ पच्छा परिणममाणे २ सुरूवत्ताए सुवन्नत्ताए जाव सुहत्ताए नो दुक्खत्ताए भुज्जो २ परिणमति, एवामेव कालोदाई ! जीवाणं पाणाइवायवेरमणे जाव परिग्गहवेरमणे कोहविवेगे जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगे तस्स णं आवाए

७ शतके उद्देशः १० पापकल्याणकर्मविपाकःकालोदायधिकारः

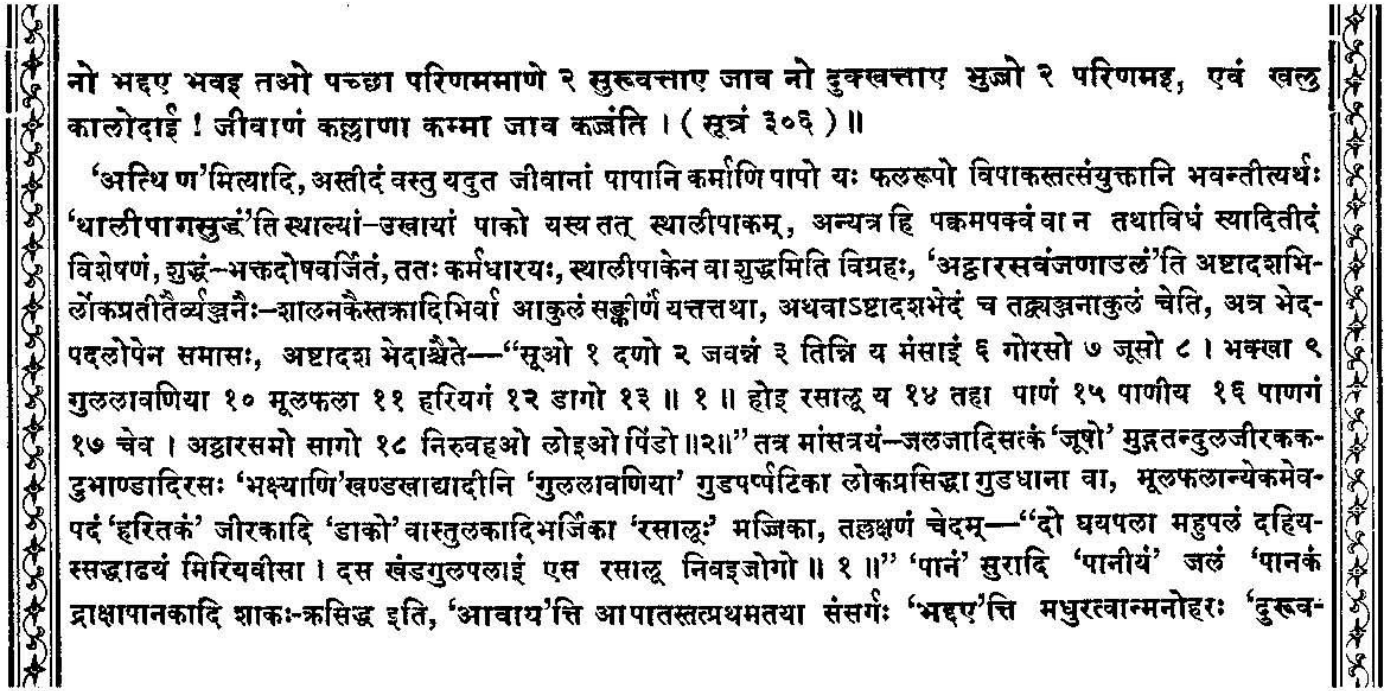
॥३२५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कालोदायी-श्रमणस्य कथा

प्रत सूत्रांक [३०६]

दीप अनुक्रम [३७८]



नो भद्दए भवइ तओ पच्छा परिणममाणे २ सुरूवत्ताए जाव नो दुक्खत्ताए भुज्जो २ परिणमइ, एवं खलु कालोदाई ! जीवाणं कल्लाणा कम्मा जाव कज्जंति । (सूत्रं ३०६) ॥

'अत्थि ण'मित्यादि, अस्तीदं वस्तु यदुत जीवानां पापानि कर्माणि पापो यः फलरूपो विपाकस्तत्संयुक्तानि भवन्तीत्यर्थः 'थालीपागसुद्धं'ति स्थाल्यां–उखायां पाको यस्य तत् स्थालीपाकम्, अन्यत्र हि पक्वमपक्वं वा न तथाविधं स्यादितीदं विशेषणं, शुद्धं–भक्तदोषवर्जितं, ततः कर्मधारयः, स्थालीपाकेन वा शुद्धमिति विग्रहः, 'अट्ठारसवंजणाउलं'ति अष्टादशभिर्लोकप्रतीतैर्व्यञ्जनैः–शालनकैस्तक्रादिभिर्वा आकुलं सङ्कीर्णं यत्तत्तथा, अथवाऽष्टादशभेदं च तद्व्यञ्जनाकुलं चेति, अत्र भेदपदलोपेन समासः, अष्टादश भेदाश्चैते—"सूओ १ दणो २ जवन्नं ३ तिन्नि य मंसाइं ६ गोरसो ७ जूसो ८ । भक्खा ९ गुललावणिया १० मूलफला ११ हरियगं १२ डागो १३ ॥ १ ॥ होइ रसालू य १४ तहा पाणं १५ पाणीय १६ पाणगं १७ चेव । अट्ठारसमो सागो १८ निरुवहओ लोइओ पिंडो ॥२॥" तत्र मांसत्रयं–जलजादिसत्कं 'जूषो' मुद्गतन्दुलजीरकककुभाण्डादिरसः 'भक्ष्याणि'खण्डखाद्यादीनि 'गुललावणिया' गुडपर्प्पटिका लोकप्रसिद्धा गुडधाना वा, मूलफलान्येकमेवपदं 'हरितकं' जीरकादि 'डाको' वास्तुलकादिभर्जिका 'रसालूः' मञ्जिका, तल्लक्षणं चेदम्—"दो घयपला महुपलं दहियस्सद्धाढयं मिरियवीसा । दस खंडगुलपलाइं एस रसालू निवइजोगो ॥ १ ॥" 'पानं' सुरादि 'पानीयं' जलं 'पानकं द्राक्षापानकादि शाकः-कसिद्ध इति, 'आवाय'त्ति आपातस्तत्प्रथमतया संसर्गः 'भद्दए'त्ति मधुरत्वान्मनोहरः 'दुरूव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कालोदायी-श्रमणस्य कथा

प्रत सूत्रांक [३०६]

दीप अनुक्रम [३७८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३२६॥

ष्ताए'त्ति दूरूपतया हेतुभूतया 'जहा महासवए'त्ति षष्ठशतस्य तृतीयोद्देशको महाश्रवकस्तत्र यथेदं सूत्रं तथेहाप्यध्येयम्, 'एवामेव'त्ति विषमिश्रभोजनवत्। 'जीवा णं भंते ! पाणाइवाए'इत्यादौ भवतीतिशेषः 'तस्स णं'ति तस्य प्राणातिपातादेः 'तओ पच्छा विपरिणममाणे'त्ति 'ततः पश्चात्' आपातानन्तरं 'विपरिणमत्' परिणामान्तराणि गच्छत् प्राणातिपातादि कार्ये कारणोपचारात् प्राणातिपातादिहेतुकं कर्म्मेति 'दुरूवत्ताए'त्ति दूरूपताहेतुतया परिणमति दूरूपतां करोतीत्यर्थः। 'ओसहमिस्सं'ति औषधं–महातिक्तकघृतादि 'एवामेव'त्ति औषधमिश्रभोजनवत् 'तस्स णं'ति प्राणातिपातविरमणादेः 'आवाए नो भद्दए भवति'त्ति इन्द्रियप्रतिकूलत्वात्, 'परिणममाणे'त्ति प्राणातिपातविरमणादिप्रभवं पुण्यकर्म्म परिणामान्तराणि गच्छत्॥ अनन्तरं कर्म्माणि फलतो निरूपितानि, अथ क्रियाविशेषमाश्रित्य तत्कर्तृपुरुषद्वयद्वारेण कर्मादीनामल्पबहुत्वे निरूपयति—

दो भंते ! पुरिसा सरिसया जाव सरिसभंडमत्तोवगरणा अन्नमन्नेणं सद्धिं अगणिकायं समारंभंति तत्थ णं एगे पुरिसे अगणिकायं उज्जालेति एगे पुरिसे अगणिकायं निव्वावेति, एएसि णं भंते ! दोण्हं पुरिसाणं कयरे २ पुरिसे महाकम्मतराए चेव महाकिरियतराए चेव महासवतराए चेव महावेयणतराए चेव कयरे वा पुरिसे अप्पकम्मतराए चेव जाव अप्पवेयणतराए चेव ?, जे से पुरिसे अगणिकायं उज्जालेइ जे वा से पुरिसे अगणिकायं निव्वावेति ?, कालोदाई ! तत्थ णं जे से पुरिसे अगणिकायं उज्जालेइ से णं पुरिसे महाकम्मतराए चेव जाव महावेयणतराए चेव, तत्थ णं जे से पुरिसे अगणिकायं निव्वावेइ से णं पुरिसे अप्पकम्म-

७ शतके उद्देशः १० ऊवालक विध्यापक योः कर्म सू ३०७

॥३२६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कालोदायी-श्रमणस्य कथा

प्रत सूत्रांक [३०७]

दीप अनुक्रम [३७९]

तराए चेव जाव अप्पवेयणतराए चेव । से केणट्ठेणं भंते! एवं वुचइ–तत्थ णं जे से पुरिसे जाव अप्पवेयणतराए चेव ?, कालोदाई ! तत्थ णं जे से पुरिसे अगणिकायं उज्जालेइ से णं पुरिसे बहुतरागं पुढविकायं समारंभति बहुतरागं आउक्कायं समारंभति अप्पतरायं तेऊकायं समारंभति बहुतरागं वाऊकायं समारंभति बहुतरायं वणस्सइकायं समारंभति बहुतरागं तसकायं समारंभति, तत्थ णं जे से पुरिसे अगणिकायं निव्वावेति से णं पुरिसे अप्पतरायं पुढविक्कायं समारंभइ अप्पतरागं आउक्कायं समारंभइ बहुतरागं तेउक्कायं समारंभति अप्पतरागं वाउक्कायं समारंभइ अप्पतरागं वणस्सइकायं समारंभइ अप्पतरागं तसकायं समारंभति से तेणट्ठेणं कालोदाई ! जाव अप्पवेयणतराए चेव ॥ (सूत्रं ३०७) ॥

'दो भंते !' इत्यादि, 'अगणिकायं समारंभंति'त्ति तेजःकायं समारभेते उपद्रवयतः, तत्रैक उज्ज्वालनेनान्यस्तु विध्यापनेन, तत्रोज्ज्वालने बहुतरतेजसामुत्पादेऽप्यल्पतराणां विनाशोऽप्यस्ति तथैव दर्शनात्, अत उक्तं 'तत्थ णं एगे' इत्यादि, 'महाकम्मतराए चेव'त्ति अतिशयेन महत्कर्म–ज्ञानावरणादिकं यस्य स तथा, चैवशब्दः समुच्चये, एवं 'महाकिरियतराए चेव'त्ति नवरं क्रिया–दाहरूपा 'महासवतराए चेव'त्ति बृहत्कर्मबन्धहेतुकः 'महावेयणतराए चेव'त्ति महती वेदना जीवानां यस्मात्स तथा ॥ अनन्तरमग्निरुक्तव्यतोक्ता, अग्निश्च सचेतनः सन्नवभासते, एवमचित्ता अपि पुद्गलाः किमवभासन्ते ? इति प्रश्नयन्नाह—

अत्थि णं भंते ! अचित्तावि पोग्गला ओभासंति उज्जोवेंति तवेंति पभासेंति ?, हंता अत्थि । कयरे णं

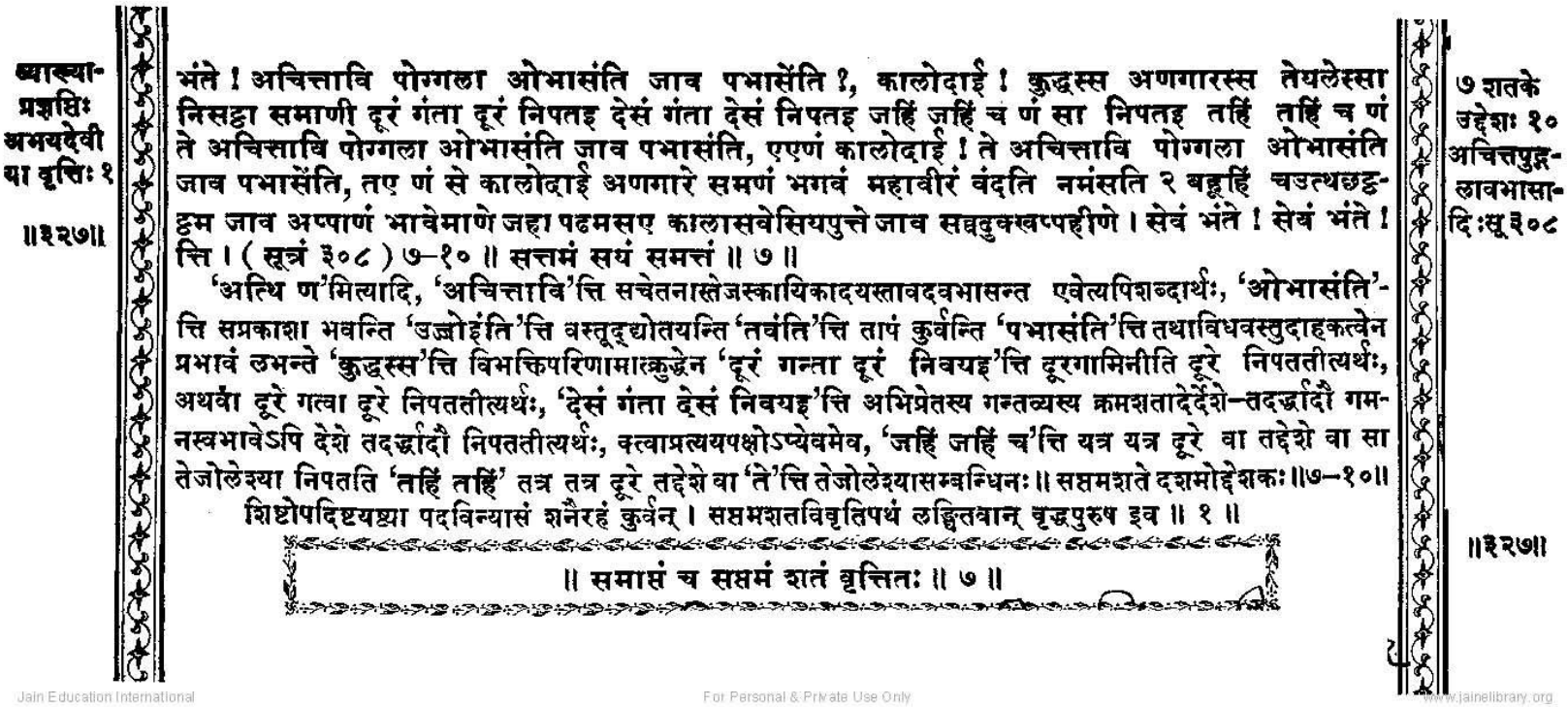
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कालोदायी-श्रमणस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०८]

दीप अनुक्रम [३८०]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी या वृत्तिः १

॥३२७॥

भंते ! अचित्तावि पोग्गला ओभासंति जाव पभासेंति ?, कालोदाई ! कुद्धस्स अणगारस्स तेयलेस्सा निसट्ठा समाणी दूरं गंता दूरं निपतइ देसं गंता देसं निपतइ जहिं जहिं च णं सा निपतइ तहिं तहिं च णं ते अचित्तावि पोग्गला ओभासंति जाव पभासंति, एएणं कालोदाई ! ते अचित्तावि पोग्गला ओभासंति जाव पभासेंति, तए णं से कालोदाई अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ बहूहिं चउत्थछट्ठ-ट्ठम जाव अप्पाणं भावेमाणे जहा पढमसए कालासवेसियपुत्ते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । (सूत्रं ३०८) ७–१० ॥ सत्तमं सयं समत्तं ॥ ७ ॥

'अत्थि ण'मित्यादि, 'अचित्तावि'त्ति सचेतनास्तेजस्कायिकादयस्तावदवभासन्त एवेत्यपिशब्दार्थः, 'ओभासंति'-त्ति सप्रकाशा भवन्ति 'उज्जोइंति'त्ति वस्तूद्द्योतयन्ति 'तवंति'त्ति तापं कुर्वन्ति 'पभासंति'त्ति तथाविधवस्तुदाहकत्वेन प्रभावं लभन्ते 'कुद्धस्स'त्ति विभक्तिपरिणामात्क्रुद्धेन 'दूरं गन्ता दूरं निवयइ'त्ति दूरगामिनीति दूरे निपततीत्यर्थः, अथवा दूरे गत्वा दूरे निपततीत्यर्थः, 'देसं गंता देसं निवयइ'त्ति अभिप्रेतस्य गन्तव्यस्य क्रमशतादेर्देशे–तदर्द्धादौ गम-नस्वभावेऽपि देशे तदर्द्धादौ निपततीत्यर्थः, क्त्वाप्रत्ययपक्षोऽप्येवमेव, 'जहिं जहिं च'त्ति यत्र यत्र दूरे वा तदेशे वा सा तेजोलेश्या निपतति 'तहिं तहिं' तत्र तत्र दूरे तदेशे वा 'ते'त्ति तेजोलेश्यासम्बन्धिनः ॥ सप्तमशते दशमोद्देशकः ॥७–१०॥

शिष्टोपदिष्टयष्ट्या पदविन्यासं शनैरहं कुर्वन् । सप्तमशतविवृतिपथं लङ्घितवान् वृद्धपुरुष इव ॥ १ ॥

॥ समाप्तं च सप्तमं शतं वृत्तितः ॥ ७ ॥

७ शतके उद्देशः १० अचित्तपुद्गलावभासादिः सू ३०८

॥३२७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तम-शतके दशम-उद्देशक: समाप्त: **कालोदायी-श्रमणस्य कथा**	तत् समाप्ते सप्तमं शतकं अपि समाप्तं

प्रत सूत्रांक [३०९] + गाथा

दीप अनुक्रम [३८१--३८२]

॥ अथ अष्टमशतकम् ॥

पूर्वं पुद्गलादयो भावाः प्ररूपिता इहापि त एव प्रकारान्तरेण प्ररूप्यन्त इत्येवं संबद्धमथाष्टमशतं विम्रियते, तस्य चोद्देशसङ्ग्रहार्थं 'पुग्गले'त्यादिगाथामाह—

पोग्गल १ आसीविस २ रुक्ख ३ किरिय ४ आजीव ५ फासुग ६ मदत्ते ७।
पडिणीय ८ बंध ९ आराहणा य १० दस अट्ठमंमि सए ॥ १ ॥

रायगिहे जाव एवं वयासी–कइविहा णं भंते ! पोग्गला पन्नत्ता ?, गोयमा तिविहा पोग्गला पन्नत्ता, तंजहा–पओगपरिणया मीससापरिणया वीससापरिणया। (सूत्रं ३०९) ॥

'पोग्गल'त्ति पुद्गलपरिणामार्थः प्रथम उद्देशकः पुद्गल एवोच्यते एवमन्यत्रापि १, 'आसीविस'त्ति आशीविषादिविषयो द्वितीयः २ 'रुक्ख'त्ति सङ्ख्यातजीवादिवृक्षविषयस्तृतीयः ३ 'किरिय'त्ति कायिक्यादिक्रियाभिधानार्थश्चतुर्थः ४ 'आजीव'त्ति आजीविकवक्तव्यतार्थः पञ्चमः ५ 'फासुग'त्ति प्रासुकदानादिविषयः षष्ठः ६ 'अदत्ते'त्ति अदत्तादानविचारणार्थः सप्तमः ७ 'पडिणीय'त्ति गुरुप्रत्यनीकाद्यर्थप्ररूपणार्थोऽष्टमः ८ 'बंध'त्ति प्रयोगबन्धाद्यभिधानार्थो नवमः ९ 'आराहण'त्ति देशाराधनाद्यर्थो दशमः १० ॥ 'पओगपरिणय'त्ति जीवव्यापारेण शरीरादितया परिणताः 'मीससापरिणय'त्ति मिश्रकपरिणताः–प्रयोगविस्रसाभ्यां परिणताः प्रयोगपरिणाममत्यजन्तो विस्रसया स्वभावान्तरमापादिता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ अष्टम-शतक आरम्भ:

अथ अष्टम-शतके प्रथम-उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३०९] + गाथा

दीप अनुक्रम [३८१--३८२]

मुक्तकडेवरादिरूपाः, अथवौदारिकादिवर्गणारूपा विस्रसया निष्पादिताः सन्तो ये जीवप्रयोगेणैकेन्द्रियादिशरीरप्रभृति-परिणामान्तरमापादितास्ते मिश्रपरिणताः, ननु प्रयोगपरिणामोऽप्येवंविध एव ततः क एषां विशेषः ?, सत्यं, किन्तु प्रयो-गपरिणतेषु विस्रसा सत्यपि न विवक्षिता इति । 'वीससापरिणय'त्ति स्वभावपरिणताः ॥ अथ 'पओगपरिणयाण'-मित्यादिना ग्रन्थेन नवभिर्दण्डकैः प्रयोगपरिणतपुद्गलान् निरूपयति, तत्र च—

पओगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा–एगिंदियपओ-गपरिणया बेइंदियपओगपरिणया जाव पंचिंदियपओगपरिणया । एगिंदियपओगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा, तंजहा–पुढविक्काइयएगिंदियपयोगपरिणया जाव वणस्सइकाइयए-गिंदियपयोगपरिणया । पुढविक्काइयएगिंदियपओगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–सुहुमपुढविक्काइयएगिंदियपओगपरिणया बादरपुढविक्काइयएगिंदियपयोगपरिणया, आउक्काइयएगिंदियपओगपरिणया एवं चेव, एवं दुपयओ भेदो जाव वणस्सइकाइया य । बेइंदियपयोगपरि-णया णं पुच्छा, गोयमा ! अणेगविहा पन्नत्ता, तंजहा–,एवं तेइंदियचउरिंदियपओगपरिणयावि । पंचिंदिय-पयोगपरिणयाणं पुच्छा, गोयमा ! चउविहा पन्नत्ता, तंजहा–नेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया तिरिक्ख०, एवं मणुस्स० देवपंचिंदिय०, नेरइयपंचिंदियपओग० पुच्छा, गोयमा ! सत्तविहा पन्नत्ता, तंजहा–रयणप्पभापु-ढविनेरइयपयोगपरिणयावि जाव अहेसत्तमपुढविनेरइयपंचिंदियपयोगपरिणयावि, तिरिक्खजोणियपंचिं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३१०]

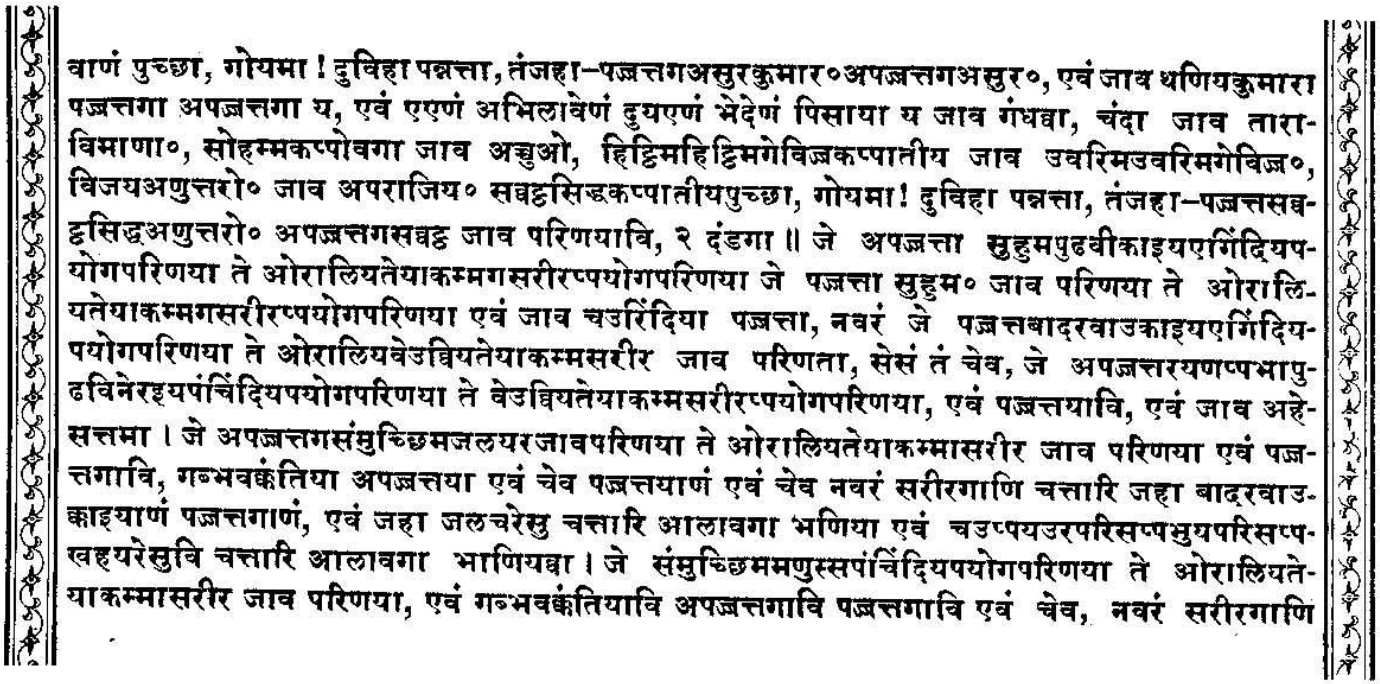
दीप अनुक्रम [३८३]

दियपओगपरिणया णं पुच्छा, गोयमा ! तिविहा पन्नत्ता, तंजहा–जलचरपंचिंदियतिरिक्खजोणिय० थलचरतिरिक्खजोणियपंचिंदिय० खहचरतिरिक्खपंचिंदिय०, जलयरतिरिक्खजोणियपओगपुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–संमुच्छिमजलयर० गब्भवक्कंतियजलयर०, थलयरतिरिक्ख० पुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–चउप्पयथलयर० परिसप्पथलयर०, चउप्पयथलयर० पुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–संमुच्छिमचउप्पयथलयर० गब्भवक्कंतियचउप्पयथलयर०, एवं एएणं अभिलावेणं परिसप्पा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–उरपरिसप्पा य भुयपरिसप्पा य, उरपरिसप्पा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–संमुच्छा य गब्भवक्कंतिया य, एवं भुयपरिसप्पावि, एवं खहयरावि । मणुस्सपंचिंदियपयोगपुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–संमुच्छिममणुस्स० गब्भवक्कंतियमणुस्स० । देवपंचिंदियपयोगपुच्छा, गोयमा ! चउविहा पन्नत्ता, तंजहा–भवणवासिदेवपंचिंदियपयोग० एवं जाव वेमाणिया । भवणवासिदेवपंचिंदियपुच्छा, गोयमा ! दसविहा पन्नत्ता, तंजहा–असुरकुमारा जाव थणियकुमारा, एवं एएणं अभिलावेणं अट्ठविहा वाणमंतरा पिसाया जाव गंधव्वा, जोइसिया पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा–चंदविमाणजोतिसिय जाव तारविमाणजोतिसियदेव०, वेमाणिया दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–कप्पोववन्न० कप्पातीतगवेमाणिय०, कप्पोवगा दुवालसविहा पण्णत्ता, तंजहा–सोहम्मकप्पोवग० जाव अच्चुयकप्पोवगवेमाणिया । कप्पातीत०, गो० ! दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–गेवेज्जकप्पातीतवे० अणुत्तरोववाइयकप्पातीतवे०, गेवेज्जकप्पातीतगा नवविहा पण्णत्ता, तंजहा–हेट्ठिम २

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गेवेज्जगकप्पातीतग० जाव उवरिम २ गेविज्जगकप्पातीय० । अणुत्तरोववाइयकप्पातीतगवेमाणियदेवपंचिंदिय-पयोगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा–विजयअणुत्तरोववाइय० जाव परिण० जाव सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयदेवपंचिंदिय जाव परिणया ॥ सुहुमपुढविकाइयएगिंदियपयोगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, [केई अपज्जत्तगं पढमं भणंति पच्छा पज्जत्तगं,] पज्जत्तगसुहुमपुढविकाइय जाव परिणया य अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइय जाव परिणया य, बादरपुढविकाइयएगिंदिय० जाव वणस्सइकाइया, एक्केक्का दुविहा पोग्गला–सुहुमा य बादरा य पज्जत्तगा अपज्जत्तगा य भाणियव्वा । बेंदियपयोगपरिणया णं पुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तबेंदियपयोगपरिणया य अपज्जत्तग जाव परिणया य, एवं तेइंदियावि एवं चउरिंदियावि । रयणप्पभापुढविनेरइय० पुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तगरयणप्पभापुढवि जाव परिणया य अपज्जत्तगजावपरिणया य, एवं जाव अहेसत्तमा । संमुच्छिमजलयरतिरिक्खपुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तग० अपज्जत्तग०, एवं गब्भवक्कंतियावि, संमुच्छिमचउप्पयथलयरा एवं चेव गब्भवक्कंतिया य, एवं जाव संमुच्छिमखहयरगब्भवक्कंतिया य एक्केक्के पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य भाणियव्वा । संमुच्छिममणुस्सपंचिंदियपुच्छा, गोयमा ! एगविहा पन्नत्ता, अपज्जत्तगा चेव । गब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदियपुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तगगब्भवक्कंतियावि अपज्जत्तगगब्भवक्कंतियावि । असुरकुमारभवणवासिदे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



वाणं पुच्छा, गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तगअसुरकुमार०अपज्जत्तगअसुर०, एवं जाव थणियकुमारा पज्जत्तगा अपज्जत्तगा य, एवं एएणं अभिलावेणं दुयएणं भेदेणं पिसाया य जाव गंधव्वा, चंदा जाव तारा-विमाणा०, सोहम्मकप्पोवगा जाव अच्चुओ, हिट्ठिमहिट्ठिमगेविज्जकप्पातीय जाव उवरिमउवरिमगेविज्ज०, विजयअणुत्तरो० जाव अपराजिय० सव्वट्ठसिद्धकप्पातीयपुच्छा, गोयमा! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–पज्जत्तसव्व-ट्ठसिद्धअणुत्तरो० अपज्जत्तगसव्वट्ठ जाव परिणयावि, २ दंडगा ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवीकाइयएगिंदियप-योगपरिणया ते ओरालियतेयाकम्मगसरीरप्पयोगपरिणया जे पज्जत्ता सुहुम० जाव परिणया ते ओरालि-यतेयाकम्मगसरीरप्पयोगपरिणया एवं जाव चउरिंदिया पज्जत्ता, नवरं जे पज्जत्तबादरवाउकाइयएगिंदिय-पयोगपरिणया ते ओरालियवेउव्वियतेयाकम्मसरीर जाव परिणता, सेसं तं चेव, जे अपज्जत्तरयणप्पभापु-ढविनेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया ते वेउव्वियतेयाकम्मसरीरप्पयोगपरिणया, एवं पज्जत्तयावि, एवं जाव अहे-सत्तमा । जे अपज्जत्तगसंमुच्छिमजलयरजावपरिणया ते ओरालियतेयाकम्मासरीर जाव परिणया एवं पज्ज-त्तगावि, गब्भवक्कंतिया अपज्जत्तया एवं चेव पज्जत्तयाणं एवं चेव नवरं सरीरगाणि चत्तारि जहा बादरवाउ-क्काइयाणं पज्जत्तगाणं, एवं जहा जलचरेसु चत्तारि आलावगा भणिया एवं चउप्पयउरपरिसप्पभुयपरिसप्प-खहयरेसुवि चत्तारि आलावगा भाणियव्वा । जे संमुच्छिममणुस्सपंचिंदियपयोगपरिणया ते ओरालियते-याकम्मासरीर जाव परिणया, एवं गब्भवक्कंतियावि अपज्जत्तगावि पज्जत्तगावि एवं चेव, नवरं सरीरगाणि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३१०]

दीप अनुक्रम [३८३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १ ॥३३०॥

पंच भाणियव्वाणि, जे अपज्जत्ता असुरकुमारभवणवासि जहा नेरइया तहेव एवं पज्जत्तगावि, एवं दुय-एणं भेदेणं जाव थणियकुमारा एवं पिसाया जाव गंधव्वा चंदा जाव ताराविमाणा, सोहम्मो कप्पो जाव अच्चुओ हेट्ठिम २ गेवेज्जजावउवरिम २ गेवेज्ज० विजयअणुत्तरोववाइए जाव सव्वट्ठसिद्धअणु० एक्केक्केणं दुयओ भेदो भाणियव्वो जाव जे पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइया जाव परिणया ते वेउव्वियतेयाकम्मासरीरपयो-गपरिणया, दंडगा ३ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदियपयोगपरिणता ते फासिंदियपयोगपरिणया जे पज्जत्ता सुहुमपुढविकाइया एवं चेव, जे अपज्जत्ता बादरपुढविक्काइया एवं चेव, एवं पज्जत्तगावि, एवं चउक्कएणं भेदेणं जाव वणस्सइकाइया, जे अपज्जत्ता बेइंदियपयोगपरिणया ते जिब्भिंदियफा-सिंदियपयोगपरिणया जे पज्जत्ता बेइंदिया एवं चेव, एवं जाव चउरिंदिया नवरं एक्केक्कं इंदियं वड्ढेयव्वं जाव अपज्जत्ता रयणप्पभापुढविनेरइया पंचिंदियपयोगपरिणया ते सोइंदियचक्खिंदियघाणिंदियजिब्भि-दियफासिंदियपयोगपरिणया एवं पज्जत्तगावि, एवं सव्वे भाणियव्वा, तिरिक्खजोणियमणुस्सदेवा जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव परिणया ते सोइंदियचक्खिंदिय जाव परिणया ४ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदियओरालियतेयकम्मासरीरप्पयोगपरिणया ते फासिंदिपयोगपरिणया जे पज्जत्ता सुहुम० एवं चेव बादर० अपज्जत्ता एवं चेव, एवं पज्जत्तगावि, एवं एएणं अभिलावेणं जस्स जइंदियाणि सरीराणि य ताणि भाणियव्वाणि जाव जे य पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदियवेउव्वियतेया-

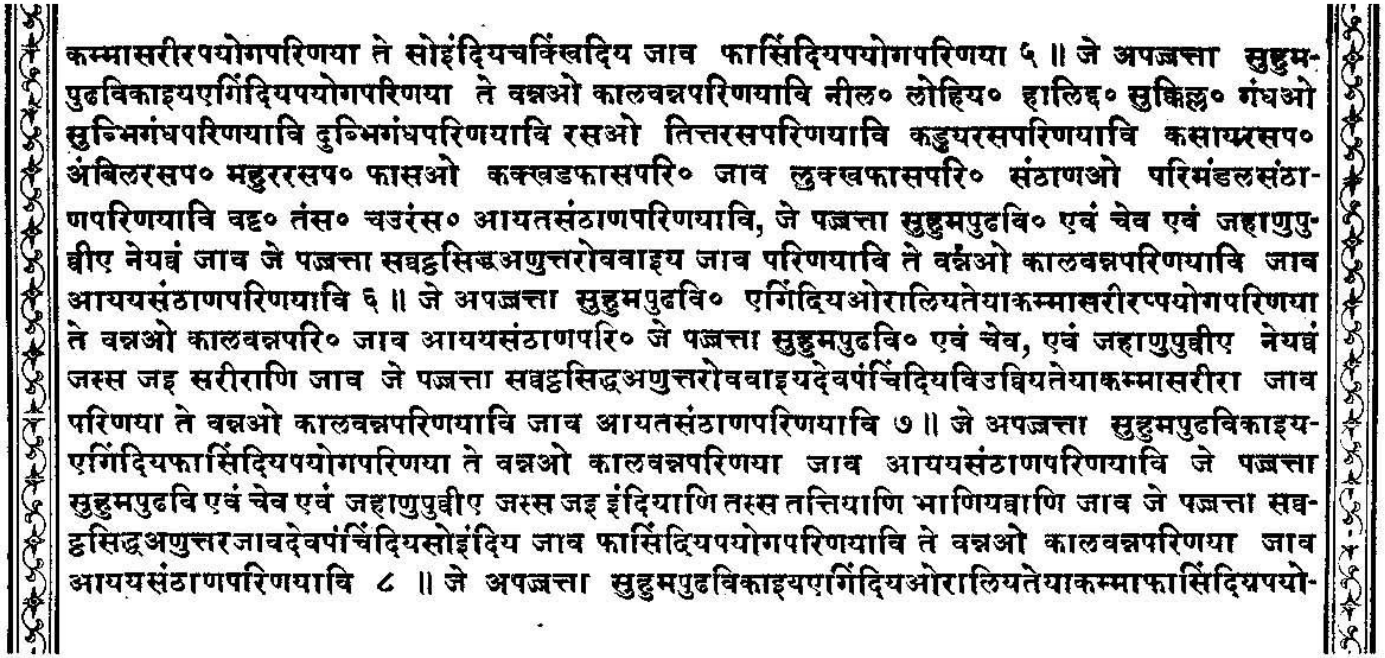
८ शतके उद्देशः १ प्रायोगिक परिणामः सू ३१०

॥३३०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

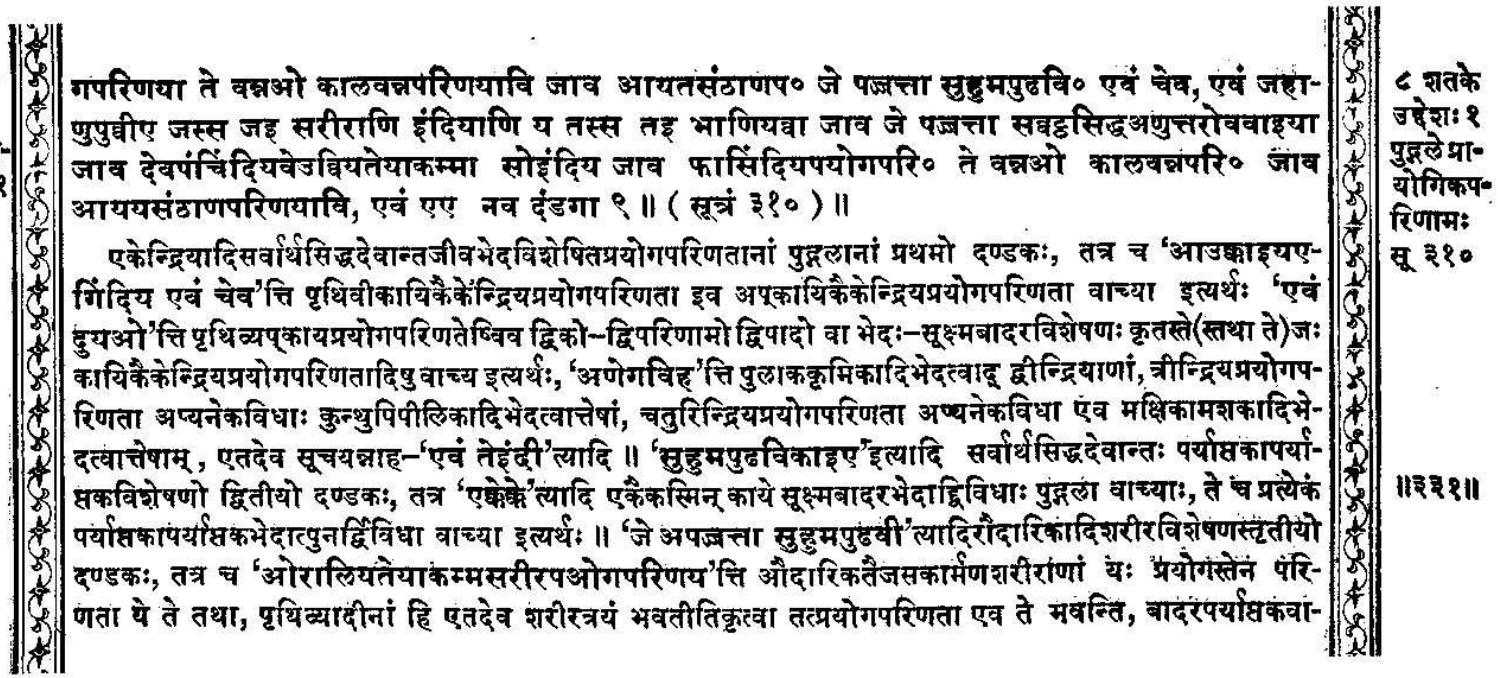
प्रत सूत्रांक [३१०]

दीप अनुक्रम [३८३]



कम्मासरीरपयोगपरिणया ते सोइंदियचक्खिदिय जाव फासिंदियपयोगपरिणया ५ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुम-पुढविकाइयएगिंदियपयोगपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि नील० लोहिय० हालिद्द० सुक्किल्ल० गंधओ सुब्भिगंधपरिणयावि दुब्भिगंधपरिणयावि रसओ तित्तरसपरिणयावि कडुयरसपरिणयावि कसायरसप० अंबिलरसप० महुररसप० फासओ कक्खडफासपरि० जाव लुक्खफासपरि० संठाणओ परिमंडलसंठा-णपरिणयावि वट्ट० तंस० चउरंस० आयतसंठाणपरिणयावि, जे पज्जत्ता सुहुमपुढवि० एवं चेव एवं जहाणुपु-वीए नेयवं जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव परिणयावि ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि जाव आययसंठाणपरिणयावि ६ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवि० एगिंदियओरालियतेयाकम्मासरीरप्पयोगपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरि० जाव आययसंठाणपरि० जे पज्जत्ता सुहुमपुढवि० एवं चेव, एवं जहाणुपुवीए नेयवं जस्स जइ सरीराणि जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयदेवपंचिंदियविउव्वियतेयाकम्मासरीरा जाव परिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि जाव आयतसंठाणपरिणयावि ७ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइय-एगिंदियफासिंदियपयोगपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणया जाव आययसंठाणपरिणयावि जे पज्जत्ता सुहुमपुढवि एवं चेव एवं जहाणुपुवीए जस्स जइ इंदियाणि तस्स तत्तियाणि भाणियव्वाणि जाव जे पज्जत्ता सव्व-ट्ठसिद्धअणुत्तरजावदेवपंचिंदियसोइंदिय जाव फासिंदियपयोगपरिणयावि ते वन्नओ कालवन्नपरिणया जाव आययसंठाणपरिणयावि ८ ॥ जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदियओरालियतेयाकम्माफासिंदियपयो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३३१॥

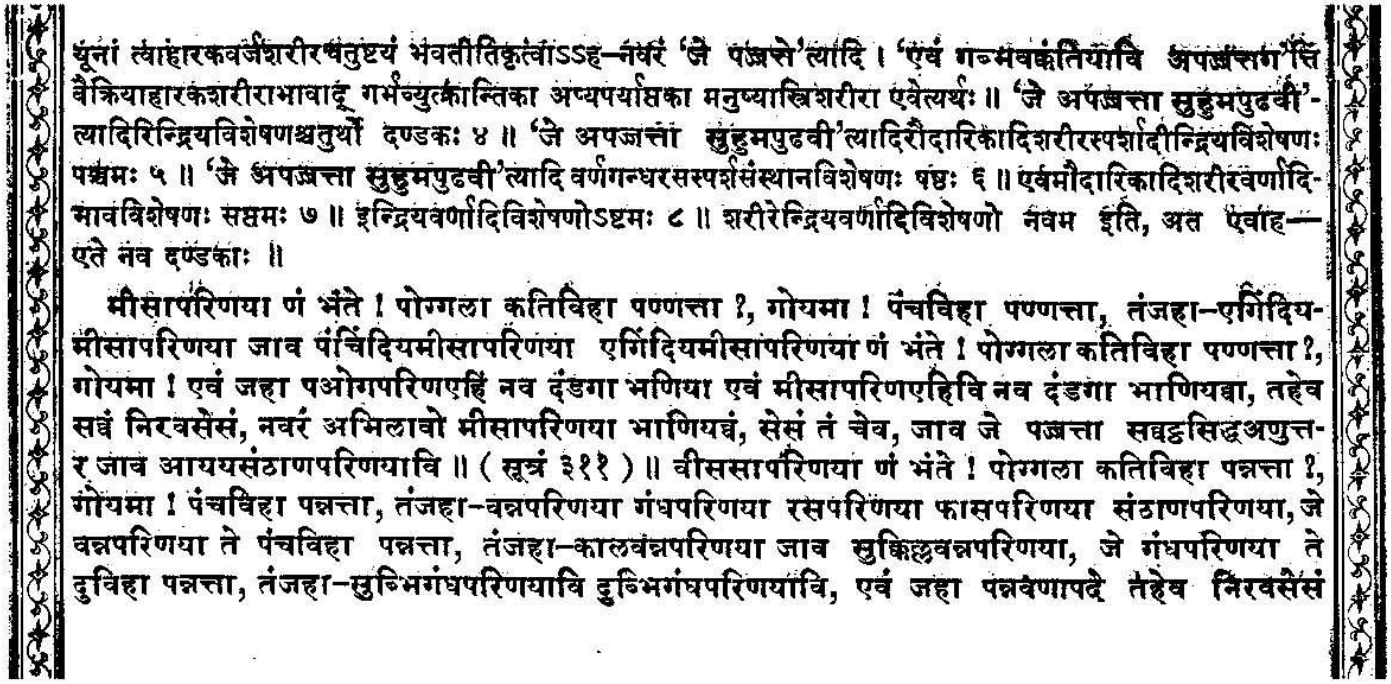
गपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि जाव आयतसंठाणप० जे पज्जत्ता सुहुमपुढवि० एवं चेव, एवं जहा-णुपुवीए जस्स जइ सरीराणि इंदियाणि य तस्स तइ भाणियव्वा जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइया जाव देवपंचिंदियवेउव्वियतेयाकम्मा सोइंदिय जाव फासिंदियपयोगपरि० ते वन्नओ कालवन्नपरि० जाव आययसंठाणपरिणयावि, एवं एए नव दंडगा ९ ॥ (सूत्रं ३१०) ॥

एकेन्द्रियादिसर्वार्थसिद्धदेवान्तजीवभेदविशेषितप्रयोगपरिणतानां पुद्गलानां प्रथमो दण्डकः, तत्र च 'आउक्काइयएगिंदिय एवं चेव'त्ति पृथिवीकायिकैकेन्द्रियप्रयोगपरिणता इव अप्कायिकैकेन्द्रियप्रयोगपरिणता वाच्या इत्यर्थः 'एवं दुयओ'त्ति पृथिव्यप्कायप्रयोगपरिणतेष्विव द्विको–द्विपरिणामो द्विपादो वा भेदः–सूक्ष्मबादरविशेषणः कृतस्ते(स्तथा ते)जः कायिकैकेन्द्रियप्रयोगपरिणतादिषु वाच्य इत्यर्थः, 'अणेगविह'त्ति पुलाककृमिकादिभेदत्वाद् द्वीन्द्रियाणां, त्रीन्द्रियप्रयोगपरिणता अप्यनेकविधाः कुन्थुपिपीलिकादिभेदत्वात्तेषां, चतुरिन्द्रियप्रयोगपरिणता अप्यनेकविधा एव मक्षिकामशकादिभेदत्वात्तेषाम्, एतदेव सूचयन्नाह–'एवं तेइंदी'त्यादि ॥ 'सुहुमपुढविकाइए'इत्यादि सर्वार्थसिद्धदेवान्तः पर्याप्तकापर्याप्तकविशेषणो द्वितीयो दण्डकः, तत्र 'एक्केके'त्यादि एकैकस्मिन् काये सूक्ष्मबादरभेदाद्विविधाः पुद्गला वाच्याः, ते च प्रत्येकं पर्याप्तकापर्याप्तकभेदात्पुनर्द्विविधा वाच्या इत्यर्थः ॥ 'जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवी'त्यादिरौदारिकादिशरीरविशेषणस्तृतीयो दण्डकः, तत्र च 'ओरालियतेयाकम्मसरीरपओगपरिणय'त्ति औदारिकतैजसकार्मणशरीराणां यः प्रयोगस्तेन परिणता ये ते तथा, पृथिव्यादीनां हि एतदेव शरीरत्रयं भवतीतिकृत्वा तत्प्रयोगपरिणता एव ते भवन्ति, बादरपर्याप्तकवा-

८ शतके उद्देशः १ पुद्गले प्रायोगिकपरिणामः सू ३१०

॥३३१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



यूनां त्वाहारकवर्जशरीरचतुष्टयं भवतीतिकृत्वाऽऽह–नवरं 'जे पज्जत्ते'त्यादि । 'एवं गब्भवक्कंतियावि अपज्जत्तग'त्ति वैक्रियाहारकशरीराभावाद् गर्भव्युत्क्रान्तिका अप्यपर्याप्तका मनुष्यास्त्रिशरीरा एवेत्यर्थः ॥ 'जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवी'-त्यादिरिन्द्रियविशेषणश्चतुर्थो दण्डकः ४ ॥ 'जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवी'त्यादिरौदारिकादिशरीरस्पर्शादीन्द्रियविशेषणः पञ्चमः ५ ॥ 'जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवी'त्यादि वर्णगन्धरसस्पर्शसंस्थानविशेषणः षष्ठः ६ ॥ एवमौदारिकादिशरीरवर्णादि-भावविशेषणः सप्तमः ७ ॥ इन्द्रियवर्णादिविशेषणोऽष्टमः ८ ॥ शरीरेन्द्रियवर्णादिविशेषणो नवम इति, अत एवाह— एते नव दण्डकाः ॥

मीसापरिणया णं भंते ! पोग्गला कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा–एगिंदिय-मीसापरिणया जाव पंचिंदियमीसापरिणया एगिंदियमीसापरिणया णं भंते ! पोग्गला कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! एवं जहा पओगपरिणएहिं नव दंडगा भणिया एवं मीसापरिणएहिवि नव दंडगा भाणियव्वा, तहेव सव्वं निरवसेसं, नवरं अभिलावो मीसापरिणया भाणियव्वं, सेसं तं चेव, जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्त-र जाव आययसंठाणपरिणयावि ॥ (सूत्रं ३११) ॥ वीससापरिणया णं भंते ! पोग्गला कतिविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा–वन्नपरिणया गंधपरिणया रसपरिणया फासपरिणया संठाणपरिणया, जे वन्नपरिणया ते पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा–कालवन्नपरिणया जाव सुक्किल्लवन्नपरिणया, जे गंधपरिणया ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–सुब्भिगंधपरिणयावि दुब्भिगंधपरिणयावि, एवं जहा पन्नवणापदे तहेव निरवसेसं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३१२॥

जाव जे संठाणओ आयतसंठाणपरिणया ते वन्नओ कालवन्नपरिणयावि जाव लुक्खफासपरिणयावि(सूत्रं३१२)॥

मिश्रपरिणतेष्वप्येत एव नव दण्डका इति ॥ अथ विश्रसापरिणतपुद्गलांश्चिन्तयति—'वीससापरिणया ण'मित्यादि, 'एवं जहा पन्नवणापए'त्ति तत्रैवमिदं सूत्रं–'जे रसपरिणया ते पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा—तित्तरसपरिणया एवं कडुय० कसाय० अंबिल० महुररसपरिणया, जे फासपरिणया ते अट्ठविहा प० तं०–कक्खडफासपरिणया एवं मउय० गरुय० लहुय० सीय० उसिण० निद्ध० लुक्खफासपरिणया य' इत्यादि ॥ अथैकं पुद्गलद्रव्यमाश्रित्य परिणामं चिन्तयन्नाह—

एगे भंते ! दव्वे किं पयोगपरिणए मीसापरिणए वीससापरिणए? , गोयमा ! पयोगपरिणए वा मीसापरिणए वा वीससापरिणए वा । जइ पयोगपरिणए किं मणप्पयोगपरिणए वइप्पयोगपरिणए कायप्पयोगपरिणए ?, गोयमा ! मणप्पयोगपरिणए वा वइप्पयोगपरिणए वा कायप्पओगपरिणए वा, जइ मणप्पओगपरिणए किं सच्चमणप्पओगपरिणए मोसमणप्पयोग० सच्चामोसमणप्पयो० असच्चामोसमणप्पयो० ?, गोयमा ! सच्चमणप्पयोगपरिणए० मोसमणप्पयोग० सच्चामोसमणप्प० असच्चामोसमणप्प०, जइ सच्चमणप्पओगप० किं आरंभसच्चमणप्पयो० अणारंभसच्चमणप्पयोगपरि० सारंभसच्चमणप्पयोग० असारंभसच्चमण० समारंभसच्चमणप्पयोगपरि० असमारंभसच्चमणप्पयोगपरिणए ?, गोयमा ! आरंभसच्चमणप्पओगपरिणए वा जाव असमारंभसच्चमणप्पयोगपरिणए वा, जइ मोसमणप्पयोगपरिणए किं आरंभमोसमणप्पयोगपरिणए वा ? एवं जहा सच्चेणं तहा मोसेणवि, एवं सच्चामोसमणप्पओगपरिणएवि, एवं असच्चामोसमणप्पयो-

८ शतके उद्देशः १ मिश्रविश्रसापरिणामौ सू३११-३१२एकद्रव्यपरिणामः सू३१३

॥३१२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३१३]

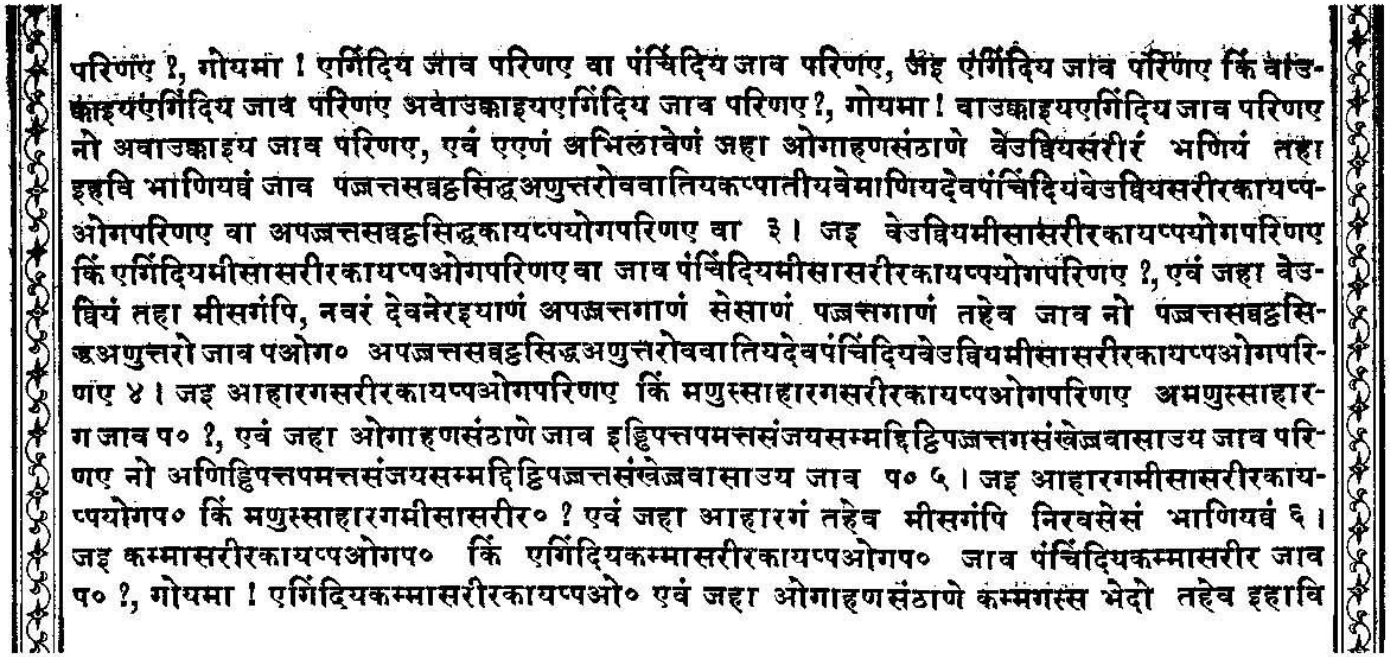
दीप अनुक्रम [३८६]

गेणवि । जइ वइप्पयोगपरिणए किं सच्चवइप्पयोगपरिणए मोसवयप्पयोगपरिणए ? एवं जहा मणप्पयोग-
परिणए तहा वयप्पयोगपरिणएवि जाव असमारंभवयप्पयोगपरिणए वा । जइ कायप्पयोगपरिणए किं
ओरालियसरीरकायप्पयोगपरिणए ओरालियमीसासरीरकायप्पयो० वेउव्वियसरीरकायप्प० वेउव्वियमीसा-
सरीरकायप्पयोगपरिणए आहारगसरीरकायप्पओगपरिणए आहारकमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए कम्मा-
सरीरकायप्पओगपरिणए ?, गोयमा ! ओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए वा जाव कम्मासरीरकायप्पओ-
गपरिणए वा, जइ ओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए किं एगिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए एवं
जाव पंचिंदियओरालिय जाव परि० ?, गोयमा ! एगिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए वा बेंदिय-
जाव परिणए वा पंचिंदिय जाव परिणए वा, जइ एगिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए किं पुढविक्का-
इयएगिंदिय जाव परिणए जाव वणस्सइकाइयएगिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए वा ?, गोयमा !
पुढविक्काइयएगिंदियपयोग जाव परिणए वा जाव वणस्सइकाइयएगिंदिय जाव परिणए वा, जइ पुढविका-
इयएगिंदियओरालियसरीर जाव परिणए किं सुहुमपुढविकाइय जाव परिणए बायरपुढविक्काइयएगिंदिय
जाव परिणए ?, गोयमा ! सुहुमपुढविक्काइयएगिंदिय जाव परिणए बायरपुढविक्काइय जाव परिणए, जइ
सुहुमपुढविकाइय जाव परिणए किं पज्जत्तसुहुमपुढवि जाव परिणए अपज्जत्तसुहुमपुढवी जाव परिणए ?,
गोयमा ! पज्जत्तसुहुमपुढविकाइय जाव परिणए वा अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइय जाव परिणए वा, एवं बाद-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रावि, एवं जाव वणस्सइकाइयाणं चउक्कओ भेदो, बेइंदियतेइंदियचउरिंदियाणं दुयओ भेदो पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य । जइ पंचिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए किं तिरिक्खजोणियपंचिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए मणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए ?, गोयमा ! तिरिक्खजोणिय जाव परिणए वा मणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए वा, जइ तिरिक्खजोणिय जाव परिणए किं जलचरतिरिक्खजोणिय जाव परिणए वा थलचरखहचर०, एवं चउक्कओ भेदो जाव खहचराणं । जइ मणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए किं संमुच्छिममणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए गब्भवक्कंतियमणुस्स जाव परिणए ?, गोयमा ! दोसुवि, जइ गब्भवक्कंतियमणुस्स जाव परिणए किं पज्जत्तगब्भवक्कंतिय जाव परिणए अपज्जत्तगब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरकायप्पयोगपरिणए ?, गोयमा ! पज्जत्तगब्भवक्कंतिय जाव परिणए वा अपज्जत्तगब्भवक्कंतिय जाव परिणए १ । जइ ओरालियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए किं एगिंदियओरालियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए बेइंदियजावपरिणए जाव पंचेंदियओरालिय जाव परिणए ?, गोयमा ! एगिंदियओरालिय एवं जहा ओरालियसरीरकायप्पयोगपरिणएणं आलावगो भणिओ तहा ओरालियमीसासरीरकायप्पओगपरिणएवि आलावगो भाणियवो, नवरं बायरवाउक्काइयगब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियगब्भवक्कंतियमणुस्साणं, एएसि णं पज्जत्तापज्जत्तगाणं सेसाणं अपज्जत्तगाणं २ । जइ वेउव्वियसरीरकायप्पयोगपरिणए किं एगिंदियवेउव्वियसरीरकायप्पओगपरिणए जाव पंचिंदियवेउव्वियसरीर जाव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



परिणए ?, गोयमा ! एगिंदिय जाव परिणए वा पंचिंदिय जाव परिणए, जइ एगिंदिय जाव परिणए किं वाउ-
क्काइयएगिंदिय जाव परिणए अवाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए ?, गोयमा ! वाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए
नो अवाउक्काइय जाव परिणए, एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओगाहणसंठाणे वेउव्वियसरीरं भणियं तहा
इहवि भाणियव्वं जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववातियकप्पातीयवेमाणियदेवपंचिंदियवेउव्वियसरीरकायप्प-
ओगपरिणए वा अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धकायप्पयोगपरिणए वा ३। जइ वेउव्वियमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए
किं एगिंदियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए वा जाव पंचिंदियमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए ?, एवं जहा वेउ-
व्वियं तहा मीसगंपि, नवरं देवनेरइयाणं अपज्जत्तगाणं सेसाणं पज्जत्तगाणं तहेव जाव नो पज्जत्तसव्वट्ठसि-
द्धअणुत्तरो जाव पओग० अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववातियदेवपंचिंदियवेउव्वियमीसासरीरकायप्पओगपरि-
णए ४। जइ आहारगसरीरकायप्पओगपरिणए किं मणुस्साहारगसरीरकायप्पओगपरिणए अमणुस्साहार-
ग जाव प० ?, एवं जहा ओगाहणसंठाणे जाव इड्ढिपत्तपमत्तसंजयसम्मद्दिट्ठिपज्जत्तगसंखेज्जवासाउय जाव परि-
णए नो अणिड्ढिपत्तपमत्तसंजयसम्मद्दिट्ठिपज्जत्तसंखेज्जवासाउय जाव प० ५। जइ आहारगमीसासरीरकाय-
प्पयोगप० किं मणुस्साहारगमीसासरीर० ? एवं जहा आहारगं तहेव मीसगंपि निरवसेसं भाणियव्वं ६।
जइ कम्मासरीरकायप्पओगप० किं एगिंदियकम्मासरीरकायप्पओगप० जाव पंचिंदियकम्मासरीर जाव
प० ?, गोयमा ! एगिंदियकम्मासरीरकायप्पओ० एवं जहा ओगाहणसंठाणे कम्मगस्स भेदो तहेव इहावि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदियकम्मासरीरकायप्पयोगपरिणए अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध-अणु० जाव परिणए वा ७ ॥ जइ मीसापरिणए किं मणमीसापरिणए वयमीसापरिणए कायमीसापरिणए ?, गोयमा ! मणमीसापरिणए वयमीसा० कायमीसापरिणए वा, जइ मणमीसापरिणए किं सच्चमणमीसा-परिणए वा मोसमणमीसापरिणए वा जहा पओगपरिणए तहा मीसापरिणएवि भाणियव्वं निरवसेसं जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदियकम्मासरीरगमीसापरिणए वा अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणु०जाव कम्मासरीरमीसापरिणए वा । जइ वीससापरिणए किं वन्नपरिणए गंधपरिणए रसपरिणए फासपरिणए संठाणपरिणए ?, गोयमा ! वन्नपरिणए वा गंधपरिणए वा रसपरिणए वा फासपरिणए वा संठाणपरिणए वा, जइ वन्नपरिणए किं कालवन्नपरिणए नील जाव सुक्किल्लवन्नपरिणए?, गोयमा! कालवन्नपरिणए जाव सुक्किल्लव-न्नपरिणए, जइ गंधपरिणए किं सुब्भिगंधपरिणए दुब्भिगंधपरिणए ?, गोयमा ! सुब्भिगंधपरिणए दुब्भिगं-धपरिणए, जइ रसपरिणए किं तित्तरसपरिणए ? ५, पुच्छा, गोयमा ! तित्तरसपरिणए जाव महुररसप-रिणए, जइ फासपरिणए किं कक्खडफासपरिणए जाव लुक्खफासपरिणए ?, गोयमा ! कक्खडफासपरिणए जाव लुक्खफासपरिणए, जइ संठाणपरिणए पुच्छा, गोयमा ! परिमंडलसंठाणपरिणए वा जाव आययसं-ठाणपरिणए वा ॥ (सूत्रं ३१३) ॥

'एगे'इत्यादि, 'मणपओगपरिणए'त्ति मनस्तया परिणतमित्यर्थः 'वइप्पयोगपरिणए'त्ति भाषाद्रव्यं काययोगेन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गृहीत्वा वाग्योगेन निसृज्यमानं वाक्प्रयोगपरिणतमित्युच्यते 'कायप्पओगपरिणए'त्ति औदारिकादिकाययोगेन गृहीतमौदारिकादिवर्गणाद्रव्यमौदारिकादिकायतया परिणतं कायप्रयोगपरिणतमित्युच्यते, 'सच्चमणे'त्यादि सद्भूतार्थचिन्तननिबन्धनस्य मनसः प्रयोगः सत्यमनःप्रयोग उच्यते, एवमन्येऽपि, नवरं मृषा–असद्भूतोऽर्थः सत्यमृषा–मिश्रो यथा पञ्चसु दारकेषु जातेषु दश दारका जाता इति, असत्यमृषा–सत्यमृषास्वरूपमतिक्रान्तो यथा देहीत्यादि, 'आरंभसच्चे'त्यादि, आरम्भो–जीवोपघातस्तद्विषयं सत्यमारम्भसत्यं तद्विषयो यो मनःप्रयोगस्तेन परिणतं यत्तत्तथा, एवमुत्तरत्रापि नवरमनारम्भो–जीवानुपघातः 'सारंभ'त्ति संरम्भो–वधसङ्कल्पः समारम्भस्तु परिताप इति। 'ओरालिए'त्यादि, औदारिकशरीरमेव पुद्गलस्कन्धरूपत्वेनोपचीयमानत्वाद् काय औदारिकशरीरकायस्तस्य यः प्रयोगः औदारिकशरीरस्य वा यः कायप्रयोगः स तथा, अयं च पर्याप्तकस्यैव वेदितव्यस्तेन यत् परिणतं तत्तथा, 'ओरालियमिस्सासरीरकायप्पयोगपरिणय'त्ति औदारिकमुत्पत्तिकालेऽसम्पूर्णं सत् मिश्रं कार्म्मणेनेति औदारिकमिश्रं तदेवौदारिकमिश्रकं तल्लक्षणं शरीरमौदारिकमिश्रकशरीरं तदेव कायस्तस्य यः प्रयोगः औदारिकमिश्रकशरीरस्य वा यः कायप्रयोगः स औदारिकमिश्रकशरीरकायप्रयोगस्तेन परिणतं यत्तत्तथा, अयं पुनरौदारिकमिश्रकशरीरकायप्रयोगोऽपर्याप्तकस्यैव वेदितव्यः, यत आह— "जोएण कम्मएणं आहारेई अणंतरं जीवो। तेण परं मीसेणं जाव सरीरस्स निप्फत्ती ॥ १ ॥" [उत्पत्त्यनन्तरं जीवः कार्मणेन योगेनाहारयति ततो यावच्छरीरस्य निष्पत्तिः (शरीरपर्याप्तिः) तावदौदारिकमिश्रेणाहारयति ॥ १ ॥] एवं तावत् कार्म्मणेनौदारिकशरीरस्य मिश्रता उत्पत्तिमाश्रित्य तस्य प्रधानत्वात्, यदा पुनरौदारिकशरीरी वैक्रियलब्धिसं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पन्नो मनुष्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकः पर्याप्तबादरवायुकायिको वा वैक्रियं करोति तदा औदारिककाययोग एव वर्त्तमानः प्रदेशान् विक्षिप्य वैक्रियशरीरयोग्यान् पुद्गलानुपादाय यावद् वैक्रियशरीरपर्याप्त्या न पर्याप्तिं गच्छति तावद्वैक्रियेणौदारिकशरीरस्य मिश्रता, प्रारम्भकत्वेन तस्य प्रधानत्वात्, एवमाहारकेणाप्यौदारिकशरीरस्य मिश्रता वेदितव्येति, 'वेउव्वियसरीरकायप्पओगपरिणए'त्ति इह वैक्रियशरीरकायप्रयोगो वैक्रियपर्याप्तकस्येति। 'वेउव्वियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए'त्ति, इह वैक्रियमिश्रकशरीरकायप्रयोगो देवनारकेषूत्पद्यमानस्यापर्याप्तकस्य, मिश्रता चेह वैक्रियशरीरस्य कार्मणेनैव, लब्धिवैक्रियपरित्यागे त्वौदारिकप्रवेशाद्यावौदारिकोपादानाय प्रवृत्ते वैक्रियप्राधान्यादौदारिकेणापि वैक्रियस्य मिश्रतेति। 'आहारगसरीरकायप्पयोगपरिणए'त्ति इहाहारकशरीरकायप्रयोग आहारकशरीरनिर्वृत्तौ सत्यां तदानीं तस्यैव प्रधानत्वात्। 'आहारगमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए'त्ति इहाहारकमिश्रशरीरकायप्रयोग आहारकस्यौदारिकेण मिश्रतायां, स चाहारकत्यागेनौदारिकग्रहणाभिमुखस्य,एतदुक्तं भवति–यदाऽऽहारकशरीरी भूत्वा कृतकार्यः पुनरप्यौदारिकं गृह्णाति तदाऽऽहारकस्य प्रधानत्वादौदारिकप्रवेशं प्रति व्यापारभावान्न परित्यजति यावत्सर्वथैवाहारकं तावदौदारिकेण सह मिश्रतेति, ननु तत्तेन सर्वथाऽमुक्तं पूर्वनिर्वर्त्तितं तिष्ठत्येव तत्कथं गृह्णाति ?, सत्यं तिष्ठति तत् तथाऽप्यौदारिकशरीरोपादानार्थं प्रवृत्त इति गृह्णात्येवेत्यच्यत इति। 'कम्मासरीरकायप्पओगपरिणए'त्ति इह कार्म्मणशरीरकायप्रयोगो विग्रहे समुद्घातगतस्य च केवलिनस्तृतीयचतुर्थपञ्चमसमयेषु भवति, उक्तं च–"कार्म्मणशरीरयोगी चतुर्थके पञ्चमे तृतीये चे"ति, एवं प्रज्ञापनाटीकानुसारेणौदारिकशरीरकायप्रयोगादीनां व्याख्या, शतकटीकाऽनुसारतः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुनर्मिश्रकायप्रयोगाणामेवं–औदारिकमिश्र औदारिक एवापरिपूर्णो मिश्र उच्यते, यथा गुडमिश्रं दधि, न गुडतया नापि दधितया व्यपदिश्यते तत् ताभ्यामपरिपूर्णत्वात्, एवमौदारिकं मिश्रं कार्मणेनैव नौदारिकतया नापि कार्म्मणतया व्यपदेष्टुं शक्यमपरिपूर्णत्वादिति तस्यौदारिकमिश्रव्यपदेशः, एवं वैक्रियाहारकमिश्रावपीति, नवरं 'बायरवाउक्काइए'इत्यादि, यथौदारिकशरीरकायप्रयोगपरिणते सूक्ष्मपृथिवीकायिकादि प्रतीत्यालापकोऽधीतस्तथौदारिकमिश्रशरीरकायप्रयोगपरिणतेऽपि वाच्यो, नवरमयं विशेषः–तत्र सर्वेऽपि सूक्ष्मपृथिवीकायिकादयः पर्याप्तापर्याप्तविशेषणा अधीता इह तु बादरवायुकायिका गर्भजपञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्याश्च पर्याप्तकापर्याप्तकविशेषणा अध्येतव्याः, शेषास्त्वपर्याप्तकविशेषणा एव, यतो बादरवायुकायिकादीनां पर्याप्तकावस्थायामपि वैक्रियारम्भणत औदारिकमिश्रशरीरकायप्रयोगो लभ्यते, शेषाणां पुनरपर्याप्तकावस्थायामेवेति। 'जहा ओगाहणसंठाणे'त्ति प्रज्ञापनायामेकविंशतितमपदे, तत्र चैवमिदं सूत्रं–'जइ वाउक्काइयएगिंदियवेउव्वियसरीरकायप्पयोगपरिणए किं सुहुमवाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए बादरवाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए ?, गोयमा ! नो सुहुम जाव परिणए बायर जाव परिणए'इत्यादीति। 'एवं जहा ओगाहणसंठाणे'त्ति तत्र चैवमिदं सूत्रं–'गोयमा ! णो अमणुस्साहारगसरीरकायप्पओगपरिणए मणुस्साहारगसरीरकायप्पओगपरिणए'इत्यादि। 'एवं जहा ओगाहणासंठाणे कम्मगस्स भेओ'त्ति स चायं भेदः—'बेइंदियकम्मासरीरकायप्पओगपरिणए वा एवं तेइंदियचउरिंदिय'इत्यादिरिति ॥ अथ द्रव्यद्वयं चिन्तयन्नाह—

दो भंते ! दव्वा किं पयोगपरिणया मीसापरिणया वीससापरिणया ?, गोयमा ! पओगपरिणया वा १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १

॥३१६॥

मीसापरिणया वा २ वीससापरिणया वा ३ अहवा एगे पओगपरिणए एगे मीसापरिणए ४ अहवेगे पओगप० एगे वीससापरि० ५ अहवा एगे मीसापरिणए एगे वीससापरिणए एवं ६। जइ पओगपरिणया किं मणप्पयोगपरिणया वइप्पयोग० कायप्पयोगपरिणया ?, गोयमा ! मणप्पयो० वइप्पयोगप० कायप्पयोगपरिणया वा अहवेगे मणप्पयोगप० एगे वयप्पयोगप०, अहवेगे मणप्पयोगपरिणए कायप०, अहवेगे वयप्पयोगप० एगे कायप्पओगपरि०, जइ मणप्पयोगप० किं सच्चमणप्पयोगप० ४ ?, गोयमा ! सच्चमणप्पयोगपरिणया वा जाव असच्चामोसमणप्पयोगप० १ अहवा एगे सच्चमणप्पयोगपरिणए एगे मोसमणप्पओगपरिणए १ अहवा एगे सच्चमणप्पओगप० एगे सच्चामोसमणप्पओगपरिणए २ अहवा एगे सच्चमणप्पयोगपरिणया एगे असच्चामोसमणप्पओगपरिणए ३ अहवा एगे मोसमणप्पयोगप० एगे सच्चामोसमणप्पयोगप० ४ अहवा एगे मोसमणप्पयोगप० एगे असच्चामोसमणप्पयोगप० ५ अहवा एगे सच्चामोसमणप्पओगप० एगे असच्चामोसमणप्पओगप०६। जइ सच्चमणप्पओगप० किं आरंभसच्चमणप्पयोगपरिणए जाव असमारंभसच्चमणप्पयोगप० ?, गोयमा ! आरंभसच्चमणप्पयोगपरिणया वा जाव असमारंभसच्चमणप्पयोगपरिणया वा, अहवा एगे आरंभसच्चमणप्पयोगप० एगे अणारंभसच्चमणप्पयोगप० एवं एएणं गमएणं दुयसंजोएणं नेयव्वं, सव्वे संयोगा जत्थ जत्तिया उट्ठेंति ते भाणियव्वा जाव सव्वट्ठसिद्धगत्ति। जइ मीसाप० किं मणमीसापरि० एवं मीसापरि० वि०। जइ वीससापरिणया किं वन्नपरिणया गंधप० एवं वीससापरिणयावि जाव अहवा एगे

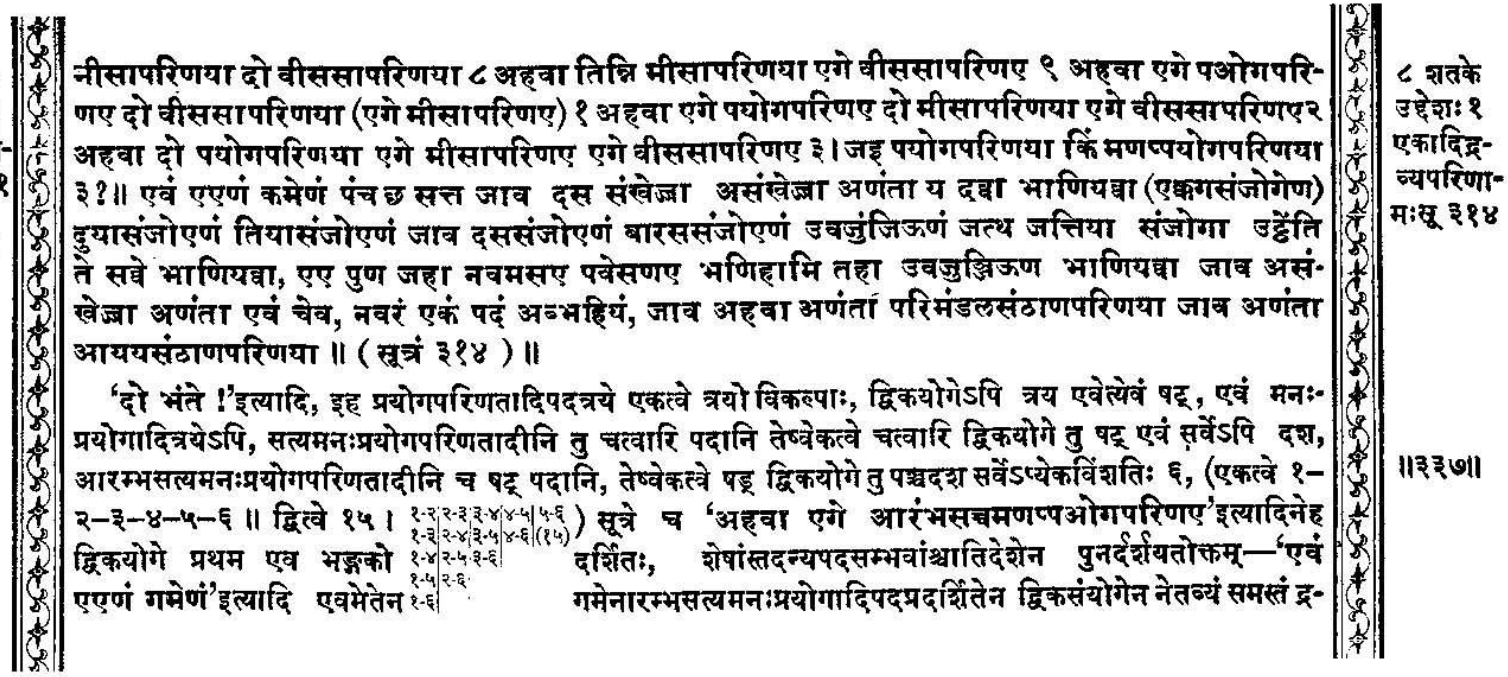
८ शतके उद्देशः १ द्रव्यद्वय-पारणामः सू ३१४

॥३१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चउरंससंठाणपरि० एगे आययसंठाणपरिणए वा॥ तिन्नि भंते ! दव्वा किं पयोगपरिणया मीसाप० वीससाप०?, गोयमा ! पयोगपरिणया वा मीसापरिणया वा वीससापरिणया वा १ अहवा एगे पयोगपरिणए दो मीसाप० १ अहवेगे पयोगपरिणए दो वीससाप० २ अहवा दो पयोगपरिणया एगे मीससापरिणए ३ अहवा दो पयोग-प० एगे वीससाप० ४ अहवा एगे मीसापरिणए दो वीससाप० ५ अहवा दो मीससाप० एगे वीससाप० ६ अहवा एगे पयोगप० एगे मीसापरि० एगे वीससाप० ७। जइ पयोगप० किं मणप्पयोगपरिणया वइप्पयो-गप० कायप्पयोगप० ?, गोयमा ! मणप्पयोगपरिणया वा एवं एक्कगसंयोगो दुयासंयोगो तियासंयोगो भाणियव्वो, जइ मणप्पयोगपरि० किं सच्चमणप्पयोगपरिणए ४ ?, गोयमा ! सच्चमणप्पयोगपरिणया वा जाव असच्चामोसमणप्पयोगपरिणए वा ४, अहवा एगे सच्चमणप्पयोगपरिणए दो मोसमणप्पयोगपरिणया वा, एवं दुयासंयोगो तियासंयोगो भाणियव्वो, एत्थवि तहेव जाव अहवा एगे तंससंठाणपरिणए वा एगे चउरं-ससंठाणपरिणए वा एगे आययसंठाणपरिणए वा॥ चत्तारि भंते ! दव्वा किंपओगपरिणया ३ ?, गोयमा ! पयो-गपरिणया वा मीसापरिणया वा वीससापरिणया वा, अहवा एगे पओगपरिणए तिन्नि मीसापरिणया १ अहवा एगे पओगपरिणए तिन्नि वीससापरिणया २ अहवा दो पयोगपरिणया दो मीसापरिणया ३ अहवा दो पयोगपरिणया दो वीससापरिणया ४ अहवा तिन्नि पओगपरिणया एगे मीससापरिणया ५ अहवा तिन्नि पओगपरिणया एगे वीससापरिणए ६ अहवा एगे मीससापरिणए तिन्नि वीससापरिणया ७ अहवा दो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१ ॥३३७॥

नीसापरिणया दो वीससापरिणया ८ अहवा तिन्नि मीसापरिणया एगे वीससापरिणए ९ अहवा एगे पओगपरिणए दो वीससापरिणया (एगे मीसापरिणए) १ अहवा एगे पयोगपरिणए दो मीसापरिणया एगे वीससापरिणए२ अहवा दो पयोगपरिणया एगे मीसापरिणए एगे वीससापरिणए ३। जइ पयोगपरिणया किं मणप्पयोगपरिणया ३?॥ एवं एएणं कमेणं पंच छ सत्त जाव दस संखेज्जा असंखेज्जा अणंता य दट्ठा भाणियव्वा (एक्कगसंजोगेण) दुयासंजोएणं तियासंजोएणं जाव दससंजोएणं बारससंजोएणं उवजुंजिऊणं जत्थ जत्तिया संजोगा उट्ठेंति ते सव्वे भाणियव्वा, एए पुण जहा नवमसए पवेसणए भणिहामि तहा उवजुंजिऊण भाणियव्वा जाव असंखेज्जा अणंता एवं चेव, नवरं एकं पदं अब्भहियं, जाव अहवा अणंता परिमंडलसंठाणपरिणया जाव अणंता आययसंठाणपरिणया ॥ (सूत्रं ३१४) ॥

'दो भंते !'इत्यादि, इह प्रयोगपरिणतादिपदत्रये एकत्वे त्रयो विकल्पाः, द्विकयोगेऽपि त्रय एवेत्येवं षट्, एवं मनःप्रयोगादित्रयेऽपि, सत्यमनःप्रयोगपरिणतादीनि तु चत्वारि पदानि तेष्वेकत्वे चत्वारि द्विकयोगे तु षट् एवं सर्वेऽपि दश, आरम्भसत्यमनःप्रयोगपरिणतादीनि च षट् पदानि, तेष्वेकत्वे षट् द्विकयोगे तु पञ्चदश सर्वेऽप्येकविंशतिः ६, (एकत्वे १-२-३-४-५-६ ॥ द्वित्वे १५। १-२ १-३ १-४ १-५ १-६ | २-३ २-४ २-५ २-६ | ३-४ ३-५ ३-६ | ४-५ ४-६ | ५-६ (१५)) सूत्रे च 'अहवा एगे आरंभसच्चमणप्पओगपरिणए'इत्यादिनेह द्विकयोगे प्रथम एव भङ्गको दर्शितः, शेषांस्तदन्यपदसम्भवांश्चातिदेशेन पुनर्दर्शयतोक्तम्—'एवं एएणं गमेणं'इत्यादि एवमेतेन गमेनारम्भसत्यमनःप्रयोगादिपदप्रदर्शितेन द्विकसंयोगेन नेतव्यं समस्तं द्र-

८ शतके उद्देशः १ एकादिद्रव्यपरिणामः सू ३१४

॥३३७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्यद्वयसूत्रं, द्विकसंयोगस्य चैकत्वविकल्पाभिधानपूर्वकत्वादेकत्वविकल्पैश्चेति दृश्यं, तत्र च यत्रारम्भसत्यमनःप्रयोगादिपदसमूहे यावन्तो द्विकसंयोगा उत्तिष्ठन्ते सर्वे ते तत्र भणितव्याः,तत्र चारम्भसत्यमनःप्रयोगा दर्शिता एव,आरम्भादिपदषट्कविशेषितेषु पुनरित्थमेव त्रिषु मृषामनःप्रयोगादिषु,चतुर्षु च सत्यवाक्प्रयोगादिषु तु प्रत्येकमेकत्वे षट् विकल्पाः द्विकसंयोगे तु पञ्चदशेत्येवं प्रत्येकमेवमेव सर्वेष्वप्येकविंशतिः, औदारिकशरीरकायप्रयोगादिषु तु सप्तसु पदेष्वेकत्वे सप्त द्विकयोगे त्वेकविंशतिरित्येवमष्टाविंशतिरिति (एकत्वे १–२–३–४–५–६–७द्वित्वे २१। व्यादिपदप्रभृतिभिः पूर्वोक्तक्रमेणौदारिकादिकायप्रयोगपरिणतद्रकियद्दूरं यावत् ? इत्याह—'जाव सव्वट्ठसिद्धग'त्ति, एतच्चैवं—त्तरोववाइयकप्पातीतगवेमाणियदेवपंचेंदियकम्मासरीरकायप्पओग सव्वट्ठसिद्धजाव परिणया अपज्जत्त सव्वट्ठसिद्ध जाव परिणया वा ?, गोसिद्ध जाव परिणया वा अपज्जत्त सव्वट्ठसिद्ध जावपरिणया वा?, अहवा

१-२	२-३	३-४	४-५	५-६	६-७	
१-३	२-४	३-५	४-६	५-७		
१-४	२-५	३-६	४-७			
१-५	२-६	३-७				
१-६	२-७					
१-७						

एवमेकेन्द्रियादिपृथिव्यद्वयं प्रपञ्चनीयं, 'जाव सव्वट्ठसिद्धअणुपरिणया किं पज्जत्तयमा ! पज्जत्त सव्वट्ठसिद्ध जाव परिणया वा अपज्जत्त सव्वट्ठसिद्ध जावपरिणया वा?, अहवा एगे पज्जत्त सव्वट्ठसिद्ध जाव परिणए एगे अपज्जत्त सव्वट्ठसिद्ध जाव परिणए'त्ति, 'एवं वीससापरिणयावि'त्ति एवमिति–प्रयोगपरिणतद्रव्यद्वयवत्प्रत्येकविकल्पैर्द्विकसंयोगैश्च विश्रसापरिणते अपि द्रव्ये वर्णगन्धरसस्पर्शसंस्थानेषु पञ्चादिभेदेषु वाच्ये, कियद्दूरं यावत् ? इत्याह–'जाव अहवेगे'इत्यादि, अयं च पञ्चभेदसंस्थानस्य दशानां द्विकसंयोगानां दशम इति ॥ अथ द्रव्यत्रयं चिन्तयन्नाह–'तिन्नी'त्यादि, इह प्रयोगपरिणतादिपदत्रये एकत्वे त्रयो विकल्पाः द्विकसंयोगे तु षट्, कथम् ?, आद्यस्यैकत्वे शेषयोः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३३८॥

क्रमेण द्वित्वे द्वौ तथाऽऽद्यस्य द्वित्वे शेषयोः क्रमेणैकत्वेऽन्यौ द्वौ ४ तथा द्वितीयस्यैकत्वे तृतीयस्य च द्वित्वेऽन्यः ५ तथा द्वितीयस्य द्वित्वे तृतीयस्य चैकत्वेऽन्यः ६ इत्येवं षट्, त्रिकयोगे त्वेक एवेत्येवं सर्वे दश, एवं मनःप्रयोगादिपदत्रयेऽपि, अत एवाह—'एवमेक्कगसंजोगो'इत्यादि, सत्यमनःप्रयोगादीनि तु चत्वारि पदानीत्यत एकत्वे चत्वारो द्विकसंयोगे तु द्वादश, कथम् ?, आद्यस्यैकत्वेन शेषाणां त्रयाणां क्रमेणानेकत्वेन त्रयो लब्धाः, पुनरन्ये त्रय आद्यस्यानेकत्वेन शेषाणां त्रयाणां क्रमेणैकत्वेन ६, तथा द्वितीयस्यैकत्वेन शेषयोः क्रमेणानेकत्वेन द्वौ, पुनर्द्वितीयस्यानेकत्वेन शेषयोः क्रमेणैवैकत्वेन द्वावेव तृतीयचतुर्थयोरेकत्वानेकत्वाभ्यामेकः पुनर्विपर्ययेणैक इत्येवं द्वादश त्रिकयोगे तु चत्वार इत्येवं सर्वेऽपि विंशतिरिति । सूत्रे तु कांश्चिदुपदर्श्य शेषानतिदेशत आह—'एवं दुयासंजोगो'इत्यादि, 'एत्थवि तहेव'त्ति अत्रापि द्रव्यत्रयाधिकारे तथैव वाच्यं सूत्रं यथा द्रव्यद्वयाधिकारे उक्तं, तत्र च मनोवाक्कायप्रभेदतो यः प्रयोगपरिणामो मिश्रतापरिणामो वर्णादिभेदतश्च विश्रसापरिणाम उक्तः स इहापि वाच्य इति भावः, किमन्तं तत्सूत्रं वाच्यम् ? इत्याह—'जावे'त्यादि, इह च परिमण्डलादीनि पञ्च पदानि तेषु चैकत्वे पञ्च विकल्पाः द्विकसंयोगे तु विंशतिः, कथम् ?, आद्यस्यैकत्वे शेषाणां च क्रमेणानेकत्वे तथाऽऽद्यस्यानेकत्वे शेषाणां तु क्रमेणैवैकत्वे एवं द्वितीयस्यैकत्वेऽनेकत्वे च शेषत्रयस्य चानेकत्वे एकत्वे च षट् तथा तृतीयस्यैकत्वे च द्वयोश्चानेकत्वे एकत्वे च चत्वारः तथा चतुर्थस्यैकत्वेऽनेकत्वे च पञ्चमस्य चानेकत्वे एकत्वे च द्वाविति एवं सर्वेऽपि विंशतिः, त्रिकयोगे तु दश, अत्र च 'अहवा एगे तंससंठाणे'इत्यादिना त्रिकयोगानां दशमो दर्शित इति । अथ द्रव्यचतुष्कमाश्रित्याह—'चत्तारि भंते !'इत्यादि, इह प्रयोगपरिणतादित्रये एकत्वे त्रयो द्विकसंयोगे तु नव, कथम् ?,

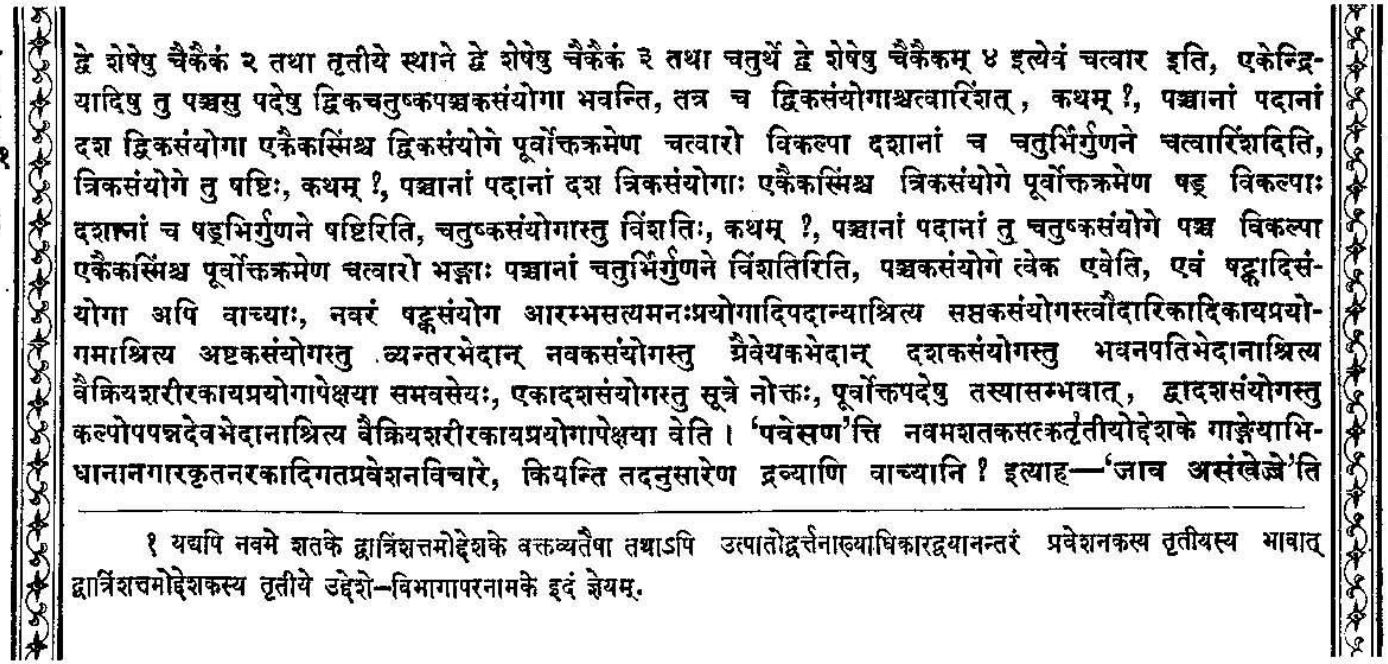
८ शतके उद्देशः १ एकादिद्रव्यपरिणामः सू ३१४

॥३३८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आद्यस्यैकत्वे द्वयोश्च क्रमेण त्रित्वे द्वौ, तथाऽऽद्यस्य द्वित्वे द्वयोरपि क्रमेणैव द्वित्वेऽन्यौ द्वौ, तथाऽऽद्यस्य त्रित्वे द्वयोश्च क्रमेणैवैकत्वेऽन्यौ द्वौ, तथा द्वितीयस्यैकत्वेऽन्यस्य त्रित्वे तथा द्वयोरपि द्वित्वे तथा द्वितीयस्य त्रित्वेऽन्यस्य चैकत्वे त्रयोऽन्ये इत्येवं सर्वेऽपि नव त्रययोगे तु त्रय एव भवन्तीत्येवं सर्वेऽपि पञ्चदश इति। 'जइ पओगपरिणया किं मणप्पओगे'त्यादिना चोक्तशेषं द्रव्यचतुष्कप्रकरणमुपलक्षितं, तच्च पूर्वोक्तानुसारेण संस्थानसूत्रान्तमुचितभङ्गकोपेतं समस्तमध्येयमिति। अथ पञ्चादिद्रव्यप्रकरणान्यतिदेशतो दर्शयन्नाह—'एवं एएण'मित्यादि, एवं चाभिलापः—'पंच भंते! दव्वा किं पओगपरिणया ३?, गोयमा! पओगपरिणया ३ अहवा एगे पओगपरिणए चत्तारि मीसापरिणया' इत्यादि, इह च द्विकसंयोगे विकल्पा द्वादश, कथम्?, एकं चत्वारि च १ द्वे त्रीणि च २ त्रीणि द्वे च ३ चत्वार्येकं च ४ इत्येवं चत्वारो विकल्पा द्रव्यपञ्चकमाश्रित्यैकत्र द्विकसंयोगे पदत्रयस्य त्रयो द्विकसंयोगास्ते च चतुर्भिर्गुणिता द्वादशेति, त्रिकयोगे तु षट्, कथम्?, त्रीण्येकमेकं च १ एकं त्रीण्येकं च २ एकमेकं त्रीणि च ३ द्वे द्वे एकं च ४ द्वे एकं द्वे च ५ एकं द्वे द्वे च ६ इत्येवं षट्, 'जाव दससंजोएणं'ति इह यावत्करणाच्चतुष्कादिसंयोगाः सूचिताः, तत्र च द्रव्यपञ्चकापेक्षया सत्यमनःप्रयोगादिषु चतुर्षु पदेषु द्विकत्रिकचतुष्कसंयोगा भवन्ति, तत्र च द्विकसंयोगाश्चतुर्विंशतिः २४, कथम्?, चतुर्णां पदानां षट् द्विकसंयोगाः, तत्र चैकैकस्मिन् पूर्वोक्तक्रमेण चत्वारो विकल्पाः षण्णां च चतुर्भिर्गुणने [च] चतुर्विंशतिरिति, त्रिकसंयोगा अपि चतुर्विंशतिः, कथम्?, चतुर्णां पदानां त्रिकसंयोगाश्चत्वारः, एकैकस्मिंश्च पूर्वोक्तक्रमेण षट् विकल्पाः, चतुर्णां च षड्भिर्गुणने चतुर्विंशतिरिति, चतुष्कसंयोगे तु चत्वारः, कथम्?, आदौ द्वे त्रिषु चैकैकं १ तथा द्वितीयस्थाने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी या वृत्तिः १ ॥३३९॥

द्वे शेषेषु चैकैकं २ तथा तृतीये स्थाने द्वे शेषेषु चैकैकं ३ तथा चतुर्थे द्वे शेषेषु चैकैकम् ४ इत्येवं चत्वार इति, एकेन्द्रियादिषु तु पञ्चसु पदेषु द्विकचतुष्कपञ्चकसंयोगा भवन्ति, तत्र च द्विकसंयोगाश्चत्वारिंशत्, कथम् ?, पञ्चानां पदानां दश द्विकसंयोगा एकैकस्मिंश्च द्विकसंयोगे पूर्वोक्तक्रमेण चत्वारो विकल्पा दशानां च चतुर्भिर्गुणने चत्वारिंशदिति, त्रिकसंयोगे तु षष्टिः, कथम् ?, पञ्चानां पदानां दश त्रिकसंयोगाः एकैकस्मिंश्च त्रिकसंयोगे पूर्वोक्तक्रमेण षड् विकल्पाः दशानां च षड्भिर्गुणने षष्टिरिति, चतुष्कसंयोगास्तु विंशतिः, कथम् ?, पञ्चानां पदानां तु चतुष्कसंयोगे पञ्च विकल्पा एकैकस्मिंश्च पूर्वोक्तक्रमेण चत्वारो भङ्गाः पञ्चानां चतुर्भिर्गुणने विंशतिरिति, पञ्चकसंयोगे त्वेक एवेति, एवं षट्कादिसंयोगा अपि वाच्याः, नवरं षट्कसंयोग आरम्भसत्यमनःप्रयोगादिपदान्याश्रित्य सप्तकसंयोगस्त्वौदारिकादिकायप्रयोगमाश्रित्य अष्टकसंयोगस्तु व्यन्तरभेदान् नवकसंयोगस्तु ग्रैवेयकभेदान् दशकसंयोगस्तु भवनपतिभेदानाश्रित्य वैक्रियशरीरकायप्रयोगापेक्षया समवसेयः, एकादशसंयोगस्तु सूत्रे नोक्तः, पूर्वोक्तपदेषु तस्यासम्भवात्, द्वादशसंयोगस्तु कल्पोपपन्नदेवभेदानाश्रित्य वैक्रियशरीरकायप्रयोगापेक्षया वेति। 'पवेसण'त्ति नवमशतकसत्कतृतीयोद्देशके गाङ्गेयाभिधानानगारकृतनरकादिगतप्रवेशनविचारे, कियन्ति तदनुसारेण द्रव्याणि वाच्यानि ? इत्याह—'जाव असंखेज्जे'ति

१ यद्यपि नवमे शतके द्वात्रिंशत्तमोद्देशके वक्तव्यतैषा तथाऽपि उत्पातोद्वर्त्तनाख्याधिकारद्वयानन्तरं प्रवेशनकस्य तृतीयस्य भावात् द्वात्रिंशत्तमोद्देशकस्य तृतीये उद्देशे–विभागापरनामके इदं ज्ञेयम्.

८ शतके उद्देशः १ एकादिद्रव्यपरिणामः सू३१४

॥३३९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३१४, ३१५]

दीप अनुक्रम [३८७, ३८८]

असङ्ख्यातान्तनारकादिवक्तव्यताश्रयं हि तत्सूत्रम्, इह तु यो विशेषस्तमाह—'अणंता'इत्यादि, एतदेवाभिलापतो दर्शयन्नाह—'जाव अणंते'इत्यादि ॥ अथैतेषामेवाल्पबहुत्वं चिन्तयन्नाह—

एएसि णं भंते ! पोग्गलाणं पयोगपरिणयाणं मीसापरिणयाणं वीससापरिणयाण य कयरे २ हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा पोग्गला पयोगपरिणया मीसापरिणया अणंतगुणा वीससापरिणया अणन्तगुणा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥ (सूत्रं ३१५)॥ अट्ठमसयस्स पढमो उद्देसो समत्तो ॥ ८–१ ॥

'एएसि ण'मित्यादि, 'सव्वत्थोवा पुग्गला पओगपरिणय'त्ति कायादिरूपतया, जीवपुद्गलसम्बन्धकालस्य स्तोकत्वात्, 'मीसापरिणया अणंतगुण'त्ति कायादिप्रयोगपरिणतेभ्यः सकाशान्मिश्रकपरिणता अनन्तगुणाः, यतः प्रयोगकृतमाकारमपरित्यजन्तो विश्रसया ये परिणामान्तरमुपागता मुक्तकडेवराद्यवयवरूपास्तेऽनन्तानन्ताः, विश्रसापरिणतास्तु तेभ्योऽप्यनन्तगुणाः, परमाण्वादीनां जीवाग्रहणप्रायोग्याणामप्यनन्तत्वादिति ॥ अष्टमशते प्रथमः ॥ ८–१ ॥

प्रथमे पुद्गलपरिणाम उक्तो, द्वितीये तु स एवाशीविषद्वारेणोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्यादिसूत्रम्—

कतिविहा णं भंते ! आसीविसा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा आसीविसा पन्नत्ता, तंजहा–जातिआसीविसा य कम्मआसीविसा य, जाइआसीविसा णं भंते ! कतिविहा पन्नत्ता ?, गोयमा ! चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा–विच्छुयजातिआसीविसे मंडुक्कजाइआसीविसे उरगजातिआसीविसे मणुस्सजातिआसीविसे,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टम-शतके प्रथम-उद्देशकः समाप्तः

अथ अष्टम-शतके द्वितीय-उद्देशकः आरभ्यते

आशीविषस्य अधिकारः

प्रत सूत्रांक [३१६]

दीप अनुक्रम [३८९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३४०॥

विच्छुयजातिआसीविसस्स णं भंते ! केवतिए विसए पन्नत्ते ?, गोयमा ! पभू णं विच्छुयजातिआसीविसे अद्धभरहप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं विसट्टमाणं पकरेत्तए, विसए से विसट्ठयाए नो चेव णं संपत्तीए करेंसु वा करेंति वा करिस्संति वा १, मंडुक्कजातिआसीविसपुच्छा, गोयमा ! पभू णं मंडुक्कजातिआसीविसे भरहप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं सेसं तं चेव जाव करेस्संति वा २, एवं उरगजातिआसीविससविं नवरं जंबुद्दीवप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं सेसं तं चेव जाव करेस्संति वा ३, मणुस्सजातिआसीविससविं एवं चेव नवरं समयखेत्तप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेण विसपरिगयं सेसं तं चेव जाव करेस्संति वा ४। जइ कम्मआसीविसे किं नेरइयकम्मआसीविसे तिरिक्खजोणियकम्मआसीविसे मणुस्सकम्मआसीविसे देवकम्मासीविसे ?, गोयमा ! नो नेरइयकम्मासीविसे तिरिक्खजोणियकम्मासीविसेवि मणुस्सकम्मा० देवकम्मासी०, जइ तिरिक्खजोणियकम्मासीविसे किं एगिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे ?, गोयमा ! नो एगिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे जाव नो चउरिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे पंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे, जइ पंचिंदियतिरिक्खजोणियजावकम्मासीविसे किं संमुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणियजावकम्मासीविसे गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे ?, एवं जहा वेउव्वियसरीरस्स भेदो जाव पज्जत्तासंखेज्जवासाउयगब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे नो अपज्जत्तासंखेज्जवासाउयजावकम्मासीविसे। जइ मणुस्सकम्मासीविसे किं

८ शतके उद्देशः२ आशीविषाधिकारः सू ३१६

॥३४०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आशीविषस्य अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३१६]

दीप अनुक्रम [३८९]

संमुच्छिममणुस्सकम्मासीविसे गब्भवक्कंतियमणुस्सकम्मासीविसे ?, गोयमा ! णो संमुच्छिममणुस्सकम्मासीविसे गब्भवक्कंतियमणुस्सकम्मासीविसे एवं जहा वेउव्वियसरीरं जाव पज्जत्तासंखेज्जवासाउयकम्मभूमगगब्भवक्कंतियमणूसकम्मासीविसे नो अपज्जत्ता जाव कम्मासीविसे । जइ देवकम्मासीविसे किं भवणवासीदेवकम्मासीविसे जाव वेमाणियदेवकम्मासीविसे ?, गोयमा ! भवणवासीदेवकम्मासीविसे वाणमंतर० जोतिसिय० वेमाणियदेवकम्मासीविसे, जइ भवणवासिदेवकम्मासीविसे से किं असुरकुमारभवणवासिदेवकम्मासीविसे जाव थणियकुमार जाव कम्मासीविसे ?, गोयमा ! असुरकुमारभवणवासिदेवकम्मासीविसेवि जाव थणियकुमारआसीविसेवि, जइ असुरकुमार जाव कम्मासीविसे किं पज्जत्त असुरकुमार जाव कम्मासीविसे अपज्जत्त असुरकुमारभवणवासिकम्मासीविसे ? गोयमा ! नो पज्जत्त असुरकुमार जाव कम्मासीविसे अपज्जत्तअसुरकुमारभवणवासिकम्मासीविसे एवं थणियकुमाराणं, जइ वाणमंतरदेवकम्मासीविसे किं पिसायवाणमंतर० एवं सव्वेसिंपि अपज्जत्तगाणं, जोइसियाणं सव्वेसिं अपज्जत्तगाणं, जइ वेमाणियदेवकम्मासीविसे किं कप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे कप्पातीयवेमाणियदेवकम्मासीविसे ?, गोयमा ! कप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे नो कप्पातीयवेमाणियदेवे जाव कम्मासीविसे, जइ कप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे किं सोहम्मकप्पोव० जाव कम्मासीविसे अच्चुयकप्पो वा जाव कम्मासीविसे ?, गोयमा ! सोहम्मकप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसेवि जाव सहस्सारकप्पोवगवेमाणियदेवक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आशीविषस्य अधिकार:

म्मासीविसे, नो आणयकप्पोवग जाव नो अच्चुयकप्पोवगवेमाणियदेव०, जइ सोहम्मकप्पोवग जाव कम्मासीविसे किं पज्जत्तसोहम्मकप्पोवगवेमाणिय० अपज्जत्तगसोहम्मग० ?, गोयमा ! नो पज्जत्त सोहम्मकप्पोवगवेमाणिय० अपज्जत्त सोहम्मकप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे, एवं जाव नो पज्जत्तासहस्सारकप्पोवगवेमाणिय जाव कम्मासीविसे, अपज्जत्त सहस्सारकप्पोवगजावकम्मासीविसे ॥ (सूत्रं ३१६) ॥

'कइविहे'त्यादि, 'आसीविस'त्ति 'आशीविषाः' दंष्ट्राविषाः 'जाइआसीविस'त्ति जात्या–जन्मनाऽऽशीविषा जात्याशीविषाः 'कम्मआसीविस'त्ति कर्म्मणा–क्रियया शापादिनोपघातकरणेनाशीविषाः कर्माशीविषाः, तत्र पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो मनुष्याश्च कर्माशीविषाः पर्याप्तका एव, एते हि तपश्चरणानुष्ठानतोऽन्यतो वा गुणतः खल्वाशीविषा भवन्ति, शापप्रदानेनैव व्यापादयन्तीत्यर्थः, एते चाशीविषलब्धिस्वभावात् सहस्रारान्तदेवेष्वेवोत्पद्यन्ते, देवास्त्वेत एव ये देवत्वेनोत्पन्नास्तेऽपर्याप्तकावस्थायामनुभूतभावतया कर्म्माशीविषा इति, उक्तञ्च शब्दार्थभेदसम्भवादि भाष्यकारेण—"[1]आसी दाढा तग्गयमहाविसाऽऽसीविसा दुविहभेया । ते कम्मजाइभेएण णेगहा चउविहविगप्पा ॥ १ ॥ " 'केवइए'त्ति कियान् 'विसए'त्ति गोचरो विषयस्येति गम्यम् 'अद्धभरहप्पमाणमेत्तं'ति अर्द्धभरतस्य यत् प्रमाणं–सातिरेकत्रिषष्ट्यधिकयोजनशतद्वयलक्षणं तदेव मात्रा–प्रमाणं यस्याः सा तथा तां 'बोंदिं'ति तनुं 'विसेणं'ति विषेण स्वकीयाशीप्रभवेण करणभूतेन 'विसपरिगयं'ति विषं भावप्रधानत्वान्निर्देशस्य विषतां परिगता–प्राप्ता विषपरिगताऽतस्ताम्, अत एव 'विस-

१–आश्यो–दंष्ट्रास्तद्गतविषा आशीविषास्ते कर्मजातिभेदेन द्विविधाः कर्माशीविषा अनेकविधा जात्याशीविषाश्चतुर्विधविकल्पाः ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आशीविषस्य अधिकार:

दृमाणिं'ति विकसन्तीं–विदलन्तीं 'करेत्तए'त्ति कर्त्तुं 'विसए से'त्ति गोचरोऽसौ, अथवा 'से'तस्य वृश्चिकस्य 'विसट्ठयाए'त्ति विषमेवार्थो विषार्थस्तद्भावस्तत्ता तस्या विषार्थतायाः–विषत्वस्य तस्यां वा 'नो चेव' नैवेत्यर्थः 'संपत्तीए'त्ति संपत्त्या एवंविधबोन्दिसंप्राप्तिद्वारेण 'करिंसु'त्ति अकार्षुर्वृश्चिका इति गम्यते, इह चैकवचनप्रक्रमेऽपि बहुवचननिर्देशो वृश्चिकाशीविषाणां बहुत्वज्ञापनार्थम्, एवं कुर्वन्ति करिष्यन्तीत्यपि, त्रिकालनिर्देशश्चामीषां त्रैकालिकत्वज्ञापनार्थः, 'समयक्खेत्त'त्ति 'समयक्षेत्रं' मनुष्यक्षेत्रम् 'एवं जहावेउव्वियसरीरस्स भेउ'त्ति यथा वैक्रियं भणता जीवभेदो भणितस्तथेहापि वाच्योऽसावित्यर्थः, स चार्य–'गोयमा ! नो संमुच्छिमपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे, जइ गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे किं संखेज्जवासाउयगब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे असंखेज्जवासाउय जाव कम्मासीविसे ?, गोयमा ! संखेज्जवासाउय जाव कम्मासीविसे नो असंखेज्जवासाउय जाव कम्मासीविसे, जइ संखेज्ज जाव कम्मासीविसे किं पज्जत्तसंखेज्ज जाव कम्मासीविसे अपज्जत्तसंखेज्ज जाव कम्मासीविसे ?, गोयमा !' शेषं लिखितमेवास्ति॥ एतच्चोक्तं वस्तु अज्ञानो न जानाति, ज्ञान्यपि कश्चिद्दश वस्तूनि कथञ्चिन्न जानातीति दर्शयन्नाह—

दस ठाणाइं छउमत्थे सव्वभावेणं न जाणइ न पासइ, तंजहा–धम्मत्थिकायं १ अधम्मत्थिकायं २ आगासत्थिकायं ३ जीवं असरीरपडिबद्धं ४ परमाणुपोग्गलं ५ सद्दं ६ गंधं ७ वातं ८ अयं जिणे भविस्सइ वा ण वा भविस्सइ ९ अयं सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्सति वा न वा करेस्सइ १० ॥ एयाणि चेव उप्पन्ननाणदंसणधरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आशीविषस्य अधिकार:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १

॥३४२॥

अरहा जिणे केवली सव्वभावेणं जाणइ पासइ, तंजहा–धम्मत्थिकायं जाव करेस्संति वा न वा करेस्संति (सूत्रं ३१७)॥

'दसे'त्यादि, **'स्थानानि'** वस्तूनि गुणपर्यायाश्रितत्वात्, छद्मस्थ इहावध्याद्यतिशयविकलो गृह्यते, अन्यथाऽमूर्त्तत्वेन धर्मास्तिकायादीनजानन्नपि परमाण्वादि जानात्येवासौ, मूर्त्तत्वात्तस्य, समस्तमूर्त्तविषयत्वाच्चावधिविशेषस्य । अथ सर्व-भावेनेत्युक्तं ततश्च तत् कथञ्चिज्जानन्नप्यनन्तपर्यायतया न जानातीति, सत्यं, केवलमेवं दशेति सङ्ख्यानियमो व्यर्थः स्यात्, घटादीनां सुबहूनामर्थानामकेवलिना सर्वपर्यायतया ज्ञातुमशक्यत्वात्, सर्वभावेन च साक्षात्कारेण–चक्षुःप्रत्यक्षेणेति हृदयं, श्रुतज्ञानादिना त्वसाक्षात्कारेण जानात्यपि, **'जीवं असरीरपडिबद्धं'**ति देहविमुक्तं सिद्धमित्यर्थः, **'परमाणु-पुग्गलं'**ति परमाणुश्चासौ पुद्गलश्चेति, उपलक्षणमेतत्तेन द्व्यणुकादिकमपि कश्चिन्न जानातीति, अयमिति–प्रत्यक्षः कोऽपि प्राणी जिनो–वीतरागो भविष्यति न वा भविष्यतीति नवमम् ९ **'अय'**मित्यादि च दशमम् ॥ उक्तव्यतिरेकमाह— **'एयाणी'**त्यादि, **'सव्वभावेणं जाणइ'**त्ति सर्वभावेन साक्षात्कारेण जानाति केवलज्ञानेनेति हृदयम् ॥ जानातीत्युक्त-मतो ज्ञानसूत्रम्—

कतिविहे णं भंते ! नाणे पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे नाणे पन्नत्ते, तंजहा–आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे ओहिनाणे मणपज्जवनाणे केवलनाणे, से किं तं आभिणिबोहियनाणे ?, आभिणिबोहियनाणे चउविहे पन्नत्ते, तंजहा–उग्गहो ईहा अवाओ धारणा, एवं जहा रायप्पसेणइए णाणाणं भेदो तहेव इहवि

८ शतके उद्देशः २ दशस्थान-ज्ञानाज्ञाने सू ३१७

॥३४२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानस्य भेद-प्रभेदा:

प्रत सूत्रांक [३१८]

दीप अनुक्रम [३९१]

भाणियव्वो जाव सेत्तं केवलनाणे ॥ अन्नाणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते, तंजहा–मइअन्नाणे सुयअन्नाणे विभंगनाणे । से किं तं मइअन्नाणे ?, २ चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–उग्गहो जाव धारणा । से किं तं उग्गहे ?, २ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–अत्थोग्गहे य वंजणोग्गहे य, एवं जहेव आभिणिबोहियनाणं तहेव, नवरं एगट्ठियवज्जं जाव नोइंदियधारणा, सेत्तं धारणा, सेत्तं मइअन्नाणे । से किं तं सुयअन्नाणे ?, २ जं इमं अन्नाणिएहिं मिच्छदिट्ठिएहिं जहा नंदीए जाव चत्तारि वेदा संगोवंगा, सेत्तं सुयअन्नाणे । से किं तं विभंगनाणे ?, २ अणेगविहे पण्णत्ते, तंजहा–गामसंठिए नगरसंठिए जाव संनिवेससंठिए दीवसंठिए समुद्दसंठिए वाससंठिए वासहरसंठिए पव्वयसंठिए रुक्खसंठिए थूभसंठिए हयसंठिए गयसंठिए नरसंठिए किंनरसंठिए किंपुरिससंठिए महोरगगंधव्वसंठिए उसभसंठिए पसुपसयविहगवानरणाणासंठाणसंठिए पण्णत्ते ॥ जीवा णं भंते ! किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! जीवा नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते अत्थेगतिया दुन्नाणी अत्थेगतिया तिन्नाणी अत्थेगतिया चउनाणी अत्थेगतिया एगनाणी जे दुन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी य सुयनाणी य जे तिन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी अहवा आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी मणपज्जवनाणी जे चउनाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी मणपज्जवनाणी जे एगनाणी ते नियमा केवलनाणी, जे अन्नाणी ते अत्थेगतिया दुअन्नाणी अत्थेगतिया तिअन्नाणी जे दुअन्नाणी ते मइअन्नाणी य सुयअन्नाणी य जे तियअन्नाणी ते मइअन्नाणी सुयअन्नाणी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानस्य भेद-प्रभेदा:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१ ॥३४३॥

विभंगनाणी। नेरइया णं भंते ! किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते नियमा तिन्नाणी, तंजहा–आभिणिबोहि० सुयना० ओहिना० जे अन्नाणी ते अत्थेगतिया दुअन्नाणी अत्थेगतिया तिअन्नाणी, एवं तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए। असुरकुमारा णं भंते ! किं नाणी अन्नाणी ?, जहेव नेरइया तहेव तिन्नि नाणाणि नियमा, तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए, एवं जाव थणियकु०। पुढविक्काइया णं भंते ! किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नो नाणी अन्नाणी, जे अन्नाणी ते नियमा दुअन्नाणी–मइअन्नाणी य सुय-अन्ना०, एवं जाव वणस्सइका०। बेइंदियाणं पुच्छा, गोयमा ! णाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते नियमा दुन्नाणी, तंजहा–आभिणिबोहियनाणी य सुयनाणी य, जे अन्नाणी ते नियमा दुअन्नाणी आभिणिबोहिय-अन्नाणी सुयअन्नाणी, एवं तेइंदियचउरिंदियावि, पंचिंदियतिरिक्खजो० पुच्छा, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते अत्थे० दुन्नाणी अत्थे० तिन्ना० एवं तिन्नि नाणाणि तिन्नि अन्नाणाणि य भयणाए। मणुस्सा जहा जीवा तहेव पंच नाणाणि तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए। वाणमंत० जहा ने० जोइसियवेमाणियाणं तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा नियमा। सिद्धा णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! णाणी नो अन्नाणी, नियमा एगनाणी केवलनाणी (सूत्रं ३१८)॥

तत्र च 'आभिणिबोहियनाणे'त्ति अर्थाभिमुखोऽविपर्ययरूपत्वात् नियतोऽसंशयरूपत्वाद्बोधः–संवेदनमभिनिबोधः स एव स्वार्थिकेकप्रत्ययोपादानादाभिनिबोधिकं, ज्ञातिर्ज्ञायते वाऽनेनेति ज्ञानम्, आभिनिबोधिकं च तज्ज्ञानं चेति

८ शतके उद्देशः२ ज्ञानाज्ञा-नाधिकारः सू० ३१८

॥३४३॥

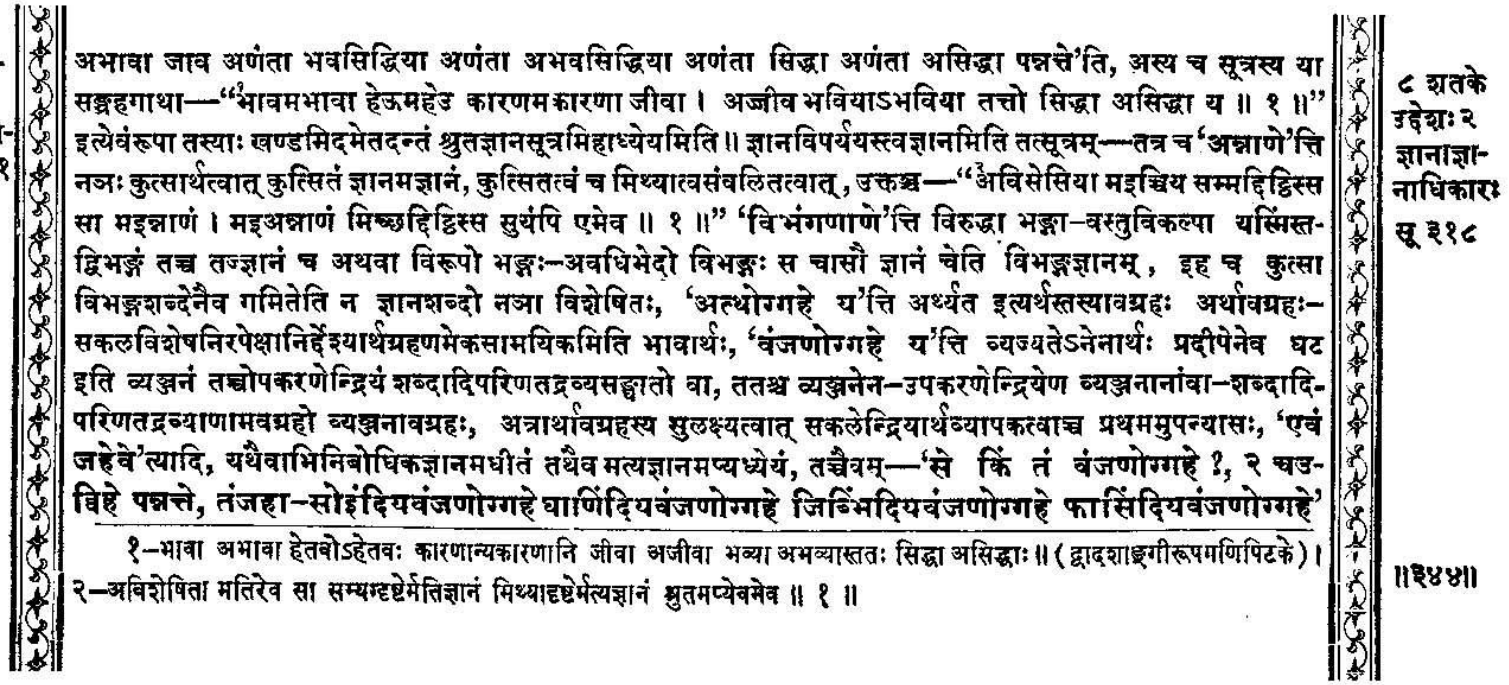
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानस्य भेद-प्रभेदा:

आभिनिबोधिकज्ञानम्–इन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तो बोध इति। **'सुयनाणे'**त्ति श्रूयते तदिति श्रुतं–शब्दः स एव ज्ञानं भावश्रुतकारणत्वात् कारणे कार्योपचारात् श्रुतज्ञानं, श्रुताद्वा–शब्दात् ज्ञानं श्रुतज्ञानम्–इन्द्रियमनोनिमित्तः श्रुतग्रन्थानुसारी बोध इति। **'ओहिणाणे'**त्ति अवधीयते–अधोऽधो विस्तृतं वस्तु परिच्छिद्यतेऽनेनेत्यवधिः स एव ज्ञानम् अवधिना वा–मर्यादया मूर्त्तद्रव्याण्येव जानाति नेतराणीति व्यवस्थया ज्ञानमवधिज्ञानं **'मणपज्जवणाणे'**त्ति मनसो-मन्यमानमनोद्रव्याणां पर्यवः–परिच्छेदो मनःपर्ययः स एव ज्ञानं मनःपर्यवज्ञानं मनःपर्यायाणां वा–तदवस्थाविशेषाणां ज्ञानं मनःपर्यायज्ञानम्। **'केवलणाणे'**त्ति केवलमेकं मत्यादिज्ञाननिरपेक्षत्वात् शुद्धं वा आवरणमलकलङ्करहितत्वात् सकलं वा–तत्प्रथमतयैवाशेषतदावरणाभावतः सम्पूर्णोत्पत्तेः असाधारणं वाऽनन्यसदृशत्वात् अनन्तं वा ज्ञेयानन्तत्वात् यथाऽवस्थिताशेषभूतभवद्भाविभावस्वभावावभासीति भावना तच्च तत् ज्ञानं चेति केवलज्ञानम्। **'उग्गहो'**त्ति सामान्यार्थस्य–अशेषविशेषनिरपेक्षस्यानिर्देश्यस्य रूपादेः अव इति–प्रथमतो ग्रहणं–परिच्छेदनमवग्रहः **'ईहा'**त्ति सदर्थविशेषालोचनमीहा **'अवाओ'**त्ति प्रक्रान्तार्थविनिश्चयोऽवायः **'धारणे'**ति अवगतार्थविशेषधरणं धारणा **'एवं जहे'**त्यादि, **'एवम्'** उक्तक्रमेण यथा राजप्रश्नकृते द्वितीयोपाङ्गे ज्ञानानां भेदो भणितस्तथैवेहापि भणितव्यः, स चैवम्—**'से किं तं उग्गहे ?, उग्गहे दुविहे पन्नत्ते, तंजहा–अत्थोग्गहे य वंजणोग्गहे य'**इत्यादिरिति, यच्च वाचनान्तरे श्रुतज्ञानाधिकारे यथा नन्द्यामङ्गप्ररूपणेत्यभिधाय **'जाव भवियअभविया तत्तो सिद्धा असिद्धा ये'**त्युक्तं तस्यायमर्थः–श्रुतज्ञानसूत्रावसाने किल नन्द्यां श्रुतविषयं दर्शयतेदमभिहितम्—**'इच्चेयंमि दुवालसंगे गणिपिडए अणंता भावा अणंता**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	ज्ञानस्य भेद-प्रभेदा:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३४४॥

अभावा जाव अणंता भवसिद्धिया अणंता अभवसिद्धिया अणंता सिद्धा अणंता असिद्धा पन्नत्ते'ति, अस्य च सूत्रस्य या सङ्ग्रहगाथा—"[1]भावमभावा हेऊमहेउ कारणमकारणा जीवा। अज्जीव भवियाऽभविया तत्तो सिद्धा असिद्धा य ॥ १ ॥" इत्येवंरूपा तस्याः खण्डमिदमेतदन्तं श्रुतज्ञानसूत्रमिहाध्येयमिति॥ ज्ञानविपर्ययस्त्वज्ञानमिति तत्सूत्रम्—तत्र च 'अन्नाणे'त्ति नञः कुत्सार्थत्वात् कुत्सितं ज्ञानमज्ञानं, कुत्सितत्वं च मिथ्यात्वसंवलितत्वात्, उक्तञ्च—"[2]अविसेसिया मइच्चिय सम्मद्दिट्ठिस्स सा मइन्नाणं। मइअन्नाणं मिच्छद्दिट्ठिस्स सुयंपि एमेव ॥ १ ॥" 'विभंगणाणे'त्ति विरुद्धा भङ्गा–वस्तुविकल्पा यस्मिंस्तद्विभङ्गं तच्च तज्ज्ञानं च अथवा विरूपो भङ्गः–अवधिभेदो विभङ्गः स चासौ ज्ञानं चेति विभङ्गज्ञानम्, इह च कुत्सा विभङ्गशब्देनैव गमितेति न ज्ञानशब्दो नञा विशेषितः, 'अत्थोग्गहे य'त्ति अर्थ्यत इत्यर्थस्तस्यावग्रहः अर्थावग्रहः–सकलविशेषनिरपेक्षानिर्देश्यार्थग्रहणमेकसामयिकमिति भावार्थः, 'वंजणोग्गहे य'त्ति व्यज्यतेऽनेनार्थः प्रदीपेनेव घट इति व्यञ्जनं तच्चोपकरणेन्द्रियं शब्दादिपरिणतद्रव्यसङ्घातो वा, ततश्च व्यञ्जनेन–उपकरणेन्द्रियेण व्यञ्जनानांवा–शब्दादिपरिणतद्रव्याणामवग्रहो व्यञ्जनावग्रहः, अत्रार्थावग्रहस्य सुलक्ष्यत्वात् सकलेन्द्रियार्थव्यापकत्वाच्च प्रथममुपन्यासः, 'एवं जहेवे'त्यादि, यथैवाभिनिबोधिकज्ञानमधीतं तथैव मत्यज्ञानमप्यध्येयं, तच्चैवम्—'से किं तं वंजणोग्गहे ?, २ चउविहे पन्नत्ते, तंजहा–सोइंदियवंजणोग्गहे घाणिंदियवंजणोग्गहे जिब्भिंदियवंजणोग्गहे फासिंदियवंजणोग्गहे'

१–भावा अभावा हेतवोऽहेतवः कारणान्यकारणानि जीवा अजीवा भव्या अभव्यास्ततः सिद्धा असिद्धाः॥ (द्वादशाङ्गीरूपगणिपिटके)।
२–अविशेषिता मतिरेव सा सम्यग्दृष्टेर्मतिज्ञानं मिथ्यादृष्टेर्मत्यज्ञानं श्रुतमप्येवमेव ॥ १ ॥

८ शतके उद्देशः २ ज्ञानाज्ञानाधिकारः सू ३१८

॥३४४॥

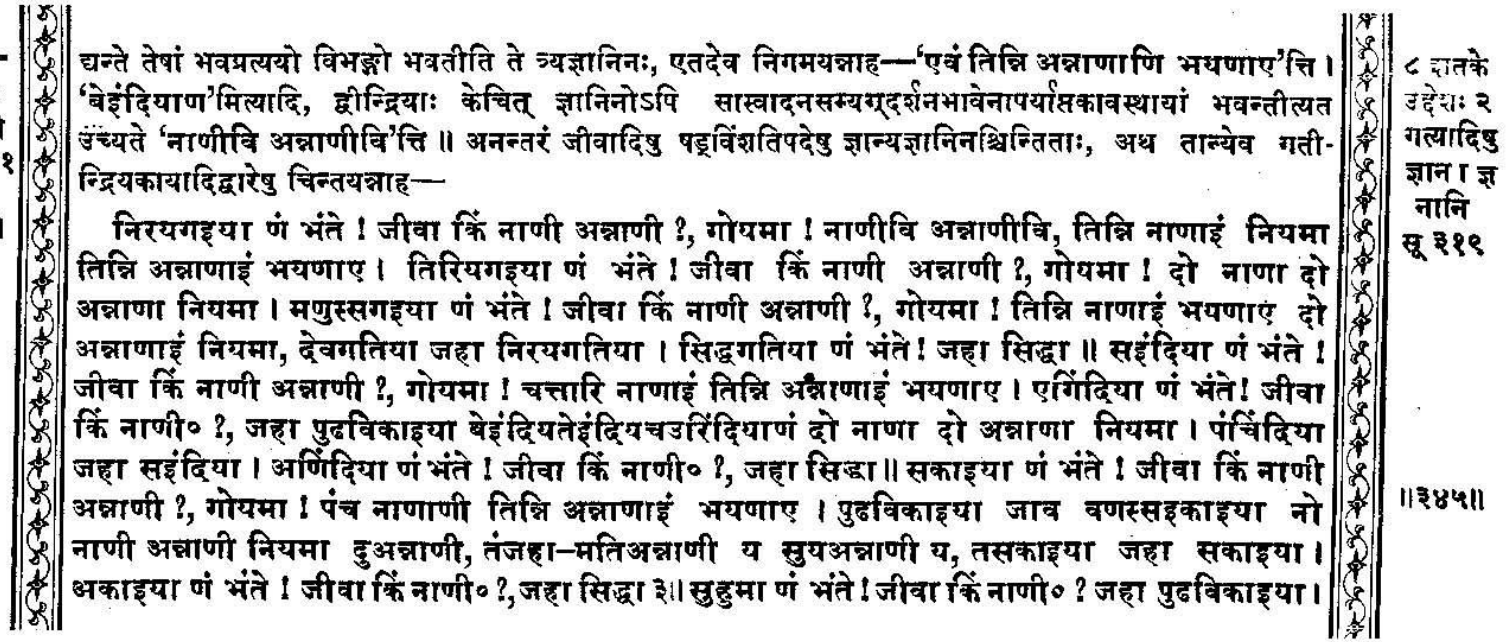
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानस्य भेद-प्रभेदा:

इत्यादि, यश्चेह विशेषस्तमाह—'नवरं एगट्ठियवज्जं ति इहाभिनिबोधिकज्ञाने 'उग्गिण्हणया अवधारणया सवणया अवलंबणया मेहे'त्यादीनि [पञ्च] पञ्च पञ्चैकार्थिकान्यवग्रहादीनामधीतानि, मत्यज्ञाने तु न तान्यध्येयानीति भावः, 'जाव नोइंदियधारणे'त्ति इदमन्त्यपदं यावदित्यर्थः, 'जं इमं अन्नाणिएहिं'ति यदिदम् 'अज्ञानिकैः' निर्ज्ञानैः, तत्राल्पज्ञानभावादधनवदशीलवद्वा सम्यग्दृष्टयोऽप्यज्ञानिकाः प्रोच्यन्तेऽत एवाह–मिथ्यादृष्टिभिः,'जहा नंदीए'त्ति, तत्रैवमेतत्सूत्रम्—'सच्छंदबुद्धिमइविगप्पियं तंजहा–भारहं रामायण'मित्यादि, तत्रावग्रहेहे बुद्धिः अवायधारणे च मतिः, स्वच्छन्देन–स्वाभिप्रायेण तत्त्वतः सर्वज्ञप्रणीतार्थानुसारमन्तरेण बुद्धिमतिभ्यां विकल्पितं स्वच्छन्दबुद्धिमतिविकल्पितं–स्वबुद्धिकल्पनाशिल्पनिर्मितमित्यर्थः 'चत्तारि य वेय'त्ति साम ऋक् यजुः अथर्वा चेति 'संगोवंग'त्ति इहाङ्गानि–शिक्षादीनि षट् उपाङ्गानि च–तद्व्याख्यानरूपाणि 'गामसंठिए'त्ति ग्रामालम्बनत्वाद् ग्रामाकारम्, एवमन्यान्यपि, नवरं 'वाससंठिए'त्ति भरतादिवर्षाकारं 'वासहरसंठिए'त्ति हिमवदादिवर्षधरपर्वताकारं 'हयसंठिए' अश्वाकारं, 'पसय'त्ति पसयसंठिए, तत्र पसयः–आटव्यो द्विखुरश्चतुष्पदविशेषः, एवं च नानाविधसंस्थानसंस्थितमिति ॥ अनन्तरं ज्ञानान्यज्ञानानि चोक्तानि, अथ ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च निरूपयन्नाह—'जीवा णं भंते !' इत्यादि, इह च नारकाधिकारे 'जे नाणी ते नियमा तिन्नाणी'ति सम्यग्दृष्टिनारकाणां भवप्रत्ययमवधिज्ञानमस्तीतिकृत्वा ते नियमात्रिज्ञानिनः, 'जे अन्नाणी ते अत्थेगतिया दुअन्नाणी अत्थेगतिया तिअन्नाणी'ति, कथम् ?, उच्यते, असञ्ज्ञिनः सन्तो ये नारकेषूत्पद्यन्ते तेषामपर्याप्तकावस्थायां विभङ्गाभावादाद्यमेवाज्ञानद्वयमिति ते द्व्यज्ञानिनः ये तु मिथ्यादृष्टिसञ्ज्ञिभ्य उत्प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानस्य भेद-प्रभेदा:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी या वृत्तिः १ ॥३४५॥

८ शतके उद्देशः २ गत्यादिषु ज्ञान। ज्ञानि सू ३१९

ज्यन्ते तेषां भवप्रत्ययो विभङ्गो भवतीति ते व्यज्ञानिनः, एतदेव निगमयन्नाह—'एवं तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए'त्ति। 'बेइंदियाण'मित्यादि, द्वीन्द्रियाः केचित् ज्ञानिनोऽपि सास्वादनसम्यग्दर्शनभावेनापर्याप्तकावस्थायां भवन्तीत्यत उच्यते 'नाणीवि अन्नाणीवि'त्ति ॥ अनन्तरं जीवादिषु षड्विंशतिपदेषु ज्ञान्यज्ञानिनश्चिन्तिताः, अथ तान्येव गतीन्द्रियकायादिद्वारेषु चिन्तयन्नाह—

निरयगइया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, तिन्नि नाणाइं नियमा तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। तिरियगइया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! दो नाणा दो अन्नाणा नियमा। मणुस्सगइया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! तिन्नि नाणाइं भयणाए दो अन्नाणाइं नियमा, देवगतिया जहा निरयगतिया। सिद्धगतिया णं भंते ! जहा सिद्धा ॥ सइंदिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! चत्तारि नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। एगिंदिया णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?, जहा पुढविकाइया बेइंदियतेइंदियचउरिंदियाणं दो नाणा दो अन्नाणा नियमा। पंचिंदिया जहा सइंदिया। अणिंदिया णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?, जहा सिद्धा॥ सकाइया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! पंच नाणाणी तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया नो नाणी अन्नाणी नियमा दुअन्नाणी, तंजहा–मतिअन्नाणी य सुयअन्नाणी य, तसकाइया जहा सकाइया। अकाइया णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?, जहा सिद्धा ३॥ सुहुमा णं भंते ! जीवा किं नाणी० ? जहा पुढविकाइया।

॥३४५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक-गत्यादिषु ज्ञान-अज्ञानानि

प्रत सूत्रांक [३१९]

दीप अनुक्रम [३९२]

बादरा णं भंते ! जीवा किं नाणी० ? जहा सकाइया । नोसुहुमानोबादरा णं भंते ! जीवा० जहा सिद्धा ४ ॥ पज्जत्ता णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?, जहा सकाइया । पज्जत्ता णं भंते ! नेरइया किं नाणी० ?, तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा नियमा जहा नेरइए एवं जाव थणियकुमारा । पुढविकाइया जहा एगिंदिया, एवं जाव चउरिंदिया । पज्जत्ता णं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया किं नाणी अन्नाणी ?, तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा भयणाए । मणुस्सा जहा सकाइया । वाणमंतरा जोइसिया वेमाणिया जहा नेरइया । अपज्जत्ता णं भंते ! जीवा किं नाणी० २ ?, तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा भयणाए । अपज्जत्ता णं भंते ! नेरतिया किं नाणी अन्नाणी ?, तिन्नि नाणा नियमा तिन्नि अन्नाणा भयणाए, एवं जाव थणियकुमारा । पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया जहा एगिंदिया । बेंदियाणं पुच्छा, दो नाणा दो अन्नाणा णियमा, एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं । अपज्जत्तगा णं भंते ! मणुस्सा किं नाणी अन्नाणी ?, तिन्नि नाणाइं भयणाए दो अन्नाणाइं नियमा, वाणमंतरा जहा नेरइया, अपज्जत्तगा जोइसियवेमाणिया णं तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा नियमा । नो पज्जत्तगा नो अपज्जत्तगा णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?, जहा सिद्धा ५ ॥ निरयभवत्था णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, जहा निरयगतिया । तिरियभवत्था णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, तिन्नि नाणा तिन्नि अन्नाणा भयणाए । मणुस्सभवत्था णं० जहा सकाइया । देवभवत्था णं भंते ! जहा निरयभवत्था । अभवत्था जहा सिद्धा ६ ॥ भवसिद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक-गत्यादिषु ज्ञान-अज्ञानानि

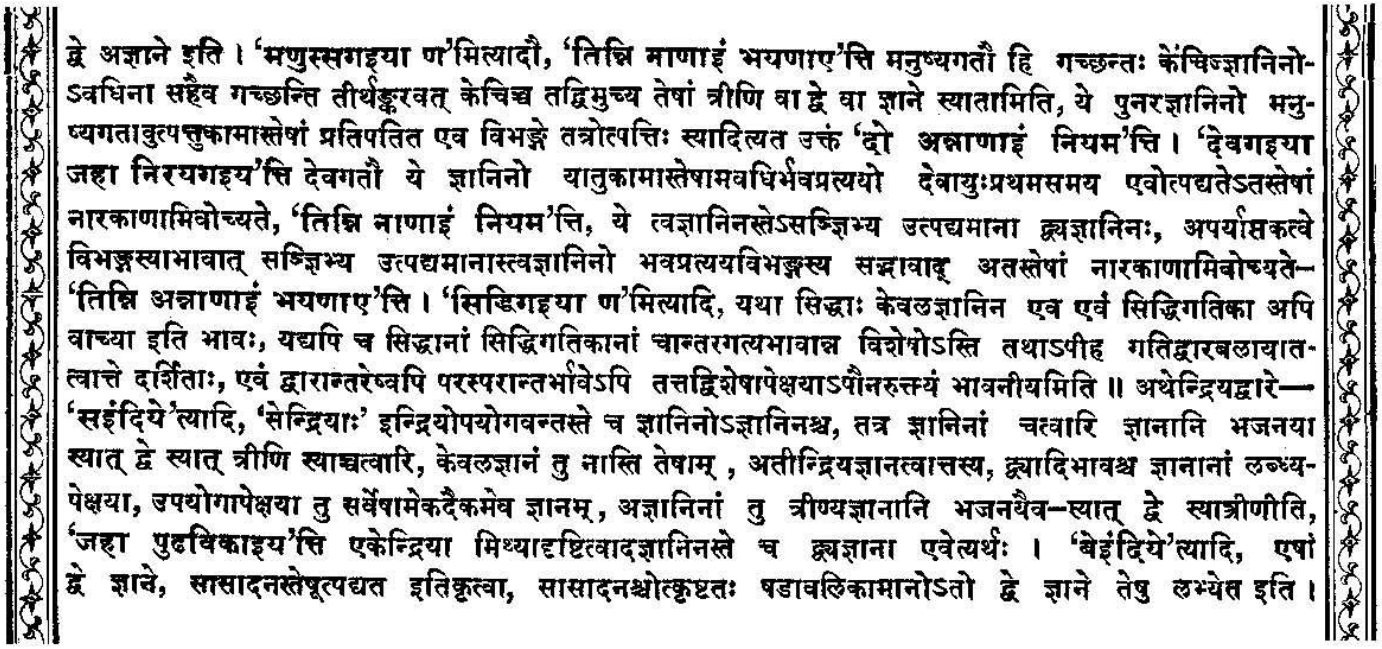
जहा सकाइया, अभवसिद्धियाणं पुच्छा, गोयमा ! नो नाणी अन्नाणी तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए । नोभवसिद्धियानोअभवसिद्धिया णं भंते ! जीवा० जहा सिद्धा ७ ॥ सन्नीणं पुच्छा जहा सइंदिया, असन्नी जहा बेइंदिया, नोसन्नीनोअसन्नी जहा सिद्धा ८ ॥ (सूत्रं ३१९) ॥

'निरयगइया ण'मित्यादि, गत्यादिद्वाराणि चैतानि—"गइइंदिए य काए सुहुमे पज्जत्तए भवत्थे य । भवसिद्धिए य सन्नी लद्धी उवओग जोगे य ॥ १ ॥ लेसा कसाय वेए आहारे नाणगोयरे काले । अंतर अप्पाबहुयं च पज्जवा चेह दाराइं ॥ २ ॥" तत्र च निरये गतिः—गमनं येषां ते निरयगतिकास्तेषाम्, इह च सम्यग्दृष्टयो मिथ्यादृष्टयो वा ज्ञानिनोऽज्ञानिनो वा ये पञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्येभ्यो नरके उत्पत्तुकामा अन्तरगतौ वर्त्तन्ते ते निरयगतिका विवक्षिताः, एतत्प्रयोजनत्वाद्गतिग्रहणस्येति, 'तिन्नि नाणाइं नियम'त्ति अवधेर्भवप्रत्ययत्वेनान्तरगतावपि भावात् 'तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए'त्ति असञ्ज्ञिनां नरके गच्छतां द्वे अज्ञाने अपर्याप्तकत्वे विभङ्गस्याभावात् सञ्ज्ञिनां तु मिथ्यादृष्टीनां त्रीण्यज्ञानानि भवप्रत्ययविभङ्गस्य सद्भावाद् अतस्त्रीण्यज्ञानानि भजनयेत्युच्यत इति । 'तिरियगइया णं'ति तिर्यक्षु गतिः-गमनं येषां ते तिर्यग्गतिकास्तेषां तदपान्तरालवर्त्तिनां 'दो नाण'त्ति सम्यग्दृष्टयो ह्यवधिज्ञाने प्रपतिते एव तिर्यक्षु गच्छन्ति तेन तेषां द्वे एव ज्ञाने 'दो अन्नाणे'त्ति मिथ्यादृष्टयोऽपि हि विभङ्गज्ञाने प्रतिपतिते एव तिर्यक्षु गच्छन्ति तेन तेषां

१ गतय एकेन्द्रियादिः पृथ्वीकायादिः सूक्ष्मः पर्याप्तः भवस्थश्च भवसिद्धिकश्च सञ्ज्ञी लब्धिरुपयोगो योगश्च ॥ १ ॥ लेश्या कषायः वेदः आहारः ज्ञानविषयः कालः अन्तरम् अल्पबहुत्वं च पर्यायाश्चेह द्वाराणि ॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

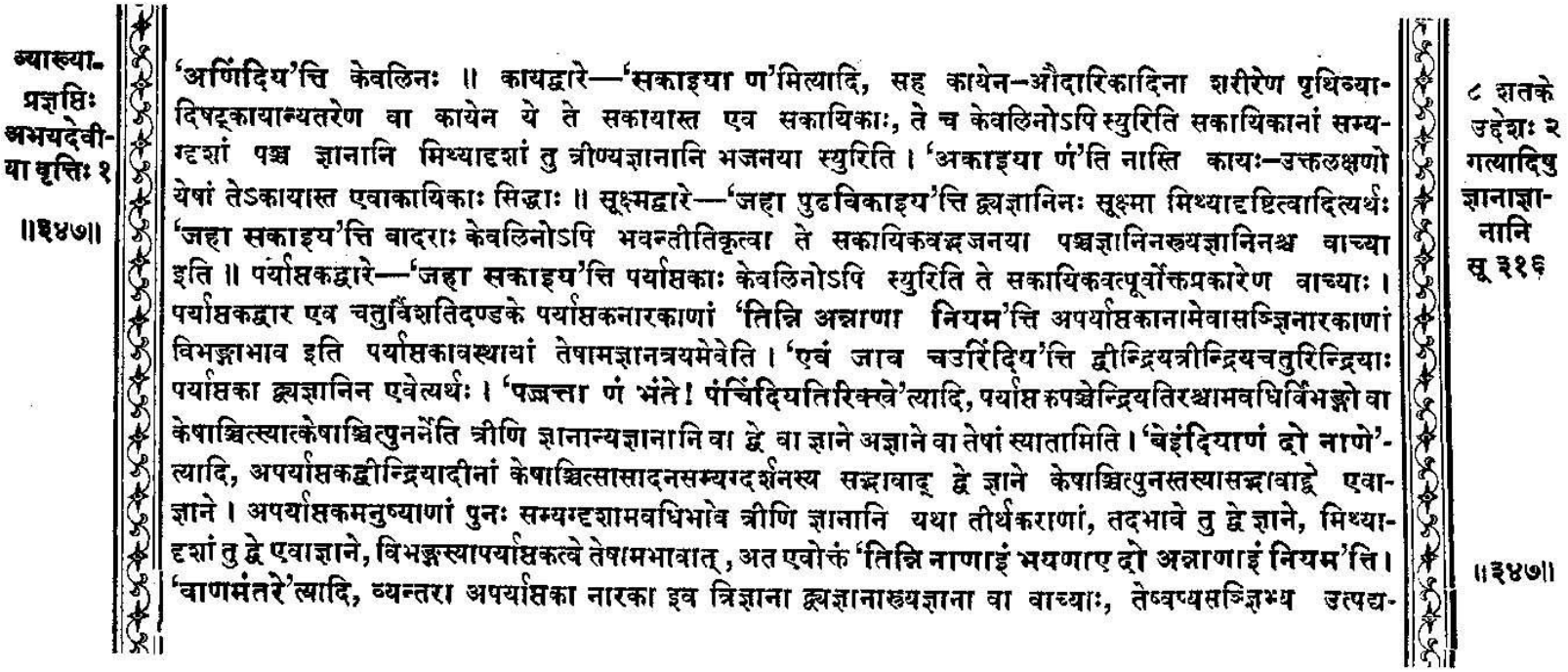
नैरयिक-गत्यादिषु ज्ञान-अज्ञानानि



द्वे अज्ञाने इति । 'मणुस्सगइया ण'मित्यादौ, 'तिन्नि नाणाइं भयणाए'त्ति मनुष्यगतौ हि गच्छन्तः केचिज्ज्ञानिनोऽवधिना सहैव गच्छन्ति तीर्थङ्करवत् केचिच्च तद्विमुच्य तेषां त्रीणि वा द्वे वा ज्ञाने स्यातामिति, ये पुनरज्ञानिनो मनुष्यगतावुत्पत्तुकामास्तेषां प्रतिपतित एव विभङ्गे तत्रोत्पत्तिः स्यादित्यत उक्तं 'दो अन्नाणाइं नियम'त्ति । 'देवगइया जहा निरयगइय'त्ति देवगतौ ये ज्ञानिनो यातुकामास्तेषामवधिर्भवप्रत्ययो देवायुःप्रथमसमय एवोत्पद्यतेऽतस्तेषां नारकाणामिवोच्यते, 'तिन्नि नाणाइं नियम'त्ति, ये त्वज्ञानिनस्तेऽसञ्ज्ञिभ्य उत्पद्यमाना द्व्यज्ञानिनः, अपर्याप्तकत्वे विभङ्गस्याभावात् सञ्ज्ञिभ्य उत्पद्यमानास्त्वज्ञानिनो भवप्रत्ययविभङ्गस्य सद्भावाद् अतस्तेषां नारकाणामिवोच्यते– 'तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए'त्ति । 'सिद्धिगइया ण'मित्यादि, यथा सिद्धाः केवलज्ञानिन एव एवं सिद्धिगतिका अपि वाच्या इति भावः, यद्यपि च सिद्धानां सिद्धिगतिकानां चान्तरगत्यभावान्न विशेषोऽस्ति तथाऽपीह गतिद्वारबलायातत्वात्ते दर्शिताः, एवं द्वारान्तरेष्वपि परस्परान्तर्भावेऽपि तत्तद्विशेषापेक्षयाऽपौनरुक्त्यं भावनीयमिति ॥ अथेन्द्रियद्वारे— 'सइंदिये'त्यादि, 'सेन्द्रियाः' इन्द्रियोपयोगवन्तस्ते च ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च, तत्र ज्ञानिनां चत्वारि ज्ञानानि भजनया स्यात् द्वे स्यात् त्रीणि स्याच्चत्वारि, केवलज्ञानं तु नास्ति तेषाम् , अतीन्द्रियज्ञानत्वात्तस्य, द्व्यादिभावश्च ज्ञानानां लब्ध्यपेक्षया, उपयोगापेक्षया तु सर्वेषामेकदैकमेव ज्ञानम्, अज्ञानिनां तु त्रीण्यज्ञानानि भजनयैव–स्यात् द्वे स्यात्रीणीति, 'जहा पुढविकाइय'त्ति एकेन्द्रिया मिथ्यादृष्टित्वादज्ञानिनस्ते च द्व्यज्ञाना एवेत्यर्थः । 'बेइंदिये'त्यादि, एषां द्वे ज्ञाने, सासादनस्तेषूत्पद्यत इतिकृत्वा, सासादनश्चोत्कृष्टतः षडावलिकामानोऽतो द्वे ज्ञाने तेषु लभ्येत इति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक-गत्यादिषु ज्ञान-अज्ञानानि



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३४७॥

'अणिंदिय'त्ति केवलिनः ॥ कायद्वारे—'सकाइया ण'मित्यादि, सह कायेन–औदारिकादिना शरीरेण पृथिव्या-दिषट्कायान्यतरेण वा कायेन ये ते सकायास्त एव सकायिकाः, ते च केवलिनोऽपि स्युरिति सकायिकानां सम्य-ग्दृशां पञ्च ज्ञानानि मिथ्यादृशां तु त्रीण्यज्ञानानि भजनया स्युरिति । 'अकाइया णं'ति नास्ति कायः–उक्तलक्षणो येषां तेऽकायास्त एवाकायिकाः सिद्धाः ॥ सूक्ष्मद्वारे—'जहा पुढविकाइय'त्ति द्व्यज्ञानिनः सूक्ष्मा मिथ्यादृष्टित्वादित्यर्थः 'जहा सकाइय'त्ति बादराः केवलिनोऽपि भवन्तीतिकृत्वा ते सकायिकवद्भजनया पञ्चज्ञानिनस्त्र्यज्ञानिनश्च वाच्या इति ॥ पर्याप्तकद्वारे—'जहा सकाइय'त्ति पर्याप्तकाः केवलिनोऽपि स्युरिति ते सकायिकवत्पूर्वोक्तप्रकारेण वाच्याः । पर्याप्तकद्वार एव चतुर्विंशतिदण्डके पर्याप्तकनारकाणां 'तिन्नि अन्नाणा नियम'त्ति अपर्याप्तकानामेवासञ्ज्ञिनारकाणां विभङ्गाभाव इति पर्याप्तकावस्थायां तेषामज्ञानत्रयमेवेति । 'एवं जाव चउरिंदिय'त्ति द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियाः पर्याप्तका द्व्यज्ञानिन एवेत्यर्थः । 'पञ्चत्ता णं भंते! पंचिंदियतिरिक्खे'त्यादि, पर्याप्तकपञ्चेन्द्रियतिरश्चामवधिर्विभङ्गो वा केषाञ्चित्स्यात्केषाञ्चित्पुनर्नेति त्रीणि ज्ञानान्यज्ञानानि वा द्वे वा ज्ञाने अज्ञाने वा तेषां स्यातामिति । 'बेइंदियाणं दो नाणे'-त्यादि, अपर्याप्तकद्वीन्द्रियादीनां केषाञ्चित्सासादनसम्यग्दर्शनस्य सद्भावाद् द्वे ज्ञाने केषाञ्चित्पुनस्तस्यासद्भावाद्वे एवा-ज्ञाने । अपर्याप्तकमनुष्याणां पुनः सम्यग्दृशामवधिभावे त्रीणि ज्ञानानि यथा तीर्थकराणां, तदभावे तु द्वे ज्ञाने, मिथ्या-दृशां तु द्वे एवाज्ञाने, विभङ्गस्यापर्याप्तकत्वे तेषामभावात्, अत एवोक्तं 'तिन्नि नाणाइं भयणाए दो अन्नाणाइं नियम'त्ति । 'वाणमंतरे'त्यादि, व्यन्तरा अपर्याप्तका नारका इव त्रिज्ञाना द्व्यज्ञानास्त्र्यज्ञाना वा वाच्याः, तेष्वप्यसञ्ज्ञिभ्य उत्पद्य-

८ शतके उद्देशः २ गत्यादिषु ज्ञानाज्ञा-नानि सू ३१९

॥३४७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

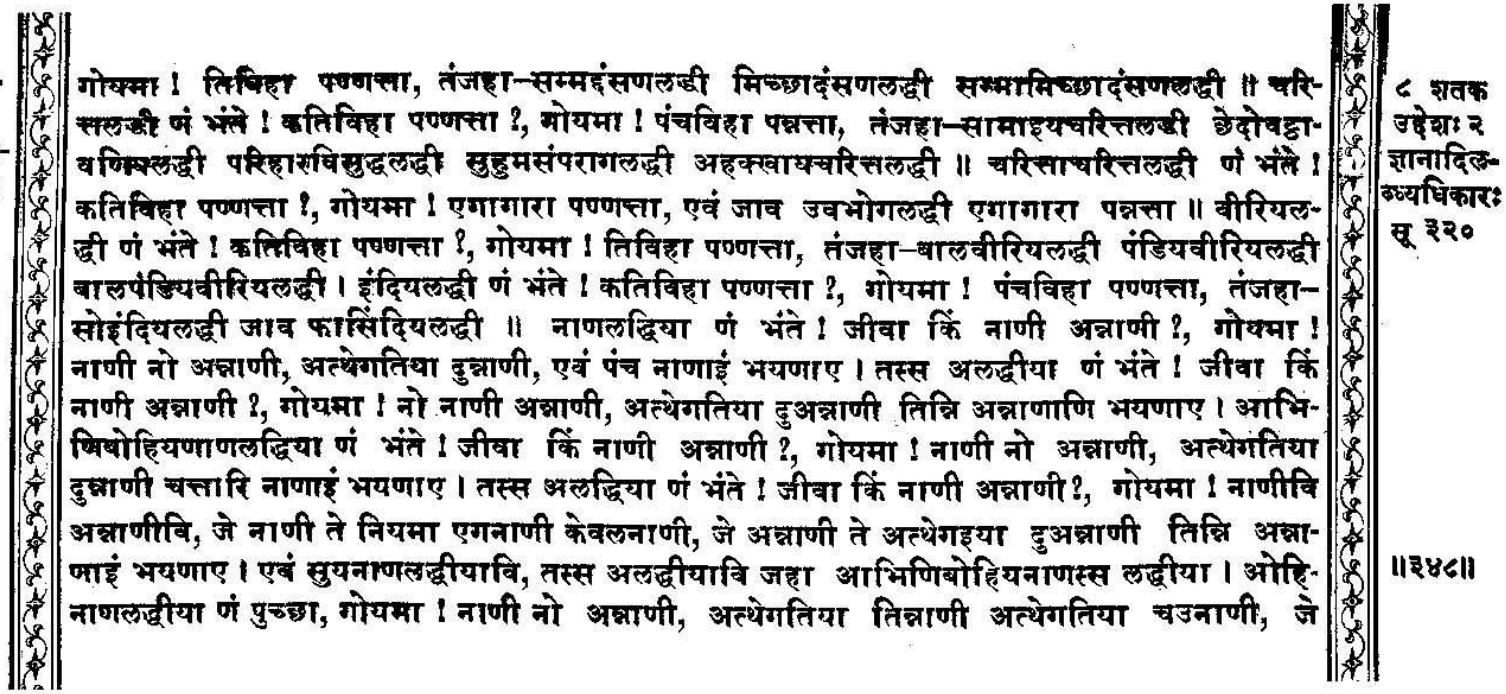
नैरयिक-गत्यादिषु ज्ञान-अज्ञानानि

मानानामपर्याप्तकानां विभङ्गाभावात् शेषाणां चावधेर्विभङ्गस्य वा भावात्। 'जोइसिए'त्यादि, एतेषु हि सञ्ज्ञिभ्य एवोत्पद्यन्ते, तेषां चापर्याप्तकत्वेऽपि भवप्रत्ययस्यावधेर्विभङ्गस्य चावश्यम्भावात् त्रीणि ज्ञानान्यज्ञानानि वा स्युरिति। 'नोपज्जत्तगनोअपज्जत्तग'त्ति सिद्धाः ॥ भवस्थद्वारे—'निरयभवत्था ण'मित्यादि, निरयभवे तिष्ठन्तीति निरयभवस्थाः—प्राप्तोत्पत्तिस्थानाः, ते च यथा निरयगतिकास्त्रिज्ञाना द्व्यज्ञानास्त्र्यज्ञानाश्चोक्तास्तथा वाच्या इति ॥ भवसिद्धिकद्वारे—'जहा सकाइय'त्ति भवसिद्धिकाः केवलिनोऽपीति ते सकायिकवद्भजनया पञ्चज्ञानाः तथा यावत्सम्यक्त्वं न प्रतिपन्नास्तावद्भजनयैव त्र्यज्ञानाश्च वाच्या इति। अभवसिद्धिकानां त्वज्ञानत्रयं भजनया स्यात् सदा मिथ्यादृष्टित्वात्तेषामत उक्तं 'नो नाणी अन्नाणी'त्यादीति ॥ सञ्ज्ञिद्वारे—'जहा सइंदिय'त्ति ज्ञानानि चत्वारि भजनया अज्ञानानि च त्रीणि तथैवेत्यर्थः। 'असन्नी जहा बेइंदिय'त्ति अपर्याप्तकावस्थायां ज्ञानद्वयमपि सासादनतया स्यात्, पर्याप्तकावस्थायां त्वज्ञानद्वयमेवेत्यर्थः ॥ लब्धिद्वारे लब्धिभेदान् दर्शयन्नाह—

कइविहा णं भंते ! लद्धी पण्णत्ता ?, गोयमा ! दसविहा लद्धी पण्णत्ता, तंजहा–नाणलद्धी १ दंसणलद्धी २ चरित्तलद्धी ३ चरित्ताचरित्तलद्धी ४ दाणलद्धी ५ लाभलद्धी ६ भोगलद्धी ७ उवभोगलद्धी ८ वीरियलद्धी ९ इंदियलद्धी १०। णाणलद्धी णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा–आभिणिबोहियणाणलद्धी जाव केवलणाणलद्धी ॥ अन्नाणलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तंजहा–मइअन्नाणलद्धी सुयअन्नाणलद्धी विभंगनाणलद्धी ॥ दंसणलद्धी णं भंते ! कतिविहा पन्नत्ता ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक-गत्यादिषु ज्ञान-अज्ञानानि, 'लब्धि'शब्दस्य अर्थ एवं भेदा:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १

॥३४८॥

गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तंजहा–सम्मद्दंसणलद्धी मिच्छादंसणलद्धी सम्मामिच्छादंसणलद्धी ॥ चरित्तलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पन्नत्ता, तंजहा–सामाइयचरित्तलद्धी छेदोवट्ठावणियलद्धी परिहारविसुद्धलद्धी सुहुमसंपरागलद्धी अहक्खायचरित्तलद्धी ॥ चरित्ताचरित्तलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! एगागारा पण्णत्ता, एवं जाव उवभोगलद्धी एगागारा पन्नत्ता ॥ वीरियलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तंजहा–बालवीरियलद्धी पंडियवीरियलद्धी बालपंडियवीरियलद्धी । इंदियलद्धी णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा–सोइंदियलद्धी जाव फासिंदियलद्धी ॥ नाणलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणी नो अन्नाणी, अत्थेगतिया दुन्नाणी, एवं पंच नाणाइं भयणाए । तस्स अलद्धीया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नो नाणी अन्नाणी, अत्थेगतिया दुअन्नाणी तिन्नि अन्नाणाणि भयणाए । आभिनिबोहियणाणलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणी नो अन्नाणी, अत्थेगतिया दुन्नाणी चत्तारि नाणाइं भयणाए । तस्स अलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते नियमा एगनाणी केवलनाणी, जे अन्नाणी ते अत्थेगइया दुअन्नाणी तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए । एवं सुयनाणलद्धीयावि, तस्स अलद्धीयावि जहा आभिणिबोहियनाणस्स लद्धीया । ओहिनाणलद्धीया णं पुच्छा, गोयमा ! नाणी नो अन्नाणी, अत्थेगतिया तिन्नाणी अत्थेगतिया चउनाणी, जे

८ शतक उद्देशः २ ज्ञानादिलब्ध्यधिकारः सू ३२०

॥३४८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'लब्धि'शब्दस्य अर्थ एवं भेदाः, ज्ञानादि अधिकारः

प्रत सूत्रांक [३२०]

दीप अनुक्रम [३९३]

तिन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी, जे चउनाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुय०ओहि० मणपज्जवनाणी। तस्स अलद्धीया णं भंते! जीवा किं नाणी०, गोयमा! नाणीवि अन्नाणीवि। एवं ओहिनाणवज्जाइं चत्तारि नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। मणपज्जवनाणलद्धिया णं पुच्छा, गोयमा! णाणी णो अन्नाणी, अत्थेगतिया तिन्नाणी अत्थेगतिया चउनाणी, जे तिन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयणाणी मणपज्जवणाणी, जे चउनाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी मणपज्जवनाणी, तस्स अलद्धीया णं पुच्छा, गोयमा! णाणीवि अन्नाणीवि, मणपज्जवणाणवज्जाइं चत्तारि णाणाइं, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए। केवलनाणलद्धिया णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! नाणी नो अन्नाणी, नियमा एगणाणी केवलनाणी, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा! नाणीवि अन्नाणिवि, केवलनाणवज्जाइं चत्तारि णाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए॥ अन्नाणलद्धिया णं पुच्छा, गोयमा! नो नाणी अन्नाणी, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा! नाणी नो अन्नाणी, पंच नाणाइं भयणाए जहा अन्नाणस्स लद्धिया अलद्धिया य भणिया एवं मइअन्नाणस्स सुयअन्नाणस्स य लद्धिया अलद्धिया य भाणियवा। विभंगनाणलद्धियाणं तिन्नि अन्नाणाइं नियमा, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए दो अन्नाणाइं नियमा॥ दंसणलद्धिया णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! नाणीवि अन्नाणीवि, पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धिया णं भंते! जीवा किं नाणी अन्नाणी?, गोयमा! तस्स अलद्धिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकार:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३४९॥

नत्थि। सम्मद्दंसणलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, मिच्छा-दंसणलद्धिया णं भंते ! पुच्छा, तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं तिन्नि य अन्ना-णाइं भयणाए, सम्मामिच्छादंसणलद्धिया य अलद्धिया जहा मिच्छादंसणलद्धी अलद्धी तहेव भाणियव्वं ॥ चरित्तलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! पंच नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं मणपज्जवनाणवज्जाइं चत्तारि नाणाइं तिन्नि य अन्नाणाइं भयणाए, सामाइयचरित्तलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणी केवलवज्जाइं चत्तारि नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं तिन्नि य अन्नाणाइं भयणाए, एवं जहा सामाइयचरित्तलद्धिया अलद्धिया य भणिया एवं जहा जाव अहक्खायचरित्तलद्धिया अलद्धिया य भाणियव्वा, नवरं अहक्खायचरित्तलद्धिया पंच नाणाइं भ०, चरित्ताचरित्तलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नाणी नो अन्नाणी, अत्थेगइया दुण्णा-णी अत्थेगतिया तिन्नाणी, जे दुन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी य सुयनाणी य, जे तिन्नाणी ते आभि० सुयना० ओहिना०,तस्स अल० पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए ४ ॥ दाणलद्धियणं पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अ० पुच्छा, गोयमा ! नाणी नो अन्नाणी, नियमा एगनाणी केवलनाणी। एवं जाव वीरियस्स लद्धी अलद्धी य भाणियव्वा ॥ बालवीरियलद्धियाणं तिन्नि नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए। पंडियवीरियलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धिया-

८ शतके उद्देशः२ ज्ञानाज्ञाना नि गत्यादौ सू० ३२०

॥३४९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकार:

णं मणपज्जवनाणवज्जाइं णाणाइं अन्नाणाणि तिन्नि य भयणाए। बालपंडियवीरियलद्धियाणं भंते ! जीवा० तिन्नि नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए ॥ इंदियलद्धियाणं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! चत्तारि णाणाइं तिन्नि य अन्नाणाइं भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा ! नाणी नो अन्नाणी नियमा एगनाणी केवलनाणी, सोइंदियलद्धियाणं जहा इंदियलद्धिया, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते अत्थेगतिया दुन्नाणी अत्थेगतिया एगन्नाणी जे दुन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी जे एगनाणी ते केवलनाणी, जे अन्नाणी ते नियमा दुअन्नाणी, तंजहा–मइअन्नाणी य सुयअन्नाणी य, चक्खिंदियघाणिंदियाणं लद्धियाणं अलद्धियाण य जहेव सोइंदियस्स, जिब्भिंदियलद्धियाणं चत्तारि णाणाइं तिन्नि य अन्नाणाणि भयणाए, तस्स अलद्धियाणं पुच्छा, गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि जे नाणी ते नियमा एगनाणी केवलनाणी, जे अन्नाणी ते नियमा दुअन्नाणी, तंजहा–मइअन्नाणी य सुयअन्नाणी य, फासिंदियलद्धियाणं अलद्धियाणं जहा इंदियलद्धिया य अलद्धिया य ॥ (सूत्रं ३२०) ॥

'कतिविहा ण'मित्यादि, तत्र लब्धिः–आत्मनो ज्ञानादिगुणानां तत्तत्कर्मक्षयादितो लाभः, सा च दशविधा, तत्र ज्ञानस्य–विशेषबोधस्य पञ्चप्रकारस्य तथाविधज्ञानावरणक्षयक्षयोपशमाभ्यां लब्धिर्ज्ञानलब्धिः, एवमन्यत्रापि, नवरं च दर्शनं–रुचिरूप आत्मनः परिणामः, चारित्रं–चारित्रमोहनीयक्षयक्षयोपशमोपशमजो जीवपरिणामः, तथा चरित्रं च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकारः

प्रत सूत्रांक [३२०]

दीप अनुक्रम [३९३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३५०॥

तदचरित्रं चेति चरित्राचरित्रं–संयमासंयमः, तच्चाप्रत्याख्यानकषायक्षयोपशमजो जीवपरिणामः, दानादिलब्धयस्तु पञ्च-प्रकारान्तरायक्षयक्षयोपशमसम्भवाः, इह च सकृद्भोजनमशनादीनां भोगः, पौनःपुन्येन चोपभोजनमुपभोगः, स च वस्त्रभवनादेः, दानादीनि तु प्रसिद्धानीति, तथा इन्द्रियाणां–स्पर्शनादीनां मतिज्ञानावरणक्षयोपशमसम्भूतानामेकेन्द्रिया-दिजातिनामकर्मोदयनियमितक्रमाणां पर्याप्तकनामकर्मादिसामर्थ्यसिद्धानां द्रव्यभावरूपाणां लब्धिरात्मनीतीन्द्रियलब्धिः ॥ अथ ज्ञानलब्धेर्विपर्ययभूताऽज्ञानलब्धिरित्यज्ञानलब्धिनिरूपणायाह—'अन्नाणलद्धी'त्यादि ॥ 'सम्मद्दंसणे'त्यादि, इह स-म्यग्दर्शनं मिथ्यात्वमोहनीयकर्मणुवेदनोपशम१क्षय२क्षयोपशम ३ समुत्थ आत्मपरिणामः, मिथ्यादर्शनमशुद्धमिथ्यात्व-दलिकोदयसमुत्थो जीवपरिणामः, सम्यग्मिथ्यादर्शनं त्वर्द्धविशुद्धमिथ्यात्वदलिकोदयसमुत्थ आत्मपरिणाम एव ॥ 'सामाइयचरित्तलद्धि'त्ति सामायिकं–सावद्ययोगविरतिरूपं एतदेव चरित्रं सामायिकचरित्रं तस्य लब्धिः सामायिकच-रित्रलब्धिः, सामायिकचरित्रं च द्विधा–इत्वरं यावत्कथिकं च, तत्राल्पकालमित्वरं, तच्च भरतैरावतेषु प्रथमपश्चिमतीर्थ-करतीर्थेष्वनारोपितव्रतस्य शिक्षकस्य भवति, यावत्कथिकं तु यावज्जीविकं, तच्च मध्यमवैदेहिकतीर्थङ्करतीर्थान्तर्गतसाधू-नामवसेयं, तेषामुपस्थापनाया अभावात्, नन्वितरस्यापि यावज्जीवितया प्रतिज्ञानात् तस्यैव चोपस्थापनायां परित्या-गात् कथं न प्रतिज्ञालोपः ?, अत्रोच्यते, अतिचाराभावात्, तस्यैव सामान्यतः सावद्ययोगनिवृत्तिरूपेणावस्थितस्य शुद्धयन्तरापादनेन सञ्ज्ञामात्रविशेषादिति । 'छेओवट्ठावणियचरित्तलद्धि'त्ति छेदे–प्राक्तनसंयमस्य व्यवच्छेदे सति यदुपस्थापनीयं–साधावारोपणीयं तच्छेदोपस्थापनीयं, पूर्वपर्यायच्छेदेन महाव्रतानामारोपणमित्यर्थः, तच्च सातिचारमन-

८ शतके उद्देशः २ ज्ञानाज्ञानानि गत्यादौ सू ३२०

॥३५०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३२०]

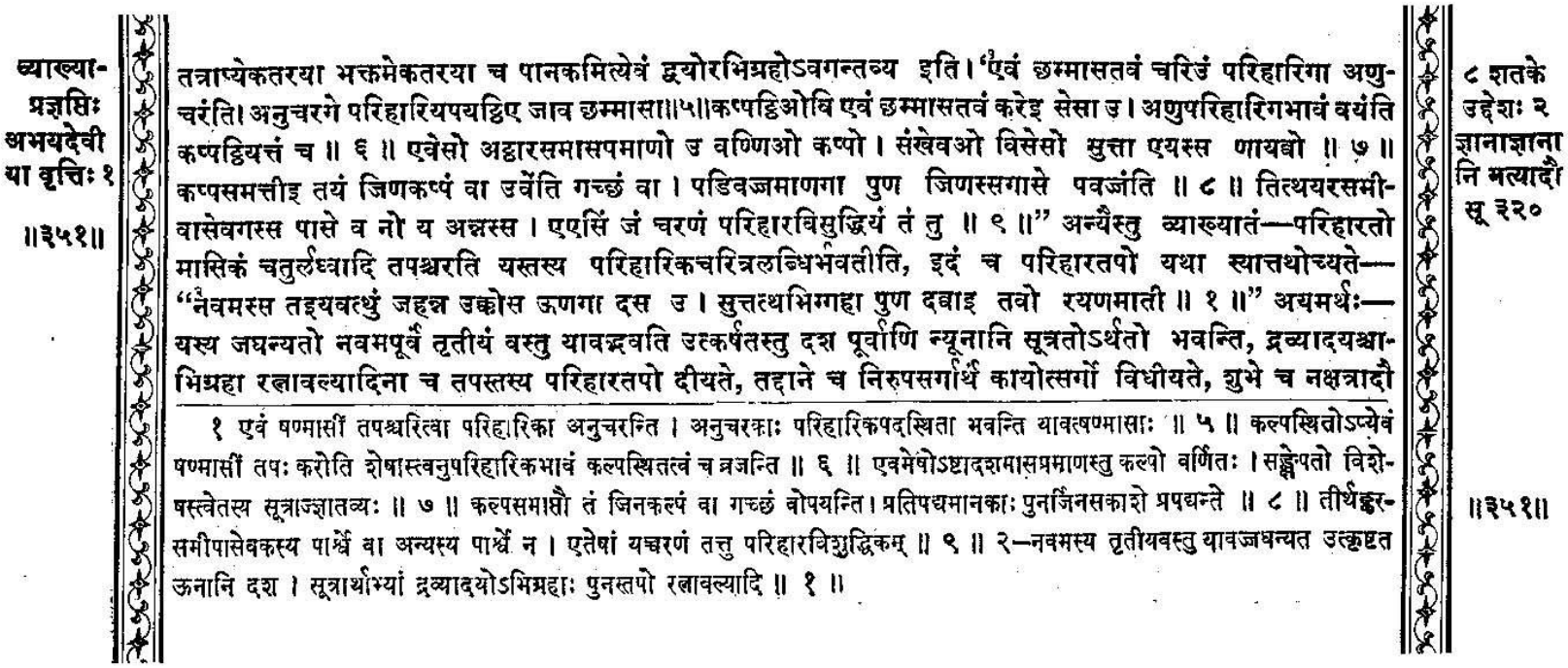
दीप अनुक्रम [३९३]

तिचारं च, सत्राप्तातिचारमित्वरसामायिकस्य शिक्षकस्यारोप्यते, तीर्थान्तरसङ्क्रान्तौ वा, यथा पार्श्वनाथतीर्थाद्वर्द्धमानस्वामितीर्थं सङ्क्रामतः पञ्चयामधर्मप्राप्तौ, सातिचारं तु मूलगुणघातिनो यद्व्रतारोपणं, तच्च तच्चरित्रं च छेदोपस्थापनीयचरित्रं तस्य लब्धिश्छेदोपस्थापनीयचरित्रलब्धिः, 'परिहारविसुद्धियचरित्तलद्धि'त्ति परिहारः–तपोविशेषस्तेन विशुद्धिर्यस्मिंस्तत्परिहारविशुद्धिकं, शेषं तथैव, एतच्च द्विविधं–निर्विशमानकं निर्विष्टकायिकं च, तत्र निर्विशमानकास्तदासेवकास्तदव्यतिरेकात्तदपि निर्विशमानकम्, आसेवितविवक्षितचारित्रकायास्तु निर्विष्टकायास्त एव निर्विष्टकायिकास्तदव्यतिरेकात्तदपि निर्विष्टकायिकमिति, इह च नवको गणो भवति, तत्र चत्वारः परिहारिका भवन्ति, अपरे तु तद्वैयावृत्यकराश्चत्वार एवानुपरिहारिकाः, एकस्तु कल्पस्थितो वाचनाचार्यो गुरुभूत इत्यर्थः, एतेषां च निर्विशमानकानामयं परिहारः—'परिहारियाण उ तवो जहन्न मज्झो तहेव उक्कोसो । सीउण्हवासकाले भणिओ धीरेहिं पत्तेयं ॥ १ ॥ तत्थ जहन्नो गिम्हे चउत्थ छट्ठं तु होइ मज्झिमओ । अट्ठममिह उक्कोसो एत्तो सिसिरे पवक्खामि ॥ २ ॥ सिसिरे उ जहन्नाई छट्ठाइं दसमचरिमगा होंति । वासासु अट्ठमाइं बारसपज्जन्तओ णेइ ॥ ३ ॥ पारणगे आयामं पंचसु गह दोसऽभिग्गहो भिक्खे । कप्पट्ठिया य पइदिण करेंति एमेव आयामं ॥ ४ ॥' इह सप्तस्वेषणासु मध्ये आद्ययोरग्रह एव, पञ्चसु पुनर्ग्रहः,

१–परिहारिकाणां तपो जघन्यं मध्यमं तथैवोत्कृष्टं । शीतोष्णवर्षाकाले धीरैः प्रत्येकं भणितम् ॥ १ ॥ तत्र जघन्यं ग्रीष्मे चतुर्थः षष्ठं तु भवति मध्यमः । इहाष्टम उत्कृष्टं इतः शिशिरे प्रवक्ष्यामि ॥ २ ॥ शिशिरे तु जघन्यादिषु षष्ठाद्यं दशमचरमं भवति । वर्षासवष्टमादि ॥ द्वादशमपर्यन्तं नयति ततः ॥३॥ पारणके आचाम्लं पञ्चस्वेकस्य ग्रहः द्वयोरभिग्रहो भिक्षायाम् । कल्पस्थिताश्च प्रतिदिनमाचाम्लमेव कुर्वन्ति ॥४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकार:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी या वृत्तिः १ ॥३५१॥

तत्राप्येकतरया भक्तमेकतरया च पानकमित्येवं द्वयोरभिग्रहोऽवगन्तव्य इति। 'एवं छम्मासतवं चरिउं परिहारिगा अणुचरंति। अनुचरगे परिहारियपयट्ठिए जाव छम्मासा॥५॥कप्पट्ठिओवि एवं छम्मासतवं करेइ सेसा उ। अणुपरिहारिगभावं वयंति कप्पट्ठियत्तं च ॥ ६ ॥ एवेसो अट्ठारसमासपमाणो उ वण्णिओ कप्पो। संखेवओ विसेसो सुत्ता एयस्स णायव्वो ॥ ७ ॥ कप्पसमत्तीइ तयं जिणकप्पं वा उवेंति गच्छं वा। पडिवज्जमाणगा पुण जिणस्सगासे पवज्जंति ॥ ८ ॥ तित्थयरसमीवासेवगस्स पासे व नो य अन्नस्स। एएसिं जं चरणं परिहारविसुद्धियं तं तु ॥ ९ ॥" अन्यैस्तु व्याख्यातं—परिहारतो मासिकं चतुर्लघ्वादि तपश्चरति यस्तस्य परिहारिकचरित्रलब्धिर्भवतीति, इदं च परिहारतपो यथा स्यात्तथोच्यते—"नवमस्स तइयवत्थुं जहन्न उक्कोस ऊणगा दस उ। सुत्तत्थभिग्गहा पुण दवाइ तवो रयणमाती ॥ १ ॥" अयमर्थः—यस्य जघन्यतो नवमपूर्वं तृतीयं वस्तु यावद्भवति उत्कर्षतस्तु दश पूर्वाणि न्यूनानि सूत्रतोऽर्थतो भवन्ति, द्रव्यादयश्चाभिग्रहा रत्नावल्यादिना च तपस्तस्य परिहारतपो दीयते, तद्दाने च निरुपसर्गार्थं कायोत्सर्गो विधीयते, शुभे च नक्षत्रादौ

१ एवं षण्मासीं तपश्चरित्वा परिहारिका अनुचरन्ति। अनुचरकाः परिहारिकपदस्थिता भवन्ति यावत्षण्मासाः ॥ ५ ॥ कल्पस्थितोऽप्येवं षण्मासीं तपः करोति शेषास्त्वनुपरिहारिकभावं कल्पस्थितत्वं च व्रजन्ति ॥ ६ ॥ एवमेषोऽष्टादशमासप्रमाणस्तु कल्पो वर्णितः। सङ्क्षेपतो विशेषस्त्वेतस्य सूत्राज्ज्ञातव्यः ॥ ७ ॥ कल्पसमाप्तौ तं जिनकल्पं वा गच्छं वोपयन्ति। प्रतिपद्यमानकाः पुनर्जिनसकाशे प्रपद्यन्ते ॥ ८ ॥ तीर्थङ्करसमीपासेवकस्य पार्श्वे वा अन्यस्य पार्श्वे न। एतेषां यच्चरणं तत्तु परिहारविशुद्धिकम् ॥ ९ ॥ २–नवमस्य तृतीयवस्तु यावज्जघन्यत उत्कृष्टत ऊनानि दश। सूत्रार्थाभ्यां द्रव्यादयोऽभिग्रहाः पुनस्तपो रत्नावल्यादि ॥ १ ॥

८ शतके उद्देशः २ ज्ञानाज्ञानानि भत्यादौ सू ३२०

॥३५१॥

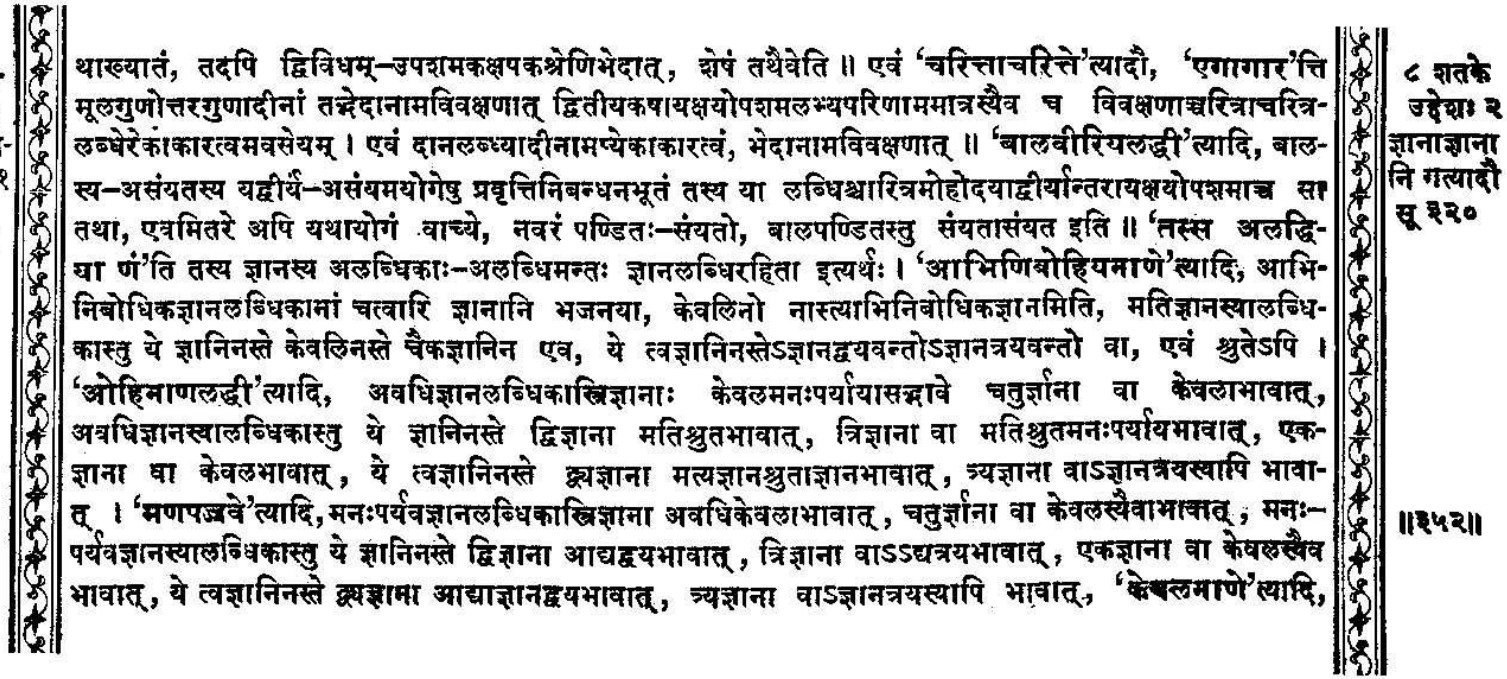
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	ज्ञानादि अधिकार:

तत्प्रतिपत्तिः, तथा गुरुस्तं ब्रूते–यथाऽहं तव वाचनाचार्यः अयं च गीतार्थः साधुः सहायस्ते, शेषसाधवोऽपि वाच्याः, यथा "एस तवं पडिवज्जइ न किंचि आलवइ मा य आलवह । अत्तट्ठचिंतगस्स उ वाघाओ मे न कायव्वो ॥ १ ॥" तथा कथमहमालापादिरहितः संस्तपः करिष्यामीत्येवं बिभ्यतस्तस्य भयापहारः कार्यः, कल्पस्थितश्च तस्यैतत्करोति—"किं[2]इकम्मं च पडिच्छइ परिन्न पडिपुच्छयंपि से देइ । सोवि य गुरुमुवचिट्ठइ उदंतमवि पुच्छिओ कहइ ॥ १ ॥" इह परिज्ञा–प्रत्याख्यानं प्रतिपृच्छा त्वालापकः, ततोऽसौ यदा ग्लानीभूतः सञ्जुत्थानादि स्वयं कर्त्तुं न शक्नोति तदा भणति–उत्थानादि कर्त्तुमिच्छामि, ततोऽनुपरिहारकस्तूष्णीक एव तदभिप्रेतं समस्तमपि करोति, आह च—"[3]उट्ठेज्ज निसीएज्जा भिक्खं हिंडेज्ज भंडगं पेहे । कुविएपियबंधवस्स व करेइ इयरोवि तुसिणीओ ॥ १ ॥" तपश्च तस्य ग्रीष्मशिशिरवर्षासु जघन्यादिभेदेन चतुर्थादिद्वादशान्तं पूर्वोक्तमेवेति । 'सुहुमसंपरायचरित्तलद्धि'त्ति संपरैति–पर्यटति संसारमेभिरिति सम्पराया:–कषायाः सूक्ष्मा–लोभांशावशेषरूपाः सम्पराया यत्र तत् सूक्ष्मसम्परायं शेषं तथैव, एतदपि द्विधा–विशुद्ध्यमानकं सङ्क्लिश्यमानकं च, तत्र विशुद्ध्यमानकं क्षपकोपशमकश्रेणिद्वयमारोहतो भवति १ सङ्क्लिश्यमानकं तूपशमश्रेणीतः प्रच्यवमानस्येति २ । 'अहक्खायचरित्तलद्धी'ति यथा–येन प्रकारेण आख्यातं–अभिहितमकषायतयेत्यर्थः तथैव यत्तद्य-

१ एष तपः प्रतिपद्यते न किञ्चिदालपिष्यति मा च लीलपध्वं । आत्मार्थचिन्तकस्य भवद्भिर्व्याघातो न कर्त्तव्यः ॥ १ ॥ २ कृतिकर्म प्रतीच्छति प्रत्याख्यानं प्रतिपृच्छामपि तस्मै ददाति । सोऽपि च गुरुमुपतिष्ठते उदन्तमपि पृष्टः कथयति ॥ १ ॥ ३–उत्तिष्ठेत् निषीदेत् भिक्षां हिण्डेत भाण्डं प्रेक्षेत । कुपितप्रियबान्धवस्येव करोति इतरोऽपि तूष्णीकः ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३५२॥

थाख्यातं, तदपि द्विविधम्–उपशमकक्षपकश्रेणिभेदात्, शेषं तथैवेति ॥ एवं 'चरित्ताचरित्ते'त्यादौ, 'एगागार'त्ति मूलगुणोत्तरगुणादीनां तद्भेदानामविवक्षणात् द्वितीयकषायक्षयोपशमलभ्यपरिणाममात्रस्यैव च विवक्षणाच्चरित्राचरित्र-लब्धेरेकाकारत्वमवसेयम् । एवं दानलब्ध्यादीनामप्येकाकारत्वं, भेदानामविवक्षणात् ॥ 'बालवीरियलद्धी'त्यादि, बाल-स्य–असंयतस्य यद्वीर्यं–असंयमयोगेषु प्रवृत्तिनिबन्धनभूतं तस्य या लब्धिश्चारित्रमोहोदयाद्वीर्यान्तरायक्षयोपशमाच्च सा तथा, एवमितरे अपि यथायोगं वाच्ये, नवरं पण्डितः–संयतो, बालपण्डितस्तु संयतासंयत इति ॥ 'तस्स अलद्धि-या णं'ति तस्य ज्ञानस्य अलब्धिकाः–अलब्धिमन्तः ज्ञानलब्धिरहिता इत्यर्थः । 'आभिणिबोहियमाणे'त्यादि; आभि-निबोधिकज्ञानलब्धिकानां चत्वारि ज्ञानानि भजनया, केवलिनो नास्त्याभिनिबोधिकज्ञानमिति, मतिज्ञानस्यालब्धि-कास्तु ये ज्ञानिनस्ते केवलिनस्ते चैकज्ञानिन एव, ये त्वज्ञानिनस्तेऽज्ञानद्वयवन्तोऽज्ञानत्रयवन्तो वा, एवं श्रुतेऽपि । 'ओहिनाणलद्धी'त्यादि, अवधिज्ञानलब्धिकास्त्रिज्ञानाः केवलमनःपर्यायासद्भावे चतुर्ज्ञाना वा केवलाभावात्, अवधिज्ञानस्यालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्ते द्विज्ञाना मतिश्रुतभावात्, त्रिज्ञाना वा मतिश्रुतमनःपर्यायभावात्, एक-ज्ञाना वा केवलभावात्, ये त्वज्ञानिनस्ते द्व्यज्ञाना मत्यज्ञानश्रुताज्ञानभावात्, त्र्यज्ञाना वाऽज्ञानत्रयस्यापि भावा-त् । 'मणपज्जवे'त्यादि, मनःपर्यवज्ञानलब्धिकास्त्रिज्ञाना अवधिकेवलाभावात्, चतुर्ज्ञाना वा केवलस्यैवाभावात्, मनः-पर्यवज्ञानस्यालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्ते द्विज्ञाना आद्यद्वयभावात्, त्रिज्ञाना वाऽऽद्यत्रयभावात्, एकज्ञाना वा केवलस्यैव भावात्, ये त्वज्ञानिनस्ते द्व्यज्ञाना आद्याज्ञानद्वयभावात्, त्र्यज्ञाना वाऽज्ञानत्रयस्यापि भावात्, 'केवलमाणे'त्यादि,

८ शतके उद्देशाः २ ज्ञानाज्ञाना नि गत्यादौ सू ३२०

॥३५२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३२०]

दीप अनुक्रम [३९३]

केवलज्ञानलब्धिका एकज्ञानिनस्ते च केवलज्ञानिन एव, केवलज्ञानस्यालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्तेषामाद्यं ज्ञानद्वयं तत्त्रयं मतिश्रुतावधिज्ञानानि मतिश्रुतमनःपर्यायज्ञानानि वा केवलज्ञानवर्जानि चत्वारि वा ज्ञानानि भवन्ति, ये त्वज्ञानिनस्तेषामाद्यमज्ञानद्वयं तत्त्रयं वा भवतीत्येवं भजनाऽवसेयेति ॥ 'अन्नाणलद्धियाण'मित्यादि, अज्ञानलब्धिका अज्ञानिनस्तेषां च त्रीण्यज्ञानानि भजनया, द्वे अज्ञाने त्रीणि वाऽज्ञानानीत्यर्थः, अज्ञानालब्धिकास्तु ज्ञानिनस्तेषां च पञ्च ज्ञानानि भजनया पूर्वोपदर्शितया वाच्यानि, 'जहा अन्नाणे'त्यादि, अज्ञानलब्धिकानां त्रीण्यज्ञानानि भजनयोक्तानि मत्यज्ञानश्रुताज्ञानलब्धिकानामपि तानि तथैव, तथाऽज्ञानालब्धिकानां पञ्च ज्ञानानि भजनयोक्तानि, मत्यज्ञानश्रुताज्ञानालब्धिकानामपि पञ्च ज्ञानानि भजनयैव वाच्यानीति । 'विभंगे'त्यादि, विभङ्गज्ञानलब्धिकानां तु त्रीण्यज्ञानानि नियमात्, तदलब्धिकानां तु ज्ञानिनां पञ्च ज्ञानानि भजनया, अज्ञानिनां च द्वे अज्ञाने नियमादिति ॥ 'दंसणलद्धी'त्यादि, 'दर्शनलब्धिकाः' श्रद्धानमात्रलब्धिका इत्यर्थः ते च सम्यक्श्रद्धानवन्तो ज्ञानिनस्तदितरे त्वज्ञानिनः, तत्र ज्ञानिनां पञ्च ज्ञानानि भजनया, अज्ञानिनां तु त्रीण्यज्ञानानि भजनयैवेति । 'तस्स अलद्धिया नत्थि'त्ति तस्य दर्शनस्य येषामलब्धिस्ते न सन्त्येव, सर्वजीवानां रुचिमात्रस्यास्तित्वादिति । 'सम्मद्दंसणलद्धियाणं'ति सम्यग्दृष्टीनां, 'तस्स अलद्धियाण'मित्यादि, 'तस्यालब्धिकानां' सम्यग्दर्शनस्यालब्धिमतां मिथ्यादृष्टीनां मिश्रदृष्टीनां च त्रीण्यज्ञानानि भजनया, यतो मिश्रदृष्टीनामप्यज्ञानमेव, तात्त्विकसद्बोधहेतुत्वाभावान्मिश्रस्येति । 'मिच्छादंसणलद्धियाणं'ति मिथ्यादृष्टीनां, 'तस्स अलद्धियाण'मित्यादि, 'तस्यालब्धिकानां' मिथ्यादर्शनस्यालब्धिमतां सम्यग्दृष्टीनां मिश्रदृष्टीनां च क्रमेण पञ्च ज्ञानानि त्रीण्यज्ञानानि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकार:

च भजनयेति ॥ 'चरित्तलद्धी'त्यादि चरित्रलब्धिका ज्ञानिन एव, तेषां च पञ्च ज्ञानानि भजनया, यतः केवल्यपि चारित्री। चारित्रालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्तेषां मनःपर्यववर्जानि चत्वारि ज्ञानानि भजनया भवन्ति, कथम् ?, असंयतत्वे आद्यं ज्ञानद्वयं तत्रयं वा, सिद्धत्वे च केवलज्ञानं, सिद्धानामपि चरित्रलब्धिशून्यत्वाद्, यतस्ते नोचारित्रिणो नोअचारित्रिण इति, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञानानि भजनया। 'सामाइए'त्यादि, सामायिकचरित्रलब्धिका ज्ञानिन एव, तेषां च केवलज्ञानवर्जानि चत्वारि ज्ञानानि भजनया, सामायिकचरित्रालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्तेषां पञ्च ज्ञानानि भजनया, छेदोपस्थापनीयादिभावेन सिद्धभावेन वा, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञानानि भजनया। एवं छेदोपस्थापनीयादिष्वपि वाच्यम्, एतदेवाह–'एव'मित्यादि, तत्र छेदोपस्थापनीयादिचरित्रत्रयलब्धयो ज्ञानिन एव, तेषां चाद्यानि चत्वारि ज्ञानानि भजनया, तदलब्धयो यथाख्यातचारित्रलब्धयश्च ये ज्ञानिनस्तेषां पञ्च ज्ञानानि भजनया, ये त्वज्ञानिनस्तेषामज्ञानत्रयं भजनयैव, यथाख्यातचारित्रलब्धिकानां तु विशेषोऽस्ति अतस्तद्दर्शनायाह—'नवरं अहक्खाये'त्यादि, सामायिकादिचारित्रचतुष्टयलब्धिमतां छद्मस्थत्वेन चत्वार्येव ज्ञानानि भजनया, यथाख्यातचारित्रलब्धिमतां छद्मस्थेतरभावेन पञ्चापि भजनया भवन्तीति तेषां तथैव तान्युक्तानीति ॥ 'चरित्ताचरित्ते'त्यादौ,'तस्स अलद्धिय'त्ति चरित्राचरित्रस्यालब्धिकाः श्रावकादन्ये, ते च ये ज्ञानिनस्ते (षां) पञ्च ज्ञानानि भजनया, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञानानि भजनयैव ॥ 'दाणलद्धी'त्यादि, दानान्तरायक्षयक्षयोपशमाहाने दातव्ये लब्धिर्येषां ते दानलब्धयः, ते च ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च, तत्र ये ज्ञानिनस्तेषां पञ्च ज्ञानानि भजनया, केवलज्ञानिनामपि दानलब्धियुक्तत्वात्, ये त्वज्ञानिनस्तेषां त्रीण्यज्ञा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकार:

नानि भजनयैव, दानस्यालब्धिकास्तु सिद्धास्ते च दानान्तरायक्षयेऽपि दातव्याभावात् सम्प्रदानासत्त्वाद्दानप्रयोजनाभावाच्च दानालब्धय उक्तास्ते च नियमात्केवलज्ञानिन इति ॥ लाभभोगोपभोगवीर्यलब्धीः सेतरा अतिदिशन्नाह—'एव'मित्यादि, इह चालब्धयः सिद्धानामेवोक्तन्यायादवसेयाः, ननु दानाद्यन्तरायक्षयात्केवलिनां दानादयः सर्वप्रकारेण कस्मान्न भवन्ति ? इति, उच्यते, प्रयोजनाभावात्, कृतकृत्या हि ते भगवन्त इति ॥ **'बालवीरियलद्धियाण'**मित्यादि, बालवीर्यलब्धयः–असंयताः तेषां च ज्ञानिनां त्रीणि ज्ञानानि अज्ञानिनां च त्रीण्यज्ञानानि भजनया भवन्ति, तदलब्धिकास्तु संयताः संयतासंयताश्च ते च ज्ञानिन एव, एतेषां च पञ्च ज्ञानानि भजनया। **'पंडियवीरिये'**त्यादौ, **'तस्स अलद्धियाणं'**ति असंयतानां संयतासंयतानां सिद्धानां चेत्यर्थः, तत्रासंयतानामाद्यं ज्ञानत्रयमज्ञानत्रयं च भजनया, संयतासंयतानां तु ज्ञानत्रयं भजनयैव भवति, सिद्धानां तु केवलज्ञानमेव, मनःपर्यायज्ञानं तु पण्डितवीर्यलब्धिमतामेव भवति नान्येषामत उक्तं **'मणपज्जवे'**त्यादि, सिद्धानां च पण्डितवीर्यालब्धिकत्वं पण्डितवीर्यवाच्ये प्रत्युपेक्षणाद्यनुष्ठाने प्रवृत्त्यभावात्, **'बालपंडिए'**इत्यादौ, **तस्स अलद्धियाणं'**ति अश्रावकाणामित्यर्थः ॥ **'इंदियलद्धियाण'**मित्यादि, इन्द्रियलब्धिका ये ज्ञानिनस्तेषां चत्वारि ज्ञानानि भजनया, केवलं तु नास्ति, तेषां केवलिनामिन्द्रियोपयोगाभावात्, ये त्वज्ञानिनस्तेषामज्ञानत्रयं भजनयैवेति, इन्द्रियालब्धिकाः पुनः केवलिन एवेत्येकमेव तेषां ज्ञानमिति। **'सोइंदिय'**इत्यादि, श्रोत्रेन्द्रियलब्धय इन्द्रियलब्धिका इव वाच्याः, ते च ये ज्ञानिनस्तेऽकेवलित्वादाद्यज्ञानचतुष्टयवन्तो भजनया भवन्ति, अज्ञानिनस्तु भजनया त्र्यज्ञानाः, श्रोत्रेन्द्रियालब्धिकास्तु ये ज्ञानिनस्ते आद्यद्विज्ञानिनः, तेऽपर्याप्तकाः सासा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकार:

दनसम्यग्दर्शनिनो विकलेन्द्रियाः, एकज्ञानिनो वा केवलज्ञानिनः, ते हि श्रोत्रेन्द्रियालब्धिका इन्द्रियोपयोगाभावात्, ये त्वज्ञानिनस्ते पुनराद्याज्ञानद्वयवन्त इति। 'चक्खिंदिए'इत्यादि, अयमर्थः–यथा श्रोत्रेन्द्रियलब्धिमतां चत्वारि ज्ञानानि भजनया त्रीणि चाज्ञानानि भजनयैव तदलब्धिकानां च द्वे ज्ञाने द्वे चाज्ञाने एकं च ज्ञानमुक्तमेवं चक्षुरिन्द्रियलब्धिकानां घ्राणेन्द्रियलब्धिकानां च तदलब्धिकानां च वाच्यं, तत्र चक्षुरिन्द्रियलब्धिका घ्राणेन्द्रियलब्धिकाश्च ये पञ्चेन्द्रियास्तेषां केवलवर्जानि चत्वारि ज्ञानानि त्रीणि चाज्ञानानि भजनयैव, ये तु विकलेन्द्रियाश्चक्षुरिन्द्रियघ्राणेन्द्रियलब्धिकास्तेषां सासादनसम्यग्दर्शनभावे आद्यं ज्ञानद्वयं तदभावे त्वाद्यमेवाज्ञानद्वयं, चक्षुरिन्द्रियघ्राणेन्द्रियालब्धिकास्तु यथायोगं त्रिष्वेकेन्द्रियाः केवलिनश्च, तत्र द्वीन्द्रियादीनां सासादनभावे आद्यज्ञानद्वयसम्भवः, तदभावे त्वाद्याज्ञानद्वयसम्भवः, केवलिनां त्वेकं केवलज्ञानमिति। 'जिब्भिंदिय'इत्यादौ, 'तस्स अलद्धिय'त्ति जिह्वालब्धिवर्जिताः, ते च केवलिन एकेन्द्रियाश्चेत्यत आह—'नाणीवी'त्यादि, ये ज्ञानिनस्ते नियमात्केवलज्ञानिनः येऽज्ञानिनस्ते नियमाद् द्व्यज्ञानिनः एकेन्द्रियाणां सासादनभावतोऽपि सम्यग्दर्शनस्याभावाद् विभङ्गाभावाच्चेति। 'फासिंदिय'इत्यादि, स्पर्शनेन्द्रियलब्धिकाः केवलवर्जज्ञानचतुष्कवन्तो भजनया तथैवाज्ञानत्रयवन्तो वा, स्पर्शनेन्द्रियालब्धिकास्तु केवलिन एव, इन्द्रियलब्ध्यलब्धिमन्तोऽप्येवंविधा एवेत्यत उक्तं 'जहा इंदिए'इत्यादि ॥ उपयोगद्वारे—

सागारोवउत्ता णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए ॥ आभिणिबोहियनाणसागारोवउत्ता णं भंते ! चत्तारि णाणाइं भयणाए । एवं सुयनाणसागारोवउत्तावि । ओहिना-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३२१]

दीप अनुक्रम [३९४]

णसागारोवउत्ता जहा ओहिनाणलद्धिया, मणपज्जवनाणसागारोवउत्ता जहा मणपज्जवनाणलद्धिया, केवल-
नाणसागारोवउत्ता जहा केवलनाणलद्धिया, मइअन्नाणसागारोवउत्ताणं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, एवं
सुयअन्नाणसागारोवउत्तावि, विभंगनाणसागारोवउत्ताणं तिन्नि अन्नाणाइं नियमा ॥ अणागारोवउत्ता णं
भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, पंच नाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए । एवं चक्खुदंसणअचक्खुदंसण-
अणागारोवउत्तावि, नवरं चत्तारि णाणाइं तिन्नि अन्नाणाइं भयणाए, ओहिदंसणअणागारोवउत्ताणं पुच्छा,
गोयमा ! नाणीवि अन्नाणीवि, जे नाणी ते अत्थेगतिया तिन्नाणी अत्थेगतिया चउनाणी, जे तिन्नाणी ते
आभिणिबोहिय० सुयनाणी ओहिनाणी, जे चउणाणी ते आभिणिबोहियनाणी जाव मणपज्जवनाणी, जे
अन्नाणी ते नियमा तिअन्नाणी,तंजहा–मइअन्नाणी सुयअन्नाणी विभंगनाणी,केवलदंसणअणागारोवउत्ता जहा
केवलनाणलद्धिया ॥ सजोगी णं भंते ! जीवा किं नाणी जहा सकाइया, एवं मणजोगी वइजोगी काय-
जोगीवि, अजोगी जहा सिद्धा ॥ सलेस्सा णं भंते ! जहा सकाइया, कण्हलेस्सा णं भंते ! जहा सइं-
दिया, एवं जाव पम्हलेसा, सुक्कलेस्सा जहा सलेस्सा, अलेस्सा जहा सिद्धा ॥ सकसाई णं भंते ! जहा
सइंदिया एवं जाव लोहकसाई, अकसाई णं भंते ! पंच नाणाइं भयणाए ॥ सवेदगा णं भंते ! जहा
सइंदिया, एवं इत्थिवेदगावि, एवं पुरिसवेयगा एवं नपुंसकवे०, अवेदगा जहा अकसाई ॥ आहारगा णं भंते !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपयोगादिषु ज्ञानादि अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३२१]

दीप अनुक्रम [३९४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३५५॥

जीवा जहा सकसाई नवरं केवलनाणंपि, अणाहारगा णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, मणप-ज्जवनाणवज्जाइं नाणाइं अन्नाणाणि य तिन्नि भयणाए ॥ (सूत्रं ३२१) ॥

'सागारोवउत्ते'त्यादि, आकारो–विशेषस्तेन सह यो बोधः स साकारः, विशेषग्राहको बोध इत्यर्थः, तस्मिन्नुपयुक्ताः-तत्संवेदका ये ते साकारोपयुक्ताः, ते च ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च, तत्र ज्ञानिनां पञ्च ज्ञानानि भजनया–स्याद् द्वे स्यात्रीणि स्या-च्चत्वारि स्यादेकं, यच्च स्यादेकं यच्च स्याद्वे इत्याद्युच्यते तल्लब्धिमात्रमङ्गीकृत्य, उपयोगापेक्षया त्वेकदा एकमेव ज्ञानमज्ञानं वेति,अज्ञानिनां तु त्रीण्यज्ञानानि भजनयैवेति॥ अथ साकारोपयोगभेदापेक्षमाह—'आभिणी'त्यादि,'ओहिनाणसागारे'-त्यादि, अवधिज्ञानसाकारोपयुक्ता यथाऽवधिज्ञानलब्धिकाः प्रागुक्ताः स्यात् त्रिज्ञानिनो मतिश्रुतावधियोगात् स्याच्च-तुर्ज्ञानिनो मतिश्रुतावधिमनःपर्यवयोगात्तथा वाच्याः । 'मणपज्जवे'त्यादि, मनःपर्यवज्ञानसाकारोपयुक्ता यथा मनःपर्य-वज्ञानलब्धिकाः प्रागुक्ताः स्यात्रिज्ञानिनो मतिश्रुतमनःपर्यवयोगात् स्याच्चतुर्ज्ञानिनः केवलवर्जज्ञानयोगात्तथा वाच्या इति ॥ 'अणागारोवउत्ता ण'मित्यादि, अविद्यमान आकारो यत्र तदनाकारं–दर्शनं तत्रोपयुक्ताः–तत्संवेदनका ये ते तथा, ते च ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च, तत्र ज्ञानिनां लब्ध्यपेक्षया पञ्च ज्ञानानि भजनया, अज्ञानिनां तु त्रीण्यज्ञानानि भज-नयैव । 'एव'मित्यादि, यथाऽनाकारोपयुक्ता ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्चोक्ताः एवं चक्षुर्दर्शनाद्युपयुक्ता अपि, 'नवरं'ति विशेषः पुनरयं–चक्षुर्दर्शनेतरोपयुक्ताः केवलिनो न भवन्तीति तेषां चत्वारि ज्ञानानि भजनयेति ॥ योगद्वारे—'सजोगी ण'मि-त्यादि,'जहा सकाइय'त्ति प्रागुक्ते कायद्वारे यथा सकायिका भजनया पञ्चज्ञानाद्यज्ञानाश्चोक्तास्तथा सयोगा अपि वाच्याः

८ शतके उद्देशः २ उपयोगा-दिषु ज्ञानाज्ञाने सू ३२१

॥३५५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपयोगादिषु ज्ञानादि अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३२१]

दीप अनुक्रम [३९४]

एवं मनोयोग्यादयोऽपि, केवलिनोऽपि मनोयोगादीनां भावात्, तथा मिथ्यादृशां मनोयोगादिमतामज्ञानत्रयभावाच्च, 'अजोगी जहा सिद्ध'त्ति अयोगिनः केवललक्षणैकज्ञानिन इत्यर्थः ॥ लेश्याद्वारे—'जहा सकाइय'त्ति सलेश्याः सकायिकवद्बहुजनया पञ्चज्ञानाऽज्ञानाश्च वाच्याः, केवलिनोऽपि शुक्ललेश्यासम्भवेन सलेश्यत्वात्, 'कण्हलेसे'त्यादि, 'जहा सइंदिय'त्ति कृष्णलेश्याश्चतुर्ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च भजनयेत्यर्थः, 'सुक्कलेसा जहा सलेस'त्ति पञ्चज्ञानिनो भजनयाऽज्ञानिनश्चेत्यर्थः । 'अलेस्सा जहा सिद्ध'त्ति एकज्ञानिन इत्यर्थः ॥ कषायद्वारे—'सकसाई जहा सइंदिय'त्ति भजनया केवलवर्जचतुर्ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्चेत्यर्थः, 'अकसाईण'मित्यादि, अकषायिणां पञ्च ज्ञानानि भजनया, कथम् ?, उच्यते, छद्मस्थो वीतरागः केवली चाकषायः, तत्र च छद्मस्थवीतरागस्याद्यं ज्ञानचतुष्कं भजनया भवति, केवलिनस्तु पञ्चममिति ॥ वेदद्वारे—'जहा सइंदिय'त्ति सवेदकाः सेन्द्रियवद्बहुजनया केवलवर्जचतुर्ज्ञानिनोऽज्ञानिनश्च वाच्याः, 'अवेदगा जहा अकसाइ'त्ति अवेदका अकषायिवद्बहुजनया पञ्चज्ञाना वाच्याः, यतोऽनिवृत्तिबादरादयोऽवेदका भवन्ति, तेषु च छद्मस्थानां चत्वारि ज्ञानानि भजनया केवलिनां तु पञ्चममिति ॥ आहारकद्वारे—'आहारगे'त्यादि, सकषाया भजनया चतुर्ज्ञानाऽज्ञानाश्चोक्ताः आहारका अप्येवमेव, नवरमाहारकाणां केवलमप्यस्ति, केवलिन आहारकत्वादपीति, 'अणाहारगा ण'मित्यादि, मनःपर्यवज्ञानमाहारकाणामेव, आद्यं पुनर्ज्ञानत्रयमज्ञानत्रयं च विग्रहे भवति, केवलं च केवलिसमुद्घातशैलेशीसिद्धावस्थास्वनाहारकाणामपि स्यादत उक्तं 'मणपज्जवे'त्यादि ॥ अथ ज्ञानगोचरद्वारे—

आभिणिबोहियनाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पन्नत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पन्नत्ते, तंज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपयोगादिषु ज्ञानादि अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३२२-३२३]

दीप अनुक्रम [३९५--३९६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३५६॥

हा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं आभिणिबोहियनाणी आएसेणं सव्वदव्वाइं जाणइ पासइ, खेत्तओ आभिणिबोहियणाणी आएसेणं सव्वखेत्तं जाणइ पासइ, एवं कालओवि, एवं भावओवि। सुय-नाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पण्णत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउविहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वओ ४, दव्वओ णं सुयनाणी उवउत्ते सव्वदव्वाइं जाणति पासति, एवं खेत्तओवि कालओवि, भावओ णं सुयनाणी उवउत्ते सव्वभावे जाणति पासति। ओहिनाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पन्नत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउविहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वओ ४, दव्वओ णं ओहिनाणी रूविदव्वाइं जाणइ पासइ जहा नंदीए जाव भावओ। मणपज्जवनाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पण्णत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउविहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वओ ४, दव्वओ णं उज्जुमती अणंते अणंतपदेसिए जहा नंदीए जाव भावओ। केवलनाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पण्णत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउविहे पन्नत्ते, तंजहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं केवलनाणी सव्वदव्वाइं जाणइ पासइ एवं जाव भावओ॥ मइअन्नाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पन्नत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउविहे पन्नत्ते, तंजहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगयाइं दव्वाइं जाणइ, एवं जाव भावओ मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगए भावे जाणइ पासइ। सुयअन्नाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पण्णत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउविहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वओ ४, दव्वओ णं सुयअन्नाणी सुयअन्नाणपरिमयाइं दव्वाइं आघवेति पन्नवेति परूवेइ, एवं खेत्तओ कालओ, भावओ णं

८ शतके उद्देशः २ मत्यादीनां विषयः पर्यायाश्च सू ३२३

॥३५६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांकने स्खलना दृश्यते– अत्र सू.३२३ लिखितम्, तत् सू.३२२ अस्ति

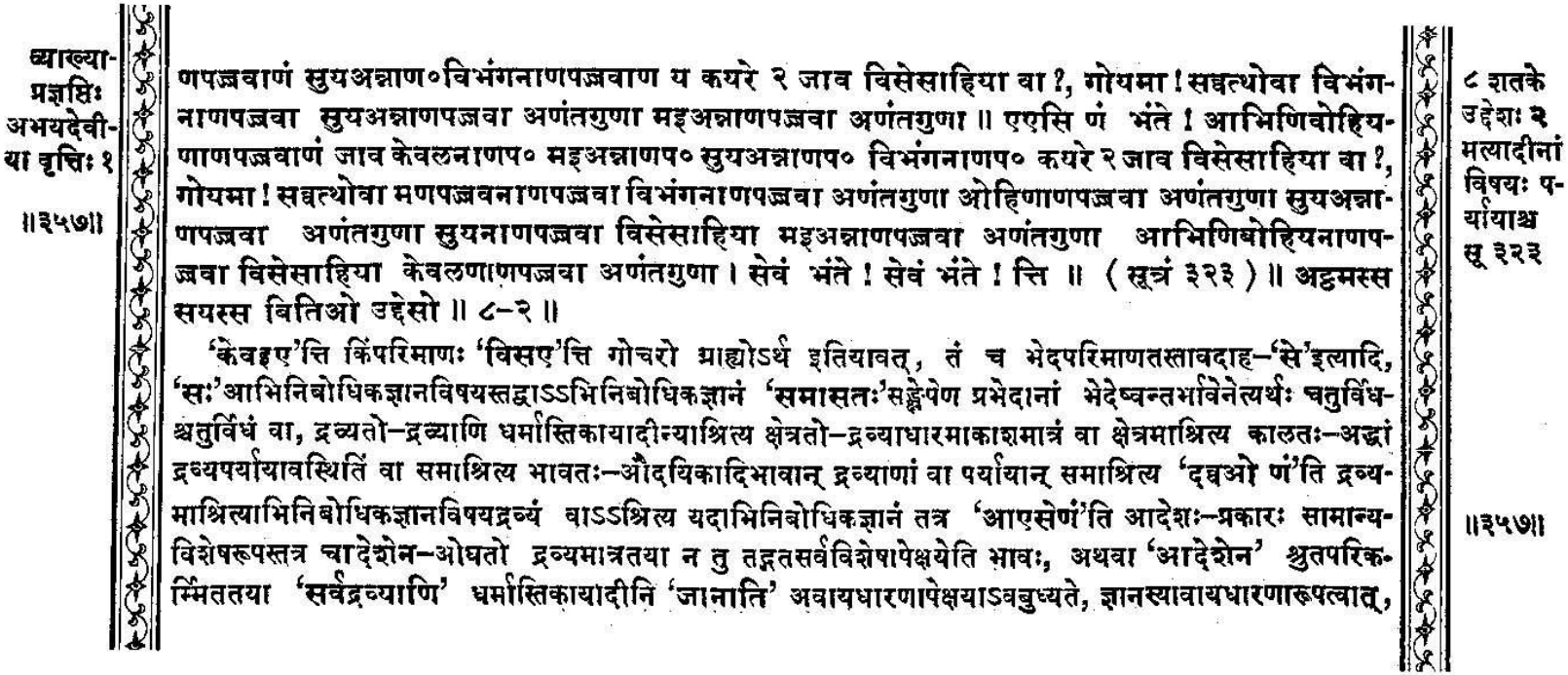
पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३२२-३२३]

दीप अनुक्रम [३९५--३९६]

सुयअन्नाणी सुयअन्नाणपरिगए भावे आघवेति तं चेव । विभंगणाणस्स णं भंते ! केवतिए विसए पण्णत्ते ?, गोयमा ! से समासओ चउविहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वओ ४, दव्वओ णं विभंगनाणी विभंगनाणपरिगयाइं दव्वाइं जाणइ पासइ, एवं जाव भावओ णं विभंगनाणी विभंगनाणपरिगए भावे जाणइ पासइ ॥ (सूत्रं३२२) णाणी णं भंते ! णाणीति कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! नाणी दुविहे पन्नत्ते, तंजहा–साइए वा अपज्जवसिए साइए वा सपज्जवसिए, तत्थ णं जे से साइए सपज्जवसिए से जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं सातिरेगाइं । आभिणिबोहियणाणी णं भंते ! आभिणिबोहिय० एवं नाणी आभिणिबोहियनाणी जाव केवलनाणी । अन्नाणी मइअन्नाणी सुयअन्नाणी विभंगनाणी, एएसिं दसण्हवि संचिट्ठणा जहा कायठिईए ॥ अंतरं सव्वं जहा जीवाभिगमे ॥ अप्पाबहुगाणि तिन्नि जहा बहुवत्तव्वयाए ॥ केवतिया णं भंते ! आभिणिबोहियणाणपज्जवा पण्णत्ता ?, गोयमा ! अणंता आभिणिबोहियणाणपज्जवा पण्णत्ता । केवतिया णं भंते ! सुयनाणपज्जवा पण्णत्ता ?, एवं चेव एवं जाव केवलनाणस्स । एवं मइअन्नाणस्स सुयअन्नाणस्स, केवतिया णं भंते ! विभंगनाणपज्जवा पण्णत्ता ?, गोयमा ! अणंता विभंगनाणपज्जवा पण्णत्ता, एएसि णं भंते ! आभिणिबोहियनाणपज्जवाणं सुयनाण० ओहिनाण० मणपज्जवनाण० केवलनाणपज्जवाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा मणपज्जवनाणपज्जवा ओहिनाणपज्जवा अणंतगुणा सुयनाणपज्जवा अणंतगुणा आभिणिबोहियनाणपज्जवा अणंतगुणा केवलनाणपज्जवा अणंतगुणा ॥ एएसि णं भंते ! मइअन्ना-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३५७॥

णपज्जवाणं सुयअन्नाण०विभंगनाणपज्जवाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा विभंग-नाणपज्जवा सुयअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा मइअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा ॥ एएसि णं भंते ! आभिणिबोहिय-णाणपज्जवाणं जाव केवलनाणप० मइअन्नाणप० सुयअन्नाणप० विभंगनाणप० कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा मणपज्जवनाणपज्जवा विभंगनाणपज्जवा अणंतगुणा ओहिणाणपज्जवा अणंतगुणा सुयअन्ना-णपज्जवा अणंतगुणा सुयनाणपज्जवा विसेसाहिया मइअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा आभिणिबोहियनाणप-ज्जवा विसेसाहिया केवलणाणपज्जवा अणंतगुणा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥ (सूत्रं ३२३) ॥ अट्ठमस्स सयस्स बितिओ उद्देसो ॥ ८–२ ॥

'केवइए'त्ति किंपरिमाणः 'विसए'त्ति गोचरो ग्राह्योऽर्थ इतियावत्, तं च भेदपरिमाणतस्तावदाह–'से'इत्यादि, 'सः'आभिनिबोधिकज्ञानविषयस्तद्वाऽऽभिनिबोधिकज्ञानं 'समासतः'सङ्क्षेपेण प्रभेदानां भेदेष्वन्तर्भावेनेत्यर्थः चतुर्विध-श्चतुर्विधं वा, द्रव्यतो–द्रव्याणि धर्मास्तिकायादीन्याश्रित्य क्षेत्रतो–द्रव्याधारमाकाशमात्रं वा क्षेत्रमाश्रित्य कालतः–अद्धां द्रव्यपर्यायावस्थितिं वा समाश्रित्य भावतः–औदयिकादिभावान् द्रव्याणां वा पर्यायान् समाश्रित्य 'दव्वओ णं'ति द्रव्य-माश्रित्याभिनिबोधिकज्ञानविषयद्रव्यं वाऽऽश्रित्य यदाभिनिबोधिकज्ञानं तत्र 'आएसेणं'ति आदेशः–प्रकारः सामान्य-विशेषरूपस्तत्र चादेशेन–ओघतो द्रव्यमात्रतया न तु तद्गतसर्वविशेषापेक्षयेति भावः, अथवा 'आदेशेन' श्रुतपरिक-ल्पितया 'सर्वद्रव्याणि' धर्मास्तिकायादीनि 'जानाति' अवायधारणापेक्षयाऽवबुध्यते, ज्ञानस्यावायधारणारूपत्वात्,

८ शतके उद्देशः २ मत्यादीनां विषयः प-र्यायाश्च सू ३२३

॥३५७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'पासइ'त्ति पश्यति अवग्रहेहापेक्षयाऽवबुध्यते, अवग्रहेहयोर्दर्शनत्वात्, आह च भाष्यकारः–"नाणमवायधिईओ दंसणमिट्ठं जहोग्गहेहाओ। तह तत्तरुई सम्मं रोइज्जइ जेण तं णाणं ॥ १ ॥" तथा–"जं सामन्नग्गहणं दंसणमेयं विसेसियं नाणं" [अपायधारणे ज्ञानमवग्रहेहे दर्शनं यथेष्टं तथा तत्त्वरुचिः सम्यक्त्वं येन रोच्यते तज्ज्ञानम् ॥१॥ यत्सामान्यग्रहणं दर्शनमेतद् विशेषितं ज्ञानम्।] अवग्रहेहे च सामान्यार्थग्रहणरूपे अवायधारणे च विशेषग्रहणस्वभावे इति, नन्वष्टाविंशतिभेदमानमाभिनिबोधिकज्ञानमुच्यते, यदाह–"आभिणिबोहियनाणे अट्ठावीसं हवंति पयडीओ"त्ति [आभिनिबोधिकज्ञाने प्रकृतयोऽष्टाविंशतिर्भवन्ति] इह च व्याख्याने श्रोत्रादिभेदेन षड्भेदतयाऽवायधारणयोर्द्वादशविधं मतिज्ञानं प्राप्तं, तथा श्रोत्रादिभेदेनैव षड्भेदतयाऽर्थावग्रहईहयोर्व्यञ्जनावग्रहस्य च चतुर्विधतया षोडशविधं चक्षुरादिदर्शनमिति प्राप्तमिति कथं न विरोधः ?, सत्यमेतत्, किन्त्वविवक्षयित्वा मतिज्ञानचक्षुरादिदर्शनयोर्भेदं मतिज्ञानमष्टाविंशतिधोच्यते इति पूज्या व्याचक्षत इति, 'खेत्तओ'त्ति क्षेत्रमाश्रित्याभिनिबोधिकज्ञानविषयक्षेत्रं वाऽऽश्रित्य यदाभिनिबोधिकज्ञानं तत्र 'आदेसेणं'ति ओघतः श्रुतपरिकर्मिततया वा 'सव्वं खेत्तं'ति लोकालोकरूपम्, एवं कालतो भावतश्चेति, आह च भाष्यकारः– "आएसोत्ति पगारो ओघादेसेण सव्वदव्वाइं। धम्मत्थिकाइयाइं जाणइ न उ सव्वभावेणं ॥ १ ॥ खेत्तं लोगालोगं कालं सव्वद्धमहव तिविहंपि। पंचोदइयाईए भावे जन्नेयमेवइयं ॥ २ ॥ आएसोत्ति व सुत्तं सुओवलद्धेसु तस्स मइनाणं। पसरइ तब्भावणया विणावि सुत्ताणुसारेणं ॥ ३ ॥" इति [आदेश इति प्रकारः सामान्यादेशेन सर्वद्रव्याणि धर्मास्तिकायादीनि जानाति न तु सर्वभावैः ॥ १ ॥ लोकालोकं क्षेत्रं सर्वाद्धां कालमथवा त्रिविधमपि। भावानौदयिकादीन् पञ्च

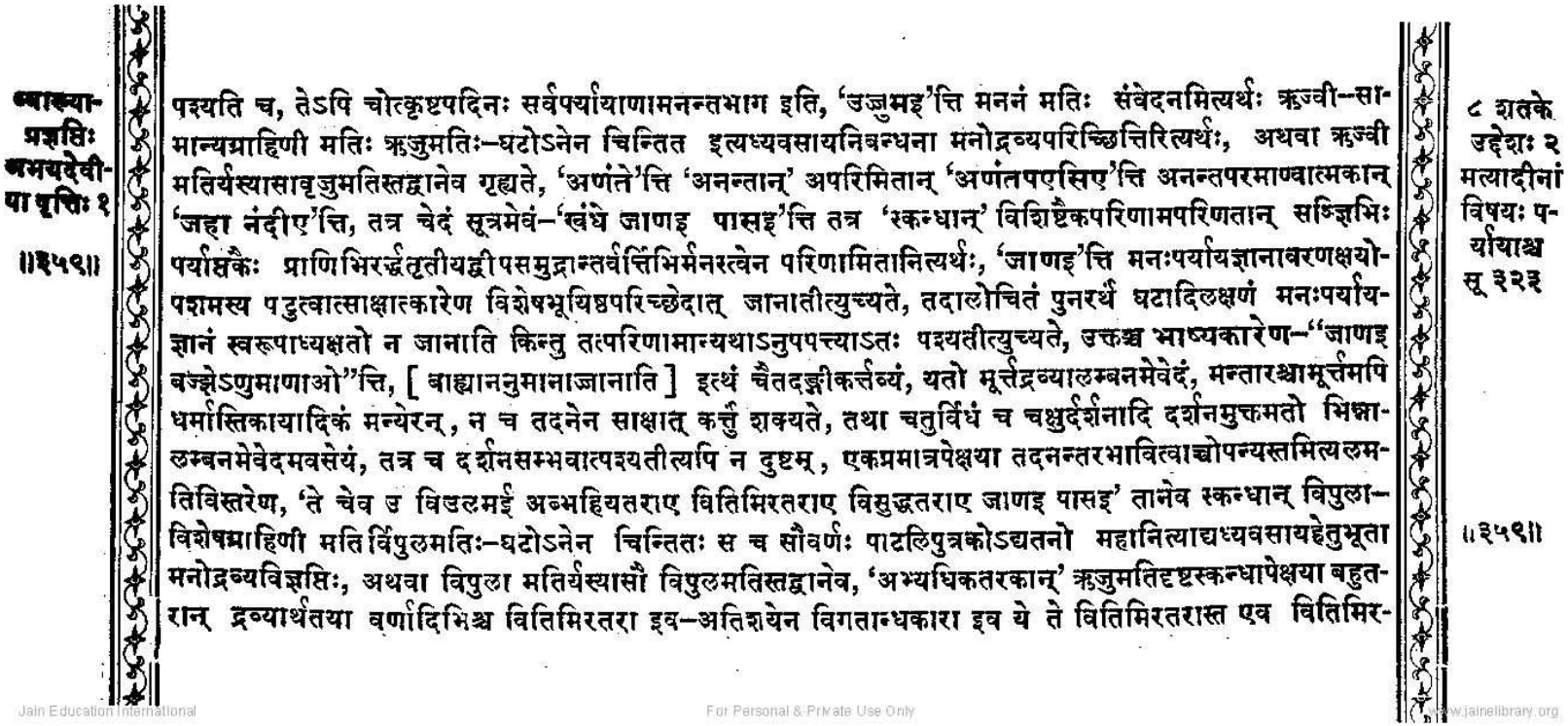
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदेतावज्ज्ञेयम् ॥ २ ॥ यद्वा आदेश इति श्रुतं श्रुतोपलब्धेषु तस्य मतिज्ञानं प्रसरति तद्भावनया सूत्रानुसारेण विनाऽपि ॥ ३ ॥] इदं च सूत्रं नन्द्यामिहैव वाचनान्तरे 'न पासइ'त्ति पाठान्तरेणाधीतम्, एवं च नन्दिटीकाकृता व्याख्या-तम्–"आदेशः–प्रकारः, स च सामान्यतो विशेषतश्च, तत्र द्रव्यजातिसामान्यादेशेन सर्वद्रव्याणि धर्मास्तिकायादीनि जानाति, विशेषतोऽपि यथा धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकायस्य देश इत्यादि, न पश्यति सर्वान् धर्मास्तिकायादीन्, शब्दा-दींस्तु योग्यदेशावस्थितान् पश्यत्यपीति," 'उवउत्ते'त्ति" भावश्रुतोपयुक्तो नानुपयुक्तः, स हि नाभिधानादभिधेयप्रतिपत्ति-समर्थो भवतीति विशेषणमुपात्तं, 'सर्वद्रव्याणि' धर्मास्तिकायादीनि 'जानाति' विशेषतोऽवगच्छति, श्रुतज्ञानस्य तत्स्वरूपत्वात्, पश्यति च श्रुतानुवर्त्तिना मानसेन अचक्षुर्दर्शनेन, सर्वद्रव्याणि चाभिलाप्यान्येव जानाति, पश्यति चाभिन्नदशपूर्वधरादिः श्रुतकेवली, तदारतस्तु भजना, सा पुनर्मतिविशेषतो ज्ञातव्येति, वृद्धैः पुनः पश्यतीत्यत्रेदमुक्तं–ननु पश्यतीति कथं ?, कथं च न, सकलगोचरदर्शनायोगात् ?, अत्रोच्यते, प्रज्ञापनायां श्रुतज्ञानपश्यत्तायाः प्रतिपादि-तत्वादनुत्तरविमानादीनां चालेख्यकरणात् सर्वथा चादृष्टस्यालेख्यकरणानुपपत्तेः, एवं क्षेत्रादिष्वपि भावनीयमिति, अन्ये तु 'न पासइ'त्ति पठन्तीति, ननु 'भावओ णं सुयनाणी उवउत्ते सव्वभावे जाणइ' इति यदुक्तमिह तत् "सुए चरित्ते य पज्जवा सव्वे"त्ति [श्रुते चारित्रे च सर्वे पर्यायाः (अभिलाप्यापेक्षया)।] अनेन च सह कथं न विरुध्यते ?, उच्यते, इह सूत्रे सर्वग्रहणेन पञ्चौदयिकादयो भावा गृह्यन्ते, तांश्च सर्वान् जातितो जानाति, अथवा यद्यप्यभिलाप्यानां भावानाम-नन्तभाग एव श्रुतनिबद्धस्तथापि प्रसङ्गानुप्रसङ्गतः सर्वेऽप्यभिलाप्याः श्रुतविषया उच्यन्ते अतस्तदपेक्षया सर्वभावज्ञ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जानातीत्युक्तम्, अनभिलाप्यभावापेक्षया तु "सुए चरित्ते न पजवा सवे" इत्युक्तमिति न विरोधः।'दव्वओ ण'मित्यादि, अवधिज्ञानी रूपिद्रव्याणि पुद्गलद्रव्याणीत्यर्थः, तानि च जघन्येनानन्तानि तैजसभाषाद्रव्याणामपान्तरालवर्त्तीनि, यत उक्तं–"तेयाभासादव्वाण अंतरा एत्थ लभति पट्ठवओ" त्ति, [अत्र प्रस्थापकस्तेजोभाषावर्गणयोरन्तरालद्रव्याणि जानाति] उत्कृष्टतस्तु सर्वबादरसूक्ष्मभेदभिन्नानि जानाति विशेषाकारेण, ज्ञानत्वात्तस्य, पश्यति सामान्याकारेणावधिज्ञानिनोऽवधिदर्शनस्यावश्यम्भावात्, नन्वादौ दर्शनं ततो ज्ञानमिति क्रमस्तत्किमर्थमेनं परित्यज्य प्रथमं जानातीत्युक्तम् ?, अत्रोच्यते, इहावधिज्ञानाधिकारात् प्राधान्यख्यापनार्थमादौ जानातीत्युक्तम्, अवधिदर्शनस्य त्ववधिविभङ्गसाधारणत्वेनाप्रधानत्वात् पश्चात्पश्यतीति, अथवा सर्वा एव लब्धयः साकारोपयोगोपयुक्तस्योत्पद्यन्ते लब्धिश्चावधिज्ञानमिति साकारोपयोगोपयुक्तस्यावधिज्ञानलब्धिर्जायते इत्येतस्यार्थस्य ज्ञापनार्थं साकारोपयोगाभिधायकं जानातीति प्रथममुक्तं ततः क्रमेणोपयोगप्रवृत्तेः पश्यतीति, 'जहा नंदीए'त्ति, एवं च तत्रेदं सूत्रं–'खेत्तओ णं ओहिणाणी जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं जाणइ पासइ' इत्यादि, व्याख्या पुनरेवं–क्षेत्रतोऽवधिज्ञानी जघन्येनाङ्गुलस्यासङ्ख्येयभागमुत्कृष्टतोऽसङ्ख्येयान्यलोके शक्तिमपेक्ष्य लोकप्रमाणानि खण्डानि जानाति पश्यति, कालतोऽवधिज्ञानी जघन्येनावलिकाया असङ्ख्येयं भागमुत्कृष्टतोऽसङ्ख्येया उत्सर्पिण्यवसर्पिणीरतीता अनागताश्च जानाति पश्यति, तद्गतरूपिद्रव्यावगमात्, अथ कियदूरं यावदिह नन्दीसूत्रं वाच्यम् ? इत्याह–'जाव भावओ'त्ति भावाधिकारं यावदित्यर्थः, स चैवं–भावतोऽवधिज्ञानी जघन्येनानन्तान् भावानाधारद्रव्यानन्तत्वाज्जानाति पश्यति, न तु प्रतिद्रव्यमिति, उत्कृष्टतोऽप्यनन्तान् भावान् जानाति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३५९॥

पश्यति च, तेऽपि चोत्कृष्टपदिनः सर्वपर्यायाणामनन्तभाग इति, 'उज्जुमइ'त्ति मननं मतिः संवेदनमित्यर्थः ऋज्वी–सामान्यग्राहिणी मतिः ऋजुमतिः–घटोऽनेन चिन्तित इत्यध्यवसायनिबन्धना मनोद्रव्यपरिच्छित्तिरित्यर्थः, अथवा ऋज्वी मतिर्यस्यासावृजुमतिस्तद्वानेव गृह्यते, 'अणंते'त्ति 'अनन्तान्' अपरिमितान् 'अणंतपएसिए'त्ति अनन्तपरमाण्वात्मकान् 'जहा नंदीए'त्ति, तत्र चेदं सूत्रमेवं–'खंधे जाणइ पासइ'त्ति तत्र 'स्कन्धान्' विशिष्टैकपरिणामपरिणतान् सञ्ज्ञिभिः पर्याप्तकैः प्राणिभिरर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्त्तिभिर्मनस्त्वेन परिणामितानित्यर्थः, 'जाणइ'त्ति मनःपर्यायज्ञानावरणक्षयोपशमस्य पटुत्वात्साक्षात्कारेण विशेषभूयिष्ठपरिच्छेदात् जानातीत्युच्यते, तदालोचितं पुनरर्थं घटादिलक्षणं मनःपर्यायज्ञानं स्वरूपाध्यक्षतो न जानाति किन्तु तत्परिणामान्यथाऽनुपपत्त्याऽतः पश्यतीत्युच्यते, उक्तञ्च भाष्यकारेण–"जाणइ बज्झेऽणुमाणाओ"त्ति, [बाह्याननुमानाज्जानाति] इत्थं चैतदङ्गीकर्त्तव्यं, यतो मूर्त्तद्रव्यालम्बनमेवेदं, मन्तारश्चामूर्त्तमपि धर्मास्तिकायादिकं मन्येरन्, न च तदनेन साक्षात् कर्त्तुं शक्यते, तथा चतुर्विधं च चक्षुर्दर्शनादि दर्शनमुक्तमतो भिन्नालम्बनमेवेदमवसेयं, तत्र च दर्शनसम्भवात्पश्यतीत्यपि न दुष्टम्, एकप्रमात्रपेक्षया तदनन्तरभावित्वाच्चोपन्यस्तमित्यलमतिविस्तरेण, 'ते चेव उ विउलमई अब्भहियतराए वितिमिरतराए विसुद्धतराए जाणइ पासइ' तानेव स्कन्धान् विपुला–विशेषग्राहिणी मतिर्विपुलमतिः–घटोऽनेन चिन्तितः स च सौवर्णः पाटलिपुत्रकोऽद्यतनो महानित्याद्यध्यवसायहेतुभूता मनोद्रव्यविज्ञप्तिः, अथवा विपुला मतिर्यस्यासौ विपुलमतिस्तद्वानेव, 'अभ्यधिकतरकान्' ऋजुमतिदृष्टस्कन्धापेक्षया बहुतरान् द्रव्यार्थतया वर्णादिभिश्च वितिमिरतरा इव–अतिशयेन विगतान्धकारा इव ये ते वितिमिरतरास्त एव वितिमिर-

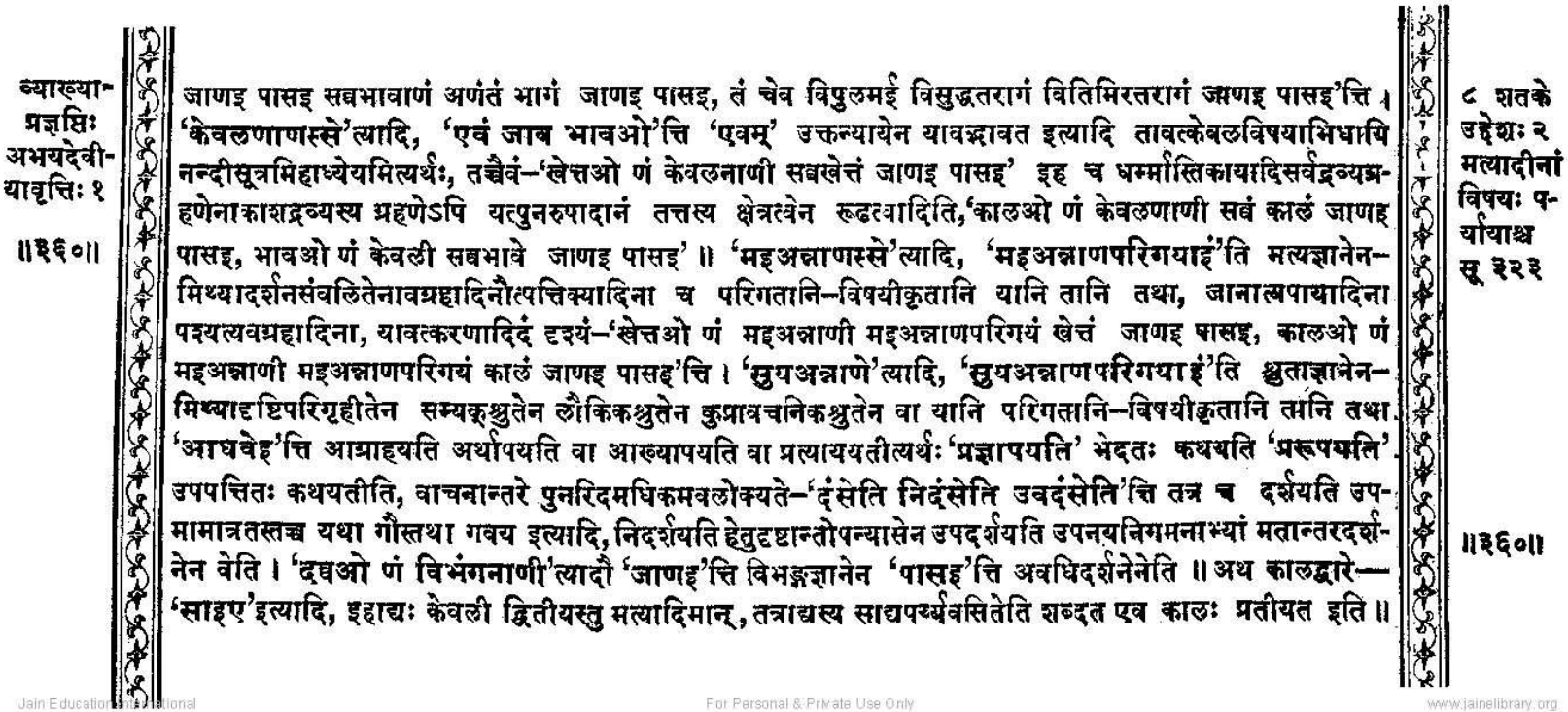
८ शतके उद्देशः २ मत्यादीनां विषयः पर्यायाश्च सू ३२३

॥३५९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तरका अतस्तान्, अत एव 'विशुद्धतरकान्' विस्पष्टतरकान् जानाति पश्यति च, तथा 'खेत्तओ णं उज्जुमई अहे जाव इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिमहेट्ठिले खुड्डागपयरे उड्ढं जाव जोइसस्स उवरिमतले तिरियं जाव अंतोमणुस्सखेत्ते अड्ढाइज्जेसु दीवसमुद्देसु पन्नरससु कम्मभूमीसु छप्पन्नाए अंतरदीवगेसु सन्नीणं पंचिंदियाणं पज्जत्तगाणं मणोगए भावे जाणइ पासइ' तत्र क्षेत्रत ऋजुमतिरधः–अधस्ताद् यावदमुष्या रत्नप्रभायाः पृथिव्या उपरिमाधस्तान् क्षुल्लकप्रतरान् तावत्, किं ?–मनोगतान् भावान् जानाति पश्यतीति योगः, तत्र रुचकाभिधानात्तिर्यग्लोकमध्यादधो यावन्नव योजनशतानि तावदमुष्या रत्नप्रभाया उपरिमाः क्षुल्लकप्रतराः, क्षुल्लकत्वं च तेषामधोलोकप्रतरापेक्षया, तेभ्योऽपि येऽधस्तादधोलोकग्रामान् यावत्तेऽधस्तनाः क्षुल्लकप्रतरा ऊर्द्धं यावज्ज्योतिषश्च–ज्योतिश्चक्रस्योपरितलं 'तिरियं जाव अंतोमणुस्सखेत्ते'त्ति तिर्यङ् यावदन्तर्मनुष्यक्षेत्रं मनुष्यक्षेत्रस्यान्तं यावदित्यर्थः, तदेव विभागत आह–'अड्ढाइज्जेसु'इत्यादि, तथा 'तं चेव विउलमई अड्ढाइज्जेहिं अंगुलेहिं अब्भहियतरागं विउलतरागं विसुद्धतरागं वितिमिरतरागं जाणइ पासइ'त्ति तत्र 'तं चेव'त्ति इह क्षेत्राधिकारस्य प्राधान्यात्तदेव मनोलब्धिसमन्वितजीवाधारं क्षेत्रमभिगृह्यते, तत्राभ्यधिकतरकमायामविष्कम्भावाश्रित्य विपुलतरकं बाहल्यमाश्रित्य 'विशुद्धतरकं' निर्मलतरकं वितिमिरतरकं तु तिमिरकल्पतदावरणस्य विशिष्टतरक्षयोपशमसद्भावादिति, तथा–'कालओ णं उज्जुमई जहन्नेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणवि पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं जाणइ पासइ अईयं अणागयं च, तं चेव विपुलमई विसुद्धतरागं वितिमिरतरागं जाणइ पासइ' कियन्नन्दीसूत्रमिहाध्येयम् ? इत्याह–'जाव भावओ'त्ति भावसूत्रं यावदित्यर्थः, तच्चैवं–'भावओ णं उज्जुमई अणंते भावे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १

॥३६०॥

जाणइ पासइ सव्वभावाणं अणंतं भागं जाणइ पासइ, तं चेव विपुलमई विसुद्धतरागं वितिमिरतरागं जाणइ पासइ'त्ति । 'केवलणाणस्से'त्यादि, 'एवं जाव भावओ'त्ति 'एवम्' उक्तन्यायेन यावद्भावत इत्यादि तावत्केवलविषयाभिधायि नन्दीसूत्रमिहाध्येयमित्यर्थः, तच्चैवं–'खेत्तओ णं केवलनाणी सव्वखेत्तं जाणइ पासइ' इह च धर्म्मास्तिकायादिसर्वद्रव्यग्रहणेनाकाशद्रव्यस्य ग्रहणेऽपि यत्पुनरुपादानं तत्तस्य क्षेत्रत्वेन रूढत्वादिति,'कालओ णं केवलणाणी सव्वं कालं जाणइ पासइ, भावओ णं केवली सव्वभावे जाणइ पासइ' ॥ 'मइअन्नाणस्से'त्यादि, 'मइअन्नाणपरिगयाइं'ति मत्यज्ञानेन–मिथ्यादर्शनसंवलितेनावग्रहादिनौत्पत्तिक्यादिना च परिगतानि–विषयीकृतानि यानि तानि तथा, जानात्यपायादिना पश्यत्यवग्रहादिना, यावत्करणादिदं दृश्यं–'खेत्तओ णं मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगयं खेत्तं जाणइ पासइ, कालओ णं मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगयं कालं जाणइ पासइ'त्ति । 'सुयअन्नाणे'त्यादि, 'सुयअन्नाणपरिगयाइं'ति श्रुताज्ञानेन–मिथ्यादृष्टिपरिगृहीतेन सम्यक्श्रुतेन लौकिकश्रुतेन कुप्रावचनिकश्रुतेन वा यानि परिगतानि–विषयीकृतानि तानि तथा 'आघवेइ'त्ति आग्राहयति अर्थापयति वा आख्यापयति वा प्रत्याययतीत्यर्थः 'पन्नवेइ' प्रज्ञापयति भेदतः कथयति 'परूवेइ' उपपत्तितः कथयतीति, वाचनान्तरे पुनरिदमधिकमवलोक्यते–'दंसेति निदंसेति उवदंसेति'त्ति तत्र च दर्शयति उपमामात्रतस्तच्च यथा गौस्तथा गवय इत्यादि, निदर्शयति हेतुदृष्टान्तोपन्यासेन उपदर्शयति उपनयनिगमनाभ्यां मतान्तरदर्शनेन वेति । 'दवओ णं विभंगनाणी'त्यादौ 'जाणइ'त्ति विभङ्गज्ञानेन 'पासइ'त्ति अवधिदर्शनेनेति ॥ अथ कालद्वारे— 'साइए'इत्यादि, इहाद्यः केवली द्वितीयस्तु मत्यादिमान्, तत्राद्यस्य साद्यपर्य्यवसितेति शब्दत एव कालः प्रतीयत इति ॥

८ शतके उद्देशः २ मत्यादीनां विषयः पर्यायाश्च सू ३२३

॥३६०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीयस्यैव तं जघन्येतरं भेदमुपदर्शयितुमिदमाह—'तत्थ णं जे से साइए' इत्यादि, तत्र च 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति आद्यं ज्ञानद्वयमाश्रित्योक्तं, तस्यैव जघन्यतोऽन्तर्मुहूर्त्तमात्रत्वात्, तथा 'उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं साइरेगाइं'ति यदुक्तं तदाद्यं ज्ञानत्रयमाश्रित्य, तस्य हि उत्कर्षेणैतावत्येव स्थितिः, सा चैवं भवति–"दो वारे विजयाइसु गयस्स तिन्नच्चुए अहव ताइं। अइरेगं नरभवियं णाणाजीवाण सबद्धं ॥ १ ॥" [विजयादिषु द्विरच्युते त्रिर्गतस्य अथ तानि नरभविकातिरेकाणि नानाजीवानां सर्वाद्धां ॥ १ ॥] 'आभिणिबोहिये'त्यादि सूचामात्रम्, एवं चैतद्द्रष्टव्यम्—'आभिणिबोहियणाणी णं भंते ! आभिणिबोहियनाणित्ति कालओ केवच्चिरं होइ ?' त्ति 'एवं नाणी आभिणिबोहियनाणी'त्यादि, अयमर्थः—'एव'मित्यनन्तरोक्तेन 'आभिणिबोहिए'त्यादिना सूत्रक्रमेण ज्ञान्याभिनिबोधिकज्ञानिश्रुतज्ञान्यवधिज्ञानिमनःपर्यवज्ञानिकेवलज्ञान्यज्ञानिमत्यज्ञानिश्रुताज्ञानिविभङ्गज्ञानिनां 'संचिट्ठणे'ति अवस्थितिकालो यथा कायस्थितौ प्रज्ञापनाया अष्टादशे पदेऽभिहितस्तथा वाच्यः, तत्र ज्ञानिनां पूर्वमुक्त एवावस्थितिकालः, यच्च पूर्वमुक्तस्याप्यतिदेशतः पुनर्भणनं तदेकप्रकरणपतितत्वादित्यवसेयम्, आभिनिबोधिकज्ञानादिद्वयस्य तु जघन्यतोऽन्तर्मुहूर्त्तमुत्कृष्टतस्तु सातिरेकाणि षट्षष्टिः सागरोपमाणि, अवधिज्ञानिनामप्येवं, नवरं जघन्यतो विशेषः, स चायम्–'ओहिनाणी जहन्नेणं एक्कं समयं' कथं ?, यदा विभङ्गज्ञानी सम्यक्त्वं प्रतिपद्यते तत्प्रथमसमय एव विभङ्गमवधिज्ञानं भवति तदनन्तरमेव च तत् प्रतिपतति तदा एकं समयमवधिर्भवतीत्युच्यते। 'मणपज्जवनाणी णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं देसूणा पुवकोडी,' कथं ?, संयतस्याप्रमत्ताद्धायां वर्त्तमानस्य मनःपर्यवज्ञानमुत्पन्नं तत उत्पत्तिसमयसमनन्तरमेव विनष्टं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३६१॥

चेत्येवमेकं समयं, तथा चरणकाल उत्कृष्टो देशोना पूर्वकोटी, तत्प्रतिपत्तिसमनन्तरमेव च यदा मनःपर्यवज्ञानमुत्पन्नमा-जन्म चानुवृत्तं तदा भवति मनःपर्यवस्योत्कर्षतो देशोना पूर्वकोटीति । केवलनाणी णं पुच्छा, गोयमा ! साइए अपज्जव-सिए, अन्नाणी मइअन्नाणी सुयअन्नाणी णं पुच्छा, गोयमा ! अन्नाणी मइअन्नाणी सुयअन्नाणी य तिविहे पन्नत्ते, तंजहा– अणाइए वा अपज्जवसिए अभव्यानां १ अणाइए वा सपज्जवसिए भव्यानां २ साइए वा सपज्जवसिए प्रतिपतितसम्य-ग्दर्शनानां ३, 'तत्थ णं जे से साइए सपज्जवसिए से जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं' सम्यक्त्वप्रतिपतितस्यान्तर्मुहूर्त्तोपरि सम्यक्त्व-प्रतिपत्तौ, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं अणंता उस्सप्पिणीओसप्पिणीओ कालओ खेत्तओ अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं' सम्य-क्त्वाद्भ्रष्टस्य वनस्पत्यादिष्वनन्ता उत्सर्पिण्यवसर्पिणीरतिवाह्य पुनः प्राप्तसम्यग्दर्शनस्येति । 'विभंगनाणी णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं' उत्पत्तिसमयानन्तरमेव प्रतिपाते 'उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं देसूणपुवकोडिअब्भहि-याइं' देशोनां पूर्वकोटिं विभङ्गितया मनुष्येषु जीवित्वाऽप्रतिष्ठानादावुत्पन्नस्येति ॥ अन्तरद्वारे—'अंतरं सव्वं जहा जीवाभिगमे'त्ति पञ्चानां ज्ञानानां त्रयाणां चाज्ञानानामन्तरं सर्वं यथा जीवाभिगमे तथा वाच्यं, तच्चैवम्–आभिणि-बोहियणाणस्स णं भंते ! अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं जाव अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं, सुयनाणिओहिनाणीमणपज्जवनाणीणं एवं चेव, केवलनाणिस्स पुच्छा, गोयमा ! नत्थि अंतरं, मइअन्नाणिस्स सुयअन्नाणिस्स य पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं साइरेगाइं । विभंगनाणिस्स पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं वणस्सइकालो'त्ति ॥ अल्पबहुत्वद्वारे—'अप्पाबहुगाणि

८ शतके उद्देशः२ ज्ञानाज्ञान-योः स्थिति-रन्तरं च सू ३२३

॥३६१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तिन्नि जहा बहुवत्तव्वयाए'त्ति अल्पबहुत्वानि त्रीणि ज्ञानिनां परस्परेणाज्ञानिनां च ज्ञान्यज्ञानिनां च यथाऽल्पबहुत्ववक्तव्यतायां प्रज्ञापनासम्बन्धिन्यामभिहितानि तथा वाच्यानीति, तानि चैवम्—'एएसि णं भंते ! जीवाणं आभिणिबोहियनाणीणं ५ कयरे २ हिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा मणपज्जवनाणी ओहिनाणी असंखेज्जगुणा आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी दोवि तुल्ला विसेसाहिया केवलनाणी अणंतगुणा' इत्येकम् १ । 'एएसि णं भंते ! जीवाणं मइअन्नाणीणं ३ कयरे २ हिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ? गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा विभंगणाणी मइअन्नाणी सुयअन्नाणी दोवि तुल्ला अनंतगुणा' इति द्वितीयम् २ । 'एएसि णं भंते ! जीवाणं आभिणिबोहियनाणीणं ५ मइअन्नाणीणं ३ कयरे २ हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा मणपज्जवणाणी ओहिनाणी असंखेज्जगुणा आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी य दोवि तुल्ला विसेसाहिया विभंगनाणी असंखेज्जगुणा केवलनाणी अणंतगुणा मइअन्नाणी सुयअन्नाणी दोवि तुल्ला अणंतगुण'त्ति, तत्र ज्ञानिसूत्रे स्तोका मनःपर्यायज्ञानिनो,यस्मादद्धिप्राप्तादिसंयतस्यैव तद्भवति, अवधिज्ञानिनस्तु चतसृष्वपि गतिषु सन्तीति तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, आभिनिबोधिकज्ञानिनः श्रुतज्ञानिनश्चान्योऽन्यं तुल्याः, अवधिज्ञानिभ्यस्तु विशेषाधिकाः, यतस्तेऽवधिज्ञानिनोऽपि मनःपर्यायज्ञानिनोऽपि अवधिमनःपर्यायज्ञानिनोऽपि अवध्यादिरहिता अपि पञ्चेन्द्रिया भवन्ति सास्वादनसम्यग्दर्शनसद्भावे विकलेन्द्रिया अपि च मतिश्रुतज्ञानिनो लभ्यन्त इति, केवलज्ञानिनस्त्वनन्तगुणाः, सिद्धानां सर्वज्ञानिभ्योऽनन्तगुणत्वात् । अज्ञानिसूत्रे तु विभङ्गज्ञानिनः स्तोकाः, यस्मात् पञ्चेन्द्रिया एव ते भवन्ति, तेभ्योऽनन्तगुणा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३६२॥

मत्यज्ञानिनः श्रुताज्ञानिनः, यतो मत्यज्ञानिनः श्रुताज्ञानिनश्चैकेन्द्रिया अपीति तेन तेभ्यस्तेऽनन्तगुणाः, परस्परतश्च तुल्याः । तथा मिश्रसूत्रे स्तोका मनःपर्यायज्ञानिनः, अवधिज्ञानिनस्तु तेभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, आभिनिबोधिकज्ञानिनः श्रुत-ज्ञानिनश्चान्योऽन्यं तुल्याः प्राक्तनेभ्यश्च विशेषाधिकाः, इह युक्तिः पूर्वोक्तैव, आभिनिबोधिकज्ञानिश्रुतज्ञानिभ्यो विभङ्ग-ज्ञानिनोऽसङ्ख्येयगुणाः, कथम् ?, उच्यते, यतः सम्यग्दृष्टिभ्यः सुरनारकेभ्यो मिथ्यादृष्टयस्तेऽसङ्ख्येयगुणा उक्तास्तेन विभङ्गज्ञानिन आभिनिबोधिकज्ञानिश्रुतज्ञानिभ्योऽसङ्ख्येयगुणाः, केवलज्ञानिनस्तु विभङ्गज्ञानिभ्योऽनन्तगुणाः, सिद्धा-नामेकेन्द्रियवर्जसर्वजीवेभ्योऽनन्तगुणत्वात्, मत्यज्ञानिनः श्रुताज्ञानिनश्चान्योऽन्यं तुल्याः, केवलज्ञानिभ्यस्त्वनन्त-गुणाः, वनस्पतिष्वपि तेषां भावात्, तेषां च सिद्धेभ्योऽप्यनन्तगुणत्वादिति ॥ अथ पर्यायद्वारे–'केवइया'इत्यादि, आभि-निबोधिकज्ञानस्य पर्यवाः–विशेषधर्म्मा आभिनिबोधिकज्ञानपर्यवाः, ते च द्विविधाः स्वपरपर्यायभेदात्, तत्र येऽवग्रहादयो मतिविशेषाः क्षयोपशमवैचित्र्यात्ते स्वपर्यायास्ते चानन्तगुणाः, कथम् ?, एकस्मादवग्रहादेरन्योऽवग्रहादिरनन्तभागवृद्ध्या विशुद्धः १ अन्यस्त्वसङ्ख्येयभागवृद्ध्या २ अपरः सङ्ख्येयभागवृद्ध्या ३ अन्यतरः सङ्ख्येयगुणवृद्ध्या ४ तदन्योऽसङ्ख्येयगुण-वृद्ध्या ५ अपरस्त्वनन्तगुणवृद्ध्या ६ इति, एवं च सङ्ख्यातस्य सङ्ख्यातभेदत्वादसंख्यातस्य चासङ्ख्यातभेदत्वादनन्तस्य चान-न्तभेदत्वादनन्ता विशेषा भवन्ति, अथवा तज्ज्ञेयस्यानन्तत्वात् प्रतिज्ञेयं च तस्य भिद्यमानत्वात् अथवा मतिज्ञानम-विभागपरिच्छेदैर्बुद्ध्या छिद्यमानमनन्तखण्डं भवतीत्येवमनन्तास्तत्पर्यवाः, तथा ये पदार्थान्तरपर्यायास्ते तस्य परपर्या-यास्ते च स्वपर्यायेभ्योऽनन्तगुणाः, परेषामनन्तगुणत्वादिति, ननु यदि ते परपर्यायास्तदा तस्येति न व्यपदेष्टुं युक्तं,

८ शतके उद्देशः २ ज्ञान्यज्ञा-निनामल्पः बहुत्वं सू ३२३

॥३६२॥

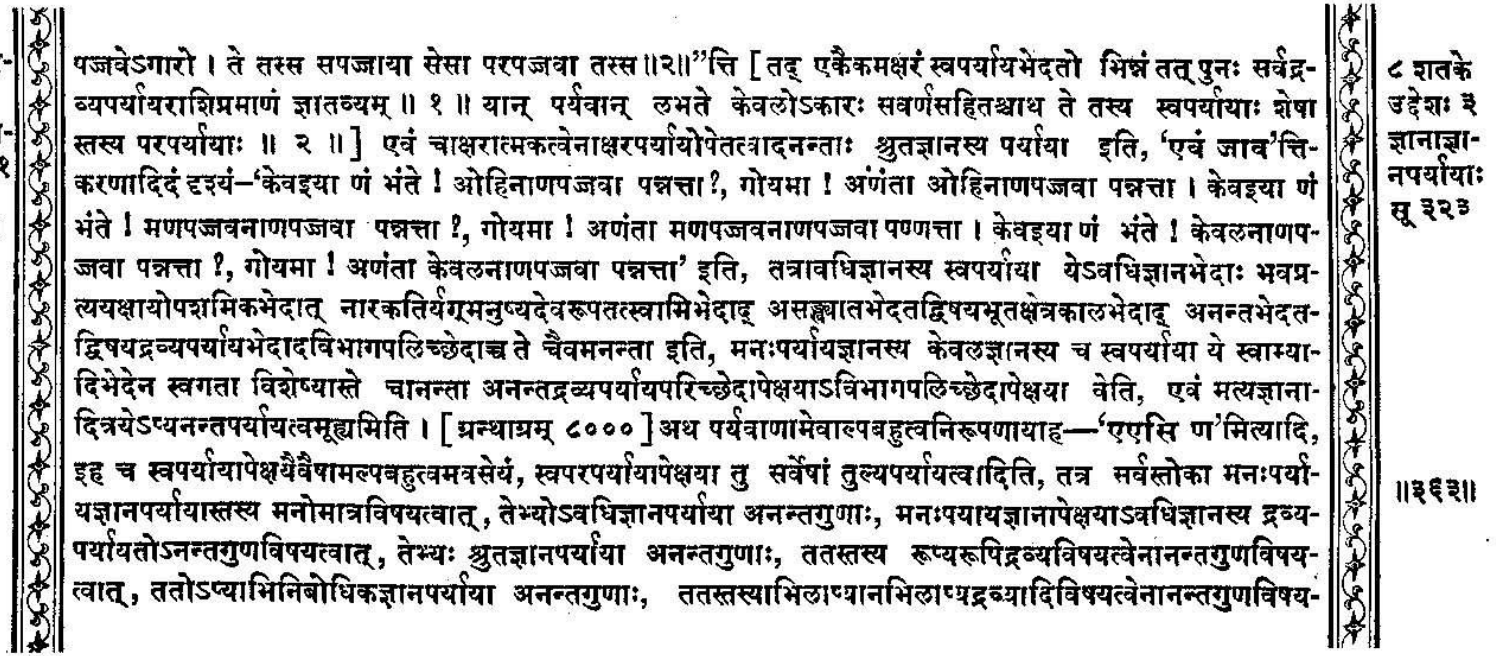
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३२२-३२३]

दीप अनुक्रम [३९५--३९६]

परसम्बन्धित्वात्, अथ तस्य ते तदा न परपर्यायास्ते व्यपदेष्टव्याः, स्वसम्बन्धित्वादिति, अत्रोच्यते, यस्मात्तत्रासम्बद्धास्ते तस्मात्तेषां परपर्यायव्यपदेशः, यस्माच्च ते परित्यज्यमानत्वेन तथा स्वपर्यायाणां स्वपर्याया एते इत्येवं विशेषणहेतुत्वेन च तस्मिन्नुपयुज्यन्ते तस्मात्तस्य पर्यवा इति व्यपदिश्यन्ते, यथाऽसम्बद्धमपि धनं स्वधनं उपयुज्यमानत्वादिति, आह च–"जइ ते परपज्जाया न तस्स अह तस्स न परपज्जाया। [आचार्य आह] –जं तंमि असंबद्धा तो परपज्जायववएसो ॥ १ ॥ चायसपज्जायविसेसणाइणा तस्स जमुवजुज्जंति। सधणमिवासंबद्धं हवंति तो पज्जवा तस्स ॥ २ ॥"त्ति। [यदि ते परपर्यायास्तस्य न अथ तस्य न परपर्यायाः। यत्तस्मिन्नसम्बद्धा ततः परपर्यायव्यपदेशः ॥ १॥ तस्य त्यागस्वपर्यायविशेषणत्वादिना यदुपयुज्यन्ते ततः स्वधनमिवासम्बद्धमपि तस्य पर्याया भवन्ति ॥ २ ॥] 'केवइया णं भंते ! सुयणाणे'त्यादौ, 'एवं चेव'त्ति अनन्ताः श्रुतज्ञानपर्यायाः प्रज्ञप्ता इत्यर्थः, ते च स्वपर्यायाः परपर्यायाश्च, तत्र स्वपर्याया ये श्रुतज्ञानस्य स्वतोऽक्षरश्रुतादयो भेदास्ते चानन्ताः क्षयोपशमवैचित्र्यविषयानन्त्याभ्यां श्रुतानुसारिणां बोधानामनन्तत्वात् अविभागपलिच्छेदानन्त्याच्च, परपर्यायास्त्वनन्ताः सर्वभावानां प्रतीता एव, अथवा श्रुतं–ग्रन्थानुसारि ज्ञानं श्रुतज्ञानं, श्रुतग्रन्थश्चाक्षरात्मकः, अक्षराणि चाकारादीनि, तेषां चैकैकमक्षरं यथायोगमुदात्तानुदात्तस्वरितभेदात् सानुनासिकनिरनुनासिकभेदात् अल्पप्रयत्नमहाप्रयत्नभेदादिभिश्च संयुक्तसंयोगासंयुक्तसंयोगभेदाद् क्ष्वादिसंयोगभेदादभिधेयानन्त्याच्च भिद्यमानमनन्तभेदं भवति, ते च तस्य स्वपर्यायाः, परपर्यायाश्चान्येऽनन्ता एव, एवं चानन्तपर्यायं तत्, आह च–"एक्केक्कमक्खरं पुण सपरपज्जायभेयओ भिन्नं। तं सव्वदव्वपज्जायरासिमाणं मुणेयव्वं ॥ १ ॥ जे लब्भइ केवलो से सवन्नसहिओ य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३६३॥

पज्जवेऽगारो । ते तस्स सपज्जाया सेसा परपज्जवा तस्स ॥२॥"त्ति [तद् एकैकमक्षरं स्वपर्यायभेदतो भिन्नं तत् पुनः सर्वद्रव्यपर्यायराशिप्रमाणं ज्ञातव्यम् ॥ १ ॥ यान् पर्यवान् लभते केवलोऽकारः सवर्णसहितश्चाथ ते तस्य स्वपर्यायाः शेषास्तस्य परपर्यायाः ॥ २ ॥] एवं चाक्षरात्मकत्वेनाक्षरपर्यायोपेतत्वादनन्ताः श्रुतज्ञानस्य पर्याया इति, 'एवं जाव'त्तिकरणादिदं दृश्यं–'केवइया णं भंते ! ओहिनाणपज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता ओहिनाणपज्जवा पन्नत्ता । केवइया णं भंते ! मणपज्जवनाणपज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता मणपज्जवनाणपज्जवा पण्णत्ता । केवइया णं भंते ! केवलनाणपज्जवा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणंता केवलनाणपज्जवा पन्नत्ता' इति, तत्रावधिज्ञानस्य स्वपर्याया येऽवधिज्ञानभेदाः भवप्रत्ययक्षायोपशमिकभेदात् नारकतिर्यग्मनुष्यदेवरूपतत्स्वामिभेदाद् असङ्ख्यातभेदतद्विषयभूतक्षेत्रकालभेदाद् अनन्तभेदतद्विषयद्रव्यपर्यायभेदादविभागपलिच्छेदाच्च ते चैवमनन्ता इति, मनःपर्यायज्ञानस्य केवलज्ञानस्य च स्वपर्याया ये स्वाम्यादिभेदेन स्वगता विशेष्यास्ते चानन्ता अनन्तद्रव्यपर्यायपरिच्छेदापेक्षयाऽविभागपलिच्छेदापेक्षया वेति, एवं मत्यज्ञानादित्रयेऽप्यनन्तपर्यायत्वमूह्यमिति । [ग्रन्थाग्रम् ८०००] अथ पर्यवाणामेवाल्पबहुत्वनिरूपणायाह—'एएसि ण'मित्यादि, इह च स्वपर्यायापेक्षयैवैषामल्पबहुत्वमवसेयं, स्वपरपर्यायापेक्षया तु सर्वेषां तुल्यपर्यायत्वादिति, तत्र सर्वस्तोका मनःपर्यायज्ञानपर्यायास्तस्य मनोमात्रविषयत्वात्, तेभ्योऽवधिज्ञानपर्याया अनन्तगुणाः, मनःपर्यायज्ञानापेक्षयाऽवधिज्ञानस्य द्रव्यपर्यायतोऽनन्तगुणविषयत्वात्, तेभ्यः श्रुतज्ञानपर्याया अनन्तगुणाः, ततस्तस्य रूप्यरूपिद्रव्यविषयत्वेनानन्तगुणविषयत्वात्, ततोऽप्याभिनिबोधिकज्ञानपर्याया अनन्तगुणाः, ततस्तस्याभिलाप्यानभिलाप्यद्रव्यादिविषयत्वेनानन्तगुणविषय-

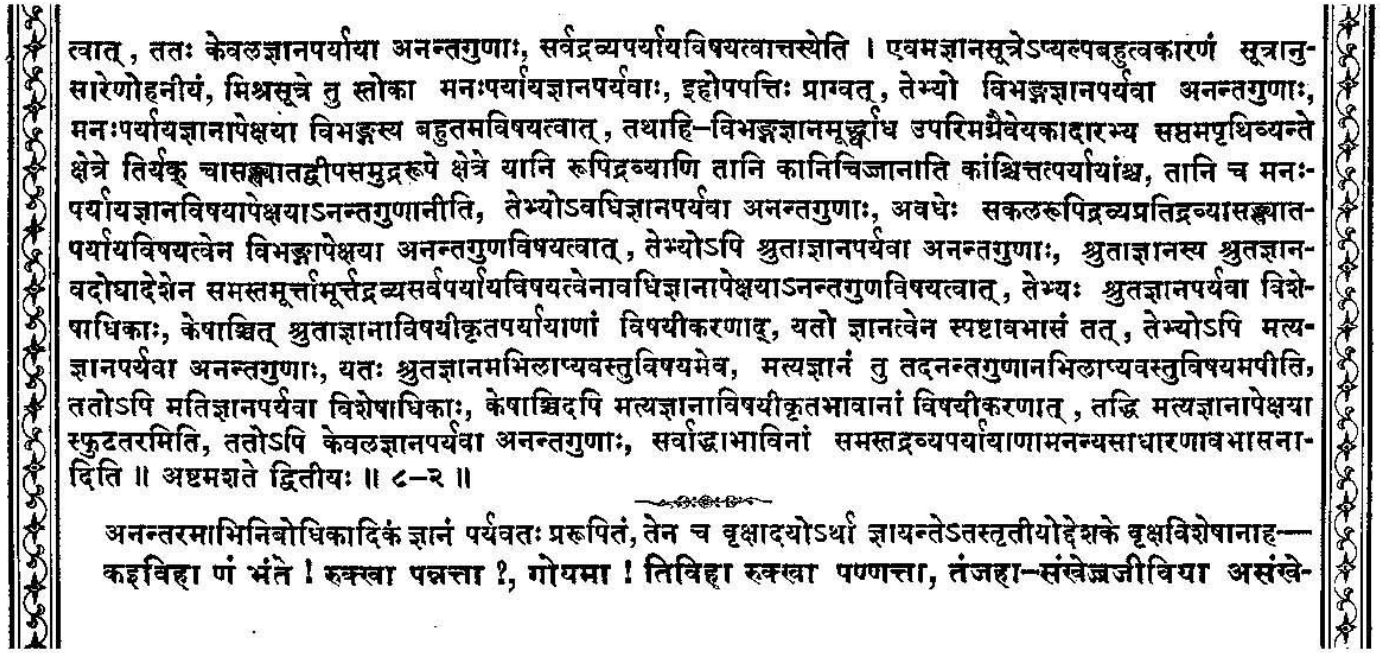
८ शतके उद्देशः २ ज्ञानाज्ञानपर्यायाः सू ३२३

॥३६३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३२२-३२३]

दीप अनुक्रम [३९५--३९६]



त्वात्, ततः केवलज्ञानपर्याया अनन्तगुणाः, सर्वद्रव्यपर्यायविषयत्वात्तस्येति । एवमज्ञानसूत्रेऽप्यल्पबहुत्वकारणं सूत्रानुसारेणोहनीयं, मिश्रसूत्रे तु स्तोका मनःपर्यायज्ञानपर्यवाः, इहोपपत्तिः प्राग्वत्, तेभ्यो विभङ्गज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, मनःपर्यायज्ञानापेक्षया विभङ्गस्य बहुतमविषयत्वात्, तथाहि–विभङ्गज्ञानमूर्द्ध्वाध उपरिमग्रैवेयकादारभ्य सप्तमपृथिव्यन्ते क्षेत्रे तिर्यक् चासङ्ख्यातद्वीपसमुद्ररूपे क्षेत्रे यानि रूपिद्रव्याणि तानि कानिचिज्जानाति कांश्चित्तत्पर्यायांश्च, तानि च मनःपर्यायज्ञानविषयापेक्षयाऽनन्तगुणानीति, तेभ्योऽवधिज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, अवधेः सकलरूपिद्रव्यप्रतिद्रव्यासङ्ख्यातपर्यायविषयत्वेन विभङ्गापेक्षया अनन्तगुणविषयत्वात्, तेभ्योऽपि श्रुताज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, श्रुताज्ञानस्य श्रुतज्ञानवदोघादेशेन समस्तमूर्त्तामूर्त्तद्रव्यसर्वपर्यायविषयत्वेनावधिज्ञानापेक्षयाऽनन्तगुणविषयत्वात्, तेभ्यः श्रुतज्ञानपर्यवा विशेषाधिकाः, केषाञ्चित् श्रुताज्ञानाविषयीकृतपर्यायाणां विषयीकरणाद्, यतो ज्ञानत्वेन स्पष्टावभासं तत्, तेभ्योऽपि मत्यज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, यतः श्रुतज्ञानमभिलाप्यवस्तुविषयमेव, मत्यज्ञानं तु तदनन्तगुणानभिलाप्यवस्तुविषयमपीति, ततोऽपि मतिज्ञानपर्यवा विशेषाधिकाः, केषाञ्चिदपि मत्यज्ञानाविषयीकृतभावानां विषयीकरणात्, तद्धि मत्यज्ञानापेक्षया स्फुटतरमिति, ततोऽपि केवलज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, सर्वोद्धाभाविनां समस्तद्रव्यपर्यायाणामनन्यसाधारणावभासनादिति ॥ अष्टमशते द्वितीयः ॥ ८–२ ॥

अनन्तरमाभिनिबोधिकादिकं ज्ञानं पर्यवतः प्ररूपितं, तेन च वृक्षादयोऽर्था ज्ञायन्तेऽतस्तृतीयोद्देशके वृक्षविशेषानाह—
कइविहा णं भंते ! रुक्खा पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा रुक्खा पण्णत्ता, तंजहा–संखेज्जजीविया असंखे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टम-शतके द्वितीय-उद्देशकः समाप्तः

अथ अष्टम-शतके तृतीय-उद्देशकः आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [३२४]

दीप अनुक्रम [३९७]

जजीविया अणंतजीविया । से किं तं संखेज्जजीविया ?, संखे० अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–ताले तमाले तक्कलि तेतलि जहा पन्नवणाए जाव नालिएरी, जे यावन्ने तहप्पगारा, सेत्तं संखेज्जजीविया । से किं तं असंखेज्जजीविया ?, असंखेज्जजीविया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–एगट्ठिया य बहुबीयगा य । से किं तं एगट्ठिया ?, २ अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–निंबंबजंबू० एवं जहा पन्नवणापए जाव फला बहुबीयगा, सेत्तं बहुबीयगा, सेत्तं असंखेज्जजीविया । से किं तं अणंतजीविया ?, अणंतजीविया अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–आलुए मूलए सिंगबेरे, एवं जहा सत्तमसए जाव सीउण्हे सिउंढी मुसुंढी, जे यावन्ने त०, सेत्तं अणंतजीविया ॥ (सूत्रं ३२४) ॥

'कई'त्यादि, 'संखेज्जजीविय'त्ति सङ्ख्याता जीवा येषु सन्ति ते सङ्ख्यातजीविकाः, एवमन्यदपि पदद्वयं, 'जहा पन्नवणाए'त्ति यथा प्रज्ञापनायां तथाऽत्रेदं सूत्रमध्येयं, तत्र चैवमेतत्–'ताले तमाले तक्कलि तेतलि साले य सालकल्लाणे । सरले जायइ केयइ कंदलि तह चम्मरुक्खे य ॥ १ ॥ भुयरुक्खे हिंगुरुक्खे लवंगरुक्खे य होइ बोद्धवे । पूयफली खजूरी बोद्धवा नालिएरी य ॥ २ ॥" 'जे यावन्ने तहप्पगारे'ति ये चाप्यन्ये तथाप्रकारा वृक्षविशेषास्ते सङ्ख्यातजीविका इति प्रक्रमः । 'एगट्ठिया य'त्ति एकमस्थिकं–फलमध्ये बीजं येषां ते एकास्थिकाः 'बहुबीयगा य'त्ति बहूनि बीजानि फलमध्ये येषां ते बहुबीजकाः–अनेकास्थिकाः 'जहा पन्नवणापए'त्ति यथा प्रज्ञापनाख्ये प्रज्ञापनाप्रथमपदे तथाऽत्रेदं सूत्रमध्येयं, तच्चैवं–"निंबंबजंबुकोसंबसालअंकोल्लपीलुसल्लूया । सल्लइमोयइमालुय बउलपलासे करंजे य ॥ १ ॥" इत्यादि । तथा "से

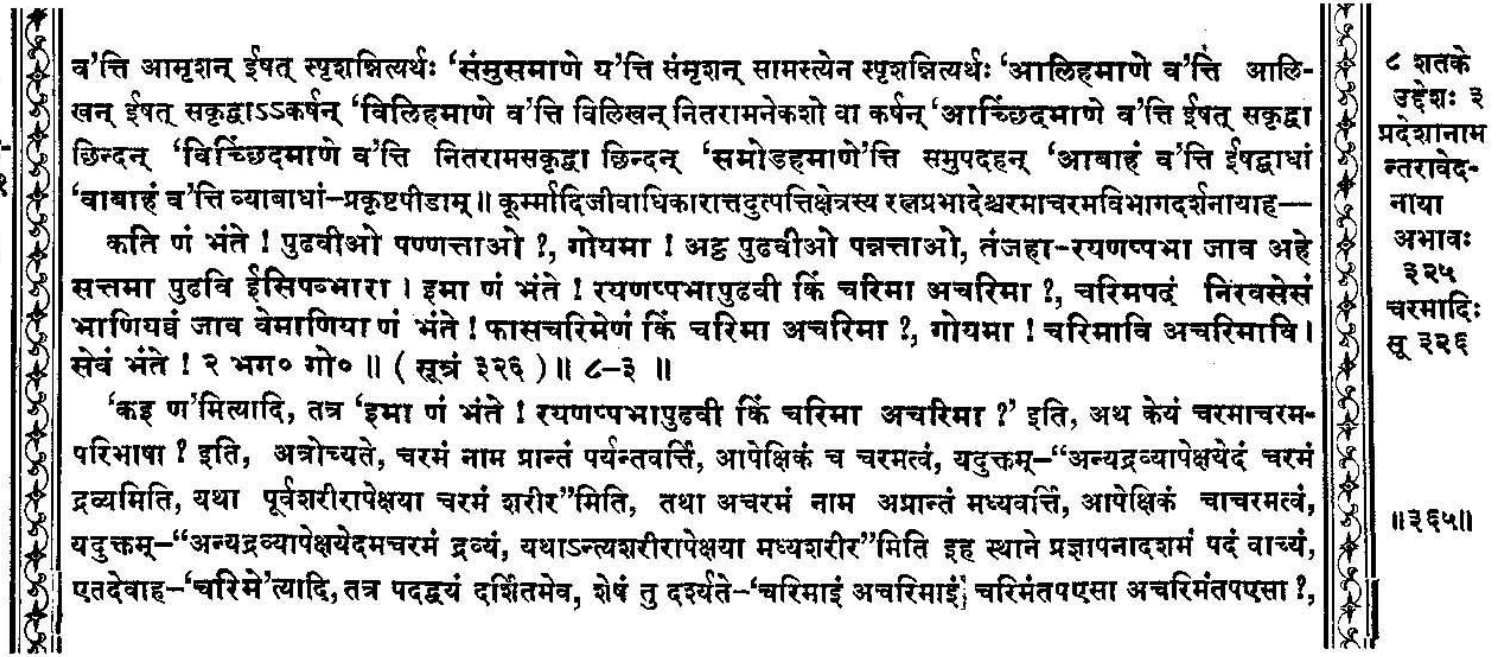
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किं तं बहुबीयगा ?, बहुबीयगा अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा–अत्थियतेंदुकविट्ठे अंबाडगमाउलुंगबिल्ले य । आमलगफणसदाडिम आसोट्ठे उंबरवडे य ॥ १ ॥" इत्यादि । अन्तिमं पुनरिदं सूत्रमत्र–"एएसिं मूलावि असंखेज्जजीविया कंदावि खंधावि तयावि सालावि पवालावि, पत्ता पत्तेयजीविया पुप्फा अणेगजीविया फला बहुबीयग"त्ति, एतदन्तं चेदं वाच्यमिति दर्शयन्नाह–'जावे'त्यादि ॥ अथ जीवाधिकारादिदमाह—

अह भंते ! कुम्मे कुम्मावलिया गोहे गोहावलिया गोणे गोणावलिया मणुस्से मणुस्सावलिया महिसे महिसावलिया एएसि णं दुहा वा तिहा वा संखेज्जहावि छिन्नाणं जे अंतरा तेवि णं तेहिं जीवपएसेहिं फुडा ?, हंता फुडा । पुरिसे णं भंते ! (जं अंतरं) ते अंतरे हत्थेण वा पादेण वा अंगुलियाए वा सलागाए वा कट्ठेण वा कलिंचेण वा आमुसमाणे वा संमुसमाणे वा आलिहमाणे वा विलिहमाणे वा अन्नयरेण वा तिक्खेणं सत्थजाएणं आच्छिंदमाणे वा विच्छिंदमाणे वा अगणिकाएणं वा समोडहमाणे तेसिं जीवपएसाणं किंचि आबाहं वा विबाहं वा उप्पायइ छविच्छेदं वा करेइ ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं संकमइ ॥ (सूत्रे ३२५) ॥

'अहे'त्यादि, 'कुम्मे'त्ति 'कूर्मः' कच्छपः 'कुम्मावलिय'त्ति 'कूर्मावलिका' कच्छपपङ्क्तिः 'गोहे'त्ति गोधा सरीसृपविशेषः 'जं अंतर'न्ति यान्यन्तरालानि 'ते अंतरे'त्ति तान्यन्तराणि 'कलिंचेण व'त्ति क्षुद्रकाष्ठरूपेण 'आमुसमाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३६५॥

व'त्ति आमृशन् ईषत् स्पृशन्नित्यर्थः 'संमुसमाणे य'त्ति संमृशन् सामस्त्येन स्पृशन्नित्यर्थः 'आलिहमाणे व'त्ति आलि-खन् ईषत् सकृद्वाऽऽकर्षन् 'विलिहमाणे व'त्ति विलिखन् नितरामनेकशो वा कर्षन् 'आच्छिंदमाणे व'त्ति ईषत् सकृद्वा छिन्दन् 'विच्छिंदमाणे व'त्ति नितरामसकृद्वा छिन्दन् 'समोडहमाणे'त्ति समुपदहन् 'आबाहं व'त्ति ईषद्बाधां 'वाबाहं व'त्ति व्याबाधां–प्रकृष्टपीडाम्॥ कूर्म्मादिजीवाधिकारात्तदुत्पत्तिक्षेत्रस्य रत्नप्रभादेश्चरमाचरमविभागदर्शनायाह—

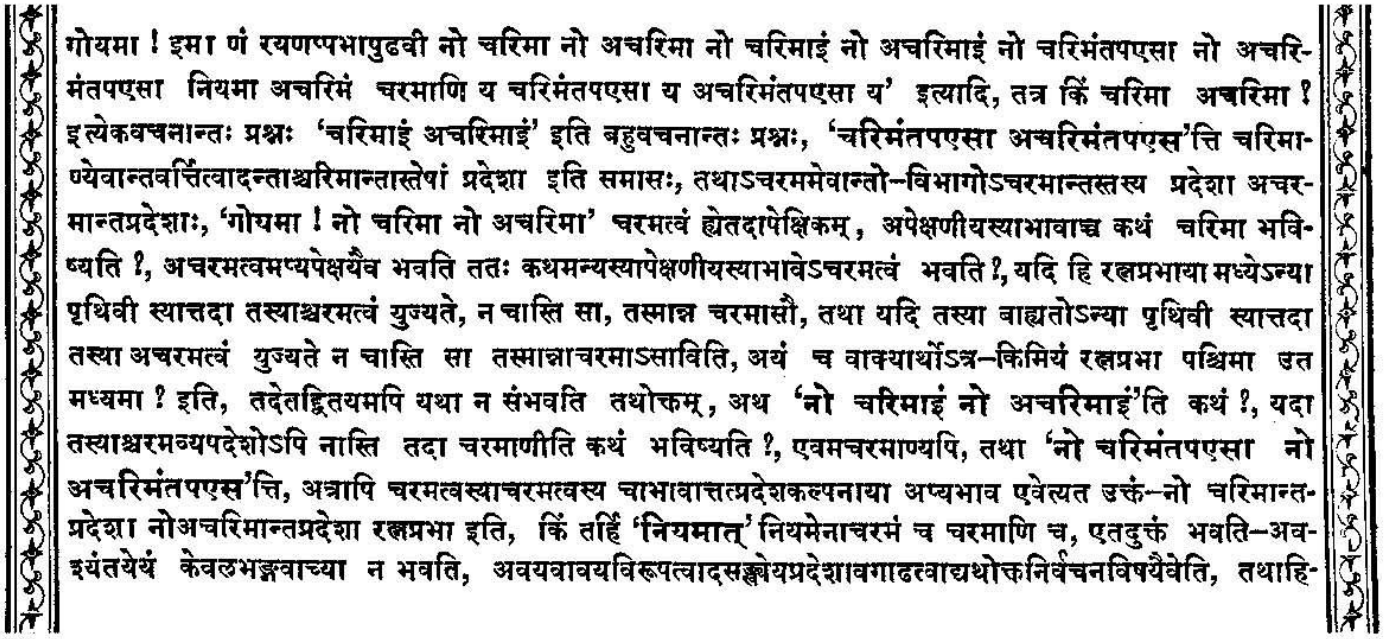
कति णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ पुढवीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–रयणप्पभा जाव अहे सत्तमा पुढवि ईसिपब्भारा । इमा णं भंते ! रयणप्पभापुढवी किं चरिमा अचरिमा ?, चरिमपदं निरवसेसं भाणियव्वं जाव वेमाणिया णं भंते ! फासचरिमेणं किं चरिमा अचरिमा ?, गोयमा ! चरिमावि अचरिमावि। सेवं भंते ! २ भग० गो० ॥ (सूत्रं ३२६)॥ ८–३ ॥

'कइ णं'मित्यादि, तत्र 'इमा णं भंते ! रयणप्पभापुढवी किं चरिमा अचरिमा ?' इति, अथ केयं चरमाचरम-परिभाषा ? इति, अत्रोच्यते, चरमं नाम प्रान्तं पर्यन्तवर्त्ति, आपेक्षिकं च चरमत्वं, यदुक्तम्–"अन्यद्रव्यापेक्षयेदं चरमं द्रव्यमिति, यथा पूर्वशरीरापेक्षया चरमं शरीर"मिति, तथा अचरमं नाम अप्रान्तं मध्यवर्त्ति, आपेक्षिकं चाचरमत्वं, यदुक्तम्–"अन्यद्रव्यापेक्षयेदमचरमं द्रव्यं, यथाऽन्त्यशरीरापेक्षया मध्यशरीर"मिति इह स्थाने प्रज्ञापनादशमं पदं वाच्यं, एतदेवाह–'चरिमे'त्यादि, तत्र पदद्वयं दर्शितमेव, शेषं तु दर्श्यते–'चरिमाइं अचरिमाइं; चरिमंतपएसा अचरिमंतपएसा ?,

८ शतके उद्देशः ३ प्रदेशानाम न्तरावेद-नाया अभावः ३२५ चरमादिः सू ३२६

॥३६५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



गोयमा ! इमा णं रयणप्पभापुढवी नो चरिमा नो अचरिमा नो चरिमाइं नो अचरिमाइं नो चरिमंतपएसा नो अचरिमंतपएसा नियमा अचरिमं चरमाणि य चरिमंतपएसा य अचरिमंतपएसा य' इत्यादि, तत्र किं चरिमा अचरिमा ? इत्येकवचनान्तः प्रश्नः 'चरिमाइं अचरिमाइं' इति बहुवचनान्तः प्रश्नः, 'चरिमंतपएसा अचरिमंतपएस'त्ति चरिमाण्येवान्तवर्त्तित्वादन्ताश्चरिमान्तास्तेषां प्रदेशा इति समासः, तथाऽचरममेवान्तो–विभागोऽचरमान्तस्तस्य प्रदेशा अचरमान्तप्रदेशाः, 'गोयमा ! नो चरिमा नो अचरिमा' चरमत्वं ह्येतदापेक्षिकम्, अपेक्षणीयस्याभावाच्च कथं चरिमा भविष्यति ?, अचरमत्वमप्यपेक्षयैव भवति ततः कथमन्यस्यापेक्षणीयस्याभावेऽचरमत्वं भवति ?, यदि हि रत्नप्रभाया मध्येऽन्या पृथिवी स्यात्तदा तस्याश्चरमत्वं युज्यते, न चास्ति सा, तस्मान्न चरमासौ, तथा यदि तस्या बाह्यतोऽन्या पृथिवी स्यात्तदा तस्या अचरमत्वं युज्यते न चास्ति सा तस्मान्नाचरमाऽसाविति, अयं च वाक्यार्थोऽत्र–किमियं रत्नप्रभा पश्चिमा उत मध्यमा ? इति, तदेतद्वितयमपि यथा न संभवति तथोक्तम्, अथ 'नो चरिमाइं नो अचरिमाइं'ति कथं ?, यदा तस्याश्चरमव्यपदेशोऽपि नास्ति तदा चरमाणीति कथं भविष्यति ?, एवमचरमाण्यपि, तथा 'नो चरिमंतपएसा नो अचरिमंतपएस'त्ति, अत्रापि चरमत्वस्याचरमत्वस्य चाभावात्तत्प्रदेशकल्पनाया अप्यभाव एवेत्यत उक्तं–नो चरिमान्तप्रदेशा नोअचरिमान्तप्रदेशा रत्नप्रभा इति, किं तर्हि 'नियमात्' नियमेनाचरमं च चरमाणि च, एतदुक्तं भवति–अवश्यंतयेयं केवलभङ्गवाच्या न भवति, अवयवावयविरूपत्वादसङ्ख्येयप्रदेशावगाढत्वाद्यथोक्तनिर्वचनविषयैवेति, तथाहि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

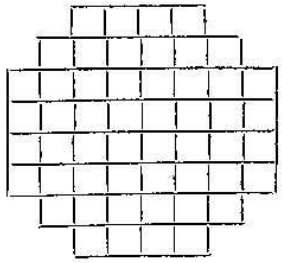
प्रत सूत्रांक [३२६, ३२७]

दीप अनुक्रम [३९९, ४००]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १

॥३६६॥

रत्नप्रभा तावदनेन प्रकारेण व्यवस्थितेति विनेयजनानुग्रहाय लिख्यते, स्थापना चेयम्—



एवमवस्थितायां यानि प्रान्तेषु व्यवस्थितानि तदध्यासितक्षेत्रखण्डानि तानि तथाविधविशिष्टैकपरिणामयुक्तत्वाच्चरमाणि, यत्पुनर्मध्ये महद् रत्नप्रभाक्रान्तं क्षेत्रखण्डं तदपि तथाविधपरिणामयुक्तत्वादचरमं तदुभयसमुदायरूपा चेयमन्यथा तदभावप्रसङ्गात्, प्रदेशपरिकल्पनायां तु चरमान्तप्रदेशाश्चाचरमान्तप्रदेशाश्च, कथं ?, ये बाह्यखण्डप्रदेशास्ते चरमान्तप्रदेशाः ये च मध्यखण्डप्रदेशास्तेऽचरमान्तप्रदेशा इति, अनेन चैकान्तदुर्णयनिरासप्रधानेन निर्वचनसूत्रेणावयवावयविरूपं वस्त्वित्याह, तयोश्च भेदाभेद इति। एवं शर्करादिष्वपि, अथ कियद्दूरं तद्वाच्यम् ? इत्याह–'जावे'त्यादि, ये वैमानिकभवसम्भवं स्पर्शं न लप्स्यन्ते पुनस्तत्रानुत्पादेन मुक्तिगमनात्ते वैमानिकाः स्पर्शचरमेण चरमाः, ये तु तं पुनर्लप्स्यन्ते ते त्वचरमा इति ॥ अष्टमशते तृतीयः ॥ ८–३ ॥

अनन्तरोद्देशके वैमानिका उक्तास्ते च क्रियावन्त इति चतुर्थोद्देशके ता उच्यन्ते, तत्र च 'रायगिहे'इत्यादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–कति णं भंते ! किरियाओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! पंच किरियाओ पन्नत्ताओ, तंजहा–काइया अहिगरणिया, एवं किरियापदं निरवसेसं भाणियव्वं जाव मायावत्तियाओ किरियाओ विसेसाहियाओ, सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति भगवं गोयमे० ॥ (सूत्रं ३२७) ॥ ८–४ ॥

८ शतके उद्देशः ३ चरमादिः सू ३२६ कायिक्यादयः सू ३२७

॥३६६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टम-शतके तृतीय-उद्देशक: समाप्त:

अथ अष्टम-शतके चतुर्थ-उद्देशक: आरभ्यते

'एवं किरियापयं'ति, 'एवम्' एतेन क्रमेण क्रियापदं प्रज्ञापनाया द्वाविंशतितमं, तच्चैवं–'काइया अहिगरणिया पाओसिया पारियावणिया पाणाइवायकिरिया' इत्यादि, अन्तिमं पुनरिदं सूत्रमत्र 'एयासि णं भंते ! आरंभियाणं परिग्गहियाणं अप्पच्चक्खाणियाणं मायावत्तियाणं मिच्छादंसणवत्तियाण य कयरे२हिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा मिच्छादंसणवत्तियाओ किरियाओ' मिथ्यादृशामेव तद्भावात्, 'अप्पच्चक्खाणकिरियाओ विसेसाहियाओ' मिथ्यादृशामविरतसम्यग्दृशां च तासां भावात्, 'परिग्गहियाओ विसेसाहियाओ' पूर्वोक्तानां देशविरतानां च तासां भावात्, 'आरंभियाओ किरियाओ विसेसाहियाओ' पूर्वोक्तानां प्रमत्तसंयतानां च तासां भावात्, 'मायावत्तियाओ विसेसाहियाओ' पूर्वोक्तानामप्रमत्तसंयतानां च तद्भावादिति, एतदन्तं चेदं वाच्यमिति दर्शयन्नाह–'जावे'त्यादि, इह गाथे–"मिच्छापच्चक्खाणे परिग्गहारंभमायकिरियाओ । कमसो मिच्छा अविरयदेसपमत्तप्पमत्ताणं ॥ १ ॥ मिच्छत्तवत्तियाओ मिच्छदिट्ठीण चेव तो थोवा । सेसाणं एक्केको वड्ढइ रासी तओ अहिया ॥ २ ॥" इति ॥ [गतार्थे पूर्वोक्तेन] ॥ अष्टमशते चतुर्थोद्देशकः ॥ ८–४ ॥

क्रियाधिकारात्पञ्चमोद्देशके परिग्रहादिक्रियाविषयं विचारं दर्शयन्नाह—

रायगिहे जाव एवं वयासी–आजीविया णं भंते ! थेरे भगवंते एवं वयासी–समणोवासगस्स णं भंते ! सामाइयकडस्स समणोवस्सए अच्छमाणस्स केइ भंडे अवहरेज्जा से णं भंते ! तं भंडं अणुगवेसमाणे किं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र अष्टम-शतके चतुर्थ-उद्देशकः समाप्तः अथ अष्टम-शतके पंचम-उद्देशकः आरभ्यते

सयं भंडं अणुगवेसइ परायगं भंडं अणुगवेसइ ?, गोयमा ! सयं भंडं अणुगवेसति नो परायगं भंडं अणुगवेसेइ, तस्स णं भंते ! तेहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं से भंडे अभंडे भवति ?, हंता भवति ॥ से केणं खाइ णं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सयं भंडं अणुगवेसइ नो परायगं भंडं अणुगवेसइ ? गोयमा ! तस्स णं एवं भवति–णो मे हिरन्ने नो मे सुवन्ने नो मे कंसे नो मे दूसे नो मे विउलधणकणगरयण-मणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमादीए संतसारसावदेज्जे, ममत्तभावे पुण से अपरिण्णाए भवति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–सयं भंडं अणुगवेसइ नो परायगं भंडं अणुगवेसइ ॥ समणोवासगस्स णं भंते ! सामाइयकडस्स समणोवस्सए अच्छमाणस्स केति जायं चरेज्जा से णं भंते ! किं जायं चरइ अजायं चरइ ?, गोयमा ! जायं चरइ नो अजायं चरइ, तस्स णं भंते ! तेहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं सा जाया अजाया भवइ ?, हंता भवइ, से केणं खाइ णं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–जायं चरइ नो अजायं चरइ ?, गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ–णो मे माता णो मे पिता णो मे भाया णो मे भगिणी णो मे भज्जा णो मे पुत्ता णो मे धूया नो मे सुण्हा, पेज्जबंधणे पुण से अवोच्छिन्ने भवइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो अजायं चरइ ॥ (सूत्रं ३२८) ॥

'रायगिहे' इत्यादि, गौतमो भगवन्तमेवमवादीत्–'आजीविकाः' गोशालकशिष्या भदन्त ! 'स्थविरान्' निर्ग्रन्थान् भगवतः 'एवं' वक्ष्यमाणप्रकारमवादिषुः, यच्च ते तान् प्रत्यवादिषुस्तद्गौतमः स्वयमेव पृच्छन्नाह–'समणोवासगस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ण'मित्यादि,'सामाइयकडस्स'त्ति कृतसामायिकस्य–प्रतिपन्नाद्यशिक्षाव्रतस्य, श्रमणोपाश्रये हि श्रावकः सामायिकं प्रायः प्रतिपद्यते इत्यत उक्तं श्रमणोपाश्रये आसीनस्येति, 'केइ'त्ति कश्चित्पुरुषः 'भंडं'ति वस्त्रादिकं वस्तु गृहवर्त्ति साधूपाश्रयवर्त्ति वा 'अवहरेज्ज'त्ति अपहरेत् 'से'त्ति स श्रमणोपासकः 'तं भंडं'ति तद्–अपहृतं भाण्डम् 'अणुगवेसमाणे'त्ति सामायिकपरिसमाप्त्यनन्तरं गवेषयन् 'सभंडं'ति स्वकीयं भाण्डं 'परायगं'ति परकीयं वा?, पृच्छतोऽयमभिप्रायः–स्वसम्बन्धित्वात्तत्स्वकीयं सामायिकप्रतिपत्तौ च परिग्रहस्य प्रत्याख्यातत्वादस्वकीयमतः प्रश्नः, अत्रोत्तरं–'सभंडं'ति स्वभाण्डं, 'तेहिं'ति तैर्विवक्षितैर्यथाक्षयोपशमं गृहीतैरित्यर्थः, 'सीले'त्यादि, तत्र शीलव्रतानि–अणुव्रतानि गुणा –गुणव्रतानि विरमणानि–रागादिविरतयः प्रत्याख्यानं–नमस्कारसहितादि पौषधोपवासः–पर्वदिनोपवसनं तत एषां द्वन्द्वोऽतस्तैः, इह च शीलव्रतादीनां ग्रहणेऽपि सावद्ययोगविरत्या विरमणशब्दोपात्तया प्रयोजनं तस्या एव परिग्रहस्यापरिग्रहतानिमित्तत्वेन भाण्डस्याभाण्डताभवनहेतुत्वादिति 'से भंडे अभंडे भवइ'त्ति 'तत्' अपहृतं भाण्डमभाण्डं भवत्यसंव्यवहार्यत्वात् ॥ 'से केणं'ति अथ केन 'खाइ णं'ति पुनः 'अट्ठेणं'ति अर्थेन हेतुना 'एवं भवइ'त्ति एवंभूतो मनःपरिणामो भवति– 'नो मे हिरन्ने'इत्यादि, हिरण्यादिपरिग्रहस्य द्विविधं त्रिविधेन प्रत्याख्यातत्वात्, उक्तानुक्तार्थानुसङ्ग्रहेणाह–'नो मे'इत्यादि धनं–गणिमादि गवादि वा कनकं–प्रतीतं रत्नानि–कर्केतनादीनि मणयः–चन्द्रकान्तादयः मौक्तिकानि शङ्खाश्च प्रतीताः शिलाप्रवालानि–विद्रुमाणि, अथवा शिला–मुक्ताशिलाद्याः प्रवालानि–विद्रुमाणि रक्तरत्नानि–पद्मरागादीनि तत एषां द्वन्द्वस्ततो विपुलानि–धनादीन्यादिर्यस्य स तत्तथा 'संत'त्ति विद्यमानं 'सार'त्ति प्रधानं 'सावएज्ज'-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३२८]

दीप अनुक्रम [४०१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३६८॥

त्ति स्वापतेयं द्रव्यम्, एतस्य च पदत्रयस्य कर्मधारयः, अथ यदि तद्भाण्डमभाण्डं भवति तदा कथं स्वकीयं तद् गवेषयति? इत्याशङ्क्याह–'ममत्ते'त्यादि, परिग्रहादिविषये मनोवाक्कायानां करणकारणे तेन प्रत्याख्याते ममत्वभावः पुनः–हिरण्यादिविषये ममतापरिणामः पुनः 'अपरिज्ञातः' अप्रत्याख्यातो भवति, अनुमतेरप्रत्याख्यातत्वात्, ममत्वभावस्य चानुमतिरूपत्वादिति ॥ 'केइ जायं चरेज्ज'त्ति कश्चिद् उपपतिरित्यर्थः 'जायां' भार्यां 'चरेत्' सेवेत, 'सुण्ह'त्ति स्नुषा–पुत्रभार्यां 'पेज्जबंधणे'त्ति प्रेमैव–प्रीतिरेव बन्धनं प्रेमबन्धनं तत्पुनः 'से' तस्य श्राद्धस्याव्यवच्छिन्नं भवति, अनुमतेरप्रत्याख्यातत्वात् प्रेमानुबन्धस्य चानुमतिरूपत्वादिति ॥

समणोवासगस्स णं भंते ! पुव्वामेव थूलए पाणाइवाए अपच्चक्खाए भवइ से णं भंते! पच्छा पच्चाइक्खमाणे किं करेति ?, गोयमा ! तीयं पडिक्कमइ पडुप्पन्नं संवरेइ अणागयं पच्चक्खाति ॥ तीयं पडिक्कममाणे किं तिविहं तिविहेणं पडिक्कमति १ तिविहं दुविहेणं पडिक्कमति २ तिविहं एगविहेणं पडिक्कमति ३ दुविहं तिविहेणं पडिक्कमति ४ दुविहं दुविहेणं पडिक्कमति ५ दुविहं एगविहेणं पडिक्कमति ६ एक्कविहं तिविहेणं पडिक्कमति ७ एक्कविहं दुविहेणं पडिक्कमति ८ एक्कविहं एगविहेणं पडिक्कमति ९, गोयमा ! तिविहं तिविहेणं पडिक्कमति तिविहं दुविहेण वा पडिक्कमति तं चेव जाव एक्कविहं वा एक्कविहेणं पडिक्कमति, तिविहं वा तिविहेणं पडिक्कममाणे न करेति न कारवेति करेंतं णाणुजाणइ मणसा वयसा कायसा १, तिविहं दुविहेणं पडि० न क० न का० करेंतं नाणुजाणइ मणसा वयसा २, अहवा न करेइ न का० करेंतं नाणुजा० मणसा कायसा ३, अह न

८ शतके उद्देशः५ श्रमणोपा-सकव्रत-भङ्गाः सू ३२९

॥३६८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रमणोपासकस्य व्रत एवं तस्य भेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३२९--३३१]

दीप अनुक्रम [४०२--४०४]

करेइ ३ वयसा कायसा ४, तिविहं एगविहेणं पडि० न करेति ३ मणसा ५, अहवा न करेइ ३ वयसा ६, अहवा न करेइ३ कायसा ७, दुविहं ति० प० न करेइ न का० मणसा वयसा कायसा ८, अहवा न करेइ करेंतं नाणुजाणइ मण० वय० काय० ९, अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजा० मणसा वयसा कायसा १०, दु० दु० प० न क० न का० म० व० ११, अहवा न क० न का० म० कायसा १२, अहवा न क० न का० वयसा कायसा १३, अहवा न करेइ करेंतं नाणुजाणइ मणसा वयसा १४, अहवा न करे० करेंतं नाणुजाणइ मणसा कायसा १५, अहवा न करेति करेंतं नाणुजाणति वयसा कायसा १६, अहवा न कारवेति करेंतं नाणुजाणति मणसा वयसा १७, अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजाणइ मणसा कायसा १८, अहवा न कारवेति करेंतं नाणुजाणइ वयसा कायसा १९, दुविहं एक्कविहेणं पडिक्कममाणे न करेति न कारवेति मणसा २०, अहवा न करेति न कारवेति वयसा २१, अहवा न करेति न कारवेति कायसा २२, अहवा न करेति करेंतं नाणुजाणइ मणसा २३, अहवा न करेइ करेतं नाणुजाणइ वयसा २४, अहवा न करेइ करेंतं नाणुजाणइ कायसा २५, अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजाणइ मणसा २६, अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजाणइ वयसा २७ अहवा न कारवेइ करेंतं नाणुजाणइ कायसा २८, एगविहं तिविहेणं पडि० न करेति मणसा वयसा कायसा २९, अहवा न कारवेइ मण० वय० कायसा ३०, अहवा करेंतं नाणुजा० मणसा ३।३१, एक्कविहं दुविहेणं पडिक्कममाणे न करेति मणसा वयसा ३२, अहवा न करेति मणसा कायसा ३३, अहवा न करेइ वयसा कायसा ३४, अहवा न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रमणोपासकस्य व्रत एवं तस्य भेदा:

कारवेति मणसा वयसा ३५, अहवा न कारवेति मणसा कायसा ३६, अहवा न कारवेइ वयसा कायसा ३७, अहवा करेंतं नाणुजा० मणसा वयसा ३८, अहवा करेंतं नाणुजा० मणसा कायसा ३९, अहवा करेंतं नाणुजाणइ वयसा कायसा ४०, एक्कविहं एगविहेणं पडिक्कममाणे न करेति मणसा ४१, अहवा न करेति वयसा ४२, अहवा न करेति कायसा ४३, अहवा न कारवेति मणसा ४४, अहवा न कारवेति वयसा ४५, अहवा न कारवेइ कायसा ४६, अहवा करेंतं नाणुजाणइ मणसा ४७ अहवा करेंतं नाणुजा० वयसा ४८ अहवा करेंतं नाणुजाणइ कायसा ४९। पडुप्पन्नं संवरेमाणे किं तिविहं तिविहेणं संवरेइ ?, एवं जहा पडिक्कममाणेणं एगूणपन्नं भंगा भणिया एवं संवरमाणेणवि एगूणपन्नं भंगा भाणियव्वा। अणागयं पच्चक्खमाणे किं तिविहं तिविहेणं पच्चक्खाइ ? एवं ते चेव भंगा एगूणपन्ना भाणियव्वा जाव अहवा करेंतं नाणुजाणइ कायसा ॥ समणोवासगस्स णं भंते ! पुव्वामेव थूलमुसावाए अपच्चक्खाए भवइ से णं भंते ! पच्छा पच्चाइक्खमाणे एवं जहा पाणाइवायस्स सीयालं भंगसयं भणियं तहा मुसावायस्सवि भाणियव्वं। एवं अदिन्नादाणस्सवि, एवं थूलगस्स मेहुणस्सवि थूलगस्स परिग्गहस्सवि जाव अहवा करेंतं नाणुजाणइ कायसा ॥ एए खलु एरिसगा समणोवासगा भवंति, नो खलु एरिसगा आजीवियोवासगा भवंति (सूत्रं३२९)॥ आजीवियसमयस्स णं अयमट्ठे पण्णत्ते अक्खीणपडिभोइणो सव्वे सत्ता से हंता छेत्ता भेत्ता लुंपित्ता विलुंपित्ता उद्दवइत्ता आहारमाहारेंति, तत्थ खलु इमे दुवालस आजीवियोवासगा भवंति, तंजहा–ताले १ तालपलंबे २ उविहे ३ संविहे ४ अवविहे ५ उदए ६ नामुदए ७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रमणोपासकस्य व्रत एवं तस्य भेदा:

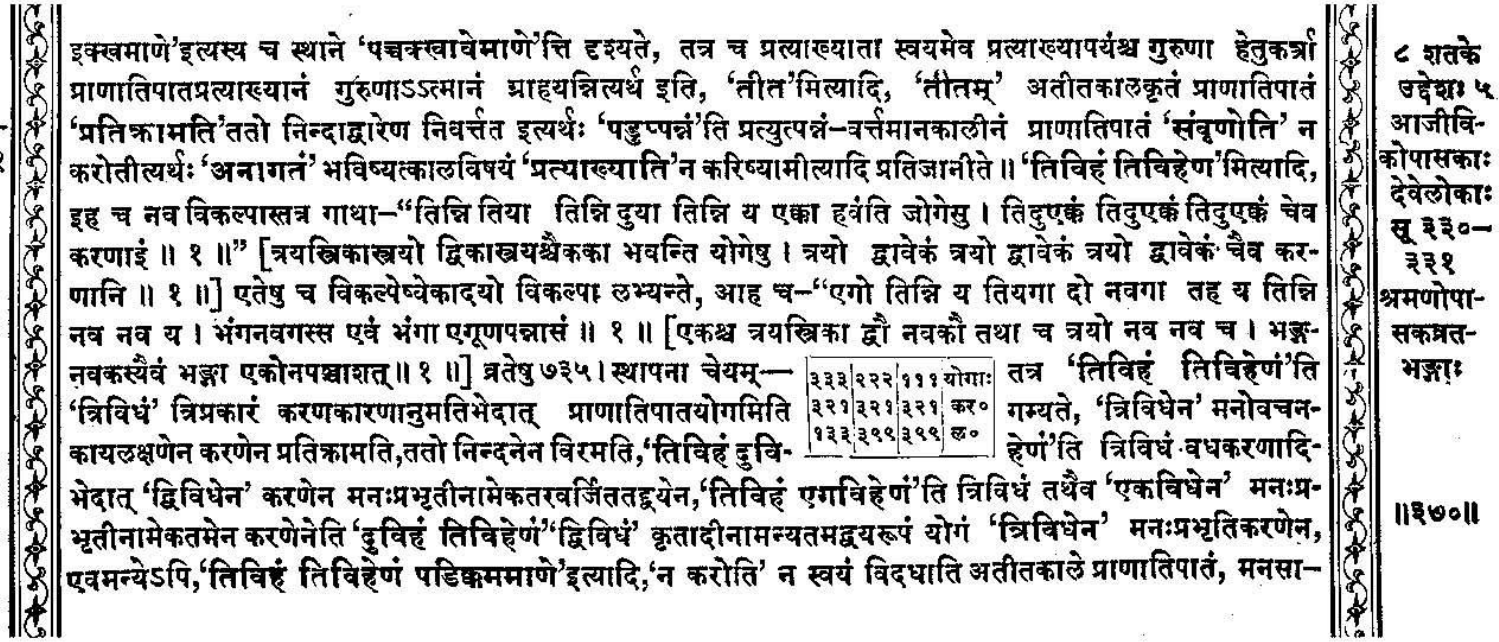
णमुदए ८ अणुवालए ९ संखवालए १० अयंबुले ११ कायरए १२, इच्चेते दुवालसमाजीवियोवासगा अरिहंत-देवतागा अम्मापिउसुस्सूसगा पंचफलपडिक्कंता, तंजहा–उंबरेहिं वडेहिं बोरेहिं सतरेहिं पिलंखूहिं, पलंडुल्ह-सणकंदमूलविवज्जगा अणिल्लंछिएहिं अणक्कभिन्नेहिं गोणेहिं तसपाणविवज्जिएहिं चित्तेहिं वित्तिं कप्पेमाणे विहरंति, एएवि ताव एवं इच्छंति, किमंग पुण जे इमे समणोवासगा भवंति जेसिं नो कप्पंति इमाइं पन्नरस कम्मादाणाइं सयं करेत्तए वा कारवेत्तए वा करेंतं वा अन्नं न समणुजाणेत्तए, तंजहा–इंगालकम्मे वणकम्मे साडीकम्मे भाडीकम्मे फोडीकम्मे दंतवाणिज्जे लक्खवाणिज्जे केसवाणिज्जे रसवाणिज्जे विसवाणिज्जे जंतपील-णकम्मे निल्लंछणकम्मे दवग्गिदावणया सरदहतलायपरिसोसणया असतीपोसणया, इच्चेते समणोवासगा सुक्का सुक्काभिजातीया भविया भवित्ता कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति ॥ (सूत्रं३३०) कतिविहा णं भंते ! [देवा] देवलोगा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चउविहा देवलोगा पण्णत्ता तंजहा–भवणवासिवाणमंतरजोइसवेमाणिया, सेवं भंते २ ॥ (सूत्रं ३३१) ॥ अट्ठमसयस्स पंचमो ॥ ८–५ ॥

'समणोवासयस्स णं'ति तृतीयार्थत्वात् षष्ठ्याः श्रमणोपासकेनेत्यर्थः सम्बन्धमात्रविवक्षया वा षष्ठीयं, 'पुव्वामेव'त्ति प्राक्कालमेव सम्यक्त्वप्रतिपत्तिसमनन्तरमेवेत्यर्थः 'अपच्चक्खाए'त्ति न प्रत्याख्यातो भवति, तदा देशविरतिपरिणामस्याजा-तत्वात्, ततश्च 'से णं'ति श्रमणोपासकः 'पश्चात्' प्राणातिपातविरतिकाले 'पच्चाइक्खमाणे'त्ति प्रत्याचक्षाणः प्राणा-तिपातमिति गम्यते किं करोति ? इति प्रश्नः, वाचनान्तरे तु 'अपच्चक्खाए' इत्यस्य स्थाने 'पच्चक्खाए'त्ति दृश्यते 'पच्चा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३२९--३३१]

दीप अनुक्रम [४०२--४०४]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३७०॥

इक्खमाणे'इत्यस्य च स्थाने 'पच्चक्खावेमाणे'त्ति दृश्यते, तत्र च प्रत्याख्याता स्वयमेव प्रत्याख्यापयंश्च गुरुणा हेतुकर्त्रा प्राणातिपातप्रत्याख्यानं गुरुणाऽऽत्मानं ग्राहयन्नित्यर्थ इति, 'तीत'मित्यादि, 'तीतम्' अतीतकालकृतं प्राणातिपातं 'प्रतिक्रामति'ततो निन्दाद्वारेण निवर्त्तत इत्यर्थः 'पडुप्पन्नं'ति प्रत्युत्पन्नं–वर्त्तमानकालीनं प्राणातिपातं 'संवृणोति' न करोतीत्यर्थः 'अनागतं' भविष्यत्कालविषयं 'प्रत्याख्याति'न करिष्यामीत्यादि प्रतिजानीते ॥ 'तिविहं तिविहेण'मित्यादि, इह च नव विकल्पास्तत्र गाथा–"तिन्नि तिया तिन्नि दुया तिन्नि य एक्का हवंति जोगेसु । तिदुएक्कं तिदुएक्कं तिदुएक्कं चेव करणाइं ॥ १ ॥" [त्रयस्त्रिकास्त्रयो द्विकास्त्रयश्चैकका भवन्ति योगेषु । त्रयो द्वावेकं त्रयो द्वावेकं त्रयो द्वावेकं चैव करणानि ॥ १ ॥] एतेषु च विकल्पेष्वेकादयो विकल्पा लभ्यन्ते, आह च–"एगो तिन्नि य तियगा दो नवगा तह य तिन्नि नव नव य । भंगनवगस्स एवं भंगा एगूणपन्नासं ॥ १ ॥ [एकश्च त्रयस्त्रिका द्वौ नवकौ तथा च त्रयो नव नव च । भङ्गनवकस्यैवं भङ्गा एकोनपञ्चाशत्॥ १ ॥] व्रतेषु ७३५। स्थापना चेयम्–

३३३	२२२	१११	योगाः
३२१	३२१	३२१	कर०
१३३	३९९	३९९	क०

तत्र 'तिविहं तिविहेणं'ति 'त्रिविधं' त्रिप्रकारं करणकारणानुमतिभेदात् प्राणातिपातयोगमिति गम्यते, 'त्रिविधेन' मनोवचनकायलक्षणेन करणेन प्रतिक्रामति,ततो निन्दनेन विरमति,'तिविहं दुविहेणं'ति त्रिविधं वधकरणादिभेदात् 'द्विविधेन' करणेन मनःप्रभृतीनामेकतरवर्जिततद्वयेन,'तिविहं एगविहेणं'ति त्रिविधं तथैव 'एकविधेन' मनःप्रभृतीनामेकतमेन करणेनेति 'दुविहं तिविहेणं''द्विविधं' कृतादीनामन्यतमद्वयरूपं योगं 'त्रिविधेन' मनःप्रभृतिकरणेन, एवमन्येऽपि,'तिविहं तिविहेणं पडिक्कममाणे'इत्यादि,'न करोति' न स्वयं विदधाति अतीतकाले प्राणातिपातं, मनसा–

८ शतके उद्देशः ५ आजीविकोपासकाः देवेलोकाः सू ३३०–३३१ श्रमणोपासकव्रतभङ्गाः

॥३७०॥

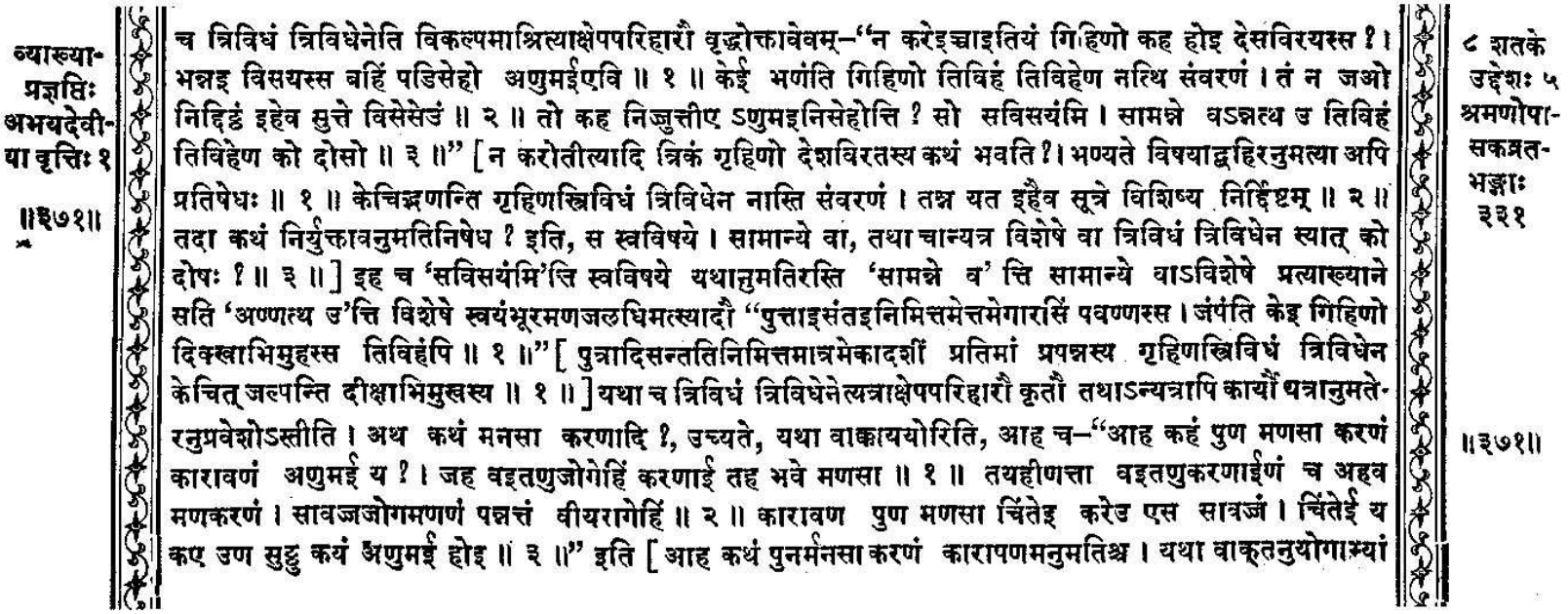
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रमणोपासकस्य व्रत एवं तस्य भेदा:

हा हतोऽहं येन मया तदाऽसौ न हत इत्येवमनुध्यानात्, तथा 'न' नैव कारयति मनसैव यथा हा न युक्तं कृतं यदसौ परेण न घातित इति चिन्तनात्, तथा 'कुर्वन्तं' विदधानमुपलक्षणत्वात् कारयन्तं वा समनुजानन्तं वा परमात्मानं प्राणातिपातं 'नानुजानाति'नानुमोदयति, मनसैव वधानुस्मरणेन तदनुमोदनात्, एवं न करोति न कारयति कुर्वन्तं नानुजानाति वचसा, तथाविधवचनप्रवर्त्तनात्, एवं न करोति न कारयति कुर्वन्तं नानुजानाति कायेन तथाविधाङ्गविकारकरणादिति, न चेह यथासङ्ख्यन्यायो न करोति मनसा न कारयति वचसा नानुजानाति कायेनेत्येवंलक्षणोऽनुसरणीयो, वक्तृविवक्षाऽधीनत्वात् सर्वन्यायानां वक्ष्यमाणविकल्पायोगाच्चेति, एवं त्रिविधं त्रिविधेनेत्यत्र विकल्पे एक एव विकल्पः तदन्येषु पुनर्द्वितीयतृतीयचतुर्थेषु त्रयः २ पञ्चमषष्ठयोर्नव नव सप्तमे त्रयः अष्टमनवमयोर्नव नवेति, एवं सर्वेऽप्येकोनपञ्चाशत्, एवमियमतीतकालमाश्रित्य कृता करणकारणादियोजना, अथवैवमेषाऽतीतकाले मनःप्रभृतीनां कृतं कारितमनुज्ञातं वा वधं क्रमेण न करोति न कारयति न चानुजानाति तन्निन्दनेन तदनुमोदननिषेधतस्ततो निवर्त्तत इत्यर्थः, तन्निन्दनस्याभावे हि तदनुमोदनानिवृत्तेः कृतादिरसौ क्रियमाणादिरिव स्यादिति, वर्त्तमानकालं त्वाश्रित्य सुगमैव, भविष्यत्कालापेक्षया त्वेवमसौ–न करोति मनसा तं हनिष्यामीत्यस्य चिन्तनात्, न कारयति मनसैव तमहं घातयिष्यामीत्यस्य चिन्तनात्, नानुजानाति मनसा भाविनं वधमनुश्रुत्य हर्षकरणात्, एवं वाचा कायेन च तयोस्तथाविधयोः करणादिति, अथचैवमेव भविष्यत्काले मनःप्रभृतिना करिष्यमाणं कारयिष्यमाणमनुमंस्यमानं वा वधं क्रमेण न करोति न कारयति न चानुजानाति ततो निवृत्तिमभ्युपगच्छतीत्यर्थः, सर्वेषां चैषां मीलने सप्तचत्वारिंशदधिकं भङ्गकशतं भवति, इह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रमणोपासकस्य व्रत एवं तस्य भेदा:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३७१॥

च त्रिविधं त्रिविधेनेति विकल्पमाश्रित्याक्षेपपरिहारौ वृद्धोक्तावेवम्–"न करेइच्चाइतियं गिहिणो कह होइ देसविरयस्स ?। भन्नइ विसयस्स बहिं पडिसेहो अणुमईएवि ॥ १ ॥ केई भणंति गिहिणो तिविहं तिविहेण नत्थि संवरणं । तं न जओ निद्दिट्ठं इहेव सुत्ते विसेसेउं ॥ २ ॥ तो कह निज्जुत्तीए ऽणुमइनिसेहोत्ति ? सो सविसयंमि । सामन्ने वऽन्नत्थ उ तिविहं तिविहेण को दोसो ॥ ३ ॥" [न करोतीत्यादि त्रिकं गृहिणो देशविरतस्य कथं भवति ?। भण्यते विषयाद्बहिरनुमत्या अपि प्रतिषेधः ॥ १ ॥ केचिद्भणन्ति गृहिणस्त्रिविधं त्रिविधेन नास्ति संवरणं । तन्न यत इहैव सूत्रे विशिष्य निर्दिष्टम् ॥ २ ॥ तदा कथं निर्युक्तावनुमतिनिषेध ? इति, स स्वविषये । सामान्ये वा, तथा चान्यत्र विशेषे वा त्रिविधं त्रिविधेन स्यात् को दोषः ? ॥ ३ ॥] इह च 'सविसयंमि'त्ति स्वविषये यथानुमतिरस्ति 'सामन्ने व' त्ति सामान्ये वाऽविशेषे प्रत्याख्याने सति 'अण्णत्थ उ'त्ति विशेषे स्वयंभूरमणजलधिमत्स्यादौ "पुत्ताइसंतइनिमित्तमेत्तमेगारसिं पवण्णस्स । जंपंति केइ गिहिणो दिक्खाभिमुहस्स तिविहंपि ॥ १ ॥" [पुत्रादिसन्ततिनिमित्तमात्रमेकादशीं प्रतिमां प्रपन्नस्य गृहिणस्त्रिविधं त्रिविधेन केचित् जल्पन्ति दीक्षाभिमुखस्य ॥ १ ॥] यथा च त्रिविधं त्रिविधेनेत्यत्राक्षेपपरिहारौ कृतौ तथाऽन्यत्रापि कार्यौ यत्रानुमतेरनुप्रवेशोऽस्तीति । अथ कथं मनसा करणादि ?, उच्यते, यथा वाकाययोरिति, आह च–"आह कहं पुण मणसा करणं कारावणं अणुमई य ?। जह वइतणुजोगेहिं करणाई तह भवे मणसा ॥ १ ॥ तयहीणत्ता वइतणुकरणाईणं च अहव मणकरणं । सावज्जजोगमणणं पन्नत्तं वीयरागेहिं ॥ २ ॥ कारावण पुण मणसा चिंतेइ करेउ एस सावज्जं । चिंतेई य कए उण सुट्ठु कयं अणुमई होइ ॥ ३ ॥" इति [आह कथं पुनर्मनसा करणं कारापणमनुमतिश्च । यथा वाक्तनुयोगाभ्यां

८ शतके उद्देशः ५ श्रमणोपा-सकव्रत-भङ्गाः ३३१

॥३७१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	श्रमणोपासकस्य व्रत एवं तस्य भेदा:

करणादि तथा मनसा भवेत् ॥ १ ॥ तदधीनत्वाद्वाकृतनुकरणादीनां अथवा मनःकरणं सावद्ययोगमननं प्रज्ञप्तं वीतरागैः ॥२॥ मनसा पुनः कारणं एष सावद्यं करोत्विति चिन्तयति कृते पुनः सुष्ठु कृतमित्यनुमतिर्भवति चिन्तयति ॥ ३ ॥] इह च पञ्चस्वणुव्रतेषु प्रत्येकं सप्तचत्वारिंशदधिकस्य भङ्गशतस्य भावाद् भङ्गकानां सप्त शतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि भवन्तीति ॥ यत् स्थविरा आजीविकैः श्रमणोपासकगतं वस्तु पृष्टाः गौतमेन च भगवांस्तत्तावदुक्तम् , अथानन्तरोक्तशीलाः श्रमणोपासका एव भवन्ति न पुनराजीविकोपासकाः आजीविकानां गुणित्वेनाभिमता अपीति दर्शयन्नाह—'एए खलु' इत्यादि, 'एते खलु' एत एव परिदृश्यमाना निर्ग्रन्थसत्का इत्यर्थः 'एरिसग'त्ति ईदृशकाः प्राणातिपातादिष्वतीतप्रतिक्रमणादिमन्तः, 'नो खलु'त्ति नैव 'एरिसग'त्ति उक्तरूपा उक्तार्थानामपरिज्ञानात् 'आजीविओवासय'त्ति गोशालकशिष्यश्रावकाः ॥ अथैतस्यैवार्थस्य विशेषतः समर्थनार्थमाजीविकसमयार्थस्य तदुपासकविशेषस्वरूपस्य चाभिधानपूर्वकमाजीविकोपासकापेक्षया श्रमणोपासकानुत्कर्षयितुमाह—'आजीविए'त्यादि, आजीविकसमयः—गोशालकसिद्धान्तः तस्य 'अयमट्ठे'त्ति इदमभिधेयम्—'अक्खीणपरिभोइणो सवे सत्त'त्ति अक्षीणं—अक्षीणायुष्कमप्रासुकं परिभुञ्जत इत्येवंशीला अक्षीणपरिभोगिनः, अथवा इन्प्रत्ययस्य स्वार्थिकत्वादक्षीणपरिभोगा—अनपगताहारभोगासक्तय इत्यर्थः 'सर्वे सत्त्वाः' असंयताः सर्वे प्राणिनः, यद्येवं ततः किम् ? इत्याह—'से हंते'त्यादि, 'से'त्ति ततः 'हंत'त्ति हत्वा लगुडादिना अभ्यवहार्यं प्राणिजातं 'छित्त्वा'असिपुत्रिकादिना द्विधा कृत्वा 'भित्त्वा' शूलादिना भिन्नं कृत्वा 'लुम्पा' पक्षादिलोपनेन 'विलुप्य' त्वचो विलोपनेन 'अपद्राव्य'विनाश्याहारमाहारयन्ति, 'तत्थ'त्ति 'तत्र' एवं स्थितेऽसंयतसत्त्ववर्गे हननादि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रमणोपासकस्य व्रत एवं तस्य भेदा:

दोषपरायणे इत्यर्थः आजीविकसमये वाऽधिकरणभूते द्वादशेति विशेषानुष्ठानत्वात् परिगणिता आनन्दादिश्रमणोपासकवदन्यथा बहवस्ते, 'ताले'त्ति तालाभिधान एकः, एवं तालप्रलम्बादयोऽपि,'अरिहंतदेवयाग'त्ति गोशालकस्य तत्कल्पनयाऽर्हत्त्वात्, 'पंचफलपडिक्कंत'त्ति फलपञ्चकान्निवृत्ताः, उदुम्बरादीनि च पञ्च पदानि पञ्चमीबहुवचनान्तानि प्रतिक्रान्तशब्दानुस्मरणादिति, 'अनिल्लंछिएहिं'ति अवर्द्धितकैः 'अनक्कभिन्नेहिं'ति अनस्तितैः। 'एतेवि ताव एवं इच्छंति' एतेऽपि तावद्विशिष्टयोग्यताविकला इत्यर्थः एवमिच्छन्ति–अमुना प्रकारेण वाञ्छन्ति धर्म्ममिति गम्यम्, 'किमंग पुणे'त्यादि, किं पुनर्ये इमे श्रमणोपासका भवन्ति ते नेच्छन्तीति गम्यम्?, इच्छन्त्येवेति, विशिष्टतरदेवगुरुप्रवचनसमाश्रितत्वात्तेषां, 'कम्मादाणाइं'ति कर्म्माणि–ज्ञानावरणादीन्यादीयन्ते यैस्तानि कर्मादानानि, अथवा कर्माणि च तान्यादानानि च–कर्मादानानि कर्महेतव इति विग्रहः, 'इंगाले'त्यादि, अङ्गारविषयं कर्म अङ्गारकर्म–अङ्गाराणां करणविक्रयस्वरूपम्, एवमग्निव्यापाररूपं यदन्यदपीष्टकापाकादिकं कर्म तदङ्गारकर्मोच्यते, अङ्गारशब्दस्य तदन्योपलक्षणत्वात्, 'वणकम्मे'त्ति वनविषयं कर्म्म वनकर्म्म–वनच्छेदनविक्रयरूपम्, एवं बीजपेषणाद्यपि, 'साडीकम्मे'त्ति शकटानां वाहनघटनविक्रयादि 'भाडीकम्मे'त्ति भाट्या–भाटकेन कर्म अन्यदीयद्रव्याणां शकटादिभिर्देशान्तरनयनं गोगृहादिसमर्पणं वा भाटीकर्म्म 'फोडीकम्मे'त्ति स्फोटिः–भूमेः स्फोटनं हलकुदालादिभिः सैव कर्म्म स्फोटीकर्म्म 'दंतवाणिज्जे'त्ति दन्तानां–हस्तिविषाणानाम् उपलक्षणत्वादेषां चर्मचामरपूतिकेशादीनां वाणिज्यं–क्रयविक्रयो दन्तवाणिज्यं 'लक्खवाणिज्जं'ति लाक्षाया आकरे ग्रहणतो विक्रयः, एतच्च त्रससंसक्तिनिमित्तस्यान्यस्यापि तिलादेर्द्रव्यस्य यद्वाणिज्यं तस्योपलक्षणं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रमणोपासकस्य व्रत एवं तस्य भेदा:

'केसवाणिज्जे'त्ति केशवज्जीवानां गोमहिषीस्त्रीप्रभृतिकानां विक्रयः 'रसवाणिज्जे'त्ति मद्यादिरसविक्रयः 'विसवाणिज्जे'त्ति विषस्योपलक्षणत्वाच्छस्त्रवाणिज्यस्याप्यनेनावरोधः, 'जंतपीलणकम्मे'त्ति यन्त्रेण तिलेक्ष्वादीनां यत्पीडनं तदेव कर्म्म यन्त्रपीडनकर्म्म 'निल्लंछणकम्मे'त्ति निर्लाञ्छनमेव–वर्द्धितककरणमेव कर्म निर्लाञ्छनकर्म्म 'दवग्गिदावणय'त्ति दवाग्नेः–दवस्य दापनं–दाने प्रयोजकत्वमुपलक्षणत्वाद्दानं च दवाग्निदापनं तदेव प्राकृतत्वाद् 'दवग्गिदावणया' 'सरदहतलायपरिसोसणय'त्ति सरसः–स्वयंसंभूतजलाशयविशेषस्य ह्रदस्य–नद्यादिषु निम्नतरप्रदेशलक्षणस्य तडागस्य–कृत्रिमजलाशयविशेषस्य परिशोषणं यत्तत्तथा, तदेव प्राकृतत्वात् स्वार्थिकताप्रत्यये 'सरदहतलायपरिसोसणया' 'असईपोसणय'त्ति दास्याः पोषणं तद्भाटीग्रहणाय, अनेन च कुर्कुटमार्जारादिक्षुद्रजीवपोषणमप्याक्षिप्तं द्रष्टव्यमिति, 'इच्चेते'त्ति 'इति' एवंप्रकाराः 'एते' निर्ग्रन्थसत्काः 'सुक्क'त्ति शुक्ला अभिन्नवृत्ता अमत्सरिणः कृतज्ञाः सदारम्भिणो हितानुबन्धाश्च 'सुक्काभिजाइ य'त्ति 'शुक्काभिजात्याः' शुक्लप्रधानाः ॥ अनन्तरं देवतयोपपत्तारो भवन्तीत्युक्तमथ देवानेव भेदत आह— 'कतिविहा ण'मित्यादि ॥ अष्टमशते पञ्चमः ॥ ८–५ ॥

पञ्चमे श्रमणोपासकाधिकार उक्तः, षष्ठेऽप्यसावेवोच्यते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदं सूत्रम्—

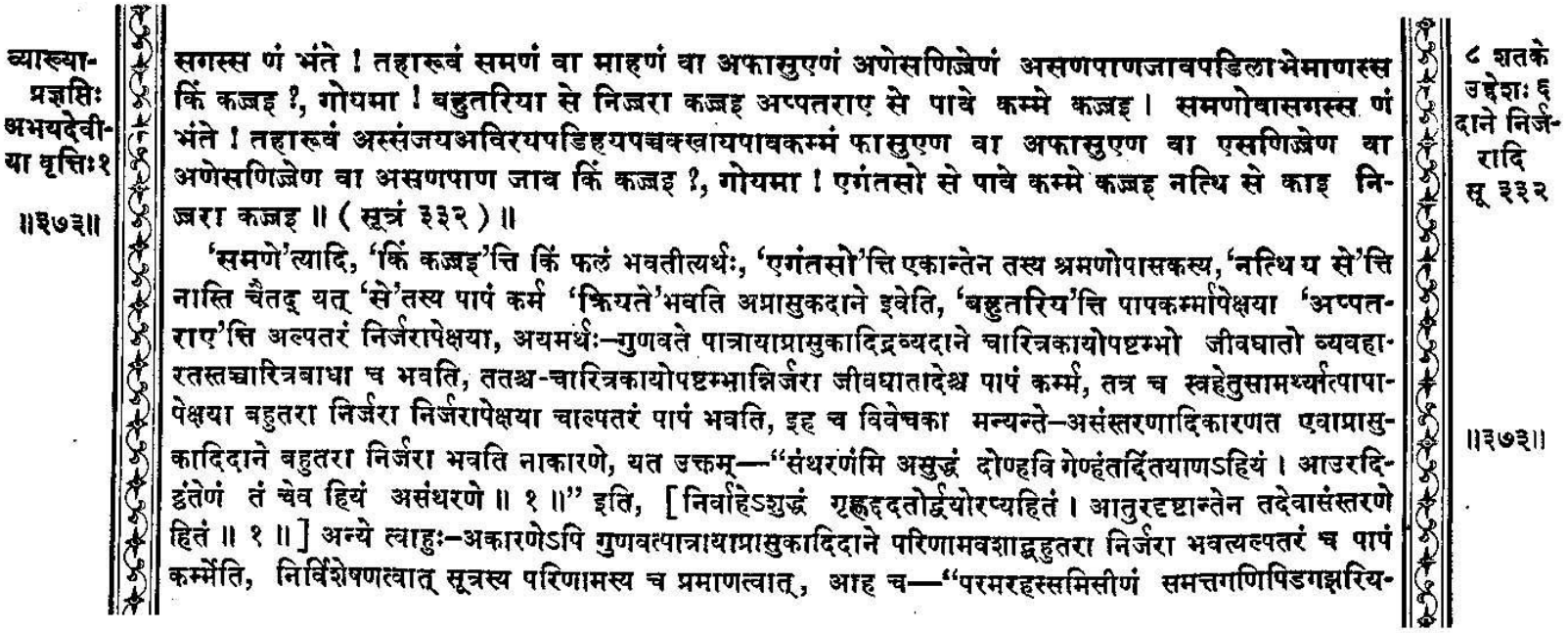
समणोवासगस्स णं भंते ! तहारूवं समणं वा माहणं वा फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभेमाणस्स किं कज्जति ?, गोयमा ! एगंतसो निज्जरा कज्जइ नत्थि य से पावे कम्मे कज्जति । समणोवा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टम-शतके पंचम-उद्देशक: समाप्त:

अथ अष्टम-शतके षष्ठं-उद्देशक: आरभ्यते

श्रमणोपासकस्य व्रत एवं तस्य भेदा:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१ ॥३७३॥

सगस्स णं भंते ! तहारूवं समणं वा माहणं वा अफासुएणं अणेसणिज्जेणं असणपाणजावपडिलाभेमाणस्स किं कज्जइ ?, गोयमा ! बहुतरिया से निज्जरा कज्जइ अप्पतराए से पावे कम्मे कज्जइ। समणोवासगस्स णं भंते ! तहारूवं अस्संजयअविरयपडिहयपच्चक्खायपावकम्मं फासुएण वा अफासुएण वा एसणिज्जेण वा अणेसणिज्जेण वा असणपाण जाव किं कज्जइ ?, गोयमा ! एगंतसो से पावे कम्मे कज्जइ नत्थि से काइ निज्जरा कज्जइ ॥ (सूत्रं ३३२) ॥

'समणे'त्यादि, 'किं कज्जइ'त्ति किं फलं भवतीत्यर्थः, 'एगंतसो'त्ति एकान्तेन तस्य श्रमणोपासकस्य, 'नत्थि य से'त्ति नास्ति चैतद् यत् 'से'तस्य पापं कर्म 'क्रियते'भवति अप्रासुकदाने इवेति, 'बहुतरिय'त्ति पापकर्म्मापेक्षया 'अप्पतराए'त्ति अल्पतरं निर्जरापेक्षया, अयमर्थः–गुणवते पात्रायाप्रासुकादिद्रव्यदाने चारित्रकायोपष्टम्भो जीवघातो व्यवहारतस्तच्चारित्रबाधा च भवति, ततश्च-चारित्रकायोपष्टम्भान्निर्जरा जीवघातादेश्च पापं कर्म्म, तत्र च स्वहेतुसामर्थ्यात्पापापेक्षया बहुतरा निर्जरा निर्जरापेक्षया चाल्पतरं पापं भवति, इह च विवेचका मन्यन्ते–असंस्तरणादिकारणत एवाप्रासुकादिदाने बहुतरा निर्जरा भवति नाकारणे, यत उक्तम्—"संथरणंमि असुद्धं दोण्हवि गेण्हंतदिंतयाणऽहियं। आउरदिट्ठंतेणं तं चेव हियं असंथरणे ॥ १ ॥" इति, [निर्वाहेऽशुद्धं गृह्णददतोर्द्वयोरप्यहितं। आतुरदृष्टान्तेन तदेवासंस्तरणे हितं ॥ १ ॥] अन्ये त्वाहुः–अकारणेऽपि गुणवत्पात्रायाप्रासुकादिदाने परिणामवशाद्बहुतरा निर्जरा भवत्यल्पतरं च पापं कर्म्मेति, निर्विशेषणत्वात् सूत्रस्य परिणामस्य च प्रमाणत्वात्, आह च—"परमरहस्समिसीणं समत्तगणिपिडगझरिय-

८ शतके उद्देशः ६ दाने निर्जरादि सू ३३२

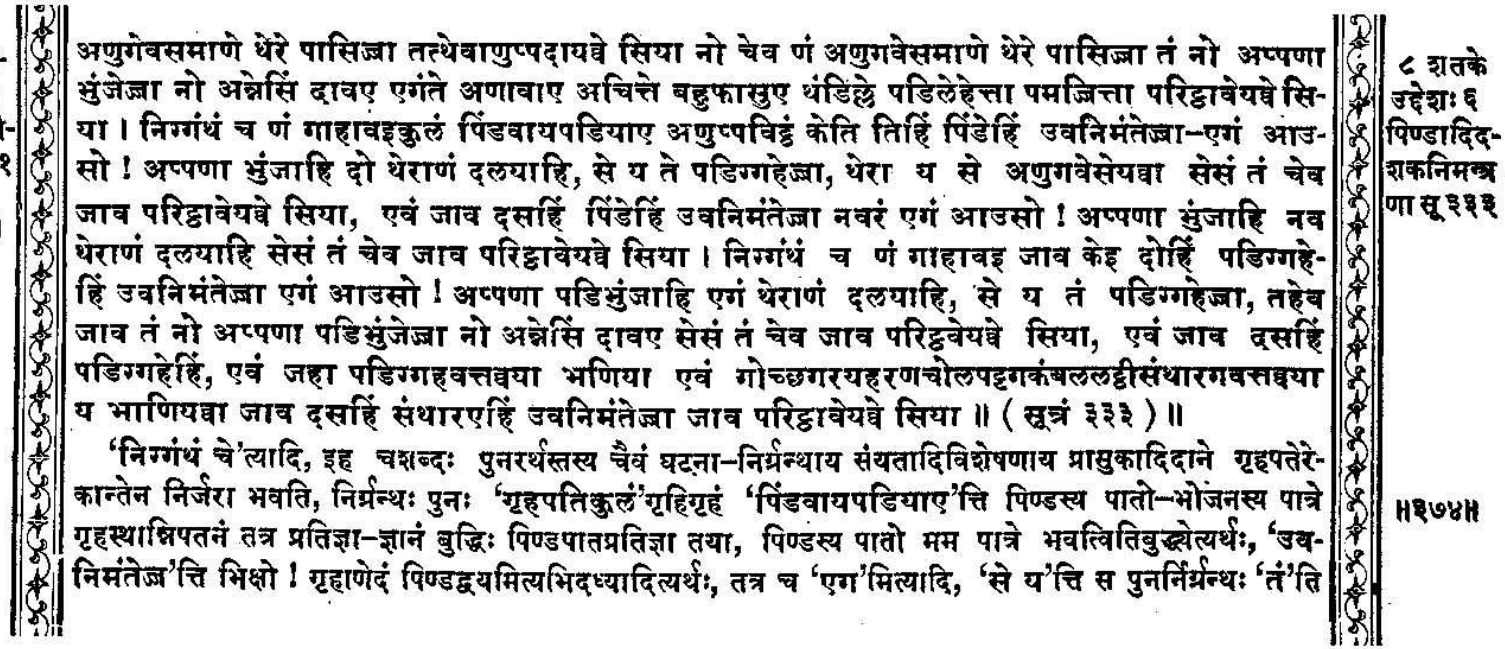
॥३७३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सारणं । परिणामियं पमाणं निच्छयमवलंबमाणाणं ॥ १ ॥" [समस्तगणिपिटकसारितसाराणामृषीणां। परमरहस्यं निश्चयमवलम्बयतां पारिणामिकं प्रमाणम् (विवादास्पदे दाने) ॥ १ ॥] यच्चोच्यते 'संथरणंमि असुद्ध'मित्यादिनाऽशुद्धं द्वयोरपि दातृगृहीत्रोरहितायेति तद्ग्राहकस्य व्यवहारतः संयमविराधनात् दायकस्य च लुब्धकदृष्टान्तभावितत्वेनाव्युत्पन्नत्वेन वा ददतः शुभाल्पायुष्कतानिमित्तत्वात्, शुभमपि चायुरल्पमहितं विवक्षया, शुभाल्पायुष्कतानिमित्तत्वं चाप्रासुकादिदानस्याल्पायुष्कताफलप्रतिपादकसूत्रे प्राक् चर्चितं, यत्पुनरिह तत्त्वं तत्केवलिगम्यमिति । तृतीयसूत्रे 'अस्संजयअविरये'त्यादिनाऽगुणवान् पात्रविशेष उक्तः, 'फासुएण वा अफासुएण वा'इत्यादिना तु प्रासुकाप्रासुकादेर्दानस्य पापकर्मफलता निर्जराया अभावश्चोक्तः, असंयमोपष्टम्भस्योभयत्रापि तुल्यत्वात्, यश्च प्रासुकादौ जीवघाताभावेन अप्रासुकादौ च जीवघातसद्भावेन विशेषः सोऽत्र न विवक्षितः, पापकर्म्मणो निर्जराया अभावस्यैव च विवक्षितत्वादिति, सूत्रत्रयेणापि चानेन मोक्षार्थमेव यद्दानं तच्चिन्तितं, यत्पुनरनुकम्पादानमौचित्यदानं वा तन्न चिन्तितं, निर्जरायास्तत्रानपेक्षणीयत्वाद्, अनुकम्पौचित्ययोरेव चापेक्षणीयत्वादिति, उक्तञ्च—"मोक्खत्थं जं दाणं तं पइ एसो विही समक्खाओ। अणुकंपादाणं पुण जिणेहिं न कयाइ पडिसिद्धं ॥ १ ॥" इति [मोक्षार्थं यद्दानं तत्प्रति विधिरेष भणितः । अनुकम्पादानं पुनर्न कदाचित्प्रतिषिद्धम् ॥ १ ॥] दानाधिकारादेवेदमाह—

निग्गंथं च णं गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठं केई दोहिं पिंडेहिं उवनिमंतेज्जा–एगं आउसो ! अप्पणा भुंजाहि एगं थेराणं दलयाहि, से य तं पिण्डं पडिग्गहेज्जा, थेरा य से अणुगवेसियव्वा सिया जत्थेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३७४॥

अणुगवेसमाणे थेरे पासिज्जा तत्थेवाणुप्पदायव्वे सिया नो चेव णं अणुगवेसमाणे थेरे पासिज्जा तं नो अप्पणा भुंजेज्जा नो अन्नेसिं दावए एगंते अणावाए अचित्ते बहुफासुए थंडिल्ले पडिलेहेत्ता पमज्जित्ता परिट्ठावेयव्वे सिया । निग्गंथं च णं गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठं केति तिहिं पिंडेहिं उवनिमंतेज्जा–एगं आउसो ! अप्पणा भुंजाहि दो थेराणं दलयाहि, से य ते पडिग्गहेज्जा, थेरा य से अणुगवेसेयव्वा सेसं तं चेव जाव परिट्ठावेयव्वे सिया, एवं जाव दसहिं पिंडेहिं उवनिमंतेज्जा नवरं एगं आउसो ! अप्पणा भुंजाहि नव थेराणं दलयाहि सेसं तं चेव जाव परिट्ठावेयव्वे सिया । निग्गंथं च णं गाहावइ जाव केइ दोहिं पडिग्गहेहिं उवनिमंतेज्जा एगं आउसो ! अप्पणा पडिभुंजाहि एगं थेराणं दलयाहि, से य तं पडिग्गहेज्जा, तहेव जाव तं नो अप्पणा पडिभुंजेज्जा नो अन्नेसिं दावए सेसं तं चेव जाव परिट्ठवेयव्वे सिया, एवं जाव दसहिं पडिग्गहेहिं, एवं जहा पडिग्गहवत्तव्वया भणिया एवं गोच्छगरयहरणचोलपट्टगकंबललट्ठीसंथारगवत्तव्वया य भाणियव्वा जाव दसहिं संथारएहिं उवनिमंतेज्जा जाव परिट्ठावेयव्वे सिया ॥ (सूत्रं ३३३) ॥

'निग्गंथं चे'त्यादि, इह चशब्दः पुनरर्थस्तस्य चैवं घटना–निर्ग्रन्थाय संयतादिविशेषणाय प्रासुकादिदाने गृहपतेरेकान्तेन निर्जरा भवति, निर्ग्रन्थः पुनः 'गृहपतिकुलं'गृहिगृहं 'पिंडवायपडियाए'त्ति पिण्डस्य पातो–भोजनस्य पात्रे गृहस्थान्निपतनं तत्र प्रतिज्ञा–ज्ञानं बुद्धिः पिण्डपातप्रतिज्ञा तया, पिण्डस्य पातो मम पात्रे भवत्वितिबुद्ध्येत्यर्थः, 'उवनिमंतेज्ज'त्ति भिक्षो ! गृहाणेदं पिण्डद्वयमित्यभिदध्यादित्यर्थः, तत्र च 'एग'मित्यादि, 'से य'त्ति स पुनर्निर्ग्रन्थः 'तं'ति

८ शतके उद्देशः ६ पिण्डादिद-शकनिमन्त्र णा सू ३३३

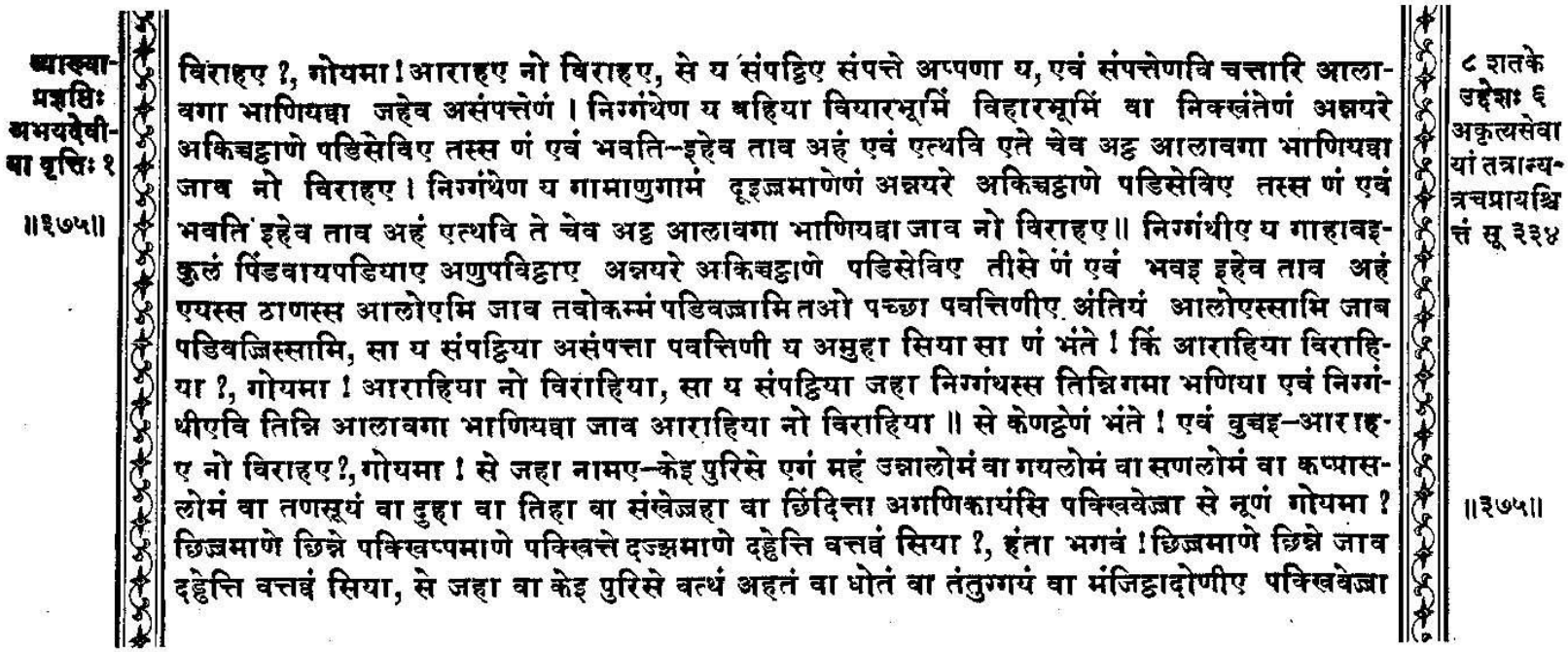
॥३७४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्थविरपिण्डं 'थेरा य से'त्ति स्थविराः पुनः 'तस्य'निर्ग्रन्थस्य 'सिय'त्ति स्युर्भवन्तीत्यर्थः, 'दावए'त्ति दद्यात् दापयेद्वा अदत्तादानप्रसङ्गात्, गृहपतिना हि पिण्डोऽसौ विवक्षितस्थविरेभ्य एव दत्तो नान्यस्मै इति, 'एगंते'त्ति जनालोकवर्जिते 'अणावाए'त्ति जनसंपातवर्जिते 'अचित्ते'त्ति अचेतने, नाचेतनमात्रेणैवेत्यत आह–'बहुफासुए'त्ति बहुधा प्रासुकं बहुप्रासुकं तत्र, अनेन चाचिरकालकृते विकृते विस्तीर्णे दूरावगाढे त्रसप्राणबीजरहिते चेति सङ्गृहीतं द्रष्टव्यमिति, 'से य ते'त्ति स च निर्ग्रन्थः'तौ'स्थविरपिण्डौ'पडिग्गाहेज्ज'त्ति प्रतिगृह्णीयादिति ॥ निर्ग्रन्थप्रस्तावादिदमाह—

निग्गंथेण य गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए पविट्ठेणं अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए, तस्स णं एवं भवति–इहेव ताव अहं एयस्स ठाणस्स आलोएमि पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि विउट्टामि विसोहेमि अकरणयाए अब्भुट्टेमि अहारिहं पायच्छित्तं तवोकम्मं पडिवज्जामि, तओ पच्छा थेराणं अंतियं आलोएस्सामि जाव तवोकम्मं पडिवज्जिस्सामि, से य संपट्ठिओ असंपत्ते थेरा य पुव्वामेव अमुहा सिया से णं भंते ! किं आराहए विराहए ?, गोयमा ! आराहए नो विराहए १ । से य संपट्ठिए असंपत्ते अप्पणा य पुव्वामेव अमुहा सिया से णं भंते ! किं आराहए विराहए ?, गोयमा ! आराहए नो विराहए २, से य संपट्ठिए असंपत्ते अप्पणा य पुव्वामेव थेरा य कालं करेज्जा से णं भंते ! किं आराहए विराहए ?, गोयमा ! आराहए नो विराहए ३, से य संपट्ठिए असंपत्ते अप्पणा य पुव्वामेव कालं करेज्जा से णं भंते ! किं आराहए विराहए ?, गोयमा ! आराहए नो विराहए ४, से य संपट्ठिए संपत्ते थेरा य अमुहा सिया से णं भंते ! किं आराहए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३७५॥

विराहए ?, गोयमा ! आराहए नो विराहए, से य संपट्ठिए संपत्ते अप्पणा य, एवं संपत्तेणवि चत्तारि आलावगा भाणियव्वा जहेव असंपत्तेणं । निग्गंथेण य बहिया वियारभूमिं विहारभूमिं वा निक्खंतेणं अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए तस्स णं एवं भवति–इहेव ताव अहं एवं एत्थवि एते चेव अट्ठ आलावगा भाणियव्वा जाव नो विराहए । निग्गंथेण य गामाणुगामं दूइज्जमाणेणं अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए तस्स णं एवं भवति इहेव ताव अहं एत्थवि ते चेव अट्ठ आलावगा भाणियव्वा जाव नो विराहए॥ निग्गंथीए य गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठाए अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए तीसे णं एवं भवइ इहेव ताव अहं एयस्स ठाणस्स आलोएमि जाव तवोकम्मं पडिवज्जामि तओ पच्छा पवत्तिणीए अंतियं आलोएस्सामि जाव पडिवज्जिस्सामि, सा य संपट्ठिया असंपत्ता पवत्तिणी य अमुहा सिया सा णं भंते ! किं आराहिया विराहिया ?, गोयमा ! आराहिया नो विराहिया, सा य संपट्ठिया जहा निग्गंथस्स तिन्निगमा भणिया एवं निग्गंथीएवि तिन्नि आलावगा भाणियव्वा जाव आराहिया नो विराहिया ॥ से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–आराहए नो विराहए ?, गोयमा ! से जहा नामए–केइ पुरिसे एगं महं उन्नालोमं वा गयलोमं वा सणलोमं वा कप्पासलोमं वा तणसूयं वा दुहा वा तिहा वा संखेज्जहा वा छिंदित्ता अगणिकायंसि पक्खिवेज्जा से नूणं गोयमा ? छिज्जमाणे छिन्ने पक्खिप्पमाणे पक्खित्ते दज्झमाणे दड्ढेत्ति वत्तव्वं सिया ?, हंता भगवं ! छिज्जमाणे छिन्ने जाव दड्ढेत्ति वत्तव्वं सिया, से जहा वा केइ पुरिसे वत्थं अहतं वा धोतं वा तंतुग्गयं वा मंजिट्ठादोणीए पक्खिवेज्जा

८ शतके उद्देशः ६ अकृत्यसेवा यां तन्त्रान्य-त्रचप्रायश्चित्तं सू ३३४

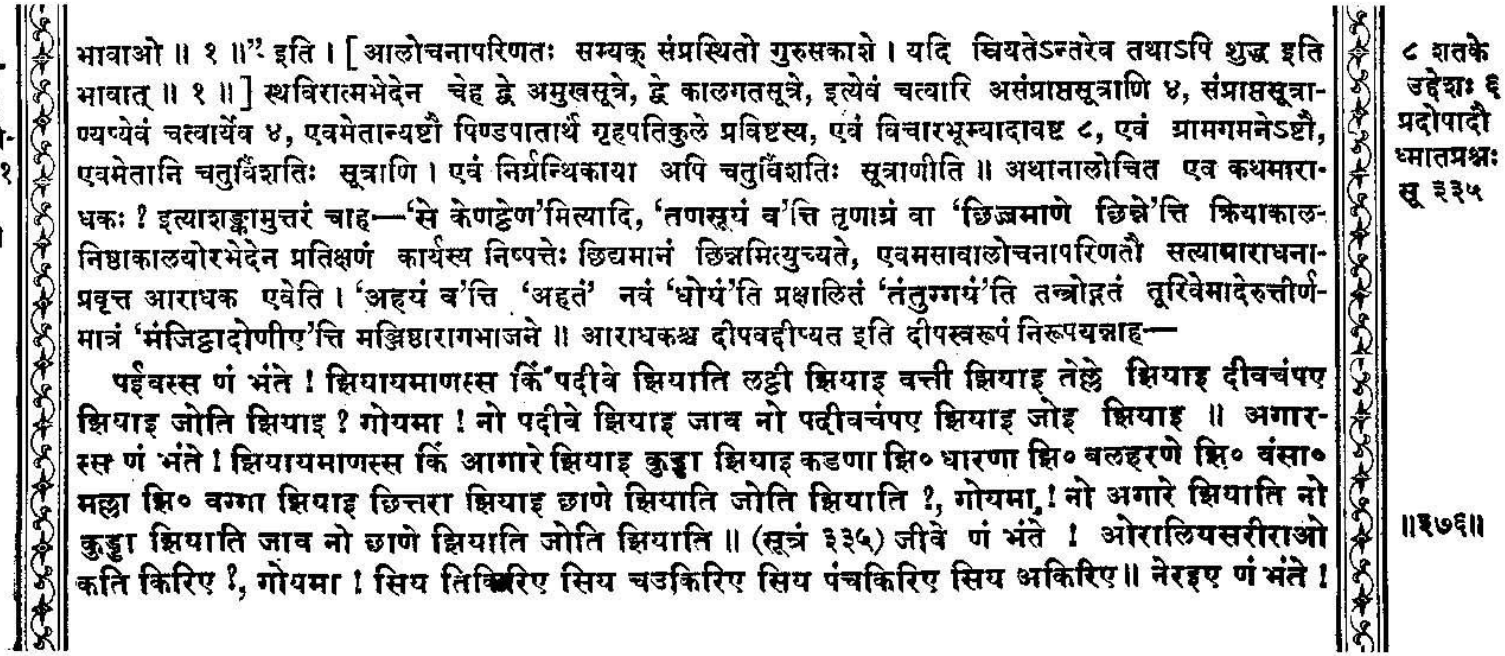
॥३७५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से नूणं गोयमा ! उक्खिप्पमाणे उक्खित्ते पक्खिप्पमाणे पक्खित्ते रज्जमाणे रत्तेत्ति वत्तव्वं सिया ?, हंता भगवं ! उक्खिप्पमाणे उक्खित्ते जाव रत्तेत्ति वत्तव्वं सिया, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–आराहए नो विराहए ॥ (सूत्रं ३३४)

'निग्गंथेण ये'त्यादि, इह चशब्दः पुनरर्थस्तस्य घटना चैवं–निर्ग्रन्थं कश्चित् पिण्डपातप्रतिज्ञया प्रविष्टं पिण्डादिनोपनिमन्त्रयेत् तेन च निर्ग्रन्थेन पुनः 'अकिच्चट्ठाणे'त्ति कृत्यस्य–करणस्य स्थानं–आश्रयः कृत्यस्थानं तन्निषेधः अकृत्यस्थानं–मूलगुणादिप्रतिसेवारूपोऽकार्यविशेषः 'तस्स णं'ति तस्य निर्ग्रन्थस्य सञ्जातानुतापस्य 'एवं भवति' एवंप्रकारं मनो भवति 'एयस्स ठाणस्स'त्ति विभक्तिपरिणामाद् 'एतत्स्थानम्' अनन्तरासेवितम् 'आलोचयामि' स्थापनाचार्यनिवेदनेन 'प्रतिक्रमामि'मिथ्यादुष्कृतदानेन 'निन्दामि' स्वसमक्षं स्वस्याकृत्यस्थानस्य वा कुत्सनेन 'गर्हे' गुरुसमक्षं कुत्सनेन 'विउट्टामि'त्ति विनोटयामि–तदनुबन्धं छिनद्मि 'विशोधयामि' प्रायश्चित्तपङ्कं प्रायश्चित्ताभ्युपगमेन 'अकरणतया' अकरणेन 'अभ्युत्तिष्ठामि' अभ्युत्थितो भवामीति 'अहारिहं'ति 'यथार्हं' यथोचितम्, एतच्च गीतार्थतायामेव भवति नान्यथा, 'अंतियं'ति समीपं गत इति शेषः 'थेरा य अमुहा सिय'त्ति स्थविराः पुनः 'अमुखाः'निर्वाचः स्युर्वातादिदोषात्, ततश्च तस्यालोचनादिपरिणामे सत्यपि नालोचनादि संपद्यत इत्यतः प्रश्नयति—'से ण'मित्यादि, 'आराहए'त्ति मोक्षमार्गस्याराधकः शुद्ध इत्यर्थः भावस्य शुद्धत्वात्, संभवति चालोचनापरिणतौ सत्यां कथञ्चित्तदप्राप्तावप्याराधकत्वं, यत उक्तं मरणमाश्रित्य—"आलोयणापरिणओ सम्मं संपट्ठिओ गुरुसगासे। जइ मरइ अंतरे चिय तहावि सुद्धोत्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३७६॥

भावाओ ॥ १ ॥" इति । [आलोचनापरिणतः सम्यक् संप्रस्थितो गुरुसकाशे । यदि म्रियतेऽन्तरेव तथाऽपि शुद्ध इति भावात् ॥ १ ॥] स्थविरात्मभेदेन चेह द्वे अमुखसूत्रे, द्वे कालगतसूत्रे, इत्येवं चत्वारि असंप्राप्तसूत्राण्यप्येवं चत्वार्येव ४, एवमेतान्यष्टौ पिण्डपातार्थं गृहपतिकुले प्रविष्टस्य, एवं विचारभूम्यादावष्ट ८, एवं ग्रामगमनेऽष्टौ, एवमेतानि चतुर्विंशतिः सूत्राणि । एवं निर्ग्रन्थिकाया अपि चतुर्विंशतिः सूत्राणीति ॥ अथानालोचित एव कथमाराधकः ? इत्याशङ्कामुत्तरं चाह—'से केणट्ठेण'मित्यादि, 'तणसूयं व'त्ति तृणाग्रं वा 'छिज्जमाणे छिन्ने'त्ति क्रियाकाल-निष्ठाकालयोरभेदेन प्रतिक्षणं कार्यस्य निष्पत्तेः छिद्यमानं छिन्नमित्युच्यते, एवमसावालोचनापरिणतौ सत्यामाराधना-प्रवृत्त आराधक एवेति । 'अहयं व'त्ति 'अहतं' नवं 'धोयं'ति प्रक्षालितं 'तंतुग्गयं'ति तन्त्रोद्गतं तूरिवेमादेरुत्तीर्ण-मात्रं 'मंजिट्ठादोणीए'त्ति मञ्जिष्ठारागभाजने ॥ आराधकश्च दीपवदीप्यत इति दीपस्वरूपं निरूपयन्नाह—

पईवस्स णं भंते ! झियायमाणस्स किं पदीवे झियाति लट्ठी झियाइ वत्ती झियाइ तेल्ले झियाइ दीवचंपए झियाइ जोति झियाइ ? गोयमा ! नो पदीवे झियाइ जाव नो पदीवचंपए झियाइ जोइ झियाइ ॥ अगार-स्स णं भंते ! झियायमाणस्स किं आगारे झियाइ कुड्डा झियाइ कडणा झि० धारणा झि० बलहरणे झि० वंसा० मल्ला झि० वग्गा झियाइ छित्तरा झियाइ छाणे झियाति जोति झियाति ?, गोयमा ! नो अगारे झियाति नो कुड्डा झियाति जाव नो छाणे झियाति जोति झियाति ॥ (सूत्रं ३३५) जीवे णं भंते ! ओरालियसरीराओ कति किरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए सिय अकिरिए ॥ नेरइए णं भंते !

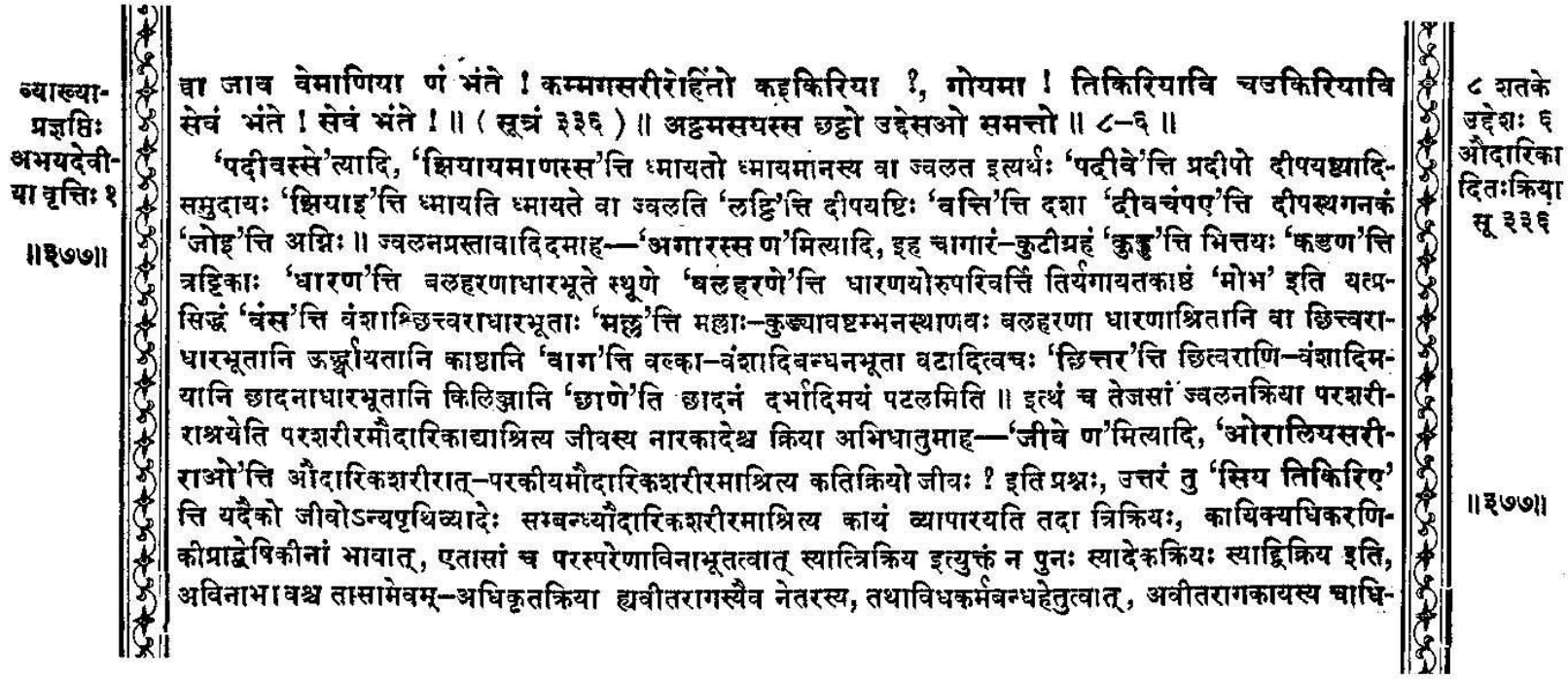
८ शतके उद्देशः ६ प्रदोषादौ ध्मातप्रश्नः सू ३३५

॥३७६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ओरालियसरीराओ कतिकिरिया (ए) ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए। असुरकुमारे णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिए ? एवं चेव, एवं जाव वेमाणिए, नवरं मणुस्से जहा जीवे। जीवे णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए जाव सिय अकिरिए। नेरइए णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिए ?, एवं एसो जहा पढमो दंडओ तहा इमोवि अपरिसेसो भाणियव्वो जाव वेमाणिए, नवरं मणुस्से जहा जीवे। जीवा णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिया ?, गोयमा ! सिय तिकिरिया जाव सिय अकिरिया, नेरइया णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिया ?, एवं एसोवि जहा पढमो दंडओ तहा भाणियव्वो, जाव वेमाणिया, नवरं मणुस्सा जहा जीवा। जीवा णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिया ?, गोयमा ! तिकिरियावि चउकिरियावि पंचकिरियावि अकिरियावि, नेरइया णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कइकिरिया ?, गोयमा ! तिकिरियावि चउकिरियावि पंचकिरियावि एवं जाव वेमाणिया, नवरं मणुस्सा जहा जीवा ॥ जीवे णं भंते ! वेउव्वियसरीराओ कतिकिरिए ?, गोयमा ? सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय अकिरिए, नेरइए णं भंते ! वेउव्वियसरीराओ कतिकिरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए एवं जाव वेमाणिए, नवरं मणुस्से जहा जीवे, एवं जहा ओरालियसरीराणं चत्तारि दंडका तहा वेउव्वियसरीरेणवि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा, नवरं पंचमकिरिया न भन्नइ, सेसं तं चेव, एवं जहा वेउव्वियं तहा आहारगंपि तेयगंपि कम्मगंपि भाणियव्वं, एक्केके चत्तारि दंडगा भाणिय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३७७॥

वा जाव वेमाणिया णं भंते ! कम्मगसरीरोहिंतो कइकिरिया ?, गोयमा ! तिकिरियावि चउकिरियावि सेवं भंते ! सेवं भंते ! ॥ (सूत्रं ३३६) ॥ अट्ठमसयस्स छट्ठो उद्देसओ समत्तो ॥ ८–६ ॥

'पदीवस्से'त्यादि, 'झियायमाणस्स'त्ति ध्मायतो ध्मायमानस्य वा ज्वलत इत्यर्थः 'पदीवे'त्ति प्रदीपो दीपयष्ट्यादि-समुदायः 'झियाइ'त्ति ध्मायति ध्मायते वा ज्वलति 'लट्ठि'त्ति दीपयष्टिः 'वत्ति'त्ति दशा 'दीवचंपए'त्ति दीपस्थगनकं 'जोइ'त्ति अग्निः ॥ ज्वलनप्रस्तावादिदमाह—'अगारस्स ण'मित्यादि, इह चागारं–कुटीग्रहं 'कुड्ड'त्ति भित्तयः 'कडण'त्ति त्रट्टिकाः 'धारण'त्ति बलहरणाधारभूते स्थूणे 'बलहरणे'त्ति धारणयोरुपरिवर्त्ति तिर्यगायतकाष्ठं 'मोभ' इति यत्प्र-सिद्धं 'वंस'त्ति वंशाश्छित्त्वराधारभूताः 'मल्ल'त्ति मल्लाः–कुड्यावष्टम्भनस्थाणवः बलहरणा धारणाश्रितानि वा छित्त्वरा-धारभूतानि ऊर्द्ध्वायतानि काष्ठानि 'वाग'त्ति वल्का–वंशादिबन्धनभूता वटादित्वचः 'छित्तर'त्ति छित्त्वराणि–वंशादिम-यानि छादनाधारभूतानि किलिञ्जानि 'छाणे'ति छादनं दर्भादिमयं पटलमिति ॥ इत्थं च तेजसां ज्वलनक्रिया परशरी-राश्रयेति परशरीरमौदारिकाद्याश्रित्य जीवस्य नारकादेश्च क्रिया अभिधातुमाह—'जीवे ण'मित्यादि, 'ओरालियसरी-राओ'त्ति औदारिकशरीरात्–परकीयमौदारिकशरीरमाश्रित्य कतिक्रियो जीवः ? इति प्रश्नः, उत्तरं तु 'सिय तिकिरिए' त्ति यदैको जीवोऽन्यपृथिव्यादेः सम्बन्ध्यौदारिकशरीरमाश्रित्य कायं व्यापारयति तदा त्रिक्रियः, कायिक्यधिकरणि-कीप्राद्वेषिकीनां भावात्, एतासां च परस्परेणाविनाभूतत्वात् स्यात्त्रिक्रिय इत्युक्तं न पुनः स्यादेकक्रियः स्याद्विक्रिय इति, अविनाभावश्च तासामेवम्–अधिकृतक्रिया ह्यवीतरागस्यैव नेतरस्य, तथाविधकर्मबन्धहेतुत्वात्, अवीतरागकायस्य चाधि-

८ शतके उद्देशः ६ औदारिकादितःक्रिया सू ३३६

॥३७७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३३५--३३६]

दीप अनुक्रम [४०८--४०९]

करणत्वेन प्रद्वेषान्वितत्वेन च कायक्रियासद्भावे इतरयोरवश्यंभावः, इतरभावे च कायिकीसद्भावः, उक्तञ्च प्रज्ञापनायामिहार्थे–"जस्स णं जीवस्स काइया किरिया कज्जइ तस्स अहिगरणिया किरिया नियमा कज्जइ, जस्स अहिगरणिया किरिया कज्जइ तस्सवि काइया किरिया नियमा कज्जइ" इत्यादि, तथाऽऽद्यक्रियात्रयसद्भावे उत्तरक्रियाद्वयं भजनया भवति, यदाह–"जस्स णं जीवस्स काइया किरिया कज्जइ तस्स पारियावणिया सिय कज्जइ सिय नो कज्जइ" इत्यादि, ततश्च यदा कायव्यापारद्वारेणाद्यक्रियात्रय एव वर्त्तते न तु परितापयति न चातिपातयति तदा त्रिक्रिय एवेत्यतोऽपि स्यात्त्रिक्रिय इत्युक्तं, यदा तु परितापयति तदा चतुष्क्रियः, आद्यक्रियात्रयस्य तत्रावश्यंभावात्, यदा त्वतिपातयति तदा पञ्चक्रियः, आद्यक्रियाचतुष्कस्य तत्रावश्यंभावात्, उक्तञ्च–"जस्स पारियावणिया किरिया कज्जइ तस्स काइया नियमा कज्जई"त्यादीति, अत एवाह–'सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए'त्ति, तथा 'सिय अकिरिय'त्ति वीतरागावस्थामाश्रित्य, तस्या हि वीतरागत्वादेव न सन्त्यधिकृतक्रिया इति ॥ 'नेरइए ण'मित्यादि, नारको यस्मादौदारिकशरीरवन्तं पृथिव्यादिकं स्पृशति परितापयति विनाशयति च तस्मादौदारिकात् स्यात्त्रिक्रिय इत्यादि, अक्रियस्त्वयं न भवति, अवीतरागत्वेन क्रियाणामवश्यंभावित्वादिति, 'एवं चेव'त्ति स्यात्त्रिक्रिय इत्यादि सर्वेष्वसुरादिपदेषु वाच्यमित्यर्थः, 'मणुस्से जहा जीवे'त्ति जीवपदे इव मनुष्यपदेऽक्रियत्वमपि वाच्यमित्यर्थः, जीवपदे मनुष्यसिद्धापेक्षयैवाक्रियत्वस्याधीतत्वादिति, 'ओरालियसरीरेहिंतो'त्ति औदारिकशरीरेभ्य इत्येवं बहुत्वापेक्षोऽयमपरो दण्डकः, एवमेतौ जीवस्यैकत्वेन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १

॥३७८॥

द्वौ दण्डकौ, एवमेव च जीवस्य बहुत्वेनापरौ द्वौ, एवमौदारिकशरीरापेक्षया चत्वारो दण्डका इति ॥ 'जीवे ण'मित्यादि, जीवः परकीयं वैक्रियशरीरमाश्रित्य कतिक्रियः ?, उच्यते, स्यात्त्रिक्रिय इत्यादि, पञ्चक्रियश्चेह नोच्यते, प्राणातिपातस्य वैक्रियशरीरिणः कर्त्तुमशक्यत्वाद्, अविरतिमात्रस्य चेहाविवक्षितत्वाद्, अत एवोक्तं–'पंचमकिरिया न भन्नइ'त्ति, 'एवं जहा वेउव्वियं तहा आहारयंपि तेयगंपि कम्मगंपि भाणियव्वं'ति, अनेनाहारकादिशरीरत्रयमप्याश्रित्य दण्डकचतुष्टयेन नैरयिकादिजीवानां त्रिक्रियत्वं चतुष्क्रियत्वं चोक्तं, पञ्चक्रियत्वं तु निवारितं, मारयितुमशक्यत्वात्तस्येति, अथ नारकस्याधोलोकवर्त्तित्वादाहारकशरीरस्य च मनुष्यलोकवर्त्तित्वेन तत्क्रियाणामविषयत्वात् कथमाहारकशरीरमाश्रित्य नारकः स्यात्त्रिक्रियः स्याच्चतुष्क्रिय इति ?, अत्रोच्यते, यावत्पूर्वशरीरमव्युत्सृष्टं जीवनिर्वर्त्तितपरिणामं न त्यजति तावत्पूर्वभावप्रज्ञापनानयमतेन निर्वर्त्तकजीवस्यैवेति व्यपदिश्यते घृतघटन्यायेनेत्यतो नारकपूर्वभवदेहो नारकस्यैव तदेशेन च मनुष्यलोकवर्त्तिनाऽस्थ्यादिरूपेण यदाहारकशरीरं स्पृश्यते परिताप्यते वा तदाहारकदेहान्नारकस्त्रिक्रियश्चतुष्क्रियो वा भवति, कायिकीभावे इतरयोरवश्यंभावात्, पारितापनिकीभावे चाद्यत्रयस्यावश्यंभावादिति । एवमिहान्यदपि वि(तद्वि)षयमवगन्तव्यं, यच्च तैजसकार्म्मणशरीरापेक्षया जीवानां परितापकत्वं तदौदारिकाद्याश्रितत्वेन तयोरवसेयं, स्वरूपेण तयोः परितापयितुमशक्यत्वादिति ॥ अष्टमशते षष्ठोद्देशः ॥ ८–६ ॥

८ शतके उद्देशः ६ औदारिकादितःक्रिया सू ३३६

॥३७८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टम-शतके षष्ठं-उद्देशक: समाप्त:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३३७]

दीप अनुक्रम [४१०]

षष्ठोद्देशके क्रियाव्यतिकर उक्त इति क्रियाप्रस्तावात् सप्तमोद्देशके प्रद्वेषक्रियानिमित्तकोऽन्ययूथिकविवादव्यतिकर उच्यते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ रायगिहे नगरे वन्नओ, गुणसिलए चेइए वन्नओ, जाव पुढविसिलापट्टओ, तस्स णं गुणसिलस्स चेइयस्स अदूरसामंते बहवे अन्नउत्थिया परिवसंति, तेणं कालेणं २ समणे भगवं महावीरे आदिगरे जाव समोसढे जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं २ समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे अंतेवासी थेरा भगवंतो जातिसंपन्ना कुलसंपन्ना जहा बितियसए जाव जीवियासामरणभयविप्पमुक्का समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरा झाणकोट्ठोवगया संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा जाव विहरंति, तए णं ते अन्नउत्थिया जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छंति २ त्ता ते थेरे भगवंते एवं वयासी-तुब्भे णं अज्जो ! तिविहं तिविहेणं अस्संजयअविरयअप्पडिहय जहा सत्तमसए बितिए उद्देसए जाव एगंतबाले यावि भवह, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! अम्हे तिविहं तिविहेणं अस्संजयअविरय जाव एगंतबाला यावि भवामो ?, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–तुब्भे णं अज्जो ! अदिन्नं गेण्हह अदिन्नं भुंजह अदिन्नं सातिज्जह, तए णं ते तुब्भे अदिन्नं गेण्हमाणा अदिन्नं भुंजमाणा अदिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं अस्संजयअविरय जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! अम्हे अदिन्नं गेण्हामो अदिन्नं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ अष्टम-शतके सप्तम-उद्देशकः आरभ्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३७९॥

भुंजामो अदिन्नं सातिज्जामो ?, जए णं अम्हे अदिन्नं गेण्हमाणा जाव अदिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं अस्संजय जाव एगंतबाला यावि भवामो ?, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–तुम्हा णं अज्जो ! दिज्जमाणे अदिन्ने पडिग्गहेज्जमाणे अपडिग्गहिए निस्सरिज्जमाणे अणिसट्ठे, तुब्भे णं अज्जो ! दिज्जमाणं पडिग्गहगं असंपत्तं एत्थ णं अंतरा केइ अवहरिज्जा, गाहावइस्स णं तं भंते ! नो खलु तं तुब्भं, तए णं तुज्झे अदिन्नं गेण्हह जाव अदिन्नं सातिज्जह, तए णं तुज्झे अदिन्नं गेण्हमाणा जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–नो खलु अज्जो ! अम्हे अदिन्नं गिण्हामो अदिन्नं भुंजामो अदिन्नं सातिज्जामो अम्हे णं अज्जो ! दिन्नं गेण्हामो दिन्नं भुंजामो दिन्नं सातिज्जामो, तए णं अम्हे दिन्नं गेण्हमाणा दिन्नं भुंजमाणा दिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं संजयविरयपडिहय जहा सत्तमसए जाव एगंतपंडिया यावि भवामो, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! तुम्हे दिन्नं गेण्हह जाव दिन्नं सातिज्जह, जए णं तुज्झे दिन्नं गेण्हमाणा जाव एगंतपंडिया यावि भवह ?, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–अम्हे णं अज्जो ! दिज्जमाणे दिन्ने पडिग्गहेज्जमाणे पडिग्गहिए निसिरिज्जमाणे निसट्ठे जेणं अम्हे णं अज्जो ! दिज्जमाणं पडिग्गहगं असंपत्तं एत्थ णं अंतरा केइ अवहरेज्जा अम्हाणं तं णो खलु तं गाहावइस्स, जए णं अम्हे दिन्नं गेण्हामो दिन्नं भुंजामो दिन्नं सातिज्जामो तए णं अम्हे दिन्नं गेण्हमाणा जाव दिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं संजय जाव एगंतपंडिया यावि भवामो, तुज्झे णं

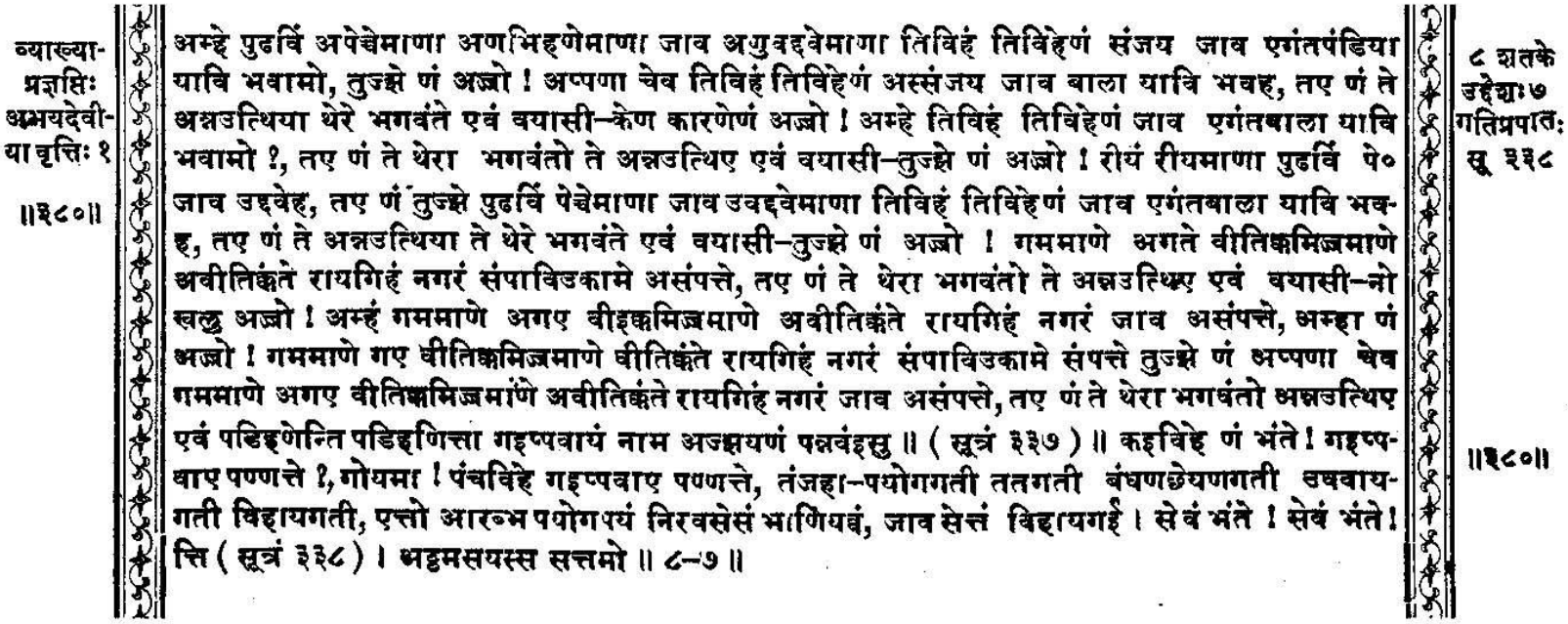
८ शतके उद्देशः७ दीयमानं दत्तंसू३३७

॥३७९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अज्जो ! अप्पणा चेव तिविहं तिविहेणं असंजय जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! अम्हे तिविहं जाव एगंतबाला यावि भवामो ?, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–तुज्झे णं अज्जो ! अदिन्नं गेण्हह ३, तए णं तु अज्जो तुब्भे अदिन्नं गे० जाव एगंत०, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! अम्हे अदिन्नं गेण्हामो जाव एगंतबा० ?, तए णं ते थेरे भगवंते ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–तुज्झे णं अज्जो ! दिज्जमाणे अदिन्ने तं चेव जाव गाहावइस्स णं णो खलु तं तुज्झे, तए णं तुज्झे अदिन्नं गेण्हह, तं चेव जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते अन्नउ० ते थेरे भ० एवं व०–तुज्झे णं अज्जो ! तिविहं तिविहेणं असंजय जाव एगंतबा० भवह, तए णं ते थेरा भ० ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–केण कारणेणं अम्हे तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवामो ?, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–तुज्झे णं अज्जो ! रीयं रीयमाणा पुढविं पेचेह अभिहणह वत्तेह लेसेह संघाएह संघट्टेह परितावेह किलामेह उद्दवेह तए णं तुज्झे पुढविं पेचेमाणा जाव उवद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं असंजयअविरय जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–नो खलु अज्जो ! अम्हे रीयं रीयमाणा पुढविं पेचेमो अभिहणामो जाव उवद्दवेमो अम्हे णं अज्जो ! रीयं रीयमाणा कायं वा जोयं वा रियं वा पडुच्च देसं देसेणं वयामो पएसं पएसेणं वयामो ते णं अम्हे देसं देसेणं वयमाणा पएसं पएसेणं वयमाणा नो पुढविं पेचेमो अभिहणामो जाव उवद्दवेमो, तए णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३८०॥

अम्हे पुढविं अपेचेमाणा अणभिहणेमाणा जाव अणुद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं संजय जाव एगंतपंडिया यावि भवामो, तुज्झे णं अज्जो ! अप्पणा चेव तिविहं तिविहेणं असंजय जाव बाला यावि भवह, तए णं ते अन्नउत्थिया थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! अम्हे तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवामो ?, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–तुज्झे णं अज्जो ! रीयं रीयमाणा पुढविं पे० जाव उद्दवेह, तए णं तुज्झे पुढविं पेचेमाणा जाव उवद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–तुज्झे णं अज्जो ! गममाणे अगते वीतिक्कमिज्जमाणे अवीतिक्कंते रायगिहं नगरं संपाविउकामे असंपत्ते, तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–नो खलु अज्जो ! अम्हं गममाणे अगए वीइक्कमिज्जमाणे अवीतिक्कंते रायगिहं नगरं जाव असंपत्ते, अम्हा णं अज्जो ! गममाणे गए वीतिक्कमिज्जमाणे वीतिक्कंते रायगिहं नगरं संपाविउकामे संपत्ते तुज्झे णं अप्पणा चेव गममाणे अगए वीतिक्कमिज्जमाणे अवीतिक्कंते रायगिहं नगरं जाव असंपत्ते, तए णं ते थेरा भगवंतो अन्नउत्थिए एवं पडिहणेन्ति पडिहणित्ता गइप्पवायं नाम अज्झयणं पन्नवेइसु ॥ (सूत्रं ३३७) ॥ कइविहे णं भंते ! गइप्पवाए पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे गइप्पवाए पण्णत्ते, तंजहा–पयोगगती ततगती बंधणछेयणगती उववायगती विहायगती, एत्तो आरब्भ पयोगपयं निरवसेसं भाणियव्वं, जाव सेत्तं विहायगई । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति (सूत्रं ३३८) । अट्ठमसयस्स सत्तमो ॥ ८–७ ॥

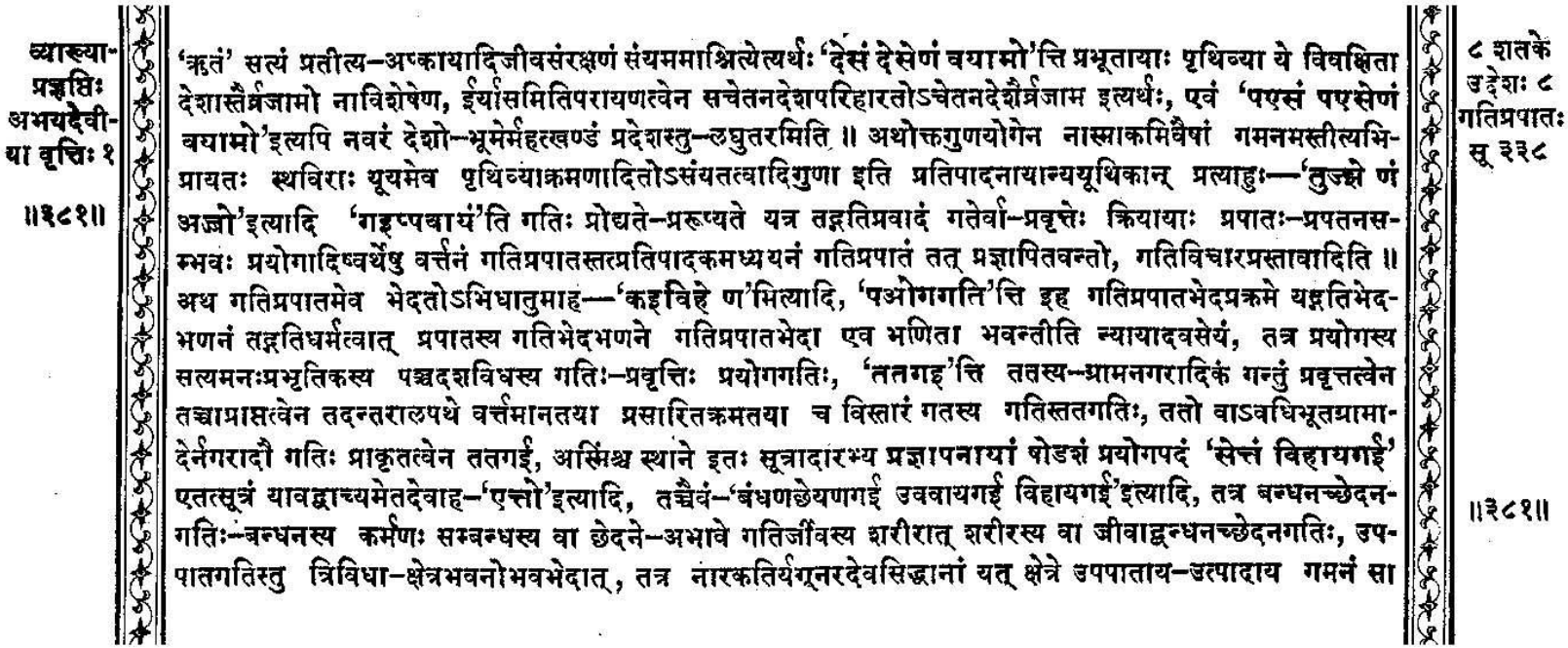
८ शतके उद्देशः ७ गतिप्रपातः सू ३३८

॥३८०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'तेण'मित्यादि, तत्र 'अज्जो'त्ति हे आर्याः ! 'तिविहं तिविहेणं'ति त्रिविधं करणादिकं योगमाश्रित्य त्रिविधेन मनः-प्रभृतिकरणेन 'अदिन्नं साइज्जह'त्ति अदत्तं स्वदध्वे अनुमन्यध्व इत्यर्थः 'दिज्जमाणे अदिन्ने'इत्यादि दीयमानमदत्तं, दीयमानस्य वर्त्तमानकालत्वाद् दत्तस्य चातीतकालवर्त्तित्वाद् वर्त्तमानातीतयोश्चात्यन्तभिन्नत्वादीयमानं दत्तं न भवति दत्तमेव दत्तमिति व्यपदिश्यते, एवं प्रतिगृह्यमाणादावपि, तत्र दीयमानं दायकापेक्षया प्रतिगृह्यमाणं ग्राहकापेक्षया 'निसृज्यमानं' क्षिप्यमाणं पात्रापेक्षयेति 'अंतरे'त्ति अवसरे, अयमभिप्रायः–यदि दीयमानं पात्रेऽपतितं सदत्तं भवति तदा तस्य दत्तस्य सतः पात्रपतनलक्षणं ग्रहणं कृतं भवति, यदा तु तद्दीयमानमदत्तं तदा पात्रपतनलक्षणं ग्रहणमदत्त-स्येति प्राप्तमिति, निर्ग्रन्थोत्तरवाक्ये तु 'अम्हे णं अज्जो ! दिज्जमाणे दिन्ने' इत्यादि यदुक्तं तत्र क्रियाकालनिष्ठाकालयोरभेदा-दीयमानत्वादेर्दत्तत्वादि समवसेयमिति । अथ दीयमानमदत्तमित्यादेर्भवन्मतत्वाद् यूयमेवासंयतत्वादिगुणा इत्यावेदना-यान्ययूथिकान् प्रति स्थविराः प्राहुः—'तुब्भे णं अज्जो ! अप्पणा चेवे'त्यादि, 'रीयं रीयमाण'त्ति 'रीतं' गमनं 'रीयमाणाः'गच्छन्तो गमनं कुर्वाणा इत्यर्थः 'पुढविं पेचेह' पृथिवीमाक्रामथेत्यर्थः 'अभिहणह'त्ति पादाभ्यामाभिमुख्येन हथ 'वत्तेह'त्ति पादाभिघातेनैव 'वर्त्तयथ' श्लक्ष्णतां नयथ 'लेसेह'त्ति 'श्लेषयथ' भूम्यां श्लिष्टां कुरुथ 'संघाएह'त्ति 'सङ्घातयथ' संहतां कुरुथ 'संघट्टेह'त्ति 'सङ्घट्टयथ' स्पृशथ 'परितावेह'त्ति 'परितापयथ' समन्ताज्जातसन्तापां कुरुथ 'किलामेह'त्ति क्लमयथ–मारणान्तिकसमुद्घातं गमयथेत्यर्थः 'उवद्दवेह'त्ति उपद्रवयथ मारयथेत्यर्थः 'कायं व'त्ति 'कायं' शरीरं प्रतीत्योच्चारादिकायकार्यमित्यर्थः 'जोगं व'त्ति 'योगं' ग्लानवैयावृत्त्यादिव्यापारं प्रतीत्य 'रियं वा पडुच्च'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३८१॥

'ऋतं' सत्यं प्रतीत्य–अप्कायादिजीवसंरक्षणं संयममाश्रित्येत्यर्थः 'देसं देसेणं वयामो'त्ति प्रभूतायाः पृथिव्या ये विवक्षिता देशास्तैर्व्रजामो नाविशेषेण, ईर्यासमितिपरायणत्वेन सचेतनदेशपरिहारतोऽचेतनदेशैर्व्रजाम इत्यर्थः, एवं 'पएसं पएसेणं वयामो'इत्यपि नवरं देशो–भूमेर्महत्खण्डं प्रदेशस्तु–लघुतरमिति ॥ अथोक्तगुणयोगेन नास्माकमिवैषां गमनमस्तीत्यभिप्रायतः स्थविराः यूयमेव पृथिव्याक्रमणादितोऽसंयतत्वादिगुणा इति प्रतिपादनायान्ययूथिकान् प्रत्याहुः—'तुज्झे णं अज्जो'इत्यादि 'गइप्पवायं'ति गतिः प्रोद्यते–प्ररूप्यते यत्र तद्गतिप्रवादं गतेर्वा–प्रवृत्तेः क्रियायाः प्रपातः–प्रपतनसम्भवः प्रयोगादिष्वर्थेषु वर्त्तनं गतिप्रपातस्तत्प्रतिपादकमध्ययनं गतिप्रपातं तत् प्रज्ञापितवन्तो, गतिविचारप्रस्तावादिति ॥ अथ गतिप्रपातमेव भेदतोऽभिधातुमाह—'कइविहे ण'मित्यादि, 'पओगगति'त्ति इह गतिप्रपातभेदप्रक्रमे यद्गतिभेदभणनं तद्गतिधर्मत्वात् प्रपातस्य गतिभेदभणने गतिप्रपातभेदा एव भणिता भवन्तीति न्यायादवसेयं, तत्र प्रयोगस्य सत्यमनःप्रभृतिकस्य पञ्चदशविधस्य गतिः–प्रवृत्तिः प्रयोगगतिः, 'ततगइ'त्ति ततस्य–ग्रामनगरादिकं गन्तुं प्रवृत्तत्वेन तच्चाप्राप्तत्वेन तदन्तरालपथे वर्त्तमानतया प्रसारितक्रमतया च विस्तारं गतस्य गतिस्ततगतिः, ततो वाऽवधिभूतग्रामादेर्नगरादौ गतिः प्राकृतत्वेन ततगई, अस्मिंश्च स्थाने इतः सूत्रादारभ्य प्रज्ञापनायां षोडशं प्रयोगपदं 'सेत्तं विहायगई' एतत्सूत्रं यावद्वाच्यमेतदेवाह–'एत्तो'इत्यादि, तच्चैवं–'बंधणछेयणगई उववायगई विहायगई'इत्यादि, तत्र बन्धनच्छेदनगतिः–बन्धनस्य कर्मणः सम्बन्धस्य वा छेदने–अभावे गतिर्जीवस्य शरीरात् शरीरस्य वा जीवाद्बन्धनच्छेदनगतिः, उपपातगतिस्तु त्रिविधा–क्षेत्रभवनोभवभेदात्, तत्र नारकतिर्यग्नरदेवसिद्धानां यत् क्षेत्रे उपपाताय–उत्पादाय गमनं सा

८ शतके उद्देशः ८ गतिप्रपातः सू ३३८

॥३८१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना जाता, उद्देशक: ७ स्थाने ८ लिखितं

प्रत सूत्रांक [३३७, ३३८]

दीप अनुक्रम [४१०, ४११]

क्षेत्रोपपातगतिः, या च नारकादीनामेव स्वभवे उपपातरूपा गतिः सा भवोपपातगतिः, यच्च सिद्धपुद्गलयोर्गमनमात्रं सा नोभवोपपातगतिः, विहायोगतिस्तु स्पृशद्गत्यादिकाऽनेकविधेति ॥ अष्टमे शते सप्तमः ॥ ७ ॥

अनन्तरोद्देशके स्थविरान् प्रत्यन्ययूथिकाः प्रत्यनीका उक्ताः, अष्टमे तु गुर्वादिप्रत्यनीका उच्यन्ते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदं सूत्रम्—

रायगिहे नयरे जाव एवं वयासी–गुरू णं भंते ! पडुच्च कति पडिणीया पण्णत्ता ?, गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तंजहा आयरियपडिणीए उवज्झायपडिणीए थेरपडिणीए ॥ गइं णं भंते ! पडुच्च कति पडिणीया पण्णत्ता ?, गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तंजहा–इहलोगपडिणीए परलोगपडिणीए दुहओलोगपडिणीए ॥ समूहण्णं भंते ! पडुच्च कति पडिणीया पण्णत्ता ?, गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तंजहा–कुलपडिणीए गणपडिणीए संघपडिणीए ॥ अणुकंपं पडुच्च पुच्छा, गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तंजहा– तवस्सिपडिणीए गिलाणपडिणीए सेहपडिणीए ॥ सुयण्णं भंते ! पडुच्च पुच्छा, गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तंजहा–सुत्तपडिणीए अत्थपडिणीए तदुभयपडिणीए । भावं णं भंते ! पडुच्च पुच्छा, गोयमा ! तओ पडिणीया पन्नत्ता, तंजहा–नाणपडिणीए दंसणपडिणीए चरित्तपडिणीए ॥ (सूत्रे ३३९) ॥

'रायगिहे' इत्यादि, तत्र 'गुरूणं' ति 'गुरून्' तत्त्वोपदेशकान् प्रतीत्य–आश्रित्य प्रत्यनीकमिव–प्रतिसैन्यमिव प्रतिकू-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टम-शतके सप्तम-उद्देशकः समाप्तः

अथ अष्टम-शतके अष्टम-उद्देशकः आरभ्यते

आचार्यादिनाम् प्रत्यनिकाः

प्रत सूत्रांक [३३९]

दीप अनुक्रम [४१२]

लतया ये ते प्रत्यनीकाः, तत्राचार्यः–अर्थव्याख्याता उपाध्यायः–सूत्रदाता स्थविरस्तु जातिश्रुतपर्यायैः, तत्र जात्या षष्टि-वर्षजातः श्रुतस्थविरः–समवायधरः पर्यायस्थविरो–विंशतिवर्षपर्यायः, एतत्प्रत्यनीकता चैवम्–"जच्चाईहिं अवण्णं भासइ वट्टइ न यावि उववाए । अहिओ छिद्दप्पेही पगासवाई अणणुलोमो ॥ १ ॥ अहवावि वए एवं उवएस परस्स देंति एवं तु । दसविहवेयावच्चे कायव्व सयं न कुव्वंति ॥ २ ॥" [जात्यादिभिरवर्णं भाषते न चाप्युपपाते वर्त्तते । अहितश्छिद्रप्रेक्षी प्रकाशवादी अननुलोमः ॥१॥ अथवापि वदेदेवमुपदेशमेवं परस्य ददति दशविधवैयावृत्यं यत्कर्त्तव्यं स्वयं तु न कुर्वन्ति ॥ २ ॥] 'गइं ण'मित्यादि, 'गतिं' मानुष्यत्वादिकां प्रतीत्य तत्रेहलोकस्य–प्रत्यक्षस्य मानुषत्वलक्षणपर्यायस्य प्रत्यनीक इन्द्रियार्थप्रतिकूलकारित्वात् पञ्चाग्नितपस्विवद् इहलोकप्रत्यनीकः, परलोको–जन्मान्तरं तत्प्रत्यनीकः–इन्द्रियार्थतत्परः, द्विधालोकप्रत्यनीकश्च चौर्यादिभिरिन्द्रियार्थसाधनपरः ॥ 'समूहण्णं भंते !'इत्यादि, 'समूहं' साधुसमुदायं प्रतीत्य तत्र कुलं–चान्द्रादिकं तत्समूहो गणः–कोटिकादिस्तत्समूहः सङ्घः, प्रत्यनीकता चैतेषामवर्णवादादिभिरिति, कुलादिलक्षणं चेदम्–"एत्थ कुलं विन्नेयं एगायरियस्स संतई जा उ । तिण्ह कुलाण मिहो पुण सावेक्खाणं गणो होइ ॥ १ ॥ सव्वोवि नाणदंसणचरणगुणविभूसियाण समणाणं । समुदाओ पुण संघो गणसमुदाओत्तिकाऊणं ॥ २ ॥" [अत्र कुलं विज्ञेयमेकाचार्यस्य या सन्ततिः । त्रयाणां कुलानामिह सापेक्षाणां पुनर्गणो भवति ॥ १ ॥ सर्वोऽपि ज्ञानदर्शनचरणगुणविभूषितानां श्रमणानां समुदयः पुनः सङ्घो गुणसमुदाय इतिकृत्वा] ॥ २ ॥ 'अणुकंप'मित्यादि, अनुकम्पा–भक्तपानादिभिरुपष्टम्भस्तां प्रतीत्य, तत्र तपस्वी–क्षपकः ग्लानो–रोगादिभिरसमर्थः शैक्षः–अभिनवप्रव्रजितः, एते ह्यनुकम्पनीया भवन्ति,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आचार्यादिनाम् प्रत्यनिका:

प्रत सूत्रांक [३३९]

दीप अनुक्रम [४१२]

तदकरणाकारणाभ्यां च प्रत्यनीकतेति ॥ 'सुयण्ण'मित्यादि, 'श्रुतं'सूत्रादि तत्र सूत्रं–व्याख्येयम् अर्थः–तद्व्याख्यानं निर्युक्त्यादि तदुभयं–एतद्वितयं, तत्प्रत्यनीकता च–"काया वया य ते चिय ते चेव पमाय अप्पमाया य । मोक्खाहिगारियाणं जोइसजोणीहिं किं कज्जं ? ॥ १ ॥" [काया व्रतानि च तान्येव त एव प्रमादा अप्रमादाश्च । मोक्षाधिकारिणां (योनिप्राभृतादि) ज्योतिर्योनिभिः किं कार्यम् ? ॥ १ ॥] इत्यादि दूषणोद्भावनं । 'भाव'मित्यादि, भावः–पर्यायः, स च जीवाजीवगतः, तत्र जीवस्य प्रशस्तोऽप्रशस्तश्च, तत्र प्रशस्तः–क्षायिकादिरप्रशस्तो विवक्षयौदयिकः, क्षायिकादिः पुनर्ज्ञानादिरूपोऽतो भावान् ज्ञानादीन् प्रति प्रत्यनीकः तेषां वितथप्ररूपणतो दूषणतो वा, यथा–"पाययसुत्तनिबद्धं को वा जाणइ पणीय केणेयं । किं वा चरणेणं तु दाणेण विणा उ हवइत्ति ॥ १ ॥" [प्राकृतनिबद्धं सूत्रं को वा जानाति केनेदं प्रणीतं ?, किंवा दानेन विना चरणेनैव भवति ? इति ॥ १ ॥] एते च प्रत्यनीका अपुनःकरणेनाभ्युत्थिताः शुद्धिमर्हन्ति शुद्धिश्च व्यवहारादिति व्यवहारप्ररूपणायाह—

कइविहे णं भंते ! ववहारे पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे ववहारे पन्नत्ते, तंजहा–आगमे सुत्ते आणा धारणा जीए, जहा से तत्थ आगमे सिया आगमेणं ववहारं पट्ठवेज्जा, णो य से तत्थ आगमे सिया जहा से तत्थ सुते सिया सुएणं ववहारं पट्ठवेज्जा, णो वा से तत्थ सुए सिया जहा से तत्थ आणा सिया आणाए ववहारं पट्ठवेज्जा, णो य से तत्थ आणा सिया जहा से तत्थ धारणा सिया धारणाए णं ववहारं पट्ठवेज्जा, णो य से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आचार्यादिनाम् प्रत्यनिकाः,

आगम आदि पञ्चविध-आचाराः

प्रत सूत्रांक [३४०--३४१]

दीप अनुक्रम [४१३-४१४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३८३॥

तत्थ धारणा सिया जहा से तत्थ जीए सिया जीएणं ववहारं पट्ठवेज्जा, इचेएहिं पंचहिं ववहारं पट्ठवेज्जा, तंजहा–आगमेणं सुएणं आणाए धारणाए जीएणं, जहा २ से आगमे सुए आणा धारणा जीए तहा २ ववहारं पट्ठवेज्जा ॥ से किमाहु भंते !, आगमबलिया समणा निग्गंथा इचेतं पंचविहं ववहारं जया २ जहिं २ तहा २ तहिं २ अणिस्सिओवसितं सम्मं ववहरमाणे समणे निग्गंथे आणाए आराहए भवइ (सूत्रं ३४०)॥ कहविहे णं भंते ! बंधे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे बंधे पन्नत्ते, तंजहा–ईरियावहियाबंधे य संपराइयबंधे य। ईरियावहियण्णं भंते ! कम्मं किं नेरइओ बंधइ तिरिक्खजोणिओ बंधइ तिरिक्खजोणिणी बंधइ मणुस्सो बंधइ मणुस्सी बं० देवो बं० देवी बं० ?, गोयमा ! नो नेरइओ बंधइ नो तिरिक्खजोणीओ बंधइ नो तिरिक्खजोणिणी बंधइ नो देवो बंधइ नो देवी बंधइ पुव्वपडिवन्नए पडुच्च मणुस्सा य मणुस्सीओ य बं० पडिवज्जमाणए पडुच्च मणुस्सो वा बंधइ १ मणुस्सी वा बंधइ २ मणुस्सा वा बंधंति ३ मणुस्सीओ वा बंधंति ४ अहवा मणुस्सो य मणुस्सी य बंधइ ५ अहवा मणुस्सो य मणुस्सीओ य बंधन्ति ६ अहवा मणुस्सा य मणुस्सी य बंधंति ७ अहवा मणुस्सा य मणुस्सी-ओ य बं० ॥ तं भंते ! किं इत्थी बंधइ पुरिसो बंधइ नपुंसगो बंधति इत्थीओ बंधन्ति पुरिसा बं० नपुंसगा बंधन्ति नोइत्थीनोपुरिसोनोनपुंसओ बंधइ ?, गोयमा ! नो इत्थी बंधइ नो पुरिसो बं० जाव नो नपुंसगा बंधन्ति पुव्वपडिवन्नए पडुच्च अवगयवेदा बंधंति, पडिवज्जमाणए य पडुच्च अवगयवेदो वा बंधति अवगयवेदा वा बंधंति ॥ जइ भंते ! अवगयवेदो वा बंधइ अवगयवेदा वा बंधंति ते भंते ! किं इत्थीपच्छाकडो बं० पुरि-

८ शतके उद्देशः ८ व्यवहाराः सू ३४० बन्धः सू ३४१

॥३८३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आगम आदि पञ्चविध-आचारा:, बन्धः एवं बन्धस्य भेदा:

प्रत सूत्रांक [३४०--३४१]

दीप अनुक्रम [४१३-४१४]

सपच्छाकडो बं० २ नपुंसकपच्छाकडो बं० ३ इत्थीपच्छाकडा बंधंति ४ पुरिसपच्छाकडावि बंधंति ५ नपुंसगपच्छाकडावि बं० ६ उदाहु इत्थिपच्छाकडो य पुरिसपच्छाकडो य बंधति ४ उदाहु इत्थीपच्छाकडो य णपुंसगपच्छाकडो य बंधइ ४ उदाहु पुरिसपच्छाकडो य णपुंसगपच्छाकडो य बंधइ ४ उदाहु इत्थिपच्छाकडो य पुरिसपच्छाकडो य णपुंसगपच्छाकडो य भाणियव्वं ८, एवं एते छव्वीसं भंगा २६ जाव उदाहु इत्थीपच्छाकडा य पुरिसप० नपुंसकप० बंधंति ?, गोयमा ! इत्थिपच्छाकडोवि बंधइ १ पुरिसपच्छाकडोवि बं० २ नपुंसगपच्छाकडोवि बं० ३ इत्थीपच्छाकडावि बं० ४ पुरिसपच्छाकडावि बं० ५ नपुंसकपच्छाकडावि बं० ६ अहवा इत्थीपच्छाकडा पुरिसपच्छाकडो य बंधइ ७ एवं एए चेव छव्वीसं भंगा भाणियव्वा, जाव अहवा इत्थिपच्छाकडा य पुरिसपच्छाकडा य नपुंसगपच्छाकडा य बंधंति ॥ तं भंते ! किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २ बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३ बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४ न बंधी बंधइ बंधिस्सइ ५ न बंधी बंधइ न बंधिस्सइ ६ न बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ७ न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ८ ?, गोयमा ! भवागरिसं पडुच्च अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ अत्थेगतिए बंधी बंधइ न बंधिस्सइ, एवं तं चेव सव्वं जाव अत्थेगतिए न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ, गहणागरिसं पडुच्च अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ एवं जाव अत्थेगतिए न बंधी बंधइ बंधिस्सइ, णो चेव णं न बंधी बंधइ न बंधिस्सइ, अत्थेगतिए न बंधी न बंधइ बंधिस्सइ अत्थेगतिए न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ॥ तं भंते ! किं साइयं सपज्जवसियं बंधइ साइयं अपज्जवसि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बन्धः एवं बन्धस्य भेदाः

यं बंधइ अणाइयं सपज्जवसियं बंधइ अणाइयं अपज्जवसियं बंधइ ?, गोयमा ! साइयं सपज्जवसियं बंधइ नो साइयं अपज्जवसियं बंधइ नो अणाइयं सपज्जवसियं बंधइ नो अणाइयं अपज्जवसियं बंधइ ॥ तं भंते ! किं देसेणं देसं बंधइ देसेणं सव्वं बंधइ सव्वेणं देसं बंधइ सव्वेणं सव्वं बंधइ ?, गोयमा ! नो देसेणं देसं बंधइ णो देसेणं सव्वं बंधइ नो सव्वेणं देसं बंधइ सव्वेणं सव्वं बंधइ ॥ (सूत्रं ३४१) ॥

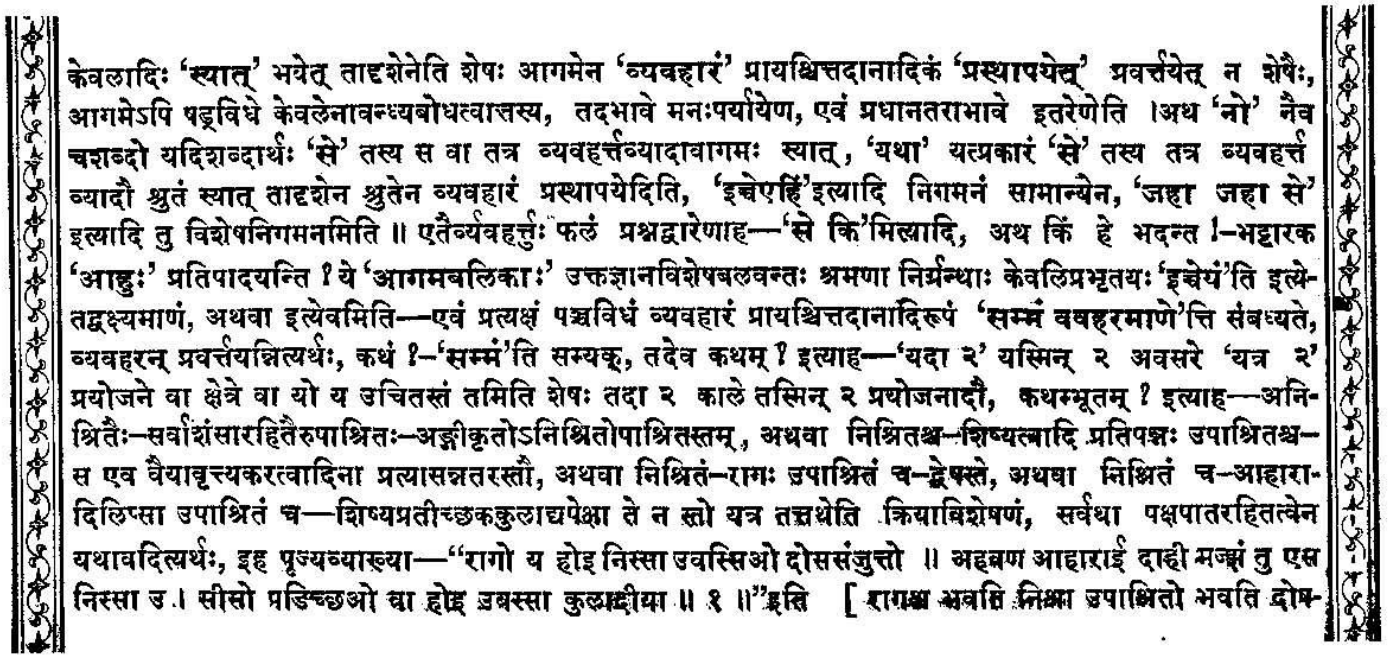
'कइविहे ण'मित्यादि, व्यवहरणं व्यवहारो–मुमुक्षुप्रवृत्तिनिवृत्तिरूपः इह तु तन्निबन्धनत्वात् ज्ञानविशेषोऽपि व्यवहारः, तत्रागम्यन्ते–परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेनेत्यागमः–केवलमनःपर्यायावधिपूर्वचतुर्दशकदशकनवकरूपः, तथा श्रुतं–शेषमाचारप्रकल्पादि, नवादिपूर्वाणां च श्रुतत्वेऽप्यतीन्द्रियार्थेषु विशिष्टज्ञानहेतुत्वेन सातिशयत्वादागमव्यपदेशः केवलवदिति, तथाऽऽज्ञा–यदगीतार्थस्य पुरतो गूढार्थपदैर्देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनायातीचारालोचनं इतरस्यापि तथैव शुद्धिदानं, तथा धारणा–गीतार्थसंविग्नेन द्रव्याद्यपेक्षया यत्रापराधे यथा या विशुद्धिः कृता तामवधार्य यदगुप्तमेवालोचनदानतस्तत्रैव तथैव तामेव प्रयुञ्जे इति वैयावृत्त्यकरादेर्वा गच्छोपग्रहकारिणोऽशेषानुचितस्य प्रायश्चित्तपदानां प्रदर्शितानां धरणमिति, तथा जीतं द्रव्यक्षेत्रकालभावपुरुषप्रतिसेवानुवृत्त्या संहननधृत्यादिपरिहाणिमवेक्ष्य यत् प्रायश्चित्तदानं यो वा यत्र गच्छे सूत्रातिरिक्तः कारणतः प्रायश्चित्तव्यवहारः प्रवर्त्तितो बहुभिरन्यैश्चानुवर्त्तित इति । आगमादीनां व्यापारणे उत्सर्गापवादावाह–'जहे'त्यादि, यथेति यथाप्रकारः केवलादीनामन्यतमः 'से' तस्य व्यवहर्त्तुः स चोक्तलक्षणो व्यवहारः 'तत्र' तेषु पञ्चसु व्यवहारेषु मध्ये तस्मिन् वा प्रायश्चित्तदानादिव्यवहारकाले व्यवहर्त्तव्ये वा वस्तुनि विषये 'आगमः'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आगम आदि पञ्चविध-आचारा:, बन्ध: एवं बन्धस्य भेदा:

प्रत सूत्रांक [३४०--३४१]

दीप अनुक्रम [४१३-४१४]



केवलादिः 'स्यात्' भवेत् तादृशेनेति शेषः आगमेन 'व्यवहारं' प्रायश्चित्तदानादिकं 'प्रस्थापयेत्' प्रवर्त्तयेत् न शेषैः, आगमेऽपि षड्विधे केवलेनावन्ध्यबोधत्वात्तस्य, तदभावे मनःपर्यायेण, एवं प्रधानतराभावे इतरेणेति ।अथ 'नो' नैव चशब्दो यदिशब्दार्थः 'से' तस्य स वा तत्र व्यवहर्त्तव्यादावागमः स्यात्, 'यथा' यत्प्रकारं 'से' तस्य तत्र व्यवहर्त्तव्यादौ श्रुतं स्यात् तादृशेन श्रुतेन व्यवहारं प्रस्थापयेदिति, 'इच्चेएहिं'इत्यादि निगमनं सामान्येन, 'जहा जहा से' इत्यादि तु विशेषनिगमनमिति ॥ एतैर्व्यवहर्त्तुः फलं प्रश्नद्वारेणाह—'से किं'मित्यादि, अथ किं हे भदन्त !–भट्टारक 'आहुः' प्रतिपादयन्ति ? ये 'आगमबलिकाः' उक्तज्ञानविशेषबलवन्तः श्रमणा निर्ग्रन्थाः केवलिप्रभृतयः 'इच्चेयं'ति इत्येतद्वक्ष्यमाणं, अथवा इत्येवमिति—एवं प्रत्यक्षं पञ्चविधं व्यवहारं प्रायश्चित्तदानादिरूपं 'सम्मं ववहरमाणे'त्ति संबध्यते, व्यवहरन् प्रवर्त्तयन्नित्यर्थः, कथं ?–'सम्मं'ति सम्यक्, तदेव कथम् ? इत्याह—'यदा २' यस्मिन् २ अवसरे 'यत्र २' प्रयोजने वा क्षेत्रे वा यो य उचितस्तं तमिति शेषः तदा २ काले तस्मिन् २ प्रयोजनादौ, कथम्भूतम् ? इत्याह—अनिश्रितैः–सर्वांशसारहितैरुपाश्रितः–अङ्गीकृतोऽनिश्रितोपाश्रितस्तम्, अथवा निश्रितश्च–शिष्यत्वादि प्रतिपन्नः उपाश्रितश्च–स एव वैयावृत्त्यकरत्वादिना प्रत्यासन्नतरस्तौ, अथवा निश्रितं–रागः उपाश्रितं च–द्वेषस्ते, अथवा निश्रितं च–आहारादिलिप्सा उपाश्रितं च—शिष्यप्रतीच्छककुलाद्यपेक्षा ते न स्तो यत्र तत्तथेति क्रियाविशेषणं, सर्वथा पक्षपातरहितत्वेन यथावदित्यर्थः, इह पूज्यव्याख्या—"रागो य होइ निस्सा उवस्सिओ दोससंजुत्तो ॥ अहवण आहाराई दाही मज्झं तु एस निस्सा उ । सीसो पडिच्छओ वा होइ उवस्सा कुलाईया ॥ १ ॥"इति [रागश्च भवति निश्रा उपाश्रितो भवति दोष-

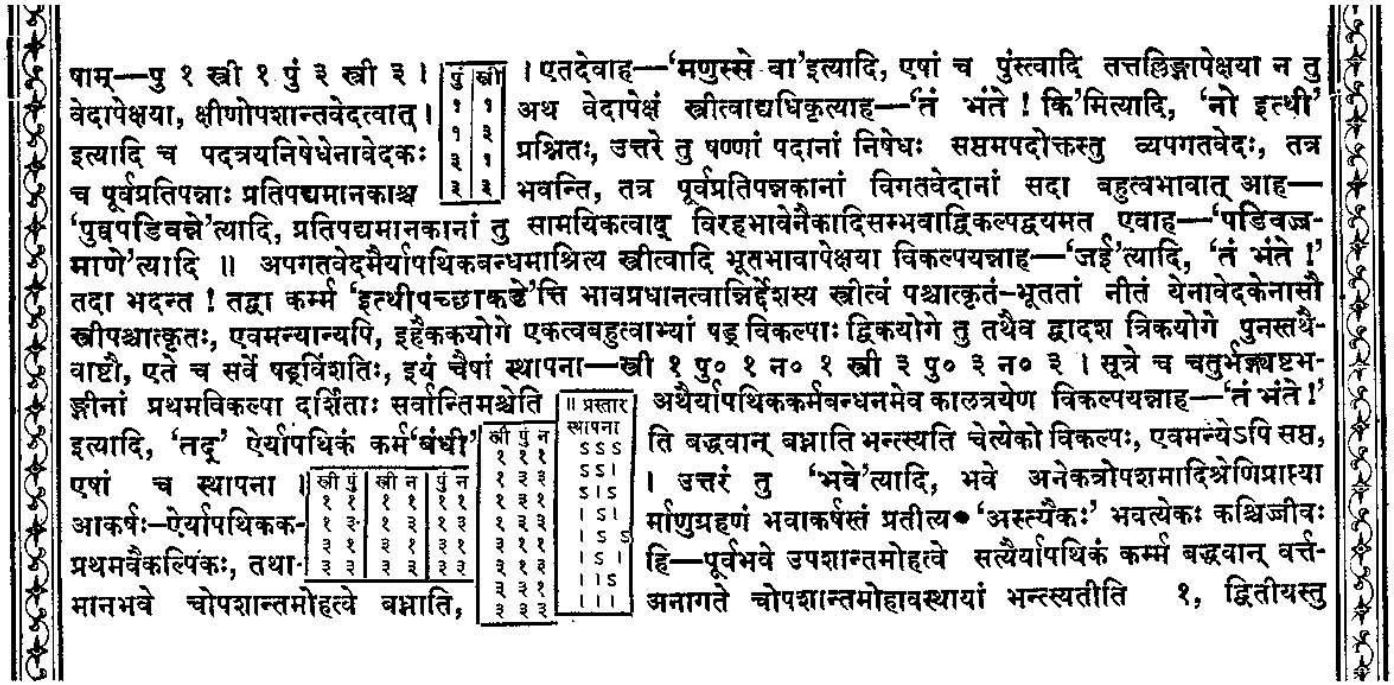
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आगम आदि पञ्चविध-आचाराः, बन्धः एवं बन्धस्य भेदाः

संयुक्तः ॥ अथवाऽऽहारादि मह्यं दास्यत्येवेति तु निश्रा। शिष्यः प्रतीच्छको वा भवत्युपश्रा कुलादिका ॥१॥] आज्ञाया–जिनोपदेशस्याराधको भवतीति, हन्त ! आहुरेवेति गुरुवचनं गम्यमिति, अन्ये तु 'से किमाहु भंते !' इत्याद्येवं व्याख्यान्ति–अथ किमाहुर्भदन्त ! आगमबलिकाः श्रमणा निर्ग्रन्थाः ! पञ्चविधव्यवहारस्य फलमिति शेषः, अत्रोत्तरमाह—'इच्चेय'मित्यादि ॥ आज्ञाराधकश्च कर्म्म क्षपयति शुभं वा तद् बध्नातीति बन्धं निरूपयन्नाह—'कई'त्यादि, 'बंधे'त्ति द्रव्यतो निगडादिबन्धो भावतः कर्मबन्धः, इह च प्रक्रमात् कर्मबन्धोऽधिकृतः 'ईरियावहियाबंधे य'त्ति ईर्या–गमनं तत्प्रधानः पन्था–मार्ग ईर्यापथस्तत्र भवमैर्यापथिकं–केवलयोगप्रत्ययं कर्म्म तस्य यो बन्धः स तथा, स चैकस्य वेदनीयस्य, 'संपराइयबंधे य'त्ति संपरैति–संसारं पर्यटति एभिरिति सम्परायाः–कषायास्तेषु भवं साम्परायिकं कर्म तस्य यो बन्धः स साम्परायिकबन्धः कषायप्रत्यय इत्यर्थः, स चावीतरागगुणस्थानकेषु सर्वेष्विति । 'नो नेरइओ'इत्यादि, मनुष्यस्यैव तद्बन्धो, यस्मादुपशान्तमोहक्षीणमोहसयोगकेवलिनामेव तद्बन्धनमिति, 'पुव्वपडिवन्नए'इत्यादि, पूर्वं–प्राक्काले प्रतिपन्नमैर्यापथिकबन्धकत्वं यैस्ते पूर्वप्रतिपन्नकास्तान्, तद्बन्धकत्वद्वितीयादिसमयवर्त्तिन इत्यर्थः, ते च सदैव बहवः पुरुषाः स्त्रियश्च सन्ति उभयेषां केवलिनां सदैव भावादत उक्तं 'मणुस्सा य मणुस्सीओ य बंधंति'त्ति, 'पडिवज्जमाणए'त्ति प्रतिपद्यमानकान् ऐर्यापथिककर्म्मबन्धनप्रथमसमयवर्त्तिन इत्यर्थः, एषां च विरहसम्भवाद् एकदा मनुष्यस्य स्त्रियाश्चैकैकयोगे एकत्वबहुत्वाभ्यां चत्वारो विकल्पाः, द्विकसंयोगे तथैव चत्वारः, एवमेते सर्वेऽप्यष्टौ, स्थापना चेयमे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आगम आदि पञ्चविध-आचाराः, बन्धः एवं बन्धस्य भेदाः



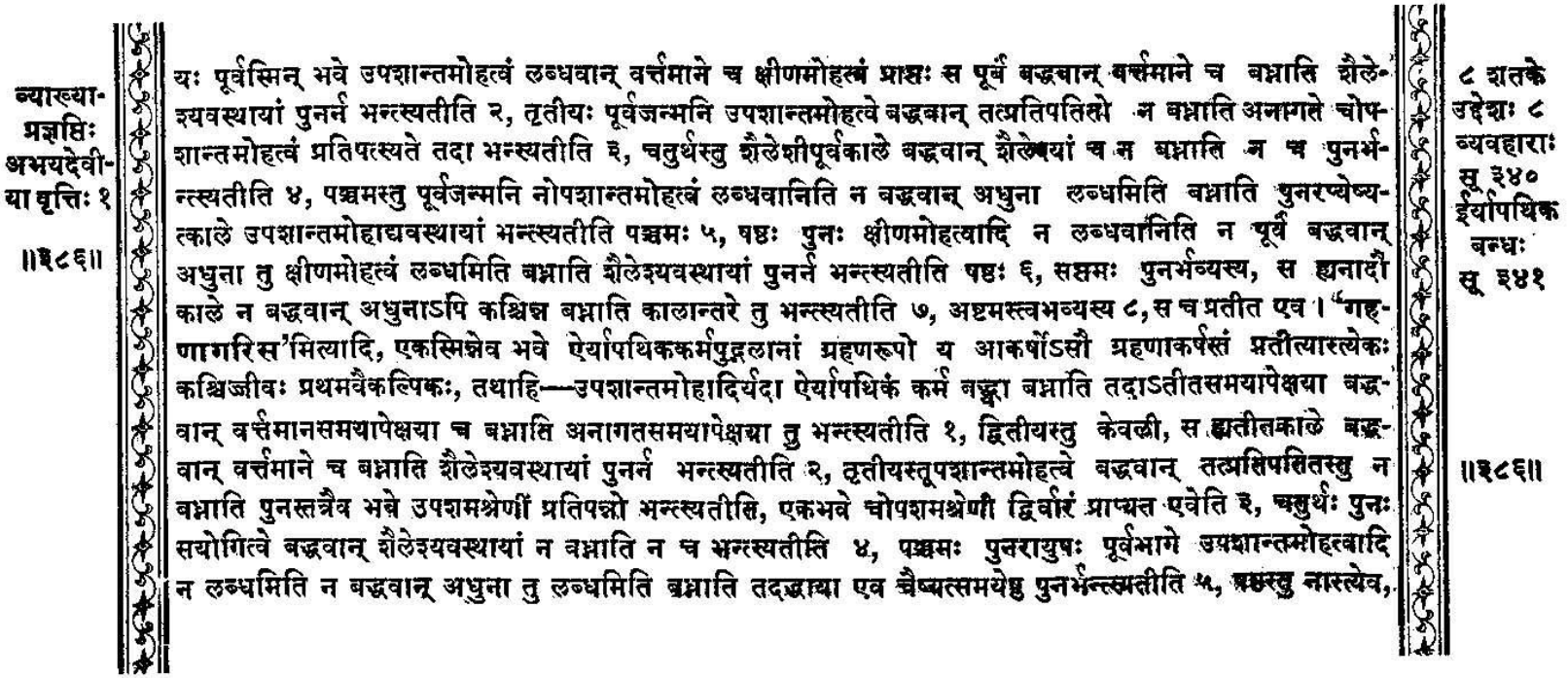
षाम्—पु १ स्त्री १ पुं ३ स्त्री ३ । वेदापेक्षया, क्षीणोपशान्तवेदत्वात् । इत्यादि च पदत्रयनिषेधेनावेदकः च पूर्वप्रतिपन्नाः प्रतिपद्यमानकाश्च भवन्ति, तत्र पूर्वप्रतिपन्नकानां विगतवेदानां सदा बहुत्वभावात् आह— 'पुव्वपडिवन्ने'त्यादि, प्रतिपद्यमानकानां तु सामयिकत्वाद् विरहभावेनैकादिसम्भवाद्विकल्पद्वयमत एवाह—'पडिवज्ज-माणे'त्यादि ॥ अपगतवेदमैर्यापथिकबन्धमाश्रित्य स्त्रीत्वादि भूतभावापेक्षया विकल्पयन्नाह—'जई'त्यादि, 'तं भंते !' तदा भदन्त ! तद्वा कर्म्म 'इत्थीपच्छाकडे'त्ति भावप्रधानत्वान्निर्देशस्य स्त्रीत्वं पश्चात्कृतं-भूततां नीतं येनावेदकेनासौ स्त्रीपश्चात्कृतः, एवमन्यान्यपि, इहैककयोगे एकत्वबहुत्वाभ्यां षड् विकल्पाः द्विकयोगे तु तथैव द्वादश त्रिकयोगे पुनस्तथै-वाष्टौ, एते च सर्वे षड्विंशतिः, इयं चैषां स्थापना—स्त्री १ पु० १ न० १ स्त्री ३ पु० ३ न० ३ । सूत्रे च चतुर्भङ्ग्यष्टभ-ङ्गीनां प्रथमविकल्पा दर्शिताः सर्वान्तिमश्चेति इत्यादि, 'तद्' ऐर्यापथिकं कर्म 'बंधी' एषां च स्थापना ॥ आकर्षः—ऐर्यापथिकक-प्रथमवैकल्पिकः, तथा-मानभवे चोपशान्तमोहत्वे बध्नाति, । एतदेवाह—'मणुस्से वा'इत्यादि, एषां च पुंस्त्वादि तत्तल्लिङ्गापेक्षया न तु अथ वेदापेक्षं स्त्रीत्वाद्यधिकृत्याह—'तं भंते ! कि'मित्यादि, 'नो इत्थी' प्रश्नितः, उत्तरे तु षण्णां पदानां निषेधः सप्तमपदोक्तस्तु व्यपगतवेदः, तत्र भवन्ति, तत्र पूर्वप्रतिपन्नकानां विगतवेदानां सदा बहुत्वभावात् आह— अथैर्यापथिककर्मबन्धनमेव कालत्रयेण विकल्पयन्नाह—'तं भंते !' ति बद्धवान् बध्नाति भन्त्स्यति चेत्येको विकल्पः, एवमन्येऽपि सप्त, । उत्तरं तु 'भवे'त्यादि, भवे अनेकत्रोपशमादिश्रेणिप्राप्त्या र्माणुग्रहणं भवाकर्षस्तं प्रतीत्य• 'अस्त्यैकः' भवत्येकः कश्चिज्जीवः हि—पूर्वभवे उपशान्तमोहत्वे सत्यैर्यापथिकं कर्म्म बद्धवान् वर्त्त-अनागते चोपशान्तमोहावस्थायां भन्त्स्यतीति १, द्वितीयस्तु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	बन्ध: एवं बन्धस्य भेदा:

प्रत सूत्रांक [३४०--३४१]

दीप अनुक्रम [४१३-४१४]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३८६॥

यः पूर्वस्मिन् भवे उपशान्तमोहत्वं लब्धवान् वर्त्तमाने च क्षीणमोहत्वं प्राप्तः स पूर्वं बद्धवान् वर्त्तमाने च बध्नाति शैलेश्यवस्थायां पुनर्न भन्त्स्यतीति २, तृतीयः पूर्वजन्मनि उपशान्तमोहत्वे बद्धवान् तत्प्रतिपतितो न बध्नाति अनागते चोपशान्तमोहत्वं प्रतिपत्स्यते तदा भन्स्यतीति ३, चतुर्थस्तु शैलेशीपूर्वकाले बद्धवान् शैलेश्यां च न बध्नाति न च पुनर्भन्त्स्यतीति ४, पञ्चमस्तु पूर्वजन्मनि नोपशान्तमोहत्वं लब्धवानिति न बद्धवान् अधुना लब्धमिति बध्नाति पुनरप्येष्यत्काले उपशान्तमोहाद्यवस्थायां भन्त्स्यतीति पञ्चमः ५, षष्ठः पुनः क्षीणमोहत्वादि न लब्धवानिति न पूर्वं बद्धवान् अधुना तु क्षीणमोहत्वं लब्धमिति बध्नाति शैलेश्यवस्थायां पुनर्न भन्त्स्यतीति षष्ठः ६, सप्तमः पुनर्भव्यस्य, स ह्यनादौ काले न बद्धवान् अधुनाऽपि कश्चिन्न बध्नाति कालान्तरे तु भन्त्स्यतीति ७, अष्टमस्त्वभव्यस्य ८, स च प्रतीत एव। 'गहणागरिस'मित्यादि, एकस्मिन्नेव भवे ऐर्यापथिककर्मपुद्गलानां ग्रहणरूपो य आकर्षोऽसौ ग्रहणाकर्षस्तं प्रतीत्यास्त्येकः कश्चिज्जीवः प्रथमवैकल्पिकः, तथाहि—उपशान्तमोहादिर्यदा ऐर्यापथिकं कर्म बद्ध्वा बध्नाति तदाऽतीतसमयापेक्षया बद्धवान् वर्त्तमानसमयापेक्षया च बध्नाति अनागतसमयापेक्षया तु भन्त्स्यतीति १, द्वितीयस्तु केवली, स ह्यतीतकाले बद्धवान् वर्त्तमाने च बध्नाति शैलेश्यवस्थायां पुनर्न भन्त्स्यतीति २, तृतीयस्तूपशान्तमोहत्वे बद्धवान् तत्प्रतिपतितस्तु न बध्नाति पुनस्तत्रैव भवे उपशमश्रेणीं प्रतिपन्नो भन्त्स्यतीति, एकभवे चोपशमश्रेणी द्विर्वारं प्राप्यत एवेति ३, चतुर्थः पुनः सयोगित्वे बद्धवान् शैलेश्यवस्थायां न बध्नाति न च भन्त्स्यतीति ४, पञ्चमः पुनरायुषः पूर्वभागे उपशान्तमोहत्वादि न लब्धमिति न बद्धवान् अधुना तु लब्धमिति बध्नाति तदद्धाया एव चैष्यत्समयेषु पुनर्भन्त्स्यतीति ५, षष्ठस्तु नास्त्येव,

८ शतके उद्देशः ८ व्यवहाराः सू ३४० ईर्यापथिक बन्धः सू ३४१

॥३८६॥

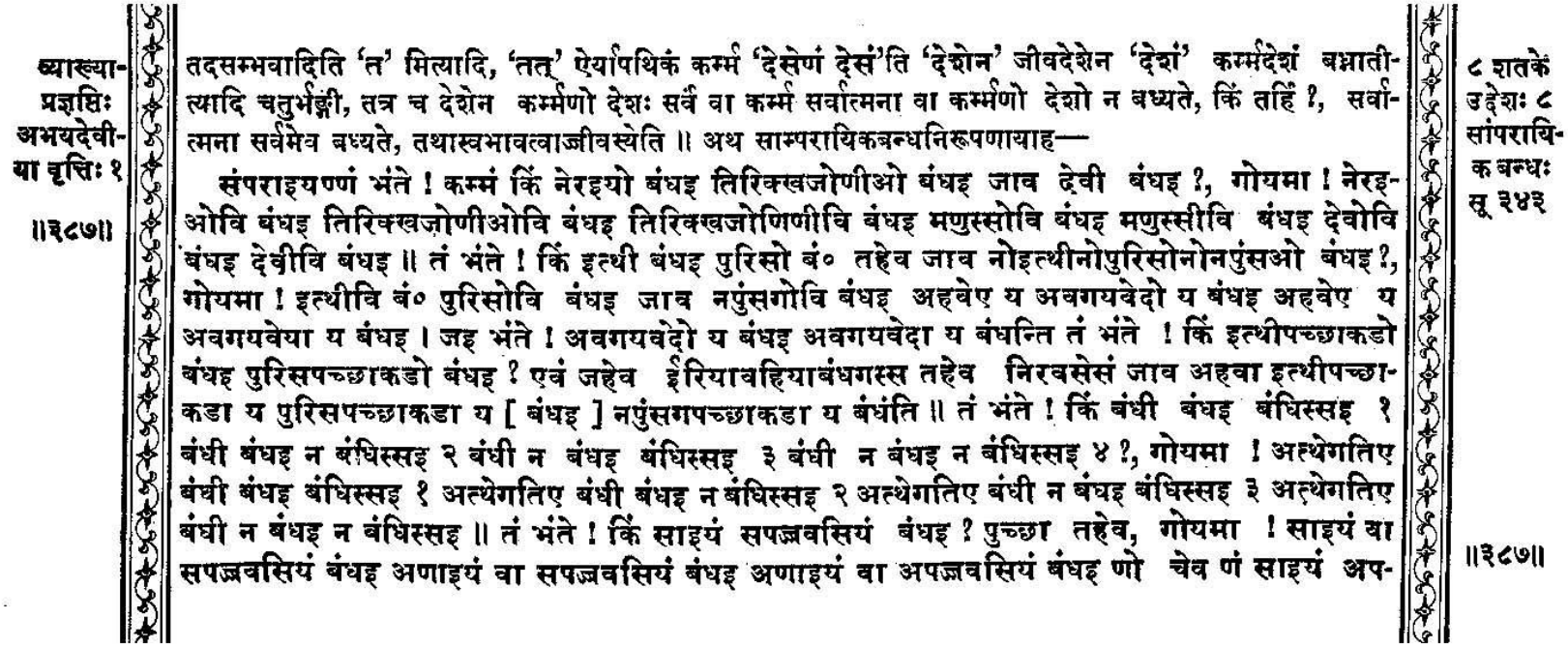
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बन्ध: एवं बन्धस्य भेदा:

तत्र बद्धवान् बध्नातीत्यनयोरुपपद्यमानत्वेऽपि न भन्त्स्यतीति इत्यस्यानुपपद्यमानत्वात्, तथाहि—आयुषः पूर्वभागे उपशान्तमोहत्वादि न लब्धमिति न बद्धवान् तल्लाभसमये च बध्नाति ततोऽनन्तरसमयेषु च भन्त्स्यत्येव न तु न भन्त्स्यति, समयमात्रस्य बन्धस्येहाभावात्, यस्तु मोहोपशमनिर्ग्रन्थस्य समयानन्तरमरणेनैर्यापथिककर्मबन्धः समयमात्रो भवति नासौ षष्ठविकल्पहेतुः, तदनन्तरैर्यापथिककर्म्मबन्धाभावस्य भवान्तरवर्त्तित्वाद्ग्रहणाकर्षस्य चेह प्रक्रान्तत्वात्, यदि पुनः सयोगिचरमसमये बध्नाति ततोऽनन्तरं न भन्त्स्यतीति विवक्ष्येत तदा यत्सयोगिचरमसमये बध्नातीति तद्बन्धपूर्वकमेव स्याज्ञाबन्धपूर्वकं, तत्पूर्वसमये तस्य बन्धकत्वात्, एवं च द्वितीय एव भङ्गः स्याज्ञ पुनः षष्ठ इति ६, सप्तमः पुनर्भव्यविशेषस्य ७, अष्टमस्त्वभव्यस्येति ८, इह च भवाकर्षापेक्षेष्वष्टसु भङ्गकेषु 'बंधी बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र प्रथमे भङ्गे उपशान्तमोहः, 'बंधी बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र द्वितीये क्षीणमोहः, 'बंधी न बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र तृतीये उपशान्तमोहः, 'बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र चतुर्थे शैलेशीगतः, 'न बंधी बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र पञ्चमे उपशान्तमोहः, 'न बंधी बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्र षष्ठे क्षीणमोहः, 'न बंधी न बंधइ बंधिस्सइ' इत्यत्र सप्तमे भव्यः, 'न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ' इत्यत्राष्टमेऽभव्यः, ग्रहणाकर्षापेक्षेषु पुनरेतेष्वेव प्रथमे उपशान्तमोहः क्षीणमोहो वा, द्वितीये तु केवली, तृतीये तूपशान्तमोहः, चतुर्थे शैलेशीगतः पञ्चमे उपशान्तमोहः क्षीणमोहो वा, षष्ठः शून्यः, सप्तमे भव्यो भाविमोहोपशमो भाविमोहक्षयो वा, अष्टमे त्वभव्य इति ॥ अथैर्यापथिकबन्धमेव निरूपयन्नाह—'त'मित्यादि, 'तत्' ऐर्यापथिकं कर्म्म 'साइयं सपज्जवसियं'मित्यादि चतुर्भङ्गी, तत्र चैर्यापथिककर्म्मणः प्रथम एव भङ्गे बन्धोऽन्येषु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बन्धः एवं बन्धस्य भेदाः



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३८७॥

तदसम्भवादिति 'त' मित्यादि, 'तत्' ऐर्यापथिकं कर्म्म 'देसेणं देसं'ति 'देशेन' जीवदेशेन 'देशं' कर्म्मदेशं बध्नाती-त्यादि चतुर्भङ्गी, तत्र च देशेन कर्म्मणो देशः सर्वं वा कर्म्म सर्वात्मना वा कर्म्मणो देशो न बध्यते, किं तर्हि ?, सर्वा-त्मना सर्वमेव बध्यते, तथास्वभावत्वाज्जीवस्येति ॥ अथ साम्परायिकबन्धनिरूपणायाह—

संपराइयण्णं भंते ! कम्मं किं नेरइयो बंधइ तिरिक्खजोणीओ बंधइ जाव देवी बंधइ ?, गोयमा ! नेरइ-ओवि बंधइ तिरिक्खजोणीओवि बंधइ तिरिक्खजोणिणीवि बंधइ मणुस्सोवि बंधइ मणुस्सीवि बंधइ देवोवि बंधइ देवीवि बंधइ ॥ तं भंते ! किं इत्थी बंधइ पुरिसो बं० तहेव जाव नोइत्थीनोपुरिसोनोनपुंसओ बंधइ ?, गोयमा ! इत्थीवि बं० पुरिसोवि बंधइ जाव नपुंसगोवि बंधइ अहवेए य अवगयवेदो य बंधइ अहवेए य अवगयवेया य बंधइ । जइ भंते ! अवगयवेदो य बंधइ अवगयवेदा य बंधन्ति तं भंते ! किं इत्थीपच्छाकडो बंधइ पुरिसपच्छाकडो बंधइ ? एवं जहेव ईरियावहियाबंधगस्स तहेव निरवसेसं जाव अहवा इत्थीपच्छा-कडा य पुरिसपच्छाकडा य [बंधइ] नपुंसगपच्छाकडा य बंधंति ॥ तं भंते ! किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २ बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३ बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४ ?, गोयमा ! अत्थेगतिए बंधी बंधइ बंधिस्सइ १ अत्थेगतिए बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २ अत्थेगतिए बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३ अत्थेगतिए बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ॥ तं भंते ! किं साइयं सपज्जवसियं बंधइ ? पुच्छा तहेव, गोयमा ! साइयं वा सपज्जवसियं बंधइ अणाइयं वा सपज्जवसियं बंधइ अणाइयं वा अपज्जवसियं बंधइ णो चेव णं साइयं अप-

८ शतकं उद्देशः ८ सांपरायि-क बन्धः सू ३४३

॥३८७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना जाता, सू.३४२ स्थाने सू.३४३ लिखितं

बन्ध: एवं बन्धस्य भेदा:

जवसियं बंधइ । तं भंते ! किं देसेणं देसं बंधइ एवं जहेव ईरियावहियाबंधगस्स जाव सव्वेणं सव्वं बंधइ (सूत्रं ३४२) ॥

'संपराइयं ण'मित्यादि, 'किं नेरइओ' इत्यादयः सप्त प्रश्नाः, उत्तराणि च सप्तैव, एतेषु च मनुष्यमनुषीवर्जाः पञ्च साम्परायिकबन्धका एव सकषायत्वात्, मनुष्यमनुष्यौ तु सकषायित्वे सति साम्परायिकं बध्नीतो न पुनरन्यदेति ॥ साम्परायिकबन्धमेव रुयाद्यपेक्षया निरूपयन्नाह—'तं भंते ! किं इत्थी'त्यादि, इह रुयादयो विवक्षितैकत्वबहुत्वाः षट् सर्वदा साम्परायिकं बध्नन्ति, अपगतवेदश्च कदाचिदेव, तस्य कादाचित्कत्वात्, ततश्च रुयादयः केवला बध्नन्ति अपगतवेदसहिताश्च, ततश्च यदाऽपगतवेदसहितास्तदोच्यते अथवैते रुयादयो बध्नन्ति अपगतवेदश्च, तस्यैकस्यापि सम्भवात्, अथवैते रुयादयो बध्नन्ति अपगतवेदाश्च, तेषां बहूनामपि सम्भवात्, अपगतवेदश्च साम्परायिकबन्धको वेदत्रये उपशान्ते क्षीणे वा यावद्यथाख्यातं न प्राप्नोति तावल्लभ्यत इति, इह च पूर्वप्रतिपन्नप्रतिपद्यमानकविवक्षा न कृता, द्वयोरप्येकत्वबहुत्वयोर्भावेन निर्विशेषत्वात्, तथाहि—अपगतवेदत्वे साम्परायिकबन्धोऽल्पकालीन एव, तत्र च योऽपगतवेदत्वं प्रतिपन्नपूर्वः साम्परायिकं बध्नात्यसावेकोऽनेको वा स्यात्, एवं प्रतिपद्यमानकोऽपीति ॥ अथ साम्परायिककर्मबन्धमेव कालत्रयेण विकल्पयन्नाह—'तं भंते ! किं'मित्यादि, इह च पूर्वोक्तेष्वष्टासु विकल्पेष्वाद्याश्चत्वार एव संभवन्ति नेतरे, जीवानां साम्परायिककर्मबन्धस्यानादित्वेन 'न बंधी'त्यस्यानुपपद्यमानत्वात्, तत्र प्रथमः सर्व एव संसारी यथाख्यातासंप्राप्तोपशमकक्षपकावसानः, स हि पूर्वं बद्धवान् वर्त्तमानकाले तु बध्नाति अनागतकालापेक्षया तु भन्त्स्यति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बन्धः एवं बन्धस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४२]

दीप अनुक्रम [४१५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥३८८॥

१, द्वितीयस्तु मोहक्षयात्पूर्वमतीतकालापेक्षया बद्धवान् वर्त्तमानकाले तु बध्नाति भाविमोहक्षयापेक्षया तु न भन्त्स्यति २, तृतीयः पुनरुपशान्तमोहत्वात् पूर्वं बद्धवान् उपशान्तमोहत्वे न बध्नाति तस्माच्युतः पुनर्भन्त्स्यतीति ३, चतुर्थस्तु मोहक्षयात्पूर्वं साम्परायिकं कर्म बद्धवान् मोहक्षये न बध्नाति न च भन्त्स्यतीति ॥ साम्परायिककर्मबन्धमेवाश्रित्याह— 'तं'मित्यादि, 'साइयं वा सपज्जवसियं बंधइ'त्ति उपशान्तमोहतायाश्च्युतः पुनरुपशान्तमोहतां क्षीणमोहतां वा प्रतिपत्स्यमानः, 'अणाइयं वा सपज्जवसियं बंधइ'त्ति आदितः क्षपकापेक्षमिदम्, 'अणाइयं वा अपज्जवसियं बंधइ'त्ति एतच्चाभव्यापेक्षं, 'नो चेव णं साइयं अपज्जवसियं बंधइ'त्ति, सादिसाम्परायिकबन्धो हि मोहोपशमाच्च्युतस्यैव भवति, तस्य चावश्यं मोक्षयायित्वात्साम्परायिकबन्धस्य व्यवच्छेदसम्भवः, ततश्च न सादिरपर्यवसानः साम्परायिकबन्धोऽस्तीति ॥ अनन्तरं कर्म्मवक्तव्यतोक्ता, अथ कर्म्मस्वेव यथायोगं परीषहावतारं निरूपयितुमिच्छुः कर्म्मप्रकृतीः परीषहांश्च तावदाह—

कइ णं भंते ! कम्मपयडीओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मपयडीओ पन्नत्ताओ, तंजहा—नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं ॥ कइ णं भंते ! परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! बावीसं परीसहा पन्नत्ता, तंजहा—दिगिंछापरीसहे पिवासापरीसहे जाव दंसणपरीसहे । एए णं भंते ! बावीसं परीसहा कतिसु कम्मपगडीसु समोयरंति ?, गोयमा ! चउसु कम्मपयडीसु समोयरंति, तंजहा—नाणावरणिज्जे वेयणिज्जे मोहणिज्जे अंतराइए । नाणावरणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?, गोयमा ! दो परीसहा समोयरंति, तंजहा—

८ शतके उद्देशः ८ परीषहाणां कर्मण्यवतारः सू ३४३

॥३८८॥

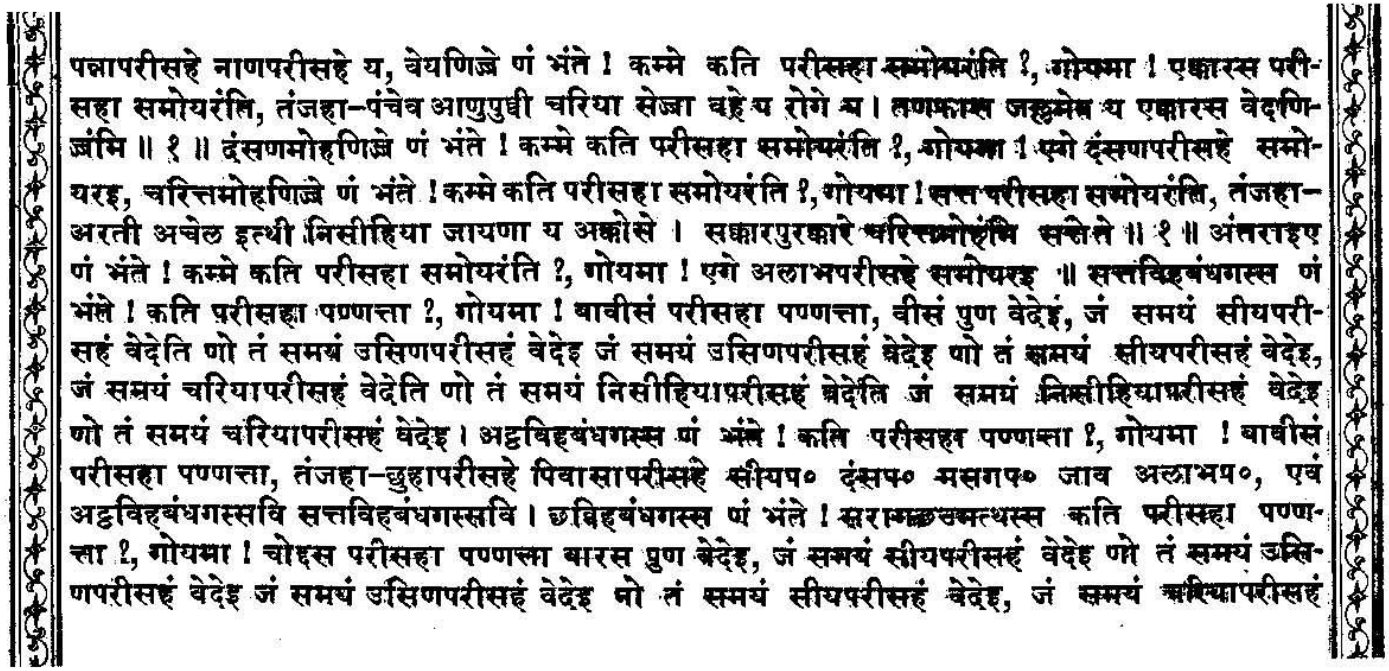
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बन्ध: एवं बन्धस्य भेदा:,

कर्म-प्रकृत्ति:, कर्मन: भेदा:

प्रत सूत्रांक [३४३] + गाथा:

दीप अनुक्रम [४१६--४२०]



पन्नापरीसहे नाणपरीसहे य, वेयणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?, गोयमा ! एक्कारस परीसहा समोयरंति, तंजहा–पंचेव आणुपुवी चरिया सेज्जा वहे य रोगे य । तणफास जल्लमेव य एक्कारस वेदणिज्जंमि ॥ १ ॥ दंसणमोहणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?, गोयमा ! एगे दंसणपरीसहे समोयरइ, चरित्तमोहणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?, गोयमा ! सत्त परीसहा समोयरंति, तंजहा– अरती अचेल इत्थी निसीहिया जायणा य अक्कोसे । सक्कारपुरक्कारे चरित्तमोहंमि सत्तेते ॥ २ ॥ अंतराइए णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?, गोयमा ! एगे अलाभपरीसहे समोयरइ ॥ सत्तविहबंधगस्स णं भंते ! कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! बावीसं परीसहा पण्णत्ता, वीसं पुण वेदेइ, जं समयं सीयपरीसहं वेदेति णो तं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ जं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ णो तं समयं सीयपरीसहं वेदेइ, जं समयं चरियापरीसहं वेदेति णो तं समयं निसीहियापरीसहं वेदेति जं समयं निसीहियापरीसहं वेदेइ णो तं समयं चरियापरीसहं वेदेइ । अट्ठविहबंधगस्स णं भंते ! कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! बावीसं परीसहा पण्णत्ता, तंजहा–छुहापरीसहे पिवासापरीसहे सीयप० दंसप० मसगप० जाव अलाभप०, एवं अट्ठविहबंधगस्सवि सत्तविहबंधगस्सवि । छव्विहबंधगस्स णं भंते ! छउमत्थवीयरागस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चोद्दस परीसहा पण्णत्ता बारस पुण वेदेइ, जं समयं सीयपरीसहं वेदेइ णो तं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ जं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ णो तं समयं सीयपरीसहं वेदेइ, जं समयं चरियापरीसहं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृत्तिः, कर्मनः भेदाः, परिषहाः

प्रत सूत्रांक [३४३] + गाथा: दीप अनुक्रम [४१६--४२०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३८९॥

वेदेति णो तं समयं सेज्जापरीसहं वेदेइ जं समयं सेज्जापरीसहं वेदेति णो तं समयं चरियापरीसहं वेदेइ। एक्कविहबंधगस्स णं भंते ! वीयरागछउमत्थस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! एवं चेव जहेव छविहबंधगस्स णं। एगविहबंधगस्स णं भंते ! सजोगिभवत्थकेवलिस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! एक्कारस परीसहा पण्णत्ता, नव पुण वेदेइ, सेसं जहा छविहबंधगस्स। अबंधगस्स णं भंते ! अजोगिभवत्थकेवलिस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! एक्कारस परीसहा पण्णत्ता, नव पुण वेदेइ, जं समयं सीयपरीसहं वेदेति नो तं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ जं समयं उसिणपरीसहं वेदेति नो तं समयं सीयपरीसहं वेदेइ, जं समयं चरियापरीसहं वेदेइ नो तं समयं सेज्जापरीसहं वेदेति जं समयं सेज्जापरीसहं वेदेइ नो तं समयं चरियापरीसहं वेदेइ (सूत्रं ३४३) ॥

'कति ण'मित्यादि, 'परीसह'त्ति परीति–समन्तात् स्वहेतुभिरुदीरिता मार्गाच्यवननिर्जरार्थं साध्वादिभिः सह्यन्त इति परीषहास्ते च द्वाविंशतिरिति 'दिगिंछ'त्ति बुभुक्षा सैव परीषहः–तपोऽर्थमनेषणीयभक्तपरिहारार्थं वा मुमुक्षुणा परिषह्यमाणत्वात् दिगिंछापरीसहेत्ति, एवं पिपासापरीसहोऽपि, यावच्छब्दलब्धं सव्याख्यानमेवं दृश्यं–'सीयपरीसहे उसिणपरीसहे' शीतोष्णे परीषहौ आतापनार्थं शीतोष्णबाधायामप्यग्निसेवास्नानाद्यकृत्यपरिवर्जनार्थं वा मुमुक्षुणा तयोः परिषह्यमाणत्वात्, एवमुत्तरत्रापि, 'दंसमसगपरीसहे' दंशा मशकाश्च—चतुरिन्द्रियविशेषाः, उपलक्षणत्वाच्चैषां यूकामत्कुणमक्षिकादिपरिग्रहः, परीषहता चैतेषां देहव्यथामुत्पादयत्स्वपि तेष्वनिवारणभयद्वेषाभावतः

८ शतके उद्देशः ८ परीषहाणां कर्मण्यवतारः सू ३४३

॥३८९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृत्तिः, कर्मनः भेदाः, परिषहाः

प्रत सूत्रांक [३४३] + गाथा: दीप अनुक्रम [४१६--४२०]

'अचेलपरीसहे' चेलानां–वाससामभावोऽचेलं तच्च परीषहोऽचेलतायां जीर्णापूर्णमलिनादिचेलत्वे च लज्जादैन्याकाङ्क्षाद्य-करणेन परिषह्यमाणत्वादिति, 'अरइपरीसहे' अरतिः–मोहनीयजो मनोविकारः सा च परीषहस्तन्निषेधनेन सहनादिति 'इत्थियापरीसहे' स्त्रियाः परीषहः २ तत् परीषहणं च तन्निरपेक्षत्वं ब्रह्मचर्यमित्यर्थः 'चरियापरीसहे' चर्या–ग्रामनगरा-दिषु संचरणं तत्परिषहणं चाप्रतिबद्धतया तत्करणं 'निसीहियापरीसहे' नैषेधिकी–स्वाध्यायभूमिः शून्यागारादि-रूपा तत्परिषहणं च तत्रोपसर्गेष्वत्रासः 'सेज्जापरीसहे' शय्या–वसतिस्तत्परिषहणं च तज्जन्यदुःखादेरुपेक्षा 'अक्कोसप-रीसहे' आक्रोशो–दुर्वचनं 'वहपरीसहे' व्यधो वधो वा–यष्ट्यादिताडनं तत्परीषहणं च क्षान्त्यवलम्बनं 'जायणापरी-सहे' याच्ञा–भिक्षणं तत्परिषहणं च तत्र मानवर्जनम् 'अलाभपरीसहे' अलाभः–प्रतीतस्तत्परिषहणं च तत्र दैन्याभावः 'रोगपरीसहे' रोगो–रुक् तत्परिषहणं च–तत्पीडासहनं चिकित्सावर्जनं च 'तणफासपरीसहे' तृणस्पर्शः–कुशादिस्पर्श-स्तत्परिषहणं च कादाचित्कतृणग्रहणे तत्संस्पर्शजन्यदुःखाधिसहनं 'जल्लपरीसहे' जल्लो–मलस्तत्परिषहणं च देशतः सर्वतो वा स्नानोद्वर्त्तनादिवर्जनं 'सक्कारपुरक्कारपरीसहे' सत्कारो–वस्त्रादिपूजा पुरस्कारो–राजादिकृताभ्युत्थानादिस्त-त्परिषहणं च तत्सद्भावे आत्मोत्कर्षवर्जनं तदभावे दैन्यवर्जनं तदनाकाङ्क्षा चेति 'पण्णापरीसहे' प्रज्ञा–मतिज्ञानवि-शेषस्तत्परिषहणं च प्रज्ञाया अभावे उद्वेगाकरणं तद्भावे च मदाकरणं 'नाणपरीसहे' ज्ञानं–मत्यादि तत्परिषहणं च तस्य विशिष्टस्य सद्भावे मदवर्जनमभावे च दैन्यपरिवर्जनं, ग्रन्थान्तरे त्वज्ञानपरीषह इति पठ्यते, 'दंसणपरीसहे' दर्शनं–तत्त्वश्रद्धानं तत्परिषहणं च जिनानां जिनोक्तसूक्ष्मभावानां चाश्रद्धानवर्जनमिति। 'कइसु कम्मपयडीसु समो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृत्तिः, कर्मनः भेदाः, परिषहाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३४३] + गाथा: दीप अनुक्रम [४१६--४२०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-यावृत्तिः १ ॥३९०॥

यरंति'त्ति कतिषु कर्म्मप्रकृतिषु विषये परीषहाः समवतारं व्रजन्तीत्यर्थः 'पण्णापरीसहे'इत्यादि प्रज्ञापरीषहो ज्ञानावरणे-मतिज्ञानावरणरूपे समवतरति, प्रज्ञाया अभावमाश्रित्य, तदभावस्य ज्ञानावरणोदयसम्भवत्वात्, यत्तु तदभावे दैन्यमपि वर्जनं तत्सद्भावे च मानवर्जनं तच्चारित्रमोहनीयक्षयोपशमादेरिति, एवं ज्ञानपरीषहोऽपि नवरं मत्यादिज्ञानावरणेऽवतरति, 'पंचे'-त्यादिगाथा, 'पंचेव आणुपुवी'ति क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकपरीषहा इत्यर्थः, एतेषु च पीडैव वेदनीयोत्था तदधिसहनं तु चारित्रमोहनीयक्षयोपशमादिसम्भवं, अधिसहनस्य चारित्ररूपत्वादिति ॥ 'एगे दंसणपरीसहे समोयरति'त्ति यतो दर्शनं तत्त्वश्रद्धानरूपं दर्शनमोहनीयस्य क्षयोपशमादौ भवति उदये तु न भवतीत्यतस्तत्र दर्शनपरीषहः समवतरतीति, 'अरई'त्यादि गाथा, तत्र चारतिपरीषहोऽरतिमोहनीये तज्जन्यत्वात्, अचेलपरीषहो जुगुप्सामोहनीये लज्जापेक्षया, स्त्रीपरीषहः पुरुषवेदमोहे स्त्र्यपेक्षया तु पुरुषपरीषहः स्त्रीवेदमोहे, तत्त्वतः स्त्र्याद्यभिलाषरूपत्वात्तस्य, नैषेधिकीपरीषहो भयमोहे उपसर्गभयापेक्षया, याच्ञापरीषहो मानमोहे तदुष्करत्वापेक्षया, आक्रोशपरीषहः क्रोधमोहे क्रोधोत्पत्त्यपेक्षया, सत्कारपुरस्कारपरीषहो मानमोहे मदोत्पत्त्यपेक्षया समवतरति, सामान्यतस्तु सर्वेऽप्येते चारित्रमोहनीये समवतरन्तीति॥ 'एगे अलाभपरीसहे समोयरति'त्ति अलाभपरीषह एवान्तराये समवतरति, अन्तरायं चेह लाभान्तरार्थं, तदुदय एव लाभाभावात्, तदधिसहनं च चारित्रमोहनीयक्षयोपशम इति ॥ अथ बन्धस्थानान्याश्रित्य परीषहान् विचारयन्नाह— 'सत्तविहे'त्यादि, सप्तविधबन्धकः—आयुर्वर्जशेषकर्म्मबन्धकः 'जं समयं सीयपरीसहं'मित्यादि, यत्र समये शीतपरी-षहं वेदयते न तत्रोष्णपरीसहं, शीतोष्णयोः परस्परमत्यन्तविरोधेनैकदैकत्रासम्भवात्, अथ यद्यपि शीतोष्णयोरेकदैक-

८ शतके उद्देशः ८ परीषहाणां कर्मण्यवतारः सू ३४३

॥३९०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृत्तिः, कर्मनः भेदाः, परिषहाः

प्रत सूत्रांक [३४३] + गाथा: दीप अनुक्रम [४१६--४२०]

त्रासम्भवस्तथाऽप्यात्यन्तिके शीते तथाविधाग्निसन्निधौ युगपदेवैकस्य पुंस एकस्यां दिशि शीतमन्यस्यां चोष्णमित्येवं द्वयोरपि शीतोष्णपरीषहयोरस्ति सम्भवः, नैतदेवं, कालकृतशीतोष्णाश्रयत्वादधिकृतसूत्रस्यैवंविधव्यतिकरस्य वा प्रायेण तपस्विनामभावादिति । तथा 'जं समयं चरियापरीसहं'मित्यादि तत्र चर्या–ग्रामादिषु संचरणं नैषेधिकी च–ग्रामादिषु प्रतिपन्नमासकल्पादेः स्वाध्यायादिनिमित्तं शय्यातो विविक्ततरोपाश्रये गत्वा निषदनम्, एवं चानयोर्विहारावस्थानरूपत्वेन परस्परविरोधान्नैकदा सम्भवः, अथ नैषेधिकीवच्छय्याऽपि चर्यया सह विरुद्धेति न तयोरेकदा सम्भवस्तैश्चकोनविंशतेरेव परीषहाणामुत्कर्षेणैकदा वेदनं प्राप्तमिति, नैवं, यतो ग्रामादिगमनप्रवृत्तौ यदा कश्चिदौत्सुक्यादनिवृत्ततत्परिणाम एव विश्रामभोजनाद्यर्थमित्वरशय्यायां वर्त्तते तदोभयमप्यविरुद्धमेव, तत्त्वतश्चर्याया असमाप्तत्वाद् आश्रयस्य चाश्रयणादिति, यद्येवं तर्हि कथं षड्विधबन्धकमाश्रित्य वक्ष्यति—'जं समयं चरियापरीसहं वेएति नो तं समयं सेज्जापरीसहं वेएइ'इत्यादीति ?, अत्रोच्यते, षड्विधबन्धको मोहनीयस्याविद्यमानकल्पत्वात् सर्वत्रौत्सुक्याभावेन शय्याकाले शय्यायामेव वर्त्तते न तु बादररागवदौत्सुक्येन विहारपरिणामाविच्छेदाच्चर्यायामपि, अतस्तदपेक्षया तयोः परस्परविरोधाद्युगपदसम्भवः, ततश्च साध्वेव 'जं समयं चरिए'त्यादीति । 'छविहबंधे'त्यादि, षड्विधबन्धकस्यायुर्मोहवर्जानां बन्धकस्य

१ अत एव ऋजुसूत्रादीनां संयतानामेव परीषहा इति कथने अविरतदेशविरतानां परीषहा इति पक्षरूपाभ्यां नैगमव्यवहाराभ्यां विशिष्टता, क्रमेणोपयोगे सहजसमाधानमिदं, तथापि विंशतिपरीषहयौगपद्यप्रतिपादकसूत्रविरोधात् न तत्कल्पना, भवतु वान्येषां परस्परविरुद्धानां समुदित उपयोगो नानयोर्द्वयोः परस्परं विरुद्धयोः, वेदनाद्वयस्य यौगपद्याभावात् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृत्तिः, कर्मनः भेदाः, परिषहाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३४३] + गाथा: दीप अनुक्रम [४१६--४२०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१ ॥३९१॥

सूक्ष्मसम्परायस्येत्यर्थः, एतदेवाह—'सरागछउमत्थस्से'त्यादि, सूक्ष्मलोभाणूनां वेदनात्सरागोऽनुत्पन्नकेवलत्वाच्छद्म-स्थस्ततः कर्म्मधारयोऽतस्तस्य 'चोद्दस परीसह'त्ति अष्टानां मोहनीयसम्भवानां तस्य मोहाभावेनाभावाद्द्वाविंशतेः शेषा-श्चतुर्दश परीषहा इति, ननु सूक्ष्मसम्परायस्य चतुर्दशानामेवाभिधानान्मोहनीयसम्भवानामष्टानामसम्भव इत्युक्तं, ततश्च सामर्थ्यादनिवृत्तिबादरसंपरायस्य मोहनीयसम्भवानामष्टानामपि सम्भवः प्राप्तः, कथं चैतद् युज्यते ?, यतो दर्शनसप्त-कोपशमे बादरकषायस्य दर्शनमोहनीयोदयाभावेन दर्शनपरीषहाभावात्सप्तानामेव सम्भवो नाष्टानां, अथ दर्शनमोहनीयस्य-त्तापेक्षयाऽसावपीष्यत इत्यष्टावेव तर्हि उपशमकत्वे सूक्ष्मसम्परायस्यापि मोहनीयसत्तासद्भावात्कथं तदुत्थाः सर्वेऽपि परी-षहा न भवन्ति ? इति, न्यायस्य समानत्वादिति, अत्रोच्यते, यस्माद्दर्शनसप्तकोपशमस्योपर्येव नपुंसकवेदाद्युपशमकाले-ऽनिवृत्तिबादरसम्परायो भवति, स चावश्यकादिव्यतिरिक्तग्रन्थान्तरमतेन दर्शनत्रयस्य बृहति भागे उपशान्ते शेषे चानु-पशान्त एव स्यात्, नपुंसकवेदं चासौ तेन सहोपशमयितुमुपक्रमते, ततश्च नपुंसकवेदोपशमावसरेऽनिवृत्तिबादरसम्परा-यस्य सतो दर्शनमोहस्य प्रदेशत उदयोऽस्ति न तु सत्तैव, ततस्तत्प्रत्ययो दर्शनपरीषहस्तस्यास्तीति, ततश्चाष्टावपि भव-न्तीति, सूक्ष्मसम्परायस्य तु मोहसत्तायामपि न परीषहहेतुभूतः सूक्ष्मोऽपि मोहनीयोदयोऽस्तीति न मोहजन्यपरीषहस-म्भवः, आह च—"मोहनिमित्ता अट्ठवि बायररागे परीसहा किह णु ?। किह वा सुहुमसरागे न होंति उवसामए सबे ? ॥ १ ॥ आचार्य आह—सत्तगपरओ खिय जेण बायरो जं च सावसेसंमि। मग्गिल्लंमि पुरिल्ले लग्गइ तो दंसणस्सावि ॥२॥ लब्भइ पएसकम्मं पडुच्च सुहुमोदओ तओ अट्ठ। तस्स भणिया न सुहुमे न तस्स सुहुमोदओऽवि जओ ॥ ३ ॥'

८ शतके उद्देशः८ परीषहाः सू ३४३

॥३९१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृत्तिः, कर्मनः भेदाः, परिषहाः

प्रत सूत्रांक [३४३] + गाथा: दीप अनुक्रम [४१६--४२०]

[बादरसम्परावे मोहनिमित्ता अष्टौ परीषहाः कथं ? कथं वा सूक्ष्मसम्पराये औपशमिके च सर्वे न भवन्ति ? ॥ १ ॥ दर्शनसप्तकपरत एव बादरो येन यस्माच्च सावशेषे पाश्चात्येऽग्रे लगति ततो दर्शनस्यापि ॥ २ ॥ लभ्यते प्रदेशकर्म प्रतीत्य सूक्ष्मोदयस्ततोऽष्टौ तस्य भणिताः, न सूक्ष्मे, न तस्य सूक्ष्मोदयोऽपि यतः ॥ ३ ॥] यच्च सूक्ष्मसम्परायस्य सूक्ष्मलोभकिट्टिकानामुदयो नासौ परीषहहेतुर्लोभहेतुकस्य परीषहस्यानभिधानात्, यदि च कोऽपि कथञ्चिदसौ स्यात्तदा तस्येहात्यन्ताल्पत्वेनाविवक्षेति । 'एगविहबंधगस्स'त्ति वेदनीयबन्धकस्येत्यर्थः, कस्य तस्य ? इत्यत आह—'वीयरागछउमत्थस्स'त्ति उपशान्तमोहस्य क्षीणमोहस्य चेत्यर्थः 'एवं चेवे'त्यादि चतुर्दश प्रज्ञप्ता द्वादश पुनर्वेदयतीत्यर्थः, शीतोष्णयोश्चर्याशय्ययोश्च पर्यायेण वेदनादिति ॥ अनन्तरं परीषहा उक्तास्तेषु चोष्णपरीषहस्तद्धेतवश्च सूर्या इत्यतः सूर्यवक्तव्यतायां निरूपयन्नाह—

जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति मज्झंतियमुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति ?, हंता गोयमा ! जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य तं चेव जाव अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति । जंबूद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि मज्झंसि य मुहुत्तंसि य अत्थमणमुहुत्तंसि य सवत्थ समा उच्चत्तेणं ?, हंता गोयमा ! जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमण जाव उच्चत्तेणं । जइ णं भंते ! जंबुद्दीवे २ सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि य मज्झंतिय० अत्थमणमुहुत्तंसि मूले जाव उच्चत्तेणं से केणं खाइ अट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्ग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृत्तिः, कर्मनः भेदाः, परिषहाः

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३९२॥

मणंमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति जाव अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति ?, गोयमा ! [ग्रन्थाग्रं ५०००] लेसापडिघाएणं उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति लेसाभितावेणं मज्झंतियमुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति लेस्सापडिघाएणं अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–जंबुदीवे णं दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसन्ति जाव अत्थमण जाव दीसंति । जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं गच्छंति पडुप्पन्नं खेत्तं गच्छंति अणागयं खेत्तं गच्छंति ?, गोयमा ! णो तीयं खेत्तं गच्छंति पडुप्पन्नं खेत्तं गच्छंति णो अणागयं खेत्तं गच्छंति, जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं ओभासंति पडुप्पन्नं खेत्तं ओभासंति अणागयं खेत्तं ओभासंति ?, गोयमा ! नो तीयं खेत्तं ओभासंति पडुप्पन्नं खेत्तं ओभासंति नो अणागयं खेत्तं ओभासंति, तं भंते ! किं पुट्ठं ओभासंति अपुट्ठं ओभासंति ?, गोयमा ! पुट्ठं ओभासंति नो अपुट्ठं ओभासंति जाव नियमा छद्दिसिं । जंबूद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं उज्जोवेंति एवं चेव जाव नियमा छद्दिसिं, एवं तवेंति एवं भासंति जाव नियमा छद्दिसिं ॥ जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरियाणं किं तीए खेत्ते किरिया कज्जइ पडुप्पन्ने खेत्ते किरिया कज्जइ अणागए खेत्ते किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! नो तीए खेत्ते किरिया कज्जइ पडुप्पन्ने खेत्ते किरिया कज्जइ णो अणागए खेत्ते किरिया कज्जइ, सा भंते ! किं पुट्ठा कज्जति अपुट्ठा कज्जइ ?, गोयमा ! पुट्ठा कज्जइ नो अपुट्ठा कज्जति जाव नियमा छद्दिसिं। जंबुदीवे णं भंते ! दीवे सूरिया केवतियं खेत्तं उद्धं तवंति केवतियं खेत्तं

८ शतके उद्देशः ८ सूर्योदयादि दर्शनं सू ३४४

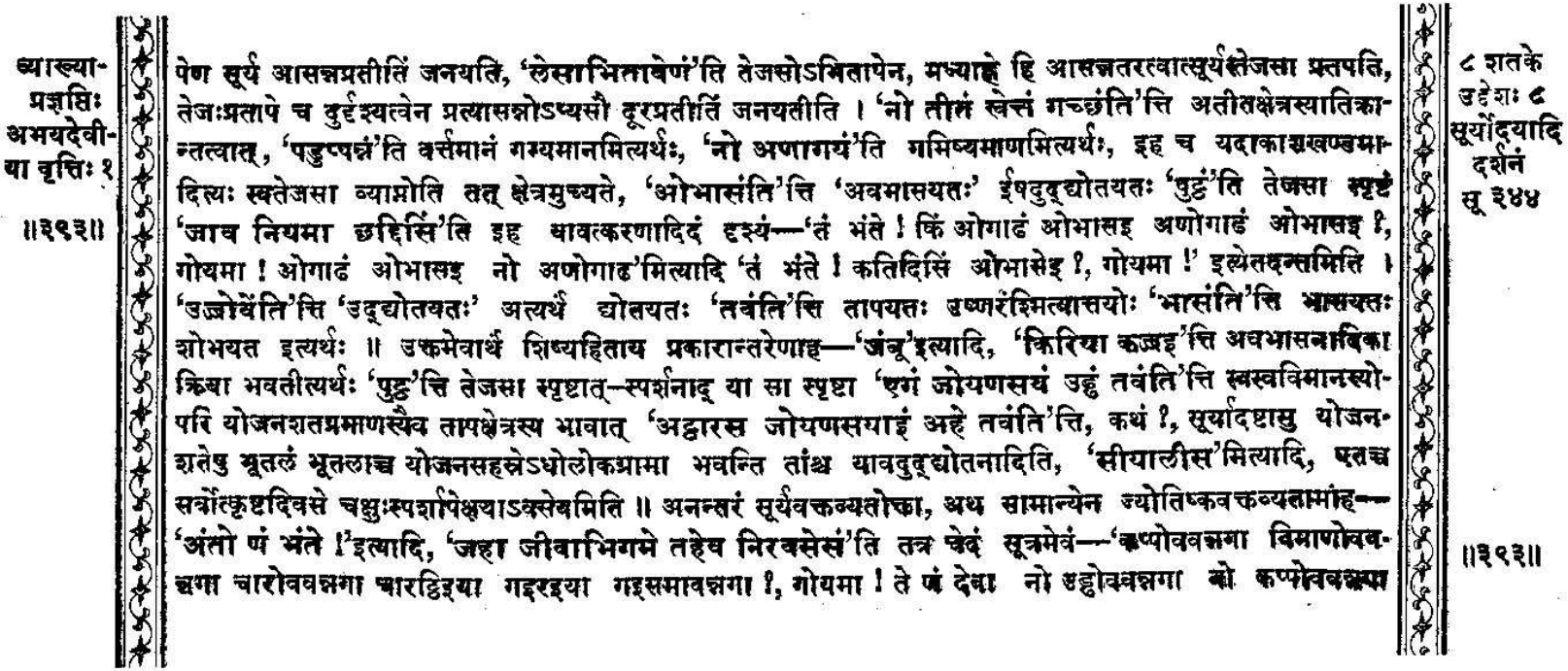
॥३९२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहे तवंति केवतियं खेत्तं तिरियं तवंति ?, गोयमा ! एगं जोयणसयं उहुं तवंति अट्ठारस जोयणसयाइं अहे तवंति सीयालीसं जोयणसहस्साइं दोन्नि तेवट्ठे जोयणसए एक्कवीसं च सट्ठियाए जोयणस्स तिरियं तवंति ॥ अंतो णं भंते ! माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जे चंदिमसूरियगहगणणक्खत्ततारारूवा ते णं भंते ! देवा किं उड्ढोववन्नगा जहा जीवाभिगमे तहेव निरवसेसं जाव उक्कोसेणं छम्मासा । बहिया णं भंते ! माणुसुत्तरस्स जहा जीवाभिगमे जाव इंदट्ठाणे णं भंते ! केवतियं कालं उववाएणं विरहिए पन्नत्ते ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं छम्मासा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! ॥ सूत्रं ३४४॥ अट्ठमसए अट्ठमो उद्देसो समत्तो ॥

'जंबुदीवे'इत्यादि, 'दूरे य मूले य दीसंति'त्ति 'दूरे च' द्रष्टृस्थानापेक्षया व्यवहिते देशे 'मूले च' आसन्ने द्रष्टृप्रतीत्यपेक्षया सूर्यौ दृश्येते, द्रष्टा हि स्वरूपतो बहुभिर्योजनसहस्रैर्व्यवहितमुद्गमास्तमययोः सूर्यं पश्यति, आसन्नं पुनर्मन्यते, सद्भूतं तु विप्रकर्षं सन्तमपि न प्रतिपद्यत इति। 'मज्झंतियमुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति'त्ति मध्यो–मध्यमोऽन्तो–विभागो गगनस्य दिवसस्य वा मध्यान्तः स यस्य मुहूर्त्तस्यास्ति स मध्यान्तिकः स चासौ मुहूर्त्तश्चेति मध्यान्तिकमुहूर्त्तस्तत्र 'मूले च' आसन्ने देशे द्रष्टृस्थानपेक्षया 'दूरे च' व्यवहिते देशे द्रष्टृप्रतीत्यपेक्षया सूर्यौ दृश्येते, द्रष्टा हि मध्याह्ने उदयास्तमनदर्शनापेक्षयाऽऽसन्नं रविं पश्यति योजनशताष्टकेनैव तदा तस्य व्यवहितत्वात् , मन्यते पुनरुदयास्तमयप्रतीत्यपेक्षया व्यवहितमिति । 'सव्वत्थ समा उच्चत्तेणं'ति समभूतलापेक्षया सर्वत्रोच्चत्वमष्टौ योजनशतानीतिकृत्वा, 'लेसापडिघाएणं'तेजसः प्रतिघातेन दूरतरत्वात् तद्देशस्य तदप्रसरणेनेत्यर्थः, लेश्याप्रतिघाते हि सुखदृश्यत्वेन दूरस्थोऽपि स्वरू-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३९३॥

पेण सूर्य आसन्नप्रतीतिं जनयति, 'लेसाभितावेणं'ति तेजसोऽभितापेन, मध्याह्ने हि आसन्नतरत्वात्सूर्यस्तेजसा प्रतपति, तेजःप्रतापे च दुर्दृश्यत्वेन प्रत्यासन्नोऽप्यसौ दूरप्रतीतिं जनयतीति । 'नो तीतं खेत्तं गच्छंति'त्ति अतीतक्षेत्रस्यातिक्रान्तत्वात्, 'पडुप्पन्नं'ति वर्त्तमानं गम्यमानमित्यर्थः, 'नो अणागयं'ति गमिष्यमाणमित्यर्थः, इह च यदाकाशखण्डमादित्यः स्वतेजसा व्याप्नोति तत् क्षेत्रमुच्यते, 'ओभासंति'त्ति 'अवभासयतः' ईषदुद्द्योतयतः 'पुट्ठं'ति तेजसा स्पृष्टं 'जाव नियमा छद्दिसिं'ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'तं भंते ! किं ओगाढं ओभासइ अणोगाढं ओभासइ ?, गोयमा ! ओगाढं ओभासइ नो अणोगाढ'मित्यादि 'तं भंते ! कतिदिसिं ओभासेइ ?, गोयमा !' इत्येतदन्तमिति । 'उज्जोवेंति'त्ति 'उद्द्योतयतः' अत्यर्थं द्योतयतः 'तवंति'त्ति तापयतः उष्णरश्मित्वात्तयोः 'भासंति'त्ति भासयतः शोभयत इत्यर्थः ॥ उक्तमेवार्थं शिष्यहिताय प्रकारान्तरेणाह—'जंबू'इत्यादि, 'किरिया कज्जइ'त्ति अवभासनादिका क्रिया भवतीत्यर्थः 'पुट्ठ'त्ति तेजसा स्पृष्टात्—स्पर्शनाद् या सा स्पृष्टा 'एगं जोयणसयं उड्ढं तवंति'त्ति स्वस्वविमानस्योपरि योजनशतप्रमाणस्यैव तापक्षेत्रस्य भावात् 'अट्ठारस जोयणसयाइं अहे तवंति'त्ति, कथं ?, सूर्यादधस्तासु योजनशतेषु भूतलं भूतलाच्च योजनसहस्रेऽधोलोकग्रामा भवन्ति तांश्च यावदुद्द्योतनादिति, 'सीयालीस'मित्यादि, एतच्च सर्वोत्कृष्टदिवसे चक्षुःस्पर्शापेक्षयाऽवसेयमिति ॥ अनन्तरं सूर्यवक्तव्यतोक्ता, अथ सामान्येन ज्योतिष्कवक्तव्यतामाह—'अंतो णं भंते !'इत्यादि, 'जहा जीवाभिगमे तहेव निरवसेसं'ति तत्र चेदं सूत्रमेवं—'कप्पोववन्नगा विमाणोववन्नगा चारोववन्नगा चारट्ठिइया गइरइया गइसमावन्नगा ?, गोयमा ! ते णं देवा नो उड्ढोववन्नगा नो कप्पोववन्नगा

८ शतके उद्देशः ८ सूर्योदयादि दर्शनं सू ३४४

॥३९३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विमाणोववन्नगा चारोववन्नगा'ज्योतिश्चक्रचरणोपलक्षितक्षेत्रोपपन्ना इत्यर्थः 'नो चारट्ठिइया'इह चारो–ज्योतिश्चमवस्थान-क्षेत्रं 'नो' नैव चारे स्थितिर्येषां ते तथा, अत एव 'गइरइया' अत एव 'गइसमावन्नगा'इत्यादि, कियदूरमिदं वाच्यम्? इत्याह—'जाव उक्कोसेणं छम्मास'त्ति इदं चैवं द्रष्टव्यम्—'इंदट्ठाणे णं भंते ! केवइयं कालं विरहिए उववाएणं ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं छम्मास'त्ति, 'जहा जीवाभिगमे'त्ति, इदमप्येवं तत्र—'जे चंदिमसूरियगहगण-नक्खत्ततारारूवा ते णं भंते ! देवा किं उड्ढोववन्नगा ?'इत्यादि प्रश्नसूत्रम्, उत्तरं तु 'गोयमा ! ते णं देवा नो उड्ढोववन्नगा नो कप्पोववन्नगा विमाणोववन्नगा नो चारोववन्नगा चारट्ठिइया नो गइरइया नो गइसमावन्नगे'त्यादीति ॥ अष्टम-शतेऽष्टमः ॥ ८–८ ॥

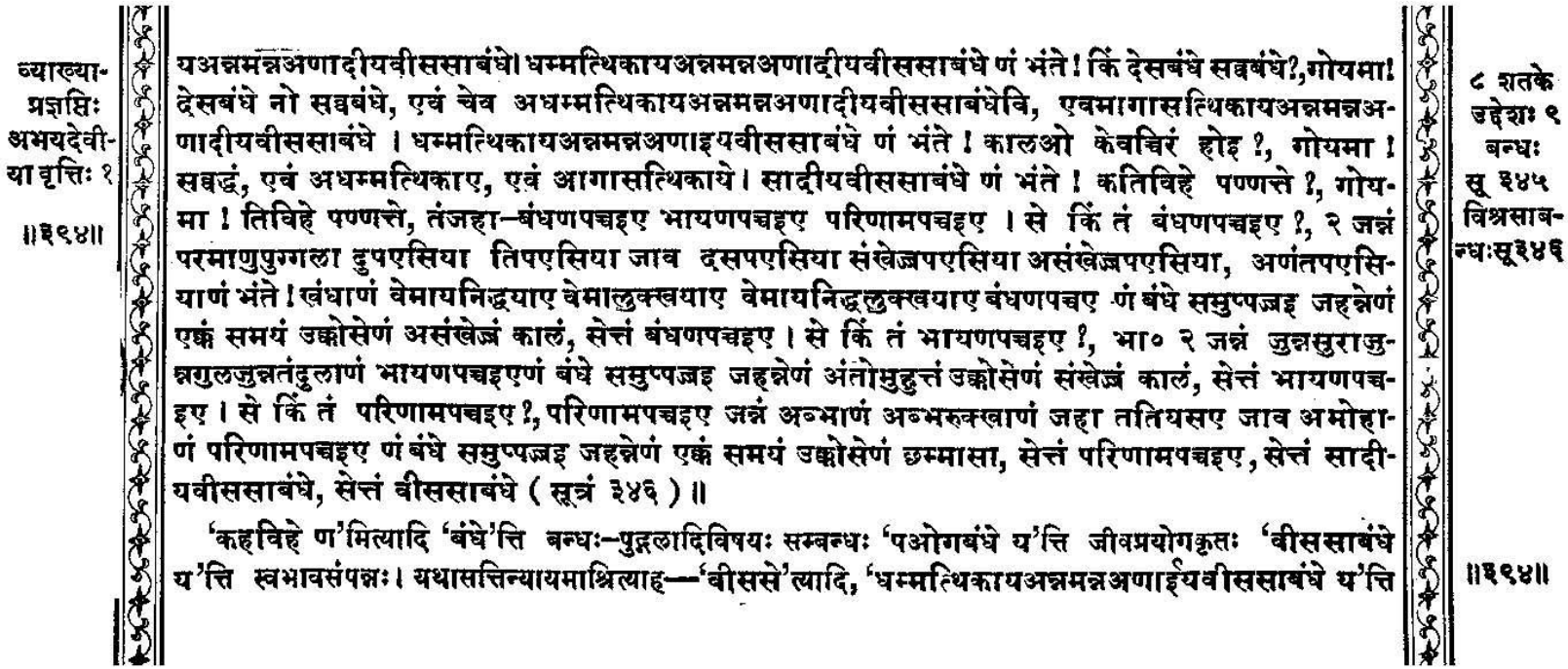
अष्टमोद्देशके ज्योतिषां वक्तव्यतोक्ता, सा च वैश्रसिकीति वैश्रसिकं प्रायोगिकं च बन्धं प्रतिपिपादयिषुर्नवमोद्दे-शकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कइविहे णं भंते ! बंधे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे बंधे पण्णत्ते, तंजहा–पयोगबंधे य वीससाबंधे य ॥ (सूत्रं ३४५) वीससाबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–साइयवीससाबंधे अणाइयवीससाबंधे य । अणाइयवीससाबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते, तंजहा–धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे अधम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे आगासत्थिका-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टम-शतके अष्टम-उद्देशकः समाप्तः

अथ अष्टम-शतके नवम-उद्देशकः आरभ्यते



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३९४॥

यअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे। धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे?,गोयमा! देसबंधे नो सव्वबंधे, एवं चेव अधम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधेवि, एवमागासत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे । धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणाइयवीससाबंधे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वद्धं, एवं अधम्मत्थिकाए, एवं आगासत्थिकाये। सादीयवीससाबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते, तंजहा–बंधणपच्चइए भायणपच्चइए परिणामपच्चइए । से किं तं बंधणपच्चइए ?, २ जन्नं परमाणुपुग्गला दुपएसिया तिपएसिया जाव दसपएसिया संखेज्जपएसिया असंखेज्जपएसिया, अणंतपएसियाणं भंते ! खंधाणं वेमायनिद्धयाए वेमालुक्खयाए वेमायनिद्धलुक्खयाए बंधणपच्चए णं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, सेत्तं बंधणपच्चइए । से किं तं भायणपच्चइए ?, भा० २ जन्नं जुन्नसुराजुन्नगुलजुन्नतंदुलाणं भायणपच्चइएणं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं भायणपच्चइए । से किं तं परिणामपच्चइए ?, परिणामपच्चइए जन्नं अब्भाणं अब्भरुक्खाणं जहा ततियसए जाव अमोहाणं परिणामपच्चइए णं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं छम्मासा, सेत्तं परिणामपच्चइए, सेत्तं सादीयवीससाबंधे, सेत्तं वीससाबंधे (सूत्रं ३४६) ॥

'कहविहे ण'मित्यादि 'बंधे'त्ति बन्धः–पुद्गलादिविषयः सम्बन्धः 'पओगबंधे य'त्ति जीवप्रयोगकृतः 'वीससाबंधे य'त्ति स्वभावसंपन्नः। यथासत्तिन्यायमाश्रित्याह—'वीससे'त्यादि, 'धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणाईयवीससाबंधे य'त्ति

८ शतके उद्देशः ९ बन्धः सू ३४५ विश्रसाबन्धः सू३४६

॥३९४॥

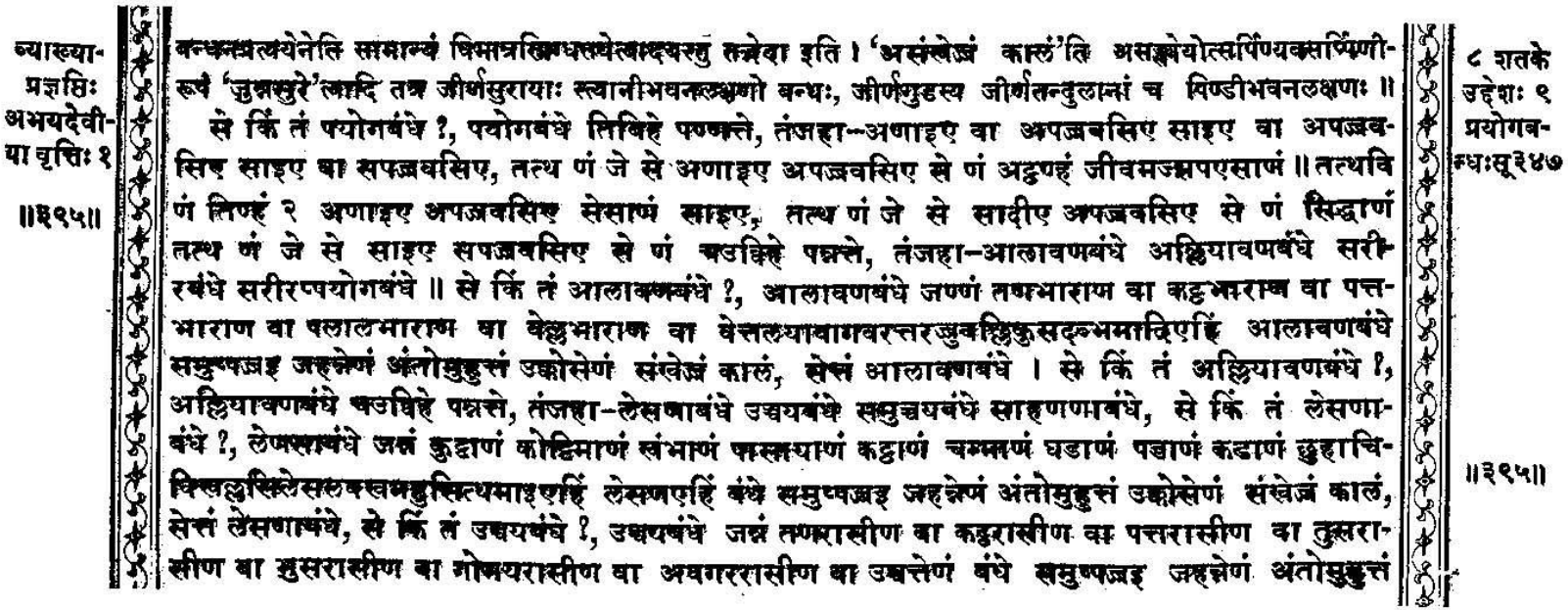
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्मास्तिकायस्यान्योऽन्यं–प्रदेशानां परस्परेण योऽनादिको विश्रसाबन्धः स तथा, एवमुत्तरत्रापि । 'देसबंधे'त्ति देशतो–देशापेक्षया बन्धो देशबन्धो यथा सङ्कलिकाकटिकानां, 'सव्वबंधे'त्ति सर्वतः सर्वात्मना बन्धः सर्वबन्धो यथा क्षीरनीरयोः 'देसबन्धे नो सव्वबंधे'त्ति धर्मास्तिकायस्य प्रदेशानां परस्परसंस्पर्शेन व्यवस्थितत्वाद्देशबन्ध एव न पुनः सर्वबन्धः, तत्र हि एकस्य प्रदेशस्य प्रदेशान्तरैः सर्वथा बन्धेऽन्योऽन्यान्तर्भावेनैकप्रदेशत्वमेव स्यात् नासङ्ख्येयप्रदेशत्वमिति ॥ 'सव्वद्धं'ति सर्वाद्धां–सर्वकालं 'साइयवीससाबंधे य'त्ति सादिको यो विश्रसाबन्धः स तथा, 'बंधणपच्चइए'त्ति बध्यतेऽनेनेति बन्धनं–विवक्षितस्निग्धतादिको गुणः स एव प्रत्ययो–हेतुर्यत्र स तथा, एवं भाजनप्रत्ययः परिणामप्रत्ययश्च, नवरं भाजनं–आधारः परिणामो–रूपान्तरगमनं 'जन्नं परमाणुपुग्गले'त्यादौ परमाणुपुद्गलः परमाणुरेव 'वेमायनिद्धयाए'–त्ति विषमा मात्रा यस्यां सा विमात्रा सा चासौ स्निग्धता चेति विमात्रस्निग्धता तया,एवमन्यदपि पदद्वयम् ,इदमुक्तं भवति–"समनिद्धयाए बन्धो न होइ समलुक्खयाएवि न होइ । वेमायनिद्धलुक्खत्तणेण बंधो उ खंधाणं ॥१॥" अयमर्थः–समगुणस्निग्धस्य समगुणस्निग्धेन परमाणुद्व्यणुकादिना बन्धो न भवति, समगुणरूक्षस्यापि समगुणरूक्षेण, यदा पुनर्विषमा मात्रा तदा भवति बन्धः, विषममात्रानिरूपणार्थं चोच्यते–"निद्धस्स निद्धेण दुयाहिएणं, लुक्खस्स लुक्खेण दुयाहिएणं । निद्धस्स लुक्खेण उवेइ बंधो, जहन्नवज्जो विसमो समो वा ॥ १ ॥" इति [स्निग्धस्य स्निग्धेन द्विकाधिकेन रूक्षस्य रूक्षेण द्विकाधिकेन । स्निग्धस्य रूक्षेणोपैति बन्धो जघन्यवर्जो विषमः समो वा ॥ १ ॥] 'बंधणपच्चइएणं'ति बन्धनस्य–बन्धस्य प्रत्ययो–हेतुरुक्तरूपविमात्रस्निग्धतादिलक्षणो बन्धनमेव वा विवक्षितस्नेहादि प्रत्ययो बन्धनप्रत्ययस्तेन, इह च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३४५--३४६]

दीप अनुक्रम [४२२--४२३]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३९५॥

बन्धनप्रत्ययेनेति सामान्यं विभागस्त्रिविधस्तथेत्यादेस्तु तद्भेदा इति। 'असंखेज्जं कालं'ति असङ्खयेयोत्सर्पिण्यवसर्पिणी-रूपं 'जुन्नसुरे'त्यादि तत्र जीर्णसुरायाः स्वानीभवनलक्षणो बन्धः, जीर्णगुडस्य जीर्णतन्दुलानां च पिण्डीभवनलक्षणः ॥

से किं तं पयोगबंधे ?, पयोगबंधे तिविहे पण्णत्ते, तंजहा--अणाइए वा अपज्जवसिए साइए वा अपज्जवसिए साइए वा सपज्जवसिए, तत्थ णं जे से अणाइए अपज्जवसिए से णं अट्ठण्हं जीवमज्झपएसाणं ॥ तत्थवि णं तिण्हं २ अणाइए अपज्जवसिए सेसाणं साइए, तत्थ णं जे से सादीए अपज्जवसिए से णं सिद्धाणं तत्थ णं जे से साइए सपज्जवसिए से णं चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा--आलावणबंधे अल्लियावणबंधे सरी-रबंधे सरीरप्पयोगबंधे ॥ से किं तं आलावणबंधे ?, आलावणबंधे जण्णं तणभाराण वा कट्ठभाराण वा पत्त-भाराण वा पलालभाराण वा वेल्लभाराण वा वेत्तलयावागवरत्तरज्जुवल्लिकुसदब्भमादिएहिं आलावणबंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं आलावणबंधे । से किं तं अल्लियावणबंधे ?, अल्लियावणबंधे चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा--लेसणाबंधे उच्चयबंधे समुच्चयबंधे साहणणाबंधे, से किं तं लेसणा-बंधे ?, लेसणाबंधे जण्णं कुड्डाणं कोट्टिमाणं संभाणं फलयाणं कट्ठाणं चम्माणं घडाणं पडाणं कडाणं छुहाचि-क्खल्लसिलेसलक्खमहुसित्थमाइएहिं लेसणएहिं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं लेसणाबंधे, से किं तं उच्चयबंधे ?, उच्चयबंधे जण्णं तणरासीण वा कट्ठरासीण वा पत्तरासीण वा तुसरा-सीण वा भुसरासीण वा गोमयरासीण वा अवगररासीण वा उच्चत्तेणं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं

८ शतके उद्देशः ९ प्रयोगब-न्धः सू३४७

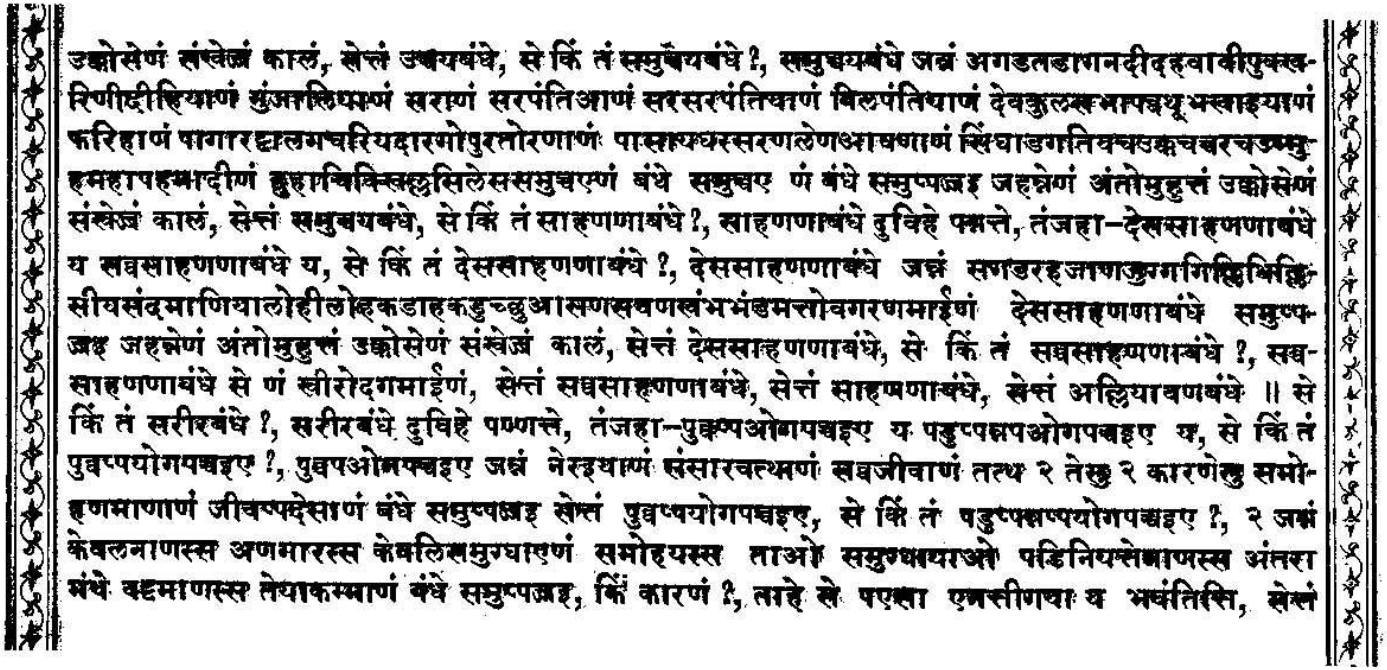
॥३९५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४७]

दीप अनुक्रम [४२४]



उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं उच्चयबंधे, से किं तं समुच्चयबंधे ?, समुच्चयबंधे जन्नं अगडतलागनदीदहवावीपुक्खरिणीदीहियाणं गुंजालियाणं सराणं सरपंतिआणं सरसरपंतियाणं बिलपंतियाणं देवकुलसभापवथूभखाइयाणं फरिहाणं पागारट्टालगचरियदारगोपुरतोरणाणं पासायघरसरणलेणआवणाणं सिंघाडगतियचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहमादीणं छुहाचिक्खल्लसिलेससमुच्चएणं बंधे समुच्चए णं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं समुच्चयबंधे, से किं तं साहणणाबंधे ?, साहणणाबंधे दुविहे पन्नत्ते, तंजहा–देससाहणणाबंधे य सवसाहणणाबंधे य, से किं तं देससाहणणाबंधे ?, देससाहणणाबंधे जन्नं सगडरहजाणजुग्गगिल्लिथिल्लिसीयसंदमाणियालोहीलोहकडाहकडुच्छुआसणसयणखंभभंडमत्तोवगरणमाईणं देससाहणणाबंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, सेत्तं देससाहणणाबंधे, से किं तं सवसाहणणाबंधे ?, सवसाहणणाबंधे से णं खीरोदगमाईणं, सेत्तं सवसाहणणाबंधे, सेत्तं साहणणाबंधे, सेत्तं अल्लियावणबंधे ॥ से किं तं सरीरबंधे ?, सरीरबंधे दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–पुव्वप्पओगपच्चइए य पडुप्पन्नपओगपच्चइए य, से किं तं पुव्वप्पयोगपच्चइए ?, पुव्वपओगप्पच्चइए जन्नं नेरइयाणं संसारत्थाणं सवजीवाणं तत्थ २ तेसु २ कारणेसु समोहणमाणाणं जीवप्पदेसाणं बंधे समुप्पज्जइ सेत्तं पुव्वप्पयोगपच्चइए, से किं तं पडुप्पन्नप्पयोगपच्चइए ?, २ जन्नं केवलनाणस्स अणगारस्स केवलिसमुग्घाएणं समोहयस्स ताओ समुग्घायाओ पडिनियत्तेमाणस्स अंतरा मंथे वट्टमाणस्स तेयाकम्माणं बंधे समुप्पज्जइ, किं कारणं ?, ताहे से पएसा एगसीगया य भवंतिरसि, सेत्तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४७]

दीप अनुक्रम [४२४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥३९६॥

पडुप्पन्नप्पयोगपच्चइए, सेत्तं सरीरबंधे ॥ से किं तं सरीरप्पयोगबंधे ?, सरीरप्पयोगबंधे पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा–ओरालियसरीरप्पओगबंधे वेउव्वियसरीरप्पओगबंधे आहारगसरीरप्पओगबंधे तेयासरीरप्पयोगबंधे कम्मासरीरप्पयोगबंधे । ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा–एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे बेंदियओ० जाव पंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे । एगिंदिय-ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–पुढविक्काइय-एगिंदिय० एवं एएणं अभिलावेणं भेदो जहा ओगाहणसंठाणे ओरालियसरीरस्स तहा भाणियव्वो जाव पज्जत्तगब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे य अपज्जत्तगब्भवक्कंतियमणूस० जाव बंधे य ॥ ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए पमादपच्चया कम्मं च जोगं च भवं च आउयं च पडुच्च ओरालियसरीरप्पयोगनामकम्मस्स उदएणं ओरालियसरीरप्पयो-गबंधे ॥ एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, एवं चेव, पुढविक्काइयएगिं-दियओरालियसरीरप्पयोगबंधे एवं चेव, एवं जाव वणस्सइकाइया, एवं बेइंदिया एवं तेइंदिया एवं चउरिं-दियतिरिक्खजोणिय०, पंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, एवं चेव, मणुस्स-पंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए पमादपच्चया जाव आउयं च पडुच्च मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं ओरालि-

८ शतके उद्देशः ९ प्रयोगब-न्धःसू३४७

॥३९६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४७]

दीप अनुक्रम [४२४]

यसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, गोयमा ! देसबंधेवि सव्वबंधेवि, एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, एवं चेव, एवं पुढविकाइया, एवं जाव मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, गोयमा ! देसबंधेवि सव्वबंधेवि ॥ ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं, देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं समयऊणाइं, एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं समऊणाइं, पुढविकाइयएगिंदियपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं देसबंधे जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं समऊणाइं, एवं सवेसिं सव्वबंधो एक्कं समयं देसबंधो जेसिं नत्थि वेउव्वियसरीरं तेसिं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं जा जस्स ठिती सा समऊणा कायव्वा, जेसिं पुण अत्थि वेउव्वियसरीरं तेसिं देसबंधो जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं जा जस्स ठिती सा समऊणा कायव्वा जाव मणुस्साणं देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं समयूणाइं ॥ ओरालियसरीरबंधंतरे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडिसमयाहियाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं तिसमयाहियाइं, एगिंदियओरालियपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमय-

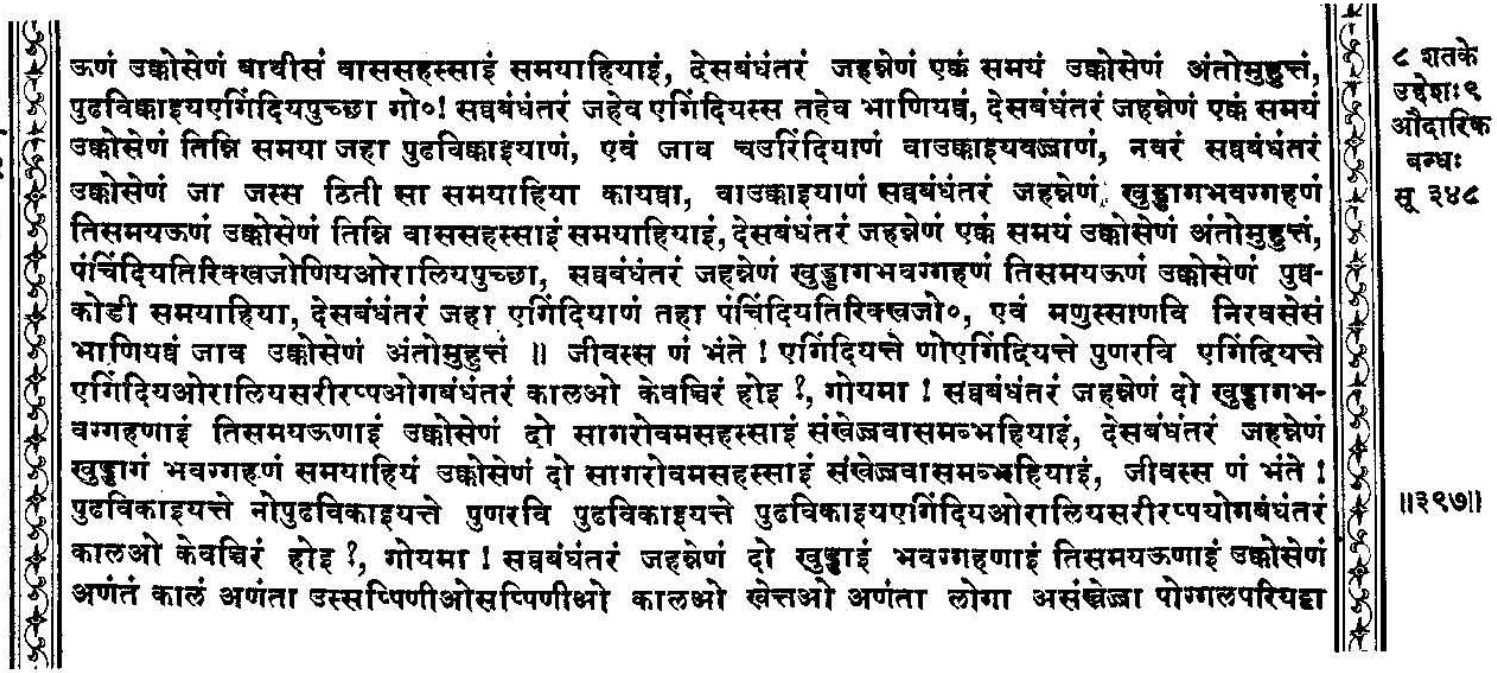
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४७]

दीप अनुक्रम [४२४]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥३९७॥

ऊणं उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं समयाहियाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं, पुढविकाइयएगिंदियपुच्छा गो०! सव्वबंधंतरं जहेव एगिंदियस्स तहेव भाणियव्वं, देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि समया जहा पुढविकाइयाणं, एवं जाव चउरिंदियाणं वाउक्काइयवज्जाणं, नवरं सव्वबंधंतरं उक्कोसेणं जा जस्स ठिती सा समयाहिया कायव्वा, वाउक्काइयाणं सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं तिन्नि वाससहस्साइं समयाहियाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं, पंचिंदियतिरिक्खजोणियओरालियपुच्छा, सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं तिसमयऊणं उक्कोसेणं पुव्व-कोडी समयाहिया, देसबंधंतरं जहा एगिंदियाणं तहा पंचिंदियतिरिक्खजो०, एवं मणुस्साणवि निरवसेसं भाणियव्वं जाव उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं ॥ जीवस्स णं भंते ! एगिंदियत्ते णोएगिंदियत्ते पुणरवि एगिंदियत्ते एगिंदियओरालियसरीरप्पओगबंधंतरं कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं दो खुड्डागभव-ग्गहणाइं तिसमयऊणाइं उक्कोसेणं दो सागरोवमसहस्साइं संखेज्जवासमब्भहियाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं समयाहियं उक्कोसेणं दो सागरोवमसहस्साइं संखेज्जवासमब्भहियाइं, जीवस्स णं भंते ! पुढविकाइयत्ते नोपुढविकाइयत्ते पुणरवि पुढविकाइयत्ते पुढविकाइयएगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधंतरं कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं दो खुड्डाइं भवग्गहणाइं तिसमयऊणाइं उक्कोसेणं अणंतं कालं अणंता उस्सप्पिणीओसप्पिणीओ कालओ खेत्तओ अणंता लोगा असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा

८ शतके उद्देशः९ औदारिक बन्धः सू ३४८

॥३९७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांके सू. ३४८ किम लिखितं तत् अहम् न जानामि!!! [यहाँ सूत्र ३४७ चल रहा है, प्रतमे इस सूत्र के बिचमे कोई क्रमांक नहीं बदला, पूज्यपाद सागरानंदसूरीश्वरजी संपादित 'आगममञ्जूषा' में भी यह सूत्र सळंग ही संपादित हुआ है, फिर भी यहाँ दो पृष्ठ तक सू.३४७ लिखा है और बादमे सू.३४८ लिख दिया है, जो की इस प्रत के पृष्ठ ४०७ तक चलता है, बादमे नया सूत्र क्रम ३४९ लिखा है ।]

प्रत सूत्रांक [३४८]

दीप अनुक्रम [४२४]

ते णं पोग्गलपरियट्टा आवलियाए असंखेज्जइभागो, देसबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं समयाहियं उक्कोसेणं अणंतं कालं जाव आवलियाए असंखेज्जइभागो, जहा पुढविक्काइयाणं एवं वणस्सइकाइयवज्जाणं जाव मणुस्साणं, वणस्सइकाइयाणं दोन्नि खुड्डाइं, एवं चेव उक्कोसेणं असंखिज्जं कालं असंखिज्जाओ उस्सप्पिणिओसप्पिणीओ कालओ खेत्तओ असंखेज्जा लोगा, एवं देसबंधंतरंपि उक्कोसेणं पुढवीकालो ॥ एएसि णं भंते ! जीवाणं ओरालियसरीरस्स देसबंधगाणं सव्वबंधगाणं अबंधगाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा ओरालियसरीरस्स सव्वबंधगा अबंधगा विसेसाहिया देसबंधगा असंखेज्जगुणा (सूत्रं ३४८) ॥

'पओगबंधे'त्ति जीवव्यापारबन्धः स च जीवप्रदेशानामौदारिकादिपुद्गलानां वा 'अणाइए वा'इत्यादयो द्वितीयवर्जास्त्रयो भङ्गाः, तत्र प्रथमभङ्गोदाहरणायाह—'तत्थ णं जे से'इत्यादि, अस्य किल जीवस्यासङ्ख्येयप्रदेशिकस्याष्टौ ये मध्यप्रदेशास्तेषामनादिरपर्यवसितो बन्धो, यदाऽपि लोकं व्याप्य तिष्ठति जीवस्तदाऽप्यसौ तथैवेति, अन्येषां पुनर्जीवप्रदेशानां विपरिवर्त्तमानत्वान्नास्त्यनादिरपर्यवसितो बन्धः, तत्स्थापना— ० ० ० ० एतेषामुपर्यन्ये चत्वारः, एवमेतेऽष्टौ ॥ एवं तावत्समुदायतोऽष्टानां बन्ध उक्तः, अथ तेष्वेकैकेनात्मप्रदेशेन सह यावतां परस्परेण सम्बन्धो भवति तदर्शनायाह—'तत्थवि ण'मित्यादि, 'तत्रापि' तेष्वष्टासु जीवप्रदेशेषु मध्ये त्रयाणां त्रयाणामेकैकेन सहानादिरपर्यवसितो बन्धः, तथाहि–पूर्वोक्तप्रकारेणावस्थितानामष्टानामुपरितनप्रतरस्य यः कश्चिद्विवक्षितस्तस्य द्वौ पार्श्ववर्त्तिनावेकश्चाधोव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

स्तीत्येते त्रयः संबध्यन्ते शेषस्त्वेक उपरितनत्रयश्चाधस्तना न संबध्यन्ते व्यवहितत्वात्, एवमधस्तनप्रतरापेक्षयाऽपीति चूर्णिकारव्याख्या, टीकाकारव्याख्या तु दुरवगमत्वात्परिहृतेति, 'सेसाणं साइए'त्ति शेषाणां मध्यमाष्टाभ्योऽन्येषां सादिर्विपरिवर्त्तमानत्वात्, एतेन प्रथमभङ्ग उदाहृतः, अनादिसपर्यवसित इत्यर्थ तु द्वितीयो भङ्ग इह न संभवति, अनादिसंबद्धानामष्टानां जीवप्रदेशानामपरिवर्त्तमानत्वेन बन्धस्य सपर्यवसितत्वानुपपत्तेरिति। अथ तृतीयो भङ्ग उदाहियते–'तत्थ णं जे से साइए'इत्यादि, सिद्धानां सादिरपर्यवसितो जीवप्रदेशबन्धः, शैलेश्यवस्थायां संस्थापितप्रदेशानां सिद्धत्वेऽपि चलनाभावादिति। अथ चतुर्थभङ्गं भेदत आह–'तत्थ णं जे से साइए'इत्यादि, 'आलावणबंधे'त्ति आलाप्यते–आलीनं क्रियत एभिरित्यालापनानि–रज्ज्वादीनि तैर्बन्धस्तृणादीनामालापनबन्धः, 'अल्लियावणबंधे'त्ति अल्लियावणं–द्रव्यस्य द्रव्यान्तरेण श्लेषादिनाऽऽलीनस्य यत्करणं तद्रूपो यो बन्धः स तथा, 'सरीरबंधे'त्ति समुद्घाते सति यो विस्तारितसङ्कोचितजीवप्रदेशसम्बन्धविशेषवशात्तैजसादिशरीरप्रदेशानां सम्बन्धविशेषः स शरीरबन्धः, शरीरिबन्ध इत्यन्ये, तत्र शरीरिणः समुद्घाते विक्षिप्तजीवप्रदेशानां सङ्कोचने यो बन्धः स शरीरिबन्ध इति, 'सरीरप्पओगबंधे'त्ति शरीरस्य–औदारिकादेर्यः प्रयोगेण–वीर्यान्तरायक्षयोपशमादिजनितव्यापारेण बन्धः–तत्पुद्गलोपादानं शरीररूपस्य वा प्रयोगस्य यो बन्धः स शरीरप्रयोगबन्धः॥ 'तणभाराण व'त्ति तृणभारास्तृणभारकास्तेषां 'वेत्ते'त्यादि वेत्रलता–जलवंशकम्बा'वाग'त्ति वल्कः वरत्रा–चर्म्ममयी रज्जुः–सनादिमयी वल्ली–त्रपुष्यादिका कुशा–निर्मूलदर्भाः दर्भास्तु समूलाः, आदिशब्दाच्छीवरादिग्रहः, 'लेसणाबंधे'त्ति श्लेषणा–श्लथद्रव्येण द्रव्ययोः संबन्धनं तद्रूपो यो बन्धः स तथा, 'उच्चयबंधे'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांके सू. ३४८ किम लिखितं तत् अहम् न जानामि!!! [यहाँ सूत्र ३४७ चल रहा है, प्रतमे इस सूत्र के बिचमे कोई क्रमांक नहीं बदला, पूज्यपाद सागरानंदसूरीश्वरजी संपादित 'आगममञ्जूषा' में भी यह सूत्र सळंग ही संपादित हुआ है, फिर भी यहाँ दो पृष्ठ तक सू.३४७ लिखा है और बादमे सू.३४८ लिख दिया है, जो की इस प्रत के पृष्ठ ४०७ तक चलता है, बादमे नया सूत्र क्रम ३४९ लिखा है ।]

उच्चयः–ऊर्द्ध्वं चयनं–राशीकरणं तद्रूपो बन्ध उच्चयबन्धः, 'समुच्चयबंधे'त्ति सङ्गतः–उच्चयापेक्षया विशिष्टतर उच्चयः समुच्चयः स एव बन्धः समुच्चयबन्धः, 'साहणणाबंधे'त्ति संहननं–अवयवानां सङ्घातनं तद्रूपो यो बन्धः स संहनन-बन्धः, दीर्घत्वादि चेह प्राकृतशैलीप्रभवमिति,'कुट्टिमाणं'ति मणिभूमिकानां 'छुहाचिक्खिल्ले'त्यादौ 'सिलेस'त्ति श्लेषो–वज्रलेपः 'लक्ख'त्ति जतु 'महुसित्थ'त्ति मदनम्, आदिशब्दाद् गुग्गुलरालाखल्यादिग्रहः 'अवगररासीण व'त्ति कचवरराशीनाम् 'उच्चएणं'ति ऊर्द्ध्वं चयनेन 'अगडतलागनई'इत्यादि प्रायः प्राग् व्याख्यातमेव, 'देससाहणणाबंधे य'त्ति देशेन देशस्य संहननलक्षणो बन्धः–सम्बन्धः शकटाङ्गादीनामिवेति देशसंहननबन्धः, 'सव्वसाहणणाबंधे य'त्ति सर्वेण सर्वस्य संहननलक्षणो बन्धः–सम्बन्धः क्षीरनीरादीनामिवेति सर्वसंहननबन्धः 'जन्नं सगडरहे'त्यादि, शकटादीनि च पदानि प्राग् व्याख्यातान्यपि शिष्यहिताय पुनर्व्याख्यायन्ते–तत्र च'सगड'त्ति गन्त्री 'रह'त्ति स्यन्दनः 'जाण'त्ति यानं–लघुगन्त्री 'जुग्ग'त्ति युग्यं गोल्लविषयप्रसिद्धं द्विहस्तप्रमाणं वेदिकोपशोभितं जम्पानं 'गिल्लि'त्ति हस्तिन उपरि कोल्लरं यन्मानुषं गिलतीव 'थिल्लि'त्ति अश्वपल्लाणं 'सीय'त्ति शिबिका–कूटाकारेणाच्छादितो जम्पानविशेषः 'संदमाणि-य'त्ति पुरुषप्रमाणो जम्पानविशेषः 'लोहि'त्ति मण्डकादिपचनभाजनं 'लोहकडाहे'ति भाजनविशेष एव 'कडुच्छुय'त्ति परिवेषणभाजनम् आसनशयनस्तम्भाः प्रतीताः 'भंड'त्ति मृन्मयभाजनं 'मत्त'त्ति अमत्रं भाजनविशेषः 'उवगरण'त्ति नानाप्रकारं तदन्योपकरणमिति ॥ 'पुव्वप्पओगपच्चइए य'त्ति पूर्वः–प्राक्कालासेवितः प्रयोगो–जीवव्यापारो वेदनाकषा-यादिसमुद्घातरूपः प्रत्ययः–कारणं यत्र शरीरबन्धे स तथा स एव पूर्वप्रयोगप्रत्ययिकः, 'पच्चुप्पन्नपओगपच्चइए य'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्युत्पन्नः–अप्राप्तपूर्वो वर्त्तमान इत्यर्थः प्रयोगः–केवलिसमुद्घातलक्षणव्यापारः प्रत्ययो यत्र स तथा स एव प्रत्युत्पन्नप्रयोगप्रत्ययिकः। 'नेरइयाईण'मित्यादि, 'तत्थ तत्थ'त्ति अनेन समुद्घातकरणक्षेत्राणां बाहुल्यमाह, 'तेसु तेसु'त्ति अनेन समुद्घातकारणानां वेदनादीनां बाहुल्यमुक्तं 'समोहणमाणाणं'ति समुद्घन्यमानानां समुद्घातं शरीराद्बहिर्जीवप्रदेशप्रक्षेपलक्षणं गच्छतां 'जीवपएसाणं'ति इह जीवप्रदेशानामित्युक्तावपि शरीरबन्धाधिकारात्तात्स्थ्यात्तद्व्यपदेश इति न्यायेन जीवप्रदेशाश्रिततैजसकार्म्मणशरीरप्रदेशानामिति द्रष्टव्यं, शरीरिबन्ध इत्यत्र तु पक्षे समुद्घातेन विक्षिप्य सङ्कोचितानामुपसर्जनीकृततैजसादिशरीरप्रदेशानां जीवप्रदेशानामेवेति 'बंधे'त्ति रचनादिविशेषः, 'जन्नं केवले'त्यादि, केवलिसमुद्घातेन दण्ड १ कपाट २ मथिकरणा ३ न्तरपूरण ४ लक्षणेन 'समुपहतस्य' विस्तारितजीवप्रदेशस्य 'ततः' समुद्घातात् 'प्रतिनिवर्त्तमानस्य' प्रदेशान् संहरतः, समुद्घातप्रतिनिवर्त्तमानत्वं च पञ्चमादिष्वनेकेषु समयेषु स्यादित्यतो विशेषमाह–'अंतरामंथे वट्टमाणस्स'त्ति निवर्त्तनक्रियाया अन्तरे–मध्येऽवस्थितस्य पञ्चमसमय इत्यर्थः, यद्यपि च षष्ठादिसमयेषु तैजसादिशरीरसङ्घातः समुत्पद्यते तथाऽप्यभूतपूर्वतया पञ्चमसमय एवासौ भवति शेषेषु तु भूतपूर्वतयैवेतिकृत्वा 'अंतरामंथे वट्टमाणस्से'त्युक्तमिति, 'तेयाकम्माणं बंधे समुप्पज्जइ'त्ति तैजसकार्मणयोः शरीरयोः 'बन्धः' सङ्घातः समुत्पद्यते 'किं कारणं' कुतो हेतोः ?, उच्यते–'ताहे'त्ति तदा समुद्घातनिवृत्तिकाले 'से'त्ति तस्य केवलिनः 'प्रदेशाः' जीवप्रदेशाः 'एगत्तीगय'त्ति एकत्वं गताः–संघातमापन्ना भवन्ति, तदनुवृत्त्या च तैजसादिशरीरप्रदेशानां बन्धः समुत्पद्यत इति प्रकृतम्, शरीरिबन्ध इत्यत्र तु पक्षे 'तेयाकम्माणं बंधे समुप्पज्जइ'त्ति तैजसकार्मणाश्रयभूतत्वात्तैजसकार्मणाः शरीरिप्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांके सू. ३४८ किम लिखितं तत् अहम् न जानामि!!! [यहाँ सूत्र ३४७ चल रहा है, प्रतमे इस सूत्र के बिचमे कोई क्रमांक नहीं बदला, पूज्यपाद सागरानंदसूरीश्वरजी संपादित 'आगममञ्जूषा' में भी यह सूत्र सळंग ही संपादित हुआ है, फिर भी यहाँ दो पृष्ठ तक सू.३४७ लिखा है और बादमे सू.३४८ लिख दिया है, जो की इस प्रत के पृष्ठ ४०७ तक चलता है, बादमे नया सूत्र क्रम ३४९ लिखा है ।]

प्रत सूत्रांक [३४८]

दीप अनुक्रम [४२४]

देशास्तेषां बन्धः समुत्पद्यत इति व्याख्येयम्, **'वीरियसजोगसद्दव्वयाए'त्ति** वीर्यं–वीर्यान्तरायक्षयादिकृता शक्तिः योगाः–मनःप्रभृतयः सह योगैर्वर्त्तत इति सयोगः सन्ति–विद्यमानानि द्रव्याणि–तथाविधपुद्गला यस्य जीवस्यासौ सद्द्रव्यः वीर्यप्रधानः सयोगो वीर्यसयोगः स चासौ सद्द्रव्यश्चेति विग्रहस्तद्भावस्तत्ता तया वीर्यसयोगसद्द्रव्यतया, सवीर्यतया सयोगतया सद्द्रव्यतया जीवस्य, तथा **'पमायपच्चय'त्ति** 'प्रमादप्रत्ययात्' प्रमादलक्षणकारणात् तथा **'कम्मं च'त्ति** कर्म्म च एकेन्द्रियजात्यादिकमुदयवर्त्ति **'जोगं च'त्ति** 'योगं च' काययोगादिकं **'भवं च'त्ति** 'भवं च'तिर्यग्भवादिकमनुभूयमानम् **'आउयं च'त्ति** 'आयुष्कं च' तिर्यगायुष्काद्युदयवर्त्ति **'पडुच्च'त्ति** 'प्रतीत्य' आश्रित्य **'ओरालिए'**त्यादि औदारिकशरीरप्रयोगसम्पादकं यन्नाम तदौदारिकशरीरप्रयोगनाम तस्य कर्म्मण उदयेनौदारिकशरीरप्रयोगबन्धो भवतीति शेषः, एतानि च वीर्यसयोगसद्द्रव्यतादीनि पदान्यौदारिकशरीरप्रयोगनामकर्मोदयस्य विशेषणतया व्याख्येयानि, वीर्यसयोगसद्द्रव्यतया हेतुभूतया यो विवक्षितकर्मोदयस्तेनेत्यादिना प्रकारेण, स्वतन्त्राणि वैतान्यौदारिकशरीरप्रयोगबन्धस्य कारणानि, तत्र च पक्षे यदौदारिकशरीरप्रयोगबन्धः कस्य कर्म्मण उदयेन ? इति पृष्टे यदन्यान्यपि कारणान्यभिधीयन्ते तद्विवक्षितकर्मोदयोऽभिहितान्येव सहकारिकारणान्यपेक्ष्येह कारणतयाऽवसेय इत्यस्यार्थस्य ज्ञापनार्थमिति ॥ **'एगिंदिए'**त्यादौ **'एवं चेव'त्ति** अनेनाधिकृतसूत्रस्य पूर्वसूत्रसमताभिधानेऽपि **'ओरालियसरीरप्पओगनामाए'**इत्यत्र पदे **'एगिंदियओरालियसरीरप्पओगनामाए'**इत्ययं विशेषो दृश्यः, एकेन्द्रियौदारिकशरीरप्रयोगबन्धस्येहाधिकृतत्वात्, एवमुत्तरत्रापि वाच्यमिति ॥ **'देसबंधेऽवि सव्वबंधेऽवि'त्ति** तत्र यथाऽपूपः स्नेहभृततप्ततापिकायां प्रक्षिप्तः प्रथमसमये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४८]

दीप अनुक्रम [४२४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥४००॥

घृतादि गृह्णात्येव शेषेषु तु समयेषु गृह्णाति विसृजति च एवमयं जीवो यदा प्राक्तनं शरीरकं विहायान्यद्गृह्णाति तदा प्रथ-मसमये उत्पत्तिस्थानगतान् शरीरप्रायोग्यपुद्गलान् गृह्णात्येवेत्ययं सर्वबन्धः, ततो द्वितीयादिषु समयेषु तान् गृह्णाति विसृजति चेत्येवं देशबन्धः, ततश्चैवमौदारिकस्य देशबन्धोऽप्यस्तीति सर्वबन्धोऽप्यस्तीति॥ **'सव्वबंधं एक्कं समयं'**ति अपूपदृष्टान्तेनैव तत्सर्वबन्धकस्यैकसमयत्वादिति, **'देसबंधे'**इत्यादि, तत्र यदा वायुर्मनुष्यादिर्वा वैक्रियं कृत्वा विहाय च पुनरौदारिकस्य समयमेकं सर्वबन्धं कृत्वा पुनस्तस्य देशबन्धं कुर्वन्नेकसमयानन्तरं म्रियते तदा जघन्यत एकं समयं देशबन्धोऽस्य भवतीति, **'उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं समयऊणाइं'**ति, कथं ?, यस्मादौदारिकशरीरिणां त्रीणि पल्योपमान्युत्कर्षतः स्थितिः, तेषु च प्रथमसमये सर्वबन्धक इति समयन्यूनानि त्रीणि पल्योपमान्युत्कर्षत औदारिकशरीरिणां देशबन्धकालो भवति। **'एगिंदि-यओरालिए'**त्यादि, **'देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं'**ति, कथं ?, वायुरौदारिकशरीरी वैक्रियं गतः पुनरौदारिकप्रतिपत्तौ सर्वबन्धको भूत्वा देशबन्धकश्चैकं समयं भूत्वा मृतः इत्येवमिति, **'उक्कोसेणं बावीस'**मित्यादि, एकेन्द्रियाणामुत्कर्षतो द्वाविंशतिर्वर्षसहस्राणि स्थितिस्तत्रासौ प्रथमसमये सर्वबन्धकः शेषकालं देशबन्ध इत्येवं समयोनानि द्वाविंशतिर्वर्षसह-स्राण्येकेन्द्रियाणामुत्कर्षतो देशबन्धकाल इति॥ **'पुढविक्काइए'**त्यादि, **'देसबंधे जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं ति-समयऊणं'**ति, कथम् ?, औदारिकशरीरिणां क्षुल्लकभवग्रहणं जघन्यतो जीवितं, तच्च गाथाभिर्निरूप्यते—"दोन्नि सयाइं नियमा छप्पन्नाइं पमाणओ होंति। आवलियपमाणेणं खुड्डागभवग्गहणमेयं॥ १॥ पणसट्ठि सहस्साइं पंचेव सयाइं तह य छत्तीसा। खुड्डागभवग्गहणा हवंति अंतोमुहुत्तेणं॥ २॥ सत्तरस भवग्गहणा खुड्डागा हुंति आणुपाणंमि। तेरस

८ शतके उद्देशः ९ औदारिक बन्धः सू ३४८

॥४००॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

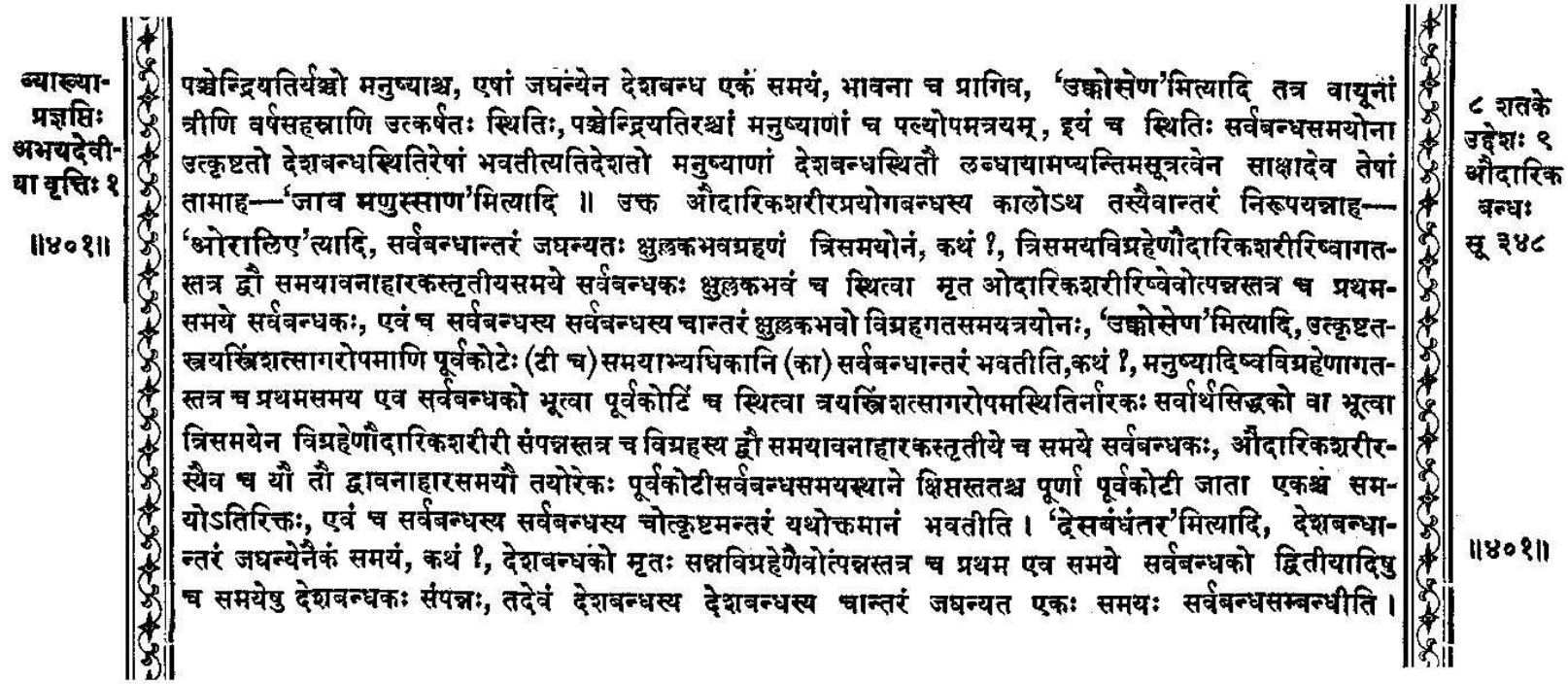
अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांके सू. ३४८ किम लिखितं तत् अहम् न जानामि!!! [यहाँ सूत्र ३४७ चल रहा है, प्रतमे इस सूत्र के बिचमे कोई क्रमांक नहीं बदला, पूज्यपाद सागरानंदसूरीश्वरजी संपादित 'आगममञ्जूषा' में भी यह सूत्र सळंग ही संपादित हुआ है, फिर भी यहाँ दो पृष्ठ तक सू.३४७ लिखा है और बादमे सू.३४८ लिख दिया है, जो की इस प्रत के पृष्ठ ४०७ तक चलता है, बादमे नया सूत्र क्रम ३४९ लिखा है ।]

प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

चेव सयाइं पंचाणउयाइं अंसाणं ॥ ३ ॥ " [यद् आवलिकाप्रमाणेन षट्पञ्चाशदधिके द्वे शते नियमात् भवतः प्रमाणतः क्षुल्लकभवग्रहणमेतत् ॥ १ ॥ पञ्चषष्टिः सहस्राणि षट्त्रिंशदधिकानि पञ्चैव शतानि तथा च क्षुल्लकभवग्रहणानि भवन्त्यन्तर्मुहूर्त्तेन ॥ २ ॥ आनप्राणे सप्तदश क्षुल्लकभवग्रहणानि भवन्ति पञ्चनवत्यधिकानि त्रयोदश शतान्यंशानां (मुहूर्तोच्छ्वासानां) ॥ ३ ॥] इहोक्तलक्षणस्य ६५५३६ मुहूर्त्तगतक्षुल्लकभवग्रहणराशेः, सहस्रत्रयशतसप्तकत्रिसप्ततिलक्षणेन ३७७३ मुहूर्त्तगतोच्छ्वासराशिना भागे हृते यल्लभ्यते तदेकत्रोच्छ्वासे क्षुल्लकभवग्रहणपरिमाणं भवति, तच्च सप्तदश, अवशिष्टस्तूक्तलक्षणोऽंशराशिर्भवतीति, अयमभिप्रायः–येषामंशानां त्रिभिः सहस्रैः सप्तभिश्च त्रिसप्तत्यधिकशतैः क्षुल्लकभवग्रहणं भवति तेषामंशानां पञ्चनवत्यधिकानि त्रयोदश शतानि अष्टादशस्यापि क्षुल्लकभवग्रहणस्य तत्र भवन्तीति, तत्र यः पृथिवीकायिकस्त्रिसमयेन विग्रहेणागतः स तृतीयसमये सर्वबन्धकः शेषेषु देशबन्धको भूत्वा आक्षुल्लकभवग्रहणं मृतः, मृतश्च सन्नविग्रहेणागतो यदा तदा सर्वबन्धक एव भवतीति, एवं च ये ते विग्रहसमयास्त्रयस्तैरूनं क्षुल्लकमित्युच्यते, 'उक्कोसेणं बावीस'मित्यादि भावितमेवेति, 'देसबंधो जेसिं नत्थी'त्यादि, अयमर्थः–असंज्ञिजीवनस्पतिद्वित्रिचतुरिन्द्रियाणां क्षुल्लकभवग्रहणं त्रिसमयोनं जघन्यतो देशबन्धो यतस्तेषां वैक्रियशरीरं नास्ति, वैक्रियशरीरे हि सत्येकसमयो जघन्यत औदारिकदेशबन्धः पूर्वोक्तयुक्त्या स्यादिति, 'उक्कोसेणं जा जस्से'त्यादि तत्रापां वर्षसहस्राणि सप्तोत्कर्षतः स्थितिः, तेजसामहोरात्राणि त्रीणि, वनस्पतीनां वर्षसहस्राणि दश, द्वीन्द्रियाणां द्वादश वर्षाणि त्रीन्द्रियाणामेकोनपञ्चाशदहोरात्राणि चतुरिन्द्रियाणां षण्मासाः, तत एषां सर्वबन्धसमयोना उत्कृष्टतो देशबन्धस्थितिर्भवतीति, 'जेसिं पुणे'त्यादि, ते च वायवः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥४०१॥

पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो मनुष्याश्च, एषां जघन्येन देशबन्ध एकं समयं, भावना च प्रागिव, 'उक्कोसेण'मित्यादि तत्र वायूनां त्रीणि वर्षसहस्राणि उत्कर्षतः स्थितिः, पञ्चेन्द्रियतिरश्चां मनुष्याणां च पल्योपमत्रयम्, इयं च स्थितिः सर्वबन्धसमयोना उत्कृष्टतो देशबन्धस्थितिरेषां भवतीत्यतिदेशतो मनुष्याणां देशबन्धस्थितौ लब्धायामप्यन्तिमसूत्रत्वेन साक्षादेव तेषां तामाह—'जाव मणुस्साण'मित्यादि ॥ उक्त औदारिकशरीरप्रयोगबन्धस्य कालोऽथ तस्यैवान्तरं निरूपयन्नाह— 'ओरालिए'त्यादि, सर्वबन्धान्तरं जघन्यतः क्षुल्लकभवग्रहणं त्रिसमयोनं, कथं ?, त्रिसमयविग्रहेणौदारिकशरीरिष्वागतस्तत्र द्वौ समयावनाहारकस्तृतीयसमये सर्वबन्धकः क्षुल्लकभवं च स्थित्वा मृत ओदारिकशरीरिष्वेवोत्पन्नस्तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धकः, एवं च सर्वबन्धस्य सर्वबन्धस्य चान्तरं क्षुल्लकभवो विग्रहगतसमयत्रयोनः, 'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कृष्टतस्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि पूर्वकोटेः (टी च) समयाभ्यधिकानि (का) सर्वबन्धान्तरं भवतीति,कथं ?, मनुष्यादिष्वविग्रहेणागतस्तत्र च प्रथमसमय एव सर्वबन्धको भूत्वा पूर्वकोटिं च स्थित्वा त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिर्नारकः सर्वार्थसिद्धको वा भूत्वा त्रिसमयेन विग्रहेणौदारिकशरीरी संपन्नस्तत्र च विग्रहस्य द्वौ समयावनाहारकस्तृतीये च समये सर्वबन्धकः, औदारिकशरीरस्यैव च यौ तौ द्वावनाहारसमयौ तयोरेकः पूर्वकोटीसर्वबन्धसमयस्थाने क्षिप्तस्ततश्च पूर्णा पूर्वकोटी जाता एकश्च समयोऽतिरिक्तः, एवं च सर्वबन्धस्य सर्वबन्धस्य चोत्कृष्टमन्तरं यथोक्तमानं भवतीति। 'देसबंधंतर'मित्यादि, देशबन्धान्तरं जघन्येनैकं समयं, कथं ?, देशबन्धको मृतः सन्नविग्रहेणैवोत्पन्नस्तत्र च प्रथम एव समये सर्वबन्धको द्वितीयादिषु च समयेषु देशबन्धकः संपन्नः, तदेवं देशबन्धस्य देशबन्धस्य चान्तरं जघन्यत एकः समयः सर्वबन्धसम्बन्धीति।

८ शतके उद्देशः ९ औदारिक बन्धः सू ३४८

॥४०१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांके सू. ३४८ किम लिखितं तत् अहम् न जानामि!!! [यहाँ सूत्र ३४७ चल रहा है, प्रतमे इस सूत्र के बिचमे कोई क्रमांक नहीं बदला, पूज्यपाद सागरानंदसूरीश्वरजी संपादित 'आगममञ्जूषा' में भी यह सूत्र सळंग ही संपादित हुआ है, फिर भी यहाँ दो पृष्ठ तक सू.३४७ लिखा है और बादमे सू.३४८ लिख दिया है, जो की इस प्रत के पृष्ठ ४०७ तक चलता है, बादमे नया सूत्र क्रम ३४९ लिखा है ।]

प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४८]

दीप अनुक्रम [४२४]

'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कृष्टतस्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि त्रिसमयाधिकानि देशबन्धस्य देशबन्धस्यान्तरं भवतीति, कथं ?, देशबन्धको मृत उत्पन्नश्च त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमायुः सर्वार्थसिद्धादौ, ततश्च च्युत्वा त्रिसमयेन विग्रहेणौदारिकशरीरी संपन्नस्तत्र च विग्रहस्य समयद्वयेऽनाहारकस्तृतीये च समये सर्वबन्धकस्ततो देशबन्धकोऽजनि, एवं चोत्कृष्टमन्तरालं देशबन्धस्य देशबन्धस्य च यथोक्तं भवतीति॥ औदारिकबन्धस्य सामान्यतोऽन्तरमुक्तमथ विशेषतस्तस्य तदाह—'एगिंदिए'त्यादि, एकेन्द्रियस्यौदारिकसर्वबन्धान्तरं जघन्यतः क्षुल्लकभवग्रहणं त्रिसमयोनं, कथं ?, त्रिसमयेन विग्रहेण पृथिव्यादिष्वागतस्तत्र च विग्रहस्य समयद्वयमनाहारकस्तृतीये च समये सर्वबन्धकस्ततः क्षुल्लकं भवग्रहणं त्रिसमयोनं स्थित्वा मृतः अविग्रहेण च यदोत्पद्य सर्वबन्धक एव भवति तदा सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवतीति । 'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कृष्टतः सर्वबन्धान्तरं द्वाविंशतिवर्षसहस्राणि समयाधिकानि भवन्ति, कथम् ?, अविग्रहेण पृथिवीकायिकेष्वागतः प्रथम एव च समये सर्वबन्धकस्ततो द्वाविंशतिवर्षसहस्राणि स्थित्वा समयोनानि विग्रहगत्या त्रिसमययाऽन्येषु पृथिव्यादिषूत्पन्नस्तत्र च समयद्वयमनाहारको भूत्वा तृतीयसमये सर्वबन्धकः संपन्नः, अनाहारकसमययोश्चैको, द्वाविंशतिवर्षसहस्रेषु समयोनेषु क्षिप्तस्तत्पूरणार्थं, ततश्च द्वाविंशतिवर्षसहस्राणि समयश्चैकेन्द्रियाणां सर्वबन्धयोरुत्कृष्टमन्तरं भवतीति । 'देसबंधंतर'मित्यादि तत्रैकेन्द्रियौदारिकदेशबन्धान्तरं जघन्येनैकं समयं, कथं ?, देशबन्धको मृतः सन्नविग्रहेण सर्वबन्धको भूत्वा एकस्मिन् समये पुनर्देशबन्धक एव जातः, एवं च देशबन्धयोर्जघन्यत एकः समयोऽन्तरं भवतीति, 'उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, वायुरौदारिकशरीरस्य देशबन्धकः सन् वैक्रियं गतस्तत्र चान्तर्मुहूर्त्तं स्थित्वा पुनरौदारि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकबन्धः एवं तस्य भेदाः

कशरीरस्य सर्वबन्धको भूत्वा देशबन्धक एव जातः, एवं च देशबन्धयोरुत्कर्षतोऽन्तर्मुहूर्त्तमन्तरमिति ॥ 'पुढविकाइए'-त्यादि, 'देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तिन्नि समय'त्ति, कथं ?, पृथिवीकायिको देशबन्धको मृतः सन्न-विग्रहगत्या पृथिवीकायिकेष्वेवोत्पन्नः एकं समयं च सर्वबन्धको भूत्वा पुनर्देशबन्धको जातः एवमेकसमयो देशबन्धयो-र्जघन्येनान्तरं, तथा पृथिवीकायिको देशबन्धको मृतः सन् त्रिसमयविग्रहेण तेष्वेवोत्पन्नस्तत्र च समयद्वयमनाहारकः तृतीयसमये च सर्वबन्धको भूत्वा पुनर्देशबन्धको जातः, एवं च त्रयः समया उत्कर्षतो देशबन्धयोरन्तरमिति । अथाप्का-यिकादीनां बन्धान्तरमतिदेशत आह–'जहा पुढविकाइयाण'मित्यादि, अत्रैव च सर्वथा समतापरिहारार्थमाह—'नवर'-मित्यादि, एवं चातिदेशतो यल्लब्धं तद्दर्श्यते–अप्कायिकानां जघन्यं सर्वबन्धान्तरं क्षुल्लकभवग्रहणं त्रिसमयोनं उत्कृष्टं तु सप्त वर्षसहस्राणि समयाधिकानि, देशबधान्तरं जघन्यमेकः समय उत्कृष्टं तु त्रयः समयाः, एवं वायुवर्जानां तेजः-प्रभृतीनामपि, नवरमुत्कृष्टं सर्वबन्धान्तरं स्वकीया स्वकीया स्थितिः समयाधिका वाच्या ॥ अथातिदेशे वायुकायिकव-र्जानामित्यनेनातिदिष्टबन्धान्तरेभ्यो वायुबन्धान्तरस्य विलक्षणता सूचितेति वायुबन्धान्तरं भेदेनाह—'वाउक्काइयाण'-मित्यादि, तत्र च वायुकायिकानामुत्कर्षेण देशबन्धान्तरमन्तर्मुहूर्त्तं, कथं ?, वायुरौदारिकशरीरस्य देशबन्धकः सन् वैक्रिय-बन्धमन्तर्मुहूर्त्तं कृत्वा पुनरौदारिकसर्वबन्धसमयानन्तरमौदारिकदेशबन्धं यदा करोति तदा यथोक्तमन्तरं भवतीति ॥ 'पंचिंदिये'त्यादि, तत्र सर्वबन्धान्तरं जघन्यं भावितमेव उत्कृष्टं तु भाव्यते–पञ्चेन्द्रियतिर्यङ् अविग्रहेणोत्पन्नः प्रथम एव च समये सर्वबन्धकस्ततः समयोनां पूर्वकोटिं जीवित्वा विग्रहगत्या त्रिसमयया तेष्वेवोत्पन्नस्तत्र च द्वावनाहारकसमयौ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांके सू. ३४८ किम लिखितं तत् अहम् न जानामि!!! [यहाँ सूत्र ३४७ चल रहा है, प्रतमे इस सूत्र के बिचमे कोई क्रमांक नहीं बदला, पूज्यपाद सागरानंदसूरीश्वरजी संपादित 'आगममञ्जूषा' में भी यह सूत्र सळंग ही संपादित हुआ है, फिर भी यहाँ दो पृष्ठ तक सू.३४७ लिखा है और बादमे सू.३४८ लिख दिया है, जो की इस प्रत के पृष्ठ ४०७ तक चलता है, बादमे नया सूत्र क्रम ३४९ लिखा है ।]

औदारिकबन्ध: एवं तस्य भेदा:

प्रत सूत्रांक [३४८]

दीप अनुक्रम [४२४]

तृतीये च समये सर्वबन्धकः संपन्नः, अनाहारकसमययोश्चैकः समयोनायां पूर्वकोट्यां क्षिप्तस्तत्पूरणार्थमेकस्त्वधिक इत्येवं यथोक्तमन्तरं भवतीति, देशबन्धान्तरं तु यथैकेन्द्रियाणां, तच्चैवं–जघन्यमेकः समयः, कथं ?, देशबन्धको मृतः सर्वबन्धसमयानन्तरं देशबन्धको जात इत्येवं, उत्कर्षेण त्वन्तर्मुहूर्त्तं ?, कथं ?, औदारिकशरीरी देशबन्धकः सन् वैक्रियं प्रतिपन्नस्तत्रान्तर्मुहूर्त्तं स्थित्वा पुनरौदारिकशरीरी जातस्तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको द्वितीयादिषु तु देशबन्धक इत्येवं देशबन्धयोरन्तर्मुहूर्त्तमन्तरमिति, एवं मनुष्याणामपीति, एतदेवाह–'जहा पंचिंदिए'त्यादि ॥ औदारिकबन्धान्तरं प्रकारान्तरेणाह—'जीवे'त्यादि, एकेन्द्रियत्वे 'नोएगिंदियत्ते'त्ति द्वीन्द्रियत्वादौ पुनरेकेन्द्रियत्वे सति यत्सर्वबन्धान्तरं तज्जघन्येन द्वे क्षुल्लकभवग्रहणे त्रिसमयोने, कथम् ?, एकेन्द्रियस्त्रिसमयया विग्रहगत्योत्पन्नस्तत्र च समयद्वयमनाहारको भूत्वा तृतीयसमये सर्वबन्धं कृत्वा तदूनं क्षुल्लकभवग्रहणं जीवित्वा मृतः अनेकेन्द्रियेषु क्षुल्लकभवग्रहणमेव जीवित्वा मृतः सन्नविग्रहेण पुनरेकेन्द्रियेष्वेवोत्पद्य सर्वबन्धको जातः, एवं च सर्वबन्धयोरुक्तमन्तरं जातमिति, 'उक्कोसेणं दो सागरोवमसहस्साइं संखेज्जवासमब्भहियाइं'ति, कथम् ?, अविग्रहेणैकेन्द्रियः समुत्पन्नस्तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा द्वाविंशतिं वर्षसहस्राणि जीवित्वा मृतस्त्रसकायिकेषु चोत्पन्नः, तत्र च सङ्ख्यातवर्षाभ्यधिकसागरोपमसहस्रद्वयरूपामुत्कृष्टत्रसकायिककायस्थितिमतिवाह्य एकेन्द्रियेष्वेवोत्पद्य सर्वबन्धको जात इत्येवं सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवति, सर्वबन्धसमयहीनएकेन्द्रियोत्कृष्टभवस्थितेस्त्रसकायस्थितौ प्रक्षेपणेऽपि सङ्ख्यातस्थानानां सङ्ख्यातभेदत्वेन सङ्ख्यातवर्षाभ्यधिकत्वस्याव्याहतत्वादिति । 'देसबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं समयाहियं'ति, कथम् ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकबन्धः एवं तस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४८]

दीप अनुक्रम [४२४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१ ॥४०३॥

एकेन्द्रियो देशबन्धकः सन् मृत्वा द्वीन्द्रियादिषु क्षुल्लकभवग्रहणमनुभूयाविग्रहेण चागत्य प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा द्वितीये देशबन्धको भवति, एवं च देशबन्धान्तरं क्षुल्लकभवः सर्वबन्धसमयातिरिक्तः, 'उक्कोसेण'मित्यादि सर्वबन्धान्तर-भावनोक्तप्रकारेण भावनीयमिति ॥ अथ पृथिवीकायिकबन्धान्तरं चिन्तयन्नाह—'जीवस्से'त्यादि, 'एवं चेव'त्ति करणात् 'तिसमयऊणाइं'ति दृश्यम्, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं'ति, इह कालानन्तत्वं वनस्पतिकायस्थितिकालापेक्षयाऽनन्तकालमित्युक्तं तद्विभजनार्थमाह—'अणंताओ'इत्यादि, अयमभिप्रायः—तस्यानन्तस्य कालस्य समयेषु अवसर्प्पिण्युत्सर्प्पिणीसमयैरपहियमाणेष्वनन्ता अवसर्प्पिण्युत्सर्प्पिण्यो भवन्तीति, 'कालओ'त्ति इदं कालापेक्षया मानं, 'खेत्तओ'त्ति क्षेत्रापेक्षया पुनरिदम्—'अणंता लोग'त्ति, अयमर्थः—तस्यानन्तकालस्य समयेषु लोकाकाशप्रदेशैरपहियमाणेष्वनन्ता लोका भवन्ति, अथ तत्र कियन्तः पुद्गलपरावर्त्ता भवन्ति ? इत्यत आह—'असंखेज्जे'त्यादि, पुद्गलपरावर्त्तलक्षणं सामान्येन पुनरिदं—दशभिः कोटीकोटीभिरद्धापल्योपमानामेकं सागरोपमं दशभिः सागरोपमकोटीकोटीभिरवसर्प्पिणी, उत्सर्प्पिण्यप्येवमेव, ता अवसर्प्पिण्युत्सर्प्पिण्योऽनन्ताः पुद्गलपरावर्तः, एतद्विशेषलक्षणं तु इहैव वक्ष्यतीति, पुद्गलपरावर्त्तानामेवासङ्ख्यातत्वनियमनायाह—'आवलिए'त्यादि, असङ्ख्यातसमयसमुदायश्चावलिकेति । 'देसबंधंतरं जहन्नेण'मित्यादि, भावना त्वेवं—पृथिवीकायिको देशबन्धकः सन्मृतः पृथिवीकायिकेषु क्षुल्लकभवग्रहणं जीवित्वा मृतः सन् पुनरविग्रहेण पृथिवीकायिकेष्वेवोत्पन्नः, तत्र च सर्वबन्धसमयानन्तरं देशबन्धको जातः, एवं च सर्वबन्धसमयेनाधिकमेकं क्षुल्लकभवग्रहणं देशबन्धयोरन्तरमिति । 'वणस्सइकाइयाणं दोन्नि खुड्डाइं'ति वनस्पतिकायिकानां जघन्यतः सर्वबन्धा-

८ शतके उद्देशः९ औदारिक बन्धः सू ३४८

॥४०३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांके सू. ३४८ किम लिखितं तत् अहम् न जानामि!!! [यहाँ सूत्र ३४७ चल रहा है, प्रतमे इस सूत्र के बिचमे कोई क्रमांक नहीं बदला, पूज्यपाद सागरानंदसूरीश्वरजी संपादित 'आगममञ्जूषा' में भी यह सूत्र सळंग ही संपादित हुआ है, फिर भी यहाँ दो पृष्ठ तक सू.३४७ लिखा है और बादमे सू.३४८ लिख दिया है, जो की इस प्रत के पृष्ठ ४०७ तक चलता है, बादमे नया सूत्र क्रम ३४९ लिखा है ।]

औदारिकबन्ध: एवं तस्य भेदा:

प्रत सूत्रांक [३४८]

दीप अनुक्रम [४२४]

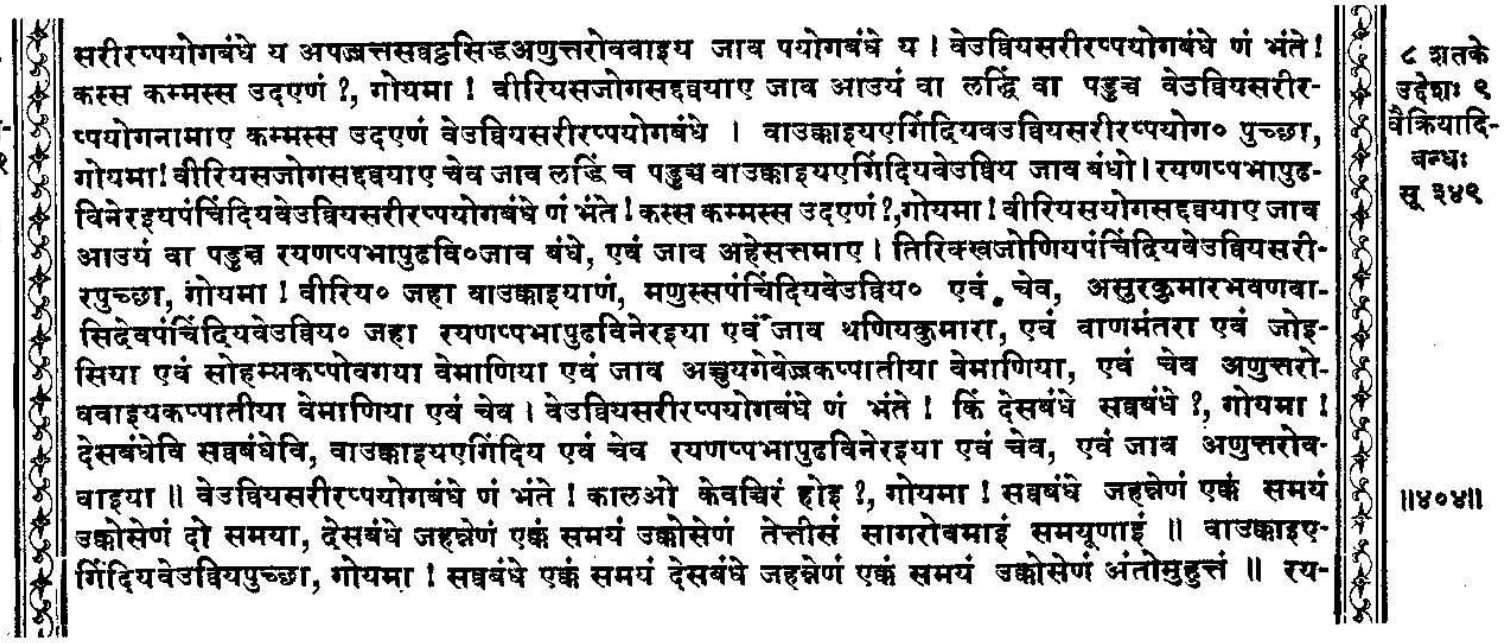
न्तरं द्वे क्षुल्लके भवग्रहणे 'एवं चेव'त्तिकरणात्त्रिसमयोने इति द्रष्टव्यम्, एतद्भावना च वनस्पतिकायिकस्त्रिसमयेन विग्रहेणोत्पन्नः तत्र च विग्रहस्य समयद्वयमनाहारकस्तृतीये समये च सर्वबन्धको भूत्वा क्षुल्लकभवं च जीवित्वा पुनः पृथिव्यादिषु क्षुल्लकभवमेव स्थित्वा पुनरविग्रहेण वनस्पतिकायिकेष्वेवोत्पन्नः प्रथमसमये च सर्वबन्धकोऽसाविति सर्वबन्धयोस्त्रिसमयोने द्वे क्षुल्लकभवग्रहणे अन्तरं भवत इति। 'उक्कोसेण'मित्यादि, अयं च पृथिव्यादिषु कायस्थितिकालः 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति यथा पृथिव्यादीनां देशबन्धान्तरं जघन्यमेवं वनस्पतेरपि, तच्च क्षुल्लकभवग्रहणं समयाधिकं, भावना चास्य पूर्ववत्, 'उक्कोसेणं पुढविकालो'त्ति उत्कर्षेण वनस्पतेर्देशबन्धान्तरं 'पृथिवीकालः' पृथिवीकायस्थितिकालोऽसङ्ख्यातावसर्प्पिण्युत्सर्प्पिण्यादिरूप इति ॥ अथौदारिकदेशबन्धकादीनामल्पत्वादिनिरूपणायाह—'एएसी'त्यादि, तत्र सर्वस्तोकाः सर्वबन्धकास्तेषामुत्पत्तिसमय एव भावात्, अबन्धका विशेषाधिकाः, यतो विग्रहगतौ सिद्धत्वादौ च ते भवन्ति, ते च सर्वबन्धकापेक्षया विशेषाधिकाः, देशबन्धका असङ्ख्यातगुणाः, देशबन्धकालस्यासङ्ख्यातगुणत्वात्, एतस्य च सूत्रस्य भावनां विशेषतोऽग्रे वक्ष्याम इति ॥ अथ वैक्रियशरीरप्रयोगबन्धनिरूपणायाह—

वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! दुविहे पन्नत्ते, तंजहा—एगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे य पंचिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे य। जइ एगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे किं वाउक्काइयएगिंदियसरीरप्पयोगबंधे य अवाउक्काइयएगिंदिय० एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओगाहणसंठाणे वेउव्वियसरीरभेदो तहा भाणियव्वो जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयकप्पातीयवेमाणियदेवपंचिंदियवेउव्विय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकबन्धः एवं तस्य भेदाः,

वैक्रिय-प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥४०४॥

सरीरप्पयोगबंधे य अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव पयोगबंधे य । वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए जाव आउयं वा लद्धिं वा पडुच्च वेउव्वियसरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे । वाउक्काइयएगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोग० पुच्छा, गोयमा! वीरियसजोगसद्दव्वयाए चेव जाव लद्धिं च पडुच्च वाउक्काइयएगिंदियवेउव्विय जाव बंधो। रयणप्पभापुढविनेरइयपंचिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कस्स कम्मस्स उदएणं ?,गोयमा! वीरियसयोगसद्दव्वयाए जाव आउयं वा पडुच्च रयणप्पभापुढवि०जाव बंधे, एवं जाव अहेसत्तमाए। तिरिक्खजोणियपंचिंदियवेउव्वियसरीरपुच्छा, गोयमा ! वीरिय० जहा वाउक्काइयाणं, मणुस्सपंचिंदियवेउव्विय० एवं चेव, असुरकुमारभवणवासिदेवपंचिंदियवेउव्विय० जहा रयणप्पभापुढविनेरइया एवं जाव थणियकुमारा, एवं वाणमंतरा एवं जोइसिया एवं सोहम्मकप्पोवगया वेमाणिया एवं जाव अच्चुयगेवेज्जकप्पातीया वेमाणिया, एवं चेव अणुत्तरोववाइयकप्पातीया वेमाणिया एवं चेव। वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, गोयमा ! देसबंधेवि सव्वबंधेवि, वाउक्काइयएगिंदिय एवं चेव रयणप्पभापुढविनेरइया एवं चेव, एवं जाव अणुत्तरोववाइया ॥ वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं दो समया, देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं समयूणाइं ॥ वाउक्काइयएगिंदियवेउव्वियपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं ॥ रय-

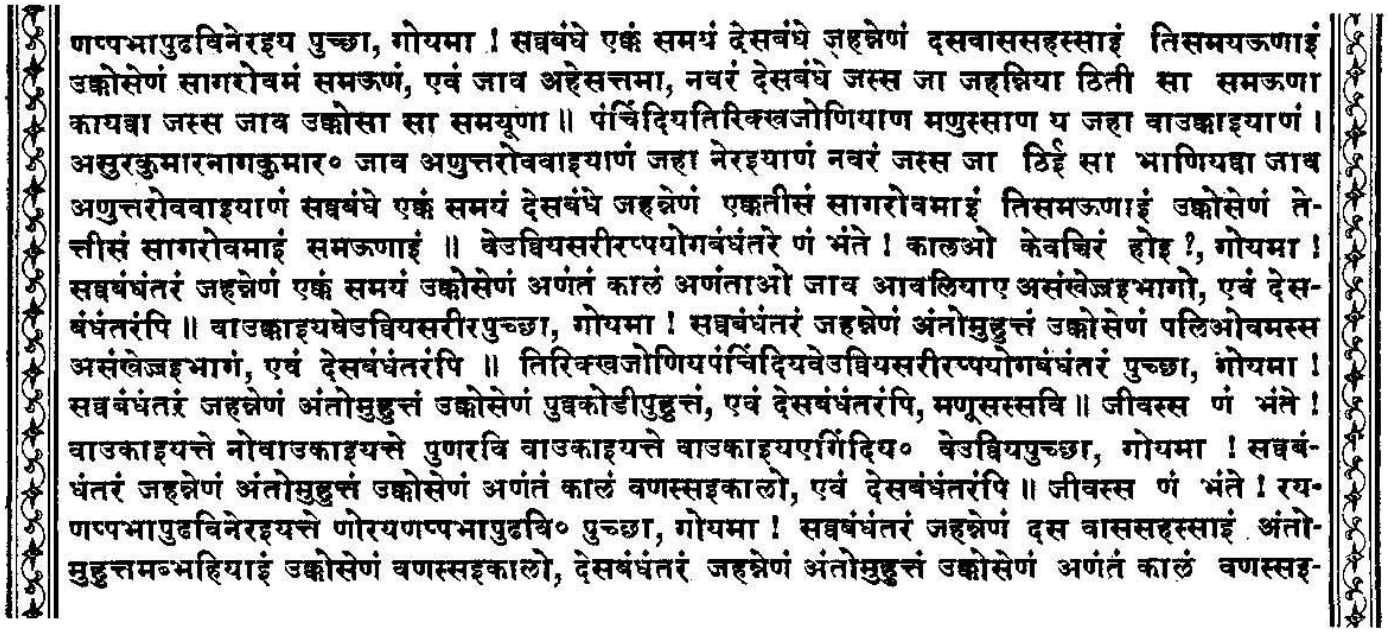
८ शतके उद्देशः ९ वैक्रियादि-बन्धः सू ३४९

॥४०४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वैक्रिय-प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४९] दीप अनुक्रम [४२५]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः



णप्पभापुढविनेरइय पुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं देसबंधे जहन्नेणं दसवाससहस्साइं तिसमयऊणाइं उक्कोसेणं सागरोवमं समऊणं, एवं जाव अहेसत्तमा, नवरं देसबंधे जस्स जा जहन्निया ठिती सा समऊणा कायव्वा जस्स जाव उक्कोसा सा समयूणा ॥ पंचिंदियतिरिक्खजोणियाण मणुस्साण य जहा वाउक्काइयाणं । असुरकुमारनागकुमार० जाव अणुत्तरोववाइयाणं जहा नेरइयाणं नवरं जस्स जा ठिई सा भाणियव्वा जाव अणुत्तरोववाइयाणं सव्वबंधे एक्कं समयं देसबंधे जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं तिसमऊणाइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं समऊणाइं ॥ वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधंतरे णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अणंतं कालं अणंताओ जाव आवलियाए असंखेज्जइभागो, एवं देसबंधंतरंपि ॥ वाउक्काइयवेउव्वियसरीरपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं, एवं देसबंधंतरंपि ॥ तिरिक्खजोणियपंचिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधंतरं पुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडीपुहुत्तं, एवं देसबंधंतरंपि, मणूससस्सवि ॥ जीवस्स णं भंते ! वाउकाइयत्ते नोवाउकाइयत्ते पुणरवि वाउकाइयत्ते वाउकाइयएगिंदिय० वेउव्वियपुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो, एवं देसबंधंतरंपि ॥ जीवस्स णं भंते ! रयणप्पभापुढविनेरइयत्ते णोरयणप्पभापुढवि० पुच्छा, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं वणस्सइकालो, देसबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वैक्रिय-प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

प्रत सूत्रांक [३४९]

दीप अनुक्रम [४२५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥४०५॥

कालो, एवं जाव अहेसत्तमाए, नवरं जा जस्स ठिती जहन्निया सा सवबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तमब्भहिया कायवा, सेसं तं चेव, पंचिंदियतिरिक्खजोणियमणुस्साण य जहा वाउक्काइयाणं । असुरकुमारनागकुमार जाव सहस्सारदेवाणं एएसिं जहा रयणप्पभापुढविनेरइयाणं नवरं सवबंधंतरे जस्स जा ठिती जहन्निया सा अंतोमुहुत्तमब्भहिया कायवा, सेसं तं चेव ॥ जीवस्स णं भंते ! आणयदेवत्ते नोआणयपुच्छा, गोयमा ! सवबंधंतरं जहन्नेणं अट्ठारस सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो, देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो, एवं जाव अच्चुए नवरं जस्स जा ठिती सा सवबंधंतरं जह० वासपुहुत्तमब्भहिया कायवा सेसं तं चेव। गेवेज्जकप्पातीयपुच्छा, गोयमा ! सवबंधंतरं जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो, देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहुत्तं उक्कोसेणं वणस्सइकालो ॥ जीवस्स णं भंते ! अणुत्तरोववातियपुच्छा, गोयमा ! सवबंधंतरं जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं वासपुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं संखेज्जाइं सागरोवमाइं, देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहुत्तं उक्कोसेणं संखेज्जाइं सागरोवमाइं ॥ एएसि णं भंते ! जीवाणं वेउव्वियसरीरस्स देसबंधगाणं सवबंधगाणं अबंधगाण य कयरे२हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सवत्थोवा जीवा वेउव्वियसरीरस्स सवबंधगा देसबंधगा असंखेज्जगुणा अबंधगा अणंतगुणा ॥ आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! एगागारे पण्णत्ते। जइ एगागारे पण्णत्ते किं मणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे किं अमणुस्साहा-

८ शतके उद्देशः ९ वैक्रियादि-बन्धः सू ३४९

॥४०५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

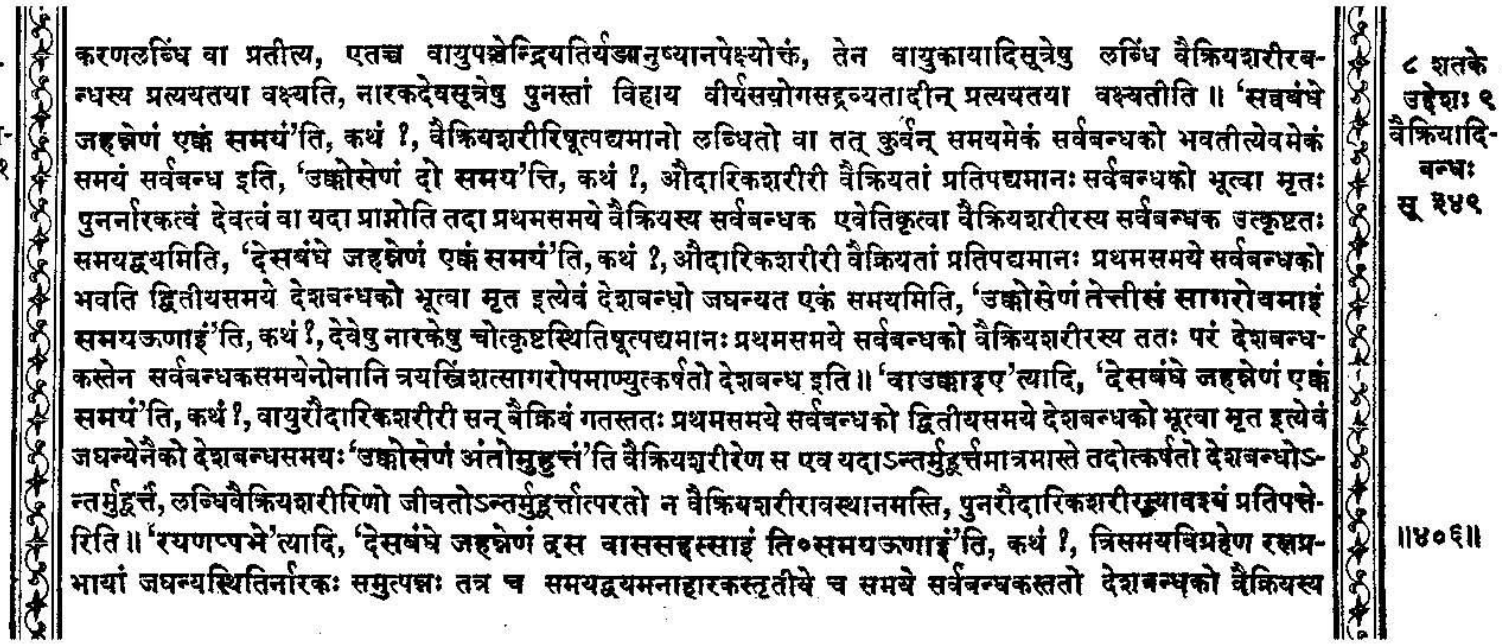
वैक्रिय-प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः

रगसरीरप्पयोगबंधे ?, गोयमा ! मणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे नो अमणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे, एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओगाहणसंठाणे जाव इड्ढिपत्तपमत्तसंजयसम्मद्दिट्ठिपज्जत्तसंखेज्जवासाउयकम्मभूमिगगब्भवक्कंतियमणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे णो अणिड्ढिपत्तपमत्त जाव आहारगसरीरप्पयोगबंधे । आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! वीरियसयोगसद्दव्वयाए जाव लद्धिं पडुच्च आहारगसरीरप्पयोगणामाए कम्मस्स उदएणं आहारगसरीरप्पयोगबंधे । आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?; गोयमा ! देसबंधेवि सव्वबंधेवि । आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं देसबंधे जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं ॥ आहारगसरीरप्पयोगबंधंतरे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं अणंताओ ओसप्पिणिउस्सप्पिणीओ कालओ खेत्तओ अणंता लोया अवड्ढपोग्गलपरियट्टं देसूणं, एवं देसबंधंतरंपि ॥ एएसि णं भंते ! जीवाणं आहारगसरीरस्स देसबंधगाणं सव्वबंधगाण अबंधगाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा आहारगसरीरस्स सव्वबंधगा देसबंधगा संखेज्जगुणा अबंधगा अणंतगुणा ३ ॥ (सूत्रं ३४९) ॥

तत्र 'एगिंदियवेउविए'त्यादि वायुकायिकापेक्षमुक्तं, 'पंचिंदिए'त्यादि तु पञ्चेन्द्रियतिर्यङ्मनुष्यदेवनारकापेक्षमिति । 'वीरिये'त्यादौ यावत्करणात् 'पमायपच्चया कम्मं च जोगं च भवं चे'ति द्रष्टव्यं 'लद्धिं व'त्ति वैक्रिय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आहारक-प्रयोगबन्धः एवं तस्य भेदाः



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥४०६॥

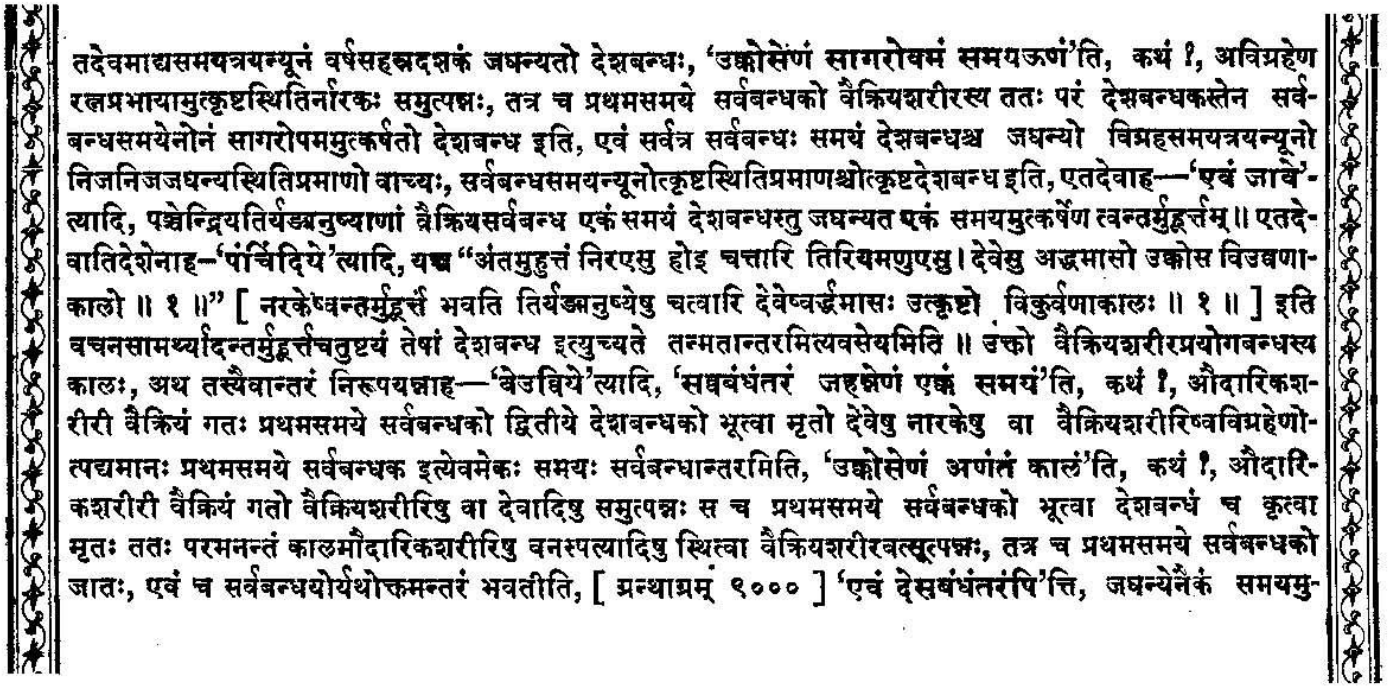
करणलब्धिं वा प्रतीत्य, एतच्च वायुपञ्चेन्द्रियतिर्यङ्मनुष्यानपेक्ष्योक्तं, तेन वायुकायादिसूत्रेषु लब्धिं वैक्रियशरीरबन्धस्य प्रत्ययतया वक्ष्यति, नारकदेवसूत्रेषु पुनस्तां विहाय वीर्यसयोगसद्द्रव्यतादीन् प्रत्ययतया वक्ष्यतीति ॥ 'सव्वबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथं ?, वैक्रियशरीरिषूत्पद्यमानो लब्धितो वा तत् कुर्वन् समयमेकं सर्वबन्धको भवतीत्येवमेकं समयं सर्वबन्ध इति, 'उक्कोसेणं दो समय'त्ति, कथं ?, औदारिकशरीरी वैक्रियतां प्रतिपद्यमानः सर्वबन्धको भूत्वा मृतः पुनर्नारकत्वं देवत्वं वा यदा प्राप्नोति तदा प्रथमसमये वैक्रियस्य सर्वबन्धक एवेतिकृत्वा वैक्रियशरीरस्य सर्वबन्धक उत्कृष्टतः समयद्वयमिति, 'देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथं ?, औदारिकशरीरी वैक्रियतां प्रतिपद्यमानः प्रथमसमये सर्वबन्धको भवति द्वितीयसमये देशबन्धको भूत्वा मृत इत्येवं देशबन्धो जघन्यत एकं समयमिति, 'उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं समयऊणाइं'ति, कथं ?, देवेषु नारकेषु चोत्कृष्टस्थितिषूत्पद्यमानः प्रथमसमये सर्वबन्धको वैक्रियशरीरस्य ततः परं देशबन्धकस्तेन सर्वबन्धकसमयेनोनानि त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्युत्कर्षतो देशबन्ध इति ॥ 'वाउक्काइए'त्यादि, 'देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथं ?, वायुरौदारिकशरीरी सन् वैक्रियं गतस्ततः प्रथमसमये सर्वबन्धको द्वितीयसमये देशबन्धको भूत्वा मृत इत्येवं जघन्येनैको देशबन्धसमयः 'उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं'ति वैक्रियशरीरेण स एव यदाऽन्तर्मुहूर्त्तमात्रमास्ते तदोत्कर्षतो देशबन्धोऽन्तर्मुहूर्त्तं, लब्धिवैक्रियशरीरिणो जीवतोऽन्तर्मुहूर्त्तात्परतो न वैक्रियशरीरावस्थानमस्ति, पुनरौदारिकशरीरमवश्यं प्रतिपत्तेरिति ॥ 'रयणप्पभे'त्यादि, 'देसबंधे जहन्नेणं दस वाससहस्साइं ति०समयऊणाइं'ति, कथं ?, त्रिसमयविग्रहेण रत्नप्रभायां जघन्यस्थितिर्नारकः समुत्पन्नः तत्र च समयद्वयमनाहारकस्तृतीये च समये सर्वबन्धकस्ततो देशबन्धको वैक्रियस्य

८ शतके उद्देशः ९ वैक्रियादि-बन्धः सू ३४९

॥४०६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकआदि शरीर-प्रयोगबन्धस्य व्याख्या:



तदेवमाद्यसमयत्रयन्यूनं वर्षसहस्रदशकं जघन्यतो देशबन्धः, 'उक्कोसेणं सागरोवमं समयऊणं'ति, कथं ?, अविग्रहेण रत्नप्रभायामुत्कृष्टस्थितिर्नारकः समुत्पन्नः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको वैक्रियशरीरस्य ततः परं देशबन्धकस्तेन सर्वबन्धसमयेनोनं सागरोपममुत्कर्षतो देशबन्ध इति, एवं सर्वत्र सर्वबन्धः समयं देशबन्धश्च जघन्यो विग्रहसमयत्रयन्यूनो निजनिजजघन्यस्थितिप्रमाणो वाच्यः, सर्वबन्धसमयन्यूनोत्कृष्टस्थितिप्रमाणश्चोत्कृष्टदेशबन्ध इति, एतदेवाह—'एवं जावे'त्यादि, पञ्चेन्द्रियतिर्यङ्मनुष्याणां वैक्रियसर्वबन्ध एकं समयं देशबन्धस्तु जघन्यत एकं समयमुत्कर्षेण त्वन्तर्मुहूर्त्तम् ॥ एतदेवातिदेशेनाह—'पंचिंदिये'त्यादि, यच्च "अंतमुहुत्तं निरएसु होइ चत्तारि तिरियमणुएसु। देवेसु अद्धमासो उक्कोस विउव्वणाकालो ॥ १ ॥" [नरकेष्वन्तर्मुहूर्त्तं भवति तिर्यङ्मनुष्येषु चत्वारि देवेष्वर्द्धमासः उत्कृष्टो विकुर्वणाकालः ॥ १ ॥] इति वचनसामर्थ्यादन्तर्मुहूर्त्तचतुष्टयं तेषां देशबन्ध इत्युच्यते तन्मतान्तरमित्यवसेयमिति ॥ उक्तो वैक्रियशरीरप्रयोगबन्धस्य कालः, अथ तस्यैवान्तरं निरूपयन्नाह—'वेउव्विये'त्यादि, 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं'ति, कथं ?, औदारिकशरीरी वैक्रियं गतः प्रथमसमये सर्वबन्धको द्वितीये देशबन्धको भूत्वा मृतो देवेषु नारकेषु वा वैक्रियशरीरिष्वविग्रहेणोत्पद्यमानः प्रथमसमये सर्वबन्धक इत्येवमेकः समयः सर्वबन्धान्तरमिति, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं'ति, कथं ?, औदारिकशरीरी वैक्रियं गतो वैक्रियशरीरिषु वा देवादिषु समुत्पन्नः स च प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा देशबन्धं च कृत्वा मृतः ततः परमनन्तं कालमौदारिकशरीरिषु वनस्पत्यादिषु स्थित्वा वैक्रियशरीरवत्सूत्पन्नः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको जातः, एवं च सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवतीति, [ग्रन्थाग्रम् ९०००] 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति, जघन्येनैकं समयमु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकआदि शरीर-प्रयोगबन्धस्य व्याख्या:

त्कृष्टतोऽनन्तं कालमित्यर्थः, भावना चास्य पूर्वोक्तानुसारेणेति ॥ 'वाउक्काइए'त्यादि 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, वायुरौदारिकशरीरी वैक्रियमापन्नः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा मृतः पुनर्वायुरेव जातः, तस्य चापर्याप्तकस्य वैक्रियशक्तिर्नाविर्भवतीत्यन्तर्मुहूर्त्तमात्रेणासौ पर्याप्तको भूत्वा वैक्रियशरीरमारभते, तत्र चासौ प्रथमसमये सर्वबन्धको जात इत्येवं सर्वबन्धान्तरमन्तर्मुहूर्त्तमिति, 'उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं'ति, कथं ?, वायुरौदारिकशरीरी वैक्रियं गतः, तत्प्रथमसमये च सर्वबन्धकस्ततो देशबन्धको भूत्वा मृतस्ततः परमौदारिकशरीरिषु वायुषु पल्योपमासङ्ख्येयभागमतिवाह्यावश्यं वैक्रियं करोति, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धकः, एवं च सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवतीति, 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति, अस्य भावना प्रागिवेति । 'तिरिक्खे'त्यादि, 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिको वैक्रियं गतः तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धकस्ततः परं देशबन्धकोऽन्तर्मुहूर्त्तमात्रं तत औदारिकस्य सर्वबन्धको भूत्वा समयं देशबन्धको जातः पुनरपि श्रद्धेयमुत्पन्ना वैक्रियं करोमीति पुनर्वैक्रियं कुर्वतः प्रथमसमये सर्वबन्धः, एवं च सर्वबन्धयोर्यथोक्तमन्तरं भवतीति, 'उक्कोसेणं पुव्वकोडिपुहुत्तं'ति, कथं ?, पूर्वकोट्यायुः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिको वैक्रियं गतः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धकस्ततो देशबन्धको भूत्वा कालान्तरे मृतस्तत्र पूर्वकोट्यायुः पञ्चेन्द्रियतिर्यक्ष्वेवोत्पन्नः पूर्वजन्मना सह सप्ताष्टौ वा वारान्, ततः सप्तमेऽष्टमे वा भवे वैक्रियं गतः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धं कृत्वा देशबन्धं करोतीति, एवं च सर्वबन्धयोरुत्कृष्टं यथोक्तमन्तरं भवतीति, 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति, भावना चास्य सर्वबन्धान्तरोक्तभावनानुसारेण कर्त्तव्येति ॥ वैक्रियशरीरबन्धान्तरमेव प्रकारान्तरेण चिन्तयन्नाह—'जीवस्से'-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकआदि शरीर-प्रयोगबन्धस्य व्याख्या:

त्यादि, 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, वायुर्वैक्रियशरीरं प्रतिपन्नः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको भूत्वा मृतस्ततः पृथिवीकायिकेषूत्पन्नः तत्रापि क्षुल्लकभवग्रहणमात्रं स्थित्वा पुनर्वायुर्जातः, तत्रापि कतिपयान् क्षुल्लकभवान् स्थित्वा वैक्रियं गतः, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धको जातस्ततश्च वैक्रियस्य सर्वबन्धयोरन्तरं बहवः क्षुल्लकभवास्ते च बहवोऽप्यन्तर्मुहूर्त्तं, अन्तर्मुहूर्त्ते बहूनां क्षुल्लकभवानां प्रतिपादितत्वात्, ततश्च सर्वबन्धान्तरं यथोक्तं भवतीति, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो'त्ति, कथं ?, वायुर्वैक्रियशरीरीभवन् मृतो वनस्पत्यादिष्वनन्तं कालं स्थित्वा वैक्रियशरीरं पुनर्यदा लप्स्यते तदा यथोक्तमन्तरं भविष्यतीति, 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति, भावना चास्य प्रागुक्तानुसारेणेति ॥ रत्नप्रभासूत्रे 'सव्वबंधंतर'मित्यादि, एतद्भाव्यते–रत्नप्रभानारको दशवर्षसहस्रस्थितिक उत्पन्नो सर्वबन्धकः तत उद्वृत्तस्तु गर्भजपञ्चेन्द्रियेष्वन्तर्मुहूर्त्तं स्थित्वा रत्नप्रभायां पुनरप्युत्पन्नः तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धक इत्येवं सूत्रोक्तं जघन्यमन्तरं सर्वबन्धयोरिति, अयं च यदाऽपि प्रथमोत्पत्तौ त्रिसमयविग्रहेणोत्पद्यते तदापि न दश वर्षसहस्राणि त्रिसमयन्यूनानि भवन्ति, अन्तर्मुहूर्त्तस्य मध्यात्समयत्रयस्य तत्र प्रक्षेपात्, न च तत्प्रक्षेपेऽप्यन्तर्मुहूर्त्तस्यान्तर्मुहूर्त्तत्वव्याघातस्तस्यानेकभेदत्वादिति, 'उक्कोसेणं वणस्सइकालो'त्ति, कथं ?, रत्नप्रभानारक उत्पन्नो सर्वबन्धकः तत उद्वृत्तश्चानन्तं कालं वनस्पत्यादिषु स्थित्वा पुनस्तत्रैवोत्पद्यमानः सर्वबन्धक इत्येवमुत्कृष्टमन्तरमिति, 'देसबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, रत्नप्रभानारको देशबन्धकः सन् मृतोऽन्तर्मुहूर्त्तायुः पञ्चेन्द्रियतिर्यक्तयोत्पद्य मृत्वा रत्नप्रभानारकतयोत्पन्नः, तत्र च द्वितीयसमये देशबन्धक इत्येवं जघन्यं देशबन्धान्तरमिति, 'उक्कोसेण'मित्यादि, भावना प्रागुक्तानुसारेणेति । शर्कराप्रभादिनारकाणां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकआदि शरीर-प्रयोगबन्धस्य व्याख्या:

वैक्रियशरीरबन्धान्तरमतिदेशतः सङ्ग्रहार्थमाह—'एवं जावे'त्यादि, द्वितीयादिपृथिवीषु च जघन्या स्थितिः क्रमेणैकं त्रीणि सप्त दश सप्तदश द्वाविंशतिश्च सागरोपमाणीति । 'पंचिंदिए'त्यादौ 'जहा वाउकाइयाणं'ति जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तमुत्कृष्टतः पुनरनन्तं कालमित्यर्थः । असुरकुमारदयस्तु सहस्रारान्ता देवा उत्पत्तिसमये सर्वबन्धं कृत्वा स्वकीयां च जघन्यस्थितिमनुपाल्य पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षु जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तायुष्कत्वेन समुत्पद्य मृत्वा च तेष्वेव सर्वबन्धका जाताः, एवं च तेषां वैक्रियस्य जघन्यं सर्वबन्धान्तरं जघन्या तत्स्थितिरन्तर्मुहूर्त्ताधिका वक्तव्या, उत्कृष्टं त्वनन्तं कालं, यथा रत्नप्रभानारकाणामिति, एतद्दर्शनायाह—'असुरकुमारे'त्यादि, तत्र जघन्या स्थितिरसुरकुमारादीनां व्यन्तराणां च दश वर्षसहस्राणि ज्योतिष्काणां पल्योपमाष्टभागः सौधर्मादिषु तु "पलियमहियं दो सार साहिया सत्तदस य चोद्दस य सतरस य" इत्यादि ॥ आनतसूत्रे 'सव्वबंधंतर'मित्यादि, एतस्य भावना आनतकल्पीयो देव उत्पत्तौ सर्वबन्धकः, स चाष्टादशसागरोपमाणि तत्र स्थित्वा ततश्च्युतो वर्षपृथक्त्वं मनुष्येषु स्थित्वा पुनस्तत्रैवोत्पन्नः प्रथमसमये चासौ सर्वबन्धक इत्येवं सर्वबन्धान्तरं जघन्यमष्टादश सागरोपमाणि वर्षपृथक्त्वाधिकानीति, उत्कृष्टं त्वनन्तं कालं, कथं ?, स एव तस्माच्च्युतोऽनन्तं कालं वनस्पत्यादिषु स्थित्वा पुनस्तत्रैवोत्पन्नः प्रथमसमये चासौ सर्वबन्धक इत्येवमिति, 'देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहुत्तं'ति, कथं ?, स एव देशबन्धकः संश्च्युतो वर्षपृथक्त्वं मनुष्यत्वमनुभूय पुनस्तत्रैव गतस्तस्य च सर्वबन्धानन्तरं देशबन्ध इत्येवं सूत्रोक्तमन्तरं भवति, इह च यद्यपि सर्वबन्धसमयाधिकं वर्षपृथक्त्वं भवति तथाऽपि तस्य वर्षपृथक्त्वादनर्थान्तरत्वविवक्षया न भेदेन गणनमिति । एवं प्राणतारणाच्युतग्रैवेयकसूत्राण्यपि ज्ञेयानि । अथ सनत्कुमारा-

॥४०८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकआदि शरीर-प्रयोगबन्धस्य व्याख्या:

दिसहस्सारान्ता देवा जघन्यतो नवदिनायुष्केभ्यः आनताद्यच्युतान्तास्तु नवमासायुष्केभ्यः समुत्पद्यन्त इति जीवसमासेऽभिधीयते, ततश्च जघन्यं तत्सर्वबन्धान्तरं तत्तदधिकतज्जघन्यस्थितिरूपं प्राप्नोतीति, सत्यमेतत्, केवलं मतान्तरमेवेदमिति ॥ अनुत्तरविमानसूत्रेतु 'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कृष्टं सर्वबन्धान्तरं देशबन्धान्तरं च सङ्ख्यातानि सागरोपमाणि, यतो नानन्तकालमनुत्तरविमानच्युतः संसरति, तानि च जीवसमासमतेन द्विसङ्ख्यानीति ॥ अथ वैक्रियशरीरदेशबन्धकादीनामल्पत्वादिनिरूपणायाह—'एएसी'त्यादि, तत्र सर्वस्तोका वैक्रियसर्वबन्धकास्तत्कालस्याल्पत्वात्, देशबन्धका असङ्ख्यातगुणास्तत्कालस्य तदपेक्षयाऽसङ्ख्येयगुणत्वात्, अबन्धकास्त्वनन्तगुणाः सिद्धानां वनस्पत्यादीनां च तदपेक्षयाऽनन्तगुणत्वादिति ॥ अथाहारकशरीरप्रयोगबन्धमधिकृत्याह—'आहारे'त्यादि, 'एगागारे'त्ति एकः प्रकारो नौदारिकादिबन्धवदेकेन्द्रियाद्यनेकप्रकार इत्यर्थः, 'सव्वबंधे एक्कं समयं'ति आद्यसमय एव सर्वबन्धभावात्, 'देसबंधे जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, जघन्यत उत्कर्षतश्चान्तर्मुहूर्त्तमात्रमेवाहारकशरीरी भवति, परतऔदारिकशरीरस्यावश्यं ग्रहणात्, तत्र चान्तर्मुहूर्त्ते आद्यसमये सर्वबन्धः उत्तरकालं च देशबन्ध इति ॥ अथाहारकशरीरप्रयोगबन्धस्यैवान्तरनिरूपणायाह—'आहारे'त्यादि, 'सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, मनुष्य आहारकशरीरं प्रतिपन्नस्तत्प्रथमसमये च सर्वबन्धकस्ततोऽन्तर्मुहूर्त्तमात्रं स्थित्वौदारिकशरीरं गतस्तत्राप्यन्तर्मुहूर्त्तं स्थितः, पुनरपि च तस्य संशयादि आहारकशरीरकरणकारणमुत्पन्नं ततः पुनरप्याहारकशरीरं गृह्णाति, तत्र च प्रथमसमये सर्वबन्धक एवेति, एवं च सर्वबन्धान्तरमन्तर्मुहूर्त्तं, द्वयोरप्यन्तर्मुहूर्त्तयोरेकत्वविवक्षणादिति, 'उक्कोसेणं अणंतं कालं'ति;

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकआदि शरीर-प्रयोगबन्धस्य व्याख्या:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३४९]

दीप अनुक्रम [४२५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः१

॥४०९॥

कथं ?, यतोऽनन्तकालादाहारकशरीरं पुनर्लभत इति, कालानन्त्यमेव विशेषेणाह—'अणंताओ उस्सप्पिणीओ ओ-स्सप्पिणीओ कालओ खेत्तओ अणंता लोग'त्ति, एतद्व्याख्यानं च प्राग्वत् । अथ तत्र पुद्गलपरावर्त्तपरिमाणं किं भवति ? इत्याह—'अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं'ति, 'अपार्धम्' अपगतार्द्धमर्द्धमात्रमित्यर्थः 'पुद्गलपरावर्त्तं' प्रागु-क्तस्वरूपम्, अपार्द्धमप्यर्द्धतः पूर्णं स्यादत आह–देशोनमिति । 'एवं देसबंधंतरंपि'त्ति जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तमुत्कर्षतः पुन-रपार्द्धं पुद्गलपरावर्त्तं देशोनं, भावना तु पूर्वोक्तानुसारेणेति ॥ अथाहारकशरीरदेशबन्धकादीनामल्पत्वादिनिरूपणायाह– 'एएसि ण'मित्यादि, तत्र सर्वस्तोका आहारकस्य सर्वबन्धकास्तत्सर्वबन्धकालस्याल्पत्वात्, देशबन्धकाः सङ्ख्यातगुणा-स्तद्देशबन्धकालस्य बहुत्वात्, असङ्ख्यातगुणास्तु ते न भवन्ति, यतो मनुष्या अपि सङ्ख्याताः किं पुनराहारकशरीरदे-शबन्धकाः ?, अबन्धकास्त्वनन्तगुणाः, आहारकशरीरं हि मनुष्याणां तत्रापि संयतानां तेषामपि केषाञ्चिदेव कदाचिदेव च भवतीति, शेषकाले ते शेषसत्त्वाश्चाबन्धकाः, ततश्च सिद्धवनस्पत्यादीनामनन्तगुणत्वादनन्तगुणास्त इति ॥ अथ तैजसश-रीरप्रयोगबन्धमधिकृत्याह—

तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–एगिंदियतेयासरी-रप्पयोगबंधे बेइंदिय० तेइंदिय० जाव पंचिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे । एगिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?, एवं एएणं अभिलावेणं भेदो जहा ओगाहणसंठाणे जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणु-त्तरोववाइयकप्पातीयवेमाणियदेवपंचिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे य अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयजा-

८ शतके उद्देशः९ औदारिक-बन्धकत्वा-दि सू ३५०

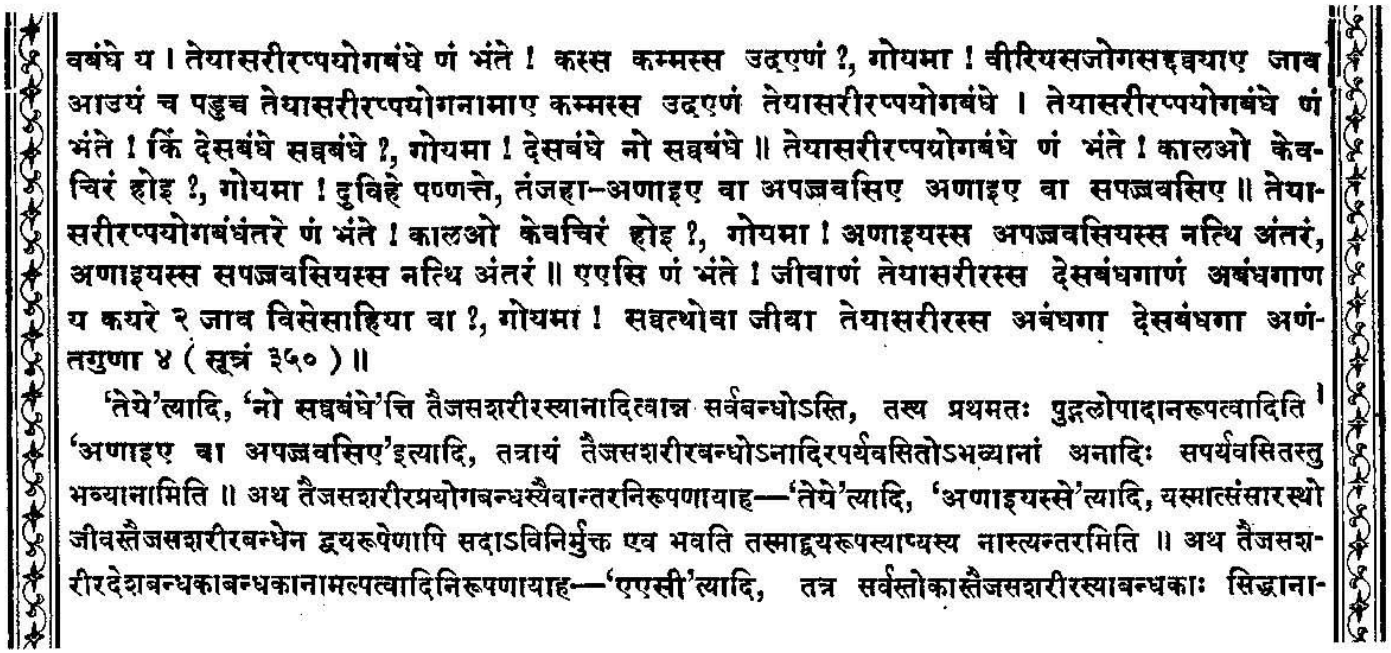
॥४०९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तैजस शरीर-प्रयोगबन्ध एवं तस्य भेदा:

प्रत सूत्रांक [३५०]

दीप अनुक्रम [४२६]



वबंधे य । तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए जाव आउयं च पडुच्च तेयासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं तेयासरीरप्पयोगबंधे । तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?, गोयमा ! देसबंधे नो सव्वबंधे ॥ तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–अणाइए वा अपज्जवसिए अणाइए वा सपज्जवसिए ॥ तेयासरीरप्पयोगबंधंतरे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! अणाइयस्स अपज्जवसियस्स नत्थि अंतरं, अणाइयस्स सपज्जवसियस्स नत्थि अंतरं ॥ एएसि णं भंते ! जीवाणं तेयासरीरस्स देसबंधगाणं अबंधगाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा तेयासरीरस्स अबंधगा देसबंधगा अणंतगुणा ४ (सूत्रं ३५०) ॥

'तेये'त्यादि, 'नो सव्वबंधे'त्ति तैजसशरीरस्यानादित्वान्न सर्वबन्धोऽस्ति, तस्य प्रथमतः पुद्गलोपादानरूपत्वादिति । 'अणाइए वा अपज्जवसिए'इत्यादि, तत्रायं तैजसशरीरबन्धोऽनादिरपर्यवसितोऽभव्यानां अनादिः सपर्यवसितस्तु भव्यानामिति ॥ अथ तैजसशरीरप्रयोगबन्धस्यैवान्तरनिरूपणायाह—'तेये'त्यादि, 'अणाइयस्से'त्यादि, यस्मात्संसारस्थो जीवस्तैजसशरीरबन्धेन द्वयरूपेणापि सदाऽविनिर्मुक्त एव भवति तस्माद्द्वयरूपस्याप्यस्य नास्त्यन्तरमिति ॥ अथ तैजसशरीरदेशबन्धकाबन्धकानामल्पत्वादिनिरूपणायाह—'एएसी'त्यादि, तत्र सर्वस्तोकास्तैजसशरीरस्याबन्धकाः सिद्धाना-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तैजस शरीर-प्रयोगबन्ध एवं तस्य भेदा:

प्रत सूत्रांक [३५०]

दीप अनुक्रम [४२६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥४१०॥

मेव तदबन्धकत्वात्, देशबन्धकास्त्वनन्तगुणास्तद्देशबन्धकानां सकलसंसारिणां सिद्धेभ्योऽनन्तगुणत्वादिति ॥ अथ कार्म्मणशरीरप्रयोगबन्धमधिकृत्याह—

कम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! अट्ठविहे पण्णत्ते, तंजहा–नाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे जाव अंतराइयकम्मासरीरप्पयोगबंधे । णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! नाणपडिणीययाए णाणणिण्हवणयाए णाणंतराएणं णाणप्पदोसेणं णाणच्चासादणाए णाणविसंवादणाजोगेणं णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे । दरिसणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! दंसणपडिणीययाए एवं जहा णाणावरणिज्जं नवरं दंसणनाम घेत्तव्वं जाव दंसणविसंवादणाजोगेणं दरिसणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं जावप्पओगबंधे । सायावेयणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?, गोयमा ! पाणाणुकंपयाए भूयाणुकंपयाए एवं जहा सत्तमसए दसमोद्देसए जाव अपरियावणयाए सायावेयणिज्जकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं सायावेयणिज्जकम्मा जाव बंधे । अस्सायावेयणिज्जपुच्छा, गोयमा ! परदुक्खणयाए परसोयणयाए जहा सत्तमसए दसमोद्देसए जाव परियावणयाए अस्सायावेयणिज्जकम्मा जाव पयोगबंधे । मोहणिज्जकम्मासरीरप्पयोगपुच्छा, गोयमा ! तिव्वकोहयाए तिव्वमाणयाए तिव्वमायाए तिव्वलोभाए तिव्वदंसणमोहणिज्जयाए तिव्वचरित्तमो-

८ शतके उद्देशः ९ कार्मणबन्धःसू३५१

॥४१०॥

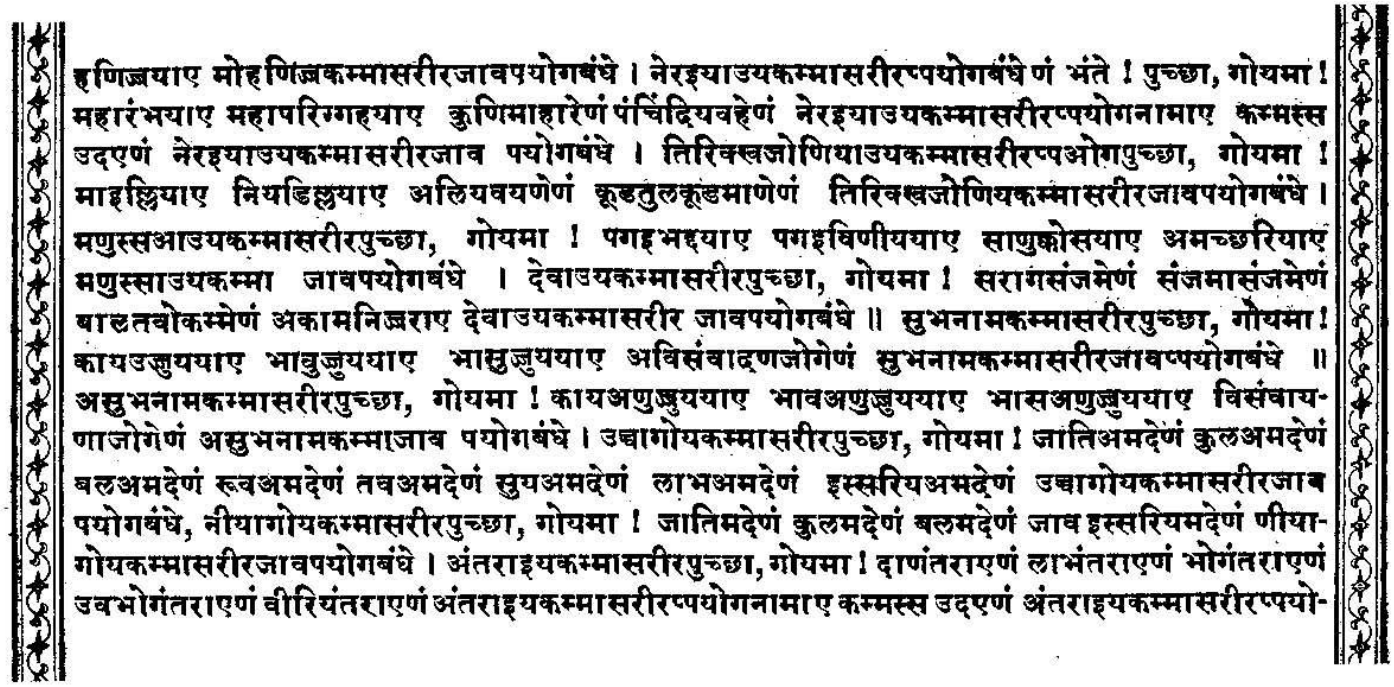
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कार्मण शरीर- प्रयोगबन्ध एवं तस्य भेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३५१]

दीप अनुक्रम [४२७]



हणिज्जयाए मोहणिज्जकम्मासरीरजावपयोगबंधे । नेरइयाउयकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! महारंभयाए महापरिग्गहयाए कुणिमाहारेणं पंचिंदियवहेणं नेरइयाउयकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं नेरइयाउयकम्मासरीरजाव पयोगबंधे । तिरिक्खजोणियाउयकम्मासरीरप्पओगपुच्छा, गोयमा ! माइल्लियाए नियडिल्लयाए अलियवयणेणं कूडतुलकूडमाणेणं तिरिक्खजोणियकम्मासरीरजावपयोगबंधे । मणुस्सआउयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा ! पगइभद्दयाए पगइविणीययाए साणुक्कोसयाए अमच्छरियाए मणुस्साउयकम्मा जावपयोगबंधे । देवाउयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा ! सरागसंजमेणं संजमासंजमेणं बालतवोकम्मेणं अकामनिज्जराए देवाउयकम्मासरीर जावपयोगबंधे ॥ सुभनामकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा ! कायउज्जुययाए भावुज्जुययाए भासुज्जुययाए अविसंवादणजोगेणं सुभनामकम्मासरीरजावप्पयोगबंधे ॥ असुभनामकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा ! कायअणुज्जुययाए भावअणुज्जुययाए भासअणुज्जुययाए विसंवायणाजोगेणं असुभनामकम्माजाव पयोगबंधे । उच्चागोयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा ! जातिअमदेणं कुलअमदेणं बलअमदेणं रूवअमदेणं तवअमदेणं सुयअमदेणं लाभअमदेणं इस्सरियअमदेणं उच्चागोयकम्मासरीरजाव पयोगबंधे, नीयागोयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा ! जातिमदेणं कुलमदेणं बलमदेणं जाव इस्सरियमदेणं णीयागोयकम्मासरीरजावपयोगबंधे । अंतराइयकम्मासरीरपुच्छा, गोयमा ! दाणंतराएणं लाभंतराएणं भोगंतराएणं उवभोगंतराएणं वीरियंतराएणं अंतराइयकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं अंतराइयकम्मासरीरप्पयो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

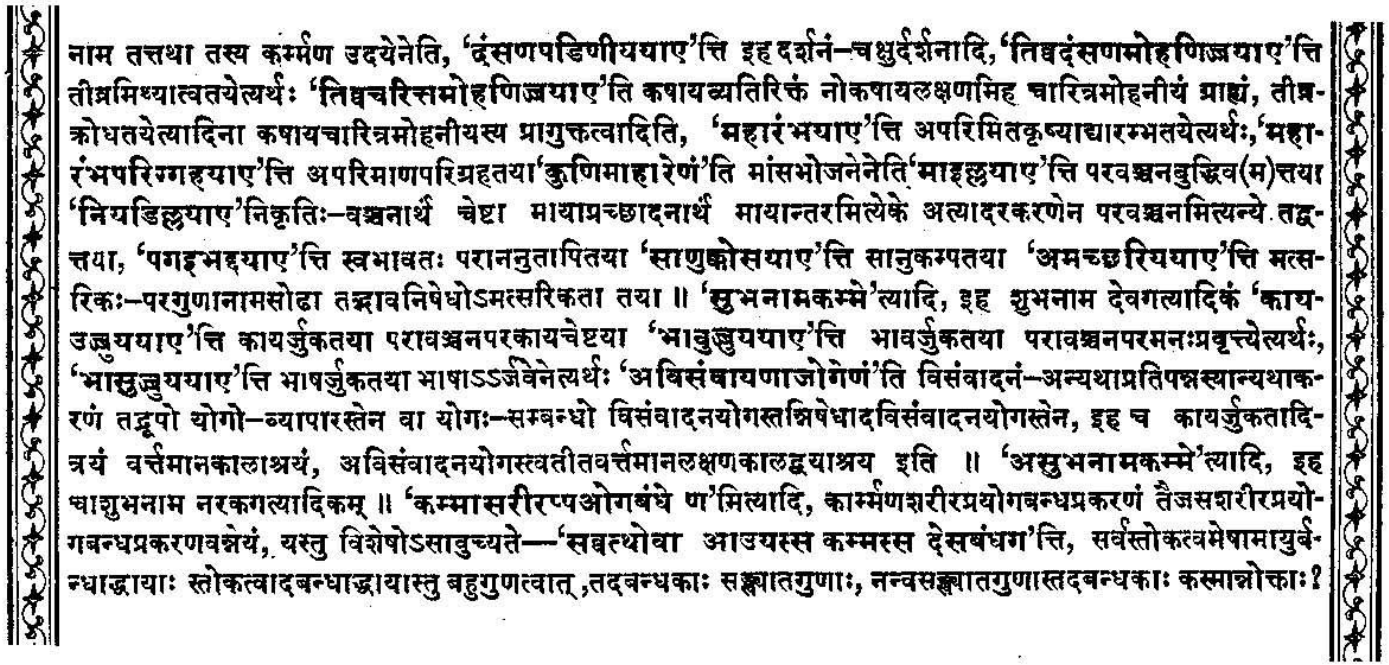
कार्मण शरीर- प्रयोगबन्ध एवं तस्य भेदा:

गबंधे ॥ णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! किं देसबंधे सव्वबंधे?, गोयमा! देसबंधे णो सव्वबंधे, एवं जाव अंतराइयकम्मा०। णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते! कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! णाणा० दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–अणाइए सपज्जवसिए अणाइए अपज्जवसिए वा एवं जहा तेयगस्स संचिट्ठणा तहेव एवं जाव अंतराइयकम्मस्स। णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधंतरे णं भंते! कालओ केवचिरं होइ?, गोयमा! अणाइयस्स एवं जहा तेयगसरीरस्स अंतरं तहेव एवं जाव अंतराइयस्स। एएसि णं भंते! जीवाणं णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स देसबंधगाणं अबंधगाण य कयरे २ जाव अप्पाबहुगं जहा तेयगस्स, एवं आउयवज्जं जाव अंतराइयस्स।आउयस्स पुच्छा,गोयमा! सव्वत्थोवा जीवा आउयस्स कम्मस्स देसबंधगा अबंधगा संखेज्जगुणा५(सूत्रं ३५१)॥

'कम्मासरीरे'त्यादि, 'णाणपडिणीययाए'त्ति ज्ञानस्य–श्रुतादेस्तदभेदात् ज्ञानवतां वा या प्रत्यनीकता–सामान्येन प्रतिकूलता सा तथा तया, 'णाणनिण्हवणयाए'त्ति ज्ञानस्य–श्रुतस्य श्रुतगुरूणां वा या निह्नवता–अपलपनं सा तथा तया, 'नाणंतराएणं'ति ज्ञानस्य—श्रुतस्यान्तरायः—तद्ग्रहणादौ विघ्नो यः स तथा तेन, 'नाणपओसेणं'ति ज्ञाने–श्रुतादौ ज्ञानवत्सु वा यः प्रद्वेषः–अप्रीतिः स तथा तेन, 'नाणऽच्चासायणाए'त्ति ज्ञानस्य ज्ञानिनां वा याऽत्याशातना–हीलना सा तथा तया, 'नाणविसंवायणाजोगेणं'ति ज्ञानस्य ज्ञानिनां वा विसंवादनयोगो–व्यभिचारदर्शनाय व्यापारो यः स तथा तेन, एतानि च बाह्यानि कारणानि ज्ञानावरणीयकार्म्मणशरीरबन्धे, अथाऽऽन्तरं कारणमाह—'नाणावरणिज्ज'मित्यादि, ज्ञानावरणीयहेतुत्वेन ज्ञानावरणीयलक्षणं यत्कार्म्मणशरीरप्रयोग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कार्मण शरीर- प्रयोगबन्ध एवं तस्य भेदा:



नाम तत्तथा तस्य कर्म्मण उदयेनेति, 'दंसणपडिणीययाए'त्ति इह दर्शनं–चक्षुर्दर्शनादि, 'तिव्वदंसणमोहणिज्जयाए'त्ति तीव्रमिथ्यात्वतयेत्यर्थः 'तिव्वचरित्तमोहणिज्जयाए'ति कषायव्यतिरिक्तं नोकषायलक्षणमिह चारित्रमोहनीयं ग्राह्यं, तीव्रक्रोधतयेत्यादिना कषायचारित्रमोहनीयस्य प्रागुक्तत्वादिति, 'महारंभयाए'त्ति अपरिमितकृष्याद्यारम्भतयेत्यर्थः, 'महारंभपरिग्गहयाए'त्ति अपरिमाणपरिग्रहतया 'कुणिमाहारेणं'ति मांसभोजनेनेति 'माइल्लयाए'त्ति परवञ्चनबुद्धिव(म)त्तया 'नियडिल्लयाए'निकृतिः–वञ्चनार्थं चेष्टा मायाप्रच्छादनार्थं मायान्तरमित्येके अत्यादरकरणेन परवञ्चनमित्यन्ये तद्वत्तया, 'पगइभद्दयाए'त्ति स्वभावतः परानुतापितया 'साणुक्कोसयाए'त्ति सानुकम्पतया 'अमच्छरिययाए'त्ति मत्सरिकः–परगुणानामसोढा तद्भावनिषेधोऽमत्सरिकता तया ॥ 'सुभनामकम्मे'त्यादि, इह शुभनाम देवगत्यादिकं 'कायउज्जुययाए'त्ति कायर्जुकतया परावञ्चनपरकायचेष्टया 'भावुज्जुययाए'त्ति भावर्जुकतया परावञ्चनपरमनःप्रवृत्त्येत्यर्थः, 'भासुज्जुययाए'त्ति भाषर्जुकतया भाषाऽऽर्जवेनेत्यर्थः 'अविसंवायणाजोगेणं'ति विसंवादनं–अन्यथाप्रतिपन्नस्यान्यथाकरणं तद्रूपो योगो–व्यापारस्तेन वा योगः–सम्बन्धो विसंवादनयोगस्तन्निषेधादविसंवादनयोगस्तेन, इह च कायर्जुकतादित्रयं वर्त्तमानकालाश्रयं, अविसंवादनयोगस्त्वतीतवर्त्तमानलक्षणकालद्वयाश्रय इति ॥ 'असुभनामकम्मे'त्यादि, इह चाशुभनाम नरकगत्यादिकम् ॥ 'कम्मासरीरप्पओगबंधे ण'मित्यादि, कार्म्मणशरीरप्रयोगबन्धप्रकरणं तैजसशरीरप्रयोगबन्धप्रकरणवन्नेयं, यस्तु विशेषोऽसावुच्यते—'सव्वत्थोवा आउयस्स कम्मस्स देसबंधग'त्ति, सर्वस्तोकत्वमेषामायुर्बन्धाद्धायाः स्तोकत्वादबन्धाद्धायास्तु बहुगुणत्वात्, तदबन्धकाः सङ्ख्यातगुणाः, नन्वसङ्ख्यातगुणास्तदबन्धकाः कस्मान्नोक्ताः?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कार्मण शरीर- प्रयोगबन्ध एवं तस्य भेदा:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥४१२॥

तदबन्धाद्धाया असङ्ख्यातजीवितानाश्रित्यासङ्ख्यातगुणत्वात्, उच्यते, इदमनन्तकायिकानाश्रित्य सूत्रं, तत्र चानन्तकायिकाः सङ्ख्यातजीविता एव, ते चायुष्कस्यावन्धकास्तद्देशबन्धकेभ्यः सङ्ख्यातगुणा एव भवन्ति, यद्यबन्धकाः सिद्धादयस्तन्मध्ये क्षिप्यन्ते तथाऽपि तेभ्यः सङ्ख्यातगुणा एव ते, सिद्धाद्यबन्धकानामनन्तानामप्यनन्तकायिकायुर्बन्धकापेक्षयाऽनन्तभागत्वादिति । ननु यदायुषोऽबन्धकाः सन्तो बन्धका भवन्ति तदा कथं न सर्वबन्धसम्भवस्तेषाम् ?, उच्यते, न हि आयुःप्रकृतिरसती सर्वा तैर्निबध्यते औदारिकादिशरीरवदिति न सर्वबन्धसम्भव इति ॥ प्रकारान्तरेणौदारिकादि चिन्तयन्नाह—

जस्स णं भंते ! ओरालियसरीरस्स सव्वबंधे से णं भंते ! वेउव्वियसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! नो बंधए अबंधए, आहारगसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! नो बंधए अबंधए, तेयासरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! बंधए नो अबंधए, जइ बंधए किं देसबंधए सव्वबंधए ?, गोयमा ! देसबंधए नो सव्वबंधए, कम्मासरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, जहेव तेयगस्स जाव देसबंधए नो सव्वबंधए ॥ जस्स णं भंते ! ओरालियसरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! वेउव्वियसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! नो बंधए अबंधए, एवं जहेव सव्वबंधेणं भणियं तहेव देसबंधेणवि भाणियव्वं जाव कम्मगस्स णं ! जस्स णं भंते ! वेउव्वियसरीरस्स सव्वबंधए से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! नो बंधए अबंधए, आहारगसरीरस्स एवं चेव, तेयगस्स कम्मगस्स य जहेव ओरालिएणं समं भणियं तहेव भाणियव्वं जाव देसबंधए नो सव्वबंधए । जस्स णं भंते ! वेउव्वियसरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?,

८ शतके उद्देशः ९ शरीराणांबन्धःसू३५२

॥४१२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! नो बंधए अबंधए, एवं जहा सव्वबंधेणं भणियं तहेव देसबंधेणवि भाणियव्वं जाव कम्मगस्स। जस्स णं भंते ! आहारगसरीरस्स सव्वबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! नो बंधए अबंधए, एवं वेउव्वियस्सवि, तेयाकम्माणं जहेव ओरालिएणं समं भणियं तहेव भाणियव्वं। जस्स णं भंते ! आहारगसरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीर० एवं जहा आहारगसरीरस्स सव्वबंधेणं भणियं तहा देसबंधेणवि भाणियव्वं जाव कम्मगस्स। जस्स णं भंते ! तेयासरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! बंधए वा अबंधए वा, जइ बंधए किं देसबंधए सव्वबंधए ?, गोयमा ! देसबंधए वा सव्वबंधए वा, वेउव्वियसरीरस्स किं बंधए अबंधए? एवं चेव, एवं आहारगसरीरस्सवि, कम्मगसरीरस्स किं बंधए अबंधए ?, गोयमा ! बंधए नो अबंधए, जइ बंधए किं देसबंधए सव्वबंधए ?, गोयमा ! देसबंधए नो सव्वबंधए। जस्स णं भंते ! कम्मगसरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स जहा तेयगस्स वत्तव्वया भणिया तहा कम्मगस्सवि भाणियव्वा जाव तेयासरीरस्स जाव देसबंधए नो सव्वबंधए (सूत्रं ३५२)॥

'जस्से' त्यादि, 'नो बंधए'त्ति, न ह्येकसमये औदारिकवैक्रिययोर्बन्धो विद्यत इतिकृत्वा नो बन्धक इति। एवमाहारकस्यापि। तैजसस्य पुनः सदैवाविरहितत्वाद्बन्धको देशबन्धकेन, सर्वबन्धस्तु नास्त्येव तस्येति । एवं कार्म्मणशरीरस्यापि वाच्यमिति। एवमौदारिकसर्वबन्धमाश्रित्य शेषाणां बन्धचिन्तार्थः अनन्तरं दण्डक उक्तोऽथौदारिकस्यैव देशबन्धकमाश्रित्यान्यमाह—'जस्स ण'मित्यादि, अथ वैक्रियस्य सर्वबन्धमाश्रित्य शेषाणां बन्धचिन्तार्थोऽन्यो दण्डकः, तत्र च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥४१३॥

'तेयगस्स कम्मगस्स जहेवे'त्यादि, यथौदारिकशरीरसर्वबन्धकस्य तैजसकार्म्मणयोर्देशबन्धकत्वमुक्तमेवं वैक्रियशरीरसर्वबन्धकस्यापि तयोर्देशबन्धकत्वं वाच्यमिति भावः। वैक्रियदेशबन्धदण्डक आहारकस्य सर्वबन्धदण्डको देशबन्धदण्डकश्च सुगम एव। तैजसदेशबन्धकदण्डके तु 'बंधए वा अबंधए व'त्ति तैजसदेशबन्धक औदारिकशरीरस्य बन्धको वा स्यादबन्धको वा, तत्र विग्रहे वर्त्तमानोऽबन्धकोऽविग्रहस्थः पुनर्बन्धकः स एवोत्पत्तिक्षेत्रप्राप्तिप्रथमसमये सर्वबन्धक द्वितीयादौ तु देशबन्धक इति, एवं कार्म्मणशरीरदेशबन्धकदण्डकेऽपि वाच्यमिति ॥ अथौदारिकादिशरीरदेशबन्धकादीनामल्पत्वादिनिरूपणायाह—

एएसि णं भंते ! सव्वजीवाणं ओरालियवेउव्वियआहारगतेयाकम्मासरीरगाणं देसबंधगाणं सव्वबंधगाणं अबंधगाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा आहारगसरीरस्स सव्वबंधगा १ तस्स चेव देसबंधगा संखेज्जगुणा २ वेउव्वियसरीरस्स सव्वबंधगा असंखेज्जगुणा ३ तस्स चेव देसबंधगा असंखेज्जगुणा ४ तेयाकम्मगाणं दुण्हवि तुल्ला अबंधगा अणंतगुणा ५ ओरालियसरीरस्स सव्वबंधगा अणंतगुणा ६ तस्स चेव अबंधगा विसेसाहिया ७ तस्स चेव देसबंधगा असंखेज्जगुणा ८ तेयाकम्मगाणं देसबंधगा विसेसाहिया ९ वेउव्वियसरीरस्स अबंधगा विसेसाहिया १० आहारगसरीरस्स अबंधगा विसेसाहिया ११। सेवं भंते ! २॥ सूत्रं (३५३) अट्ठमसयस्स नवमो उद्देसओ समत्तो॥ ८–९॥

'एएसी'त्यादि, तत्र सर्वस्तोका आहारकशरीरस्य सर्वबन्धकाः, यस्मात्ते चतुर्दशपूर्वधरास्तथाविधप्रयोजनवन्त एव

८ शतके उद्देशः ९ शरीरबन्ध-काल्पबहुत्वं सू ३५३

॥४१३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवन्ति, सर्वबन्धकालश्च समयमेवेति, तस्यैव च देशबन्धकाः सङ्ख्येयगुणाः, देशबन्धकालस्य बहुत्वात्, वैक्रियशरीरस्य सर्वबन्धका असङ्ख्येयगुणाः, तेषां तेभ्योऽसङ्ख्यातगुणत्वात्, तस्यैव च देशबन्धका असङ्ख्येयगुणाः, सर्वबन्धाद्धापेक्षया देशबन्धाद्धाया असङ्ख्यातगुणत्वात्, अथवा सर्वबन्धकाः प्रतिपद्यमानकाः देशबन्धकास्तु पूर्वप्रतिपन्नाः, प्रतिपद्यमानकेभ्यश्च पूर्वप्रतिपन्नानां बहुत्वात्, वैक्रियसर्वबन्धकेभ्यो देशबन्धका असङ्ख्येयगुणाः, तैजसकार्म्मणयोरबन्धका अनन्तगुणाः, यस्मात्ते सिद्धास्ते च वैक्रियदेशबन्धकेभ्योऽनन्तगुणा एव, वनस्पतिवर्जसर्वजीवेभ्यः सिद्धानामनन्तगुणत्वादिति, औदारिकशरीरस्य सर्वबन्धका अनन्तगुणास्ते च वनस्पतिप्रभृतीन् प्रतीत्य प्रत्येतव्याः, तस्यैव चाबन्धका विशेषाधिकाः, एते हि विग्रहगतिकाः सिद्धादयश्च भवन्ति, तत्र च सिद्धादीनामत्यन्ताल्पत्वेनेहाविवक्षा, विग्रहगतिकाश्च वक्ष्यमाणन्यायेन सर्वबन्धकेभ्यो बहुतरा इति तेभ्यस्तदबन्धका विशेषाधिका इति, तस्यैव चौदारिकस्य देशबन्धका असङ्ख्यातगुणाः, विग्रहाद्धापेक्षया देशबन्धाद्धाया असङ्ख्यातगुणत्वात्, तेजसकार्म्मणयोर्देशबन्धका विशेषाधिकाः, यस्मात्सर्वेऽपि संसारिणस्तैजसकार्म्मणयोर्देशबन्धका भवन्ति, तत्र च ये विग्रहगतिका औदारिकसर्वबन्धका वैक्रियादिबन्धकाश्च ते औदारिकदेशबन्धकेभ्योऽतिरिच्यन्त इति ते विशेषाधिका इति, वैक्रियशरीरस्याबन्धका विशेषाधिकाः, यस्माद्वैक्रियस्य बन्धकाः प्रायो देवनारका एव शेषास्तु तदबन्धकाः सिद्धाश्च, तत्र च सिद्धास्तैजसादिदेशबन्धकेभ्योऽतिरिच्यन्ते इति ते विशेषाधिका उक्ताः, आहारकशरीरस्याबन्धका विशेषाधिका यस्मान्मनुष्याणामेवाहारकशरीरं वैक्रियं तु तदन्येषामपि, ततो वैक्रियबन्धकेभ्य आहारकबन्धकानां स्तोकत्वेन वैक्रियाबन्धकेभ्य आहारकाबन्धका विशेषाधिका इति। इह चेयं स्थापना—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ ओराल० १ ॥	॥ वेउविय० २ ॥	॥ आहारग० ३ ॥	॥ तैजस० ४ ॥	॥ कार्म्मण० ५ ॥
सव्वबंधा अणंता ६ देसबंधा असंखेज्ज० ८ (विग्रहगति)अबंधा विसेसाहिया ७	सव्वबंध० असं० ३ देसबंध० असंखे० ४ अबंधा विसेसा-हिया १०	सव्वबंध० थोवा १ देसबंध.संख्यातगुणा २ अबंधा विसेसा-हिया ११	देसबंध.विसेसाहिया ९ अबंधा अणंता ५	देसबंधा विसेसा-हिया ९ अबंधा अणंता ५

इहाल्पबहुत्वाधिकारे वृद्धा गाथा एवं प्रपञ्चितवन्तः—

ओरालसव्वबंधा थोवा अब्बंधया विसेसहिया । तत्तो य देसबंधा असंखगुणिया कहं नेया ? ॥ १ ॥ पढमंमि सव्वबंधो समए सेसेसु देसबंधो उ । सिद्धाईण अबंधो विग्गहगइयाण य जियाणं ॥ २ ॥ इह पुण विग्गहिए चिय पडुच्च भणिया अबंधगा अहिया । सिद्धा अणंतभागंमि सव्वबन्धाणवि भवन्ति ॥ ३ ॥ उजुयाय एगवंका दुहओवंका गई भवे तिविहा । पढमाइ सव्वबंधा सव्वे बीयाइ अद्धं तु ॥ ४ ॥ तइयाइ तइयभंगो लब्भइ जीवाण सव्वबंधाणं । इति तिन्नि सव्वबंधा रासी तिन्नेव य अबंधा ॥ १५ ॥ रासिप्पमाणओ ते तुल्लाऽबंधा य सव्वबंधा य । संखापमाणओ पुण अबंधगा पुण जहन्नहिया ॥ ६ ॥ जे एगसमइया ते एगनिगोदंमि छद्दिसिं एंति । दुसमइया तिपयरिया तिसमईया सेसलोगाओ ॥ ७ ॥ तिरियायतं चउद्दिसि पयरमसंखप्पएसबाहल्लं । उड्ढं पुव्वावरदाहिणुत्तरायया य दो पयरा ॥८॥ ने तिपयरिया ते छद्दिसिएहिंतो भवंतऽसंखगुणा । सेसावि असंखगुणा खेत्तासंखेज्जगुणियत्ता ॥ ९ ॥ एवं विसेसअहिया अबंधया सव्वबंधएहिं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३५३]

दीप अनुक्रम [४२९]

तो । तिसमइयविग्गहं पुण पडुच्च सुत्तं इमं होइ ॥ १० ॥ चउसमयविग्गहं पुण संखेज्जगुणा अबंधगा होंति । एएसिं निदरिसणं ठवणारासीहिं वोच्छामि ॥ ११ ॥ पढमो होइ सहस्सं दुसमइया दोवि लक्खमेक्केक्कं । तिसमइया पुण तिन्निवि रासी कोडी भवेक्केक्का ॥ १२ ॥ एएसिं जहसंभवमत्थोवणयं करेज्ज रासीणं । एत्तो असंखगुणिया वोच्छं जह देसबंधा से ॥ १३ ॥ एगो असंखभागो वट्टइ उववट्टणोववायम्मि । एगनिगोए निच्चं एवं सेसेसुवि स एव ॥ १४ ॥ अंतोमुहुत्तमेत्ता ठिई निगोयाण जं विणिद्दिट्ठा । पल्लट्टंति निगोया तम्हा अंतोमुहुत्तेणं ॥ १५ ॥ तेसिं ठितिसमयाणं विग्गहसमया हवंति जइभागे । एवतिभागे सव्वे विग्गहिया सेसजीवाणं ॥ १६ ॥ सव्वेवि य विग्गहिया सेसाणं जं असंखभागंमि । तेणासंखगुणा देसबंधयाऽबंधएहिंतो ॥ १७ ॥ वेउव्वियआहारगतेयाकम्माइं पढियसिद्धाइं । तहवि विसेसो जो जत्थ तत्थ तं तं भणीहामि ॥ १८ ॥ वेउव्वियसव्वबंधा थोवा जे पढमसमयदेवाई । तस्सेव देसबंधा असंखगुणिया कहं के वा ? ॥ १९ ॥ [उच्यते—] तेसिं चिय जे सेसा ते सव्वे सव्वबंधए मोत्तुं । होंति अबंधाणंता तव्वज्जा सेसजीवा जे ॥ २० ॥ आहारसव्वबंधा थोवा दो तिन्नि पंच वा दस वा । संखेज्जगुणा देसे ते उ पुहुत्तं सहस्साणं ॥ २१ ॥ तव्वज्जा सव्वजिया अबंधया ते हवंतऽणंतगुणा । थोवा अबन्धया तेयगस्स संसारमुक्का जे ॥ २२ ॥ सेसा य देसबंधा तव्वज्जा ते हवंतऽणंतगुणा । एवं कम्मगभेयावि नवरि णाणत्तमाउम्मि ॥ २३ ॥ [तच्चायुर्नानात्वमेवम्—] थोवा आउयबंधा संखेज्जगुणा अबंधया होंति । तेयाकम्माणं सव्वबंधगा नत्थऽणाइत्ता ॥ २४ ॥ अस्संखेज्जगुणा आउगस्स किमबंधगा न भन्नंति ? । जम्हा असंखभागो उव्वट्टइ एगसमएणं ॥ २५ ॥ भन्नइ एगसमइओ कालो उव्वट्टणाइ जीवाणं । बंधणकालो पुण आउगस्स अंतोमुहुत्तो उ ॥ २६ ॥ जीवाण ठिईकाले आउयबंधद्धभाइए लद्धं । एवइभागे आउस्स बंधया सेसजीवाणं ॥ २७ ॥ जं संखेज्जतिभागो ठिइकालस्साउबंधकालो उ । तम्हाऽसंखगुणा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से अबंधया बंधएहिंतो ॥ २८ ॥ ['से'त्ति आयुषः] संजोगप्पाबहुयं आहारगसव्वबंधगा थोवा । तस्सेव देसबंधा संखगुणा ते य पुव्वुत्ता ॥ २९ ॥ तत्तो वेउव्वियसव्वबंधगा दरिसिया असंखगुणा । जमसंखा देवाई उववज्जंतेगसमएणं ॥ ३० ॥ तस्सेव देसबंधा असंखगुणिया हवंति पुव्वुत्ता । तेयगकम्मबंधा अणंतगुणिया य ते सिद्धा ॥ ३१ ॥ तत्तो उ अणंतगुणा ओरालियसव्वबंधगा होंति । तस्सेव ततोऽबंधा य देसबंधा य पुव्वुत्ता ॥ ३२ ॥ तत्तो तेयगकम्माणं देसबंधा भवे विसेसहिया । ते चेवोरालियदेसबंधगा होंतिमे वऽन्ने ॥ ३३ ॥ जे तस्स सव्वबंधा अबंधगा जे य नेरइयदेवा । एएहिं साहिया ते पुणाइ के सव्वसंसारी ? ॥ ३४ ॥ वेउव्वियस्स तत्तो अबंधगा साहिया विसेसेणं । ते चेव य नेरइयाइविरहिया सिद्धसंजुत्ता ॥ ३५ ॥ आहारगस्स तत्तो अबंधगा साहिया विसेसेणं । ते पुण के ? सव्वजीवा आहारगलद्धिए मोत्तुं ॥ ३६ ॥

इहौदारिकसर्वबन्धादीनामल्पत्वादिभावनार्थं सर्वबन्धादिस्वरूपं तावदुच्यते—इह ऋजुगत्या विग्रहगत्या चोत्पद्यमानानां जीवानामुत्पत्तिक्षेत्रप्राप्तिप्रथमसमये सर्वबन्धो भवति, द्वितीयादिषु तु देशबन्धः, सिद्धादीनामित्यत्रादिशब्दाद्वैक्रियादिबन्धकानां च जीवानामौदारिकस्याबन्ध इति, इह च सिद्धादीनामबन्धकत्वेऽप्यत्यन्ताल्पत्वेनाविवक्षणाद्वैग्रहिकानेव प्रतीत्य सर्वबन्धकेभ्योऽबन्धका विशेषाधिका उक्ता इति ॥ १–२ ॥ एतदेवाह—साधारणेष्वपि सर्वबन्धभावात्सर्वबन्धकाः सिद्धेभ्योऽनन्तगुणाः, यत एवं ततः सिद्धास्तेषामनन्तभागे वर्त्तन्ते, यदि च सिद्धा अपि तेषामनन्तभागे वर्त्तन्ते तदा सुतरां वैक्रियबन्धकादय इति प्रतीयन्त एव, ततश्च तान् विहायैव सिद्धपदमेवाधीतमिति॥३॥अथ सर्वबन्धकानामबन्धकानां च समताभिधानपूर्वकमबन्धकानां विशेषाधिकत्वमुपदर्शयितुमाह—ऋज्वायतायां गतौ सर्वबन्धका एवाद्यसमये

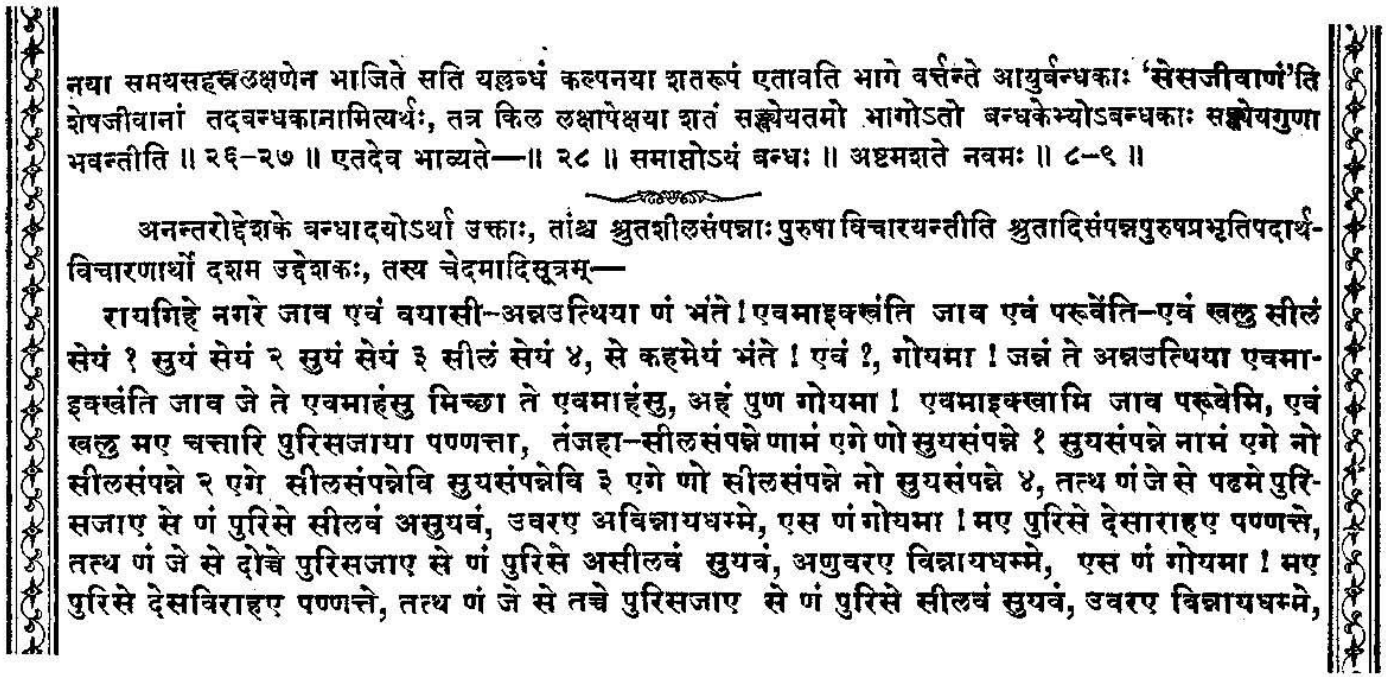
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवन्त्येवमेकस्तेषां राशिः, एकवक्रया ये उत्पद्यन्ते तेषां ये प्रथमे समये तेऽबन्धका द्वितीये तु सर्वबन्धका इत्येवं तेषां द्वितीयो राशिः, स चैकवक्राभिधानद्वितीयगत्योत्पद्यमानानामर्द्धभूतो भवतीति, द्विवक्रया गत्या ये पुनरुत्पद्यन्ते ते आद्ये समयद्वयेऽबन्धकास्तृतीये तु सर्वबन्धकाः, अयं च सर्वबन्धकानां तृतीयो राशिः, स च द्विवक्राभिधानतृतीयगत्योत्पद्यमानानां त्रिभागभूतो भवति, तृतीयसमयभावित्वात्तस्य, एवं च त्रयः सर्वबन्धकानां राशयः त्रय एव चावन्धकानां, समयभेदेन राशिभेदादिति, एवं च ते राशिप्रमाणतस्तुल्या यद्यपि भवन्ति तथाऽपि सङ्ख्याप्रमाणतोऽधिका अबन्धका भवन्ति ॥ ४–५–६ ॥ ते चैवम्—ये एकसमयिका ऋजुगत्योत्पद्यमानका इत्यर्थः ते एकस्मिन्निगोदे–साधारणशरीरे लोकमध्यस्थिते षड्भ्यो दिग्भ्योऽनुश्रेण्याऽऽगच्छन्ति, ये पुनर्द्विसमयिका एकवक्रगत्योत्पद्यमाना इत्यर्थः ते त्रिप्रतरिकाः–प्रतरत्रयादागच्छन्ति, विदिशो वक्रेणाऽऽगमनात्, प्रतरश्च वक्ष्यमाणस्वरूपः, ये पुनस्त्रिसमयिकाः–समयत्रयेण वक्रद्वयेन चोत्पद्यमानकास्ते शेषलोकात् प्रतरत्रयातिरिक्तलोकादागच्छन्तीति ॥ ७ ॥ प्रतरप्ररूपणायाह—लोकमध्यगतैकनिगोदमधिकृत्य तिर्यगायतश्चतसृषु दिक्षु प्रतरः कल्प्यते, असङ्ख्येयप्रदेशबाहल्यो–विवक्षितनिगोदोत्पादकालोचितावगाहनाबाहल्य इत्यर्थः तन्मात्रबाहल्यावेव 'उड्ढे'ति ऊर्ध्वाधोलोकान्तगतौ पूर्वापरायतो दक्षिणोत्तरायतश्चेति द्वौ प्रतराविति ॥ ८ ॥ अथाधिकृतमल्पबहुत्वमुच्यते—ये जीवास्त्रिप्रतरिका एकवक्रया गत्योत्पत्तिमन्तस्ते षड्दिग्भ्यः–ऋजुगत्या षड्भ्यो दिग्भ्यः सकाशाद् भवन्त्यसङ्ख्यगुणाः, शेषा अपि ये त्रिसमयिकाः शेषलोकादागतास्तेऽप्यसङ्ख्येयगुणा भवन्ति, कुतः ?, क्षेत्रासङ्ख्यगुणितत्वाद्, यतः षड्दिक्क्षेत्रात्त्रिप्रतरमसङ्ख्येयगुणं, ततोऽपि शेषलोक इति ॥ ९ ॥ ततः किम् ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इत्याह—वक्रद्वयमाश्रित्येदं सूत्रमित्यर्थः ॥ १० ॥ प्रथम ऋजुगत्युत्पन्नसर्वबन्धकराशिः सहस्रं परिकल्पितं, क्षेत्रस्याल्पत्वात्, द्विसमयोत्पन्नानां द्वौ राशी, एकोऽबन्धकानामन्यः सर्वबन्धकानां, तौ च प्रत्येकं लक्षमानौ, तत्क्षेत्रस्य बहुतरत्वात्, ये पुनस्त्रिभिः समयैरुत्पद्यन्ते तेषां त्रयो राशयः, तत्र चाद्ययोः समययोरबन्धकौ द्वौ राशी तृतीयस्तु सर्वबन्धको राशिः, ते च त्रयोऽपि प्रत्येकं कोटीमानास्तत्क्षेत्रस्य बहुतमत्वादिति, तदेवं राशित्रयेऽपि सर्वबन्धकाः सहस्रं लक्षं कोटी चेत्येवं सर्वस्तोकाः, अबन्धकास्तु लक्षं कोटीद्वयं चेत्येवं विशेषाधिकास्त इति ॥१२॥ अनेन च गाथाद्वयेनोद्वर्त्तनाभणनाद्विग्रहसमयसम्भवः, अन्तर्मुहूर्त्तान्ते परिवर्त्तनाभणनाच्च निगोदस्थितिसमयमानमुक्तं, ततश्च अयमर्थः–॥१४॥ तेषामेव वैक्रियबन्धकानां सर्वबन्धकान् मुक्त्वा ये शेषास्ते सर्वे वैक्रियस्य देशबन्धका भवन्ति,तत्र च सर्वबन्धकान् मुक्त्वेत्यनेन कथमित्यस्य निर्वचनमुक्तं, ये शेषा इत्यनेन तु के वेत्यस्येति, अबन्धकास्तु तस्यानन्ता भवन्ति, ते च के ?, ये तद्वर्जा–वैक्रियसर्वदेशबन्धकवर्जाः शेषजीवास्ते चौदारिकादिबन्धकाः देवादयश्च वैग्रहिका इति ॥२१॥ 'तद्वर्जाः' आहारकबन्धवर्जाः सर्वजीवा अबन्धका इत्याहारकाबन्धस्वरूपमुक्तं, ते च पूर्वेभ्योऽनन्तगुणा भवन्ति ॥२२–२४॥ सङ्ख्यातगुणा आयुष्काबन्धका इति यदुक्तं तत्र प्रश्नयन्नाह—एकोऽसङ्ख्यभागो निगोदजीवानां सर्वदोद्वर्त्तते, स च बद्धायुषामेव, तदन्येषामुद्वर्त्तनाऽभावात्, तेभ्यश्च ये शेषास्तेऽबद्धायुषः, ते च तदपेक्षयाऽसङ्ख्यातगुणा एवेत्येवमसङ्ख्यगुणा आयुष्काबन्धकाः स्युरिति, ॥२५॥ अत्रोच्यते, निगोदजीवभवकालापेक्षया तेषामायुर्बन्धकालः सङ्ख्यातभागवृत्तिरित्यबन्धकाः सङ्ख्यातगुणा एव ॥ एतदेव भाव्यते—निगोदजीवानां स्थितिकालोऽन्तर्मुहूर्त्तमानः, स च कल्पनया समयलक्षं, तत्र 'आयुर्बन्धाद्धया' आयुर्बन्धकालेनान्तर्मुहूर्त्तमानेनैव कल्प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



नया समयसहस्रलक्षणेन भाजिते सति यल्लब्धं कल्पनया शतरूपं एतावति भागे वर्त्तन्ते आयुर्बन्धकाः 'सेसजीवाणं'ति शेषजीवानां तदबन्धकानामित्यर्थः, तत्र किल लक्षापेक्षया शतं सङ्ख्येयतमो भागोऽतो बन्धकेभ्योऽबन्धकाः सङ्ख्येयगुणा भवन्तीति ॥ २६–२७ ॥ एतदेव भाव्यते—॥ २८ ॥ समाप्तोऽयं बन्धः ॥ अष्टमशते नवमः ॥ ८–९ ॥

अनन्तरोद्देशके बन्धादयोऽर्था उक्ताः, तांश्च श्रुतशीलसंपन्नाः पुरुषा विचारयन्तीति श्रुतादिसंपन्नपुरुषप्रभृतिपदार्थविचारणार्थो दशम उद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे नगरे जाव एवं वयासी–अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव एवं परूवेंति–एवं खलु सीलं सेयं १ सुयं सेयं २ सुयं सेयं ३ सीलं सेयं ४, से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! जन्नं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव जे ते एवमाहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि, एवं खलु मए चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तंजहा–सीलसंपन्ने णामं एगे णो सुयसंपन्ने १ सुयसंपन्ने नामं एगे नो सीलसंपन्ने २ एगे सीलसंपन्नेवि सुयसंपन्नेवि ३ एगे णो सीलसंपन्ने नो सुयसंपन्ने ४, तत्थ णं जे से पढमे पुरिसजाए से णं पुरिसे सीलवं असुयवं, उवरए अविन्नायधम्मे, एस णं गोयमा ! मए पुरिसे देसाराहए पण्णत्ते, तत्थ णं जे से दोच्चे पुरिसजाए से णं पुरिसे असीलवं सुयवं, अणुवरए विन्नायधम्मे, एस णं गोयमा ! मए पुरिसे देसविराहए पण्णत्ते, तत्थ णं जे से तच्चे पुरिसजाए से णं पुरिसे सीलवं सुयवं, उवरए विन्नायधम्मे,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र अष्टम-शतके नवम-उद्देशकः समाप्तः अथ अष्टम-शतके दशम-उद्देशकः आरभ्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १ ॥४१७॥

एस णं गोयमा ! मए पुरिसे सव्वाराहए पन्नत्ते, तत्थ णं जे से चउत्थे पुरिसजाए से णं पुरिसे असीलवं असुतवं, अणुवरए अविण्णायधम्मे, एस णं गोयमा ? मए पुरिसे सव्वविराहए पन्नत्ते ॥ (सूत्रं ३५४) ॥

'रायगिहे' इत्यादि, तत्र च 'एवं खलु सीलं सेयं १ सुयं सेयं २ सुयं सेयं ३ सीलं सेयं ४' इत्येतस्य चूर्ण्यनुसारेण-व्याख्या–'एवं' लोकसिद्धन्यायेन 'खलु' निश्चयेन इहान्ययूथिकाः केचित् क्रियामात्रादेवाभीष्टार्थसिद्धिमिच्छन्ति न च किञ्चिदपि ज्ञानेन प्रयोजनं, निश्चेष्टत्वात्, घटादिकरणप्रवृत्तावाकाशादिपदार्थवत्, पठ्यते च—"क्रियैव फलदा पुंसां, न ज्ञानं फलदं मतम् । यतः स्त्रीभक्ष्यभोगज्ञो, न ज्ञानात्सुखितो भवेत् ॥ १ ॥" तथा—"जहा खरो चंदणभारवाही, भारस्स भागी न हु चंदणस्स । एवं खु नाणी चरणेण हीणो, नाणस्स भागी नहु सोगईए॥१॥" [यथा चन्दनभारवाही खरो भारभाग् न चैव चन्दनस्य । एवं चरणहीनो ज्ञानी ज्ञानभाग् न तु सुगतेः ॥१॥] अतस्ते प्ररूपयन्ति–शीलं श्रेयः प्राणातिपातादिविरमणध्यानाध्ययनादिरूपा क्रियैव श्रेयः–अतिशयेन प्रशस्यं श्लाघ्यं पुरुषार्थसाधकत्वात्, श्रेयं वा–समाश्रयणीयं पुरुषार्थविशेषार्थिना, अन्ये तु ज्ञानादेवेष्टार्थसिद्धिमिच्छन्ति न क्रियातः, ज्ञानविकलस्य क्रियावतोऽपि फलसिद्ध्यदर्शनात्, अधीयते च—"विज्ञप्तिः फलदा पुंसां, न क्रिया फलदा मता । मिथ्याज्ञानात्प्रवृत्तस्य, फलासंवाददर्शनात् ॥ १ ॥" तथा—पढमं नाणं तओ दया, एवं चिट्ठइ सव्वसंजए । अन्नाणी किं काही किं वा नाही छेयपावयं ॥ १ ॥" [प्रथमं ज्ञानं ततो दयैवं सर्वसंयतेषु तिष्ठति अज्ञानी किं करिष्यति किं वा ज्ञास्यति छेकं पापकं वा ॥ १ ॥] अतस्ते प्ररूपयन्ति–श्रुतं श्रेयः, श्रुतं–श्रुतज्ञानं तदेव श्रेयः–अतिप्रशस्यमाश्रयणीयं वा पुरुषार्थसिद्धिहेतुत्वात् न तु शीलमिति,

८ शतके उद्देशः १० शीलश्रुत-चतुर्भङ्गी सू ३५४

॥४१७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्ये तु ज्ञानक्रियाभ्यामन्योऽन्यनिरपेक्षाभ्यां फलमिच्छन्ति, ज्ञानं क्रियाविकलमेवोपसर्जनीभूतक्रियं वा फलदं क्रियाऽपि ज्ञानविकला उपसर्जनीभूतज्ञाना वा फलदेति भावः, भणन्ति च—"किञ्चिद्वेदमयं पात्रं, किञ्चित्पात्रं तपोमयम् । आगमिष्यति तत्पात्रं, यत्पात्रं तारयिष्यति ॥ १ ॥" अतस्ते प्ररूपयन्ति–श्रुतं श्रेयः तथा शीलं श्रेयः ३, द्वयोरपि प्रत्येकं पुरुषस्य पवित्रतानिबन्धनत्वादिति, अन्ये तु व्याचक्षते–शीलं श्रेयस्तावन्मुख्यवृत्त्या तथा श्रुतं श्रेयः–श्रुतमपि श्रेयो गौणवृत्त्या तदुपकारित्वादित्यर्थः इत्येकीयं मतं, अन्यदीयमतं तु श्रुतं श्रेयस्तावत्तथा शीलमपि श्रेयो गौणवृत्त्या तदुपकारित्वादित्यर्थः, अयं चार्थ इह सूत्रे काकुपाठाल्लभ्यते, एतस्य च प्रथमव्याख्यानेऽन्ययूथिकमतस्य मिथ्यात्वं, पूर्वोक्तपक्षत्रयस्यापि फलसिद्धावनङ्गत्वात् समुदायपक्षस्यैव च फलसिद्धिकरणत्वात्, आह च—"णाणं पयासयं सोहओ तवो संजमो य गुत्तिकरो । तिण्हंपि समाओगे मोक्खो जिणसासणे भणिओ ॥ १ ॥" [ज्ञानं प्रकाशकं तपः शोधकं संयमश्च गुप्तिकरः । त्रयाणामपि समायोगे जिनशासने मोक्षो भणितः ॥ १ ॥] तपःसंयमौ च शीलमेव, तथा—"संजोगसिद्धीइ फलं वयंति, न हु एगचक्केण रहो पयाइ । अंधो य पंगू य वणे समिच्चा, ते संपउत्ता नगरं पविट्ठा ॥ १ ॥ इति, [फलं संयोगसिद्ध्या वदन्ति एकचक्रेण न रथः प्रयाति । वनेऽन्धः पङ्गुश्च समेत्य तौ संप्रयुक्तौ नगरं प्रविष्टौ ॥ १ ॥] द्वितीयव्याख्यानपक्षेऽपि मिथ्यात्वं, संयोगतः फलसिद्धेरिष्टत्वाद्, एकैकस्य प्रधानेतरविवक्षयाऽसङ्गतत्वादिति, अहं पुनर्गौतम ! एवमाख्यामि यावत्प्ररूपयामीत्यत्र श्रुतयुक्तं शीलं श्रेयः इत्येतावान् वाक्यशेषो दृश्यः, अथ कस्मादेवं ?, अत्रोच्यते–'एवं'मित्यादि, एवं' वक्ष्यमाणन्यायेन–'पुरिसजाय'त्ति पुरुषप्रकाराः 'सीलवं असुयवं'ति कोऽर्थः ?, 'उवरए अवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३५४]

दीप अनुक्रम [४३०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥४१८॥

ज्ञायधम्मे'त्ति 'उपरतः' निवृत्तः स्वबुद्ध्या पापात् 'अविज्ञातधर्मा' भावतोऽनधिगतश्रुतज्ञानो बालतपस्वीत्यर्थः, गीतार्था-निश्रिततपश्चरणनिरतोऽगीतार्थ इत्यन्ये, 'देसाराहए'त्ति देशं–स्तोकमंशं मोक्षमार्गस्याराधयतीत्यर्थः सम्यग्बोधरहितत्वात् क्रियापरत्वाच्चेति, 'असीलवं सुयवं'ति, कोऽर्थः?–'अणुवरए विन्नायधम्मे'त्ति पापादनिवृत्तो विज्ञातधर्मा चाविरतिसम्य-ग्दृष्टिरितिभावः, 'देसविराहए'त्ति देशं–स्तोकमंशं ज्ञानादित्रयरूपस्य मोक्षमार्गस्य तृतीयभागरूपं चारित्रं विराधयती-त्यर्थः, प्राप्तस्य तस्यापालनादप्राप्तेर्वा, 'सव्वाराहए'त्ति सर्वं–त्रिप्रकारमपि मोक्षमार्गमाराधयतीत्यर्थः, श्रुतशब्देन ज्ञानदर्शनयोः सङ्ग्रहीतत्वात्, न हि मिथ्यादृष्टिर्विज्ञातधर्मा तत्त्वतो भवतीति, एतेन समुदितयोः शीलश्रुतयोः श्रेयस्त्वमुक्तमिति 'सव्वा-राहए'त्युक्तम् ॥ अथाराधनामेव भेदत आह—

कतिविहा णं भंते ! आराहणा पण्णत्ता ?, गोयमा ! तिविहा आराहणा पण्णत्ता, तंजहा–नाणाराहणा दंसणाराहणा चरित्ताराहणा । णाणाराहणा णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तंजहा–उक्कोसिया मज्झिमा जहन्ना । दंसणाराहणा णं भंते!०, एवं चेव तिविहावि । एवं चरित्ताराहणावि ॥ जस्स णं भंते ! उक्कोसिया णाणाराहणा तस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा जस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्स उक्कोसिया णाणाराहणा?, गोयमा ! जस्स उक्कोसिया णाणाराहणा तस्स दंसणाराहणा उक्कोसिया वा अजह-न्नउक्कोसिया वा, जस्स पुण उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्स नाणाराहणा उक्कोसा वा जहन्ना वा अजहन्नमणु-क्कोसा वा । जस्स णं भंते ! उक्कोसिया णाणाराहणा तस्स उक्कोसिया चरित्ताराहणा जस्सुक्कोसिया चरि-

८ शतके उद्देशः १० ज्ञानदर्शन-चारित्राराधनाः सू ३५५

॥४१८॥

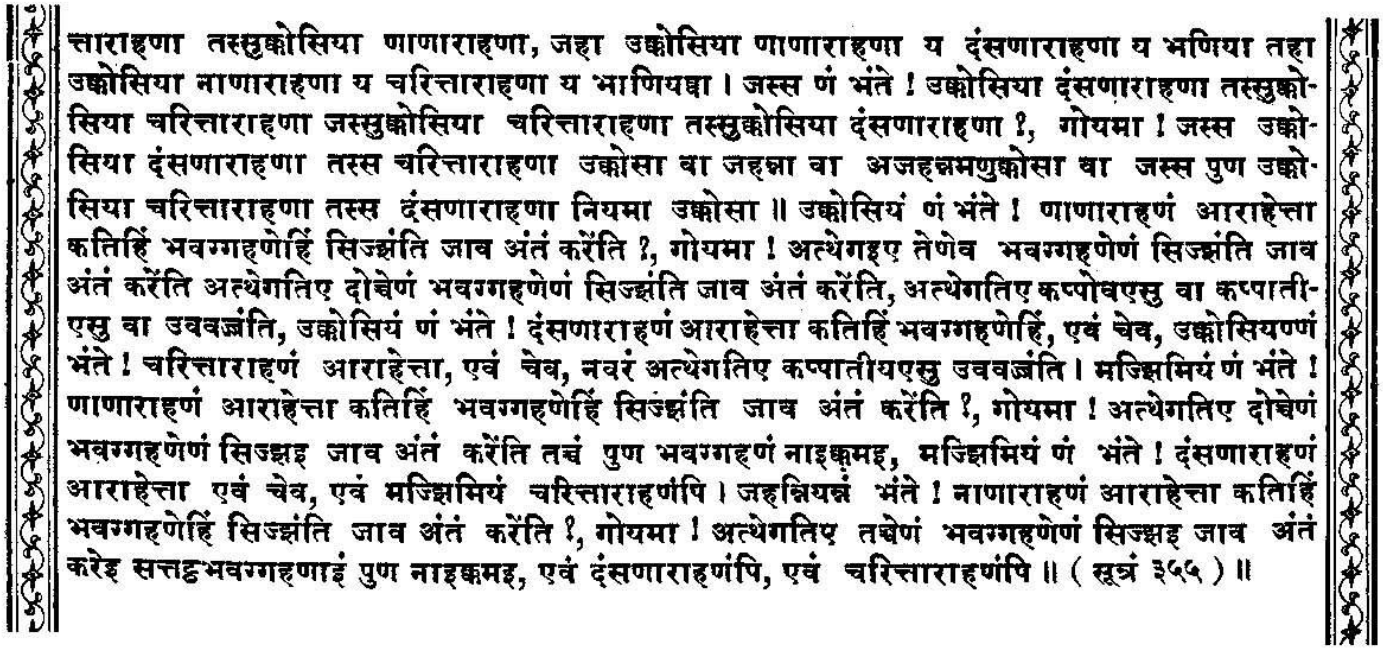
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि आराधनाया: वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३५५]

दीप अनुक्रम [४३१]



त्तारा॒हणा तस्सुक्कोसिया णाणाराहणा, जहा उक्कोसिया णाणाराहणा य दंसणाराहणा य भणिया तहा उक्कोसिया नाणाराहणा य चरित्ताराहणा य भाणियव्वा । जस्स णं भंते ! उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्सुक्कोसिया चरित्ताराहणा जस्सुक्कोसिया चरित्ताराहणा तस्सुक्कोसिया दंसणाराहणा ?, गोयमा ! जस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्स चरित्ताराहणा उक्कोसा वा जहन्ना वा अजहन्नमणुक्कोसा वा जस्स पुण उक्कोसिया चरित्ताराहणा तस्स दंसणाराहणा नियमा उक्कोसा ॥ उक्कोसियं णं भंते ! णाणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?, गोयमा ! अत्थेगइए तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति अत्थेगतिए दोच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति, अत्थेगतिए कप्पोवएसु वा कप्पातीएसु वा उववज्जंति, उक्कोसियं णं भंते ! दंसणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं, एवं चेव, उक्कोसियण्णं भंते ! चरित्ताराहणं आराहेत्ता, एवं चेव, नवरं अत्थेगतिए कप्पातीयएसु उववज्जंति । मज्झिमियं णं भंते ! णाणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?, गोयमा ! अत्थेगतिए दोच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झइ जाव अंतं करेंति तच्चं पुण भवग्गहणं नाइक्कमइ, मज्झिमियं णं भंते ! दंसणाराहणं आराहेत्ता एवं चेव, एवं मज्झिमियं चरित्ताराहणंपि । जहन्नियन्नं भंते ! णाणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?, गोयमा ! अत्थेगतिए तच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झइ जाव अंतं करेइ सत्तट्ठभवग्गहणाइं पुण नाइक्कमइ, एवं दंसणाराहणंपि, एवं चरित्ताराहणंपि ॥ (सूत्रं ३५५) ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि आराधनायाः वर्णनं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३५५]

दीप अनुक्रम [४३१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः १ ॥४१९॥

'कतिविहा ण'मित्यादि, 'आराहण'त्ति आराधना–निरतिचारतयाऽनुपालना, तत्र ज्ञानं पञ्चप्रकारं श्रुतं वा तस्याराधना–कालाद्युपचारकरणं दर्शनं–सम्यक्त्वं तस्याराधना–निश्शङ्कितत्वादितदाचारानुपालनं चारित्रं–सामायिकादि तदाराधना–निरतिचारता, 'उक्कोसिय'त्ति उत्कर्षा ज्ञानाराधना ज्ञानकृत्यानुष्ठानेषु प्रकृष्टप्रयत्नता 'मज्झिम'त्ति तेष्वेव मध्यमप्रयत्नता 'जहन्न'त्ति तेष्वेवाल्पतमप्रयत्नता। एवं दर्शनाराधना चारित्राराधना चेति ॥ अथोक्ताऽऽराधनाभेदानामेव परस्परोपनिबन्धमभिधातुमाह—'जस्स ण'मित्यादि, 'अजहन्नुक्कोसा व'त्ति जघन्या चासौ उत्कर्षा च–उत्कृष्टा जघन्योत्कर्षा तन्निषेधादजघन्योत्कर्षा मध्यमेत्यर्थः, उत्कृष्टज्ञानाराधनावतो हि आद्ये द्वे दर्शनाराधने भवतो न पुनस्तृतीया, तथास्वभावत्वात्तस्येति। 'जस्स पुणे'त्यादि उत्कृष्टदर्शनाराधनावतो हि ज्ञानं प्रति त्रिप्रकारस्यापि प्रयत्नस्य सम्भवोऽस्तीति त्रिप्रकाराऽपि तदाराधना भजनया भवतीति। उत्कृष्टज्ञानचारित्राराधनासंयोगसूत्रे तूत्तरं–यस्योत्कृष्टा ज्ञानाराधना तस्य चारित्राराधना उत्कृष्टा मध्यमा वा स्यात्, उत्कृष्टज्ञानाराधनावतो हि चारित्रं प्रति नाल्पतमप्रयत्नता स्यात्तत्स्वभावात्तस्येति, उत्कृष्टचारित्राराधनावतस्तु ज्ञानं प्रति प्रयत्नत्रयमपि भजनया स्यात्, एतदेवातिदेशत आह–'जहा उक्कोसिये'त्यादि, उत्कृष्टदर्शनचारित्राराधनासंयोगसूत्रे तूत्तरं–'जस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा'इत्यादि, यस्योत्कृष्टा दर्शनाराधना तस्य चारित्राराधना त्रिविधाऽपि भजनया स्यात्, उत्कृष्टदर्शनाराधनावतो हि चारित्रं प्रति प्रयत्नस्य त्रिविधस्याप्यविरुद्धत्वादिति। उत्कृष्टायां तु चारित्राराधनायामुत्कृष्टैव दर्शनाराधना, प्रकृष्टचारित्रस्य प्रकृष्टदर्शनानुगतत्वादिति ॥ अथाराधनाभेदानां फलप्रदर्शनायाह—'उक्कोसियं ण'मित्यादि, 'तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झइ'त्ति उत्कृष्टां

८ शतके उद्देशः १० ज्ञानदर्शन-चारित्राराधनाः सू ३५५

॥४१९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि आराधनाया: वर्णनं

ज्ञानाराधनामाराध्य तेनैव भवग्रहणेन सिद्ध्यति, उत्कृष्टचारित्राराधनायाः सद्भावे, 'कप्पोवएसु व'त्ति 'कल्पोपगेषु' सौधर्मादिदेवलोकोपगेषु देवेषु मध्ये उपपद्यते, मध्यमचारित्राराधनासद्भावे,'कप्पातीएसु व'त्ति ग्रैवेयकादिदेवेषूत्पद्यते, मध्यमोत्कृष्टचारित्राराधनासद्भावे इति, तथा–'उक्कोसियं णं भंते! दंसणाराहण'मित्यादि,'एवं चेव'त्ति करणात् 'तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झइ'इत्यादि दृश्यं, तद्भवसिद्ध्यादि च तस्यां स्यात्, चारित्राराधनायास्तत्रोत्कृष्टाया मध्यमायाश्चोक्तत्वादिति, तथा–'उक्कोसियण्णं भंते ! चारित्ताराहण'मित्यादौ 'एवं चेव'त्ति करणात् 'तेणेव भवग्गहणेण'मित्यादि दृश्यं, केवलं तत्र 'अत्थेगइए कप्पोवगेसु वे'त्यभिहितमिह तु तन्न वाच्यं, उत्कृष्टचारित्राराधनावतः सौधर्मादिकल्पेष्वगमनाद्, वाच्यं पुनः 'अत्थेगइए कप्पातीएसु उववज्जइ'त्ति सिद्धिगमनाभावे तस्यानुत्तरसुरेषु गमनात्, एतदेव दर्शयतोक्तं-'नवर'मित्यादि । मध्यमज्ञानाराधनासूत्रे मध्यमत्वं ज्ञानाराधनाया अधिकृतभव एव निर्वाणाभावात्, भावे पुनरुत्कृष्टत्वमवश्यम्भावीत्यवसेयं, निर्वाणान्यथाऽनुपपत्तेरिति, 'दोच्चेणं'ति अधिकृतमनुष्यभवापेक्षया द्वितीयेन मनुष्यभवेन 'तच्चं पुण भवग्गहणं'ति अधिकृतमनुष्यभवग्रहणापेक्षया तृतीयं मनुष्यभवग्रहणं, एताश्च चारित्राराधनासंवलिता ज्ञानाद्याराधना इह विवक्षिताः, कथमन्यथा जघन्यज्ञानाराधनामाश्रित्य वक्ष्यति 'सत्तट्ठभवग्गहणाइं पुण णाइक्कमइ'त्ति, यतश्चारित्राराधनाया एवेदं फलमुक्तं, यदाह—"अट्ठभवा उ चरित्ते"त्ति [अष्टौ भवास्तु चारित्रे], श्रुतसम्यक्त्वदेशविरतिभवास्त्वसङ्ख्येया उक्ताः, ततश्चरणाराधनारहिता ज्ञानदर्शनाराधना असङ्ख्येयभविका अपि भवन्ति नत्वष्टभविका एवेति ॥ अनन्तरं जीवपरिणाम उक्तोऽथ पुद्गलपरिणामाभिधानायाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानादि आराधनाया: वर्णनं

व्याख्या प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः १

॥४२०॥

कतिविहे णं भंते ! पोग्गलपरिणामे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पोग्गलपरिणामे पण्णत्ते, तंजहा–वन्न-परिणामे १ गंधप० २ रसप० ३ फासप० ४ संठाणप० ५। वन्नपरिणामे णं कइविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे-पण्णत्ते, तंजहा–कालवन्नपरिणामे जाव सुक्किल्लवन्नपरिणामे, एएणं अभिलावेणं गंधपरिणामे दुविहे रसप-णामे पंचविहे फासपरिणामे अट्ठविहे, संठाणप० भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–परिमंडलसंठाणपरिणामे जाव आययसंठाणपरिणामे ॥ (सूत्रं ३५६) ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, 'वन्नपरिणामे'त्ति यत्पुद्गलो वर्णान्तरत्यागाद्वर्णान्तरं यात्यसौ वर्णपरिणाम इति, एवमन्यत्रापि, 'परिमंडलसंठाणपरिणामे'त्ति इह परिमण्डलसंस्थानं वलयाकारं, यावत्करणाच्च 'वट्टसंठाणपरिणामे तंससंठाणपरिणामे चउरंससंठाणपरिणामे'त्ति दृश्यम् ॥ पुद्गलाधिकारादिदमाह—

एगे भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसे किं दव्वं १ दव्वदेसे २ दव्वाइं ३ दव्वदेसा ४ उदाहु दव्वं च दव्वदेसे य ५ उदाहु दव्वं च दव्वदेसा य ६ उदाहु दव्वाइं च दव्वदेसे य ७ उदाहु दव्वाइं च दव्वदेसा य ८ ?, गोयमा ! सिय दव्वं सिय दव्वदेसे नो दव्वाइं नो दव्वदेसा नो दव्वं च दव्वदेसे य जाव नो दव्वाइं च दव्वदेसा य ॥ दो भंते ! पोग्गलत्थिका-यपएसा किं दव्वं दव्वदेसे पुच्छा तहेव, गोयमा ! सिय दव्वं १ सिय दव्वदेसे २ सिय दव्वाइं ३ सिय दव्वदेसा ४ सिय दव्वं च दव्वदेसे य ५ नो दव्वं च दव्वदेसा य ६ सेसा पडिसेहेयव्वा ॥ तिन्नि भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं दव्वदेसे० ? पुच्छा, गोयमा ! सिय दव्वं १ सिय दव्वदेसे २ एवं सत्त भंगा भाणियव्वा, जाव सिय दव्वाइं

८ शतके उद्देशः १० पुद्गलपरि-णामः सू ३५६ द्रव्यद्रव्य-देशादिः सू ३५७

॥४२०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

च दव्वदेसे य नो दव्वदेसा य। चत्तारि भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं ? पुच्छा, गोयमा ! सिय दव्वं १ सिय दव्वदेसे २ अट्ठवि भंगा भाणियव्वा जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसा य ८। जहा चत्तारि भणिया एवं पंच छ सत्त जाव असंखेज्जा। अणंता भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं० ?, एवं चेव जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसा य ॥ (सूत्रं ३५७) केवतिया णं भंते ! लोयागासपएसा पन्नत्ता ?, गोयमा ! असंखेज्जा लोयागासपएसा पन्नत्ता ॥ एगमेगस्स णं भंते ! जीवस्स केवइया जीवपएसा पण्णत्ता ?, गोयमा ! जावतिया लोगागासपएसा एगमेगस्स णं जीवस्स एवतिया जीवपएसा पण्णत्ता ॥ (सूत्रं ३५८) ॥

'एगे भंते ! पोग्गलत्थिकाये' इत्यादि, पुद्गलास्तिकायस्य–एकाणुकादिपुद्गलराशेः प्रदेशो–निरंशोऽंशः पुद्गलास्तिकायप्रदेशः–परमाणुः द्रव्यं–गुणपर्याययोगि द्रव्यदेशो–द्रव्यावयवः, एवमेकत्वबहुत्वाभ्यां प्रत्येकविकल्पाश्चत्वारः, द्विकसंयोगा अपि चत्वार एवेति प्रश्नः, उत्तरं तु स्याद्द्रव्यं द्रव्यान्तरासम्बन्धे सति, स्याद्द्रव्यदेशो द्रव्यान्तरसम्बन्धे सति, शेषविकल्पानां तु प्रतिषेधः, परमाणोरेकत्वेन बहुत्वस्य द्विकसंयोगस्य चाभावादिति। 'दो भंते !' इत्यादि, इहाष्टासु भङ्गकेषु मध्ये आद्याः पञ्च भवन्ति, न शेषाः, तत्र द्वौ प्रदेशौ स्याद्द्रव्यं, कथं ?, यदा तौ द्विप्रदेशिकस्कन्धतया परिणतौ तदा द्रव्यं १, यदा तु द्व्यणुकस्कन्धभावगतावेव तौ द्रव्यान्तरसम्बन्धमुपगतौ तदा द्रव्यदेशः २, यदा तु तौ द्वावपि भेदेन व्यवस्थितौ तदा द्रव्ये ३, यदा तु तावेव द्व्यणुकस्कन्धतामनापद्य द्रव्यान्तरेण सम्बन्धमुपगतौ तदा द्रव्यदेशाः ४, यदा पुनस्तयोरेकः केवलतया स्थितो द्वितीयश्च द्रव्यान्तरेण सम्बद्धस्तदा द्रव्यं च द्रव्यदेशश्चेति पञ्चमः, शेषविकल्पानां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३५७--३५८]

दीप अनुक्रम [४३३--४३४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥४२१॥

तु प्रतिषेधोऽसम्भवादिति ॥ 'तिन्नि भंते !'इत्यादि, त्रिषु प्रदेशेष्वष्टमविकल्पवर्जाः सप्त विकल्पाः संभवन्ति, तथाहि–यदा त्रयोऽपि त्रिप्रदेशिकस्कन्धतया परिणतास्तदा द्रव्यं १, यदा तु त्रिप्रदेशिकस्कन्धतापरिणता एव द्रव्यान्तरसम्बन्धमुपगतास्तदा द्रव्यदेशः २, यदा पुनस्ते त्रयोऽपि भेदेन व्यवस्थिता द्वौ वा द्व्यणुकीभूतावेकस्तु केवल एव स्थितस्तदा 'दव्वाइं'ति ३, यदा तु ते त्रयोऽपि स्कन्धतामनागता एव द्वौ वा द्व्यणुकीभूतावेकस्तु केवल एवेत्येवं द्रव्यान्तरेण संबद्धास्तदा 'दव्वदेसा'इति ४, यदा तु तेषां द्वौ द्व्यणुकतया परिणतावेकश्च द्रव्यान्तरेण संबद्धः अथवैकः केवल एव स्थितो द्वौ तु द्व्यणुकतया परिणम्य द्रव्यान्तरेण संबद्धौ तदा 'दव्वं च दव्वदेसे य'त्ति ५, यदा तु तेषामेकः केवल एव स्थितो द्वौ च भेदेन द्रव्यान्तरेण संबद्धौ तदा 'दव्वं च दव्वदेसा य'त्ति ६, यदा पुनस्तेषां द्वौ भेदेन स्थितावेकश्च द्रव्यान्तरेण संबद्धस्तदा 'दव्वाइं च दव्वदेसे य'त्ति ७, अष्टमविकल्पस्तु न संभवति, उभयत्र त्रिषु प्रदेशेषु बहुवचनाभावात्, प्रदेशचतुष्टयादौ त्वष्टमोऽपि संभवति, उभयत्रापि बहुवचनसद्भावादिति ॥ अनन्तरं परमाण्वादिवक्तव्यतोक्ता, परमाण्वादयश्च लोकाकाशप्रदेशावगाहिनो भवन्तीति तद्वक्तव्यतामाह—'केवइया ण'मित्यादि, 'असंखेज्ज'त्ति यस्मादसङ्ख्येयप्रदेशिको लोकस्तस्मात्तस्य प्रदेशा असङ्ख्येया इति ॥ प्रदेशाधिकारादेवेदमाह—'एगमेगस्से'त्यादि, एकैकस्य जीवस्य तावन्तः प्रदेशा यावन्तो लोकाकाशस्य, कथं ?, यस्माज्जीवः केवलिसमुद्घातकाले सर्वं लोकाकाशं व्याप्यावतिष्ठति तस्माल्लोकाकाशप्रदेशप्रमाणास्त इति ॥ जीवप्रदेशाश्च प्रायः कर्म्मप्रकृतिभिरनुगता इति तद्वक्तव्यतामभिधातुमाह—

कति णं भंते ! कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ, तंजहा–नाणावर-

८ शतके उद्देशः१० अण्वादेर्द्रव्यत्वादि लोकैकजीवप्रदेशाः सू ३५७-३५८

॥४२१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृते: अष्टविध-भेदा:

प्रत सूत्रांक [३५९]

दीप अनुक्रम [४३५]

णिज्जं जाव अंतराइयं, नेरइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ , एवं सव्वजीवाणं अट्ठ कम्मपगडीओ ठावेयव्वाओ जाव वेमाणियाणं । नाणावरणिज्जस्स णं भंते ! कम्मस्स केवतिया अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता ?, गोयमा ! अणंता अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता, नेरइयाणं भंते ! णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवतिया अविभागपलिच्छेया पण्णत्ता?, गोयमा ! अणंता अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता, एवं सव्वजीवाणं जाव वेमाणियाणं पुच्छा, गोयमा ! अणंता अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता, एवं जहा णाणावरणिज्जस्स अविभागपलिच्छेदा भणिया तहा अट्ठण्हवि कम्मपगडीणं भाणियव्वा जाव वेमाणियाणं । अंतराइयस्स । एगमेगस्स णं भंते ! जीवस्स एगमेगे जीवपएसे णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवइएहिं अविभागपलिच्छेदेहिं आवेढिए परिवेढिए सिया ?, गोयमा ! सिय आवेढियपरिवेढिए सिय नो आवेढियपरिवेढिए, जइ आवेढियपरिवेढिए नियमा अणंतेहिं, एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स एगमेगे जीवपएसे णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवइएहिं अविभागपलिच्छेदेहिं आवेढिए परिवेढिते ?, गोयमा ! नियमा अणंतेहिं, जहा नेरइयस्स एवं जाव वेमाणियस्स, नवरं मणूसस्स जहा जीवस्स । एगमेगस्स णं भंते ! जीवस्स एगमेगे जीवपएसे दरिसणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवतिएहिं एवं जहेव नाणावरणिज्जस्स तहेव दंडगो भाणियव्वो जाव वेमाणियस्स, एवं जाव अंतराइयस्स भाणियव्वं, नवरं वेयणिज्जस्स आउयस्स णामस्स गोयस्स एएसिं चउण्हवि कम्माणं मणूसस्स जहा नेरइयस्स तहा भाणियव्वं सेसं तं चेव ॥ (सूत्रं ३५९) ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृते: अष्टविध-भेदा:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४२२॥

'कइ ण'मित्यादि, 'अविभागपलिच्छेद'त्ति परिच्छिद्यन्त इति परिच्छेदा–अंशास्ते च सविभागा अपि भवन्त्यतो विशेष्यन्ते–अविभागाश्च ते परिच्छेदाश्चेत्यविभागपरिच्छेदाः, निरंशा अंशा इत्यर्थः, ते च ज्ञानावृरणीयस्य कर्म्मणोऽनन्ताः, कथं ?, ज्ञानावरणीयं यावतो ज्ञानस्याविभागान् भेदान् आवृणोति तावन्त एव तस्याविभागपरिच्छेदाः, दलिकापेक्ष्या वाऽनन्ततत्परमाणुरूपाः, 'अविभागपलिच्छेदेहिं'ति तत्परमाणुभिः 'आवेढिए परिवेढिए'त्ति आवेष्टितपरिवेष्टितोऽत्यन्तं परिवेष्टित इत्यर्थः आवेष्ट्य परिवेष्टित इति वा 'सिय नो आवेढियपरिवेढिए'त्ति केवलिनं प्रतीत्य तस्य क्षीणज्ञानावरणत्वेन तत्प्रदेशस्य ज्ञानावरणीयाविभागपलिच्छेदैरावेष्टनपरिवेष्टनाभावादिति । 'मणूसस्स जहा जीवस्स'त्ति 'सिय आवेढिये'त्यादि वाच्यमित्यर्थः, मनुष्यापेक्षयाऽऽवेष्टितपरिवेष्टितत्वस्य तदितरस्य च सम्भवात् । एवं दर्शनावरणीयमोहनीयान्तरायेष्वपि वाच्यं, वेदनीयायुष्कनामगोत्रेषु पुनर्जीवपद एव भजना वाच्या सिद्धापेक्षया, मनुष्यपदे तु नासौ, तत्र वेदनीयादीनां भावादित्येतदेवाह—'नवरं वेयणिज्जस्से'त्यादि ॥ अथ ज्ञानावरणं शेषैः सह चिन्त्यते—

जस्स णं भंते ! नाणावरणिज्जं तस्स दरिसणावरणिज्जं जस्स दंसणावरणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं ?, गोयमा ! जस्स णं नाणावरणिज्जं तस्स दंसणावरणिज्जं नियमा अत्थि जस्स णं दरिसणावरणिज्जं तस्सवि नाणावरणिज्जं नियमा अत्थि । जस्स णं भंते ! णाणावरणिज्जं तस्स वेयणिज्जं जस्स वेयणिज्जं तस्स णाणावरणिज्जं ?, गोयमा ! जस्स नाणावरणिज्जं तस्स वेयणिज्जं नियमा अत्थि जस्स पुण वेयणिज्जं तस्स णाणाव-

८ शतके उद्देशः १० कर्मपरिच्छेदः सू ३५९

॥४२२॥

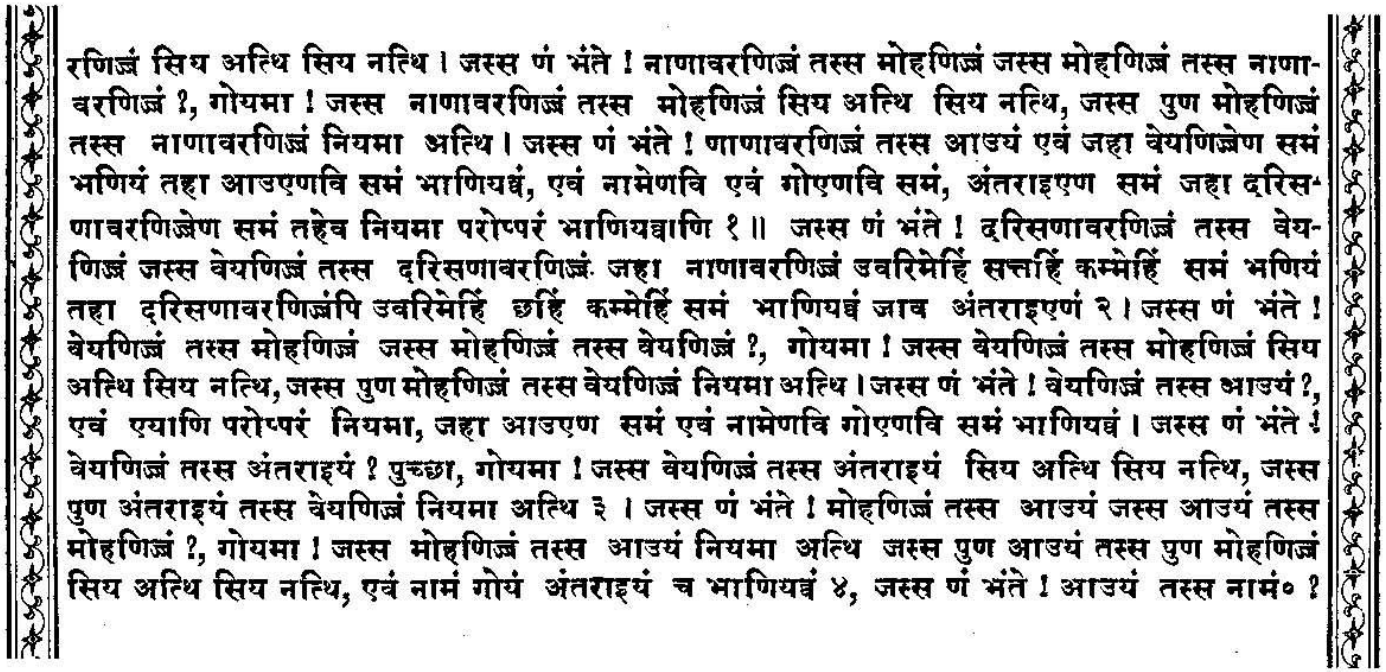
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृते: अष्टविध-भेदा:

ज्ञानावरण-आदि कर्मन: सह अन्य कर्माणाम् संबंध:

प्रत सूत्रांक [३६०--३६१]

दीप अनुक्रम [४३६--४३७]



रणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि । जस्स णं भंते ! नाणावरणिज्जं तस्स मोहणिज्जं जस्स मोहणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं ?, गोयमा ! जस्स नाणावरणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण मोहणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं नियमा अत्थि । जस्स णं भंते ! णाणावरणिज्जं तस्स आउयं एवं जहा वेयणिज्जेण समं भणियं तहा आउएणवि समं भाणियव्वं, एवं नामेणवि एवं गोएणवि समं, अंतराइएण समं जहा दरिसणावरणिज्जेण समं तहेव नियमा परोप्परं भाणियव्वाणि १ ॥ जस्स णं भंते ! दरिसणावरणिज्जं तस्स वेयणिज्जं जस्स वेयणिज्जं तस्स दरिसणावरणिज्जं जहा नाणावरणिज्जं उवरिमेहिं सत्तहिं कम्मेहिं समं भणियं तहा दरिसणावरणिज्जंपि उवरिमेहिं छहिं कम्मेहिं समं भाणियव्वं जाव अंतराइएणं २ । जस्स णं भंते ! वेयणिज्जं तस्स मोहणिज्जं जस्स मोहणिज्जं तस्स वेयणिज्जं ?, गोयमा ! जस्स वेयणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण मोहणिज्जं तस्स वेयणिज्जं नियमा अत्थि । जस्स णं भंते ! वेयणिज्जं तस्स आउयं ?, एवं एयाणि परोप्परं नियमा, जहा आउएण समं एवं नामेणवि गोएणवि समं भाणियव्वं । जस्स णं भंते ! वेयणिज्जं तस्स अंतराइयं ? पुच्छा, गोयमा ! जस्स वेयणिज्जं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स वेयणिज्जं नियमा अत्थि ३ । जस्स णं भंते ! मोहणिज्जं तस्स आउयं जस्स आउयं तस्स मोहणिज्जं ?, गोयमा ! जस्स मोहणिज्जं तस्स आउयं नियमा अत्थि जस्स पुण आउयं तस्स पुण मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि, एवं नामं गोयं अंतराइयं च भाणियव्वं ४, जस्स णं भंते ! आउयं तस्स नामं० ?

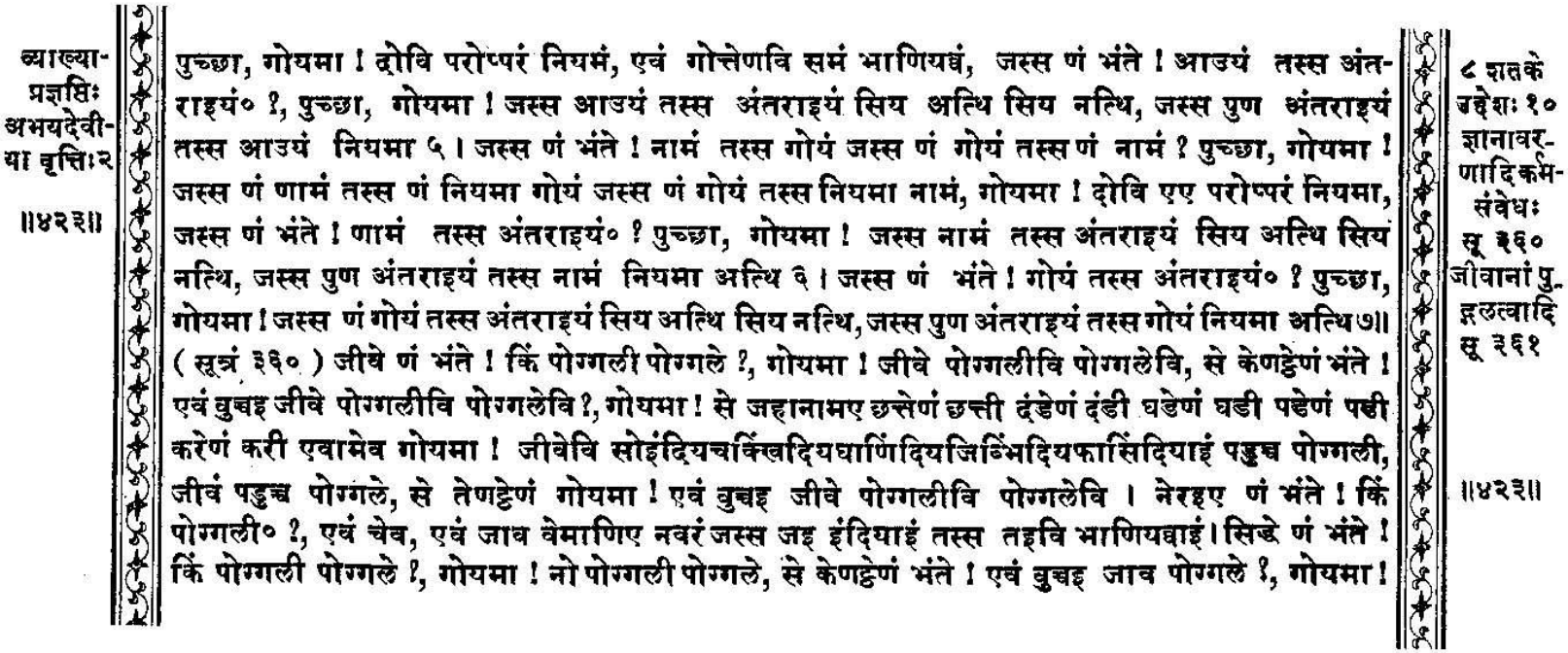
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानावरण-आदि कर्मन: सह अन्य कर्माणाम् संबंध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३६०--३६१]

दीप अनुक्रम [४३६--४३७]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥४२३॥

पुच्छा, गोयमा ! दोवि परोप्परं नियमं, एवं गोत्तेणवि समं भाणियव्वं, जस्स णं भंते ! आउयं तस्स अंतराइयं० ?, पुच्छा, गोयमा ! जस्स आउयं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स आउयं नियमा ५। जस्स णं भंते ! नामं तस्स गोयं जस्स णं गोयं तस्स णं नामं ? पुच्छा, गोयमा ! जस्स णं णामं तस्स णं नियमा गोयं जस्स णं गोयं तस्स नियमा नामं, गोयमा ! दोवि एए परोप्परं नियमा, जस्स णं भंते ! णामं तस्स अंतराइयं० ? पुच्छा, गोयमा ! जस्स नामं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स नामं नियमा अत्थि ६। जस्स णं भंते ! गोयं तस्स अंतराइयं० ? पुच्छा, गोयमा ! जस्स णं गोयं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स गोयं नियमा अत्थि ७॥ (सूत्रं ३६०) जीवे णं भंते ! किं पोग्गली पोग्गले ?, गोयमा ! जीवे पोग्गलीवि पोग्गलेवि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जीवे पोग्गलीवि पोग्गलेवि ?, गोयमा ! से जहानामए छत्तेणं छत्ती दंडेणं दंडी घडेणं घडी पडेणं पडी करेणं करी एवामेव गोयमा ! जीवेवि सोइंदियचक्खिंदियघाणिंदियजिब्भिंदियफासिंदियाइं पडुच्च पोग्गली, जीवं पडुच्च पोग्गले, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जीवे पोग्गलीवि पोग्गलेवि । नेरइए णं भंते ! किं पोग्गली० ?, एवं चेव, एवं जाव वेमाणिए नवरं जस्स जइ इंदियाइं तस्स तइवि भाणियव्वाइं। सिद्धे णं भंते ! किं पोग्गली पोग्गले ?, गोयमा ! नो पोग्गली पोग्गले, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव पोग्गले ?, गोयमा !

८ शतके उद्देशः १० ज्ञानावर-णादिकर्म-संवेधः सू ३६० जीवानां पु-द्गलत्वादि सू ३६१

॥४२३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानावरण-आदि कर्मन: सह अन्य कर्माणाम् संबंध:

प्रत सूत्रांक [३६०--३६१]

दीप अनुक्रम [४३६--४३७]

जीवं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ सिद्धे नो पोग्गली पोग्गले। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ३६१)
॥ ८–१० ॥ अट्ठमसए दशमः समत्तं अट्ठमं सयं ॥ ८ ॥

'जस्स ण'मित्यादि, 'जस्स पुण वेयणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति अकेवलिनं केवलिनं च प्रतीत्य, अकेवलिनो हि वेदनीयं ज्ञानावरणीयं चास्ति, केवलिनस्तु वेदनीयमस्ति न तु ज्ञानावरणीयमिति । 'जस्स णाणावरणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति अक्षपकं क्षपकं च प्रतीत्य, अक्षपकस्य हि ज्ञानावरणीयं मोहनीयं चास्ति, क्षपकस्य तु मोहक्षये यावत् केवलज्ञानं नोत्पद्यते तावज्ज्ञानावरणीयमस्ति न तु मोहनीयमिति । एवं च यथा ज्ञानावरणीयं वेदनीयेन सममधीतं तथाऽऽयुषा नाम्ना गोत्रेण च सहाध्येयं, उक्तप्रकारेण भजनायाः सर्वेषु तेषु भावात्, 'अंतराएणं च समं' ज्ञानावरणीयं तथा वाच्यं यथा दर्शनावरणं, निर्भजनमित्यर्थः, एतदेवाह–'एवं जहा वेयणिज्जेण सम'मित्यादि, 'नियमा परोप्परं भाणियव्वाणि'त्ति कोऽर्थः ?–'जस्स नाणावरणिज्जं तस्स नियमा अंतराइयं जस्स अंतराइयं तस्स नियमा नाणावरणिज्ज'मित्येवमनयोः परस्परं नियमो वाच्य इत्यर्थः ॥ अथ दर्शनावरणं शेषैः षड्भिः सह चिन्तयन्नाह— 'जस्से'त्यादि, अयं च गमो ज्ञानावरणीयगमसम एवेति । 'जस्स णं भंते ! वेयणिज्ज'मित्यादिना तु वेदनीयं शेषैः पञ्चभिः सह चिन्त्यते, तत्र च 'जस्स वेयणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति अक्षीणमोहं क्षीणमोहं च प्रतीत्य, अक्षीणमोहस्य हि वेदनीयं मोहनीयं चास्ति, क्षीणमोहस्य तु वेदनीयमस्ति नतु मोहनीयमिति । 'एवं एयाणि परोप्परं नियम'त्ति कोऽर्थः ?–यस्य वेदनीयं तस्य नियमादायुर्यस्यायुस्तस्य नियमाद्वेदनीयमित्येवमेते वाच्ये इत्यर्थः, एवं नामगो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३६०-३६१]

दीप अनुक्रम [४३६-४३७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४२४॥

त्राभ्यामपि वाच्यं, एतदेवाह–'जहा आउएणे'त्यादि, अन्तरायेण तु भजनया यतो वेदनीयं अन्तरायं चाकेवलिनामस्ति केवलिनां तु वेदनीयमस्ति न त्वन्तरायं, एतदेव दर्शयतोक्तं 'जस्स वेयणिज्जं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति। अथ मोहनीयमन्यैश्चतुर्भिः सह चिन्त्यते, तत्र यस्य मोहनीयं तस्यायुर्नियमादकेवलिन इव, यस्य पुनरायुस्तस्य मोहनीयं भजनया, यतोऽक्षीणमोहस्यायुर्मोहनीयं चास्ति क्षीणमोहस्य त्वायुरेवेति, 'एवं नामं गोयं अंतराइयं च भाणियव्वं'ति, अयमर्थः–यस्य मोहनीयं तस्य नाम गोत्रमन्तरायं च नियमादस्ति, यस्य पुनर्नामादित्रयं तस्य मोहनीयं स्यादस्त्यक्षीण-मोहस्येव, स्यान्नास्ति क्षीणमोहस्येवेति॥ अथायुरन्यैस्त्रिभिः सह चिन्त्यते—'जस्स णं भंते! आउयं'मित्यादि, 'दोवि परोप्परं नियम'त्ति कोऽर्थः?–'जस्स आउयं तस्स नियमा नामं जस्स नामं तस्स नियमा आउयं'इत्यर्थः, एवं गोत्रे-णापि, 'जस्स आउयं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति यस्यायुस्तस्यान्तरायं स्यादस्ति अकेवलिवत् स्यान्नास्ति केवलिवदिति। 'जस्स णं भंते! णामं'इत्यादिना नामान्येन द्वयेन सह चिन्त्यते, तत्र यस्य नाम तस्य नियमाद्गोत्रं यस्य गोत्रं तस्य नियमान्नाम, तथा यस्य नाम तस्यान्तरायं स्यादस्त्यकेवलिवत् स्यान्नास्ति केवलिवदिति। एवं गोत्रान्त-रायोरपि भजना भावनीयेति॥ अनन्तरं कर्मोक्तं तच्च पुद्गलात्मकमतस्तदधिकारादिदमाह—'जीवे ण'मित्यादि, 'पोग्गलीवि'त्ति पुद्गलाः–श्रोत्रादिरूपा विद्यन्ते यस्यासौ पुद्गली, 'पुग्गलेवि'त्ति 'पुद्गल इति सञ्ज्ञा जीवस्य ततस्तद्योगात् पुद्गल इति। एतदेव दर्शयन्नाह–'से केणट्ठेण'मित्यादि॥ अष्टमशते दशमः॥ ८–१०॥

८ शतके उद्देशः १० ज्ञानावर्-णादिकर्म-संवेधः सू ३६० जीवानां पुद्गलत्वादि सू ३६१ ॥४२४॥

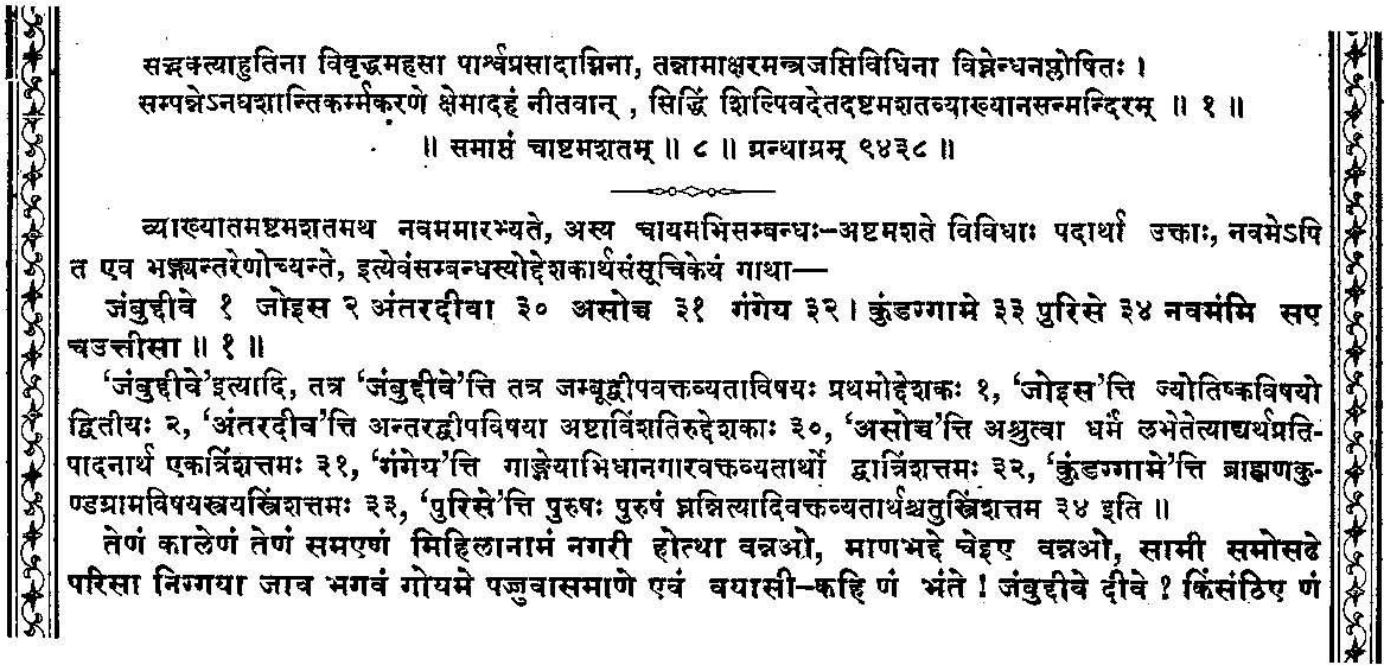
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टम-शतके दशम-उद्देशक: समाप्त: तत् समाप्ते अष्टमं शतकं अपि समाप्तं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३६२] + गाथा

दीप अनुक्रम [४३८-४३९]



सङ्गक्त्याहुतिना विवृद्धमहसा पार्श्वप्रसादाग्निना, तन्नामाक्षरमन्त्रजप्तिविधिना विध्नेन्धनक्षोषितः ।
सम्पन्नेऽनघशान्तिकर्म्मकरणे क्षेमादहं नीतवान् , सिद्धिं शिल्पिवदेतदष्टमशतव्याख्यानसन्मन्दिरम् ॥ १ ॥
॥ समाप्तं चाष्टमशतम् ॥ ८ ॥ ग्रन्थाग्रम् ९४३८ ॥

व्याख्यातमष्टमशतमथ नवममारभ्यते, अस्य चायमभिसम्बन्धः–अष्टमशते विविधाः पदार्था उक्ताः, नवमेऽपि त एव भङ्ग्यन्तरेणोच्यन्ते, इत्येवंसम्बन्धस्योद्देशकार्थसंसूचिकेयं गाथा—

जंबुद्दीवे १ जोइस २ अंतरदीवा ३० असोच्च ३१ गंगेय ३२। कुंडग्गामे ३३ पुरिसे ३४ नवमंमि सए चउत्तीसा ॥ १ ॥

'जंबुद्दीवे'इत्यादि, तत्र 'जंबुद्दीवे'त्ति तत्र जम्बूद्वीपवक्तव्यताविषयः प्रथमोद्देशकः १, 'जोइस'त्ति ज्योतिष्कविषयो द्वितीयः २, 'अंतरदीव'त्ति अन्तरद्वीपविषया अष्टाविंशतिरुद्देशकाः ३०, 'असोच्च'त्ति अश्रुत्वा धर्मं लभेतेत्याद्यर्थप्रतिपादनार्थं एकत्रिंशत्तमः ३१, 'गंगेय'त्ति गाङ्गेयाभिधानगारवक्तव्यतार्थो द्वात्रिंशत्तमः ३२, 'कुंडग्गामे'त्ति ब्राह्मणकुण्डग्रामविषयस्त्रयस्त्रिंशत्तमः ३३, 'पुरिसे'त्ति पुरुषः पुरुषं भन्नित्यादिवक्तव्यतार्थश्चतुस्त्रिंशत्तम ३४ इति ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं मिहिलानामं नगरी होत्था वन्नओ, माणभद्दे चेइए वन्नओ, सामी समोसढे परिसा निग्गया जाव भगवं गोयमे पज्जुवासमाणे एवं वयासी–कहि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे ? किंसंठिए णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ नवमं शतकं आरब्धं

अथ नवमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [३६२] + गाथा

दीप अनुक्रम [४३८-४३९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४२५॥

भंते ! जंबुद्दीवे दीवे ? एवं जंबुद्दीवपन्नत्ती भाणियव्वा जाव एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे २ चोद्दस सलिला सयसहस्सा छप्पन्नं च सहस्सा भवंतीतिमक्खाया । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ३६२) ॥ नवमस्स पढमो ॥ ९–१ ॥

'कहि णं भंते'इत्यादि, कस्मिन् देशे इत्यर्थः 'एवं जंबुद्दीवपन्नत्ती भाणियव्व'त्ति, सा चेयम्–'केमहालए णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे किमागारभावपडोयारे णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे पन्नत्ते ?' कस्मिन्नाकारभावे प्रत्यवतारो यस्य स तथा 'गोयमा ! अयण्णं जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरए सव्वखुड्डाए वट्टे तिल्लपूयसंठाणसंठिए वट्टे रहचक्कवालसंठाणसंठिए वट्टे पुक्खरकण्णियासंठाणसंठिए वट्टे पडिपुन्नचंदसंठाणसंठिए पन्नत्ते एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेण'मित्यादि, किमन्तेयं व्याख्या ? इत्याह—'जावे'त्यादि, 'एवामेव'त्ति उक्तेनैव न्यायेन पूर्वापरसमुद्रगमनादिना 'सपुव्वावरेणं'ति सह पूर्वेण नदीवृन्देनापरं सपूर्वापरं तेन 'चोद्दस सलिला सयसहस्सा छप्पन्नं च सहस्सा भवंतीति मक्खाय'त्ति इह 'सलिलाशतसहस्राणि' नदीलक्षाणि, एतत्सङ्ख्या चैवं–भरतैरावतयोर्गङ्गासिन्धुरक्तारक्तवत्यः प्रत्येकं चतुर्दशभिर्नदीनां सहस्रैर्युक्ताः, तथा हैमवतैरण्यवतयोः रोहिद्रोहितांशा सुवर्णकूला रूप्यकूलाः प्रत्येकमष्टाविंशत्या सहस्रैर्युक्ताः, तथा हरिवर्षरम्यकवर्षयोर्हरिहरिकान्तानरकान्तानारीकान्ताः प्रत्येकं षट्पञ्चाशता सहस्रैर्युक्ताः समुद्रमुपयान्ति, तथा महाविदेहे शीताशीतोदे प्रत्येकं पञ्चभिर्लक्षैर्द्वात्रिंशता च सहस्रैर्युक्ते समुद्रमुपयात इति, सर्वासां च मीलने सूत्रोक्तं प्रमाणं भवति, वाचनान्तरे पुनरिदं दृश्यते–'जहा जंबूद्दीवपन्नत्तीए तहा णेयव्वं जोइसविहूणं जाव–खंडा जोयण वासा पवय

९ शतके उद्देशः १ जम्बूसंग्रहणी सू ३६२

॥४२५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३६२] + गाथा

दीप अनुक्रम [४३८--४३९]

कूडा य तित्थ सेढीओ । विजयद्दहसलिलाउ य पिंडए होति संगहणी ॥ १ ॥'ति, तत्र 'जोइसविहूणं'ति जंबूद्वीपप्रज्ञप्त्यां ज्योतिष्कवक्तव्यताऽस्ति तद्विहीनं समस्तं जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमस्योद्देशकस्य सूत्रं ज्ञेयं, किंपर्यवसानं पुनस्तद् ? इत्याह– 'जाव खंडे'त्यादि, तत्र 'खंडे'त्ति जम्बूद्वीपो भरतक्षेत्रप्रमाणानि खण्डानि कियन्ति स्यात् ?, उच्यते, नवत्यधिकं खण्डशतं, 'जोयण'त्ति जम्बूद्वीपः कियन्ति योजनप्रमाणानि खण्डानि स्यात् ?, उच्यते,–'सत्तेव य कोडिसया णउया छप्पन्नसयसहस्साइं । चउणउइं च सहस्सा सयं दिवड्ढं च साहीयं ॥ १ ॥ गाउयमेगं पन्नरस धणुस्सया तह धणूणि पन्नरस । सट्ठिं च अंगुलाइं जंबुद्दीवस्स गणियपयं ॥ २ ॥' इति, गणितपदमित्येवंप्रकारस्य गणितस्य सञ्ज्ञा 'वास'त्ति जम्बूद्वीपे भरतहेमवतादीनि सप्त वर्षाणि क्षेत्राणीत्यर्थः, 'पव्वय'त्ति जम्बूद्वीपे कियन्तः पर्वताः ?, उच्यन्ते, षड् वर्षधरपर्वता हिमवदादयः एको मन्दरः एकश्चित्रकूटः एक एव विचित्रकूटः, एतौ च देवकुरुषु, द्वौ यमकपर्वतौ, एतौ चोत्तरकुरुषु, द्वे शते काञ्चनकानाम्, एते च शीताशीतोदयोः पार्श्वतो, विंशतिः वक्षस्काराः, चतुस्त्रिंशद्दीर्घविजयार्द्धपर्वताश्चत्वारो वर्तुलविजयार्द्धाः, एवं द्वे शते एकोनसप्तत्यधिके पर्वतानां भवतः, 'कूड'त्ति कियन्ति पर्वतकूटानि ?, उच्यते, षट्पञ्चाशद्वर्षधरकूटानि षण्णवतिर्वक्षस्कारकूटानि त्रीणि षडुत्तराणि विजयार्द्धकूटानां शतानि नव च मन्दरकूटानि, एवं चत्वारि सप्तषष्ट्यधिकानि कूटशतानि भवन्ति, 'तित्थ'त्ति जम्बूद्वीपे कियन्ति तीर्थानि ?, उच्यते, भरतादिषु चतुस्त्रिंशति खण्डेषु

१ सप्तैव कोटीशतानि नवतिः कोट्यः षट्पञ्चाशल्लक्षाश्चतुर्नवतिः सहस्राणि साधिकं सार्धं शतं च ॥१॥ गव्यूतमेकं पञ्चदशाधिकानि पञ्चदश शतानि धनूंषि षष्टिश्चाङ्गुलानां जम्बूद्वीपस्यैतद् गणितपदम् ॥ २ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३६२] + गाथा

दीप अनुक्रम [४३८-४३९]

व्याख्या प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४२६॥

मागधवरदामप्रभासाख्यानि त्रीणि त्रीणि तीर्थानि भवन्ति, एवं चैकं द्व्युत्तरं तीर्थशतं भवतीति, 'सेढीओ'त्ति विद्याधर-श्रेणयः आभियोगिकश्रेणयश्च कियन्त्यः ?, उच्यते, अष्टषष्टिः प्रत्येकमासां भवन्ति, विजयार्द्धपर्वतेषु प्रत्येकं द्वयोर्द्वयो-र्भावात्, एवं च षट्त्रिंशदधिकं श्रेणिशतं भवतीति, 'विजय'त्ति कियन्ति चक्रवर्त्तिविजेतव्यानि भूखण्डानि ?, उच्यते, चतुस्त्रिंशत्, एतावन्त एव राजधान्यादयोऽर्था इति, 'दह'त्ति कियन्तो महाह्रदाः ?, उच्यते, पद्मादयः षड् दश च नीलवदादय उत्तरकुरुदेवकुरुमध्यवर्त्तिन इत्येवं षोडश, 'सलिल'त्ति नद्यस्तत्प्रमाणं च दर्शितमेव, 'पिंडए होति संग-हणि'त्ति उद्देशकार्थानां पिण्डके–मीलके विषयभूते इयं सङ्ग्रहणीगाथा भवतीति ॥ नवमशते प्रथमः ॥ ९–१ ॥

अनन्तरोद्देशके जम्बूद्वीपवक्तव्यतोक्ता द्वितीये तु जम्बूद्वीपादिषु ज्योतिष्कवक्तव्यताऽभिधीयते, तस्य चेदमादिसूत्रम्— रायगिहे जाव एवं वयासी–जम्बुद्दीवे णं भंते ! दीवे केवइया चंदा पभासिंसु वा पभासेंति वा पभासि-स्संति वा ?, एवं जहा जीवाभिगमे जाव–'एगं च सयसहस्सं तेत्तीसं खलु भवे सहस्साइं । नव य सया प-ण्णासा तारागणकोडिकोडीणं ॥ १ ॥' सेभं सोभिंसु सोभिंति सोभिस्संति ॥ (सूत्रं ३६३) लवणे णं भंते ! समुद्दे केवतिया चंदा पभासिंसु वा पभासिंति वा पभासिस्संति वा ? एवं जहा जीवाभिगमे जाव ताराओ ॥ धायइसंडे कालोदे पुक्खरवरे अब्भिंतरपुक्खरद्धे मणुस्सखेत्ते, एएसु सव्वेसु जहा जीवाभिगमे जाव–'एगस-सीपरिवारो तारागणकोडाकोडीणं । ' पुक्खरद्धे णं भंते ! समुद्दे केवइया चंदा पभासिंसु वा ?, एवं सव्वेसु

९ शतके उद्देशः १ जम्बूसंग्रह-णी सू ३६२

॥४२६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र नवमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

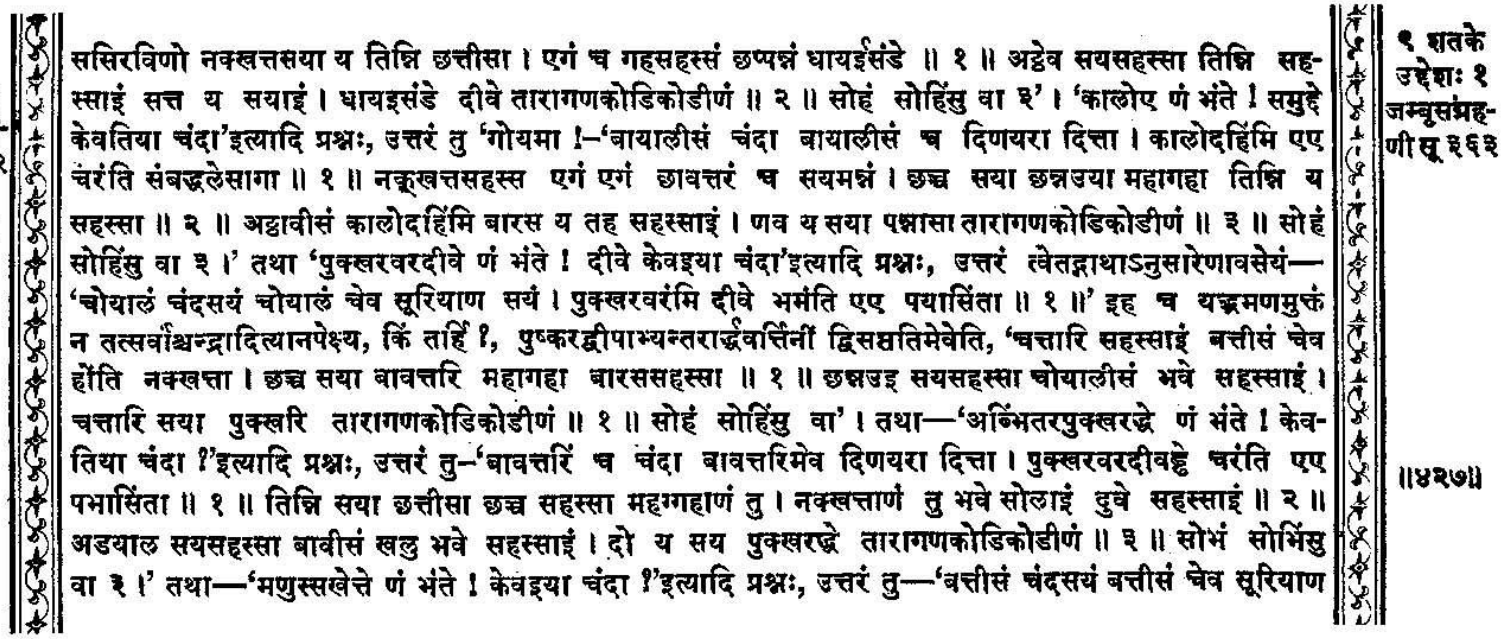
अथ नवमे शतके द्वितीय उद्देशक: आरभ्यते

दीवसमुद्देसु जोतिसियाणं भाणियव्वं जाव सयंभूरमणे जाव सोभं सोभिंसु वा सोभंति वा सोभिस्संति वा। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ३६३) नवमसए बीओ उद्देसो समत्तो ॥ ९–२ ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'एवं जहा जीवाभिगमे'त्ति तत्र चैतत्सूत्रमेवम्—'केवतिया चंदा पभासिंसु वा पभासिंति वा पभासिस्संति वा ३ ? केवतिया सूरिया तविंसु वा तवंति वा तविस्संति वा ? केवइया नक्खत्ता जोयं जोइंसु वा ३ ? केवइया महग्गहा चारं चरिंसु वा ३ ? केवइयाओ तारागणकोडाकोडीओ सोहिं सोहिंसु वा ३?' शोभां कृतवत्य इत्यर्थः, 'गोतमा ! जंबूदीवे दीवे दो चंदा पभासिंसु वा ३ दो सूरिया तविंसु वा ३ छप्पन्नं नक्खत्ता जोगं जोइंसु वा ३ छावत्तरं गहसयं चारं चरिंसु वा ३' बहुवचनमिह छान्दसत्वादिति, 'एगं च सयसहस्सं तेत्तीसं खलु भवे सहस्साइं' शेषं तु सूत्रपुस्तके लिखितमेवास्ते ॥ 'लवणे णं भंते !'इत्यादौ 'एवं जहा जीवाभिगमे'त्ति तत्र चेदं सूत्रमेवं–'केवइया चंदा पभासिंसु वा ३ केवतिया सूरिया तविंसु वा ३'इत्यादि प्रश्नसूत्रं पूर्ववत् , उत्तरं तु 'गोयमा ! लवणे णं समुद्दे चत्तारि चंदा पभासिंसु वा ३ चत्तारि सूरिया तविंसु वा ३ बारसोत्तरं नक्खत्तसयं जोगं जोइंसु वा ३ तिन्नि बावन्ना महग्गहसया चारं चरिंसु वा ३ दोन्नि सयसहस्सा सत्तट्ठिं च सहस्सा नवसया तारागणकोडिकोडीणं सोहं सोहिंसु वा ३' सूत्रपर्यन्तमाह—'जाव ताराओ'त्ति तारकासूत्रं यावत्तच्च दर्शितमेवेति । 'धायइसंडे'इत्यादौ यदुक्तं 'जहा जीवाभिगमे' तदेवं भावनीयं—'धायइसंडे णं भंते ! दीवे केवतिया चंदा पभासिंसु वा ३ केवतिया सूरिया तविंसु वा ३ ?' इत्यादिप्रश्नाः पूर्ववत्, उत्तरं तु 'गोयमा ! बारस चंदा पभासिंसु वा ३ बारस सूरिया तविंसु वा ३, एवं—'चउवीसं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र सूत्र क्रमांक ३६३ द्वि-वारान् मुद्रितं तत् मुद्रण-दोषः संभाव्यते



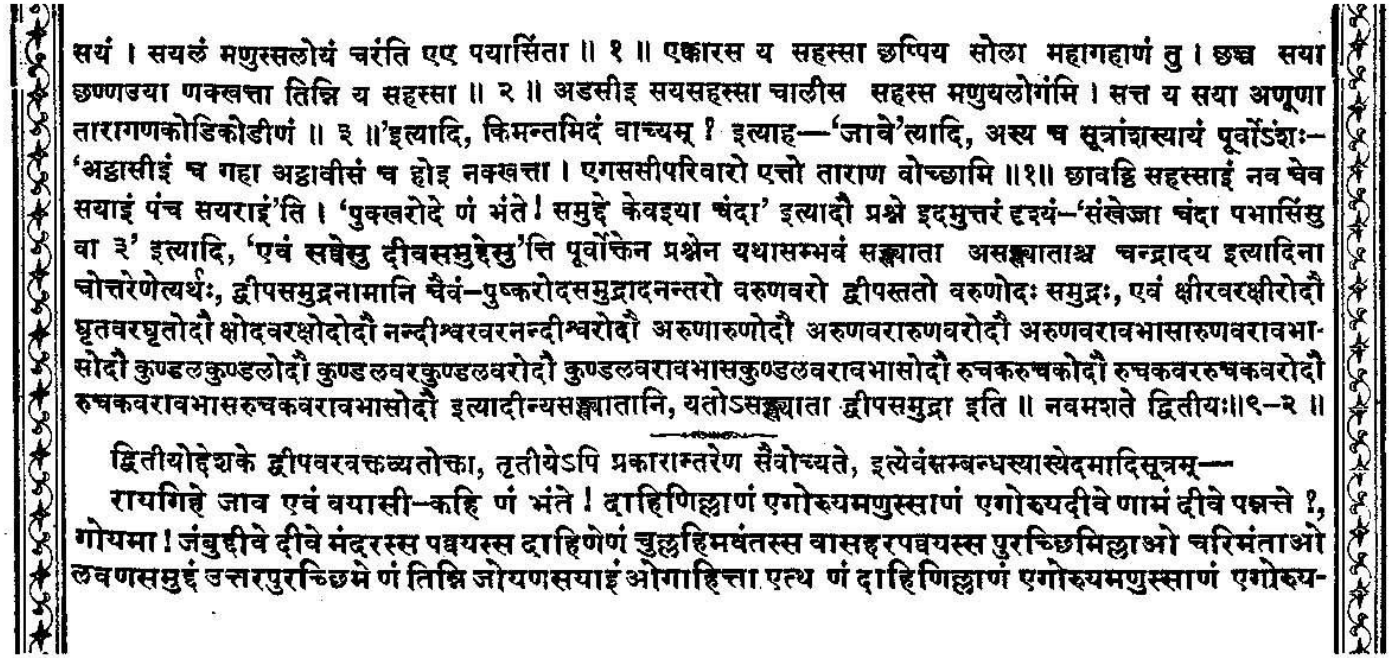
व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥४२७॥

ससिरविणो नक्खत्तसया य तिन्नि छत्तीसा । एगं च गहसहस्सं छप्पन्नं धायईसंडे ॥ १ ॥ अट्ठेव सयसहस्सा तिन्नि सहस्साइं सत्त य सयाइं । धायइसंडे दीवे तारागणकोडिकोडीणं ॥ २ ॥ सोहं सोहिंसु वा ३' । 'कालोए णं भंते ! समुद्दे केवतिया चंदा'इत्यादि प्रश्नः, उत्तरं तु 'गोयमा !–'बायालीसं चंदा बायालीसं च दिणयरा दित्ता । कालोदहिंमि एए चरंति संबद्धलेसागा ॥ १ ॥ नक्खत्तसहस्स एगं एगं छावत्तरं च सयमन्नं । छच्च सया छन्नउया महागहा तिन्नि य सहस्सा ॥ २ ॥ अट्ठावीसं कालोदहिंमि बारस य तह सहस्साइं । णव य सया पन्नासा तारागणकोडिकोडीणं ॥ ३ ॥ सोहं सोहिंसु वा ३ ।' तथा 'पुक्खरवरदीवे णं भंते ! दीवे केवइया चंदा'इत्यादि प्रश्नः, उत्तरं त्वेतद्गाथाऽनुसारेणावसेयं— 'चोयालं चंदसयं चोयालं चेव सूरियाण सयं । पुक्खरवरंमि दीवे भमंति एए पयासिंता ॥ १ ॥' इह च यद्भ्रमणमुक्तं न तत्सर्वाश्चन्द्रादित्यानपेक्ष्य, किं तर्हि ?, पुष्करद्वीपाभ्यन्तरार्द्धवर्त्तिनीं द्विसप्ततिमेवेति, 'चत्तारि सहस्साइं बत्तीसं चेव होंति नक्खत्ता । छच्च सया बावत्तरि महागहा बारससहस्सा ॥ १ ॥ छन्नउइ सयसहस्सा चोयालीसं भवे सहस्साइं । चत्तारि सया पुक्खरि तारागणकोडिकोडीणं ॥ १ ॥ सोहं सोहिंसु वा' । तथा—'अब्भिंतरपुक्खरद्धे णं भंते ! केवतिया चंदा ?'इत्यादि प्रश्नः, उत्तरं तु–'बावत्तरिं च चंदा बावत्तरिमेव दिणयरा दित्ता । पुक्खरवरदीवड्ढे चरंति एए पभासिंता ॥ १ ॥ तिन्नि सया छत्तीसा छच्च सहस्सा महग्गहाणं तु । नक्खत्ताणं तु भवे सोलाइं दुवे सहस्साइं ॥ २ ॥ अडयाल सयसहस्सा बावीसं खलु भवे सहस्साइं । दो य सय पुक्खरद्धे तारागणकोडिकोडीणं ॥ ३ ॥ सोभं सोभिंसु वा ३ ।' तथा—'मणुस्सखेत्ते णं भंते ! केवइया चंदा ?'इत्यादि प्रश्नः, उत्तरं तु—'बत्तीसं चंदसयं बत्तीसं चेव सूरियाण

९ शतके उद्देशः १ जम्बूसंग्रहणी सू ३६३

॥४२७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



सयं । सयलं मणुस्सलोयं चरंति एए पयासिंता ॥ १ ॥ एक्कारस य सहस्सा छप्पिय सोला महागहाणं तु । छच्च सया छण्णउया णक्खत्ता तिन्नि य सहस्सा ॥ २ ॥ अडसीइ सयसहस्सा चालीस सहस्स मणुयलोगंमि । सत्त य सया अणूणा तारागणकोडिकोडीणं ॥ ३ ॥'इत्यादि, किमन्तमिदं वाच्यम् ? इत्याह—'जावे'त्यादि, अस्य च सूत्रांशस्यायं पूर्वोऽंशः—'अट्ठासीइं च गहा अट्ठावीसं च होइ नक्खत्ता । एगससीपरिवारो एत्तो ताराण वोच्छामि ॥१॥ छावट्ठि सहस्साइं नव चेव सयाइं पंच सयराइं'ति । 'पुक्खरोदे णं भंते! समुद्दे केवइया चंदा' इत्यादौ प्रश्ने इदमुत्तरं दृश्यं—'संखेज्जा चंदा पभासिंसु वा ३' इत्यादि, 'एवं सव्वेसु दीवसमुद्देसु'त्ति पूर्वोक्तेन प्रश्नेन यथासम्भवं सङ्ख्याता असङ्ख्याताश्च चन्द्रादय इत्यादिना चोत्तरेणेत्यर्थः, द्वीपसमुद्रनामानि चैवं—पुष्करोदसमुद्रादनन्तरो वरुणवरो द्वीपस्ततो वरुणोदः समुद्रः, एवं क्षीरवरक्षीरोदौ घृतवरघृतोदौ क्षोदवरक्षोदोदौ नन्दीश्वरवरनन्दीश्वरोदौ अरुणारुणोदौ अरुणवरारुणवरोदौ अरुणवरावभासारुणवरावभासोदौ कुण्डलकुण्डलोदौ कुण्डलवरकुण्डलवरोदौ कुण्डलवरावभासकुण्डलवरावभासोदौ रुचकरुचकोदौ रुचकवररुचकवरोदौ रुचकवरावभासरुचकवरावभासोदौ इत्यादीन्यसङ्ख्यातानि, यतोऽसङ्ख्याता द्वीपसमुद्रा इति ॥ नवमशते द्वितीयः॥९–२ ॥

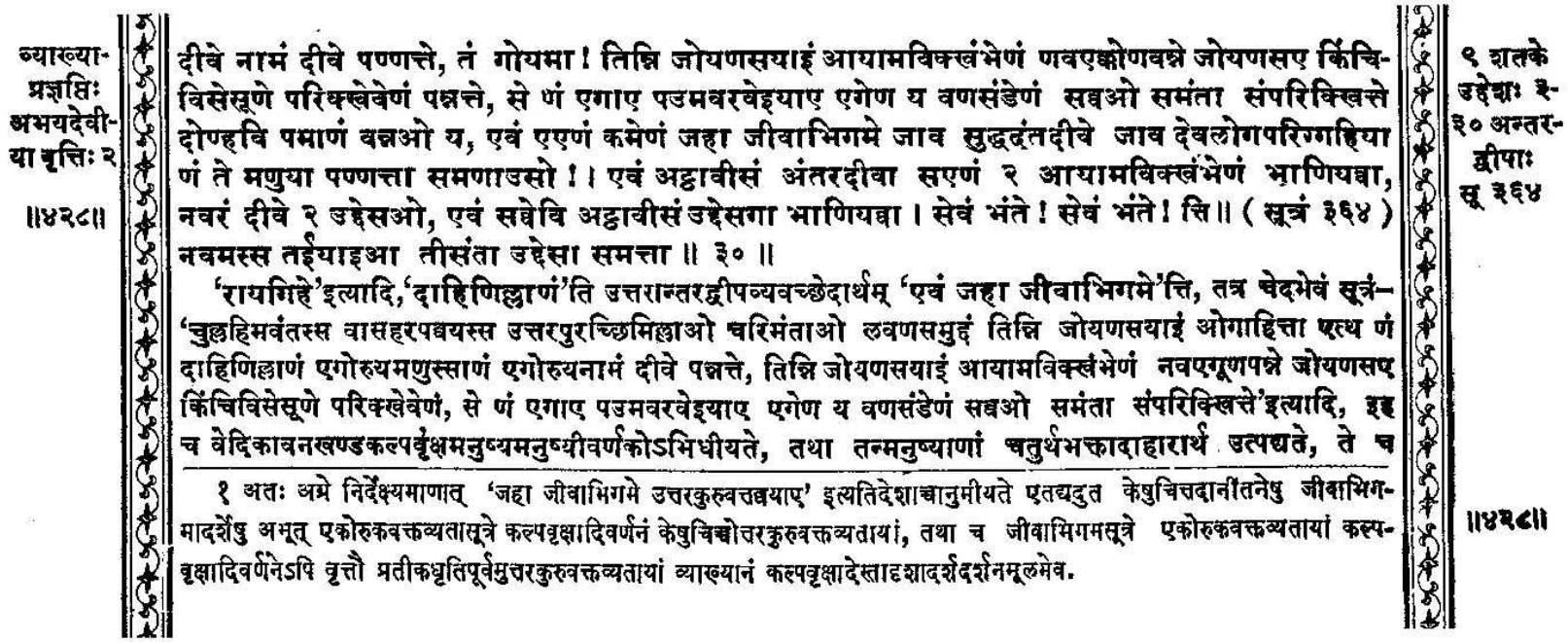
द्वितीयोद्देशके द्वीपवरवक्तव्यतोक्ता, तृतीयेऽपि प्रकारान्तरेण सैवोच्यते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी—कहि णं भंते ! दाहिणिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयदीवे णामं दीवे पन्नत्ते ?, गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरिमंताओ लवणसमुद्दं उत्तरपुरच्छिमे णं तिन्नि जोयणसयाइं ओगाहित्ता एत्थ णं दाहिणिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र नवमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ नवमे शतके तृतीयात् त्रिंशत् पर्यन्ता: उद्देशका: आरभ्यते



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४२८॥

दीवे नामं दीवे पण्णत्ते, तं गोयमा ! तिन्नि जोयणसयाइं आयामविक्खंभेणं णवएक्कोणवन्ने जोयणसए किंचि-विसेसूणे परिक्खेवेणं पन्नत्ते, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते दोण्हवि पमाणं वन्नओ य, एवं एएणं कमेणं जहा जीवाभिगमे जाव सुद्धदंतदीवे जाव देवलोगपरिग्गहिया णं ते मणुया पण्णत्ता समणाउसो ! । एवं अट्ठावीसं अंतरदीवा सएणं २ आयामविक्खंभेणं भाणियव्वा, नवरं दीवे २ उद्देसओ, एवं सव्वेवि अट्ठावीसं उद्देसगा भाणियव्वा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥ (सूत्रं ३६४) नवमस्स तईयाइआ तीसंता उद्देसा समत्ता ॥ ३० ॥

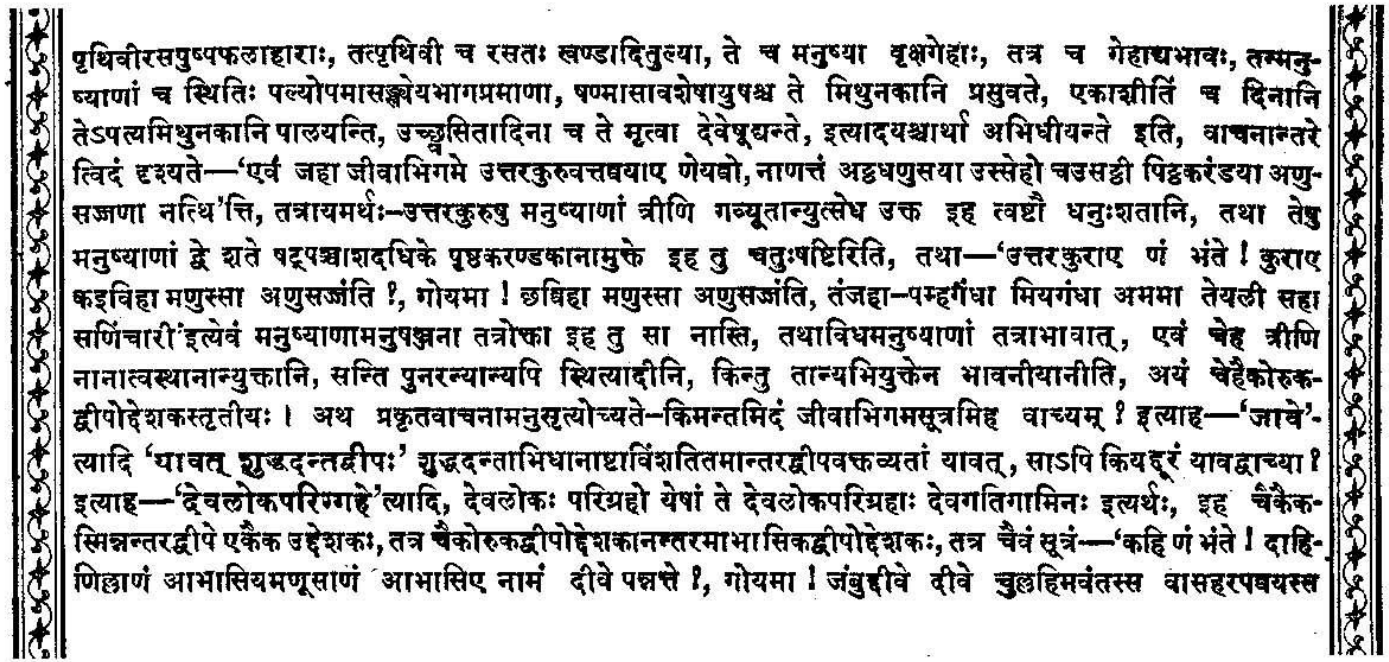
'रायगिहे' इत्यादि, 'दाहिणिल्लाणं' ति उत्तरान्तरद्वीपव्यवच्छेदार्थम् 'एवं जहा जीवाभिगमे' त्ति, तत्र चेदमेवं सूत्रं– 'चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरपुरच्छिमिल्लाओ चरिमंताओ लवणसमुद्दं तिन्नि जोयणसयाइं ओगाहित्ता एत्थ णं दाहिणिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयनामं दीवे पन्नत्ते, तिन्नि जोयणसयाइं आयामविक्खंभेणं नवएगूणपन्ने जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं, से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते' इत्यादि, इह च वेदिकावनखण्डकल्पवृक्षमनुष्यमनुष्यीवर्णकोऽभिधीयते, तथा तन्मनुष्याणां चतुर्थभक्तादाहारार्थ उत्पद्यते, ते च

१ अतः अग्रे निर्देक्ष्यमाणात् 'जहा जीवाभिगमे उत्तरकुरुवत्तव्वयाए' इत्यतिदेशाच्चानुमीयते एतद्यदुत केषुचित्तदानींतनेषु जीवाभिग-मादर्शेषु अभूत् एकोरुकवक्तव्यतासूत्रे कल्पवृक्षादिवर्णनं केषुचिच्चोत्तरकुरुवक्तव्यतायां, तथा च जीवाभिगमसूत्रे एकोरुकवक्तव्यतायां कल्प-वृक्षादिवर्णनेऽपि वृत्तौ प्रतीकधृतिपूर्वमुत्तरकुरुवक्तव्यतायां व्याख्यानं कल्पवृक्षादेस्तादृशादर्शदर्शनमूलमेव.

९ शतके उद्देशः ३-३० अन्तर-द्वीपाः सू ३६४

॥४२८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



पृथिवीरसपुष्पफलाहाराः, तत्पृथिवी च रसतः खण्डादितुल्या, ते च मनुष्या वृक्षगेहाः, तत्र च गेहाद्यभावः, तन्मनुष्याणां च स्थितिः पल्योपमासङ्ख्येयभागप्रमाणा, षण्मासावशेषायुषश्च ते मिथुनकानि प्रसुवते, एकाशीतिं च दिनानि तेऽपत्यमिथुनकानि पालयन्ति, उच्छ्वसितादिना च ते मृत्वा देवेषूद्यन्ते, इत्यादयश्चार्था अभिधीयन्ते इति, वाचनान्तरे त्विदं दृश्यते—'एवं जहा जीवाभिगमे उत्तरकुरुवत्तव्वयाए णेयव्वो, नाणत्तं अट्ठधणुसया उस्सेहो चउसट्ठी पिट्ठकरंडया अणुसज्जणा नत्थि'त्ति, तत्रायमर्थः—उत्तरकुरुषु मनुष्याणां त्रीणि गव्यूतान्युत्सेध उक्त इह त्वष्टौ धनुःशतानि, तथा तेषु मनुष्याणां द्वे शते षट्पञ्चाशदधिके पृष्ठकरण्डकानामुक्ते इह तु चतुःषष्टिरिति, तथा—'उत्तरकुराए णं भंते ! कुराए कइविहा मणुस्सा अणुसज्जंति ?, गोयमा ! छव्विहा मणुस्सा अणुसज्जंति, तंजहा—पम्हगंधा मियगंधा अममा तेयली सहा सणिंचारी'इत्येवं मनुष्याणामनुषङ्गना तत्रोक्ता इह तु सा नास्ति, तथाविधमनुष्याणां तत्राभावात्, एवं चेह त्रीणि नानात्वस्थानान्युक्तानि, सन्ति पुनरन्यान्यपि स्थित्यादीनि, किन्तु तान्यभियुक्तेन भावनीयानीति, अयं चेहैकोरुकद्वीपोद्देशकस्तृतीयः । अथ प्रकृतवाचनामनुसृत्योच्यते—किमन्तमिदं जीवाभिगमसूत्रमिह वाच्यम् ? इत्याह—'जावे'त्यादि 'यावत् शुद्धदन्तद्वीपः' शुद्धदन्ताभिधानाष्टाविंशतितमान्तरद्वीपवक्तव्यतां यावत्, साऽपि कियद्दूरं यावद्वाच्या ? इत्याह—'देवलोकपरिग्गहे'त्यादि, देवलोकः परिग्रहो येषां ते देवलोकपरिग्रहाः देवगतिगामिनः इत्यर्थः, इह चैकैकस्मिन्नन्तरद्वीपे एकैक उद्देशकः, तत्र चैकोरुकद्वीपोद्देशकानन्तरमाभासिकद्वीपोद्देशकः, तत्र चैवं सूत्रं—'कहि णं भंते ! दाहिणिल्लाणं आभासियमणूसाणं आभासिए नामं दीवे पन्नत्ते ?, गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३६४]

दीप अनुक्रम [४४४]

दाहिणपुरच्छिमिल्लाओ चरिमंताओ लवणसमुद्दं तिन्नि जोयणसयाइं ओगाहित्ता एत्थ णं दाहिणिल्लाणं आभासियनामं दीवे पन्नत्ते' शेषमेकोरुकद्वीपवदिति चतुर्थः । एवं वैषाणिकद्वीपोद्देशकोऽपि नवरं दक्षिणापराच्चरमान्तादिति पञ्चमः ५ । एवं लाङ्गूलिकद्वीपोद्देशकोऽपि, नवरमुत्तरापराच्चरमान्तादिति षष्ठः ६ । एवं हयकर्णद्वीपोद्देशको नवरमेकोरुकस्योत्तर-पौरस्त्याच्चरमान्तालवणसमुद्रं चत्वारि योजनशतान्यवगाह्य चतुर्योजनशतायामविष्कम्भो हयकर्णद्वीपो भवतीति सप्तमः ७ । एवं गजकर्णद्वीपोद्देशकोऽपि, नवरं गजकर्णद्वीप आभासिकद्वीपस्य दक्षिणपौरस्त्याच्चरमान्तालवणसमुद्रमवगाह्य चत्वारि योजनशतानि हयकर्णद्वीपसमो भवतीत्यष्टमः ८ । एवं गोकर्णद्वीपोद्देशकोऽपि, नवरमसौ वैषाणिकद्वीपस्य दक्षि-णापराच्चरमान्तादिति नवमः ९ । एवं शष्कुलीकर्णद्वीपोद्देशकोऽपि, नवरमसौ लाङ्गूलिकद्वीपस्योत्तरापराच्चरमान्तादिति दशमः १० । एवमादर्शमुखद्वीपमेण्ढ्रमुखद्वीपायोमुखद्वीपगोमुखद्वीपा हयकर्णादीनां चतुर्णां क्रमेण पूर्वोत्तरपूर्वदक्षिणद-क्षिणापरापरोत्तरेभ्यश्चरमान्तेभ्यः पञ्च योजनशतानि लवणोदधिमवगाह्य पञ्चयोजनशतायामविष्कम्भा भवन्ति, तत्प्रति-पादकाश्चान्ये चत्वार उद्देशका भवन्तीति १४ । एतेषामेवादर्शमुखादीनां पूर्वोत्तरादिभ्यश्चरमान्तेभ्यः षट् योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्य षट्योजनशतायामविष्कम्भाः क्रमेणाश्वमुखद्वीपहस्तिमुखद्वीपसिंहमुखद्वीपव्याघ्रमुखद्वीपा भवन्ति, तत्प्र-तिपादकाश्चान्ये चत्वार उद्देशका भवन्तीति १८ । एतेषामेवाश्वमुखादीनां तथैव सप्त योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्य सप्तयोजनशतायामविष्कम्भा अश्वकर्णद्वीपहस्तिकर्णद्वीपकर्णप्रावरणद्वीपाः प्रावरणद्वीपा भवन्ति, तत्प्रतिपादकाश्चापरे च-त्वार एवोद्देशका इति २२ । एतेषामेवाश्वकर्णादीनां तथैवाष्टयोजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्याष्टयोजनशतायामविष्कम्भा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३६४]

दीप अनुक्रम [४४४]

उल्कामुखद्वीपमेघमुखद्वीपविद्युन्मुखद्वीपविद्युद्दन्तद्वीपा भवन्ति, तत्प्रतिपादकाश्चान्ये चत्वार एवोद्देशका इति २६ । एतेषामेवोल्कामुखद्वीपादीनां तथैव नव योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्य नवयोजनशतायामविष्कम्भाः घनदन्तद्वीपलष्टदन्तद्वीपगूढदन्तद्वीपशुद्धदन्तद्वीपा भवन्ति, तत्प्रतिपादकाश्चान्ये चत्वार एवोद्देशका इति, एवमादितोऽत्र त्रिंशत्तमः शुद्धदन्तोद्देशकः ३० इति ॥

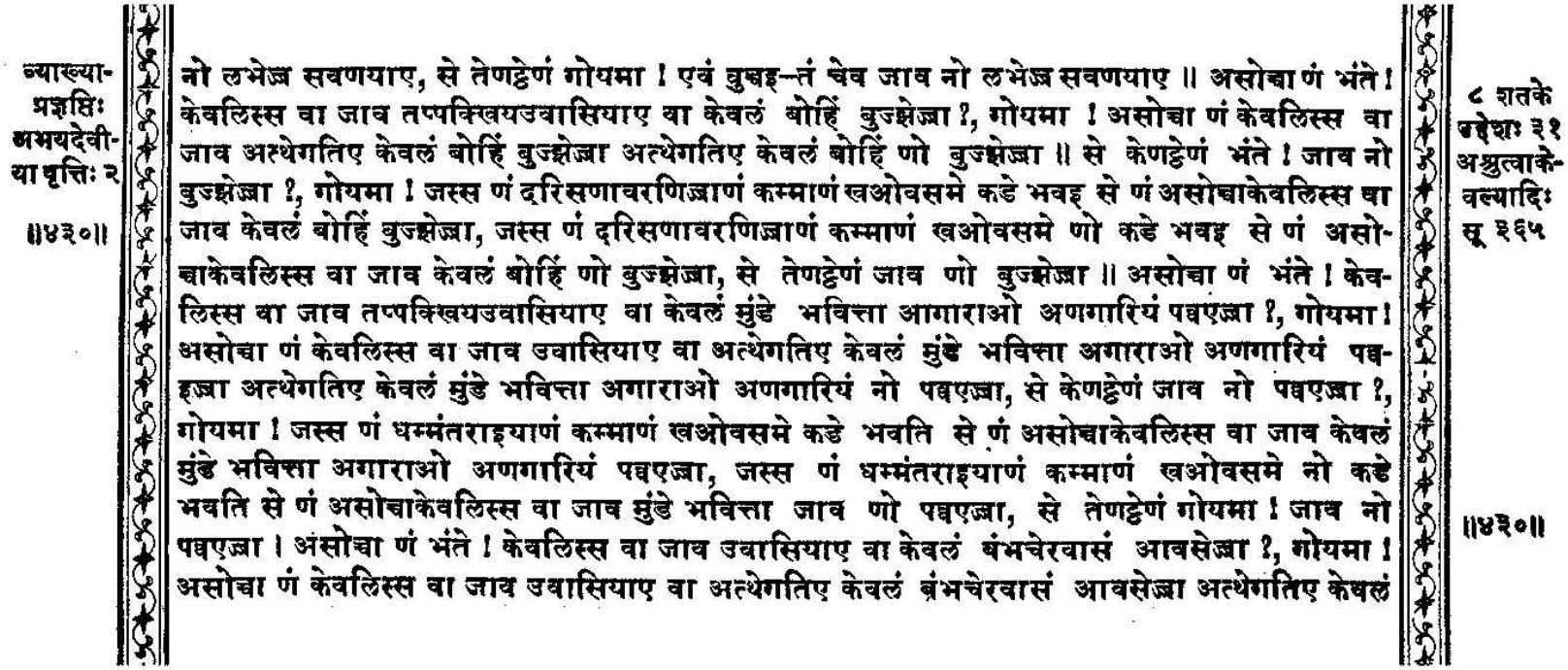
उक्तरूपाश्चार्थाः केवलिधर्माद् ज्ञायन्ते तं चाश्रुत्वाऽपि कोऽपि लभत इत्याद्यर्थप्रतिपादनपरमेकत्रिंशत्तममुद्देशकमप्याह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा केवलिसावगस्स वा केवलिसावियाए वा केवलिउवासगस्स वा केवलिउवासियाए वा तप्पक्खियस्स वा तप्पक्खियसावगस्स वा तप्पक्खियसावियाए वा तप्पक्खियउवासगस्स वा तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए ?, गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए ॥ से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–असोच्चा णं जाव नो लभेज्जा सवणयाए ?, गोयमा ! जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्ज सवणयाए, जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए केवलिपन्नत्तं धम्मं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र नवमे शतके द्वितीय-उद्देशकः परिसमाप्तः

अथ नवमे शतके एकत्रिंशत-उद्देशकः आरभ्यते



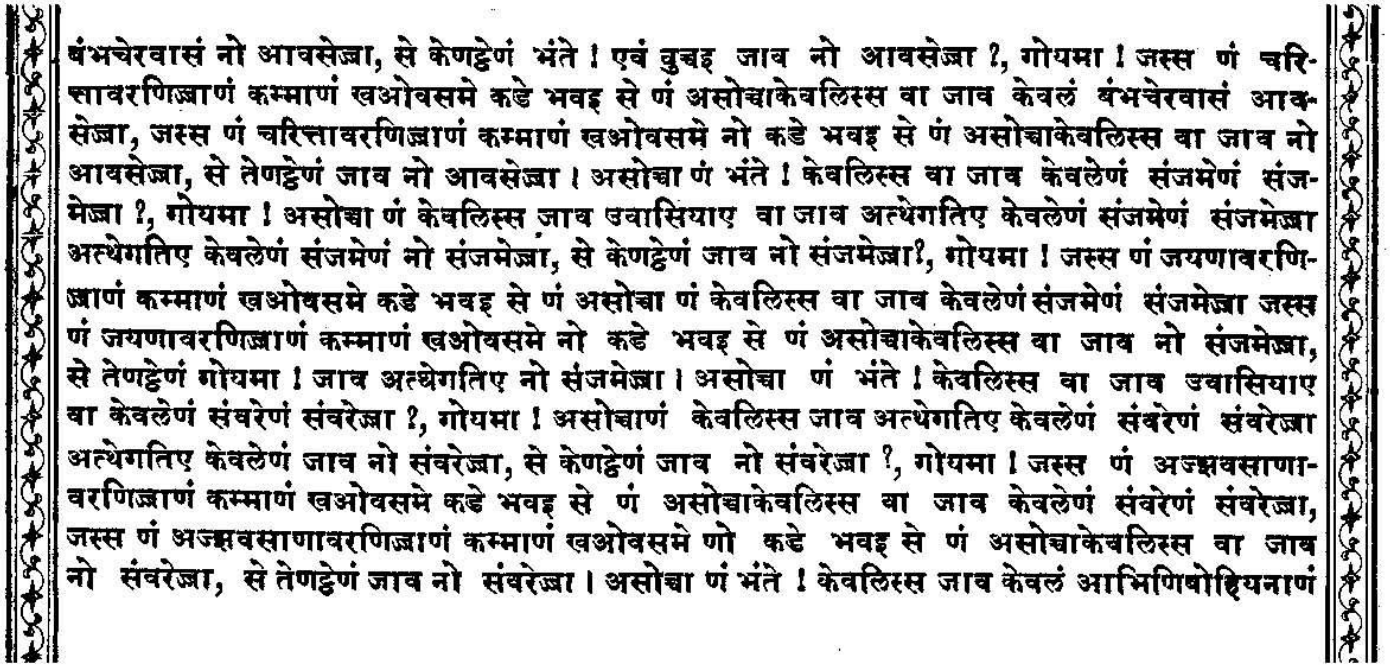
व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४३०॥

नो लभेज्ज सवणयाए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–तं चेव जाव नो लभेज्ज सवणयाए ॥ असोचा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलं बोहिं बुज्झेज्जा ?, गोयमा ! असोचा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगतिए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा अत्थेगतिए केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा ॥ से केणट्ठेणं भंते ! जाव नो बुज्झेज्जा ?, गोयमा ! जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोचाकेवलिस्स वा जाव केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोचाकेवलिस्स वा जाव केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव णो बुज्झेज्जा ॥ असोचा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा ?, गोयमा ! असोचा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइज्जा अत्थेगतिए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं नो पव्वएज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो पव्वएज्जा ?, गोयमा ! जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवति से णं असोचाकेवलिस्स वा जाव केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा, जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवति से णं असोचाकेवलिस्स वा जाव मुंडे भवित्ता जाव णो पव्वएज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो पव्वएज्जा । असोचा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा ?, गोयमा ! असोचा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा अत्थेगतिए केवलं

८ शतके उद्देशः ३१ अश्रुत्वाकेवल्यादिः सू ३६५

॥४३०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



बंभचेरवासं नो आवसेज्जा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जाव नो आवसेज्जा ?, गोयमा ! जस्स णं चरित्तावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा, जस्स णं चरित्तावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव नो आवसेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो आवसेज्जा । असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा ?, गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स जाव उवासियाए वा जाव अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं नो संजमेज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो संजमेज्जा?, गोयमा ! जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव नो संजमेज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव अत्थेगतिए नो संजमेज्जा । असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा ?, गोयमा ! असोच्चाणं केवलिस्स जाव अत्थेगतिए केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं जाव नो संवरेज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो संवरेज्जा ?, गोयमा ! जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा, जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव नो संवरेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो संवरेज्जा । असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उप्पाडेज्जा ?, गोयमा ! असोच्चाणं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगइए केवलं आभिणिबोहियनाणं नो उप्पाडेज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो उप्पाडेज्जा ?, गोयमा ! जस्स णं आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा, जस्स णं आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं नो उप्पाडेज्जा से तेणट्ठेणं जाव नो उप्पाडेज्जा, असोच्चा णं भंते ! केवलि० जाव केवलं सुयनाणं उप्पाडेज्जा एवं जहा आभिणिबोहियनाणस्स वत्तव्वया भणिया तहा सुयनाणस्सवि भाणियव्वा, नवरं सुयनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे। एवं चेव केवलं ओहिनाणं भाणियव्वं, नवरं ओहिणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे, एवं केवलं मणपज्जवनाणं उप्पाडेज्जा, नवरं मणपज्जवणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे, असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलनाणं उप्पाडेज्जा, एवं चेव नवरं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए भाणियव्वे, सेसं तं चेव, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव केवलनाणं उप्पाडेज्जा। असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा केवलं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा जाव केवलं मणपज्जव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णाणं उप्पाडेज्जा केवलनाणं उप्पाडेज्जा ?, गोयमा ! असोच्चाणं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए अत्थेगतिए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा अत्थेगतिए केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा अत्थेगतिए केवलं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा अत्थेगतिए जाव नो पव्वएज्जा अत्थेगतिए केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा अत्थेगतिए केवलं बंभचेरवासं नो आवसेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा अत्थेगतिए केवलेणं संजमेणं नो संजमेज्जा एवं संवरेणवि, अत्थेगतिए केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगतिए जाव नो उप्पाडेज्जा, एवं जाव मणपज्जवनाणं; अत्थेगतिए केवलनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगतिए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ असोच्चाणं तं चेव जाव अत्थेगतिए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा ?, गोयमा ! जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ १ जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ २ जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ ३ एवं चरित्तावरणिज्जाणं ४ जयणावरणिज्जाणं ५ अज्झवसाणावरणिज्जाणं ६ आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं ७ जाव मणपज्जवनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ १० जस्स णं केवलनाणावरणिज्जाणं जाव खए नो कडे भवइ ११ से णं असोच्चाकेवलिस्स वा जाव केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए केवलं बोहिं नो बुज्झेज्जा जाव केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा, जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भवति जस्स णं दरिसणा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ जस्स णं धम्मंतराइयाणं एवं जाव जस्स णं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए कडे भवइ से णं असोचाकेवलिस्स वा जाव केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा जाव केवलणाणं उप्पाडेज्जा (सूत्रं ३६५) ॥

'रायगिहे' इत्यादि, तत्र च 'असोच्च'त्ति अश्रुत्वा–धर्म्मफलादिप्रतिपादकवचनमनाकर्ण्य प्राक्कृतधर्म्मानुरागादेवेत्यर्थः 'केवलिस्स व'त्ति 'केवलिनः' जिनस्य 'केवलिसावगस्स व'त्ति केवली येन स्वयमेव पृष्टः श्रुतं वा येन तद्वचनमसौ केवलिश्रावकस्तस्य 'केवलिउवासगस्स व'त्ति केवलिन उपासनां विदधानेन केवलिनैवान्यस्य कथ्यमानं श्रुतं येनासौ केवल्युपासकः 'तप्पक्खियस्स'त्ति केवलिनः पाक्षिकस्य स्वयंबुद्धस्य 'धम्मं'ति श्रुतचारित्ररूपं 'लभेज्ज'त्ति प्राप्नुयात् 'सवणयाए'त्ति श्रवणतया श्रवणरूपतया श्रोतुमित्यर्थः ॥ 'नाणावरणिज्जाणं'ति बहुवचनं ज्ञानावरणीयस्य मतिज्ञानावरणादिभेदेनावग्रहमत्यावरणादिभेदेन च बहुत्वात्, इह च क्षयोपशमग्रहणात् मत्यावरणाद्येव तद् ग्राह्यं न तु केवलावरणं तत्र क्षयस्यैव भावात्, ज्ञानावरणीयस्य क्षयोपशमश्च गिरिसरिदुपलघोलनान्यायेनापि कस्यचित्स्यात्, तत्सद्भावे चाश्रुत्वाऽपि धर्म्मं लभते श्रोतुं, क्षयोपशमस्यैव तल्लाभेऽन्तरङ्गकारणत्वादिति ॥ 'केवलं बोहिं'ति शुद्धं सम्यग्दर्शनं 'बुज्झेज्ज'त्ति बुद्ध्येतानुभवेदित्यर्थः यथा प्रत्येकबुद्धादिः, एवमुत्तरत्राप्युदाहर्त्तव्यं, 'दरिसणावरणिज्जाणं'ति इह दर्शनावरणीयं दर्शमोहनीयमभिगृह्यते, बोधेः सम्यग्दर्शनपर्यायत्वात् तल्लाभस्य च तत्क्षयोपशमजन्यत्वादिति ॥ 'केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं'ति 'केवलां' शुद्धां सम्पूर्णां वाऽनगारितामिति योगः 'धम्मंतराइयाणं'ति अन्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रायो–विघ्नः सोऽस्ति येषु तान्यन्तरायिकाणि धर्म्मस्य–चारित्रप्रतिपत्तिलक्षणस्यान्तरायिकाणि धर्म्मान्तरायिकाणि तेषां, वीर्यान्तरायचारित्रमोहनीयभेदानामित्यर्थः, 'चारित्तावरणिज्जाणं'ति, इह वेदलक्षणानि चारित्रावरणीयानि विशेषतो ग्राह्याणि, मैथुनविरतिलक्षणस्य ब्रह्मचर्यवासस्य विशेषतस्तेषामेवावारकत्वात्, 'केवलेणं संजमेणं संजमेज्ज'त्ति इह संयमः प्रतिपन्नचरित्रस्य तदतिचारपरिहाराय यतनाविशेषः, 'जयणावरणिज्जाणं'ति इह तु यतनावरणीयानि चारित्रविशेषविषयवीर्यान्तरायलक्षणानि मन्तव्यानि 'अज्झवसाणावरणिज्जाणं'ति संवरशब्देन शुभाध्यवसायवृत्तेर्विवक्षितत्वात् तस्याश्च भावचारित्ररूपत्वेन तदावरणक्षयोपशमलभ्यत्वात् अध्यवसानावरणीयशब्देनेह भावचारित्रावरणीयान्युक्तानीति । पूर्वोक्तानेवार्थान् पुनः समुदायेनाह—'असोचा णं भंते !'इत्यादि ॥ अथाश्रुत्वैव केवल्यादिवचनं यथा कश्चित् केवलज्ञानमुत्पादयेत्तथा दर्शयितुमाह—

तस्स णं भंते ! छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय पगिज्झिय सूराभिमुहस्स आयावणभूमीए आयावेमाणस्स पगतिभद्दयाए पगइउवसंतयाए पगतिपयणुकोहमाणमायालोभयाए मिउमद्दवसंपन्नयाए अल्लीवणयाए भद्दयाए विणीययाए अन्नया कयाइ सुभेणं अज्झवसाणेणं सुभेणं परिणामेणं लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं २ तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स विब्भंगे नामं अन्नाणे समुप्पज्जइ, से णं तेणं विब्भंगनाणेणं समुप्पन्नेणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं जाणइ पासइ, से णं तेणं विब्भंगनाणेणं समुप्पन्नेणं जीवेवि जाणइ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अजीवेवि जाणइ पासंडत्थे सारंभे सपरिग्गहे संकिलिस्समाणेवि जाणइ विसुज्झमाणेवि जाणइ से णं पुव्वामेव सम्मत्तं पडिवज्जइ संमत्तं पडिवज्जित्ता समणधम्मं रोएति समणधम्मं रोएत्ता चरित्तं पडिवज्जइ चरित्तं पडिवज्जित्ता लिंगं पडिवज्जइ, तस्स णं तेहिं मिच्छत्तपज्जवेहिं परिहायमाणेहिं २ सम्मद्दंसणपज्जवेहिं परिवड्ढमाणेहिं २ से विब्भंगे अन्नाणे सम्मत्तपरिग्गहिए खिप्पामेव ओही परावत्तइ (सूत्रं ३६६) ॥

'तस्से'त्यादि 'तस्स'त्ति योऽश्रुत्वैव केवलज्ञानमुत्पादयेत्तस्य कस्यापि 'छट्ठंछट्ठेण'मित्यादि च यदुक्तं तत्प्रायः षष्ठतपश्चरणवतो बालतपस्विनो विभङ्गः–ज्ञानविशेष उत्पद्यत इति ज्ञापनार्थमिति, 'पगिज्झिय'त्ति प्रगृह्य धृत्वेत्यर्थः 'पगतिभद्दयाए'इत्यादीनि तु प्राग्वत्, 'तयावरणिज्जाणं'ति विभङ्गज्ञानावरणीयानाम् 'ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स'त्ति इहेहा–सदर्थाभिमुखा ज्ञानचेष्टा अपोहस्तु–विपक्षनिरासः मार्गणं च–अन्वयधर्म्मालोचनं गवेषणं तु–व्यतिरेकधर्मालोचनमिति 'से णं'ति असौ बालतपस्वी 'जीवेवि जाणइ'त्ति कथञ्चिदेव न तु साक्षात् मूर्त्तगोचरत्वात्तस्य 'पासंडत्थे'त्ति व्रतस्थान् 'सारंभे सपरिग्गहे'त्ति सारम्भान् सपरिग्रहान् सतः, किंविधान् जानाति ? इत्याह—'संकिलिस्समाणेवि जाणइ'त्ति महत्या संक्लिश्यमानतया सङ्क्लिश्यमानानपि जानाति 'विसुज्झमाणेवि जाणइ'त्ति अल्पीयस्याऽपि विशुद्ध्यमानतया विशुद्ध्यमानानपि जानाति, आरम्भादिमतामेवंस्वरूपत्वात्, 'से णं'ति असौ विभङ्गज्ञानी जीवाजीवस्वरूपपाषण्डस्थसङ्क्लिश्यमानतादिज्ञायकः सन् 'पुव्वामेव'त्ति चारित्रप्रतिपत्तेः पूर्वमेव 'सम्मत्तं'ति सम्यग्भावं 'समणधम्मं'ति साधुधर्मं 'रोएइ'त्ति श्रद्धत्ते चिकीर्षति वा 'ओही परावत्तइ'त्ति अवधिर्भवतीत्यर्थः, इह च यद्यपि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चारित्रप्रतिपत्तिमादावभिधाय सम्यक्त्वपरिगृहीतं विभङ्गज्ञानमवधिर्भवतीति पश्चादुक्तं तथाऽपि चारित्रप्रतिपत्तेः पूर्वं सम्यक्त्वप्रतिपत्तिकाल एव विभङ्गज्ञानस्यावधिभावो द्रष्टव्यः, सम्यक्त्वचारित्रभावे विभङ्गज्ञानस्याभावादिति ॥ अथैनमेव लेश्यादिभिर्निरूपयन्नाह—

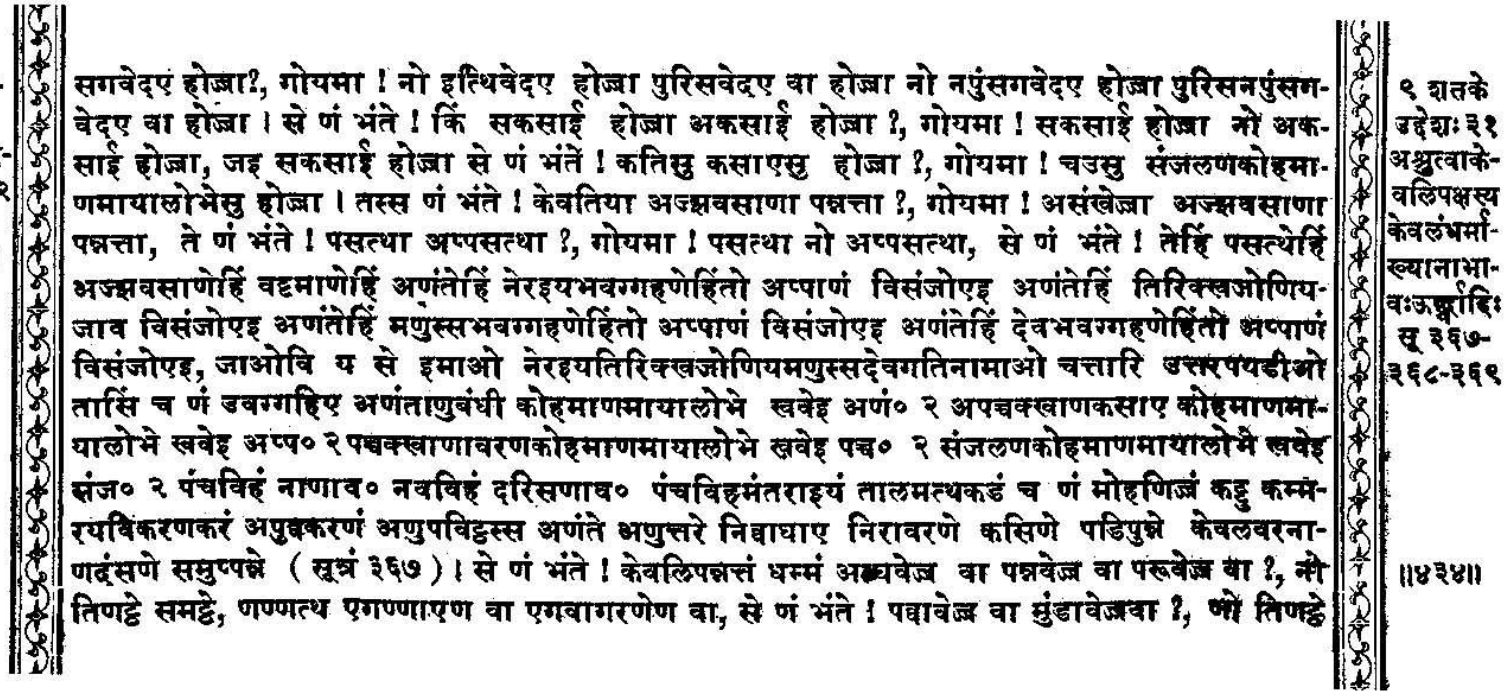
से णं भंते ! कतिलेस्सासु होज्जा ?, गोयमा ! तिसु विसुद्धलेस्सासु होज्जा, तंजहा–तेउलेस्साए पम्हलेस्साए सुक्कलेस्साए । से णं भंते ! कतिसु णाणेसु होज्जा ?, गोयमा ! तिसु आभिणिबोहियनाणसुयनाणओहिनाणेसु होज्जा । से णं भंते ! किं सजोगी होज्जा अजोगी होज्जा ?, गोयमा ! सजोगी होज्जा नो अजोगी होज्जा, जइ सजोगी होज्जा किं मणजोगी होज्जा वइजोगी होज्जा कायजोगी होज्जा ?, गोयमा ! मणजोगी वा होज्जा वइजोगी वा होज्जा कायजोगी वा होज्जा । से णं भंते ! किं सागारोवउत्ते होज्जा अणागारोवउत्ते होज्जा ?, गोयमा ! सागारोवउत्ते वा होज्जा अणागारोवउत्ते वा होज्जा । से णं भंते ! कयरंमि संघयणे होज्जा ?, गोयमा ! वइरोसभनारायसंघयणे होज्जा । से णं भंते ! कयरंमि संठाणे होज्जा ?, गोयमा ! छण्हं संठाणाणं अन्नयरे संठाणे होज्जा । से णं भंते ! कयरंमि उच्चत्ते होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं सत्त रयणी उक्कोसेणं पंचधणुसतिए होज्जा । से णं भंते ! कयरंमि आउए होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं सातिरेगट्ठवासाउए उक्कोसेणं पुव्वकोडिआउए होज्जा । से णं भंते ! किं सवेदए होज्जा अवेदए होज्जा ?, गोयमा ! सवेदए होज्जा नो अवेदए होज्जा, जइ सवेदए होज्जा किं इत्थीवेयए होज्जा पुरिसवेदए होज्जा नपुंसगवेदए होज्जा पुरिसनपुं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३६७--३६९]

दीप अनुक्रम [४४७-४४९]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४३४॥

सगवेदए होज्जा?, गोयमा ! नो इत्थिवेदए होज्जा पुरिसवेदए वा होज्जा नो नपुंसगवेदए होज्जा पुरिसनपुंसग-वेदए वा होज्जा । से णं भंते ! किं सकसाई होज्जा अकसाई होज्जा ?, गोयमा ! सकसाई होज्जा नो अक-साई होज्जा, जइ सकसाई होज्जा से णं भंते ! कतिसु कसाएसु होज्जा ?, गोयमा ! चउसु संजलणकोहमा-णमायालोभेसु होज्जा । तस्स णं भंते ! केवतिया अज्झवसाणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! असंखेज्जा अज्झवसाणा पन्नत्ता, ते णं भंते ! पसत्था अप्पसत्था ?, गोयमा ! पसत्था नो अप्पसत्था, से णं भंते ! तेहिं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं वट्टमाणेहिं अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ अणंतेहिं तिरिक्खजोणिय-जाव विसंजोएइ अणंतेहिं मणुस्सभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ अणंतेहिं देवभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ, जाओवि य से इमाओ नेरइयतिरिक्खजोणियमणुस्सदेवगतिनामाओ चत्तारि उत्तरपयडीओ तासिं च णं उवग्गहिए अणंताणुबंधी कोहमाणमायालोभे खवेइ अणं० २ अपच्चक्खाणकसाए कोहमाणमा-यालोभे खवेइ अप्प० २ पच्चक्खाणावरणकोहमाणमायालोभे खवेइ पच्च० २ संजलणकोहमाणमायालोभे खवेइ संज० २ पंचविहं नाणाव० नवविहं दरिसणाव० पंचविहमंतराइयं तालमत्थकडं च णं मोहणिज्जं कट्टु कम्म-रयविकरणकरं अपुव्वकरणं अणुपविट्ठस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुन्ने केवलवरना-णदंसणे समुप्पन्ने (सूत्रं ३६७) । से णं भंते ! केवलिपन्नत्तं धम्मं आइक्खेज्ज वा पन्नवेज्ज वा परूवेज्ज वा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, णण्णत्थ एगण्णाएण वा एगवागरणेण वा, से णं भंते ! पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्जवा ?, णो तिणट्ठे

९ शतके उद्देशः ३१ अश्रुत्वाके-वलिपक्षस्य केवलंधर्मा-ख्यानाभा-वःऊर्ध्वादिः सू ३६७-३६८-३६९

॥४३४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समट्ठे, उवदेसं पुण करेज्जा, से णं भंते ! सिज्झति जाव अंतं करेति ?, हंता सिज्झति जाव अंतं करेति (सूत्रं ३६८) से णं भंते ! किं उड्ढं होज्जा अहो होज्जा तिरियं होज्जा ?, गोयमा ! उड्ढं वा होज्जा अहे वा होज्जा तिरियं वा होज्जा, उड्ढं होज्जमाणे सद्दावइ वियडावइ गंधावइ मालवंतपरियाएसु वट्टवेयड्ढपव्वएसु होज्जा, साहरणं पडुच्च सोमणसवणे वा पंडगवणे वा होज्जा, अहे होज्जमाणे गड्डाए वा दरीए वा होज्जा, साहरणं पडुच्च पायाले वा भवणे वा होज्जा, तिरियं होज्जमाणे पन्नरससु कम्मभूमीसु होज्जा, साहरणं पडुच्च अड्ढाइज्जे दीवसमुद्दे तदेक्कदेसभाए होज्जा, ते णं भंते ! एगसमएणं केवतिया होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं दस, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए अत्थेगतिए असोच्चा णं केवलि जाव नो लभेज्जा सवणयाए जाव अत्थेगतिए केवलनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगतिए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा (सूत्रं ३६९)॥

'से णं भंते !'इत्यादि, तत्र 'से णं'ति स यो विभङ्गज्ञानी भूत्वाऽवधिज्ञानं चारित्रं च प्रतिपन्नः 'तिसु विसुद्धलेस्सासु होज्ज'त्ति यतो भावलेश्यासु प्रशस्तास्वेव सम्यक्त्वादि प्रतिपद्यते नाविसुद्धास्विति। 'तिसु आभिनिबोहिए'त्यादि, सम्यक्त्वमतिश्रुतावधिज्ञानिनां विभङ्गविनिवर्त्तनकाले तस्य युगपद्भावादाद्ये ज्ञानत्रय एवासौ तदा वर्त्तत इति। 'णो अजोगी होज्ज'त्ति अवधिज्ञानकालेऽयोगित्वस्याभावात्, 'मणजोगी'त्यादि चैकतरयोगप्राधान्यापेक्षयाऽवगन्तव्यं। 'सागारोवउत्ते वे'त्यादि, तस्य हि विभङ्गज्ञानान्निवर्त्तमानस्योपयोगद्वयेऽपि वर्त्तमानस्य सम्यक्त्वावधिज्ञानप्रतिपत्तिर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३६७--३६९]

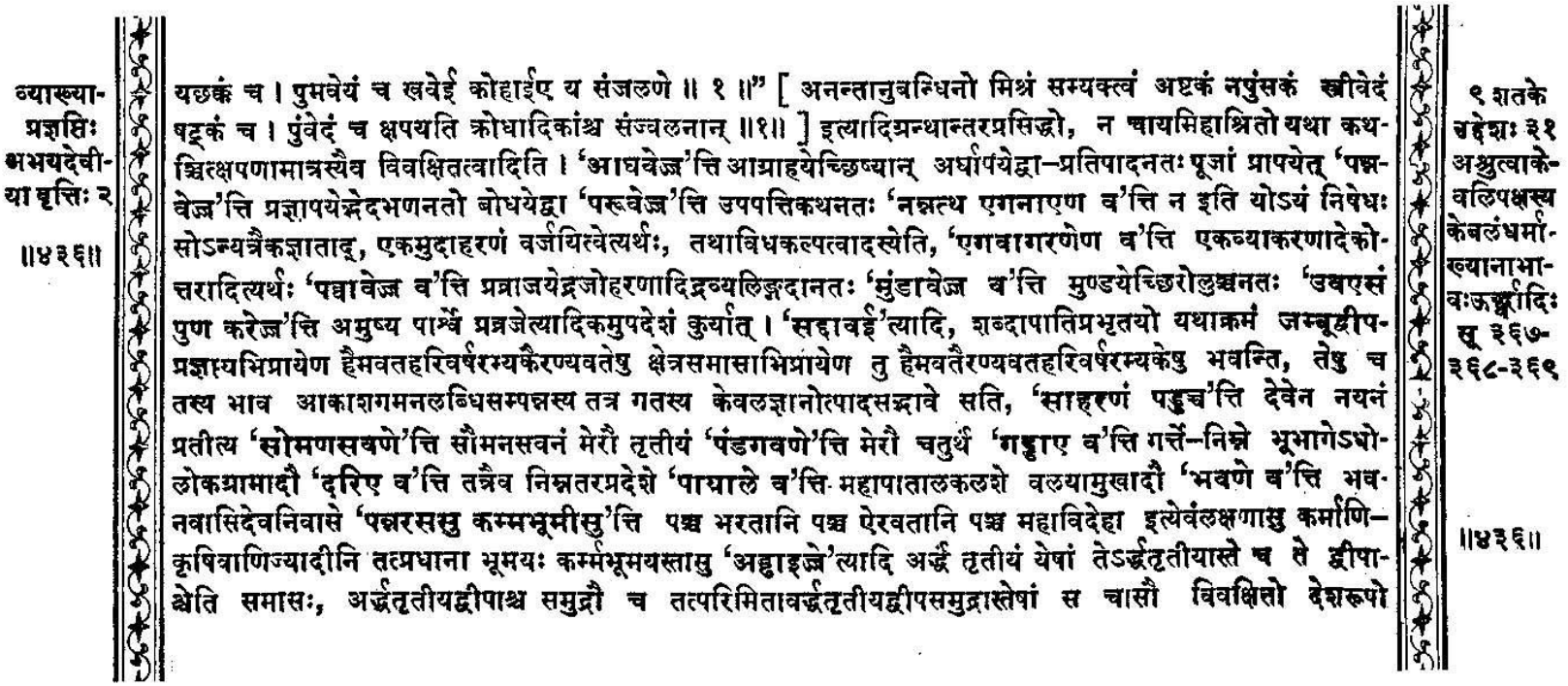
दीप अनुक्रम [४४७-४४९]

स्तीति, ननु 'सवाओ लद्धीओ सागारोवओगोवउत्तस्स भवंती'त्यागमादनाकारोपयोगे सम्यक्त्वावधिलब्धिविरोधः ?, नैवं, प्रवर्द्धमानपरिणामजीवविषयत्वात् तस्यागमस्य, अवस्थितपरिणामापेक्षया चानाकारोपयोगेऽपि लब्धिलाभस्य सम्भवादिति । 'वइरोसभनारायसंघयणे होज्ज'त्ति प्राप्तव्यकेवलज्ञानत्वात्तस्य, केवलज्ञानप्राप्तिश्च प्रथमसंहनन एव भवतीति, एवमुत्तरत्रापीति ॥ 'सवेयए होज्ज'त्ति विभङ्गस्यावधिभावकाले न वेदक्षयोऽस्तीत्यसौ सवेद एव,'नो इत्थिवेयए होज्ज'त्ति स्त्रिया एवंविधस्य व्यतिकरस्य स्वभावत एवाभावात् 'पुरिसनपुंसगवेयए'त्ति वर्द्धितकत्वादित्वे नपुंसकः पुरुषनपुंसकः 'सकसाई होज्ज'त्ति विभङ्गावधिकाले कषायक्षयस्याभावात् 'चउसु संजलणकोहमाणमायालोभेसु होज्ज'त्ति स ह्यवधिज्ञानतापरिणतविभङ्गज्ञानश्चरणं प्रतिपन्नः उक्तः, तस्य च तत्काले चरणयुक्तत्वात्सञ्ज्वलना एव क्रोधादयो भवन्तीति । 'पसत्थ'त्ति विभङ्गस्यावधिभावो हि नाप्रशस्ताध्यवसानस्य भवतीत्यत उक्तं–प्रशस्ताध्यवसायस्थानानीति । 'अणंतेहिं'ति 'अनन्तैः' अनन्तानागतकालभाविभिः 'विसंजोएइ'त्ति विसंयोजयति, तत्प्राप्तियोग्यताया अपनोदादिति । 'जाओऽविय'त्ति यापि च 'नेरइयतिरिक्खजोणियमणुस्सदेवगतिनामाओ'त्ति एतदभिधानाः 'उत्तरपयडीओ'त्ति नामकर्माभिधानाया मूलप्रकृतेरुत्तरभेदभूताः 'तासिं च णं'ति तासां च नैरयिकगत्याद्युत्तरप्रकृतीनां चशब्दादन्यासां च 'उवग्गहिए'त्ति औपग्रहिकान्–उपष्टम्भप्रयोजनान् अनन्तानुबन्धिनः क्रोधमानमायालोभान् क्षपयति, तथाऽप्रत्याख्यानादींश्च तथाविधानेव क्षपयतीति,'पंचविहं नाणावरणिज्जं'ति मतिज्ञानावरणादिभेदात् 'नवविहं दंसणावरणिज्जं'ति चक्षुर्दर्शनाद्यावरणचतुष्कस्य निद्रापञ्चकस्य च मीलनान्नवविधत्वमस्य 'पंचविहं अंतराइयं'ति दानलाभभो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोपभोगवीर्यविशेषितत्वादिति पञ्चविधत्वमन्तरायस्य, तत्र क्षपयतीति सम्बन्धः, किं कृत्वा ? इत्यत आह–'तालमत्थकडं च णं मोहणिज्जं कट्टु'त्ति मस्तकं–मस्तकशूची कृत्तं–छिन्नं यस्यासौ मस्तककृत्तः, तालश्चासौ मस्तककृत्तश्च तालमस्तककृत्तः, छान्दसत्वाच्चैवं निर्देशः, तालमस्तककृत्त इव यत्तत्तालमस्तककृत्तम्, अयमर्थः–छिन्नमस्ततालकल्पं च मोहनीयं कृत्वा, यथा हि छिन्नमस्तकस्तालः क्षीणो भवति एवं मोहनीयं च क्षीणं कृत्वेति भावः, इदं चोक्तमोहनीयभेदशेषापेक्षया द्रष्टव्यमिति, अथवाऽथ कस्मादनन्तानुबन्ध्यादिस्वभावे तत्र क्षपिते सति ज्ञानावरणीयादि क्षपयत्येव ? इति, अत आह–'तालमत्थे'त्यादि, तालमस्तकस्येव कृत्त्वं–क्रिया यस्य तत्तालमस्तककृत्त्वं तदेवंविधं च मोहनीयं 'कट्टु'त्ति इतिशब्दस्येह गम्यमानत्वादितिकृत्वा–इतिहेतोस्तत्र क्षपिते ज्ञानावरणीयादि क्षपयत्येवेति, तालमस्तकमोहनीययोश्च क्रियासाधर्म्यमेव, यथा हि तालमस्तकविनाशक्रियाऽवश्यम्भावितालविनाशा एवं मोहनीयकर्मविनाशक्रियाऽप्यवश्यम्भाविशेषकर्म्मविनाशेति, आह च–"नस्तकसूचिविनाशे तालस्य यथा ध्रुवो भवति नाशः। तद्वत्कर्मविनाशोऽपि मोहनीयक्षये नित्यम्॥१॥" ततश्च कर्मरजोविकरणकरं–तद्विक्षेपकम् अपूर्वकरणम्–असदृशाध्यवसायविशेषमनुप्रविष्टस्य, अनन्तं विषयानन्त्यात् अनुत्तरं सर्वोत्तमत्वात् निर्व्याघातं कटकुड्यादिभिरप्रतिहननात् निरावरणं सर्वथा स्वावरणक्षयात् कृत्स्नं सकलार्थग्राहकत्वात् प्रतिपूर्णं सकलस्वांशयुक्ततयोत्पन्नत्वात् केवलवरज्ञानदर्शनं–केवलमभिधानतो वरं ज्ञानान्तरापेक्षया ज्ञानं च दर्शनं च ज्ञानदर्शनं समाहारद्वन्द्वस्ततः केवलादीनां कर्मधारयः, इह च क्षपणाक्रमः—अणमिच्छमीससम्मं अट्ठ नपुंसित्थिवे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४३६॥

यच्छकं च । पुमवेयं च खवेई कोहाईए य संजलणे ॥ १ ॥" [अनन्तानुबन्धिनो मिश्रं सम्यक्त्वं अष्टकं नपुंसकं स्त्रीवेदं षट्कं च । पुंवेदं च क्षपयति क्रोधादिकांश्च संज्वलनान् ॥१॥] इत्यादिग्रन्थान्तरप्रसिद्धो, न चायमिहाश्रितो यथा कथञ्चित्क्षपणामात्रस्यैव विवक्षितत्वादिति । 'आघवेज्ज'त्ति आग्राहयेच्छिष्यान् अर्थापयेद्वा–प्रतिपादनतः पूजां प्रापयेत् 'पन्नवेज्ज'त्ति प्रज्ञापयेद्भेदभणनतो बोधयेद्वा 'परूवेज्ज'त्ति उपपत्तिकथनतः 'नन्नत्थ एगनाएण व'त्ति न इति योऽयं निषेधः सोऽन्यत्रैकज्ञाताद्, एकमुदाहरणं वर्जयित्वेत्यर्थः, तथाविधकल्पत्वादस्येति, 'एगवागरणेण व'त्ति एकव्याकरणादेकोत्तरादित्यर्थः 'पव्वावेज्ज व'त्ति प्रव्राजयेद्रजोहरणादिद्रव्यलिङ्गदानतः 'मुंडावेज्ज व'त्ति मुण्डयेच्छिरोलुञ्चनतः 'उवएसं पुण करेज्ज'त्ति अमुष्य पार्श्वे प्रव्रजेत्यादिकमुपदेशं कुर्यात् । 'सद्दावई'त्यादि, शब्दापातिप्रभृतयो यथाक्रमं जम्बूद्वीपप्रज्ञाप्यभिप्रायेण हैमवतहरिवर्षरम्यकैरण्यवतेषु क्षेत्रसमासाभिप्रायेण तु हैमवतैरण्यवतहरिवर्षरम्यकेषु भवन्ति, तेषु च तस्य भाव आकाशगमनलब्धिसम्पन्नस्य तत्र गतस्य केवलज्ञानोत्पादसद्भावे सति, 'साहरणं पडुच्च'त्ति देवेन नयनं प्रतीत्य 'सोमणसवणे'त्ति सौमनसवनं मेरौ तृतीयं 'पंडगवणे'त्ति मेरौ चतुर्थं 'गड्डाए व'त्ति गर्त्ते–निम्ने भूभागेऽधोलोकग्रामादौ 'दरिए व'त्ति तत्रैव निम्नतरप्रदेशे 'पायाले व'त्ति महापातालकलशे वलयामुखादौ 'भवणे व'त्ति भवनवासिदेवनिवासे 'पन्नरससु कम्मभूमीसु'त्ति पञ्च भरतानि पञ्च ऐरवतानि पञ्च महाविदेहा इत्येवंलक्षणासु कर्माणि–कृषिवाणिज्यादीनि तत्प्रधाना भूमयः कर्म्मभूमयस्तासु 'अड्ढाइज्जे'त्यादि अर्द्धं तृतीयं येषां तेऽर्द्धतृतीयास्ते च ते द्वीपाश्चेति समासः, अर्द्धतृतीयद्वीपाश्च समुद्रौ च तत्परिमितावर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रास्तेषां स चासौ विवक्षितो देशरूपो

९ शतके उद्देशः ३१ अश्रुत्वाकेवलिपक्षस्य केवलंधर्माख्यानाभावःऊर्ध्वादिः सू ३६७-३६८-३६९

॥४३६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३६७--३६९]

दीप अनुक्रम [४४७-४४९]

भागः—अंशोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रतदेकदेशभागस्तत्र ॥ अनन्तरं केवल्यादिवचनाश्रवणे यत्स्यात्तदुक्तमथ तच्छ्रवणे यत्स्यात्तदाह—

सोचाणं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए ?, गोयमा ! सोचाणं केवलिस्स वा जाव अत्थेगतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं एवं जा चेव असोचाए वत्तव्वया सा चेव सोचाएवि भाणियव्वा, नवरं अभिलावो सोचेति, सेसं तं चेव निरवसेसं जाव जस्स णं मणपज्जवनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ जस्स णं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए कडे भवइ से णं सोचाकेवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलिपन्नत्तं धम्मं लब्भइ सवणयाए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा जाव केवलनाणं उप्पाडेज्जा, तस्स णं अट्ठमंअट्ठमेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणस्स पगइभद्दयाए तहेव जाव गवेसणं करेमाणस्स ओहिनाणे समुप्पज्जइ, से णं तेणं ओहिनाणेणं समुप्पन्नेणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं असंखेज्जाइं अलोए लोयप्पमाणमेत्ताइं खण्डाइं जाणइ पासइ ॥ से णं भंते! कतिसु लेस्सासु होज्जा ?, गोयमा ! छसु लेस्सासु होज्जा, तंजहा–कण्हलेसाए जाव सुक्कलेसाए। से णं भंते ! कतिसु णाणेसु होज्जा ?, गोयमा ! तिसु वा चउसु वा होज्जा, तिसु होज्जमाणे तिसु आभिणिबोहियनाणसुयनाणओहिनाणेसु होज्जा, चउसु होज्जा माणे आभि० सुय० ओहि० मणप० होज्जा। से णं भंते! किं सयोगी होज्जा अयोगी होज्जा ?, एवं जोगोवओगो संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च, एयाणि सद्वाणि जहा असो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७०]

दीप अनुक्रम [४५०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४३७॥

चाए तहेव भाणियव्वाणि । से णं भंते ! किं सवेदए०? पुच्छा, गोयमा ! सवेदए वा होज्जा अवेदए वा, जइ अवेदए होज्जा किं उवसंतवेयए होज्जा खीणवेयए होज्जा?, गोयमा ! नो उवसंतवेदए होज्जा खीणवेदए होज्जा, जइ सवेदए होज्जा किं इत्थीवेदए होज्जा पुरिसवेदए होज्जा नपुंसगवेदए वा होज्जा पुरिसनपुंसगवेदए होज्जा ?, पुच्छा, गोयमा ! इत्थीवेदए वा होज्जा पुरिसवेदए वा होज्जा पुरिसनपुंसगवेदए होज्जा । से णं भंते ! किं सकसाई होज्जा अकसाई वा होज्जा ?, गोयमा ! सकसाई वा होज्जा अकसाई वा होज्जा, जइ अकसाई होज्जा किं उवसंतकसाई होज्जा खीणकसाई होज्जा ?, गोयमा नो उवसंतकसाई होज्जा खीणकसाई होज्जा, जइ सकसाई होज्जा से णं भंते ! कतिसु कसाएसु होज्जा ?, गोयमा ! चउसु वा दोसु वा एक्कंमि वा होज्जा, चउसु होज्जमाणे चउसु संजलणकोहमाणमायालोभेसु होज्जा, तिसु होज्जमाणे तिसु संजलणमाणमायालोभेसु होज्जा, दोसु होज्जमाणे दोसु संजलणमायालोभेसु होज्जा, एगंमि होज्जमाणे एगंमि संजलणे लोभे होज्जा । तस्स णं भंते ! केवतिया अज्झवसाणा पण्णत्ता ?, गोयमा ! असंखेज्जा, एवं जहा असोच्चाए तहेव जाव केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जइ, से णं भंते ! केवलिपन्नत्तं धम्मं आघवेज्ज वा पन्नवेज्ज वा परूवेज्ज वा ?, हंता आघवेज्ज वा पन्नवेज्ज वा परूवेज्ज वा । से णं भंते ! पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा ?, हंता गोयमा ! पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा, तस्स णं भंते ! सिस्सावि पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा ?, हंता पव्वावेज्ज वा मुण्डावेज्ज वा, तस्स णं भंते ! पसिस्सावि पव्वावेज्ज वा मुंडा-

९ शतके उद्देशः ३१ अश्रुत्वाके-वलिपक्षस्य श्रवणादिः सू ३७०

॥४३७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेज्ज वा ?, हंता पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा । से णं भंते ! सिज्झति बुज्झति जाव अंतं करेइ ?, हंता सिज्झइ वा जाव अंतं करेइ तस्स णं भंते ! सिस्सावि सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति ?, हंता सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति, तस्स णं भंते ! पसिस्सावि सिज्झंति जाव अंतं करेन्ति, एवं चेव जाव अंतं करेन्ति । से णं भंते ! किं उड्ढं होज्जा जहेव असोच्चाए जाव तदेक्कदेसभाए होज्जा । ते णं भंते ! एगसमएणं केवतिया होज्जा ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं अट्ठसयं १०८, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–सोच्चाणं केवलिस्स वा जाव केवलिउवासियाए वा जाव अत्थेगतिए केवलनाणं उप्पाडेज्जा अत्थेगतिए नो केवलनाणं उप्पाडेज्जा । सेवंभंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ३७०) नवमसयस्स इगतीसइमो उद्देसो ॥ ९–३१ ॥

'सोच्चाण'मित्यादि, अथ यथैव केवल्यादिवचनाश्रवणावासबोध्यादेः केवलज्ञानमुत्पद्यते न तथैव तच्छ्रवणावासबोध्यादेः किन्तु प्रकारान्तरेणेति दर्शयितुमाह—'तस्स ण'मित्यादि, 'तस्स'त्ति यः श्रुत्वा केवलज्ञानमुत्पादयेत्तस्य कस्यार्थात् प्रतिपन्नसम्यग्दर्शनचारित्रलिङ्गस्य 'अट्ठमंअट्ठमेण'मित्यादि च यदुक्तं तत्प्रायो विकृष्टतपश्चरणवतः साधोरवधिज्ञानमुत्पद्यत इति ज्ञापनार्थमिति, 'लोयप्पमाणमेत्ताइं'ति लोकस्य यत्प्रमाणं तदेव मात्रा–परिमाणं येषां तानि तथा॥ अथैनमेव लेश्यादिभिर्निरूपयन्नाह—'से णं भंते !' इत्यादि, तत्र 'से णं'ति सोऽनन्तरोक्तविशेषणोऽधिज्ञानी 'छसु लेसासु होज्ज'त्ति यद्यपि भावलेश्यासु प्रशस्तास्वेव तिसृष्वपि ज्ञानं लभते तथाऽपि द्रव्यलेश्याः प्रतीत्य षट्स्वपि लेश्यासु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लभते सम्यक्त्वश्रुतवत्, यदाह—'सम्मत्तसुयं सव्वासु लब्भइ'त्ति तल्लाभे चासौ षट्स्वपि भवतीत्युच्यत इति, 'तिसु व'त्ति अवधिज्ञानस्याद्यज्ञानद्वयाविनाभूतत्वादधिकृतावधिज्ञानी त्रिषु ज्ञानेषु भवेदिति, 'चउसु वा होज्ज'त्ति मतिश्रुतमनःपर्यायज्ञानिनोऽवधिज्ञानोत्पत्तौ ज्ञानचतुष्टयभावाच्चतुर्षु ज्ञानेष्वधिकृतावधिज्ञानी भवेदिति। 'सवेयए वा'इत्यादि, अक्षीणवेदस्यावधिज्ञानोत्पत्तौ सवेदकः सन्नवधिज्ञानी भवेत्, क्षीणवेदस्य चावधिज्ञानोत्पत्ताववेदकः सन्नयं स्यात्, 'नो उवसंतवेयए होज्ज'त्ति उपशान्तवेदोऽयमवधिज्ञानी न भवति, प्राप्तव्यकेवलज्ञानस्यास्य विवक्षितत्वादिति। 'सकसाई वा'इत्यादि, यः कषायाक्षये सत्यवधिं लभते स सकषायी सन्नवधिज्ञानी भवेत्, यस्तु कषायक्षयेऽसावकषायीति। 'चउसु वे'त्यादि, यद्यक्षीणकषायः सन्नवधिं लभते तदाऽयं चारित्रयुक्तत्वाच्चतुर्षु सञ्ज्वलनकषायेषु भवति, यदा तु क्षपकश्रेणिवर्त्तित्वेन सञ्ज्वलनक्रोधे क्षीणेऽवधिं लभते तदा त्रिषु सञ्ज्वलनमानादिषु, यदा तु तथैव सञ्ज्वलनक्रोधमानयोः क्षीणयोस्तदा द्वयोः, एवमेकत्रेति ॥ नवमशते एकत्रिंशत्तम उद्देशकः समाप्तः ॥ ९–३१ ॥

१ यद्यपि अत्र श्रुत्वाकेवल्यधिकारात् मनुष्येणैवाधिकारः, तस्य च द्रव्यलेश्याभावलेश्यापार्थक्यं द्रव्यलेश्याया अवस्थितिश्च चिरं यावन्न, तथापि भवन्नित्यस्य जायमान इत्यर्थकत्वाभावे विद्यमान इत्यर्थकस्य च ग्रहणे न काप्यनुपपत्तिः, प्राप्तेऽवधिज्ञाने लेश्यापरावृत्तिः प्रमादात्, अत्र द्रव्यलेश्योक्तिस्तु तल्लेश्यकद्रव्याणां तथा तथा परिणतिमपेक्ष्य, न चैतदन्यलेश्याद्रव्याणामन्यलेश्यातया परिणमनमसंभवि, नृतिरश्चां द्रव्यलेश्याद्रव्यपरिणामान्तरस्वीकारात्, एवं स्यात्तदापि नासंगतिः। २ पूर्वं यद्युपशान्तः स्यात्तदापि पातस्तस्य भूतपूर्व एव, अधुनोपशमे तु द्विरुपशमे श्रेण्यारोहेण केवलस्योत्पाद एव न स्यात् तत युक्तं उक्तं ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र नवमे शतके एकत्रिंशत-उद्देशक: परिसमाप्त:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७१--३७२]

दीप अनुक्रम [४५१-४५२]

अनन्तरोद्देशके केवल्यादिवचनं श्रुत्वा केवलज्ञानमुत्पादयेदित्युक्तम्, इह तु येन केवलिवचनं श्रुत्वा तदुत्पादितं स दर्श्यते, इत्येवंसंबद्धस्य द्वात्रिंशत्तमोद्देशकस्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे नगरे होत्था वन्नओ, दूतिपलासे चेइए, सामी समोसढे, परिसा निग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जे गंगेए नामं अणगारे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छइत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा समणं भगवं महावीरं एवं वयासी–संतरं भंते ! नेरइया उववज्जंति निरंतरं नेरइया उववज्जंति ?, गंगेया ! संतरंपि नेरइया उववज्जंति निरंतरंपि नेरइया उववज्जंति, संतरं भंते ! असुरकुमारा उववज्जंति निरंतरं असुरकुमारा उववज्जंति ?, गंगेया ! संतरंपि असुरकुमारा उववज्जंति निरंतरंपि असुरकुमारा उववज्जंति एवं जाव थणियकुमारा, संतरं भंते ! पुढविकाइया उववज्जंति निरंतरं पुढविकाइया उववज्जंति ?, गंगेया ! नो संतरं पुढविकाइया उववज्जंति निरंतरं पुढविकाइया उववज्जंति, एवं जाव वणस्सइकाइया, बेइंदिया जाव वेमाणिया एते जहा णेरइया (सूत्रं ३७१) संतरं भंते ! नेरइया उववट्टंति निरंतरं नेरइया उववट्टंति ?, गंगेया ! संतरंपि नेरइया उववट्टंति निरंतरंपि नेरइया उववट्टंति, एवं जाव थणियकुमारा, संतरं भंते ! पुढविकाइया उववट्टंति ? पुच्छा, गंगेया ! णो संतरं पुढविकाइया उववट्टंति निरंतरं पुढविकाइया उववट्टंति, एवं जाव वणस्सइकाइया नो संतरं निरंतरं उववट्टंति, संतरं भंते ! बेइंदिया उववट्टंति निरंतरं बेंदिया उववट्टंति ?, गंगेया !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ नवमे शतके द्वात्रिंशत-उद्देशकः आरभ्यते

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्नाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७१--३७२]

दीप अनुक्रम [४५१-४५२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥४३९॥

संतरंपि बेइंदिया उववट्टंति निरंतरंपि बेइंदिया उववट्टंति, एवं जाव वाणमंतरा, संतरं भंते ! जोइसिया चयंति ? पुच्छा, गंगेया ! संतरंपि जोइसिया चयंति निरंतरंपि जोइसिया चयंति, एवं जाव वेमाणियावि (सूत्रं ३७२)॥

'ते ण'मित्यादि, 'संतरं'ति समयादिकालापेक्षया सविच्छेदं, तत्र चैकेन्द्रियाणामनुसमयमुत्पादात् निरन्तरत्वमन्येषां तूत्पादे विरहस्यापि भावात् सान्तरत्वं निरन्तरत्वं च वाच्यमिति ॥ उत्पन्नानां च सतामुद्वर्त्तना भवतीत्यतस्तां निरूपयन्नाह—'संतरं भंते ! नेरइया उववट्टंती'त्यादि ॥ उद्वृत्तानां च केषाञ्चिद्गत्यन्तरे प्रवेशनं भवतीत्यतस्तन्निरूपणायाह—

कइविहे णं भंते ! पवेसणए पन्नत्ते ?, गंगेया ! चउव्विहे पवेसणए पन्नत्ते तंजहा–नेरइयपवेसणए तिरियजोणियपवेसणए मणुस्सपवेसणए देवपवेसणए । नेरइयपवेसणए णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ?, गंगेया ! सत्तविहे पन्नत्ते, तंजहा–रयणप्पभापुढविनेरइयपवेसणए जाव अहेसत्तमापुढविनेरइयपवेसणए ॥ एगे णं भंते ! नेरइए नेरइयपवेसणएणं पविसमाणे किं रयणप्पभाए होज्जा सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा । दो भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होजा, अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा जाव एगे रयणप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे वालुयप्पभाए

९ शतके उद्देशः ३२ सान्तराद्युत्पादोद्वर्त्तने सू ३७१-३७२

॥४३९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

एगे पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, एवं एक्केका पुढवी छड्डेयव्वा जाव अहवा एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ॥ तिन्नि भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा, अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयणप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा ६ अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा दो रयणप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२ अहवा एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा १७ अहवा दो सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा दो सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २२ एवं जहा सक्करप्पभाए वत्तव्वया भणिया तहा सव्वपुढवीणं भाणियव्वा जाव अहवा दो तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, ४–४–३–३–२–२–१–१ (४२) अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा १ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा २ जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा ६ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा ७ एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुय० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ९, अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा १० जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२ अहवा एगे रयणप्प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४४०॥

भाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा १३ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १४ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालु-यप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा १६ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयपभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा १७ जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १९ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा २० जाव अहवा एगे सक्कर० एगे पंक० एगे अहेसत्तमाए होज्जा २२ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा २३ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्प० एगे अहेसत्तमाए होज्जा २४ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २५ अहवा एगे वालु-यप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा २६ अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमाए होज्जा २७ अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २७ अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा २९ अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३० अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३१ अहवा एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा ३२ अहवा एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३३ अहवा एगे पंकप्प-भाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३४ अहवा एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३५ ॥ चत्तारि भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा ? पुच्छा, गंगेया ! स्य-

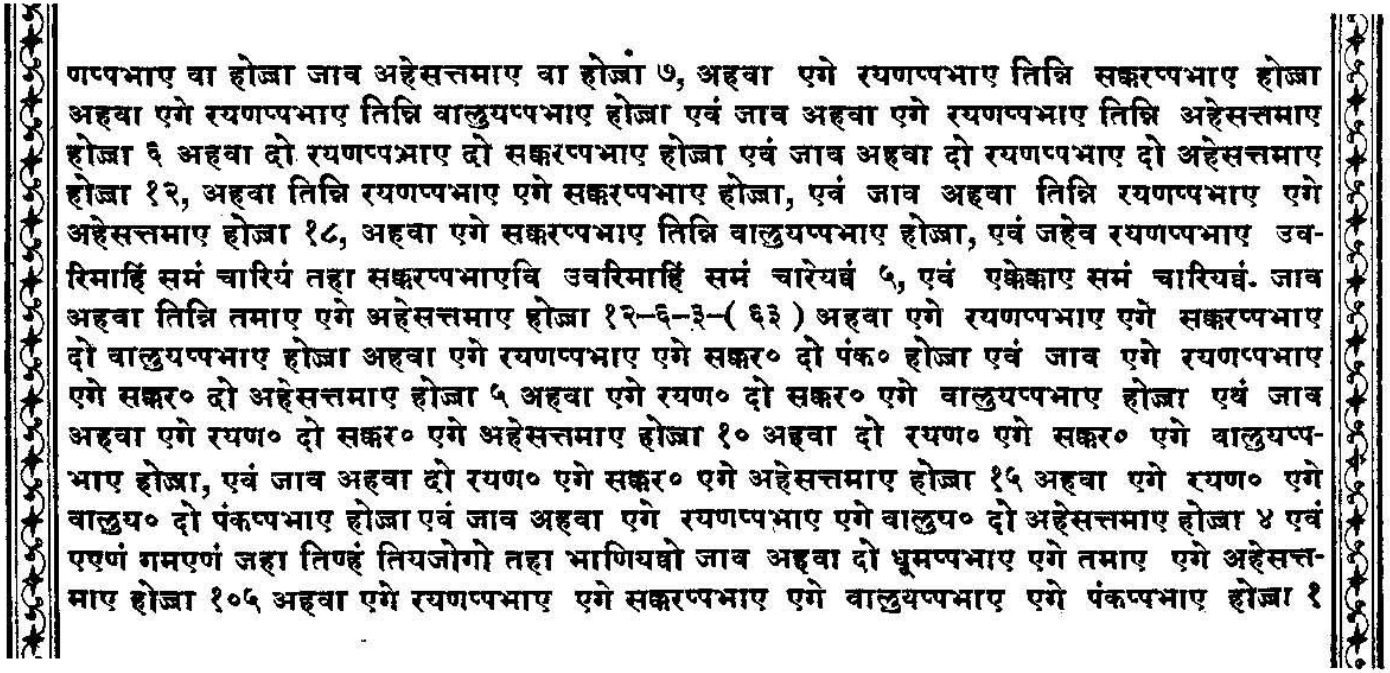
९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजी-वप्रवेशाधि. सू ३७२

॥४४०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र सू.३७३ एव वर्तते, मूल संपादकस्य स्खलनत्वात् सू.३७२ लिखितं, तस्मात् सू.३७२ स्थाने सू.३७३ एव जानीत

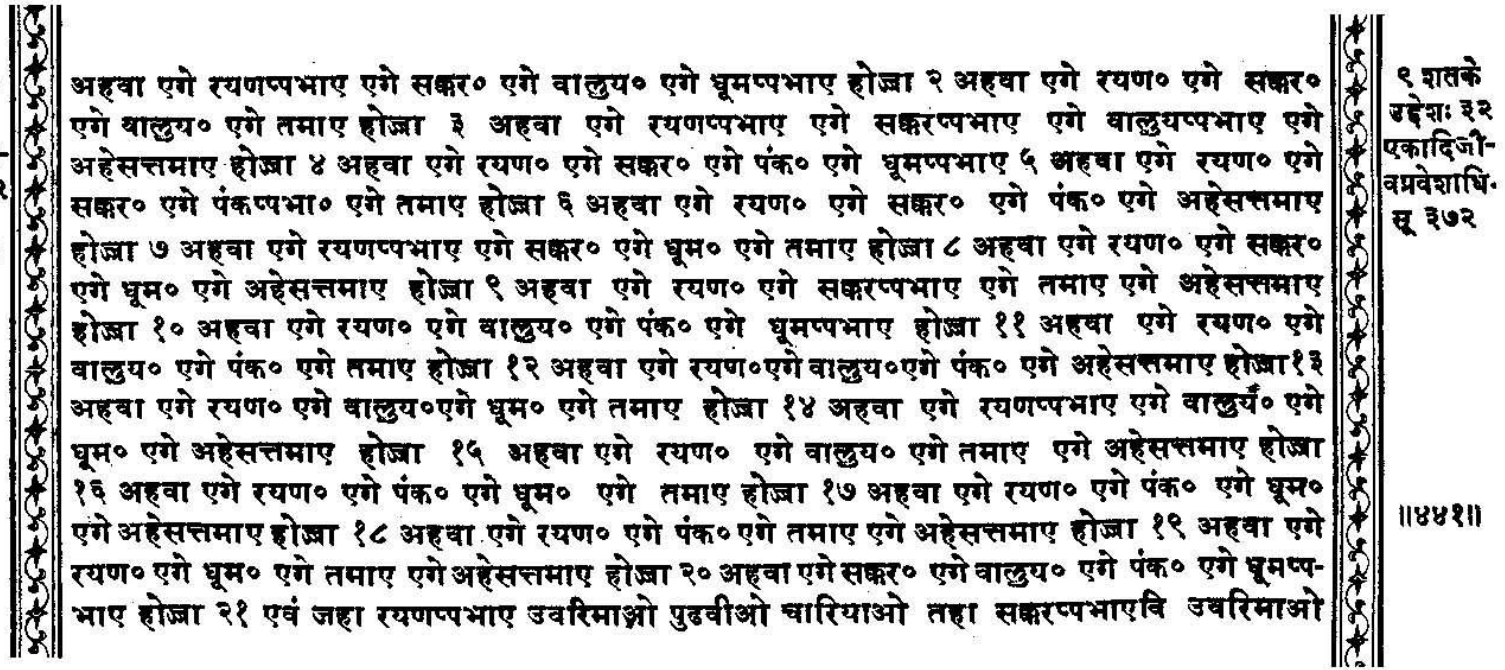
पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:



णप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७, अहवा एगे रयणप्पभाए तिन्नि सक्करप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयणप्पभाए तिन्नि वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए तिन्नि अहेसत्तमाए होज्जा ६ अहवा दो रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा १२, अहवा तिन्नि रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा तिन्नि रयणप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८, अहवा एगे सक्करप्पभाए तिन्नि वालुयप्पभाए होज्जा, एवं जहेव रयणप्पभाए उवरिमाहिं समं चारियं तहा सक्करप्पभाएवि उवरिमाहिं समं चारेयव्वं ५, एवं एक्केक्काए समं चारियव्वं. जाव अहवा तिन्नि तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२–६–३–(६३) अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्कर० दो पंक० होज्जा एवं जाव एगे रयणप्पभाए एगे सक्कर० दो अहेसत्तमाए होज्जा ५ अहवा एगे रयण० दो सक्कर० एगे वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० दो सक्कर० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १० अहवा दो रयण० एगे सक्कर० एगे वालुयप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा दो रयण० एगे सक्कर० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० दो पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुय० दो अहेसत्तमाए होज्जा ४ एवं एएणं गमएणं जहा तिण्हं तियजोगो तहा भाणियव्वो जाव अहवा दो धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १०५ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥४४१॥

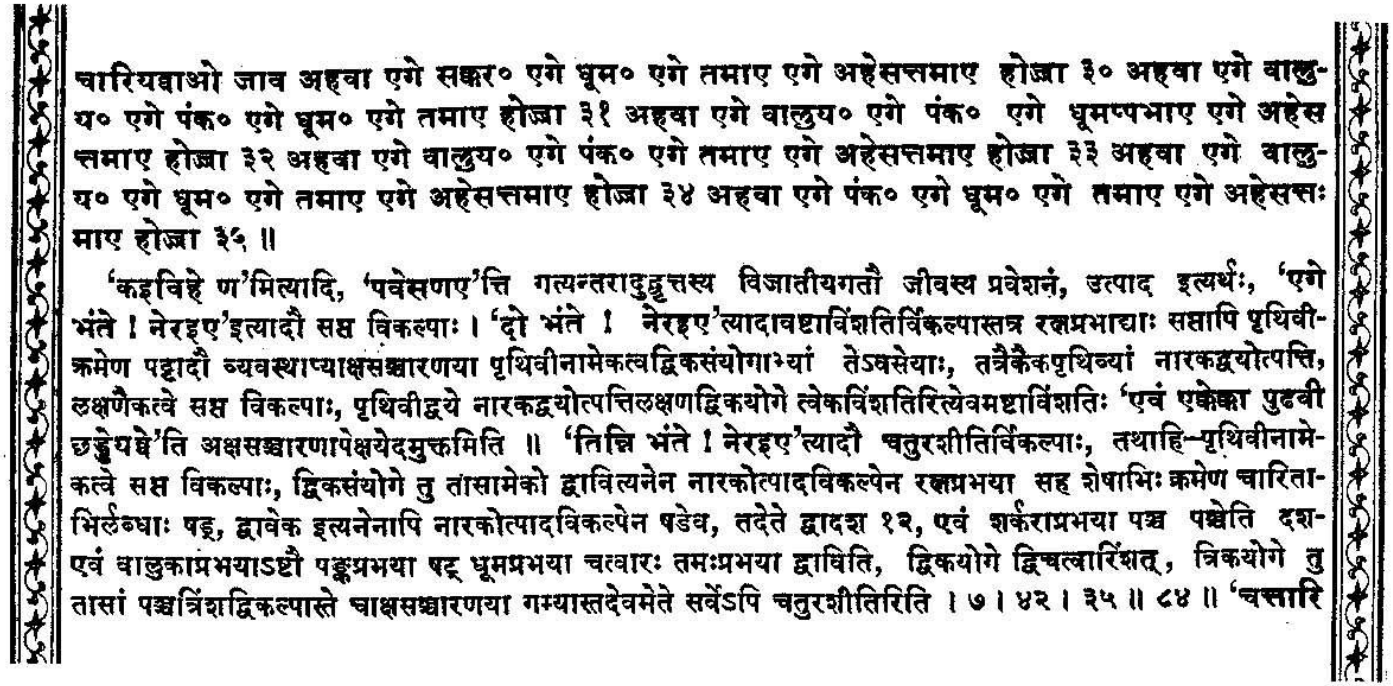
अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे धूमप्पभाए होज्जा २ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे तमाए होज्जा ३ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे धूमप्पभाए ५ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंकप्पभा० एगे तमाए होज्जा ६ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ७ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्कर० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा ८ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ९ अहवा एगे रयण० एगे सक्करप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १० अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूमप्पभाए होज्जा ११ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे तमाए होज्जा १२ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १३ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा १४ अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुय० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १६ अहवा एगे रयण० एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा १७ अहवा एगे रयण० एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८ अहवा एगे रयण० एगे पंक० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १९ अहवा एगे रयण० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २० अहवा एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूमप्प-भाए होज्जा २१ एवं जहा रयणप्पभाए उवरिमाओ पुढवीओ चारियाओ तहा सक्करप्पभाएवि उवरिमाओ

९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजी-वप्रवेशादि-सू ३७२

॥४४१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	***अत्र सू.३७३ एव वर्तते, मूल संपादकस्य स्खलनत्वात् सू.३७२ लिखितं, तस्मात् सू.३७२ स्थाने सू.३७३ एव जानीत पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:



चारियव्वाओ जाव अहवा एगे सक्कर० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३० अहवा एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा ३१ अहवा एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३२ अहवा एगे वालुय० एगे पंक० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३३ अहवा एगे वालुय० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३४ अहवा एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३५ ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, 'पवेसणए'त्ति गत्यन्तरादुद्वृत्तस्य विजातीयगतौ जीवस्य प्रवेशनं, उत्पाद इत्यर्थः, 'एगे भंते ! नेरइए'इत्यादौ सप्त विकल्पाः । 'दो भंते ! नेरइए'त्यादावष्टाविंशतिर्विकल्पास्तत्र रत्नप्रभाद्याः सप्तापि पृथिवीक्रमेण पट्टादौ व्यवस्थाप्याक्षसञ्चारणया पृथिवीनामेकत्वद्विकसंयोगाभ्यां तेऽवसेयाः, तत्रैकैकपृथिव्यां नारकद्वयोत्पत्ति, लक्षणैकत्वे सप्त विकल्पाः, पृथिवीद्वये नारकद्वयोत्पत्तिलक्षणद्विकयोगे त्वेकविंशतिरित्येवमष्टाविंशतिः 'एवं एक्केक्का पुढवी छड्डेयव्वे'ति अक्षसञ्चारणापेक्षयेदमुक्तमिति ॥ 'तिन्नि भंते ! नेरइए'त्यादौ चतुरशीतिर्विकल्पाः, तथाहि–पृथिवीनामेकत्वे सप्त विकल्पाः, द्विकसंयोगे तु तासामेको द्वावित्यनेन नारकोत्पादविकल्पेन रत्नप्रभया सह शेषाभिः क्रमेण चारिताभिर्लब्धाः षट्, द्वावेक इत्यनेनापि नारकोत्पादविकल्पेन षडेव, तदेते द्वादश १२, एवं शर्कराप्रभया पञ्च पञ्चेति दशएवं वालुकाप्रभयाऽष्टौ पङ्कप्रभया षट् धूमप्रभया चत्वारः तमःप्रभया द्वाविति, द्विकयोगे द्विचत्वारिंशत्, त्रिकयोगे तु तासां पञ्चत्रिंशद्विकल्पास्ते चाक्षसञ्चारणया गम्यास्तदेवमेते सर्वेऽपि चतुरशीतिरिति । ७ । ४२ । ३५ ॥ ८४ ॥ 'चत्तारि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४४२॥

भंते ! नेरइया' इत्यादौ दशोत्तरे द्वे शते विकल्पानां, तथाहि—पृथिवीनामेकत्वे सप्त विकल्पाः, द्विकसंयोगे तु तासा-मेकस्य इत्यनेन नारकोत्पादविकल्पेन रत्नप्रभया सह शेषाभिः क्रमेण चारिताभिर्लब्धाः षट् , द्वौ द्वावित्यनेनापि षट्, त्रय एक इत्यनेनापि षडेव, तदेवमेतेऽष्टादश, शर्कराप्रभया तु तथैव त्रिषु पूर्वोक्तनारकोत्पादविकल्पेषु पञ्च पञ्चेति पञ्च-दश, एवं वालुकाप्रभया चत्वारश्चत्वार इति द्वादश, पङ्कप्रभया त्रयस्त्रय इति नव, धूमप्रभया द्वौ द्वाविति षट्, तमः-प्रभयैकैक इति त्रयः, तदेवमेते द्विकसंयोगे त्रिषष्टिः ६३, तथा पृथिवीनां त्रिकयोगे एक एको द्वौ चेत्येवं नारकोत्पाद-विकल्पे रत्नप्रभाशर्कराप्रभाभ्यां सहान्याभिः क्रमेण चारिताभिर्लब्धाः पञ्च, एको द्वावेकश्चेत्येवं नारकोत्पादविकल्पां-न्तरेऽपि पञ्च, द्वावेक एकश्चेत्येवमपि नारकोत्पादविकल्पान्तरे पञ्चैवेति पञ्चदश १५, एवं रत्नप्रभावालुकाप्रभाभ्यां सहोत्त-राभिः क्रमेण चारिताभिर्लब्धा द्वादश १२, एवं रत्नप्रभापङ्कप्रभाभ्यां नव, रत्नप्रभाधूमप्रभाभ्यां षट्, रत्नप्रभातमः-प्रभाभ्यां त्रयः, शर्कराप्रभावालुकाप्रभाभ्यां द्वादश १२, शर्कराप्रभापङ्कप्रभाभ्यां नव, शर्कराप्रभाधूमप्र-भाभ्यां षट्, शर्कराप्रभातमःप्रभाभ्यां त्रयः, वालुकाप्रभापङ्कप्रभाभ्यां नव, वालुकाप्रभाधूमप्रभाभ्यां षट्, वालुकाप्रभातमःप्रभाभ्यां त्रयः, पङ्कप्रभाधूमप्रभाभ्यां षट्, पङ्कप्रभातमःप्रभाभ्यां त्रयः, धूमप्रभा-दिभिस्तु त्रय इति, तदेवं त्रिकयोगे पञ्चोत्तरं शतं चतुष्कसंयोगे तु पञ्चत्रिंशदिति, एवं सप्तानां त्रिषष्टेः पञ्चोत्तरशतस्य पञ्चत्रिंशतश्च मीलने द्वे शते दशोत्तरे भवत इति ॥

चतुष्प्रवेशे त्रिकयोगे
४५ रत्न०
३० शर्करा,
१८ वालुका०
९ पंकप्रभा
३ धूमप्रभा

पंच भंते ! नेरइया नेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा ? पुच्छा, गंगेया ! रयणप्प-

९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजी-वप्रवेशादि. सू ३७२

॥४४२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	***अत्र सू.३७३ एव वर्तते, मूल संपादकस्य स्खलनत्वात् सू.३७२ लिखितं, तस्मात् सू.३७२ स्थाने सू.३७३ एव जानीत पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

भाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा अहवा एगे रयण० चत्तारि सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयण० चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० तिन्नि सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए तिन्नि अहेसत्तमाए होज्जा अहवा तिन्नि रयण० दो सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहेसत्तमाए होज्जा अहवा चत्तारि रयण० एगे सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा चत्तारि रयण० एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे सक्कर० चत्तारि वालुयप्पभाए होज्जा एवं जहा रयणप्पभाए समं उवरिमपुढवीओ चारियाओ तहा सक्करप्पभाएवि समं चारेयव्वाओ जाव अहवा चत्तारि सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा एवं एक्केक्काए समं चारेयव्वाओ जाव अहवा चत्तारि तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० तिन्नि वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० तिन्नि अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो सक्कर० दो वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० दो सक्कर० दो अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा रयण० तिन्नि सक्कर० एगे वालुयप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे सक्कर० एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० दो सक्कर० एगे होज्जा एवं जाव अहेसत्तमाए अहवा तिन्नि रयण० एगे सक्कर० एगे वालुयप्पभाए

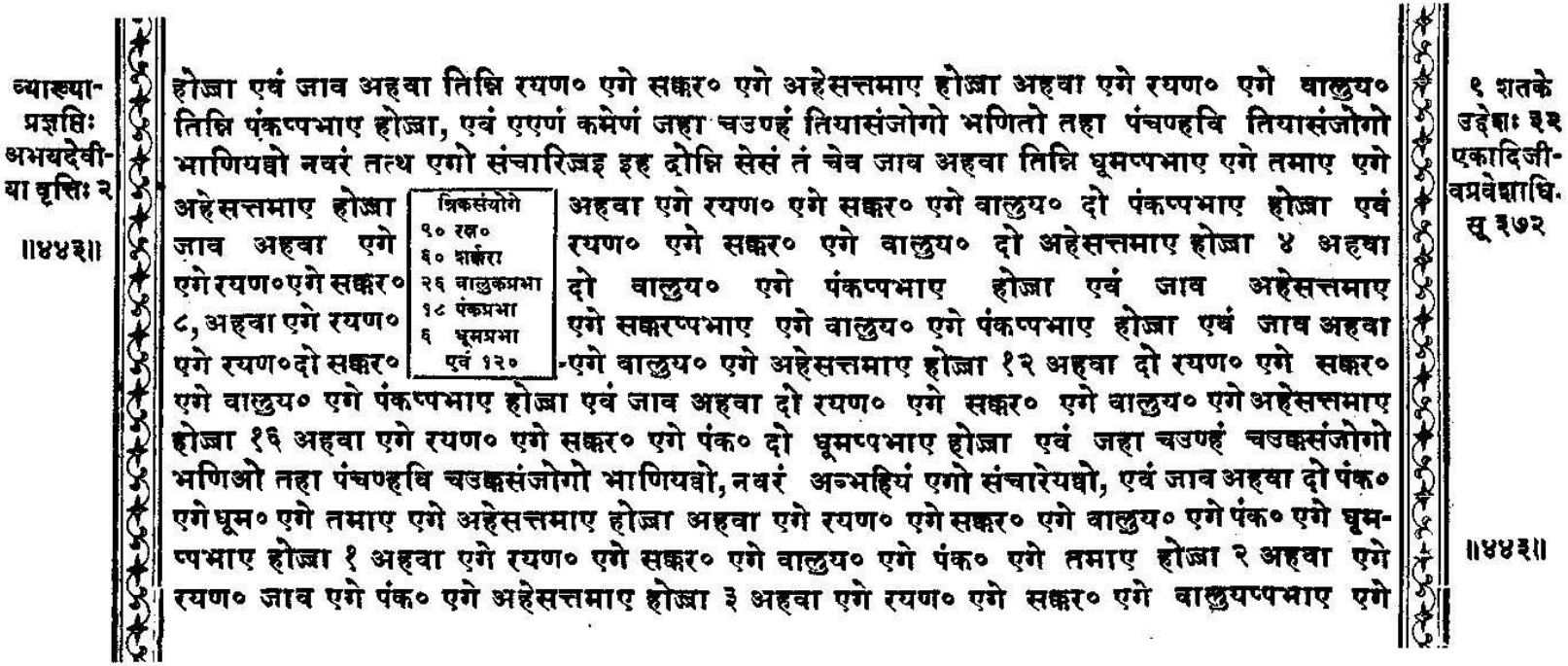
र	स
१	४
२	३
३	२
४	१

एवं पंचजीवानां द्विकसंयोगे भागाः ८४
२४ रत्नप्रभा
२० शर्कराप्रभा
१६ वालुकाप्रभा
१२ पंकप्रभा
८ धूमप्रभा
४ तमःप्रभा

होज्जा एवं अहवा एगे रयण० तिन्नि वालुयप्पभाए वालुयप्पभाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४४३॥

होज्जा एवं जाव अहवा तिन्नि रयण० एगे सक्कर० एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे वालुय० तिन्नि पंकप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं जहा चउण्हं तियासंजोगो भणितो तहा पंचण्हवि तियासंजोगो भाणियव्वो नवरं तत्थ एगो संचारिज्जइ इह दोन्नि सेसं तं चेव जाव अहवा तिन्नि धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा जाव अहवा एगे रयण०एगे सक्कर० ८, अहवा एगे रयण० एगे रयण०दो सक्कर०

त्रिकसंयोगे	
९०	रत्न०
६०	शर्करा
२६	वालुकप्रभा
१८	पंकप्रभा
६	धूमप्रभा
एवं	१२०

अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० दो पंकप्पभाए होज्जा एवं रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० दो अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा दो वालुय० एगे पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहेसत्तमाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुय० एगे पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा -एगे वालुय० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२ अहवा दो रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा दो रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १६ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० दो धूमप्पभाए होज्जा एवं जहा चउण्हं चउक्कसंजोगो भणिओ तहा पंचण्हवि चउक्कसंजोगो भाणियव्वो, नवरं अब्भहियं एगो संचारेयव्वो, एवं जाव अहवा दो पंक० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूम-प्पभाए होज्जा १ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे पंक० एगे तमाए होज्जा २ अहवा एगे रयण० जाव एगे पंक० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुयप्पभाए एगे

९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजी-वप्रवेशाधि. सू ३७२

॥४४३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	***अत्र सू.३७३ एव वर्तते, मूल संपादकस्य स्खलनत्वात् सू.३७२ लिखितं, तस्मात् सू.३७२ स्थाने सू.३७३ एव जानीत पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा ४ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे धूमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ६ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा ७ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ८ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० एगे तम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा ९ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे धूम० एगे तम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १० अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूम० एगे तमाए होज्जा ११ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १३ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० एगे धूम० एगे तम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १४ अहवा एगे रयण० एगे पंक० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५ अहवा एगे सक्कर० एगे वालुय० जाव एगे तमाए होज्जा १६ अहवा एगे सक्कर० जाव एगे पंक० एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा १७ अहवा एगे सक्कर० जाव एगे पंक० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८ अहवा एगे सक्कर० एगे वालुय० एगे धूम० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १९ अहवा एगे सक्कर० एगे पंक० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा २० अहवा एगे वालुय० जाव एगे अहे सत्तमाए होज्जा २१ ॥

'पंच भंते ! नेरइया' इत्यादि, पूर्वोक्तक्रमेण भावनीयं, नवरं सङ्क्षेपेण विकल्पसङ्ख्या दर्श्यते—एकत्वे सप्त विकल्पाः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४४४॥

द्विकसंयोगे तु चतुरशीतिः, कथं ?, द्विकसंयोगे सप्तानां पदानामेकविंशतिर्भङ्गाः, पञ्चानां च नारकाणां द्विधाकरणेऽक्ष-सञ्चारणावगम्याश्चत्वारो विकल्पा भवन्ति, तद्यथा–एकश्चत्वारश्च, द्वौ त्रयश्च, त्रयो द्वौ च, चत्वार एकश्चेति, तदेवमेक-विंशतिश्चतुर्भिर्गुणिता चतुरशीतिर्भवतीति, त्रिकयोगे तु सप्तानां पदानां पञ्चत्रिंशद्विकल्पाः, पञ्चानां च त्रित्वेन स्थापने षड् विकल्पास्तद्यथा–एक एकस्त्रयश्च, एको द्वौ द्वौ च, द्वावेको द्वौ च, एकस्त्रय एकश्च, द्वौ द्वावेकश्च, त्रय एक एकश्चेति, तदेवं पञ्चत्रिंशतः षड्भिर्गुणने दशोत्तरं भङ्गकशतद्वयं भवति, चतुष्कसंयोगे तु सप्तानां पञ्चत्रिंशद्विकल्पाः, पञ्चानां चतूराशितया स्थापने चत्वारो विकल्पास्तद्यथा–१११२। ११२१। १२११। २१११। तदेवं पञ्चत्रिंशतश्चतुर्भिर्गुणने चत्वारिंशदधिकं शतं भवतीति, पञ्चकयोगे त्वेकविंशतिरिति, सर्वमीलने च चत्वारि शतानि द्विषष्ट्यधिकानि भवन्तीति ॥

छब्भंते ! नेरइया नेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा ? पुच्छा, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७ अहवा एगे रयण० पंच सक्करप्पभाए वा होज्जा अहवा एगे रयण० पंच वालुयप्पभाए वा होज्जा जाव अहवा एगे रयण० पंच अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० चत्तारि सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा दो रयण० चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा अहवा तिन्नि रयण० तिन्नि सक्कर० एवं एएणं कमेणं जहा पंचण्हं दुयासंजोगो तहा छण्हवि भाणियव्वो नवरं एक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो जाव अहवा पंच तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० चत्तारि वालुयप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० चत्तारि पंकप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० चत्तारि

९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजी-वप्रवेशादि. सू ३७२

॥४४४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र सू.३७३ एव वर्तते, मूल संपादकस्य स्खलनत्वात् सू.३७२ लिखितं, तस्मात् सू.३७२ स्थाने सू.३७३ एव जानीत

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो सक्कर० तिन्नि वालुयप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं जहा पंचण्हं तियासंजोगो भणिओ तहा छण्हवि भाणियव्वो नवरं एक्को अहिओ उच्चारेयव्वो, सेसं तं चेव ३४, चउक्कसंजोगोवि तहेव, पंचगसंजोगोवि तहेव, नवरं एक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो जाव पच्छिमो भंगो अहवा दो वालुय० एगे पंक० एगे धूम० एगे तम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० जाव एगे तमाए होज्जा १ अहवा एगे रयण० जाव एगे धूम० एगे अहेसत्तमाए होज्जा २ अहवा एगे रयण० जाव एगे पंक० एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३ अहवा एगे रयण० जाव एगे वालुय० एगे धूम० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० एगे पंक० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५ अहवा एगे रयण० एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ६ अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ७॥

सर्वसीलने ९२४ भङ्गाः
एक०७द्विकसंयोगाः १०५
त्रिकसंयोगाः ३५०
चतुष्कसंयोगाः ३५०
पंचकसंयोगाः १०५
षट्कसंयोगाः ७

'छब्भंते नेरइये'त्यादि ॥ इहैकत्वे सप्त, द्विकयोगे तु षण्णां द्वित्वे पञ्च ४२ । ५१ । तैश्च सप्तपदद्विकसंयोगएकविंशतेर्गुणनात् पञ्चोत्तरं भङ्गकशतं विकल्पास्तद्यथा—। ११४ । १२३ । २१३ । १३२ । २२२ । ३१२ । १४१ । त्रिंशतः सप्तपदत्रिकसंयोगानां गुणनात् त्रीणि शतानि पञ्चाशदधिकानि राशितया स्थापने दश विकल्पास्तद्यथा—। १११३ । ११२२ । १२१२ ।

३०
२५
२०
१५
१०
५
१०५

विकल्पास्तद्यथा—। १५ । २४ । ३३ । भवति, त्रिकयोगे तु षण्णां त्रित्वे दश २३१ । ३२१ । ४११ । एतैश्च पञ्च- भवन्ति, चतुष्कसंयोगे तु षण्णां चतु- २११२ । ११३१ । १२२१ । २१२१ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥४४५॥

१३११ । २३११ । ३१११ । पञ्चत्रिंशतश्च सप्तपदचतुष्कसंयोगानां दशभिर्गुणनात्त्रीणि शतानि पञ्चाशदधिकानि भवन्ति, पञ्चकसंयोगे तु षण्णां पञ्चधाकरणे पञ्च विकल्पास्तद्यथा—११११२। १११२१। ११२११। १२१११। २१११। सप्तानां च पदानां पञ्चकसंयोगे एकविंशतिर्विकल्पाः, तेषां च पञ्चभिर्गुणने पञ्चोत्तरं शतमिति, षट्कसंयोगे तु सप्तैव, ते च सर्वमीलने नव शतानि चतुर्विंशत्युत्तराणि भवन्तीति ॥

सप्तप्रवेशे संयोगाः १७१६
एक० ७ भङ्गाः
द्विकसंयोगाः १२६
त्रिकसंयोगाः ५२५
चतुष्कसंयोगाः ७००
पंचकसंयोगाः ३१५
षट्कसंयोगाः ४२
सप्तकसंयोगाः १

सत्त भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा पुच्छा, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहे सत्तमाए वा होज्जा ७, अहवा एगे रयणप्पभाए छ सक्करप्पभाए होज्जा एवं एएणं कमेणं जहा छण्हं दुयासंजोगो तहा सत्तण्हवि भाणियव्वं नवरं एगो अब्भहिओ संचारिज्जइ, सेसं तं चेव, तियासंजोगो चउक्कसंजोगो पंचसंजोगो छक्कसंजोगो य छण्हं जहा तहा सत्तण्हवि भाणियव्वं, नवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो जाव छक्कगसंजोगो अहवा दो सक्कर० एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ॥

'सत्त भंते !'इत्यादि, इहैकत्वे सप्त, द्विकयोगे तु सप्तानां द्वित्वे षड् विकल्पास्तद्यथा—१६। २५। ३४। ४३। ५२। ६१। षड्भिश्च सप्तपदद्विकसंयोगएकविंशतेर्गुणनात् षड्विंशत्युत्तरं भङ्गकशतं भवति, त्रिकयोगे तु सप्तानां त्रित्वे पञ्चदश विकल्पास्तद्यथा—११५। १२४। २१४। १३३। २२३। ३१३। १४२। ३३२। ३२२। ४१२। १५१। २४१। ३३१।

९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजीवप्रवेशादि. सू ३७३

॥४४५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

४२१ । ५११ । एतैश्च पञ्चत्रिंशतः सप्तपदत्रिकसंयोगानां गुणनात् पञ्च शतानि पञ्चविंशत्यधिकानि भवन्तीति, चतुष्कयोगे तु सप्तानां चतूराशितया स्थापने एक एक एकश्चत्वारश्चेत्यादयो विंशतिर्विकल्पाः ते च वक्ष्यमाणाश्च पूर्वोक्तभङ्गकानुसारेणाक्षसञ्चारणाकुशलेन स्वयमेवावगन्तव्याः, विंशत्या च पञ्चत्रिंशतः सप्तपदचतुष्कसंयोगानां गुणनात् सप्त शतानि विकल्पानां भवन्ति, पञ्चकसंयोगे तु सप्तानां पञ्चतया स्थापने एक एक एक एकश्चयश्चेत्यादयः पञ्चदश विकल्पाः, एतैश्च सप्तपदपञ्चकसंयोगएकविंशतेर्गुणनात्त्रीणि शतानि पञ्चदशोत्तराणि भवन्ति, षट्कसंयोगे तु सप्तानां षोढाकरणे पञ्चैकका द्वौ चेत्यादयः १११११२ षड् विकल्पाः, सप्तानां च पदानां षट्कसंयोगे सप्त विकल्पाः, तेषां च षड्भिर्गुणने द्विचत्वारिंशद्विकल्पा भवन्ति, सप्तकसंयोगे त्वेक एवेति, सर्वमीलने च सप्तदश शतानि षोडशोत्तराणि भवन्ति ॥

'अट्ठ भंते ! नेरतिया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा पुच्छा, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा अहवा एगे रयण० सत्त सक्करप्पभाए होज्जा एवं दुयासंजोगो जाव छक्कसंजोगो य जहा सत्तण्हं भणिओ तहा जाव छक्कसंजोगस्स अहवा एगे रयण०जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा सत्तमाए होज्जा ॥

अष्टानां जीवानां भङ्गाः ३००३
एकयोगे ७
द्विक० १४७
त्रिक० ७३५
चतु० १२२५
पंच० ७३५
षट्० १४७
सप्त० ७

अट्ठण्हवि भाणियव्वो नवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो सेसं तं चेव अहवा तिन्नि सक्कर० एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा एगे तमाए दो अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० जाव दो तमाए एवं संचारेयव्वं जाव अहवा दो रयण० एगे सक्कर० जाव एगे अहेस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४४६॥

'अट्ठ भंते !'इत्यादि, इहैकत्वे सप्त विकल्पाः, द्विकसंयोगे त्वष्टानां द्वित्वे एकः सप्तेत्यादयः सप्त विकल्पाः प्रतीता एव, तैश्च सप्तपदद्विकसंयोगैकविंशतेर्गुणनाच्छतं सप्तचत्वारिंशदधिकानां भवतीति, त्रिकसंयोगे त्वष्टानां त्रित्वे एक एकः षड् इत्यादय एकविंशतिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदत्रिकसंयोगे पञ्चत्रिंशतो गुणने सप्त शतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि भवन्ति, चतुष्कसंयोगे त्वष्टानां चतुर्द्धात्वे एक एक एकः पञ्चेत्यादयः पञ्चत्रिंशद्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदचतुष्कसंयोगानां पञ्चत्रिंशतो गुणने द्वादश शतानि पञ्चविंशत्युत्तराणि भङ्गकानां भवन्तीति, पञ्चकसंयोगे त्वष्टानां पञ्चत्वे एक एक एक एकश्चत्वारश्चेत्यादयः पञ्चत्रिंशद्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदपञ्चकसंयोगैकविंशतेर्गुणने सप्त शतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि भवन्तीति, षट्कसंयोगे त्वष्टानां षोढात्वे पञ्चैककास्त्रयश्चेत्यादयः १११११३ एकविंशतिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदषट्कसंयोगानां सप्तकस्य गुणने सप्तचत्वारिंशदधिकं भङ्गकशतं भवतीति, सप्तसंयोगे पुनरष्टानां सप्तधात्वे सप्त विकल्पाः प्रतीता एव, तैश्चैकैकस्य सप्तकसंयोगस्य गुणने सप्तैव विकल्पाः, एषां च मीलने त्रीणि सहस्राणि त्र्युत्तराणि भवन्तीति ॥

नव भंते ! नेरतिया नेरतियपवेसणएणं पविसमाणा किं पुच्छा, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा अहवा एगे रयण० अट्ठ सक्करप्पभाए होज्जा एवं दुयासंजोगो जाव सत्तगसंजोगो य जहा अट्ठण्हं भणियं तहा नवण्हंपि भाणियव्वं नवरं एक्केको अब्भहिओ संचारेयव्वो, सेसं तं चेव पच्छिमो आलावगो अहवा तिन्नि रयण० एगे सक्कर० एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए वा होज्जा ॥

असंयोगाः ७
द्विकसं० १६८
त्रिकसं० ९८०
चतुष्कसं० १९६०
पंचकसं० १४७०
षट्कसं० ३९२
सप्तकसं० २८
५००५

९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजीवप्रवेशादि. सू ३७३

॥४४६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

'नव भंते !'इत्यादि, इहाप्येकत्वे सप्तैव, द्विकसंयोगे तु नवानां द्वित्वेऽष्टौ विकल्पाः प्रतीता एव, तैश्चैकविंशतेः सप्तपदद्विकसंयोगानां गुणनेऽष्टषष्ट्यधिकं भङ्गकशतं भवतीति, त्रिकसंयोगे तु नवानां द्वावेककौ तृतीयश्च सप्तकः ११७ इत्येवमादयोऽष्टाविंशतिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदत्रिकसंयोगपञ्चत्रिंशतो गुणने नव शतान्यशीत्युत्तराणि भङ्गकानां भवन्तीति, चतुष्कयोगे तु नवानां चतुर्द्धात्वे त्रय एककाः षट् चेत्यादयः १११६ षट्पञ्चाशद्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदचतुष्कसंयोगपञ्चत्रिंशतो गुणने सहस्रं नव शतानि षष्टिश्च भङ्गकानां भवन्तीति, पञ्चकसंयोगे तु नवानां पञ्चधात्वे चत्वार एककाः पञ्चकश्चेत्यादयः ११११५ सप्ततिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदपञ्चकसंयोगएकविंशतेर्गुणने सहस्रं चत्वारि शतानि सप्ततिश्च भङ्गकानां भवन्तीति, षट्कसंयोगे तु नवानां षोढात्वे पञ्चैककाश्चतुष्ककश्चेत्यादयः १११११४ षट्पञ्चाशद्विकल्पा भवन्ति, तैश्च सप्तपदषट्कसंयोगसप्तकस्य गुणने शतत्रयं द्विनवत्यधिकं भङ्गकानां भवन्तीति, सप्तपदसंयोगे पुनर्नवानां सप्तत्वे एककाः षट् त्रिकश्चेत्यादयो १११११३ ऽष्टाविंशतिर्विकल्पा भवन्तीति, तैश्चैकस्य सप्तकसंयोगस्य गुणनेऽष्टाविंशतिरेव भङ्गकाः, एषां च सर्वेषां मीलने पञ्च सहस्राणि पञ्चोत्तराणि विकल्पानां भवन्तीति ॥

दस भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा पुच्छा, गंगेया ! रयणप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७ अहवा एगे रयणप्पभाए नव सक्करप्पभाए होज्जा एवं दुयासंजोगो जाव सत्तसंजोगो य जहा नवण्हं नवरं एक्केको अब्भहिओ संचारेयवो सेसं तं चेव अपच्छिमआलावगो अहवा चत्तारि रयण० एगे सक्करपभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥४४७॥

७ असंयोगी
१८९ द्विकसं०
१२६० त्रिकसं०
२९४० चतुष्कसं०
२६४६ पञ्चकसं०
८८२ षट्कसं०
८४ सप्तसं०
सर्वे ८००८

'दस भंते !'इत्यादि, इहाप्येकत्वे सप्तैव, द्विकसंयोगे तु दशानां द्विधात्वे एको नव चेत्येवमादयो नव विकल्पाः, तैश्चैकविंशतेः सप्तपदद्विकसंयोगानां गुणने एकोननवत्यधिकं भङ्गकशतं भवतीति, त्रिकयोगे तु दशानां त्रिधात्वे एक एकोऽष्टौ चेत्येवमादयः षट्त्रिंशद्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदत्रिकसंयोगपञ्चत्रिंशतो गुणने द्वादश शतानि षष्ठ्यधिकानि भङ्गकानां भवन्तीति, चतुष्कसंयोगे तु दशानां चतुर्धात्वे एककत्रयं सप्तकश्चेत्येवमादयश्चतुरशीतिर्विकल्पाः, तैश्च सप्तपदचतुष्कसंयोगपञ्चत्रिंशतो गुणने एकोनत्रिंशच्छतानि चत्वारिंशदधिकानि भङ्गकानां भवन्तीति, पञ्चकसंयोगे तु दशानां पञ्चधात्वे चत्वार एककाः षट्कश्चेत्यादयः षड्विंशत्युत्तरशतसङ्ख्या विकल्पा भवन्ति तैश्च सप्तपदपञ्चकसंयोगैकविंशतेर्गुणने षड्विंशतिः शतानि षट्चत्वारिंशदधिकानि भङ्गकानां भवन्तीति, षट्कसंयोगे तु दशानां षोढात्वे पञ्चैककाः पञ्चकश्चेत्यादयः षड्विंशत्युत्तरशतसङ्ख्या विकल्पा भवन्ति, तैश्च सप्तपदषट्कसंयोगसप्तकस्य गुणनेऽष्टौ शतानि द्व्यशीत्यधिकानि भङ्गकानां भवन्तीति, सप्तकसंयोगे तु दशानां सप्तधात्वे षडेककाश्चतुष्कश्चेत्येवमादयश्चतुरशीतिर्विकल्पाः, तैश्चैकस्य सप्तकसंयोगस्य गुणने चतुरशीतिरेव भङ्गकानां भवन्ति, सर्वेषां चैषां मीलनेऽष्ट सहस्राणि अष्टोत्तराणि विकल्पानां भवन्तीति ॥

संखेज्जा भंते ! नेरइया नेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा पुच्छा, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७ अहवा एगे रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा एगे रयण० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए वा होज्जा एवं जाव अहवा दो रयण० संखेज्जा

९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजीवप्रवेशादि. सू ३७३

॥४४७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

अहेसत्तमाए होज्जा अहवा तिन्नि रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा एवं एएणं कमेणं एक्केक्को संचारेयव्वो जाव अहवा दस रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा एवं जाव अहवा दस रयण० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा संखेज्जा रयण० संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा जाव अहवा संखेज्जा रयणप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा एवं जहा रयणप्पभाए उवरिमपुढवीएहिं समं चारिया एवं सक्करप्पभाएवि उवरिमपुढवीएहिं समं चारेयव्वा, एवं एक्केक्का पुढवी उवरिमपुढवीएहिं समं चारेयव्वा जाव अहवा संखेज्जा तमाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयण० एगे सक्कर० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो सक्कर० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० तिन्नि सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं एक्केक्को संचारेयव्वो अहवा एगे रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयण० संखेज्जा वालुय० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा दो रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा दो रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा तिन्नि रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं एक्केक्को रयणप्पभाए संचारेयव्वो जाव अहवा संखेज्जा रयण० संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा जाव अहवा संखेज्जा रयण०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४४८॥

संखेज्जा सक्कर० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० एगे वालुय० संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा जाव अहवा एगे रयण० एगे वालुय० संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा अहवा एगे रयण० दो वालुय० संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं तियासंजोगो चउक्कसंजोगो जाव सत्तगसंजोगो य जहा दसण्हं तहेव भाणियव्वो पच्छिमो आलावगो सत्तसंजोगस्स अहवा संखेज्जा रयण० संखेज्जा सक्कर० जाव संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा ॥

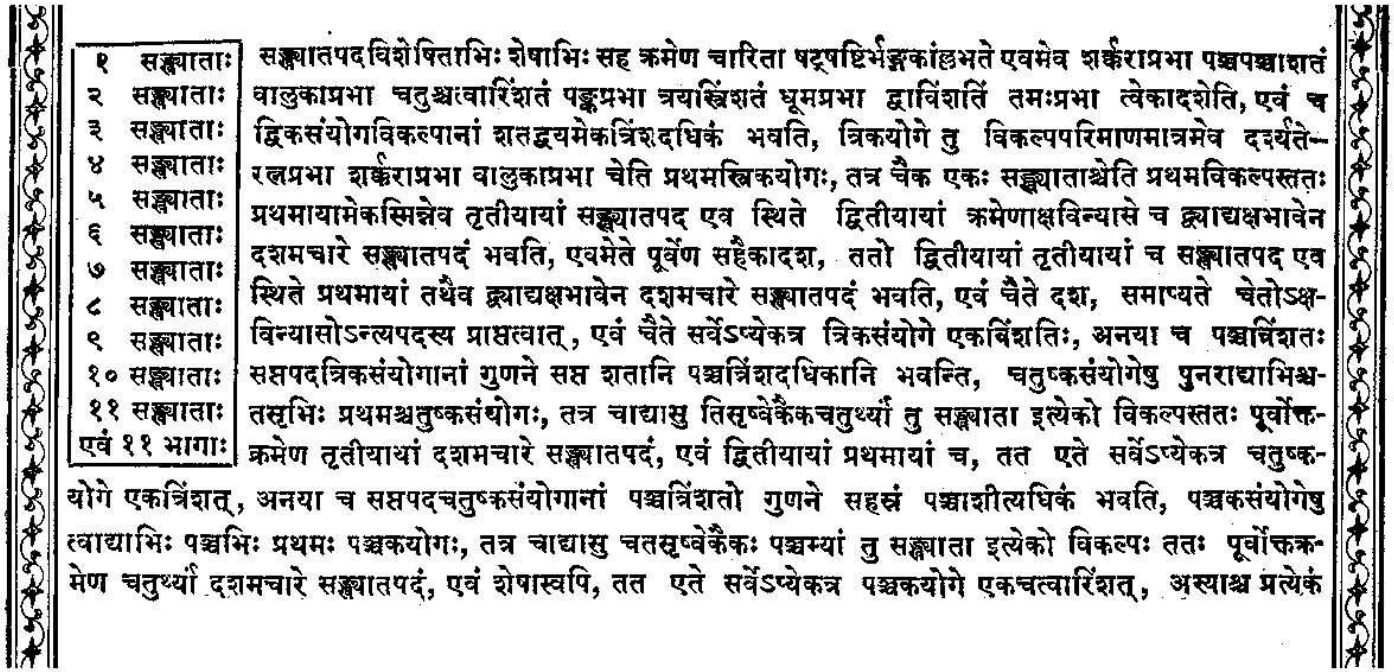
'संखेज्जा भंते !' इत्यादि, तत्र सङ्ख्याता एकादशादयः शीर्षप्रहेलिकान्ताः, इहाप्येकत्वे सप्तैव द्विकसंयोगे तु सङ्ख्यातानां द्विधात्वे एकः सङ्ख्याताश्चेत्यादयो दश सङ्ख्याताः सङ्ख्याताश्चेत्येतदन्ता एकादश विकल्पाः, एते चोपरितनपृथिव्यामेकादीनामेकादशानां पदानामुच्चारणे अधस्तनपृथिव्यां तु सङ्ख्यातपदस्यैवोच्चारणे सत्यवसेयाः, ये त्वन्ये उपरितनपृथिव्यां सङ्ख्यातपदस्याधस्तनपृथिव्यां त्वेकादीनामेकादशानां पदानामुच्चारणे लभ्यन्ते ते इह न विवक्षिताः, पूर्वसूत्रक्रमाश्रयणात्, पूर्वसूत्रेषु हि दशादिराशीनां द्वैविध्यकल्पनायामुपर्येकादयो लघवः सङ्ख्याभेदाः पूर्वं न्यस्ता अधस्तु नवादयो महान्तः एवमिहाप्येकादय उपरि सङ्ख्यातराशिश्चाधः, तत्र च सङ्ख्यातराशेरधस्तनस्यैकाद्याकर्षणेऽपि सङ्ख्यातत्वमवस्थितमेव प्रचुरत्वात्, न पुनः पूर्वसूत्रेषु नवादीनामिवैकादितया तस्यावस्थानमित्यतो नेहाध एकादिभावः, अपि तु सङ्ख्यातसम्भव एवेति नाधिकविकल्पविवक्षेति, तत्र रत्नप्रभा एकादिभिः सङ्ख्यातान्तैरेकादशभिः पदैः क्रमेण विशेषिता

९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजीवप्रवेशादि. सू ३७३

॥४४८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:



१	सङ्ख्याताः
२	सङ्ख्याताः
३	सङ्ख्याताः
४	सङ्ख्याताः
५	सङ्ख्याताः
६	सङ्ख्याताः
७	सङ्ख्याताः
८	सङ्ख्याताः
९	सङ्ख्याताः
१०	सङ्ख्याताः
११	सङ्ख्याताः
एवं ११	भागाः

सङ्ख्यातपदविशेषिताभिः शेषाभिः सह क्रमेण चारिता षट्षष्टिर्भङ्गकानां लभते एवमेव शर्कराप्रभा पञ्चपञ्चाशतं वालुकाप्रभा चतुश्चत्वारिंशतं पङ्कप्रभा त्रयस्त्रिंशतं धूमप्रभा द्वात्रिंशतिं तमःप्रभा त्वेकादशेति, एवं च द्विकसंयोगविकल्पानां शतद्वयमेकत्रिंशदधिकं भवति, त्रिकयोगे तु विकल्पपरिमाणमात्रमेव दर्श्यते– रत्नप्रभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा चेति प्रथमस्त्रिकयोगः, तत्र चैक एकः सङ्ख्याताश्चेति प्रथमविकल्पस्ततः प्रथमायामेकस्मिन्नेव तृतीयायां सङ्ख्यातपद एव स्थिते द्वितीयायां क्रमेणाक्षविन्यासे च द्व्याद्यक्षभावेन दशमचारे सङ्ख्यातपदं भवति, एवमेते पूर्वेण सहैकादश, ततो द्वितीयायां तृतीयायां च सङ्ख्यातपद एव स्थिते प्रथमायां तथैव द्व्याद्यक्षभावेन दशमचारे सङ्ख्यातपदं भवति, एवं चैते दश, समाप्यते चेतोऽक्ष-विन्यासोऽन्त्यपदस्य प्राप्तत्वात्, एवं चैते सर्वेऽप्येकत्र त्रिकसंयोगे एकविंशतिः, अनया च पञ्चविंशतेः सप्तपदत्रिकसंयोगानां गुणने सप्त शतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि भवन्ति, चतुष्कसंयोगेषु पुनराद्याभिश्च-तसृभिः प्रथमश्चतुष्कसंयोगः, तत्र चाद्यासु तिसृष्वेकैकचतुर्थ्यां तु सङ्ख्याता इत्येको विकल्पस्ततः पूर्वोक्त-क्रमेण तृतीयायां दशमचारे सङ्ख्यातपदं, एवं द्वितीयायां प्रथमायां च, तत एते सर्वेऽप्येकत्र चतुष्क-योगे एकत्रिंशत्, अनया च सप्तपदचतुष्कसंयोगानां पञ्चत्रिंशतो गुणने सहस्रं पञ्चाशीत्यधिकं भवति, पञ्चकसंयोगेषु त्वाद्याभिः पञ्चभिः प्रथमः पञ्चकयोगः, तत्र चाद्यासु चतसृष्वेकैकः पञ्चम्यां तु सङ्ख्याता इत्येको विकल्पः ततः पूर्वोक्तक्र-मेण चतुर्थ्यां दशमचारे सङ्ख्यातपदं, एवं शेषास्वपि, तत एते सर्वेऽप्येकत्र पञ्चकयोगे एकचत्वारिंशत्, अस्याश्च प्रत्येकं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

सप्तपदपञ्चकसंयोगानामेकविंशतेर्लाभादष्ट शतानि एकषष्ठ्यधिकानि भवन्ति, षट्कसंयोगेषु तु पूर्वोक्तक्रमेणैकत्र षट्कसंयोगे एकपञ्चाशद्विकल्पा भवन्ति, अस्याश्च प्रत्येकं सप्तपदषट्कयोगे सप्तकलाभात्रीणि शतानि सप्तपञ्चाशदधिकानि भवन्ति, सप्तकसंयोगे तु पूर्वोक्तभावनयैकषष्टिर्विकल्पा भवन्ति,सर्वेषां चैषां मीलने त्रयस्त्रिंशच्छतानि सप्तत्रिंशदधिकानि भवन्ति॥

असंखेज्जा भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पुच्छा, गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे रयण० असंखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा, एवं दुयासंजोगो जाव सत्तगसंजोगो य जहा संखिज्जाणं भणिओ तहा असंखेज्जाणवि भाणियव्वो, नवरं असंखेज्जाओ अब्भहिओ भाणियव्वो, सेसं तं चेव जाव सत्तगसंजोगस्स पच्छिमो आलावगो अहवा असंखेज्जा रयण० असंखेज्जा सक्कर० जाव असंखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा ॥

'असंखेज्जा भंते ! 'इत्यादि, सङ्ख्यातप्रवेशनकवदेवैतदसङ्ख्यातप्रवेशनकं वाच्यं, नवरमिहासङ्ख्यातपदं द्वादशमधीयते, तत्र चैकत्वे सप्तैव, द्विकसंयोगादौ तु विकल्पप्रमाणवृद्धिर्भवति, सा चैवं–द्विकसंयोगे द्वे शते द्विपञ्चाशदधिके २५२, त्रिकसंयोगेऽष्टौ शतानि पञ्चोत्तराणि ८०५, चतुष्कसंयोगे त्वेकादश शतानि नवत्यधिकानि ११९०, पञ्चकसंयोगे पुनर्नव शतानि पञ्चचत्वारिंशदधिकानि ९४५, षट्कसंयोगे तु त्रीणि शतानि द्विनवत्यधिकानि ३९२, सप्तकसंयोगे पुनः सप्तषष्टिः, एतेषां च सर्वेषां मीलने षट्त्रिंशच्छतानि अष्टपञ्चाशदधिकानि भवन्तीति ॥ अथ प्रकारान्तरेण नारकप्रवेशनकमेवाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

उक्कोसेणं भंते ! नेरइया नेरतियपवेसएणं पुच्छा, गंगेया ! सव्वेवि ताव रयणप्पभाए होज्जा अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य होज्जा अहवा रयणप्पभाए य वालुयप्पभाए य होज्जा जाव अहवा रयणप्पभाए य अहेसत्तमाए होज्जा अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य वालुयप्पभाए य होज्जा एवं जाव अहवा रयण० सक्करप्पभाए य अहेसत्तमाए य होज्जा ५ अहवा रयण० वालुय० पंकप्पभाए य होज्जा जाव अहवा रयण० वालुय० अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा रयण० पंकप्पभाए धूमाए होज्जा एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा तिण्हं तियासंजोगो भणिओ तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयण० तमाए य अहेसत्तमाए य होज्जा १५ अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुय० पंकप्पभाए य होज्जा अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुय० धूमप्पभाए य होज्जा जाव अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुय० अहेसत्तमाए य होज्जा ४ अहवा रयण० सक्कर० पंक० धूमप्पभाए य होज्जा एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा चउण्हं चउक्कसंजोगो तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयण० धूम० तमाए अहेसत्तमाए होज्जा अहवा रयण० सक्कर० वालुय० पंक० धूमप्पभाए य होज्जा १ अहवा रयणप्पभाए जाव पंक० तमाए य होज्जा २ अहवा रयण० जाव पंक० अहेसत्तमाए य होज्जा ३ अहवा रयण० सक्कर० वालुय० धूम० तमाए य होज्जा ४ एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा पंचण्हं पञ्चकसंजोगो तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयण० पंकप्पभा० जाव अहेसत्तमाए होज्जा अहवा रयण० सक्कर० जाव धूमप्पभाए तमाए य होज्जा १ अहवा रयण० जाव धूम० अहेसत्तमाए य होज्जा २ अहवा रयण० सक्कर० जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

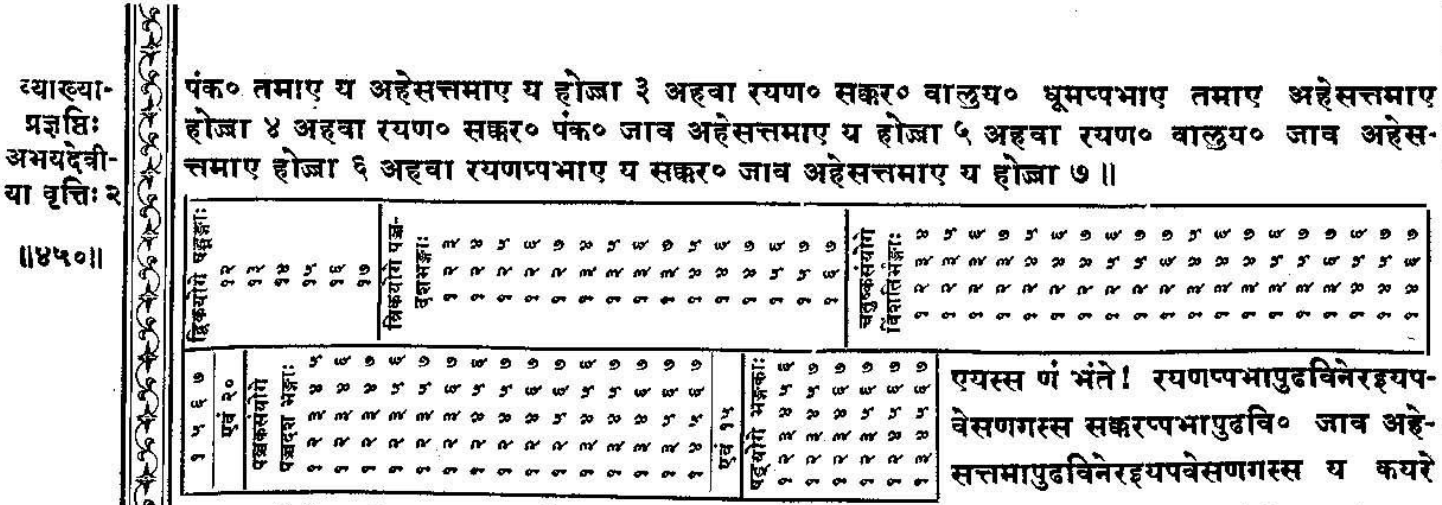
पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

प्रत सूत्रांक [३७३]

दीप अनुक्रम [४५३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवसूरीया वृत्तिः २ ॥४५०॥

पंक० तमाए य अहेसत्तमाए य होज्जा ३ अहवा रयण० सक्कर० वालुय० धूमप्पभाए तमाए अहेसत्तमाए होज्जा ४ अहवा रयण० सक्कर० पंक० जाव अहेसत्तमाए य होज्जा ५ अहवा रयण० वालुय० जाव अहेसत्तमाए होज्जा ६ अहवा रयणप्पभाए य सक्कर० जाव अहेसत्तमाए य होज्जा ७ ॥



एयस्स णं भंते! रयणप्पभापुढविनेरइयपवेसणगस्स सक्करप्पभापुढवि० जाव अहेसत्तमापुढविनेरइयपवेसणगस्स य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा?, गंगेया! सव्वत्थोवे अहेसत्तमापुढविनेरइयपवेसणए तमापुढविनेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे एवं पडिलोमगं जाव रयणप्पभापुढविनेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे (सूत्रं ३७३) ॥

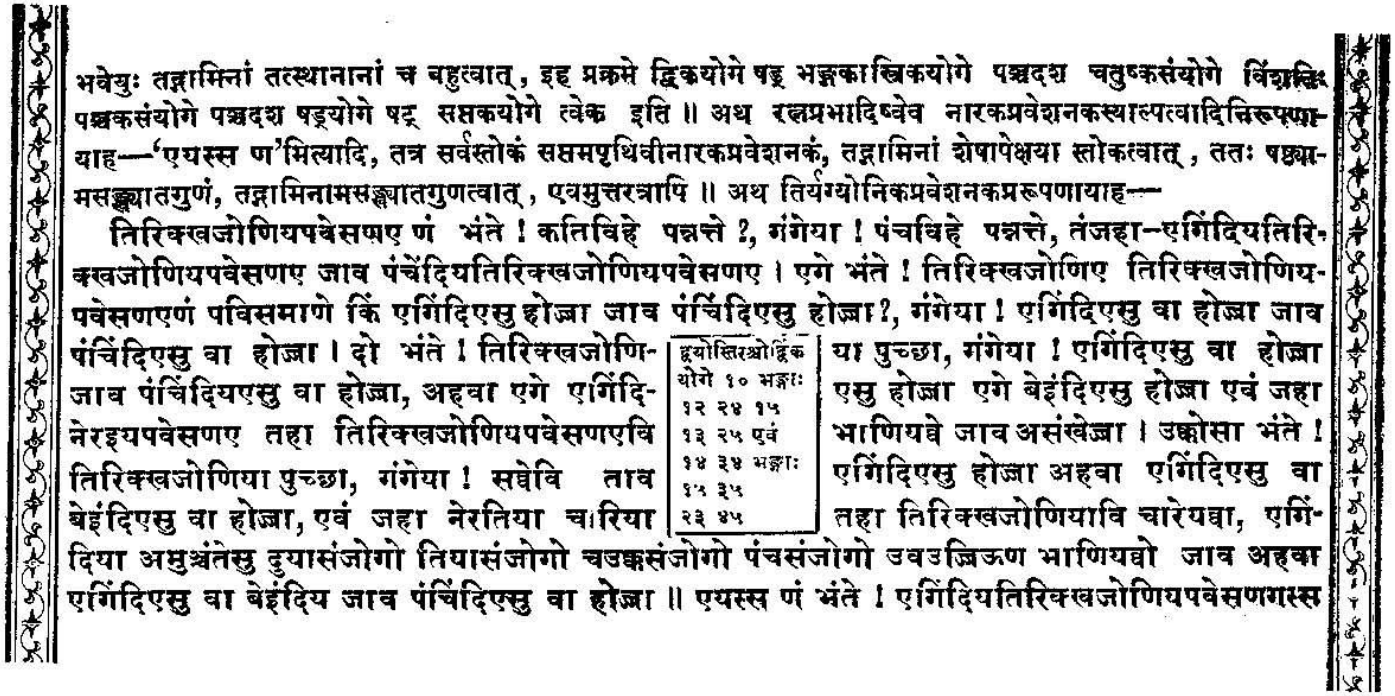
'उक्कोसेण'मित्यादि, उत्कर्षा–उत्कृष्टपदिनो येनोत्कर्षत उत्पद्यन्ते 'ते सव्वेवि'त्ति ये उत्कृष्टपदिनस्ते सर्वेऽपि रत्नप्रभायां

९ शतके उद्देशः ३२ एकादिजीवप्रवेशादि. सू ३७३

॥४५०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:



भवेयुः तन्नामिनां तत्स्थानानां च बहुत्वात्, इह प्रक्रमे द्विकयोगे षड् भङ्गकास्त्रिकयोगे पञ्चदश चतुष्कसंयोगे विंशतिः पञ्चकसंयोगे पञ्चदश षड्योगे षट् सप्तकयोगे त्वेक इति ॥ अथ रत्नप्रभादिष्वेव नारकप्रवेशनकस्याल्पत्वादिनिरूपणायाह—'एयस्स ण'मित्यादि, तत्र सर्वस्तोकं सप्तमपृथिवीनारकप्रवेशनकं, तन्नामिनां शेषापेक्षया स्तोकत्वात्, ततः षष्ठ्यामसङ्ख्यातगुणं, तन्नामिनामसङ्ख्यातगुणत्वात्, एवमुत्तरत्रापि ॥ अथ तिर्यग्योनिकप्रवेशनकप्ररूपणायाह—

तिरिक्खजोणियपवेसणए णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गंगेया ! पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा–एगिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए जाव पंचेंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए । एगे भंते ! तिरिक्खजोणिए तिरिक्खजोणियपवेसणएणं पविसमाणे किं एगिंदिएसु होज्जा जाव पंचिंदिएसु होज्जा ?, गंगेया ! एगिंदिएसु वा होज्जा जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा । दो भंते ! तिरिक्खजोणिया पुच्छा, गंगेया ! एगिंदिएसु वा होज्जा एसु होज्जा एगे बेइंदिएसु होज्जा एवं जहा जाव पंचिंदियएसु वा होज्जा, अहवा एगे एगिंदिएसु होज्जा अहवा एगिंदिएसु वा नेरइयपवेसणए तहा तिरिक्खजोणियपवेसणएवि भाणियव्वे जाव असंखेज्जा । उक्कोसा भंते ! तिरिक्खजोणिया पुच्छा, गंगेया ! सव्वेवि ताव एगिंदिएसु होज्जा अहवा एगिंदिएसु वा बेइंदिएसु वा होज्जा, एवं जहा नेरतिया चारिया तहा तिरिक्खजोणियावि चारेयव्वा, एगिंदिया असुअंतेसु दुयासंजोगो तियासंजोगो चउक्कसंजोगो पंचसंजोगो उवउज्जिऊण भाणियव्वो जाव अहवा एगिंदिएसु वा बेइंदिय जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा ॥ एयस्स णं भंते ! एगिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणगस्स

द्वयोस्त्रिश्चोद्विक योगे १० भङ्गाः १२ २४ १५ १३ २५ एवं १४ ३४ भङ्गाः १५ ३५ २३ ४५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्नाः

प्रत सूत्रांक [३७४]

दीप अनुक्रम [४५४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥४५१॥

जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणयस्स कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गंगेया ! सव्वत्थोवा पंचिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए चउरिंदियतिरिक्खजोणिय विसेसाहिए तेइंदिय० विसेसाहिए बेइंदिय० विसेसाहिए एगिंदियतिरिक्ख० विसेसाहिए (सूत्रं ३७४) ॥

'तिरिक्खे'त्यादि, इहैकस्तिर्यग्योनिक एकेन्द्रियेषु भवेदित्युक्तं, तत्र च यद्यप्येकेन्द्रियेष्वेकः कदाचिदप्युत्पद्यमानो न लभ्यतेऽनन्तानामेव तत्र प्रतिसमयमुत्पत्तेस्तथाऽपि देवादिभ्य उद्धृत्य यस्तत्रोत्पद्यते तदपेक्षयैकोऽपि लभ्यते, एतदेव च प्रवेशनकमुच्यते यद्विजातीयेभ्य आगत्य विजातीयेषु प्रविशति सजातीयस्तु सजातीयेषु प्रविष्ट एवेति किं तत्र प्रवेशनकमिति, तत्र चैकस्य क्रमेणैकेन्द्रियादिषु पञ्चसु पदेषूत्पादे पञ्च विकल्पाः, द्वयोरप्येकैकस्मिन्नुत्पादे पञ्चैव, द्विकयोगे तु दश, एतदेव सूचयता 'अहवा एगे एगिंदिएसु' इत्याद्युक्तम् । अथ सङ्क्षेपार्थं त्र्यादीनामसङ्ख्यातपर्यन्तानां तिर्यग्योनिकानां प्रवेशनकमतिदेशेन दर्शयन्नाह–'एवं जहे'त्यादि, नारकप्रवेशनकसमानमिदं सर्वं, परं तत्र सप्तसु पृथिवीष्वेकादयो नारका उत्पादिताः तिर्यञ्चस्तु तथैव पञ्चसु स्थानेषूत्पादनीयाः, ततो विकल्पनानात्वं भवति, तच्चाभियुक्तेन पूर्वोक्तन्यायेन स्वयमवगन्तव्यमिति, इह चानन्तानामेकेन्द्रियाणामुत्पादेऽप्यनन्तपदं नास्ति प्रवेशनकस्योक्तलक्षणस्यासङ्ख्यातानामेव लाभादिति, 'सव्वेवि ताव एगिंदिएसु होज्ज'त्ति एकेन्द्रियाणामतिबहूनामनुसमयमुत्पादात्, 'दुयासंजोगो' इत्यादि, इह प्रक्रमे द्विकसंयोगश्चतुर्द्धा त्रिकसंयोगः षोढा चतुष्कसंयोगश्चतुर्द्धा पञ्चकसंयोगस्त्वेक एवेति ॥ 'सव्व-

९ शतके उद्देशः ३२ तिर्यक्प्रवेशनकं सू ३७४

॥४५१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७५--३७७]

दीप अनुक्रम [४५५--४५७]

थोवा पंचिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए'त्ति पञ्चेन्द्रियजीवानां स्तोकत्वादिति, ततश्चतुरिन्द्रियादिप्रवेशनकानि परस्परेण विशेषाधिकानीति ॥

मणुस्सपवेसणए णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गंगेया ! दुविहे पन्नत्ते, तंजहा–संमुच्छिममणुस्सपवेसणए गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणए य । एगे भंते ! मणुस्से मणुस्सपवेसणएणं पविसमाणे किं संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा ?, गंगेया ! संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा । दो भंते ! मणुस्सा० पुच्छा, गंगेया ! संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा अहवा एगे संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा एगे गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा, एवं एएणं कमेणं जहा नेरइयपवेसणए तहा मणुस्सपवेसणएवि भाणियव्वे जाव दस ॥ संखेज्जा भंते ! मणुस्सा पुच्छा, गंगेया ! संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा अहवा एगे संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा अहवा दो संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा एवं एक्केक्कं उस्सारितेसु जाव अहवा संखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा ॥ असंखेज्जा भंते ! मणुस्सा पुच्छा, गंगेया ! सव्वेवि ताव संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा अहवा असंखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु एगे गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा अहवा असंखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु दो गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा एवं जाव असंखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा ॥

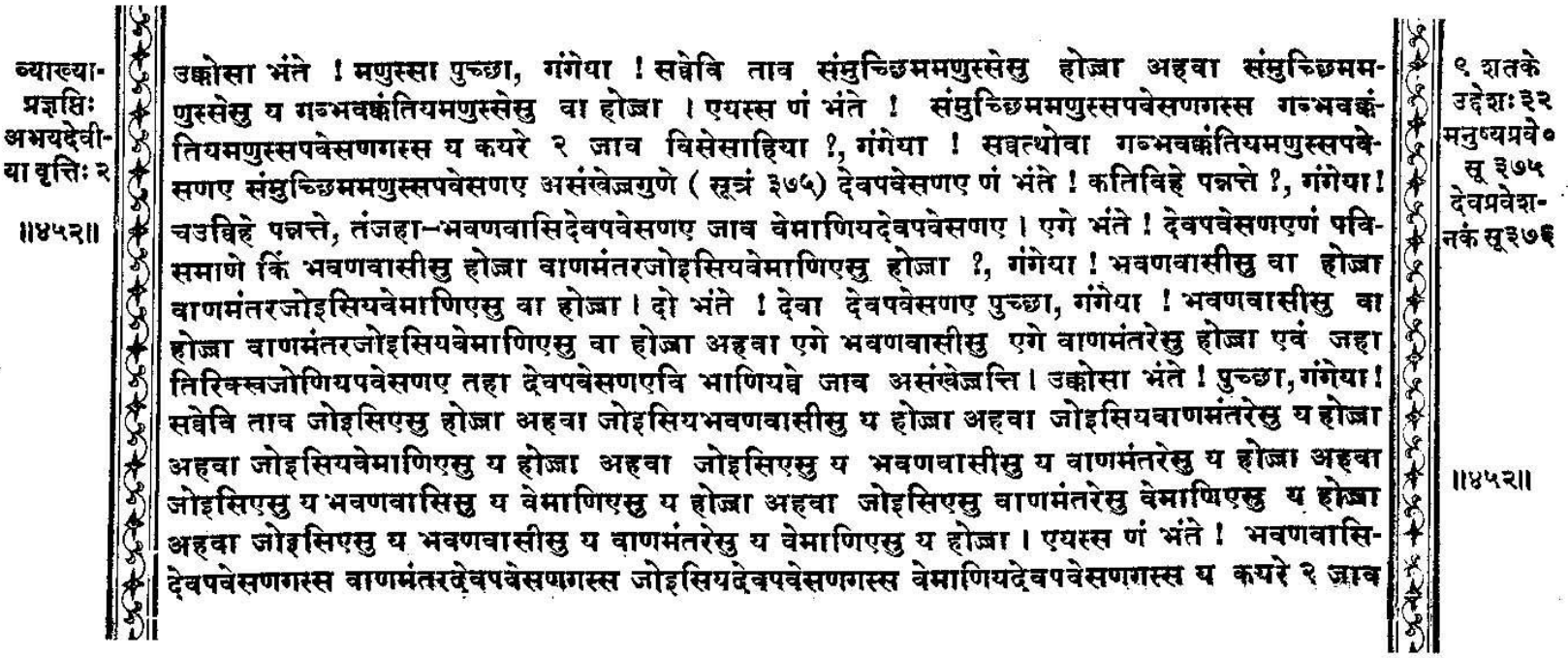
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्नाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७५--३७७]

दीप अनुक्रम [४५५--४५७]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४५२॥

उक्कोसा भंते ! मणुस्सा पुच्छा, गंगेया ! सव्वेवि ताव संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा अहवा संमुच्छिममणुस्सेसु य गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा । एयस्स णं भंते ! संमुच्छिममणुस्सपवेसणगस्स गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणगस्स य कयरे २ जाव विसेसाहिया ?, गंगेया ! सव्वत्थोवा गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणए संमुच्छिममणुस्सपवेसणए असंखेज्जगुणे (सूत्रं ३७५) देवपवेसणए णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गंगेया ! चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा–भवणवासिदेवपवेसणए जाव वेमाणियदेवपवेसणए । एगे भंते ! देवपवेसणएणं पविसमाणे किं भवणवासीसु होज्जा वाणमंतरजोइसियवेमाणिएसु होज्जा ?, गंगेया ! भवणवासीसु वा होज्जा वाणमंतरजोइसियवेमाणिएसु वा होज्जा । दो भंते ! देवा देवपवेसणए पुच्छा, गंगेया ! भवणवासीसु वा होज्जा वाणमंतरजोइसियवेमाणिएसु वा होज्जा अहवा एगे भवणवासीसु एगे वाणमंतरेसु होज्जा एवं जहा तिरिक्खजोणियपवेसणए तहा देवपवेसणएवि भाणियव्वे जाव असंखेज्जत्ति । उक्कोसा भंते ! पुच्छा, गंगेया ! सव्वेवि ताव जोइसिएसु होज्जा अहवा जोइसियभवणवासीसु य होज्जा अहवा जोइसियवाणमंतरेसु य होज्जा अहवा जोइसियवेमाणिएसु य होज्जा अहवा जोइसिएसु य भवणवासीसु य वाणमंतरेसु य होज्जा अहवा जोइसिएसु य भवणवासिसु य वेमाणिएसु य होज्जा अहवा जोइसिएसु वाणमंतरेसु वेमाणिएसु य होज्जा अहवा जोइसिएसु य भवणवासीसु य वाणमंतरेसु य वेमाणिएसु य होज्जा । एयस्स णं भंते ! भवणवासिदेवपवेसणगस्स वाणमंतरदेवपवेसणगस्स जोइसियदेवपवेसणगस्स वेमाणियदेवपवेसणगस्स य कयरे २ जाव

९ शतके उद्देशः ३२ मनुष्यप्रवे० सू ३७५ देवप्रवेश-नकं सू३७६

॥४५२॥

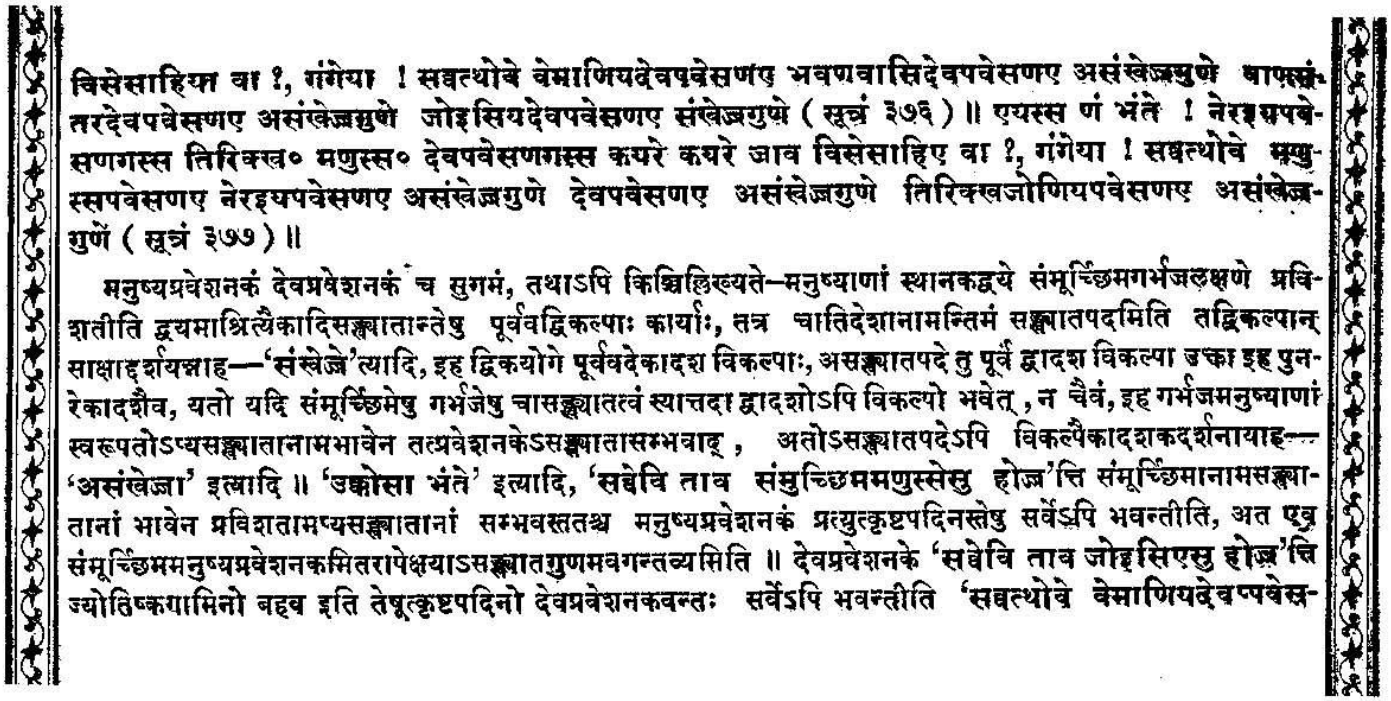
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७५--३७७]

दीप अनुक्रम [४५५--४५७]



विसेसाहिया वा ?, गंगेया ! सव्वत्थोवे वेमाणियदेवपवेसणए भवणवासिदेवपवेसणए असंखेज्जगुणे वाणमंतरदेवपवेसणए असंखेज्जगुणे जोइसियदेवपवेसणए संखेज्जगुणे (सूत्रं ३७६) ॥ एयस्स णं भंते ! नेरइयपवेसणगस्स तिरिक्ख० मणुस्स० देवपवेसणगस्स कयरे कयरे जाव विसेसाहिए वा ?, गंगेया ! सव्वत्थोवे मणुस्सपवेसणए नेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे देवपवेसणए असंखेज्जगुणे तिरिक्खजोणियपवेसणए असंखेज्जगुणे (सूत्रं ३७७) ॥

मनुष्यप्रवेशनकं देवप्रवेशनकं च सुगमं, तथाऽपि किञ्चिल्लिख्यते—मनुष्याणां स्थानकद्वये संमूर्च्छिमगर्भजलक्षणे प्रविशतीति द्वयमाश्रित्यैकादिसङ्ख्यातान्तेषु पूर्ववद्विकल्पाः कार्याः, तत्र चातिदेशानामन्तिमं सङ्ख्यातपदमिति तद्विकल्पान् साक्षादर्शयन्नाह—'संखेज्जे'त्यादि, इह द्विकयोगे पूर्ववदेकादश विकल्पाः, असङ्ख्यातपदे तु पूर्वं द्वादश विकल्पा उक्ता इह पुनरेकादशैव, यतो यदि संमूर्च्छिमेषु गर्भजेषु चासङ्ख्यातत्वं स्यात्तदा द्वादशोऽपि विकल्पो भवेत्, न चैवं, इह गर्भजमनुष्याणां स्वरूपतोऽप्यसङ्ख्यातानामभावेन तत्प्रवेशनकेऽसङ्ख्यातासम्भवाद्, अतोऽसङ्ख्यातपदेऽपि विकल्पैकादशकदर्शनायाह—'असंखेज्जा' इत्यादि ॥ 'उक्कोसा भंते' इत्यादि, 'सव्वेवि ताव संमुच्छिममणुस्सेसु होज्ज'त्ति संमूर्च्छिमानामसङ्ख्यातानां भावेन प्रविशतामप्यसङ्ख्यातानां सम्भवस्तत्श्च मनुष्यप्रवेशनकं प्रत्युत्कृष्टपदिनस्तेषु सर्वेऽपि भवन्तीति, अत एव संमूर्च्छिममनुष्यप्रवेशनकमितरापेक्षयाऽसङ्ख्यातगुणमवगन्तव्यमिति ॥ देवप्रवेशनके 'सव्वेवि ताव जोइसिएसु होज्ज'त्ति ज्योतिष्कगामिनो बहव इति तेषूत्कृष्टपदिनो देवप्रवेशनकवन्तः सर्वेऽपि भवन्तीति 'सव्वत्थोवे वेमाणियदेवप्पवेस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७५--३७७]

दीप अनुक्रम [४५५--४५७]

व्याख्याप्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥४५२॥

णए'त्ति तद्गामिनां तत्स्थानानां चाल्पत्वादिति ॥ अथ नारकादिप्रवेशनकस्यैवाल्पत्वादि निरूपयन्नाह—'एयस्स ण'मित्यादि, तत्र सर्वस्तोकं मनुष्यप्रवेशनकं, मनुष्यक्षेत्र एव तस्य भावात्, तस्य च स्तोकत्वात्, नैरयिकप्रवेशनकं त्वसङ्ख्यातगुणं, तद्गामिनामसङ्ख्यातगुणत्वात्, एवमुत्तरत्रापीति ॥ अनन्तरं प्रवेशनकमुक्तं तत्पुनरुत्पादोद्वर्त्तनारूपमिति नारकादीनामुत्पादमुद्वर्त्तनां च सान्तरनिरन्तरतया निरूपयन्नाह—

संतरं भंते ! नेरइया उववज्जंति निरंतरं नेरइया उववज्जंति संतरं असुरकुमारा उववज्जंति निरंतरं असुरकुमारा जाव संतरं वेमाणिया उववज्जंति निरंतरं वेमाणिया उववज्जंति संतरं नेरइया उववट्टंति निरंतरं नेरतिया उववट्टंति जाव संतरं वाणमंतरा उववट्टंति निरंतरं वाणमंतरा उववट्टंति संतरं जोइसिया चयंति निरंतरं जोइसिया चयंति संतरं वेमाणिया चयंति निरंतरं वेमाणिया चयंति ?, गंगेया ! संतरंपि नेरतिया उववज्जंति निरंतरं नेरतिया उववज्जंति जाव संतरंपि थणियकुमारा उववज्जंति निरंतरं थणियकुमारा उववज्जंति नो संतरंपि पुढविक्काइया उववज्जंति निरंतरं पुढविक्काइया उववज्जंति एवं जाव वणस्सइकाइया सेसा जहा नेरइया जाव संतरंपि वेमाणिया उववज्जंति निरंतरंपि वेमाणिया उववज्जंति, संतरंपि नेरइया उववट्टंति निरंतरंपि नेरइया उववट्टंति एवं जाव थणियकुमारा नो संतरं पुढविक्काइया उववट्टंति निरंतरं पुढविक्काइया उववट्टंति एवं जाव वणस्सइकाइया सेसा जहा नेरइया, नवरं जोइसियवेमाणिया चयंति अभिलावो, जाव संतरंपि वेमाणिया चयंति निरंतरं वेमाणिया चयंति ॥ संतो भंते ! नेरतिया उव-

९ शतके उद्देशः ३२ प्रवेशनाल्पबहुत्वं सू ३७८ सान्तरादुत्पादादि सू ३७८

॥४५२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

प्रत सूत्रांक [३७८--३७९]

दीप अनुक्रम [४५८--४५९]

वज्जंति असंतो भंते ! नेरइया उववज्जंति ?, गंगेया ! संतो नेरइया उववज्जंति नो असंतो नेरइया उववज्जंति, एवं जाव वेमाणिया, संतो भंते ! नेरतिया उववट्टंति असंतो नेरइया उववट्टंति ?, गंगेया ! संतो नेरइया उववट्टंति नो असंतो नेरइया उववट्टंति, एवं जाव वेमाणिया, नवरं जोइसियवेमाणिएसु चयंति भाणियव्वं । सओ भंते ! नेरइया उववट्टंति असंतो भंते ! नेरइया उववट्टंति संतो असुरकुमारा उववट्टंति जाव संतो वेमाणिया उववज्जंति असतो वेमाणिया उववज्जंति सतो नेरतिया उववट्टंति असतो नेरइया उववट्टंति संतो असुरकुमारा उववट्टंति जाव संतो वेमाणिया चयंति असतो वेमाणिया चयंति ?, गंगेया ! सतो नेरइया उववज्जंति नो असओ नेरइया उववट्टंति सओ असुरकुमारा उववज्जंति नो असतो असुरकुमारा उववज्जंति जाव सओ वेमाणिया उववज्जंति नो असतो वेमाणिया उववज्जंति सतो नेरतिया उववट्टंति नो असतो नेरइया उववज्जंति जाव सतो वेमाणिया चयंति नो असतो वेमाणिया०, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सतो नेरइया उववज्जंति नो असतो नेरइया उववज्जंति जाव सओ वेमाणिया चयंति नो असओ वेमाणिया चयंति ?, से नूणं भंते ! गंगेया ! पासेणं अरहया पुरिसादाणीएणं सासए लोए बुइए अणादीए अणवयग्गे जहा पंचमसए जाव जे लोकइ से लोए, से तेणट्ठेणं गंगेया ! एवं वुच्चइ जाव सतो वेमाणिया चयंति नो असतो वेमाणिया चयंति ॥ सयं भंते ! एवं जाणह उदाहु असयं असोच्चा एते एवं जाणह उदाहु सोच्चा सतो नेरइया उववज्जंति नो असतो नेरइया उववज्जंति जाव सओ वेमाणिया चयंति नो असओ वेमाणिया चयंति ?, गंगेया ! सयं

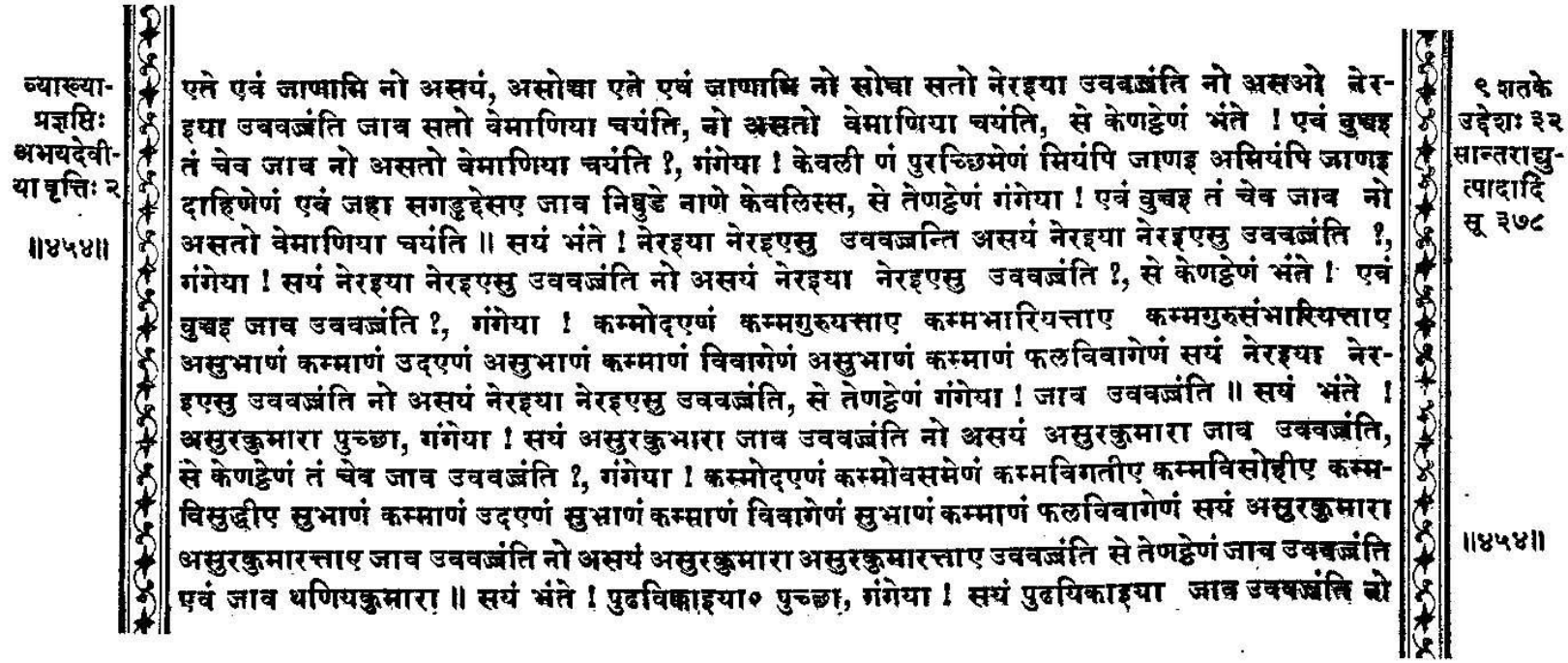
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७८--३७९]

दीप अनुक्रम [४५८--४५९]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४५४॥

एते एवं जाणामि नो असयं, असोच्चा एते एवं जाणामि नो सोच्चा सतो नेरइया उववज्जंति नो असओ नेरइया उववज्जंति जाव सतो वेमाणिया चयंति, नो असतो वेमाणिया चयंति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ तं चेव जाव नो असतो वेमाणिया चयंति ?, गंगेया ! केवली णं पुरच्छिमेणं सियंपि जाणइ असियंपि जाणइ दाहिणेणं एवं जहा सगट्ठदेसए जाव निवुडे नाणे केवलिस्स, से तेणट्ठेणं गंगेया ! एवं वुच्चइ तं चेव जाव नो असतो वेमाणिया चयंति ॥ सयं भंते ! नेरइया नेरइएसु उववज्जन्ति असयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति ?, गंगेया ! सयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति नो असयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति ?, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव उववज्जंति ?, गंगेया ! कम्मोदएणं कम्मगुरुयत्ताए कम्मभारियत्ताए कम्मगुरुसंभारियत्ताए असुभाणं कम्माणं उदएणं असुभाणं कम्माणं विवागेणं असुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति नो असयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति, से तेणट्ठेणं गंगेया ! जाव उववज्जंति ॥ सयं भंते ! असुरकुमारा पुच्छा, गंगेया ! सयं असुरकुमारा जाव उववज्जंति नो असयं असुरकुमारा जाव उववज्जंति, से केणट्ठेणं तं चेव जाव उववज्जंति ?, गंगेया ! कम्मोदएणं कम्मोवसमेणं कम्मविगतीए कम्मविसोहीए कम्मविसुद्धीए सुभाणं कम्माणं उदएणं सुभाणं कम्माणं विवागेणं सुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं असुरकुमारा असुरकुमारत्ताए जाव उववज्जंति नो असयं असुरकुमारा असुरकुमारत्ताए उववज्जंति से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति एवं जाव थणियकुमारा ॥ सयं भंते ! पुढविकाइया० पुच्छा, गंगेया ! सयं पुढविकाइया जाव उववज्जंति नो

९ शतके उद्देशः ३२ सान्तरादयुत्पादादि सू ३७८

॥४५४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७८--३७९]

दीप अनुक्रम [४५८--४५९]

असयं पुच्छा जाव उववज्जंति, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जाव उववज्जंति?, गंगेया! कम्मोदएणं कम्मगुरुयत्ताए कम्मभारियत्ताए कम्मगुरुसंभारियत्ताए सुभासुभाणं कम्माणं उदएणं सुभासुभाणं कम्माणं विवागेणं सुभासुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं पुढविकाइया जाव उववज्जंति नो असयं पुढविकाइया जाव उववज्जंति, से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति, एवं जाव मणुस्सा, वाणमंतरजोइसिया वेमाणिया जहा असुरकुमारा, से तेणट्ठेणं गंगेया! एवं वुच्चइ सयं वेमाणिया जाव उववज्जंति नो असयं जाव उववज्जंति (सूत्रं ३७८) तप्पभिइं च णं से गंगेये अणगारे समणं भगवं महावीरं पंचभिजाणइ सव्वन्नु सव्वदरिसी, तए णं से गंगेये अणगारे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करेत्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते! तुज्झं अंतियं चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं एवं जहा कालासवेसियपुत्तो तहेव भाणियव्वं जाव सव्वदुक्खप्पहीणे॥ सेवं भंते! सेवं भंते! (सूत्रं ३७९) गंगेयो समत्तो॥ ९। ३२॥

'संतरं भंते!' इत्यादि, अथ नारकादीनामुत्पादादेः सान्तरादित्वं प्रवेशनकात्पूर्वं निरूपितमेवेति किं पुनस्तन्निरूप्यते? इति, अत्रोच्यते, पूर्वं नारकादीनां प्रत्येकमुत्पादस्य सान्तरत्वादि निरूपितं, ततश्च तथैवोद्वर्त्तनायाः, इह तु पुनर्नारकादिसर्वजीवभेदानां समुदायतः समुदितयोरेव चोत्पादोद्वर्त्तनयोस्तन्निरूप्यत इति॥ अथ नारकादीनामेव प्रकारान्तरेणोत्पादोद्वर्त्तने निरूपयन्नाह—'सओ भंते'! इत्यादि, तत्र च 'सओ नेरइया उववज्जंति'त्ति 'सन्तः' विद्यमाना द्रव्यार्थतया, नहि सर्वथैवासत् किञ्चिदुत्पद्यते, असत्त्वादेव खरविषाणवत्, सत्त्वं च तेषां जीवद्रव्यापेक्षया नारकपर्या-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्नाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३७८--३७९]

दीप अनुक्रम [४५८--४५९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४५५॥

यापेक्षया वा, तथाहि–भाविनारकपर्यायापेक्षया द्रव्यतो नारकाः सन्तो नारका उत्पद्यन्ते, नारकायुष्कोदयाद्वा भावनारका एव नारकत्वेनोत्पद्यन्त इति । अथवा 'सओ'त्ति विभक्तिपरिणामात् सत्सु प्रागुत्पन्नेष्वन्ये समुत्पद्यन्ते नासत्सु, लोकस्य शाश्वतत्वेन नारकादीनां सर्वदैव सद्भावादिति । 'से णूणं भंते ! गंगेया'इत्यादि, अनेन च तत्सिद्धान्तेनैव स्वमतं पोषितं, यतः पार्श्वेनार्हता शाश्वतो लोक उक्तोऽतो लोकस्य शाश्वतत्वात्सन्त एव सत्स्वेव वा नारकादय उत्पद्यन्ते च्यवन्ते चेति साध्वेवोच्यत इति ॥ अथ गाङ्गेयो भगवतोऽतिशायिनीं ज्ञानसम्पदं सम्भावयन् विकल्पयन्नाह—'सयं भंते !' इत्यादि, स्वयमात्मना लिङ्गानपेक्षमित्यर्थः 'एवं'ति वक्ष्यमाणप्रकारं वस्तु 'असयं'ति अस्वयं परतो लिङ्गत इत्यर्थः, तथा 'असोच्च'त्ति अश्रुत्वाऽऽगमानपेक्षम् 'एतेवं'ति एतदेवमित्यर्थः 'सोच्च'त्ति पुरुषान्तरवचनं श्रुत्वाऽऽगमत इत्यर्थः 'सयं एतेवं जाणामि'त्ति स्वयमेतदेवं जानामि, पारमार्थिकप्रत्यक्षसाक्षात्कृतसमस्तवस्तुस्तोमस्वभावत्वान्मम 'सयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति'त्ति स्वयमेव नारका उत्पद्यन्ते नास्वयं–नेश्वरपारतन्त्र्यादेः, यथा कैश्चिदुच्यते—"अज्ञो जन्तुरनीशोऽयमात्मनः सुखदुःखयोः । ईश्वरप्रेरितो गच्छेत्स्वर्गं वा श्वभ्रमेव वा ॥ १ ॥" इति, ईश्वरस्य हि कालादिकारणकलापव्यतिरिक्तस्य युक्तिभिर्विचार्यमाणस्याघटनादिति, 'कम्मोदएणं'ति कर्म्मणामुदितत्वेन, न च कर्म्मोदयमात्रेण नारकेषूत्पद्यन्ते, केवलिनामपि तस्य भावाद् , अत आह–'कम्मगुरुयत्ताए'त्ति कर्म्मणां गुरुकता कर्म्मगुरुकता तया 'कम्मभारियत्ताए'त्ति भारोऽस्ति येषां तानि भारिकाणि तद्भावो भारिकता कर्म्मणां भारिकता कर्म्मभारिकता तया चेत्यर्थः, तथा महदपि किञ्चिदल्पभारं दृष्टं तथाविधभारमपि च किञ्चिदमहदित्यत आह–'कम्मगुरुसंभारियत्ताए'त्ति गुरोः

९ शतके उद्देशः ३२ सान्तराद्युत्पादः सू ३७८ गाङ्गेयस्य संक्रमः सू ३७९

॥४५५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पार्श्वापत्य गांगेय-अनगारस्य प्रश्ना:

प्रत सूत्रांक [३७८--३७९]

दीप अनुक्रम [४५८--४५९]

सम्भारिकस्य च भावो गुरुसम्भारिकता, गुरुता सम्भारिकता चेत्यर्थः, कर्म्मणां गुरुसम्भारिकता कर्म्मगुरुसम्भारिकता तया, अतिप्रकर्षावस्थयेत्यर्थः, एतच्च त्रयं शुभकर्म्मापेक्षयाऽपि स्यादत आह–'असुभाण'मित्यादि, उदयः प्रदेशतोऽपि स्यादत आह–'विवागेणं'ति विपाको यथाबद्धरसानुभूतिः, स च मन्दोऽपि स्यादत आह–'फलविवागेणं'ति फलस्येवालाबुकादेर्विपाको–विपच्यमानता रसप्रकर्षावस्था फलविपाकस्तेन ॥ असुरकुमारसूत्रे 'कम्मोदएणं'ति असुरकुमारोचितकर्म्मणामुदयेन, वाचनान्तरेषु 'कम्मोवसमेणं'ति दृश्यते, तत्र चाशुभकर्म्मणामुपशमेन सामान्यतः 'कम्मविगईए'त्ति कर्म्मणामशुभानां विगत्या–विगमेन स्थितिमाश्रित्य 'कम्मविसोहीए'त्ति रसमाश्रित्य 'कम्मविसुद्धीए'त्ति प्रदेशापेक्षया, एकार्था वैते शब्दा इति ॥ पृथ्वीकायिकसूत्रे 'सुभासुभाणं'ति शुभानां शुभवर्णगन्धादीनाम् अशुभानां तेषामेकेन्द्रियजात्यादीनां च । 'तप्पभिइं च'त्ति यस्मिन् समयेऽनन्तरोक्तं वस्तु भगवता प्रतिपादितं ज्ञानस्य तत्तथा, चशब्दः पुनरर्थे समुच्चये वा 'से'त्ति असौ 'पच्चभिजाणइ'त्ति प्रत्यभिजानाति स्म, किं कृत्वा ? इत्याह–'सेवंजं' सर्वदर्शिनं, जातप्रत्ययत्वादिति ॥ नवमशते द्वात्रिंशत्तमोद्देशकः ॥ ९ । ३२ ॥ [ग्रन्थाग्रम् १००००]

गाङ्गेयो भगवदुपासनातः सिद्धः अन्यस्तु कर्मवशाद्विपर्ययमप्यवाप्नोति यथा जमालिरित्येतद्दर्शनाय त्रयस्त्रिंशत्तमोद्देशकः, तस्य चेदं प्रस्तावनासूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं माहणकुंडग्गामे नयरे होत्था वन्नओ, बहुसालए चेतिए वन्नओ, तत्थ णं माह-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

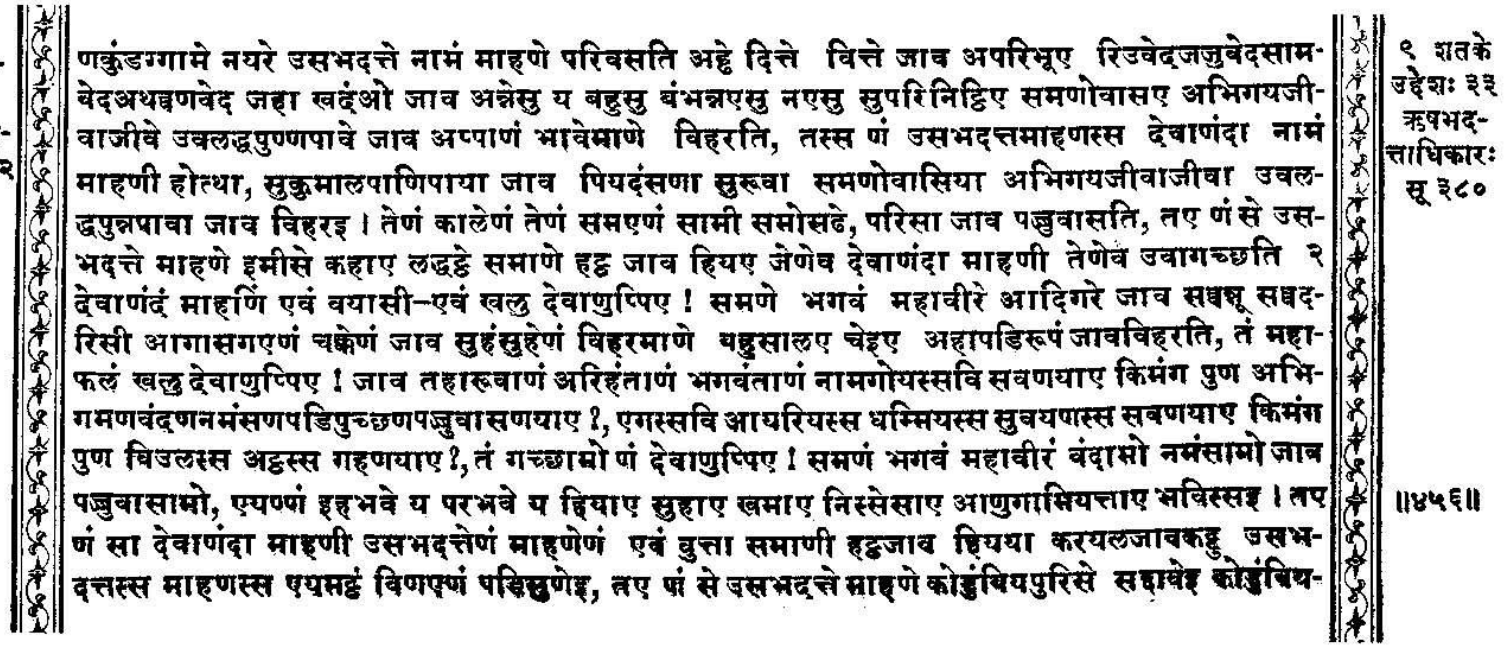
अत्र नवमे शतके द्वात्रिंशत-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ नवमे शतके त्रयस्त्रिंशत-उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८०--३८२]

दीप अनुक्रम [४६०--४६२]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४५६॥

णकुंडग्गामे नयरे उसभदत्ते नामं माहणे परिवसति अड्ढे दित्ते वित्ते जाव अपरिभूए रिउवेदजजुवेदसाम-वेदअथव्वणवेद जहा खदंओ जाव अन्नेसु य बहुसु बंभन्नएसु नएसु सुपरिनिट्ठिए समणोवासए अभिगयजी-वाजीवे उवलद्धपुण्णपावे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तस्स णं उसभदत्तमाहणस्स देवाणंदा नामं माहणी होत्था, सुकुमालपाणिपाया जाव पियदंसणा सुरूवा समणोवासिया अभिगयजीवाजीवा उवल-द्धपुन्नपावा जाव विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे, परिसा जाव पज्जुवासति, तए णं से उस-भदत्ते माहणे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठ जाव हियए जेणेव देवाणंदा माहणी तेणेव उवागच्छति २ देवाणंदं माहणिं एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिए ! समणे भगवं महावीरे आदिगरे जाव सव्वन्नू सव्वद-रिसी आगासगएणं चक्केणं जाव सुहंसुहेणं विहरमाणे बहुसालए चेइए अहापडिरूवं जावविहरति, तं महा-फलं खलु देवाणुप्पिए ! जाव तहारूवाणं अरिहंताणं भगवंताणं नामगोयस्सवि सवणयाए किमंग पुण अभि-गमणवंदणनमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए ?, एगस्सवि आयरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए ?, तं गच्छामो णं देवाणुप्पिए ! समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो, एयण्णं इहभवे य परभवे य हियाए सुहाए खमाए निस्सेसाए आणुगामियत्ताए भविस्सइ। तए णं सा देवाणंदा माहणी उसभदत्तेणं माहणेणं एवं वुत्ता समाणी हट्ठजाव हियया करयलजावकट्टु उसभ-दत्तस्स माहणस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ, तए णं से उसभदत्ते माहणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ कोडुंबिय-

९ शतके उद्देशः ३३ ऋषभद-त्ताधिकारः सू ३८०

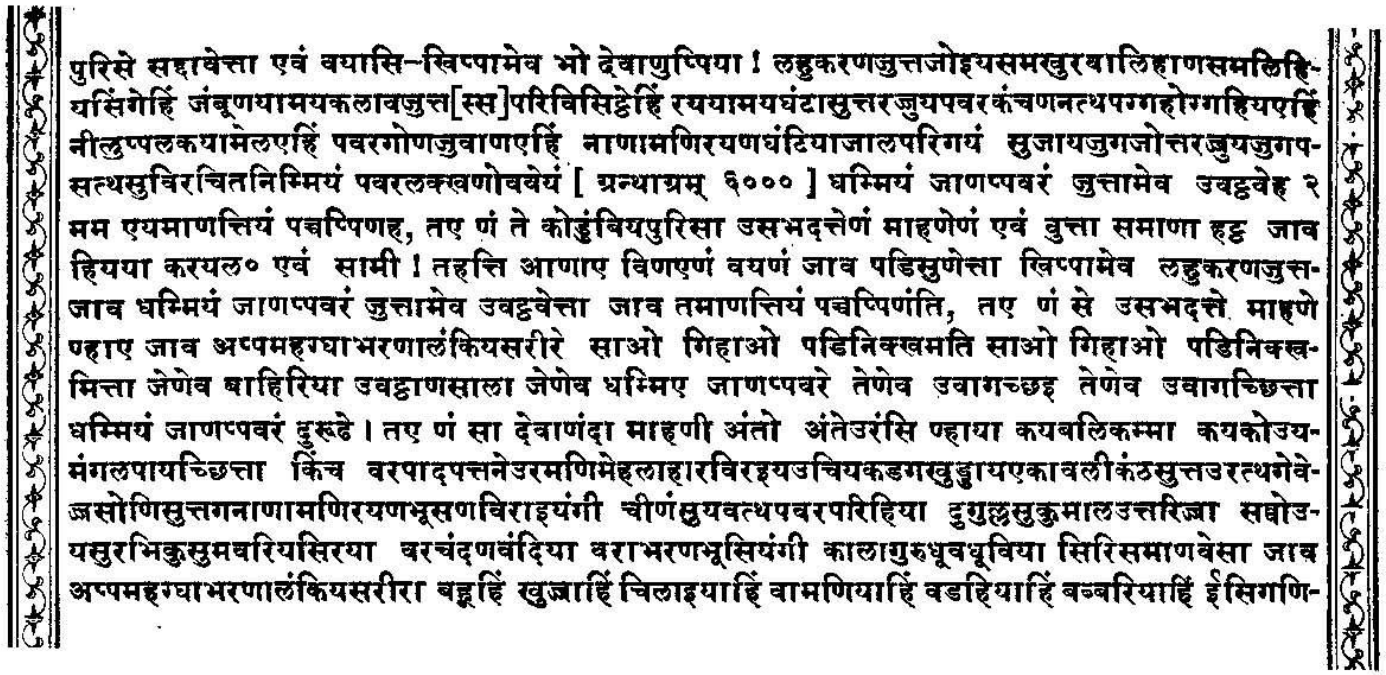
॥४५६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदत्त एवं देवानन्दाया: अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३८०--३८२]

दीप अनुक्रम [४६०--४६२]



पुरिसे सद्दावेत्ता एवं वयासि–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! लहुकरणजुत्तजोइयसमखुरवालिहाणसमलिहि-यसिंगेहिं जंबूणयामयकलावजुत्त[स्स]परिविसिट्ठेहिं रययामयघंटासुत्तरजुयपवरकंचणनत्थपग्गहोग्गहियएहिं नीलुप्पलकयामेलएहिं पवरगोणजुवाणएहिं नाणामणिरयणघंटियाजालपरिगयं सुजायजुगजोत्तरजुयजुगप-सत्थसुविरचितनिम्मियं पवरलक्खणोववेयं [ग्रन्थाग्रम् ६०००] धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेह २ मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा उसभदत्तेणं माहणेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ जाव हियया करयल० एवं सामी ! तहत्ति आणाए विणएणं वयणं जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव लहुकरणजुत्त-जाव धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेत्ता जाव तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से उसभदत्ते माहणे ण्हाए जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे साओ गिहाओ पडिनिक्खमति साओ गिहाओ पडिनिक्ख-मित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढे । तए णं सा देवाणंदा माहणी अंतो अंतेउरंसि ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउय-मंगलपायच्छित्ता किंच वरपादपत्तनेउरमणिमेहलाहारविरइयउचियकडगखुड्डायएकावलीकंठसुत्तउरत्थगेवे-ज्जसोणिसुत्तगनाणामणिरयणभूसणविराइयंगी चीणंसुयवत्थपवरपरिहिया दुगुल्लसुकुमालउत्तरिज्जा सव्वोउ-यसुरभिकुसुमवरियसिरया वरचंदणवंदिया वराभरणभूसियंगी कालागुरुधूवधूविया सिरिसमाणवेसा जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा बहूहिं खुज्जाहिं चिलाइयाहिं वामणियाहिं वडहियाहिं बब्बरियाहिं ईसिगणि-

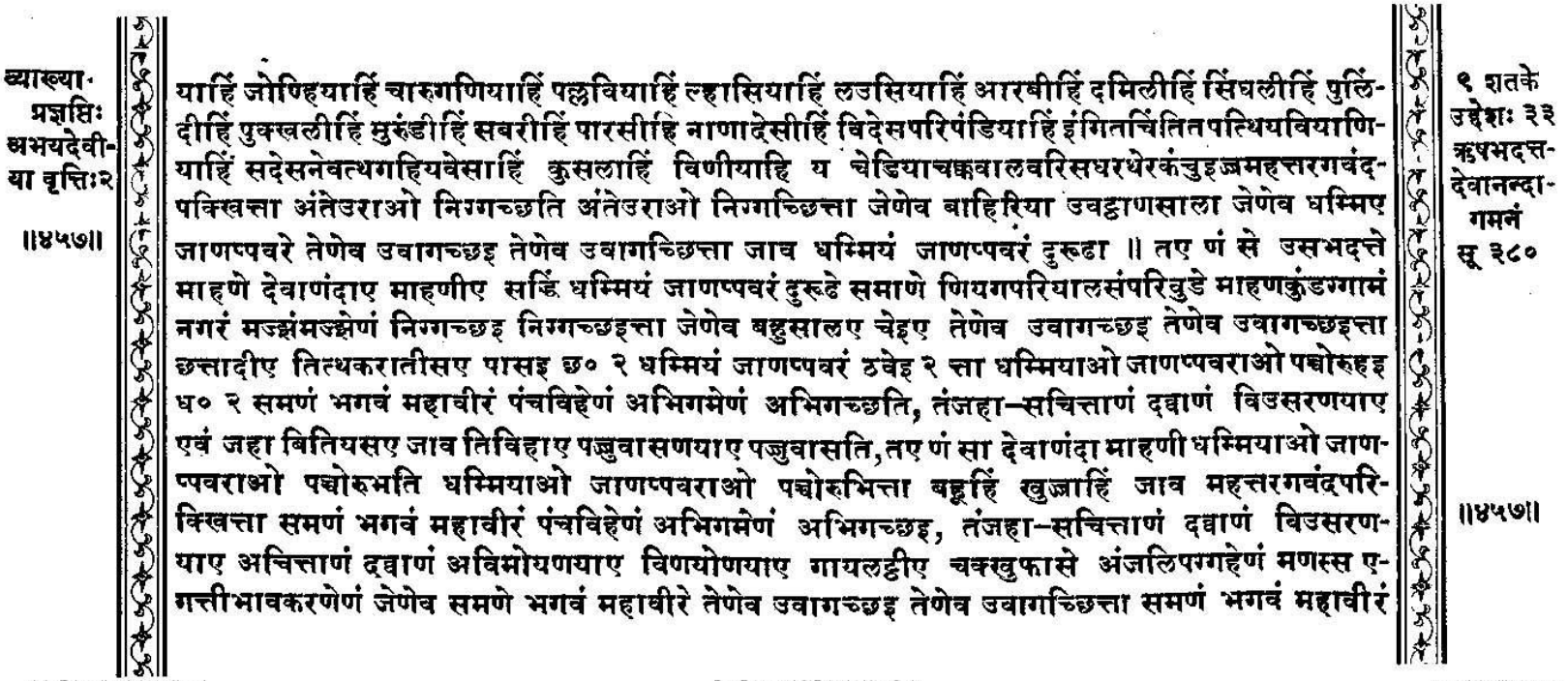
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदत्त एवं देवानन्दाया: अधिकार:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३८०-३८२]

दीप अनुक्रम [४६०-४६२]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥४५७॥

याहिं जोण्हियाहिं चारुगणियाहिं पल्हवियाहिं लहासियाहिं लउसियाहिं आरबीहिं दमिलीहिं सिंघलीहिं पुलिंदीहिं पुक्खलीहिं मुरुंडीहिं सबरीहिं पारसीहिं नाणादेसीहिं विदेसपरिपंडियाहिं इंगितचिंतितपत्थियवियाणियाहिं सदेसनेवत्थगहियवेसाहिं कुसलाहिं विणीयाहि य चेडियाचक्कवालवरिसधरथेरकंचुइज्जमहत्तरगवंदपक्खित्ता अंतेउराओ निग्गच्छति अंतेउराओ निग्गच्छित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता जाव धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढा ॥ तए णं से उसभदत्ते माहणे देवाणंदाए माहणीए सद्धिं धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढे समाणे णियगपरियालसंपरिवुडे माहणकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छइत्ता जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छइत्ता छत्तादीए तित्थकरातीसए पासइ छ० २ धम्मियं जाणप्पवरं ठवेइ २ त्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ ध० २ समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छति, तंजहा–सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए एवं जहा बितियसए जाव तिविहाए पज्जुवासणयाए पज्जुवासति, तए णं सा देवाणंदा माहणी धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुभति धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुभित्ता बहूहिं खुज्जाहिं जाव महत्तरगवंदपरिक्खित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ, तंजहा–सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए अचित्ताणं दव्वाणं अविमोयणयाए विणयोणयाए गायलट्ठीए चक्खुफासे अंजलिपग्गहेणं मणस्स एगत्तीभावकरणेणं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं

९ शतके उद्देशः ३३ ऋषभदत्त-देवानन्दा-गमनं सू ३८०

॥४५७॥

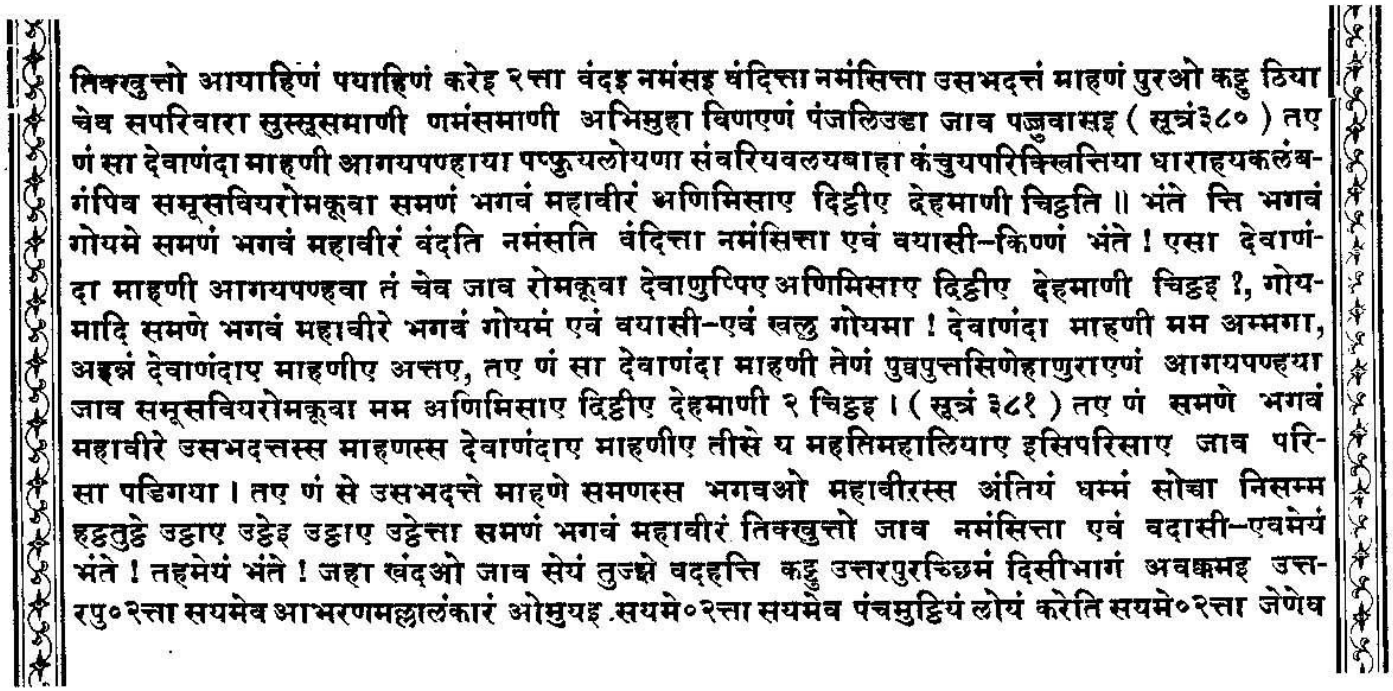
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदत्त एवं देवानन्दाया: अधिकार:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८०--३८२]

दीप अनुक्रम [४६०--४६२]



तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २त्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता उसभदत्तं माहणं पुरओ कट्टु ठिया चेव सपरिवारा सुस्सूसमाणी णमंसमाणी अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा जाव पज्जुवासइ (सूत्रं३८०) तए णं सा देवाणंदा माहणी आगयपण्हाया पप्फुयलोयणा संवरियवलयबाहा कंचुयपरिक्खित्तिया धाराहयकलंबगंपिव समूसवियरोमकूवा समणं भगवं महावीरं अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणी चिट्ठति ॥ भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–किण्णं भंते ! एसा देवाणंदा माहणी आगयपण्हवा तं चेव जाव रोमकूवा देवाणुप्पिए अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणी चिट्ठइ ?, गोयमादि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! देवाणंदा माहणी मम अम्मगा, अहन्नं देवाणंदाए माहणीए अत्तए, तए णं सा देवाणंदा माहणी तेणं पुव्वपुत्तसिणेहाणुरागेणं आगयपण्हया जाव समूसवियरोमकूवा मम अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणी २ चिट्ठइ । (सूत्रं ३८१) तए णं समणे भगवं महावीरे उसभदत्तस्स माहणस्स देवाणंदाए माहणीए तीसे य महतिमहालियाए इसिपरिसाए जाव परिसा पडिगया । तए णं से उसभदत्ते माहणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वदासी–एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! जहा खंदओ जाव सेयं तुज्झे वदहत्ति कट्टु उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमइ उत्तरपु०२त्ता सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ सयमे०२त्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेति सयमे०२त्ता जेणेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदत्त एवं देवानन्दाया: अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३८०-३८२]

दीप अनुक्रम [४६०-४६२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४५८॥

समणेभगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ२समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं जाव नमंसित्ता एवं वयासी–आलित्ते णं भंते ! लोए पलित्ते णं भंते ! लोए आलित्तपलित्ते णं भंते ! लोए जराए मरणेण य, एवं एएणं कमेणं इमं जहा खंदओ तहेव पव्वइओ जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ जाव बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमजाव विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणइ २ मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेति मास० २सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेति सट्ठिं २त्ता जस्सट्ठाए कीरति नग्गभावो जाव तमट्ठं आराहइ जाव तमट्ठं आराहेत्ता तए णं सो जाव सव्वदुक्खप्पहीणे। तए णं सा देवाणंदा माहणी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं जाव नमंसित्ता एवं वयासि–एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! एवं जहा उसभदत्तो तहेव जाव धम्माइक्खियं। तए णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदं माहणिं सयमेव पव्वावेति सय २ सयमेव अज्जचंदणाए अज्जाए सीसिणित्ताए दलयइ ॥ तए णं सा अज्जचंदणा अज्जा देवाणंदं माहणिं सयमेव पव्वावेति सयमेव मुंडावेति सयमेव सेहावेति एवं जहेव उसभदत्तो तहेव अज्जचंदणाए अज्जाए इमं एयारूवं धम्मियं उवदेसं सम्मं संपडिवज्जइ तमाणाए तह गच्छइ जाव संजमेणं संजमति, तए णं सा देवाणंदा अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अंतियं सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ सेसं तं चेव जाव सव्वदुक्खप्पहीणा (सूत्रं ३८२) ॥

९ शतके उद्देशः ३३ देवानन्दायाः प्रव्रज्यः सू ३८१ ऋषभदत्त-देवानन्दयो दीक्षा-मोक्षश्च सू ३८२

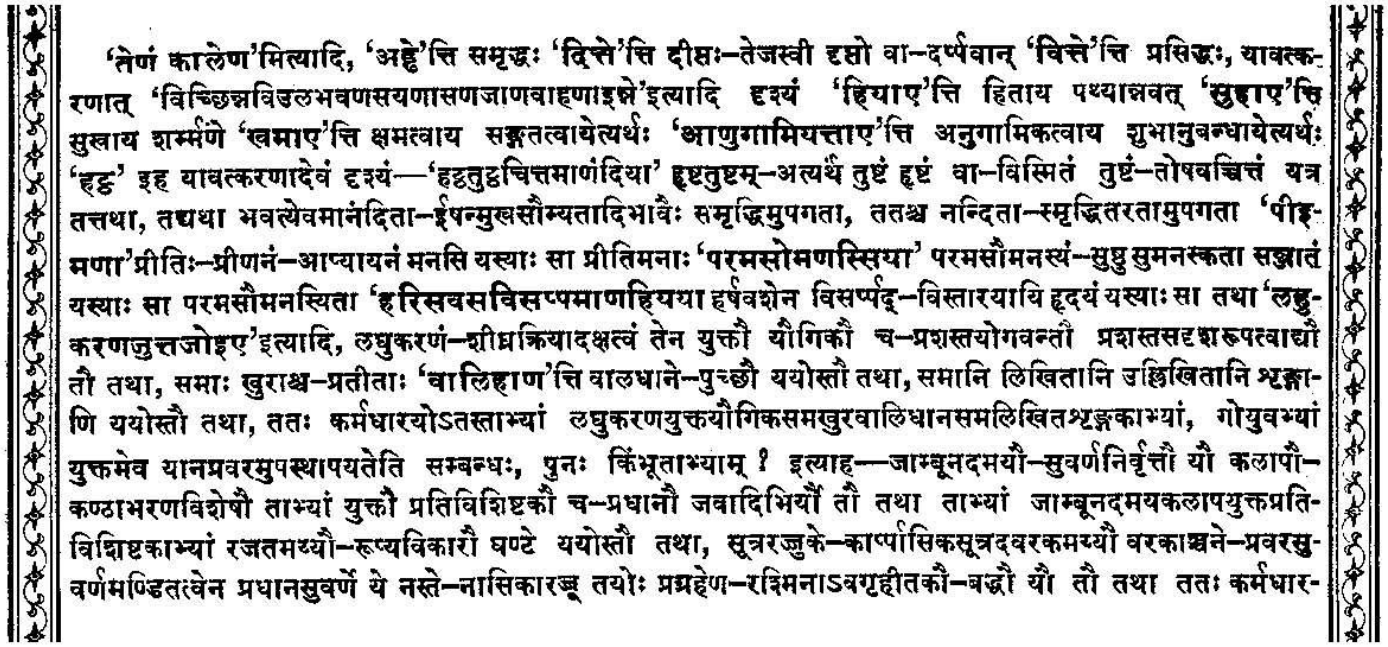
॥४५८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदत्त एवं देवानन्दाया: अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३८०--३८२]

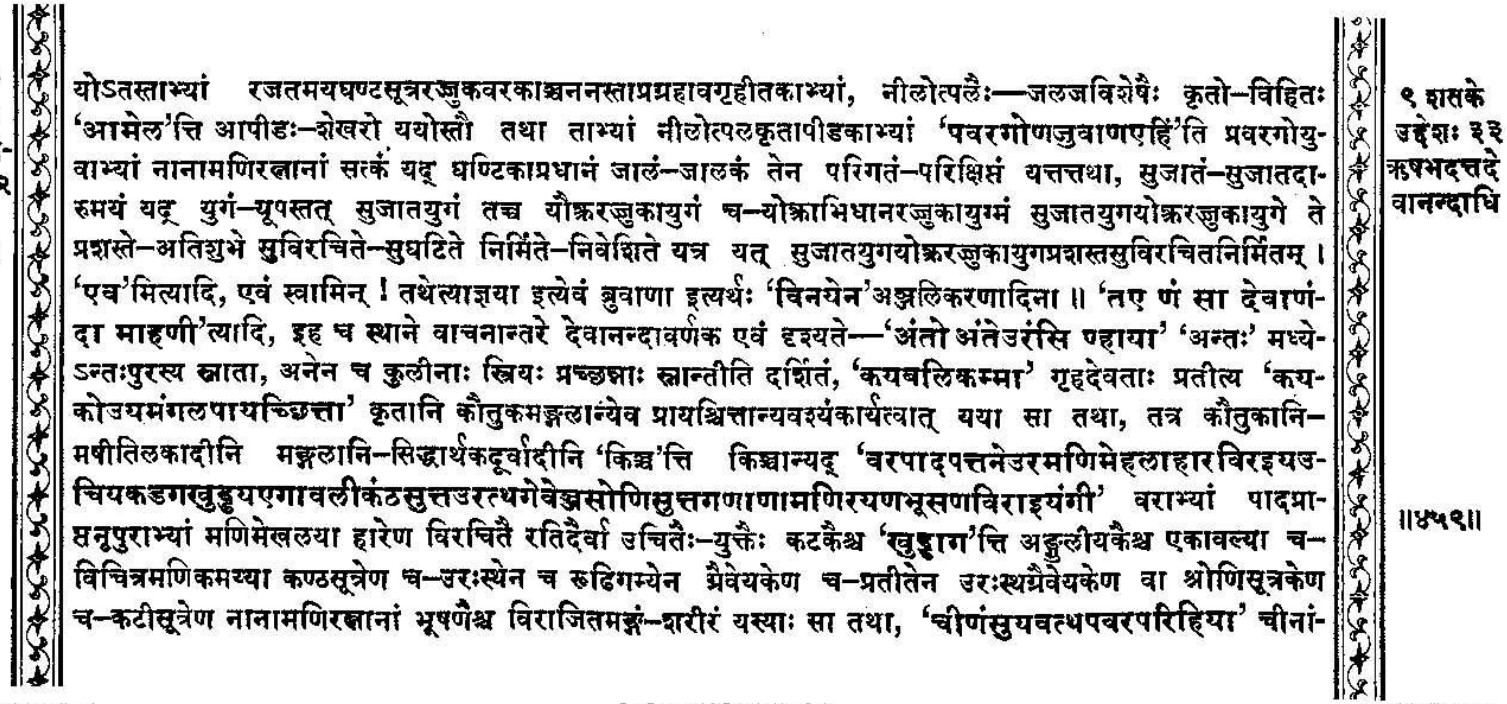
दीप अनुक्रम [४६०--४६२]



'तेणं कालेण'मित्यादि, 'अड्ढे'त्ति समृद्धः 'दित्ते'त्ति दीप्तः–तेजस्वी दृप्तो वा–दर्पवान् 'वित्ते'त्ति प्रसिद्धः, यावत्करणात् 'विच्छिन्नविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइण्णे'इत्यादि दृश्यं 'हियाए'त्ति हिताय पथ्यान्नवत् 'सुहाए'त्ति सुखाय शर्म्मणे 'खमाए'त्ति क्षमत्वाय सङ्गतत्वायेत्यर्थः 'आणुगामियत्ताए'त्ति अनुगामिकत्वाय शुभानुबन्धायेत्यर्थः 'हट्ठ' इह यावत्करणादेवं दृश्यं—'हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिया' हृष्टतुष्टम्–अत्यर्थं तुष्टं हृष्टं वा–विस्मितं तुष्टं–तोषवच्चित्तं यत्र तत्तथा, तद्यथा भवत्येवमानंदिता–ईषन्मुखसौम्यतादिभावैः समृद्धिमुपगता, ततश्च नन्दिता–स्मृद्धितरतामुपगता 'पीइमणा'प्रीतिः–प्रीणनं–आप्यायनं मनसि यस्याः सा प्रीतिमनाः 'परमसोमणस्सिया' परमसौमनस्यं–सुष्ठु सुमनस्कता सञ्जातं यस्याः सा परमसौमनस्थिता 'हरिसवसविसप्पमाणहियया हर्षवशेन विसर्प्पद्–विस्तारयायि हृदयं यस्याः सा तथा 'लहुकरणजुत्तजोइए'इत्यादि, लघुकरणं–शीघ्रक्रियादक्षत्वं तेन युक्तौ यौगिकौ च–प्रशस्तयोगवन्तौ प्रशस्तसदृशरूपत्वाद्यौ तौ तथा, समाः खुराश्च–प्रतीताः 'वालिहाण'त्ति वालधाने–पुच्छौ ययोस्तौ तथा, समानि लिखितानि उल्लिखितानि शृङ्गाणि ययोस्तौ तथा, ततः कर्मधारयोऽतस्ताभ्यां लघुकरणयुक्तयौगिकसमखुरवालिधानसमलिखितशृङ्गकाभ्यां, गोयुवभ्यां युक्तमेव यानप्रवरमुपस्थापयतेति सम्बन्धः, पुनः किंभूताभ्याम् ? इत्याह—जाम्बूनदमयौ–सुवर्णनिर्वृत्तौ यौ कलापौ–कण्ठाभरणविशेषौ ताभ्यां युक्तौ प्रतिविशिष्टकौ च–प्रधानौ जवादिभिर्यौ तौ तथा ताभ्यां जाम्बूनदमयकलापयुक्तप्रतिविशिष्टकाभ्यां रजतमय्यौ–रूप्यविकारौ घण्टे ययोस्तौ तथा, सूत्ररज्जुके–कार्प्पासिकसूत्रदवरकमय्यौ वरकाञ्चने–प्रवरसुवर्णमण्डितत्वेन प्रधानसुवर्णे ये नस्ते–नासिकारज्जू तयोः प्रग्रहेण–रश्मिनाऽवगृहीतकौ–बद्धौ यौ तौ तथा ततः कर्मधार-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदत्त एवं देवानन्दाया: अधिकार:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥४५९॥

योऽतस्ताभ्यां रजतमयघण्टसूत्ररज्जुकवरकाञ्चननस्ताप्रग्रहावगृहीतकाभ्यां, नीलोत्पलैः—जलजविशेषैः कृतो–विहितः 'आमेल'त्ति आपीडः–शेखरो ययोस्तौ तथा ताभ्यां नीलोत्पलकृतापीडकाभ्यां 'पवरगोणजुवाणएहिं'ति प्रवरगोयु-वाभ्यां नानामणिरत्नानां सत्कं यद् घण्टिकाप्रधानं जालं–जालकं तेन परिगतं–परिक्षिप्तं यत्तत्तथा, सुजातं–सुजातदा-रुमयं यद् युगं–यूपस्तत् सुजातयुगं तच्च यौक्करज्जुकायुगं च–योक्राभिधानरज्जुकायुग्मं सुजातयुगयोक्करज्जुकायुगे ते प्रशस्ते–अतिशुभे सुविरचिते–सुघटिते निर्मिते–निवेशिते यत्र यत् सुजातयुगयोक्करज्जुकायुगप्रशस्तसुविरचितनिर्मितम् । 'एव'मित्यादि, एवं स्वामिन् ! तथेत्याज्ञया इत्येवं ब्रुवाणा इत्यर्थः 'विनयेन'अञ्जलिकरणादिना ॥ 'तए णं सा देवाणं-दा माहणी'त्यादि, इह च स्थाने वाचनान्तरे देवानन्दावर्णक एवं दृश्यते—'अंतो अंतेउरंसि ण्हाया' 'अन्तः' मध्ये-ऽन्तःपुरस्य स्नाता, अनेन च कुलीनाः स्त्रियः प्रच्छन्नाः स्नान्तीति दर्शितं, 'कयबलिकम्मा' गृहदेवताः प्रतीत्य 'कय-कोउयमंगलपायच्छित्ता' कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तान्यवश्यंकार्यत्वात् यया सा तथा, तत्र कौतुकानि–मषीतिलकादीनि मङ्गलानि–सिद्धार्थकदूर्वादीनि 'किच्च'त्ति किञ्चान्यद् 'वरपादपत्तनेउरमणिमेहलाहारविरइयउ-चियकडगखुड्डुयएगावलीकंठसुत्तउरत्थगेवेज्जसोणिसुत्तगणाणामणिरयणभूसणविराइयंगी' वराभ्यां पादप्रा-ग्नपुराभ्यां मणिमेखलया हारेण विरचितै रतिदैर्वा उचितैः–युक्तैः कटकैश्च 'खुड्डाग'त्ति अङ्गुलीयकैश्च एकावल्या च–विचित्रमणिकमय्या कण्ठसूत्रेण च–उरःस्थेन च रुढिगम्येन ग्रैवेयकेण च–प्रतीतेन उरःस्थग्रैवेयकेण वा श्रोणिसूत्रकेण च–कटीसूत्रेण नानामणिरत्नानां भूषणैश्च विराजितमङ्गं–शरीरं यस्याः सा तथा, 'चीणंसुयवत्थपवरपरिहिया' चीनां-

९ शतके उद्देशः ३३ ऋषभदत्तदेवानन्दाधि

॥४५९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	ऋषभदत्त एवं देवानन्दाया: अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३८०--३८२]

दीप अनुक्रम [४६०--४६२]

शुकं नाम यद्वस्त्राणां मध्ये प्रवरं तत्परिहितं–निवसनीकृतं यया सा तथा **'दुगुल्लसुकुमालउत्तरिज्जा'** दुकूलो–वृक्षविशेषस्तद्वल्काज्जातं दुकूलं–वस्त्रविशेषस्तत् सुकुमारमुत्तरीयम्–उपरिकायाच्छादनं यस्याः सा तथा **'सद्योऽयसुरभिकुसुमवरियसिरया'** सद्यर्त्तुकसुरभिकुसुमैर्वृता–वेष्टिताः शिरोजा यस्याः सा तथा **'वरचंदणवंदिया'** वरचन्दनं वन्दितं–ललाटे निवेशितं यया सा तथा **'वराभरणभूसियंगी'**ति व्यक्तं **'कालागुरुधूवधूविया'**इत्यपि व्यक्तं **'सिरीसमाणवेसा'** श्रीः–देवता तया समाननेपथ्या, इतः प्रकृतवाचनाऽनुश्रियते—**'खुज्जाहिं'**ति कुब्जिकाभिर्वक्रजङ्घाभिरित्यर्थः **'चिलाइयाहिं'**ति चिलातदेशोत्पन्नाभिः, यावत्करणादिदं दृश्यं—**'वामणियाहिं'** ह्रस्वशरीराभिः **'वडहियाहिं'** मडहकोष्ठाभिः **'बब्बरियाहिं** पओसियाहिं ईसिगणियाहिं वासगणियाहिं जोणियाहिं पल्हवियाहिं ल्हासियाहिं लउसियाहिं आरबीहिं दमिलाहिं सिंहलीहिं पुलिंदीहिं पक्कणीहिं बहलीहिं मुरुंडीहिं सबरीहिं पारसीहिं नाणादेसविदेसपरिपिंडियाहिं' नानादेशेभ्यो–बहुविधजनपदेभ्यो विदेशे–तद्देशापेक्षया देशान्तरे परिपिण्डिता यास्तास्तथा **'सदेसनेवत्थगहियवेसाहिं'** स्वदेशनेपथ्यमिव गृहीतो वेषो यकाभिस्तास्तथा ताभिः **'इंगियचिंतियपत्थियवियाणियाहिं'** इङ्गितेन–नयनादिचेष्टया चिन्तितं च परेण प्रार्थितं च–अभिलषितं विजानन्ति यास्तास्तथा ताभिः **'कुसलाहिं विणीयाहिं'** युक्ता इति गम्यते **'चेडियाचक्कवालवरिसधरथेरकंचुइज्जमहत्तरयवंदपरिक्खित्ता'** चेटीचक्रवालेनार्थात्स्वदेशसम्भवेन वर्षधराणां–वर्धितककरणेन नपुंसकीकृतानामन्तःपुरमहल्लकानां **'थेरकंचुइज्ज'**त्ति स्थविरकञ्चुकिनां–अन्तःपुरप्रयोजननिवेदकानां प्रतीहाराणां वा महत्तरकाणां च–अन्तःपुरकार्यचिन्तकानां वृन्देन परिक्षिप्ता या सा तथा, इदं च सर्वं वाचनान्तरे साक्षा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदत्त एवं देवानन्दाया: अधिकार:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८०-३८२]

दीप अनुक्रम [४६०-४६२]

देवास्ति । **'सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए'**त्ति पुष्पताम्बूलादिद्रव्याणां व्युत्सर्जनया त्यागेनेत्यर्थः **'अचित्ताणं दव्वाणं अविमोयणयाए'**त्ति वस्त्रादीनामत्यागेनेत्यर्थः **'मणस्स एगत्तीभावकरणेणं'** अनेकस्य सत एकतालक्षणभाव-करणेन **'ठिया चेव'**त्ति ऊर्द्ध्वस्थानस्थितैव अनुपविष्टेत्यर्थः **'आगयपण्हय'**त्ति 'आयातप्रश्रवा' पुत्रस्नेहादागतस्तनमु-खस्तन्येत्यर्थः **'पप्फुयलोयणा'** प्रप्लुतलोचना पुत्रदर्शनात् प्रवर्त्तितानन्दजलेन **'संवरियवलयबाहा'** संवृतौ–हर्षातिरे-कादतिस्थूरीभवन्तौ निषिद्धौ वलयैः–कटकैर्बाहू–भुजौ यस्याः सा तथा **'कंचुयपरिक्खित्तिया'** कञ्चुको–वारवाणः परिक्षिप्तो–विस्तारितो हर्षातिरेकस्थूरीभूतशरीरतया यया सा तथा **'धाराहयकयंबगंपिव समूसवियरोमकूवा'** मेघधाराभ्याहतकद-म्बपुष्पमिव समुच्छ्वसितानि रोमाणि कूपेषु–रोमरन्ध्रेषु यस्याः सा तथा **'देहमाणी'**ति प्रेक्षमाणा, आभीक्ष्ण्ये चात्र द्विरुक्तिः॥ **'भंते'** त्ति भदन्त ! इत्येवमामन्त्रणवचसाऽऽमन्त्र्येत्यर्थः **'गोयमाइ'**त्ति गौतम इति एवमामन्त्र्येत्यर्थः अथवा गौतम इति नामोच्चारणम् 'अहे'ति आमन्त्रणार्थो निपातः हे भो इत्यादिवत् **'अत्तए'**त्ति आत्मजः–पुत्रः **'पुव्वपुत्तसिणेहाणुरागएणं'**ति पूर्वः–प्रथमगर्भाधानकालसम्भवो यः पुत्रस्नेहलक्षणोऽनुरागः स पूर्वपुत्रस्नेहानुरागस्तेन **'महतिमहालियाए'**त्ति महती चासावतिमहती चेति महातिमहती तस्यै, आलप्रत्ययश्चेह प्राकृतप्रभवः,**'इसिपरिसाए'**त्ति पश्यन्तीति ऋषयो–ज्ञानिनस्तद्रूपा पर्षत्–परिवार ऋषिपर्षत्तस्यै, यावत्करणादिदं दृश्यं—**'मुणिपरिसाए जइपरिसाए अणेगसयाए अणेगसयविंदपरिवाराए'** इत्यादि, तत्र मुनयो–वाचंयमा यतयस्तु–धर्मक्रियासु प्रयतमानाः अनेकानि शतानि यस्याः सा तथा तस्यै अनेकशतप्रमाणानि वृन्दानि–परिवारो यस्याः सा तथा तस्यै ॥ **'तए णं सा अज्जचंदणा अज्जे'**त्यादि, इह च देवानन्दाया भगवता प्रव्रा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषभदत्त एवं देवानन्दाया: अधिकार:

प्रत सूत्रांक [३८०--३८२]

दीप अनुक्रम [४६०--४६२]

जनकरणेऽपि यदार्यचन्दनया पुनस्तत्करणं तत्तत्रैवानवगतावगमकरणादिना विशेषाधानमित्यवगन्तव्यमिति। 'तमाणाए'-त्ति तदाज्ञया–आर्यचन्दनाज्ञया ॥

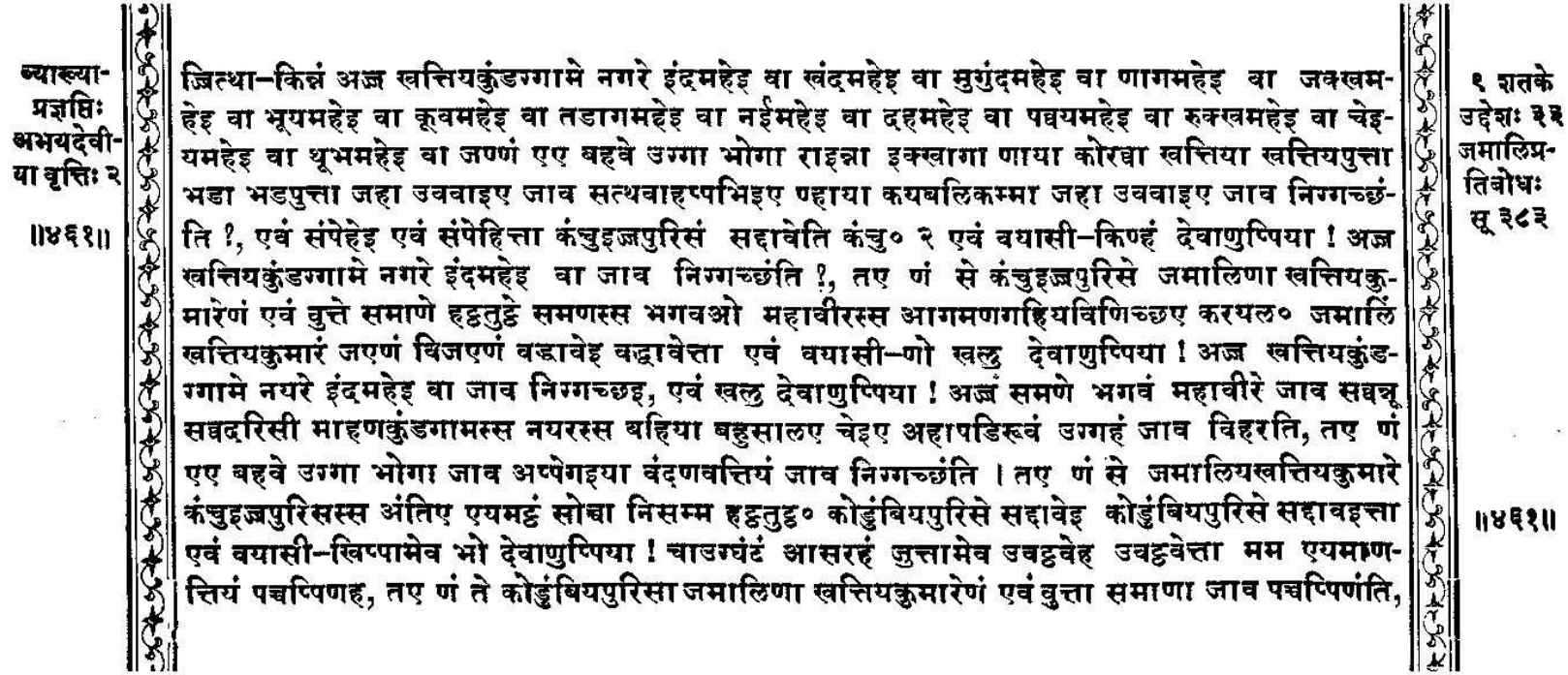
तस्स णं माहणकुंडग्गामस्स नगरस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं खत्तियकुंडग्गामे नामं नगरे होत्था वन्नओ, तत्थ णं खत्तियकुंडग्गामे नयरे जमालीनामं खत्तियकुमारे परिवसति अड्ढे दित्ते जाव अपरिभूए उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं बत्तीसतिबद्धेहिं नाडएहिं णाणाविहवरतरुणीसंपउत्तेहिं उवनचिज्जमाणे उवनचिज्जमाणे उवगिज्जमाणे २ उवलालिज्जमाणे उव० २ पाउसवासारत्तसरदहेमंतवसंतगिम्हपज्जंते छप्पि उऊ जहा विभवेणं माणमाणे २ कालं गालेमाणे इट्ठे सद्दफरिसरसरूवगंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरइ। तए णं खत्तियकुंडग्गामे नगरे सिंघाडगतियचउक्कचच्चरजाव बहुजणसद्देइ वा जहा उववाइए जाव एवं पन्नवेइ एवं परूवेइ–एवं खलु देवाणुप्पिया ! समणे भगवं महावीरे आइगरे जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी माहणकुंडग्गामस्स नगरस्स बहिया बहुसालए चेइए अहापडिरूवं जाव विहरइ, तं महप्फलं खलु देवाणुप्पिया ! तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं जहा उववाइए जाव एगाभिमुहे खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छंति निग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे नगरे जेणेव बहुसालए चेइए एवं जहा उववाइए जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासंति। तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स तं महया जणसद्दं वा जाव जणसन्निवायं वा सुणमाणस्स वा पासमाणस्स वा अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८३]

दीप अनुक्रम [४६३]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४६१॥

ज्जित्था–किन्नं अज्ज खत्तियकुंडग्गामे नगरे इंदमहेइ वा खंदमहेइ वा मुगुंदमहेइ वा णागमहेइ वा जक्खमहेइ वा भूयमहेइ वा कूवमहेइ वा तडागमहेइ वा नईमहेइ वा दहमहेइ वा पव्वयमहेइ वा रुक्खमहेइ वा चेइयमहेइ वा थूभमहेइ वा जण्णं एए बहवे उग्गा भोगा राइन्ना इक्खागा णाया कोरव्वा खत्तिया खत्तियपुत्ता भडा भडपुत्ता जहा उववाइए जाव सत्थवाहप्पभिइए पहाया कयबलिकम्मा जहा उववाइए जाव निग्गच्छंति ?, एवं संपेहेइ एवं संपेहित्ता कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेति कंचु० २ एवं वयासी–किण्हं देवाणुप्पिया ! अज्ज खत्तियकुंडग्गामे नगरे इंदमहेइ वा जाव निग्गच्छंति ?, तए णं से कंचुइज्जपुरिसे जमालिणा खत्तियकुमारेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणस्स भगवओ महावीरस्स आगमणगहियविणिच्छए करयल० जमालिं खत्तियकुमारं जएणं विजएणं वद्धावेइ वद्धावेत्ता एवं वयासी–णो खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज खत्तियकुंडग्गामे नयरे इंदमहेइ वा जाव निग्गच्छइ, एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज समणे भगवं महावीरे जाव सव्वन्नू सव्वदरिसी माहणकुंडगामस्स नयरस्स बहिया बहुसालए चेइए अहापडिरूवं उग्गहं जाव विहरति, तए णं एए बहवे उग्गा भोगा जाव अप्पेगइया वंदणवत्तियं जाव निग्गच्छंति । तए णं से जमालियखत्तियकुमारे कंचुइज्जपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ कोडुंबियपुरिसे सद्दावइत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिणा खत्तियकुमारेणं एवं वुत्ता समाणा जाव पच्चप्पिणंति,

९ शतके उद्देशः ३३ जमालिप्रतिबोधः सू ३८३

॥४६१॥

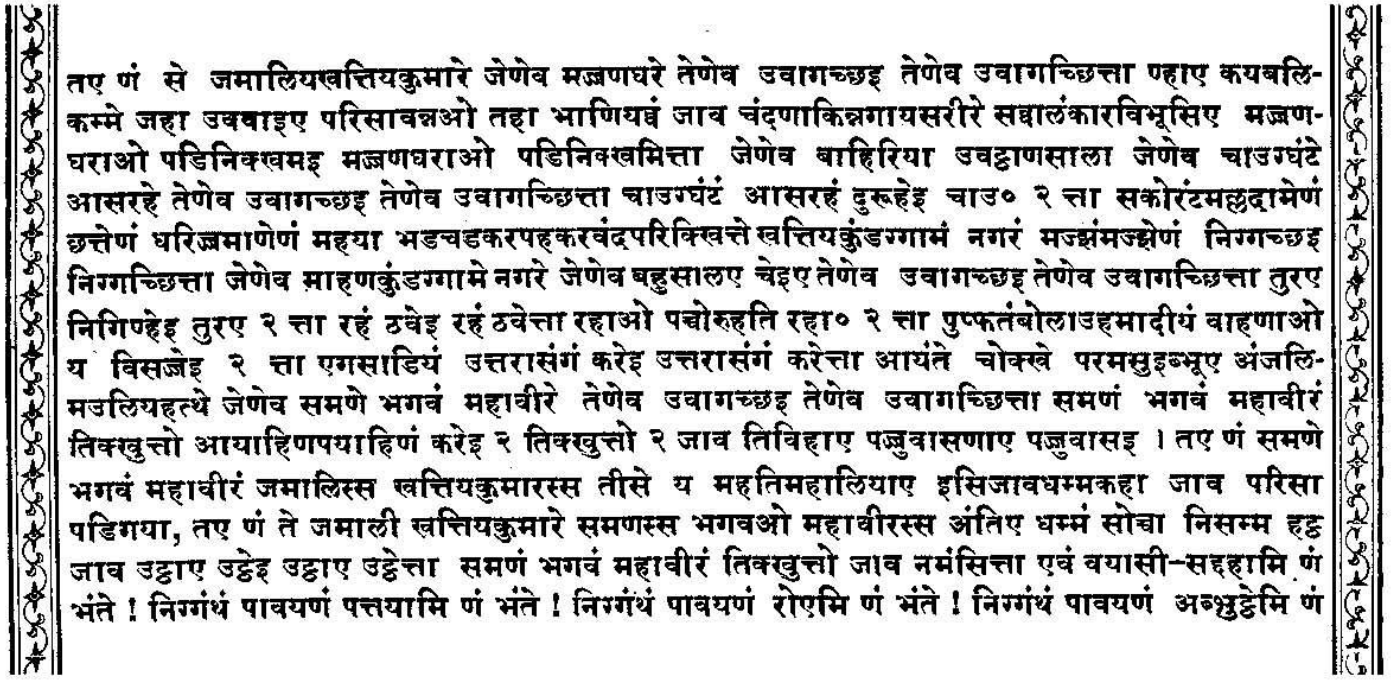
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८३]

दीप अनुक्रम [४६३]



तए णं से जमालियखत्तियकुमारे जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता ण्हाए कयबलि-कम्मे जहा उववाइए परिसावन्नओ तहा भाणियव्वं जाव चंदणाकिन्नगायसरीरे सव्वालंकारविभूसिए मज्जण-घराओ पडिनिक्खमइ मज्जणघराओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूहेइ चाउ० २ त्ता सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं महया भडचडकरपहकरवंदपरिक्खित्ते खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे नगरे जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता तुरए निगिण्हेइ तुरए २ त्ता रहं ठवेइ रहं ठवेत्ता रहाओ पच्चोरुहति रहा० २ त्ता पुप्फतंबोलाउहमादीयं वाहणाओ य विसज्जेइ २ त्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ उत्तरासंगं करेत्ता आयंते चोक्खे परमसुइब्भूए अंजलि-मउलियहत्थे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ २ तिक्खुत्तो २ जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ । तए णं समणे भगवं महावीरं जमालिस्स खत्तियकुमारस्स तीसे य महतिमहालियाए इसिजावधम्मकहा जाव परिसा पडिगया, तए णं ते जमाली खत्तियकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी–सद्दहामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं पत्तयामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं रोएमि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं अब्भुट्ठेमि णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३८३]

दीप अनुक्रम [४६३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४६२॥

भंते ! निग्गंथं पावयणं एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते ! असंदिद्धमेयं भंते ! जाव से जहेयं तुज्झे वदह, जं नवरं देवाणुप्पिया ! अम्मापियरो आपुच्छामि । तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वयामि, अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं (सूत्रं ३८३) ॥

'फुट्टमाणेहिं'ति अतिरभसाऽऽस्फालनात्स्फुटद्भिरिव विदलद्भिरिवेत्यर्थः 'मुइंगमत्थएहिं'ति मृदङ्गानां–मर्दलानां मस्तकानीव मस्तकानि–उपरिभागाः पुटानीत्यर्थः मृदङ्गमस्तकानि 'बत्तीसतिबद्धेहिं'ति द्वात्रिंशताऽभिनेतव्यप्रकारैः पात्रैरित्येके बद्धानि द्वात्रिंशद्बद्धानि तैः 'उवनच्चिज्जमाणे'त्ति उपनृत्यमानः तमुपश्रित्य नर्त्तनात् 'उवगिज्जमाणे'त्ति तद्गुणगानात् 'उवलालिज्जमाणे'त्ति उपलाल्यमान ईप्सितार्थसम्पादनात् 'पाउसे'त्यादि, तत्र प्रावृट् श्रावणादिः वर्षा-रात्रोऽश्वयुजादि शरत् मार्गशीर्षादिः हेमन्तो माघादिः वसन्तः चैत्रादिः ग्रीष्मो ज्येष्ठादिः, ततश्च प्रावृट् च वर्षारात्रश्च शरच्च हेमन्तश्च वसन्तश्चेति प्रावृड्वर्षारात्रशरद्धेमन्तवसन्तास्ते च ते ग्रीष्मपर्यन्ताश्चेति कर्म्मधारयोऽतस्तान् षडपि 'ऋतून्' कालविशेषान् 'माणमाणे'त्ति मानयन् तदनुभावमनुभवन् 'गालेमाणे'त्ति 'गालयन्' अतिवाहयन् ॥ 'सिंघाडगतिगचउक्कचच्चर' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'चउम्मुहमहापहपहेसु'त्ति, 'बहुजणसद्देइ व'त्ति यत्र शृङ्गाटकादौ बहूनां जनानां शब्दस्तत्र बहुजनोऽन्योऽन्यस्यैवमाख्यातीति वाक्यार्थः, तत्र च बहुजनशब्दः परस्परालापा-दिरूपः, इतिशब्दो वाक्यालङ्कारे वाशब्दो विकल्पे, 'जहा उववाइए'त्ति तत्र चेदं सूत्रमेवं लेशतः—'जणवूहेइ वा जणबोलेइ वा जणकलकलेति वा जणुम्मीइ वा जणुक्कलियाइ वा जणसन्निवाएइ वा बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ

९ शतके उद्देशः ३३ जमालिप्र-तिबोधः सू ३८३

॥४६२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८३]

दीप अनुक्रम [४६३]

एवं भासइ'त्ति, अस्यायमर्थः—'जनव्यूहः' जनसमुदायः बोलः–अव्यक्तवर्णो ध्वनिः कलकलः–स एवोपलभ्यमानवचनविभागः ऊर्म्मिः–सम्बाधः उत्कलिका–लघुतरः समुदायः संनिपातः–अपरापरस्थानेभ्यो जनानामेकत्र मीलनं आख्याति सामान्यतः भाषते व्यक्तपर्यायवचनतः, एतदेवार्थद्वयं पर्यायतः क्रमेणाह—एवं प्रज्ञापयति एवं प्ररूपयतीति, 'अहापडिरूवं' इह यावत्करणादिदं दृश्यम्— 'उग्गहं ओगिण्हति ओगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे'त्ति, 'जहा उववाइए'त्ति, तदेव लेशतो दर्श्यते—'नामगोयस्सवि सवणयाए किमंग पुण अभिगमणवंदणणमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए एगस्सवि आयरियस्स सुवयणस्स सवणयाए ?, किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए ?, तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया ! समणं ३ वंदामो ४ एयं णे पेच्च भवे हिताए ५ भविस्सइत्तिकट्टु बहवे उग्गा उग्गपुत्ता एवं भोगा राइन्ना खत्तिया भडा अप्पेगइया वंदणवत्तियं एवं पूयणवत्तियं सक्कारवत्तियं (सम्माणवत्तियं) कोउहलवत्तियं अप्पेगतिया जीयमेयंतिकट्टु ण्हाया कयवलिकम्मा'इत्यादि 'एवं जहा उववाइए' तत्र चैतदेवं सूत्रं—'तेणामेव उवागच्छंति तेणामेव उवागच्छित्ता छत्ताइए तित्थयरातिसए पासंति जाणवाहणाइं ठाइंति'इत्यादि ॥ 'अयमेयारूवे'त्ति अयमेतद्रूपो वक्ष्यमाणस्वरूपः 'अज्झत्थिए'त्ति आध्यात्मिकः–आत्माश्रितः, यावत्करणादिदं दृश्यं—'चिंतिए'त्ति स्मरणरूपः 'पत्थिए'त्ति प्रार्थितः–लब्धुं प्रार्थितः 'मणोगए'त्ति अबहिःप्रकाशितः 'संकप्पे'त्ति विकल्पः 'इंदमहेइ व'त्ति इन्द्रमह–इन्द्रोत्सवः 'खंदमहेइ व'त्ति स्कन्दमहः–कार्त्तिकेयोत्सवः 'मुगुंदमहेइ व'त्ति इह मुकुन्दो वासुदेवो बलदेवो वा 'जहा उववाइए'त्ति तत्र चेदमेवं सूत्रं—'माहणा भडा जोहा मल्लई लेच्छई अन्ने य बहवे राईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियइब्भसेट्ठिसेणावइ'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३८३]

दीप अनुक्रम [४६३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२

॥४६३॥

तत्र 'भटाः' शूराः 'योधाः' सहस्रयोधादयः, मल्लई लेच्छई राजविशेषाः 'राजानः' सामन्ताः 'ईश्वराः' युवराजादयः 'तलवराः' राजवल्लभाः 'माडम्बिकाः' संनिवेशविशेषनायकाः 'कोडुम्बिकाः' कतिपयकुटुम्बनायकाः 'इभ्याः' महाधनाः 'जहा उववाइए'त्ति अनेन चेदं सूचितं—'कयकोउयमंगलपायच्छित्ता सिरसाकंठेमालाकडा'इत्यादि, शिरसा कंठे च माला कृता–धृता यैस्ते तथा, प्राकृतत्वाच्चैवं निर्देशः, 'आगमणगहियविणिच्छए'त्ति आगमने गृहीतः–कृतो विनिश्चयो–निर्णयो येन स तथा 'जएणं विजएणं वद्धावेइ'त्ति जय त्वं विजयस्व त्वमित्येवमाशीर्वचनेन भगवतः समागमनसूचनेन तमानन्देन वर्द्धयतीति भावः । 'अप्पेगतिया वंदणवत्तियं जाव निग्गच्छंति' इह यावत्करणादिदं दृश्यम्—'अप्पेगइया पूयणवत्तियं एवं सक्कारवत्तियं सम्माणवत्तियं कोउहल्लवत्तियं असुयाइं सुणिस्सामो सुयाइं निस्संकियाइं करिस्सामो मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामो अप्पेगइया हयगया एवं गयरहसिबियासंदमाणियागया अप्पेगइया पायविहारचारिणो पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता महता उक्कट्ठिसीहणायबोलकलकलरवेणं समुद्दरवभूयंपि व करेमाणा खत्तियकुंडग्गामस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं'ति ॥ 'चाउग्घंटं'ति चतुर्घण्टोपेतम् 'आसरहं'ति अश्ववाह्यरथं 'जुत्तामेव'त्ति युक्तमेव 'जहा उववाइए परिसावन्नओ'त्ति यथा कौणिकस्यौपपातिके परिवारवर्णक उक्तः स तथाऽस्यापीत्यर्थः, स चायम्—'अणेगगणनायगदंडनायगराईसरतलवरमाडंबियकोडुंबियमंतिमहामंतिगणगदोवारियअमच्चचेडपीढमद्दनगरनिगमसेट्ठिसत्थवाहदूयसंधिवालसद्धिं संपरिवुडे'त्ति, तत्रानेके ये गणनायकाः–प्रकृतिमहत्तराः दण्डनायकाः–तन्त्रपालकाः राजानो–माण्डलिकाः ईश्वरा–युवराजानः तलवराः–परितुष्टनरपतिप्रदत्तपट्टबन्धविभूषिता राजस्थानीयाः माडम्बिकाः–छिन्नमडम्बा

९ शतके उद्देशः ३३ जमालिप्रतिबोधः सू ३८३

॥४६३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

धिपाः कोडुम्बिकाः-कतिपयकुटुम्बप्रभवः अवलगकाः-सेवकाः मन्त्रिणः–प्रतीताः महामन्त्रिणो–मन्त्रिमण्डलप्रधानाः हस्तिसाधनोपरिका इति च वृद्धाः गणकाः–गणितज्ञाः भाण्डागारिका इति च वृद्धाः दौवारिकाः–प्रतीहाराः अमात्या–राज्याधिष्ठायकाः चेटाः–पादमूलिकाः पीठमर्दाः–आस्थाने आसनासीनसेवकाः वयस्या इत्यर्थः नगरं–नगरवासिप्रकृतयः निगमाः–कारणिकाः श्रेष्ठिनः–श्रीदेवताऽध्यासितसौवर्णपट्टविभूषितोत्तमाङ्गाः सेनापतयः–सैन्यनायकाः दूताः–अन्येषां राजादेशनिवेदकाः सन्धिपाला–राज्यसन्धिरक्षकाः, एषां द्वन्द्वस्ततस्तैः, इह तृतीयाबहुवचनलोपो द्रष्टव्यः 'सार्द्धं' सह, न केवलं सहितत्वमेवापि तु तैः समिति–समन्तात् परिवृतः–परिकरित इति 'चंदणुक्खित्तगायसरीरे'त्ति चन्दनोपलिप्ताङ्गदेहा इत्यर्थः 'महयाभडचडगरपहकरवंदपरिक्खित्ते'त्ति 'महय'त्ति महता बृहता प्रकारेणेति गम्यते, भटानां प्राकृतत्वान्महाभटानां वा 'चडगर'त्ति चटकरवन्तो–विस्तरवन्तः'पहकर'त्ति समूहास्तेषां यद्वृन्दं तेन परिक्षिप्तो यः स तथा'पुप्फतंबोलाउहमाइयं'ति इहादिशब्दाच्छेखरच्छत्रचामरादिपरिग्रहः 'आयंते'त्ति शौचार्थं कृतजलस्पर्शः 'चोक्खे'त्ति आचमनादपनीताशुचिद्रव्यः 'परमसुइब्भूए'त्ति अत एवात्यर्थं शुचीभूतः 'अंजलिमउलियहत्थे'त्ति अञ्जलिना मुकुलमिव कृतौ हस्तौ येन स तथा ॥

तए णं से जमाली खत्तियकुमारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता तमेव चाउग्घंटं आसरहं दुरूहेइ दुरूहित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ बहुसालाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता सकोरंटजाव धरिज्जमाणेणं महया भडचडगरजावपरिक्खित्ते जेणेव खत्तियकुंडग्गामे नयरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता खत्तियकुंडग्गामं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८४]

दीप अनुक्रम [४६४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४६४॥

नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता तुरए निगिण्हइ तुरए निगिण्हित्ता रहं ठवेइ रहं ठवेत्ता रहाओ पच्चोरुहइ रहाओ पच्चोरुहित्ता जेणेव अब्भिंतरिया उवट्ठाणसाला जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता अम्मापियरो जएणं विजएणं वद्धावेइ वद्धावेत्ता एवं वयासी–एवं खलु अम्मताओ ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मे निसंते, सेवि य मे धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए, तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासि–धन्नेसि णं तुमं जाया ! कयत्थेसि णं तुमं जाया ! कयपुन्नेसि णं तुमं जाया ! कयलक्खणेसि णं तुमं जाया ! जन्नं तुमे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मे निसंते सेवि य धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए, तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो दोच्चंपि एवं वयासी–एवं खलु मए अम्मताओ समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे निसंते जाव अभिरुइए, तए णं अहं अम्मताओ ! संसारभउव्विग्गे भीए जम्मजरामरणेणं तं इच्छामिणं अम्म ! ताओ ! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए । तए णं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माता तं अणिट्ठं अकंतं अप्पियं अमणुन्नं अमणामं असुयपुव्वं गिरं सोच्चा निसम्म सेयागयरोमकूवपगलंतविलीणगत्ता सोगभरपवेवियंगमंगी नित्तेया दीणविमणवयणा करयलमलियव्व कमलमाला तक्खणओलुग्गदुब्बलसरीरलायन्नसुन्ननिच्छाया गयसिरीया पसिढिलभूसणपडंतखुण्णियसंचुन्नियधवलवलयपब्भट्ठ-

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अनुमतिः सू ३८४

॥४६४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८४]

दीप अनुक्रम [४६४]

उत्तरिज्जा मुच्छावसणट्ठंचेतगुरुई सुकुमालविकिन्नकेसहत्था परसुणियत्तव चंपगलया निवत्तमहे व इंदलट्ठी विमुक्कसंधिबंधणा कोट्टिमतलंसि धसत्ति सव्वंगेहिं संनिवडिया, तए णं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया ससंभमोयत्तियाए तुरियं कंचणभिंगारमुहविणिग्गयसीयलविमलजलधारापरिसिंचमाणनिव्वियगायलट्ठी उक्खेवयतालियंटवीयणगजणियवाएणं सफुसिएणं अंतेउरपरिजणेणं आसासिया समाणी रोयमाणी कंदमाणी सोयमाणी विलवमाणी जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी–तुमंसि णं जाया ! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते पिए मणुन्ने मणामे थेज्जे वेसासिए संमए बहुमए अणुमए भंडकरंडगसमाणे रयणे रयणब्भूए जीविऊसविये हियआनंदिजणणे उंबरपुप्फमिव दुल्लभे सवणयाए किमंग पुण पासणयाए?, तं नो खलु जाया ! अम्हे इच्छामो तुज्झं खणमवि विप्पओगं, तं अच्छाहि ताव जाया ! जाव ताव अम्हे जीवामो, तओ पच्छा अम्हेहिं कालगएहिं समाणेहिं परिणयवये वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जंमि निरवयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइहिसि । तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो एवं वयासी–तहावि णं तं अम्म ! ताओ ! जण्णं तुज्झे मम एवं वदह तुमंसि णं जाया ! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते तं चेव जाव पव्वइहिसि, एवं खलु अम्म ! ताओ ! माणुस्सए भवे अणेगजाइजरामरणरोगसारीरमाणुस्सए कामदुक्खवेयणवसणसतोवद्दवाभिभूए अधुए अणितिए असासए संज्झब्भरागसरिसे जलबुब्बुदसमाणे कुसग्गजलबिंदुसन्निभे सुविणगदंसणोवमे विज्जुलयाचंचले अणिच्चे सडणपडणविद्धंसणधम्मे पुव्विं वा पच्छा वा अवस्स-

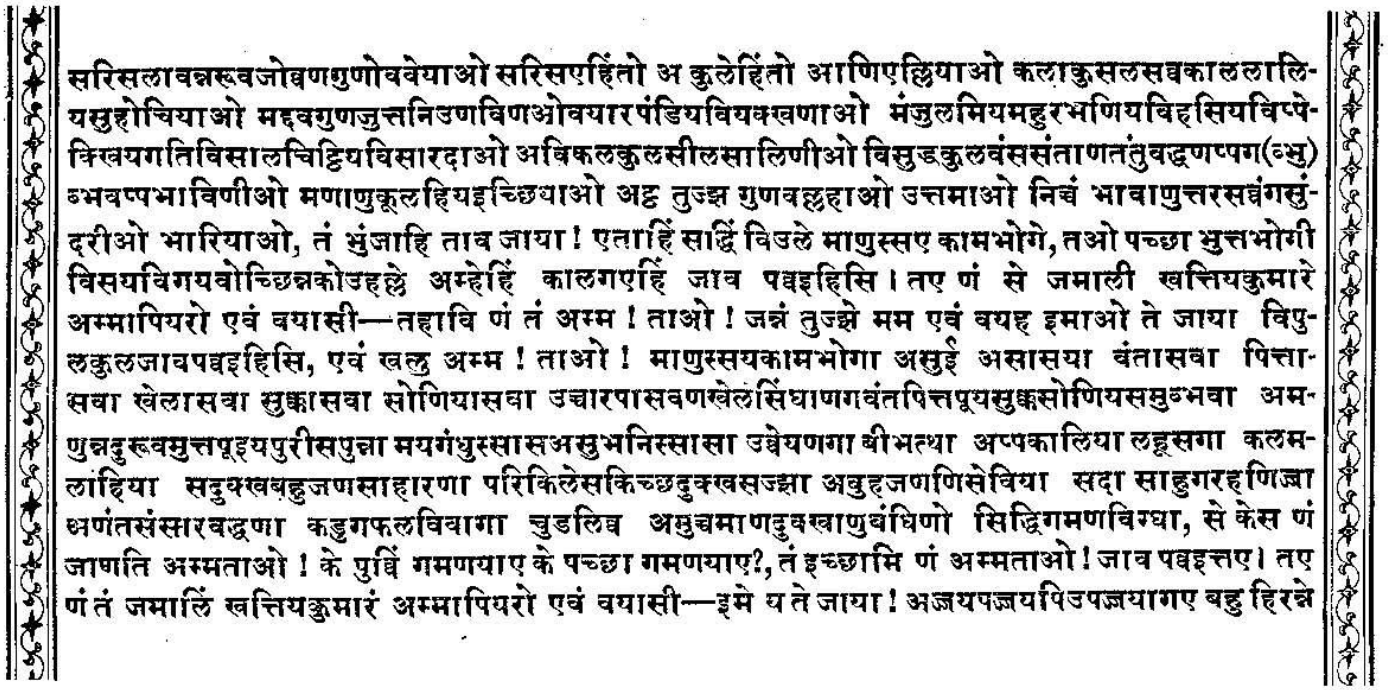
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

विप्पजहियव्वे भविस्सइ, से केस णं जाणइ अम्म ! ताओ ! के पुव्विं गमणयाए के पच्छा गमणयाए ?, तं इच्छामि णं अम्मताओ ! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए। तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—इमं च ते जाया ! सरीरगं पविसिट्ठरूव-लक्खणवंजणगुणोववेयं उत्तमबलवीरियसत्तजुत्तं विण्णाणवियक्खणं ससोहग्गगुणसमुस्सियं अभिजायम-हक्खमं विविहवाहिरोगरहियं निरुवहयउदत्तलट्ठं पंचिंदियपडुपढमजोव्वणत्थं अणेगउत्तमगुणेहिं संजुत्तं तं अणुहोहि ताव जाव जाया ! नियगसरीररूवसोहग्गजोव्वणगुणे, तओ पच्छा अणुभूयनियगसरीररूवसो-हग्गजोव्वणगुणे अम्हेहिं कालगएहिं समाणेहिं परिणयवये वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जंमि निरवयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइहिसि, तए णं से जमाली खत्तिय-कुमारे अम्मापियरो एवं वयासी—तहावि णं तं अम्मताओ ! जन्नं तुज्झे ममं एवं वदह-इमं च णं ते जाया ! सरीरगं तं चेव जाव पव्वइहिसि, एवं खलु अम्मताओ ! माणुस्सगं सरीरं दुक्खाययणं विविह-वाहिसयसंनिकेतं अट्ठियकट्ठट्ठियं छिराण्हारुजालओणद्धसंपिणद्धं मट्टियभंडं व दुब्बलं असुइसंकिलिट्ठं अणिट्ठवियसव्व कालसंठप्पियं जराकुणिमजज्जरघरं व सडणपडणविद्धंसणधम्मं पुव्विं वा पच्छा वा अवस्सवि-प्पजहियव्वं भविस्सइ, से केस णं जाणति ? अम्मताओ ! के पुव्विं तं चेव जाव पव्वइत्तए। तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—इमाओ य ते जाया ! विपुलकुलबालियाओ सरित्तयाओ सरिव्वयाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



सरिसलावन्नरूवजोव्वणगुणोववेयाओ सरिसएहिंतो अकुलेहिंतो आणिएल्लियाओ कलाकुसलसव्वकाललालियसुहोचियाओ मद्दवगुणजुत्तनिउणविणओवयारपंडियवियक्खणाओ मंजुलमियमहुरभणियविहसियविप्पेक्खियगतिविसालचिट्ठियविसारदाओ अविकलकुलसीलसालिणीओ विसुद्धकुलवंससंताणतंतुवद्धणप्पग(ब्भु)ब्भवप्पभाविणीओ मणाणुकूलहियइच्छियाओ अट्ठ तुज्झ गुणवल्लहाओ उत्तमाओ निच्चं भावाणुत्तरसव्वंगसुंदरीओ भारियाओ, तं भुंजाहि ताव जाया! एताहिं सद्धिं विउले माणुस्सए कामभोगे, तओ पच्छा भुत्तभोगी विसयविगयवोच्छिन्नकोउहल्ले अम्हेहिं कालगएहिं जाव पव्वइहिसि। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो एवं वयासी—तहावि णं तं अम्म! ताओ! जन्नं तुज्झे मम एवं वयह इमाओ ते जाया विपुलकुलजावपव्वइहिसि, एवं खलु अम्म! ताओ! माणुस्सयकामभोगा असुई असासया वंतासवा पित्तासवा खेलासवा सुक्कासवा सोणियासवा उच्चारपासवणखेलसिंघाणगवंतपित्तपूयसुक्कसोणियसमुब्भवा अमणुन्नदुरूवमुत्तपूइयपुरीसपुत्ता मयगंधुस्सासअसुभनिस्सासा उव्वेयणगा बीभत्था अप्पकालिया लहूसगा कलमलाहिया सदुक्खबहुजणसाहारणा परिकिलेसकिच्छदुक्खसज्झा अबुहजणणिसेविया सदा साहुगरहणिज्जा अणंतसंसारवद्धणा कडुगफलविवागा चुडलिव्व अमुच्चमाणदुक्खाणुबंधिणो सिद्धिगमणविग्घा, से केस णं जाणति अम्मताओ! के पुव्विं गमणयाए के पच्छा गमणयाए?, तं इच्छामि णं अम्मताओ! जाव पव्वइत्तए। तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—इमे य ते जाया! अज्जयपज्जयपिउपज्जयागए बहु हिरन्ने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८४]

दीप अनुक्रम [४६४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४६६॥

य सुवन्ने य कंसे य दूसे य विउलधणकणगजाव संतसारसावएज्जे अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पकामं दाउं पकामं भोत्तुं पकामं परिभाएउं तं अणुहोहि ताव जाया ! विउले माणुस्सए इड्ढिसक्कारसमुदए, तओ पच्छा डूयकल्लाणे वड्ढियकुलतंतु जाव पवइहिसि । तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो एवं वयासी—तहावि णं तं अम्मताओ ! जन्नं तुज्झे ममं एवं वदह–इमं च ते जाया ! अज्जगपज्जगजावपवइहिसि, एवं खलु अम्मताओ ! हिरन्ने य सुवन्ने य जाव सावएज्जे अग्गिसाहिए चोरसाहिए रायसाहिए मच्चुसाहिए दाइयसाहिए अग्गिसामन्ने जाव दाइयसामन्ने अधुवे अणितिए असासए पुव्विं वा पच्छा वा अवस्सविप्पजहियव्वे भविस्सइ, से केस णं जाणइ तं चेव जाव पवइत्तए । तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मताओ जाहे नो संचाएन्ति विसयाणुलोमाहिं बहूहिं आघवणाहि य पन्नवणाहि य सन्नवणाहि य विन्नवणाहि य आघवेत्तए वा पन्नवेत्तए वा सन्नवेत्तए वा विन्नवेत्तए वा ताहे विसयपडिकूलाहिं संजमभयुव्वेयणकराहिं पन्नवणाहिं पन्नवेमाणा एवं वयासी—एवं खलु जाया ! निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवले जहा आवस्सए जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति अहीव एगंतदिट्ठीए खुरो इव एगंतधाराए लोहमया जवा चावेयव्वा वालुयाकवले इव निस्साए गंगा वा महानदी पडिसोयगमणयाए महासमुद्दे वा भुयाहिं दुत्तरो तिक्खं कमियव्वं गरुयं लंबेयव्वं असिधारगं वतं चरियव्वं, नो खलु कप्पइ जाया ! समणाणं निग्गंथाणं अहाकम्मिएत्ति वा उद्देसएइ वा मिस्सजाएइ वा अज्झोयरएइ वा पूइएइ वा कीएइ वा पामिच्चेइ वा अच्छेज्जेइ वा अणि-

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अनुमतिः सू ३८४

॥४६६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

सट्ठेइ वा अभिहडेइ वा कंतारभत्तेइ वा दुब्भिक्खभत्तेइ वा गिलाणभत्तेइ वा वद्दलियाभत्तेइ वा पाहुणगभत्तेइ वा सेज्जायरपिंडेइ वा रायपिंडेइ वा मूलभोयणेइ वा कंदभोयणेइ वा फलभोयणेइ वा बीयभोयणेइ वा हरियभोयणेइ वा भुत्तए वा पायए वा, तुमं च णं जाया ! सुहसमुचिए णो चेव णं दुहसमुचिते नालं सीयं नालं उण्हं नालं खुहा नालं पिपासा नालं चोरा नालं वाला नालं दंसा नालं मसया नालं वाइयपित्तियसेंभियसन्निवाइए विविहे रोगायंके परीसहोवसग्गे उदिन्ने अहियासेत्तए, तं नो खलु जाया ! अम्हे इच्छामो तुज्झं खणमवि विप्पओगं तं अच्छाहि ताव जाया ! जाव ताव अम्हे जीवामो, तओ पच्छा अम्हेहिं जाव पव्वइहिसि । तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो एवं वयासी—तहावि णं तं अम्म ! ताओ ! जन्नं तुज्झे ममं एवं वयह–एवं खलु जाया ! निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवले तं चेव जाव पव्वइहिसि, एवं खलु अम्मताओ ! निग्गंथे पावयणे कीवाणं कायराणं कापुरिसाणं इहलोगपडिबद्धाणं परलोगपरंमुहाणं विसयतिसियाणं दुरणुचरे पागयजणस्स, धीरस्स निच्छियस्स ववसियस्स नो खलु एत्थं किंचिवि दुक्करं करणयाए, तं इच्छामि णं अम्म ! ताओ ! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए । तए णं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो जाहे नो संचाएंति विसयाणुलोमाहि य विसयपडिकूलाहि य बहूहि य आघवणाहि य पन्नवणाहि य ४ आघवेत्तए वा जाव विन्नवेत्तए वा ताहे अकामए चेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स निक्खमणं अणुमन्नित्था (सूत्रं ३८४) ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३८४]

दीप अनुक्रम [४६४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४६७॥

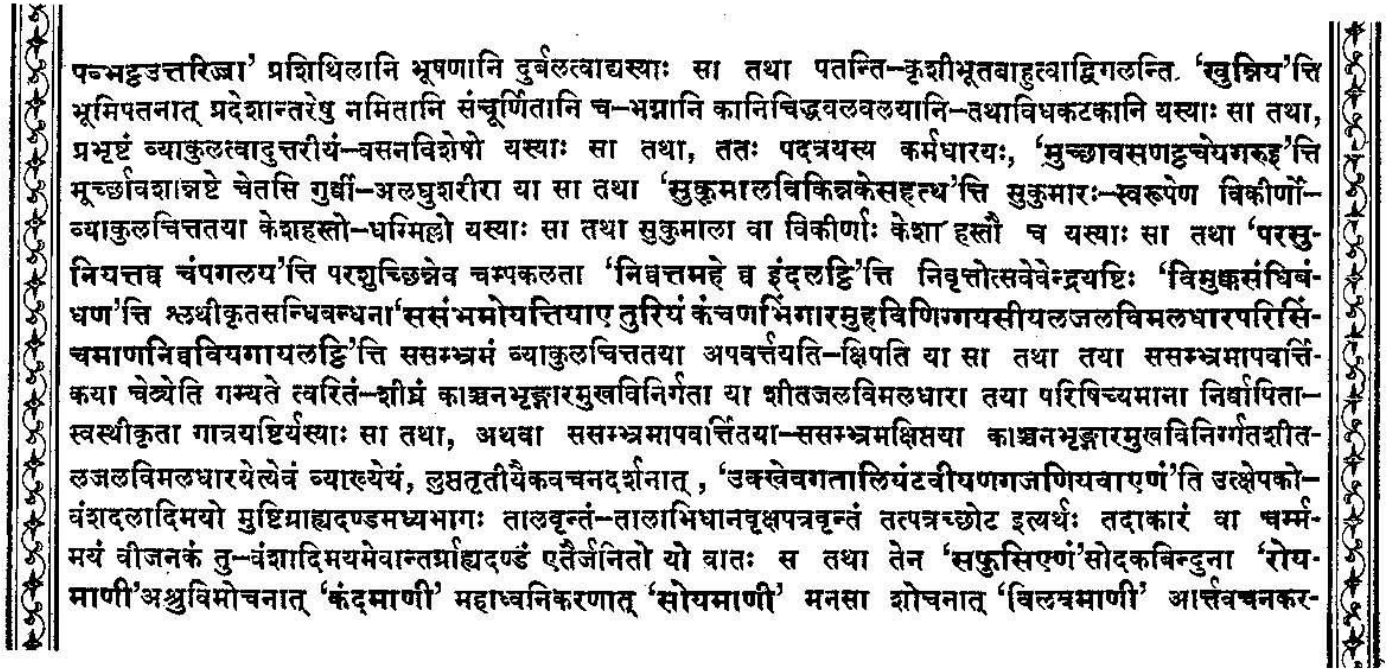
'सद्दहामि'त्ति श्रद्धे सामान्यतः 'पत्तियामि'त्ति उपपत्तिभिः प्रत्येमि प्रीतिविषयं वा करोमि 'रोएमि'त्ति चिकीर्षामि 'अब्भुट्ठेमि'त्ति अभ्युत्तिष्ठामि 'एवमेयं'ति उपलभ्यमानप्रकारवत् 'तहमेयं'ति आप्तवचनावगतपूर्वाभिमतप्रकारवत् 'अवितहमेयं'ति पूर्वमभिमतप्रकारयुक्तमपि सदन्यदा विगताभिमतप्रकारमपि किञ्चित्स्यादत उच्यते—'अवितथमेतत्' न कालान्तरेऽपि विगताभिमतप्रकारमिति ॥ 'अम्म! ताओ'त्ति हे अम्ब! हे–मातरित्यर्थः हे तात! हे–पितरित्यर्थः 'निसंते'त्ति निशमितः श्रुत इत्यर्थः 'इच्छिए'त्ति इष्टः 'पडिच्छिए'त्ति पुनः पुनरिष्टः भावतो वा प्रतिपन्नः 'अभिरुइए'त्ति स्वादुभावमिवोपगतः 'धन्नेऽसि'त्ति धनं लब्धा 'असि' भवसि 'जाय'त्ति हे पुत्र! 'कयत्थेऽसि'त्ति 'कृतार्थः' कृतस्वप्रयोजनोऽसि 'कयलक्खणे'त्ति कृतानि–सार्थकानि लक्षणानि–देहचिह्नानि येन स कृतलक्षणः ॥ 'अनिट्ठं'ति अवाञ्छिताम् 'अकंतं'ति अकमनीयाम् 'अप्पियं'ति अप्रीतिकरीम् 'अणुमन्नं'ति न मनसा ज्ञायते सुन्दरतयेत्यमनोज्ञा ताम् 'अमणामं'ति न मनसा अम्यते–गम्यते पुनः पुनः संस्मरणेनेत्यमनोज्ञा तां 'सेयागयरोमकूवपगलंतविलीणगत्ता' स्वेदेनागतेन रोमकूपेभ्यः प्रगलन्ति–क्षरन्ति विलीनानि च–क्लिन्नानि गात्राणि यस्याः सा तथा 'सोगभरपवेवियंगमंगी' शोकभरेण प्रवेपितं–प्रकम्पितमङ्गमङ्गं यस्याः सा तथा 'नित्तेया' निर्वीर्या 'दीणविमणवयणा' दीनस्येव विमनस इव(च) वदनं यस्याः सा तथा 'तक्खणओलुग्गदुब्बलसरीरलावन्नसुन्ननिच्छाय'त्ति तत्क्षणमेव–प्रव्रजामीतिवचनश्रवणक्षण एव अवरुग्णं–म्लानं दुर्बलं च शरीरं यस्याः सा तथा, लावण्येन शून्या लावण्यशून्या, निश्छाया–निष्प्रभा, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः, 'गयसिरीय'त्ति निःशोभा 'पसिढिलभूसणपडंतखुन्नियसंचुन्नियधवलवलय-

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अनुमतिः सू ३८४

॥४६७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



पब्भट्ठउत्तरिज्जा' प्रशिथिलानि भूषणानि दुर्बलत्वाद्यस्याः सा तथा पतन्ति–कृशीभूतबाहुत्वाद्विगलन्ति 'खुन्निय'त्ति भूमिपतनात् प्रदेशान्तरेषु नमितानि संचूर्णितानि च–भग्नानि कानिचिद्धवलवलयानि–तथाविधकटकानि यस्याः सा तथा, प्रभृष्टं व्याकुलत्वादुत्तरीयं–वसनविशेषो यस्याः सा तथा, ततः पदत्रयस्य कर्मधारयः, 'मुच्छावसणट्ठचेयगरुइ'त्ति मूर्च्छावशान्नष्टे चेतसि गुर्वी–अलघुशरीरा या सा तथा 'सुकुमालविकिन्नकेसहत्थ'त्ति सुकुमारः–स्वरूपेण विकीर्णो–व्याकुलचित्ततया केशहस्तो–धम्मिल्लो यस्याः सा तथा सुकुमाला वा विकीर्णाः केशा हस्तौ च यस्याः सा तथा 'परसुनियत्तव्व चंपगलय'त्ति परशुच्छिन्नेव चम्पकलता 'निव्वत्तमहे व्व इंदलट्ठि'त्ति निवृत्तोत्सवेवेन्द्रयष्टिः 'विमुक्कसंधिबंधण'त्ति श्लथीकृतसन्धिबन्धना'ससंभमोयत्तियाए तुरियं कंचणभिंगारमुहविणिग्गयसीयलजलविमलधारपरिसिंचमाणनिव्वियगायलट्ठि'त्ति ससम्भ्रमं व्याकुलचित्ततया अपवर्त्तयति–क्षिपति या सा तथा तया ससम्भ्रमापवर्त्तितया चेत्येति गम्यते त्वरितं–शीघ्रं काञ्चनभृङ्गारमुखविनिर्गता या शीतजलविमलधारा तया परिषिच्यमाना निर्वापिता–स्वस्थीकृता गात्रयष्टिर्यस्याः सा तथा, अथवा ससम्भ्रमापवर्त्तितया–ससम्भ्रमक्षिप्तया काञ्चनभृङ्गारमुखविनिर्गतशीतलजलविमलधारयेत्येवं व्याख्येयं, लुप्ततृतीयैकवचनदर्शनात् , 'उक्खेवगतालियंटवीयणगजणियवाएणं'ति उत्क्षेपको–वंशदलादिमयो मुष्टिग्राह्यदण्डमध्यभागः तालवृन्तं–तालाभिधानवृक्षपत्रवृन्तं तत्पत्रच्छोट इत्यर्थः तदाकारं वा चर्म्ममयं वीजनकं तु–वंशादिमयमेवान्तर्ग्राह्यदण्डं एतैर्जनितो यो वातः स तथा तेन 'सफुसिएणं'सोदकबिन्दुना 'रोयमाणी'अश्रुविमोचनात् 'कंदमाणी' महाध्वनिकरणात् 'सोयमाणी' मनसा शोचनात् 'विलवमाणी' आर्त्तवचनकर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३८४]

दीप अनुक्रम [४६४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४६८॥

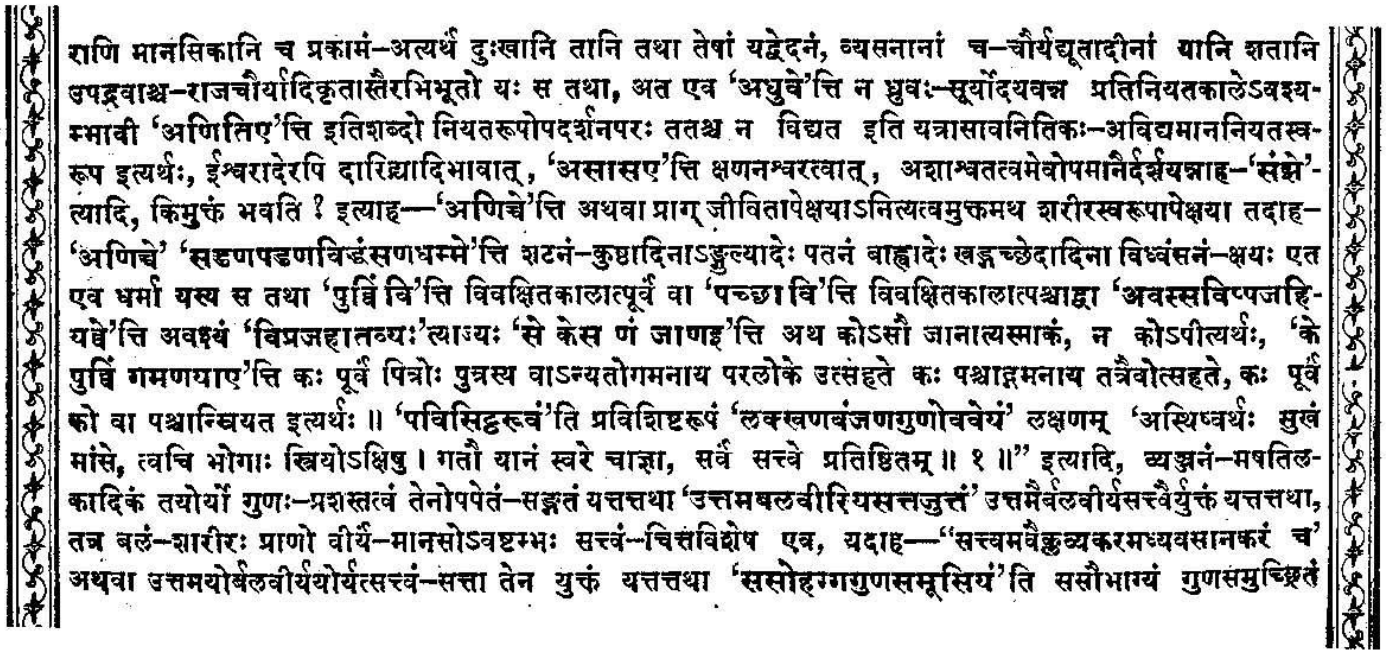
णात् ॥ 'इट्ठे'इत्यादि पूर्ववत् 'थेज्जे'त्ति स्थैर्यगुणयोगात्स्थैर्यः 'वेसासिए'त्ति विश्वासस्थानं 'संमए'त्ति संमतस्तत्कृतकार्याणां संमतत्वात् 'बहुमए'त्ति बहुमतः–बहुष्वपि कार्येषु बहु वा–अनल्पतयाऽस्तोकतया मतो बहुमतः 'अणुमए'त्ति कार्य्यव्याघातस्य पश्चादपि मतोऽनुमतः 'भंडकरण्डगसमाणे' भाण्डं–आभरणं करण्डकः–तद्राजनं तत्समानस्तस्यादेयत्वात् 'रयणे'त्ति रत्नं मनुष्यजातावुत्कृष्टत्वात् रजनो वा रञ्जक इत्यर्थः 'रयणभूए'त्ति चिन्तारत्नादिविकल्पः 'जीवियऊसविए'त्ति जीवितमुत्सूते–प्रसूत इति जीवितोत्सवः स एव जीवितोत्सविकः जीवितविषये वा उत्सवो–महः स इव यः स जीवितोत्सविकः जीवितोच्छ्वासिक इति पाठान्तरं 'हियया णंदिजणणे' मनःसमृद्धिकारकः 'उंबरे'त्यादि, उदुम्बरपुष्पं ह्यलभ्यं भवत्यतस्तेनोपमानं 'सवणयाए'त्ति श्रवणतायै श्रोतुमित्यर्थः 'किमंग पुण'त्ति किं पुनः अंगेत्यामन्त्रणे 'अच्छाहि ताव जाया ! जाव ताव अम्हे जीवामो'त्ति, इत्यत्राऽऽस्व तावद् हे ता ! यावद्वयं जीवाम इत्यैतावतैव विवक्षितसिद्धौ यत्पुनस्तावच्छब्दस्योच्चारणं तद्भाषामात्रमेवेति 'वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जम्मि निरयवक्खे'त्ति 'वड्ढिय'त्ति सप्तम्येकवचनलोपदर्शनाद्वर्द्धिते–पुत्रपौत्रादिभिर्वृद्धिमुपनीते कुलरूपो वंशो न वेणुरूपः कुलवंशः–सन्तानः स एव तन्तुर्दीर्घत्वसाधर्म्यात् कुलवंशतन्तुः स एव कार्यं–कृत्यं कुलवंशतन्तुकार्यं तत्र, अथवा वर्द्धितशब्दः कर्म्मधारयेण सम्बन्धनीयस्तत्र सति 'निरवकाङ्क्षः' निरपेक्षः सन् सकलप्रयोजनानाम् ॥ 'तहावि णं तं'ति तथैव नान्यथेत्यर्थः यदुक्तं 'अम्हेहिं कालगएहिं पवइहिसि' तदाश्रित्यासावाह—'एवं खलु'इत्यादि, एवं वक्ष्यमाणेन न्यायेन 'अणेगजाइजरामरणरोगसारीरमाणसए कामदुक्खवेयणवसणसओवद्दवाभिभूए'त्ति अनेकानि यानि जातिजरामरणरोगरूपाणि शारी-

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अनुमतिः सू ३८४

॥४६८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



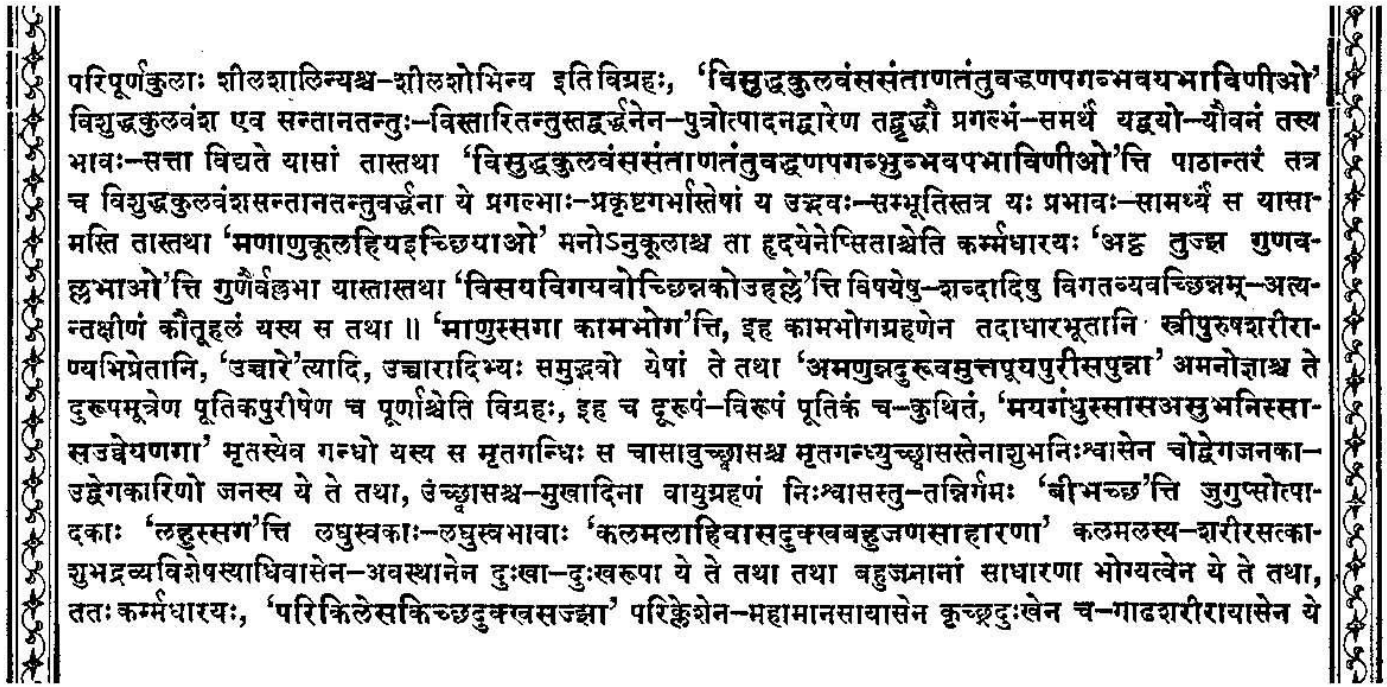
राणि मानसिकानि च प्रकामं–अत्यर्थं दुःखानि तानि तथा तेषां यद्वेदनं, व्यसनानां च–चौर्यद्यूतादीनां यानि शतानि उपद्रवाश्च–राजचौर्यादिकृतास्तैरभिभूतो यः स तथा, अत एव 'अधुवे'त्ति न ध्रुवः–सूर्योदयवन्न प्रतिनियतकालेऽवश्यम्भावी 'अणितिए'त्ति इतिशब्दो नियतरूपोपदर्शनपरः ततश्च न विद्यत इति यत्रासावनितिकः–अविद्यमाननियतस्वरूप इत्यर्थः, ईश्वरादेरपि दारिद्र्यादिभावात्, 'असासए'त्ति क्षणनश्वरत्वात्, अशाश्वतत्वमेवोपमानैर्दर्शयन्नाह–'संझे'त्यादि, किमुक्तं भवति ? इत्याह—'अणिच्चे'त्ति अथवा प्राग् जीवितापेक्षयाऽनित्यत्वमुक्तमथ शरीरस्वरूपापेक्षया तदाह–'अणिच्चे' 'सडणपडणविद्धंसणधम्मे'त्ति शटनं–कुष्ठादिनाऽङ्गुल्यादेः पतनं वाह्वादेः खड्गच्छेदादिना विध्वंसनं–क्षयः एत एव धर्मा यस्य स तथा 'पुव्विं वि'त्ति विवक्षितकालात्पूर्वं वा 'पच्छा वि'त्ति विवक्षितकालात्पश्चाद्वा 'अवस्सविप्पजहियव्वे'त्ति अवश्यं 'विप्रजहातव्यः'त्याज्यः 'से केस णं जाणइ'त्ति अथ कोऽसौ जानात्यस्माकं, न कोऽपीत्यर्थः, 'के पुव्विं गमणयाए'त्ति कः पूर्वं पित्रोः पुत्रस्य वाऽन्यतोगमनाय परलोके उत्सहते कः पश्चाद्गमनाय तत्रैवोत्सहते, कः पूर्वं को वा पश्चान्नियत इत्यर्थः ॥ 'पविसिट्ठरूवं'ति प्रविशिष्टरूपं 'लक्खणवंजणगुणोववेयं' लक्षणम् 'अस्थिष्वर्थः सुखं मांसे, त्वचि भोगाः स्त्रियोऽक्षिषु । गतौ यानं स्वरे चाज्ञा, सर्वं सत्त्वे प्रतिष्ठितम् ॥ १ ॥" इत्यादि, व्यञ्जनं–मषतिलकादिकं तयोर्यो गुणः–प्रशस्तत्वं तेनोपपेतं–सङ्गतं यत्तत्तथा 'उत्तमबलवीरियसत्तजुत्तं' उत्तमैर्बलवीर्यसत्त्वैर्युक्तं यत्तत्तथा, तत्र बलं–शारीरः प्राणो वीर्यं–मानसोऽवष्टम्भः सत्त्वं–चित्तविशेष एव, यदाह—"सत्त्वमवैक्लव्यकरमध्यवसानकरं च' अथवा उत्तमयोर्बलवीर्ययोर्यत्सत्त्वं–सत्ता तेन युक्तं यत्तत्तथा 'ससोहग्गगुणसमूसियं'ति ससौभाग्यं गुणसमुच्छ्रितं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चेत्यर्थः 'अभिजायमहक्खमं'ति अभिजातं–कुलीनं महती क्षमा यत्र तत्तथा, ततः कर्म्मधारयः, अथवाऽभिजातानां मध्ये महत्–पूज्यं क्षमं–समर्थं च यत्तत्तथा, 'निरुवहयउदत्तलट्ठपंचिंदियपडुं'ति निरुपहतानि–अविद्यमानवाताद्युपघातानि उदात्तानि–उत्तमवर्णादिगुणानि अत एव लष्टानि–मनोहराणि पञ्चापीन्द्रियाणि पटूनि च–स्वविषयग्रहणदक्षाणि यत्र तत्तथा 'विविहवाहिसयसंनिकेयं'ति इह संनिकेतं–स्थानम् 'अट्ठियकट्ठट्ठियं'ति अस्थिकान्येव काष्ठानि काष्ठिन्यसाधर्म्यात्तेभ्यो यदुत्थितं तत्तथा 'छिराण्हारुजालओणद्धसंपिणद्धं'ति शिरा–नाड्यः 'ण्हारु'त्ति स्नायवस्तासां यज्जालं–समूहस्तेनोपनद्धं संपिनद्धं–अत्यर्थं वेष्टितं यत्तत्तथा 'असुइसंकिलिट्ठं'ति अशुचिना–अमेध्येन सङ्क्लिष्टं–दुष्टं यत्तत्तथा 'अणिट्ठवियसव्वकालसंठप्पयं'ति अनिष्ठापिता–असमापिता सर्वकालं–सदा संस्थाप्यता–तत्कृत्यकरणं यस्य स तथा 'जराकुणिमजज्जरघरं व' जराकुणपश्च–जीर्णताप्रधानशवो जर्जरगृहं च–जीर्णगेहं समाहारद्वन्द्वाज्जराकुणपजर्जरगृहं, तदेवं किम् ? इत्याह—'सडणे'त्यादि ॥ 'विपुले'त्यादि, विपुलकुलाश्च ता बालिकाश्चेति विग्रहः कलाकुशलाश्च ताः सर्वकाललालिताश्चेति कलाकुशलसर्वकाललालिताः ताश्च ताः सुखोचिताश्चेति विग्रहः, मार्दवगुणयुक्तो निपुणो यो विनयोपचारस्तत्र पण्डितविचक्षणा–अत्यन्तविशारदा यास्तास्तथा ततः कर्म्मधारयः, 'मंजुलमियमहुरभणियविहसियविप्पेक्खियगइविलाससविट्ठियविसारयाओ' मञ्जुलं–कोमलं शब्दतः मितं–परिमितं मधुरं–अकठोरमर्थतो यद्भणितं तत्तथा तच्च विहसितं च विप्रेक्षितं च गतिश्च विलासश्च–नेत्रविकारो गतिविलासो वा–विलसन्ती गतिः विस्थितं च–विशिष्टा स्थितिरिति द्वन्द्वः एतेषु विशारदा यास्तास्तथा, 'अविकलकुलसीलसालिणीओ' अविकलकुलाः–ऋद्धि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



परिपूर्णकुलाः शीलशालिन्यश्च–शीलशोभिन्य इति विग्रहः, 'विसुद्धकुलवंससंताणतंतुवद्धणपगब्भवयभाविणीओ' विशुद्धकुलवंश एव सन्तानतन्तुः–विस्तारितन्तुस्तद्वर्द्धनेन–पुत्रोत्पादनद्वारेण तद्वृद्धौ प्रगल्भं–समर्थं यद्वयो–यौवनं तस्य भावः–सत्ता विद्यते यासां तास्तथा 'विसुद्धकुलवंससंताणतंतुवद्धणपगब्भुब्भवपभाविणीओ'त्ति पाठान्तरं तत्र च विशुद्धकुलवंशसन्तानतन्तुवर्द्धना ये प्रगल्भाः–प्रकृष्टगर्भास्तेषां य उद्भवः–सम्भूतिस्तत्र यः प्रभावः–सामर्थ्यं स यासामस्ति तास्तथा 'मणाणुकूलहियइच्छियाओ' मनोऽनुकूलाश्च ता हृदयेनेप्सिताश्चेति कर्म्मधारयः 'अट्ठ तुज्झ गुणवल्लभाओ'त्ति गुणैर्वल्लभा यास्तास्तथा 'विसयविगयवोच्छिन्नकोउहल्ले'त्ति विषयेषु–शब्दादिषु विगतव्यवच्छिन्नम्–अत्यन्तक्षीणं कौतूहलं यस्य स तथा ॥ 'माणुस्सगा कामभोग'त्ति, इह कामभोगग्रहणेन तदाधारभूतानि स्त्रीपुरुषशरीराण्यभिप्रेतानि, 'उच्चारे'त्यादि, उच्चारादिभ्यः समुद्भवो येषां ते तथा 'अमणुन्नदुरूवमुत्तपूयपुरीसपुन्ना' अमनोज्ञाश्च ते दुरूपमूत्रेण पूतिकपुरीषेण च पूर्णाश्चेति विग्रहः, इह च दूरूपं–विरूपं पूतिकं च–कुथितं, 'मयगंधुस्सासअसुभनिस्सासउव्वेयणगा' मृतस्येव गन्धो यस्य स मृतगन्धिः स चासावुच्छ्वासश्च मृतगन्ध्युच्छ्वासस्तेनाशुभनिःश्वासेन चोद्वेगजनकाउद्वेगकारिणो जनस्य ये ते तथा, उच्छ्वासश्च–मुखादिना वायुग्रहणं निःश्वासस्तु–तन्निर्गमः 'बीभच्छ'त्ति जुगुप्सोत्पादकाः 'लहुस्सग'त्ति लघुस्वकाः–लघुस्वभावाः 'कलमलाहिवासदुक्खबहुजणसाहारणा' कलमलस्य–शरीरसत्काशुभद्रव्यविशेषस्याधिवासेन–अवस्थानेन दुःखा–दुःखरूपा ये ते तथा तथा बहुजनानां साधारणा भोग्यत्वेन ये ते तथा, ततः कर्म्मधारयः, 'परिकिलेसकिच्छदुक्खसज्झा' परिक्लेशेन–महामानसायासेन कृच्छ्रदुःखेन च–गाढशरीरायासेन ये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८४]

दीप अनुक्रम [४६४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४७०॥

साध्यन्ते–वशीक्रियन्ते ये ते तथा 'कडुगफलविवागा' विपाकः पाकोऽपि स्यादतो विशेष्यते–फलरूपो विपाकः फलविपाकः कटुकः फलविपाको येषां ते तथा 'चुडलिव्व'त्ति प्रदीप्ततृणपूलिकेव 'अमुच्चमाणे'त्ति इह प्रथमाबहुवचनलोपो दृश्यः ॥ 'इमे य ते जाया ! अज्जयपज्जयपिउपज्जयागए' इदं च तव पुत्र ! आर्यः–पितामहः प्रार्यकः–पितुः पितामहः पितृप्रार्यकः–पितुः प्रपितामहस्तेभ्यः सकाशादागतं यत्तत्तथा, अथवाऽऽर्यकप्रार्यकपितॄणां यः पर्ययः–पर्यायः परिपाटिरित्यर्थः तेनागतं यत्तत्तथा 'विपुलधणकणग' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'रयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइए'त्ति तत्र 'विपुलधणे'ति प्रचुरं गवादि 'कणग'त्ति धान्यं 'रयण'त्ति कर्केतनादीनि 'मणि'त्ति चन्द्रकान्ताद्याः मौक्तिकानि शङ्खाश्च प्रतीताः 'सिलप्पवाल' त्ति विद्रुमाणि 'रत्तरयण'त्ति पद्मरागास्तान्यादिर्यस्य तत्तथा 'संतसारसावएज्जे'त्ति 'संत'त्ति विद्यमानं स्वायत्तमित्यर्थः 'सार'त्ति प्रधानं 'सावएज्ज'त्ति स्वापतेयं द्रव्यं, ततः कर्मधारयः, किम्भूतं तत् ? इत्याह—'अलाहि'त्ति अलं–पर्याप्तं भवति 'याव'त्ति यत्परिमाणम् 'आसत्तमाओ कुलवंसाओ'त्ति आसप्तमात् कुलवंश्यात्–कुललक्षणवंशे भवः कुलवंश्यस्तस्मात्, सप्तमं पुरुषं यावदित्यर्थः 'पकामं दाउ'न्ति अत्यर्थं दीनादिभ्यो दातुम्, एवं भोक्तुं–स्वयं भोगेन 'परिभाएउं'ति परिभाजयितुं दायादादीनां, प्रकामदानादिदु यावत् स्वापतेयमलं तावदस्तीति हृदयम् 'अग्गिसाहिए'इत्यादि, अग्न्यादेः साधारणमित्यर्थः 'दाइयसाहिए'त्ति दायादाः–पुत्रादयः, एतदेव द्रव्यस्यातिपारवश्यप्रतिपादनार्थं पर्यायान्तरेणाह—'अग्गिसामन्ने'इत्यादि, 'विसयाणुलोमाहिं'ति विषयाणां–शब्दादीनामनुलोमाः–तेषु प्रवृत्तिजनकत्वेनानुकूला विषयानुलोमास्ताभिः 'आघवणाहि य'त्ति

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अनुमतिः सू ३८४

॥४७०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

आख्यापनाभिः–सामान्यतो भणनैः 'पन्नवणाहि य'त्ति प्रज्ञापनाभिश्च–विशेषकथनैः 'सन्नवणाहि य'त्ति सञ्ज्ञापनाभिश्च–सम्बोधनाभिः 'विन्नवणाहि य'त्ति विज्ञापनाभिश्च–विज्ञप्तिकाभिः सप्रणयप्रार्थनैः, चकाराः समुच्चयार्थाः, 'आघवित्तए व'त्ति आख्यातुम्, एवमन्यान्यपि पूर्वपदेषु क्रमेणोत्तराणि योजनीयानि, 'विसयपडिकूलाहिं'ति विषयाणां प्रतिकूलाः–तत्परिभोगनिषेधकत्वेन प्रतिलोमा यास्तास्तथा ताभिः 'संजमभउव्वेयणकरीहिं'ति संयमाद्भयं–भीतिं उद्वेजनं च–चलनं कुर्वन्तीत्येवंशीला यास्तास्तथा ताभिः । 'सच्चे'त्ति सद्यो हितत्वात् 'अणुत्तरे'त्ति अविद्यमानप्रधानतरम्, अन्यदपि तथाविधं भविष्यतीत्याह—'केवल'त्ति केवलं–अद्वितीयं 'जहावस्सए'त्ति एवं चेदं तत्र सूत्रं–'पडिपुन्ने' अपवर्गप्रापकगुणैर्भृतं 'नेयाउए' नायकं मोक्षगमकमित्यर्थः नैयायिकं वा न्यायानपेतत्वात् 'संसुद्धे'सामस्त्येन शुद्धं 'सल्लगत्तणे' मायादिशल्यकर्त्तनं 'सिद्धिमग्गे' हितार्थप्राप्त्युपायः 'मुत्तिमग्गे' अहितविच्युतेरुपायः 'निज्जाणमग्गे' सिद्धिक्षेत्रगमनोपायः,'निव्वाणमग्गे' सकलकर्मविरहजसुखोपायः 'अवितहे' कालान्तरेऽप्यनपगततथाविधाभिमतप्रकारम् 'अविसंधि' प्रवाहेणाव्यवच्छिन्नं 'सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे' सकलाशर्मक्षयोपायः 'एत्थं ठिया जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिनिव्वायंति'त्ति 'अहीवेगंतदिट्ठीए' अहेरिव एकोऽन्तो–निश्चयो यस्याः सा (एकान्ता सा) दृष्टिः–बुद्धिर्यस्मिन् निर्ग्रन्थप्रवचने चारित्रपालनं प्रति तदेकान्तदृष्टिकम्, अहिपक्षे आमिषग्रहणैकतानतालक्षणा एकान्ता–एकनिश्चया दृष्टिः–दृग् यस्य स एकान्तदृष्टिकः 'खुरो इव एगंतधाराए'त्ति एकान्ता–उत्सर्गलक्षणैकविभागाश्रया धारेव धारा–क्रिया यत्र तत्तथा, 'लोहमये'त्यादि, लोहमया यवा इव चर्वयितव्याः, नैर्ग्रन्थं प्रवचनं दुष्करमिति हृदयं, 'वालुये'त्यादि,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३८४]

दीप अनुक्रम [४६४]

वालुकाकवल इव निरास्वादं वैषयिकसुखास्वादनापेक्षया, प्रवचनमिति, 'गंगे'त्यादि, गङ्गा वा–गङ्गेव महानदी प्रति-श्रोतसा गमनं प्रतिश्रोतोगमनं तद्भावस्तत्ता तया, प्रतिश्रोतोगमनेन गङ्गेव दुस्तरं प्रवचनमिति भावः, एवं समुद्रोपमं प्रवचनमपि, 'तिक्खं कमियव्वं'ति यदेतत् प्रवचनं तत्तीक्ष्णं खड्गादि क्रमितव्यं, यथा हि खड्गादि क्रमितुमशक्यमेव-मशक्यं प्रवचनमनुपालयितुमितिभावः 'गरुयं लंबेयव्वं'ति 'गुरुकं' महाशिलादिकं 'लम्बयितव्यम्' अवलम्बनीयं रज्ज्वादिनिबद्धं हस्तादिना धरणीयं प्रवचनं, गुरुकलम्बनमिव दुष्करं तदिति भावः, 'असी'त्यादि, असेर्धारा यस्मिन् व्रते आक्रमणीयतया तदसिधाराकं 'व्रतं' नियमः 'चरितव्यम्' आसेवितव्यं, यदेतत् प्रवचनानुपालनं तद्बहुदुष्कर-मित्यर्थः । अथ कस्मादेतस्य दुष्करत्वम् ?, अत्रोच्यते 'नो'इत्यादि, आधाकर्मिकमिति, एतद्वा 'अज्झोयरएइ वा' अध्य-वपूरक इति वा, तल्लक्षणं चेदं–स्वार्थं मूलाद्ग्रहणे कृते साध्वाद्यर्थमधिकतरकणक्षेपणमिति 'कंतारभत्तेइ व'त्ति कान्तारं–अरण्यं तत्र यद्भिक्षुकार्थं संस्क्रियते तत्कान्तारभक्तम्, एवमन्यान्यपि, 'भोत्तए व'त्ति भोक्तुं 'पायए व'त्ति पातुं वा 'नालं' न समर्थः शीताद्यधिसोढुमिति योगः, इह च क्वचित्प्राकृतत्वेन द्वितीयार्थे प्रथमा दृश्या, 'वाल'त्ति व्यालान्–श्वापदभुजगलक्षणान् 'रोगायंके'त्ति इह रोगाः–कुष्ठादयः आतङ्का–आशुघातिनः शूलादयः 'कीवाणं'ति मन्दसं-हननानां 'कायराणं'ति चित्तावष्टम्भवर्जितानाम् अत एव 'कापुरिसाणं'ति, पूर्वोक्तमेवार्थमन्वयव्यतिरेकाभ्यां पुन-राह—'दुरणु'इत्यादि, 'दुरनुचरं' दुःखासेव्यं प्रवचनमिति प्रकृतं 'धीरस्स'त्ति साहसिकस्य तस्यापि 'निश्चितस्य' कर्त्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

व्यमेवेदमितिकृतनिश्चयस्य तस्यापि 'व्यवसितस्य' उपायप्रवृत्तस्य 'एत्थं'ति प्रवचने लोके वा, दुष्करत्वं च ज्ञानोपदेशापेक्षयाऽपि स्यादत आह—'करणतया' करणेन संयमस्य अनुष्ठानेनेत्यर्थः ॥

तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! खत्तियकुंडग्गामं नगरं सब्भितरबाहिरियं आसियसंमज्जिओवलित्तं जहा उववाइए जाव पच्चप्पिणंति, तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया दोच्चंपि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! जमालिस्स खत्तियकुमारस्स महत्थं महग्घं महरिहं विपुलं निक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव जाव पच्चप्पिणंति, तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहं निसीयावेंति निसीयावेत्ता अट्ठसएणं सोवन्नियाणं कलसाणं एवं जहा रायप्पसेणइज्जे जाव अट्ठसएणं भोमेज्जाणं कलसाणं सव्विड्ढीए जाव रवेणं महया महया निक्खमणाभिसेगेणं अभिसिंचइ निक्खमणाभिसेगेणं अभिसिंचित्ता करयल जाव जएणं विजएणं वद्धावेन्ति, जएणं विजएणं वद्धावेत्ता एवं वयासी–भण जाया ! किं देमो! किंपयच्छामो? किणा वा ते अट्ठो ?, तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मापियरो एवं वयासी–इच्छामि णं अम्म ! ताओ ! कुत्तियावणाओ रयहरणं च पडिग्गहं च आणिउं कासवगं च सद्दाविउं, तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिए! सिरिघराओ तिन्नि सयसहस्साइं गहाय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३८५]

दीप अनुक्रम [४६५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४७२॥

दोहि सयसहस्सेहिं कुत्तियावणाओ रयहरणं च पडिग्गहं च आणेह सयसहस्सेणं कासवगं च सद्दावेह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा करयल जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सिरिघराओ तिन्नि सयसहस्साइं तहेव जाव कासवगं सद्दावेंति। तए णं से कासवए जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविए समाणे हट्ठे तुट्ठे ण्हाए कयबलिकम्मे जाव सरीरे जेणेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता करयल० जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पियरं जएणं विजएणं वद्धावेइ जएणं विजएणं वद्धावित्ता एवं वयासी–संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! जं मए करणिज्जं, तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तं कासवगं एवं वयासी–तुमं देवाणुप्पिया ! जमालिस्स खत्तियकुमारस्स परेणं जत्तेणं चउरंगुलवज्जे निक्खमणपयोगे अग्गकेसे पडिकप्पेहि, तए णं से कासवे जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे करयल जाव एवं सामी ! तहत्ताणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ २ त्ता सुरभिणा गंधोदएणं हत्थपादे पक्खालेइ सुरभिणा २ सुद्धाए अट्ठपडलाए पोत्तीए मुहं बंधइ मुहं बंधित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स परेणं जत्तेणं चउरंगुलवज्जे निक्खमणपयोगे अग्गकेसे कप्पइ। तए णं सा जमालस्स खत्तियकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडसाडएणं अग्गकेसे पडिच्छइ अग्गकेसे पडिच्छित्ता सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेइ सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेत्ता अग्गेहिं वरेहिं गंधेहिं मल्लेहिं अच्चेति २ सुद्धवत्थेणं बंधेइ सुद्धवत्थेणं बंधित्ता रयणकरंडगंसि

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अनुमतिः सू ३८४

॥४७२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

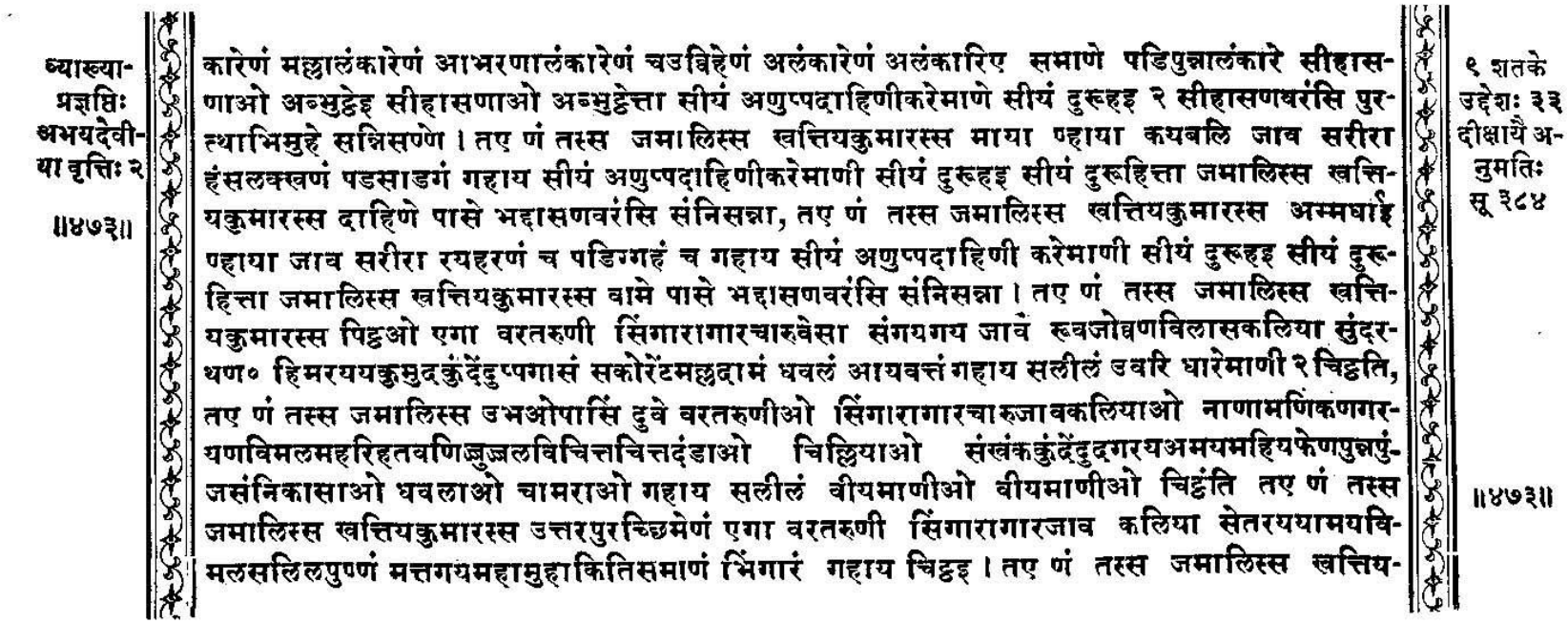
***अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांकने मुद्रण-दोष: संभाव्यते सू.३८५ स्थाने सू.३८४ लिखितं

जमाली-चरित्रं

पक्खिवति २ हारवारिधारासिंदुवारछिन्नमुत्तावलिप्पगासाइं सुयवियोगदूसहाइं अंसूइं विणिम्मुयमाणी २ एवं वयासी–एस णं अम्हं जमालिस्स खत्तियकुमारस्स बहूसु तिहीसु य पव्वणीसु य उस्सवेसु य जन्नेसु य छणेसु य अपच्छिमे दरिसणे भविस्सतीतिकट्टु ओसीसगमूले ठवेति, तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मापियरो दोच्चंपि उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेंति २ दोच्चंपि जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयापीयएहिं कलसेहिं नाणेंति सीयापीयएहिं कलसेहिं नाणेत्ता पम्हसुकुमालाए सुरभिए गंधकासाइए गायाइं लूहेंति सुरभिए गंधकासाइए गायाइं लूहेत्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपन्ति गायाइं अणुलिंपित्ता नासानिस्सासवायवोज्झं चक्खुहरं वन्नफरिसजुत्तं हयलालापेलवातिरेगं धवलं कणगखचियंतकम्मं महरिहं हंसलक्खणपडसाडगं परिहिंति २ हारं पिणद्धेंति २ अद्धहारं पिणद्धेंति २ एवं जहा सूरियाभस्स अलंकारो तहेव जाव चित्तं रयणसंकडुक्कडं मउडं पिणद्धंति, किं बहुणा ?, गंथिमवेढिमपूरिमसंघातिमेणं चउव्विहेणं मल्लेणं कप्परुक्खगं पिव अलंकियविभूसियं करेंति। तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अणेगखंभसयसन्निविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियागं जहा रायप्पसेणइज्जे विमाणवन्नओ जाव मणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं पुरिससहस्सवाहणीयं सीयं उवट्ठवेह उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति । तए णं से जमाली खत्तियकुमारे केसालंकारेणं वत्थालं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४७३॥

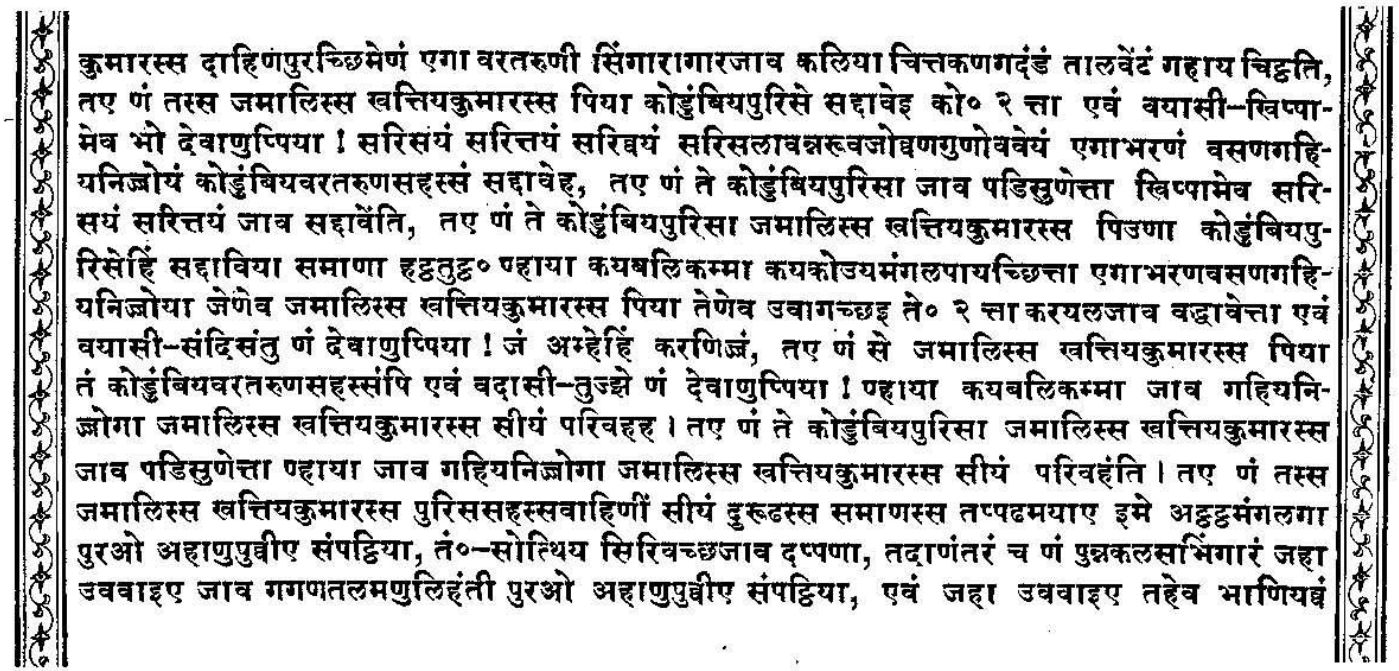
कारेणं मल्लालंकारेणं आभरणालंकारेणं चउव्विहेणं अलंकारेणं अलंकारिए समाणे पडिपुन्नालंकारे सीहास-णाओ अब्भुट्ठेइ सीहासणाओ अब्भुट्ठेत्ता सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणे सीयं दुरूहइ २ सीहासणवरंसि पुर-त्थाभिमुहे सन्निसण्णे । तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया ण्हाया कयबलि जाव सरीरा हंसलक्खणं पडसाडगं गहाय सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणी सीयं दुरूहइ सीयं दुरूहित्ता जमालिस्स खत्ति-यकुमारस्स दाहिणे पासे भद्दासणवरंसि संनिसन्ना, तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मधाई ण्हाया जाव सरीरा रयहरणं च पडिग्गहं च गहाय सीयं अणुप्पदाहिणी करेमाणी सीयं दुरूहइ सीयं दुरू-हित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स वामे पासे भद्दासणवरंसि संनिसन्ना । तए णं तस्स जमालिस्स खत्ति-यकुमारस्स पिट्ठओ एगा वरतरुणी सिंगारागारचारुवेसा संगयगय जावं रूवजोव्वणविलासकलिया सुंदर-थण० हिमरययकुमुदकुंदेंदुप्पगासं सकोरेंटमल्लदामं धवलं आयवत्तं गहाय सलीलं उवरि धारेमाणी २ चिट्ठति, तए णं तस्स जमालिस्स उभओपासिं दुवे वरतरुणीओ सिंगारागारचारुजावकलियाओ नाणामणिकणगर-यणविमलमहरिहतवणिज्जुज्जलविचित्तचित्तदंडाओ चिल्लियाओ संखंककुंदेंदुदगरयअमयमहियफेणपुन्नपुं-जसंनिकासाओ धवलाओ चामराओ गहाय सलीलं वीयमाणीओ वीयमाणीओ चिट्ठंति तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स उत्तरपुरच्छिमेणं एगा वरतरुणी सिंगारागारजाव कलिया सेतरययामयवि-मलसलिलपुण्णं मत्तगयमहामुहाकितिसमाणं भिंगारं गहाय चिट्ठइ । तए णं तस्स जमालिस्स खत्तिय-

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अ-नुमतिः सू ३८४

॥४७३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



कुमारस्स दाहिणपुरच्छिमेणं एगा वरतरुणी सिंगारागारजाव कलिया चित्तकणगदंडं तालवेंटं गहाय चिट्ठति, तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ को० २ त्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सरिसयं सरित्तयं सरिव्वयं सरिसलावन्नरूवजोव्वणगुणोववेयं एगाभरणं वसणगहियनिज्जोयं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं सद्दावेह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सरिसयं सरित्तयं जाव सद्दावेंति, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठ० ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता एगाभरणवसणगहियनिज्जोया जेणेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तेणेव उवागच्छइ ते० २ त्ता करयलजाव वद्धावेत्ता एवं वयासी–संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! जं अम्हेहिं करणिज्जं, तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तं कोडुंबियवरतरुणसहस्संपि एवं वदासी–तुज्झे णं देवाणुप्पिया ! ण्हाया कयबलिकम्मा जाव गहियनिज्जोगा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयं परिवहह । तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स जाव पडिसुणेत्ता ण्हाया जाव गहियनिज्जोगा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयं परिवहंति । तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणीं सीयं दुरूढस्स समाणस्स तप्पढमयाए इमे अट्ठट्ठमंगलगा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तं०–सोत्थिय सिरिवच्छजाव दप्पणा, तदाणंतरं च णं पुन्नकलसभिंगारं जहा उववाइए जाव गगणतलमणुलिहंती पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, एवं जहा उववाइए तहेव भाणियव्वं

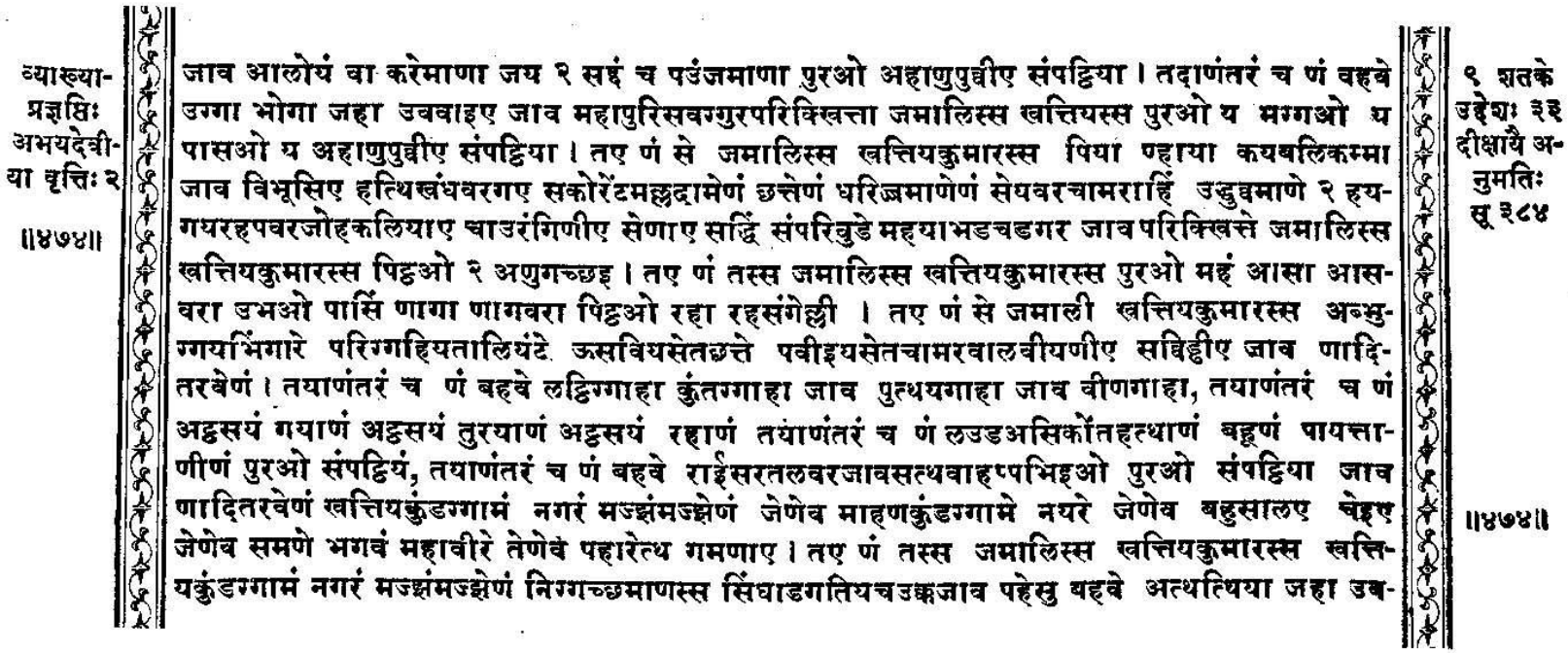
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८५]

दीप अनुक्रम [४६५]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४७४॥

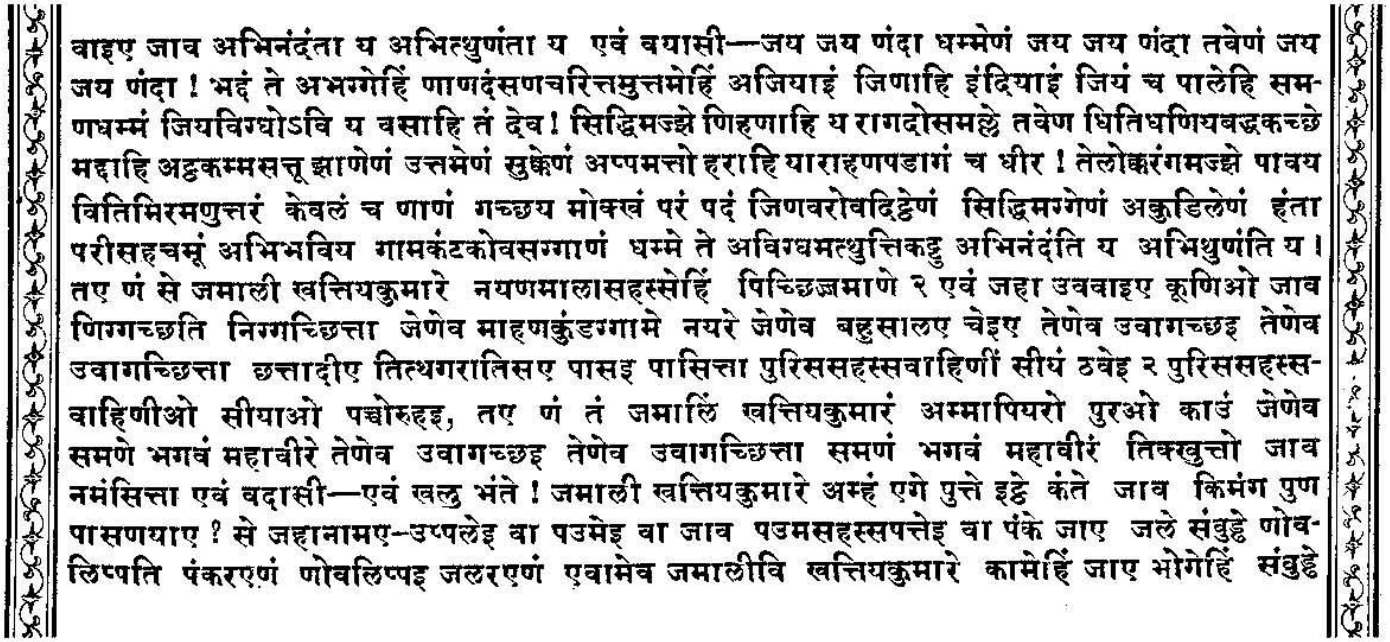
जाव आलोयं वा करेमाणा जय २ सद्दं च पउंजमाणा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया । तदाणंतरं च णं बहवे उग्गा भोगा जहा उववाइए जाव महापुरिसवग्गुरपरिक्खित्ता जमालिस्स खत्तियस्स पुरओ य मग्गओ य पासओ य अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया । तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया ण्हाया कयबलिकम्मा जाव विभूसिए हत्थिखंधवरगए सकोरेंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणे २ हय-गयरहपवरजोहकलियाए चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे महयाभडचडगर जाव परिक्खित्ते जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिट्ठओ २ अणुगच्छइ । तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरओ महं आसा आस-वरा उभओ पासिं णागा णागवरा पिट्ठओ रहा रहसंगेल्ली । तए णं से जमाली खत्तियकुमारस्स अब्भु-ग्गयभिंगारे परिग्गहियतालियंटे ऊसवियसेयछत्ते पवीइयसेयचामरवालवीयणीए सविड्ढीए जाव णादि-तरवेणं । तयाणंतरं च णं बहवे लट्ठिग्गाहा कुंतग्गाहा जाव पुत्थयगाहा जाव वीणगाहा, तयाणंतरं च णं अट्ठसयं गयाणं अट्ठसयं तुरयाणं अट्ठसयं रहाणं तयाणंतरं च णं लउडअसिकोंतहत्थाणं बहूणं पायत्ता-णीणं पुरओ संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं बहवे राईसरतलवरजावसत्थवाहप्पभिइओ पुरओ संपट्ठिया जाव णादितरवेणं खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव माहणकुंडग्गामे नयरे जेणेव बहुसालए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए । तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स खत्ति-यकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छमाणस्स सिंघाडगतियचउक्कजाव पहेसु बहवे अत्थत्थिया जहा उव-

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अ-नुमतिः सू ३८४

॥४७४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



वाइए जाव अभिनंदंता य अभित्थुणंता य एवं वयासी—जय जय णंदा धम्मेणं जय जय णंदा तवेणं जय जय णंदा ! भद्दं ते अभग्गेहिं णाणदंसणचरित्तमुत्तमेहिं अजियाइं जिणाहि इंदियाइं जियं च पालेहि समणधम्मं जियविग्घोऽवि य वसाहि तं देव ! सिद्धिमज्झे णिहणाहि य रागदोसमल्ले तवेण धितिधणियबद्धकच्छे मद्दाहि अट्ठकम्मसत्तू झाणेणं उत्तमेणं सुक्केणं अप्पमत्तो हराहि याराहणपडागं च धीर ! तेलोक्करंगमज्झे पावय वितिमिरमणुत्तरं केवलं च णाणं गच्छय मोक्खं परं पदं जिणवरोवदिट्ठेणं सिद्धिमग्गेणं अकुडिलेणं हंता परीसहचमूं अभिभविय गामकंटकोवसग्गाणं धम्मे ते अविग्घमत्थुत्तिकट्टु अभिनंदंति य अभिथुणंति य। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे नयणमालासहस्सेहिं पिच्छिज्जमाणे २ एवं जहा उववाइए कूणिओ जाव णिग्गच्छति निग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे नयरे जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता छत्तादीए तित्थगरातिसए पासइ पासित्ता पुरिससहस्सवाहिणीं सीयं ठवेइ २ पुरिससहस्सवाहिणीओ सीयाओ पच्चोरुहइ, तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो पुरओ काउं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वदासी—एवं खलु भंते ! जमाली खत्तियकुमारे अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते जाव किमंग पुण पासणयाए ? से जहानामए–उप्पलेइ वा पउमेइ वा जाव पउमसहस्सपत्तेइ वा पंके जाए जले संवुड्ढे णोवलिप्पति पंकरएणं णोवलिप्पइ जलरएणं एवामेव जमालीवि खत्तियकुमारे कामेहिं जाए भोगेहिं संवुड्ढे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८५]

दीप अनुक्रम [४६५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥४७५॥

णोवलिप्पइ कामरएणं णोवलिप्पइ भोगरएणं णोवलिप्पइ मित्तणाइनियगसयणसंबंधिपरिजणेणं, एस णं देवाणुप्पिया ! संसारभउव्विग्गे भीए जम्मणमरणेणं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएइ, तं एयन्नं देवाणुप्पियाणं अम्हे भिक्खं दलयामो, पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया ! सीसभिक्खं, तए णं स० ३ तं जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी–अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं। तए णं से जमाली खत्तियकुमारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमइ २ सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ, तते णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडसाडएणं आभरणमल्लालंकारं पडिच्छति पडिच्छित्ता हारवारिजाव विणिम्मुयमाणा वि० २ जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी—घडियव्वं जाया ! जइयव्वं जाया ! परिक्कमियव्वं जाया ! अस्सिं च णं अट्ठे णो पमाएतव्वंतिकट्टु जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मापियरो समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया। तए णं से जमाली खत्तिए सयमेय पंचमुट्ठियं लोयं करेति २ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता एवं जहा उसभदत्तो तहेव पव्वइओ नवरं पंचहिं पुरिससएहिं सद्धिं तहेव जाव सव्वं सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ सामाइयमा० अहिज्जेत्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमजावमासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ (सूत्रं ३८५)

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अनुमतिः सू ३८५

॥४७५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

'सब्भिंतरबाहिरियं'ति सहाभ्यन्तरेण बाहिरिकया च–बहिर्भागेन यत्तत्तथा 'आसियसम्मज्जिओवलित्तं'ति आसिक्तमुदकेन संमार्जितं प्रमार्जनिकादिना उपलिप्तं च गोमयादिना यत्तत्तथा 'जहा उववाइए'त्ति एवं चैतत्तत्र–'सिंघाडगतियचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु आसित्तसित्तसुइयसंमट्ठरत्थंतरावणवीहियं' आसिक्तानि–ईषत्सिक्तानि सिक्तानि च–तदन्यान्यत एव शुचिकानि–पवित्राणि संमृष्टानि कचवरापनयनेन रथ्यान्तराणि–रथ्यामध्यानि आपणवीथयश्च–हट्टमार्गा यत्र तत्तथा 'मंचाइमंचकलियं णाणाविहरागभूसियझयपडागाइपडागमंडियं' नानाविधरागैरुच्छ्रितैर्ध्वजैः–चक्रसिंहादिलाञ्छनोपेतैः पताकाभिश्च–तदितराभिरतिपताकाभिश्च–पताकोपरिवर्त्तिनीभिर्मण्डितं यत्तत्तथा इत्यादि 'महत्थं'ति महाप्रयोजनं 'महग्घं'ति महामूल्यं 'महरिहं'ति महार्ह–महापूज्यं महतां वा योग्यं 'निक्खमणाभिसेयं'ति निष्क्रमणाभिषेकसामग्रीम् 'एवं जहा रायप्पसेणइज्जे'त्ति एवं चैतत्तत्र–'अट्ठसएणं सुवन्नमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं रूप्पमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं मणिमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं सुवन्नरूप्पमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं सुवन्नमणिमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं रुप्पमणिमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं सुवन्नरुप्पमणिमयाणं कलसाणं अट्ठसएणं 'भोमेज्जाणं'ति मृन्मयानां 'सव्विड्ढीए'त्ति सर्वर्द्ध्या–समस्तछत्रादिराजचिह्नरूपया, यावत्करणादिदं दृश्यं–'सव्वजुईए'सर्वद्युत्या–आभरणादिसम्बन्धिन्या सर्वयुक्तया वा–उचितेष्टवस्तुघटनालक्षणया 'सव्वबलेणं' सर्वसैन्येन 'सव्वसमुदएणं' पौरादिमीलनेन 'सव्वायरेणं' सर्वोचितकृत्यकरणरूपेण 'सव्वविभूईए' सर्वसम्पदा 'सव्वविभूसाए' समस्तशोभया 'सव्वसंभमेणं' प्रमोदकृतौत्सुक्येन 'सव्वपुप्फगंधमल्लालंकारेणं सव्वतुडियसद्दसंनिनाएणं' सर्वतूर्यशब्दानां मीलने यः सङ्गतो निनादो–महाघोषः स तथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८५]

दीप अनुक्रम [४६५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४७६॥

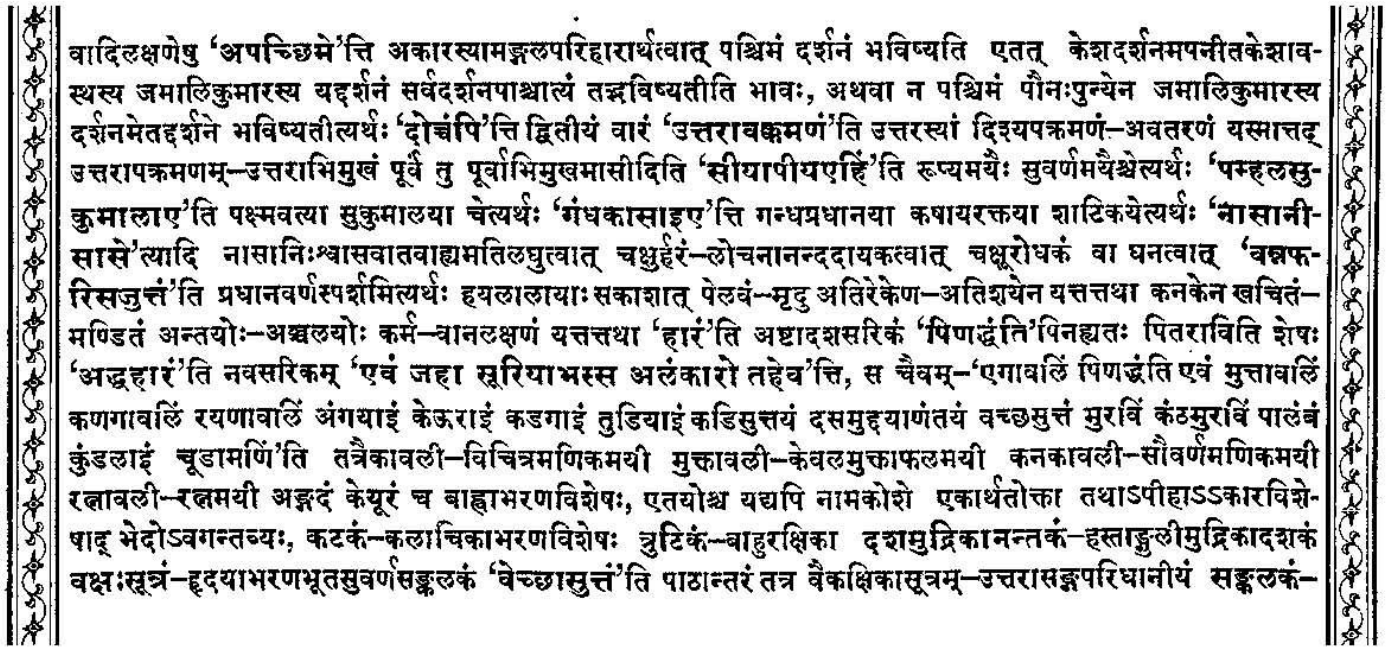
तेन, अल्पेष्वपि ऋद्ध्यादिषु सर्वशब्दप्रवृत्तिर्दृष्टेत्यत आह–'महया इड्ढीए महया जुईए महया बलेणं महया समुदएणं' 'महया वरतुडियजमगसमगप्पवाइएणं' यमकसमकं युगपदित्यर्थः 'संखपणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुरय-मुइंगदुंदुहिनिग्घोसनाइय'त्ति पणवो–भाण्डपटहः भेरी–महती ढक्का महाकाहला वा झल्लरी–अल्पोच्छ्रया महामुखा चर्म्मावनद्धा खरमुखी–काहला मुरजो–महामर्दलः मृदङ्गो–मर्दलः दुन्दुभी–ढक्काविशेष एव ततः शङ्खादीनां निर्घोषो महाप्रयत्नोत्पादितः शब्दो नादितं तु–ध्वनिमात्रं एतद्रूपलक्षणो यो रवः स तथा तेन॥ 'किं देमो'त्ति किं दद्मो भवदभिमतेभ्यः 'किं पयच्छामो'त्ति भवते एव, अथवा दद्मः सामान्यतः प्रयच्छामः प्रकर्षेणेति विशेषः 'किणा व'त्ति केन वा 'कुत्ति-यावणाओ'त्ति कुत्रिकं–स्वर्गमर्त्यपातालरूपं भूत्रयं तत्सम्भवि वस्त्वपि कुत्रिकं तत्सम्पादको य आपणो–हट्टो देवाधिष्ठि-तत्वेनासौ कुत्रिकापणस्तस्मात् 'कासवगं'ति नापितं 'सिरिघराओ'त्ति भाण्डागारात् 'अग्गकेसे'त्ति अग्रभूताः केशा अग्रकेशास्तान् 'हंसलक्खणेणं' शुक्लेन हंसचिह्नेन वा 'पडसाडएणं'ति पटरूपः शाटकः पटशाटकः, शाटको हि शटन-कारकोऽप्युच्यत इति तद्व्यवच्छेदार्थं पटग्रहणम्, अथवा शाटको वस्त्रमात्रं स च पृथुलः पटोऽभिधीयत इति पटशाटकः, 'अग्गेहिं'ति 'अग्र्यैः' प्रधानैः, एतदेव व्याचष्टे–'वरेहिं'ति 'हारवारिधारासिंदुवारच्छिन्नमुत्तावलिप्पगासाइं'ति इह 'सिंदुवार'त्ति वृक्षविशेषो निर्गुण्डीति केचित् तत्कुसुमानि सिन्दुवाराणि तानि च शुक्लानीति 'एस णं'ति एतत्, अग्रकेशवस्तु अथवैतद्दर्शनमिति योगो णमित्यलङ्कारे 'तिहीसु य'त्ति मदनत्रयोदश्यादितिथिषु 'पव्वणीसु य'त्ति पर्व्वणीषु च कार्त्तिक्यादिषु 'उस्सवेसु य'त्ति प्रियसङ्गमादिमहेषु 'जन्नेसु य'त्ति नागादिपूजासु 'छणेसु य'त्ति इन्द्रोत्स-

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अ-नुमतिः सू ३८५

॥४७६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



वादिलक्षणेषु 'अपच्छिमे'त्ति अकारस्यामङ्गलपरिहारार्थत्वात् पश्चिमं दर्शनं भविष्यति एतत् केशदर्शनमपनीतकेशावस्थस्य जमालिकुमारस्य यद्दर्शनं सर्वदर्शनपाश्चात्यं तद्भविष्यतीति भावः, अथवा न पश्चिमं पौनःपुन्येन जमालिकुमारस्य दर्शनमेतद्दर्शने भविष्यतीत्यर्थः 'दोच्चंपि'त्ति द्वितीयं वारं 'उत्तरावक्कमणं'ति उत्तरस्यां दिश्यपक्रमणं–अवतरणं यस्मात्तद् उत्तरापक्रमणम्–उत्तराभिमुखं पूर्वं तु पूर्वाभिमुखमासीदिति 'सीयापीयएहिं'ति रूप्यमयैः सुवर्णमयैश्चेत्यर्थः 'पम्हलसुकुमालाए'ति पक्ष्मवत्या सुकुमालया चेत्यर्थः 'गंधकासाइए'त्ति गन्धप्रधानया कषायरक्तया शाटिकयेत्यर्थः 'नासानीसासे'त्यादि नासानिःश्वासवातवाह्यमतिलघुत्वात् चक्षुर्हरं–लोचनानन्ददायकत्वात् चक्षूरोधकं वा घनत्वात् 'वन्नफरिसजुत्तं'ति प्रधानवर्णस्पर्शमित्यर्थः हयलालायाः सकाशात् पेलवं–मृदु अतिरेकेण–अतिशयेन यत्तत्तथा कनकेन खचितं–मण्डितं अन्तयोः–अञ्चलयोः कर्म–वानलक्षणं यत्तत्तथा 'हारं'ति अष्टादशसरिकं 'पिणद्धंति'पिनह्यतः पितराविति शेषः 'अद्धहारं'ति नवसरिकम् 'एवं जहा सूरियाभस्स अलंकारो तहेव'त्ति, स चैवम्–'एगावलिं पिणद्धंति एवं मुत्तावलिं कणगावलिं रयणावलिं अंगयाइं केऊराइं कडगाइं तुडियाइं कडिसुत्तयं दसमुद्दयाणंतयं वच्छसुत्तं मुरविं कंठमुरविं पालंबं कुंडलाइं चूडामणिं'ति तत्रैकावली–विचित्रमणिकमयी मुक्तावली–केवलमुक्ताफलमयी कनकावली–सौवर्णमणिकमयी रत्नावली–रत्नमयी अङ्गदं केयूरं च बाह्याभरणविशेषः, एतयोश्च यद्यपि नामकोशे एकार्थतोक्ता तथाऽपीहाऽऽकारविशेषाद् भेदोऽवगन्तव्यः, कटकं–कलाचिकाभरणविशेषः त्रुटिकं–बाहुरक्षिका दशमुद्रिकानन्तकं–हस्ताङ्गुलीमुद्रिकादशकं वक्षःसूत्रं–हृदयाभरणभूतसुवर्णसङ्कलकं 'वेच्छासुत्तं'ति पाठान्तरं तत्र वैकक्षिकासूत्रम्–उत्तरासङ्गपरिधानीयं सङ्कलकं–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८५]

दीप अनुक्रम [४६५]

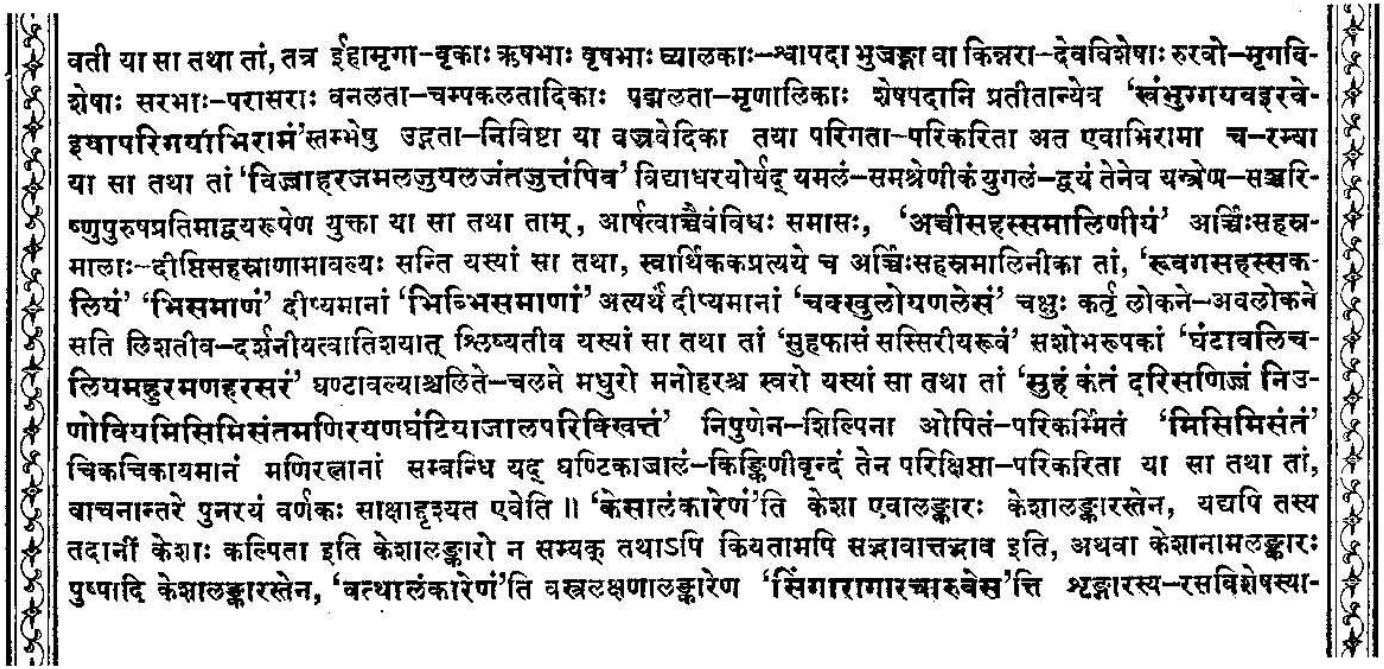
मुरवीमुरजाकारमाभरणं कण्ठमुरवी–तदेव कण्ठासन्नतरावस्थानं प्रालम्बं–झुम्बनकं, वाचनान्तरे त्वयमलङ्कारवर्णकः साक्षाल्लिखित एव दृश्यत इति, 'रयणसंकडुक्कडं'ति रत्नसङ्कटं च तदुत्कटं च–उत्कृष्टं रत्नसङ्कटोत्कटं 'गंथिमवेढिमपूरिमसंघाइमेणं'ति इह ग्रन्थिमं–ग्रन्थननिर्वृत्तं सूत्रग्रथितमालादि वेष्टिमं–वेष्टितनिष्पन्नं पुष्पलम्बूसकादि पूरिमं–येन वंशशलाकामयपञ्जरकादि कूर्चादि वा पूर्यते सङ्घातिमं तु यत्परस्परतो नालसङ्घातनेन सङ्घात्यते 'अलंकियविभूसियं'ति अलङ्कृतश्चासौ कृतालङ्कारोऽत एव विभूषितश्च–सञ्जातविभूषश्चेत्यलङ्कृतविभूषितस्तं, वाचनान्तरे पुनरिदमधिकं 'दद्दरमलयसुगंधिगंधिएहिं गायाइं भुक्कुडेंति'त्ति दृश्यते, तत्र च दर्दरमलयाभिधानपर्वतयोः सम्बन्धिनस्तदुद्भूतचन्दनादिद्रव्यजत्वेन ये सुगन्धयो गन्धिका–गन्धावासास्ते तथा, अन्ये त्वाहुः–दर्दरः–चीवरावनद्धं कुण्डिकादिभाजनमुखं तेन गालितास्तत्र पक्का वा ये 'मलय'त्ति मलयोद्भवत्वेन मलयजस्य–श्रीखण्डस्य सम्बन्धिनः सुगन्धयो गन्धिका–गन्धास्ते तथा तैर्गात्राणि 'भुक्कुडेंति'त्ति उद्धूलयन्ति ॥ 'अणेगखंभसयसन्निविट्ठं'ति अनेकेषु स्तम्भशतेषु सन्निविष्टा या सा तथा अनेकानि वा स्तम्भशतानि संनिविष्टानि यस्यां सा तथा तां 'लीलट्ठियसालिभंजियागं'ति लीलास्थिताः शालभञ्जिकाः–पुत्रिकाविशेषा यत्र सा तथा तां, वाचनान्तरे पुनरिदमेवं दृश्यते–'अब्भुग्गयसुकयवइरवेइयतोरणवररइयलीलट्ठियसालिभंजियागं'ति तत्र चाभ्युद्गते–उच्छ्रिते सुकृतबज्रवेदिकायाः सम्बन्धिनि तोरणवरे रचिता लीलास्थिता शालभञ्जिका यस्यां सा तथा तां 'जहा रायप्पसेणइज्जे विमाणवन्नओ'त्ति एवमस्या अपि वाच्य इत्यर्थः, स चायम्–'ईहामियउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं' ईहामृगादिभिर्भक्तिभिः–विच्छित्तिभिश्चित्रा–रचित्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८५]

दीप अनुक्रम [४६५]



वती या सा तथा तां, तत्र ईहामृगा–वृकाः ऋषभाः वृषभाः व्यालकाः–श्वापदा भुजङ्गा वा किन्नरा–देवविशेषाः रुरवो–मृगविशेषाः सरभाः–परासराः वनलता–चम्पकलतादिकाः पद्मलता–मृणालिकाः शेषपदानि प्रतीतान्येव 'खंभुग्गयवइरवेइयापरिगयाभिरामं'स्तम्भेषु उद्गता–निविष्टा या वज्रवेदिका तथा परिगता–परिकरिता अत एवाभिरामा च–रम्या या सा तथा तां 'विज्जाहरजमलजुयलजंतजुत्तंपिव' विद्याधरयोर्यद् यमलं–समश्रेणीकं युगलं–द्वयं तेनेव यन्त्रेण–सञ्चरिष्णुपुरुषप्रतिमाद्वयरूपेण युक्ता या सा तथा ताम्, आर्षत्वाच्चैवंविधः समासः, 'अच्चीसहस्समालिणीयं' अर्चिःसहस्रमालाः–दीप्तिसहस्राणामावल्यः सन्ति यस्यां सा तथा, स्वार्थिककप्रत्यये च अर्चिःसहस्रमालिनीका तां, 'रूवगसहस्सकलियं' 'भिसमाणं' दीप्यमानां 'भिब्भिसमाणां' अत्यर्थं दीप्यमानां 'चक्खुलोयणलेसं' चक्षुः कर्तृ लोकने–अवलोकने सति लिशतीव–दर्शनीयत्वातिशयात् श्लिष्यतीव यस्यां सा तथा तां 'सुहफासं सस्सिरीयरूवं' सशोभरूपकां 'घंटावलिचलियमहुरमणहरसरं' घण्टावल्याश्चलिते–चलने मधुरो मनोहरश्च स्वरो यस्यां सा तथा तां 'सुहं कंतं दरिसणिज्जं निउणोवियमिसिमिसिंतमणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं' निपुणेन–शिल्पिना ओपितं–परिकर्मितं 'मिसिमिसिंतं' चिकचिकायमानं मणिरत्नानां सम्बन्धि यद् घण्टिकाजालं–किङ्किणीवृन्दं तेन परिक्षिप्ता–परिकरिता या सा तथा तां, वाचनान्तरे पुनरयं वर्णकः साक्षादृश्यत एवेति ॥ 'केसालंकारेणं'ति केशा एवालङ्कारः केशालङ्कारस्तेन, यद्यपि तस्य तदानीं केशाः कल्पिता इति केशालङ्कारो न सम्यक् तथाऽपि कियतामपि सद्भावात्तद्भाव इति, अथवा केशानामलङ्कारः पुष्पादि केशालङ्कारस्तेन, 'वत्थालंकारेणं'ति वस्त्रलक्षणालङ्कारेण 'सिंगारागारचारुवेस'त्ति शृङ्गारस्य–रसविशेषस्या-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८५]

दीप अनुक्रम [४६५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४७८॥

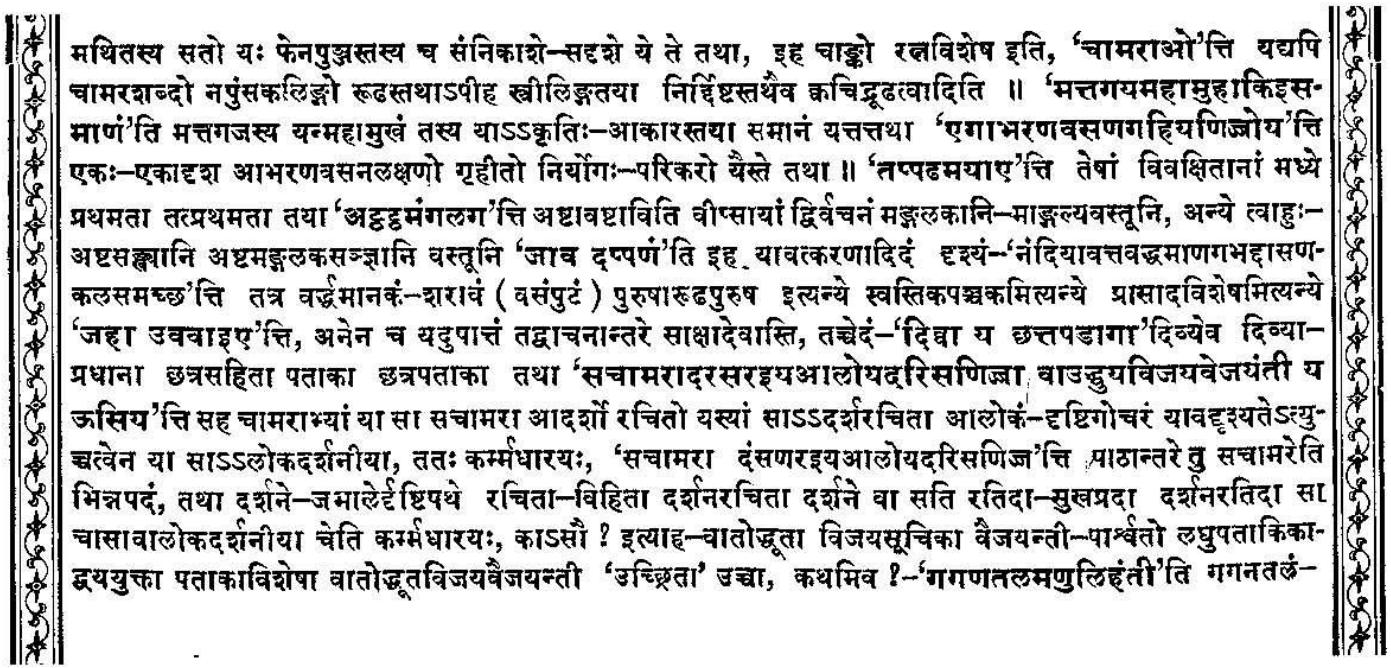
गारमिव यश्चारुश्च वेषो–नेपथ्यं यस्याः सा तथा, अथवा शृङ्गारप्रधान आकारश्चारुश्च वेषो यस्याः सा तथा 'संगते'त्यादौ यावत्करणादेवं दृश्यं–'संगयगयहसियभणियचिट्ठियविलाससंलावुल्लावनिउणजुत्तोवयारकुसल'त्ति तत्र च सङ्गतेषु गतादिषु निपुणा युक्तेषूपचारेषु कुशला च या सा तथा, इह च विलासो नेत्रविकारो, यदाह–"हावो मुखविकारः स्याद्भावश्चित्तसमुद्भवः । विलासो नेत्रजो ज्ञेयो, विभ्रमो भ्रूसमुद्भवः ॥ १ ॥" इति, तथा संलापो–मिथोभाषा उल्लापस्तु काकुवर्णनं, यदाह–"अनुलापो मुहुर्भाषा, प्रलापोऽनर्थकं वचः । काक्वा वर्णनमुल्लापः, संलापो भाषणं मिथः ॥ १ ॥" इति, 'रूवजोव्वणविलासकलिय'त्ति इह विलासशब्देन स्थानासनगमनादीनां सुश्लिष्टो यो विशेषोऽसावुच्यते, यदाह–"स्थानासनगमनानां हस्तभ्रूनेत्रकर्म्मणां चैव । उत्पद्यते विशेषो यः श्लिष्टोऽसौ विलासः स्यात् ॥ १ ॥" 'सुन्दरथण'इत्यनेन 'सुंदरथणजहणवयणकरचरणणयणलावण्णरूवजोव्वणगुणोववेय'त्ति सूचितं, तत्र च सुन्दरा ये स्तनादयोऽर्थास्तैरुपेता या सा तथा, लावण्यं चेह स्पृहणीयता रूपं–आकृतिर्यौवनं–तारुण्यं गुणा–मृदुस्वरत्वादयः 'हिमरययकुमुयकुंदेंदुप्पगासं'ति हिमं च रजतं च कुमुदं च कुन्दश्चेन्दुश्चेति द्वन्द्वस्तेषामिव प्रकाशो यस्य तत्तथा 'सकोरेंटमल्लदामं'ति सकोरेण्टकानि–कोरण्टपुष्पगुच्छयुक्तानि माल्यदामानि–पुष्पमाला यत्र तत्तथा 'नाणामणिकणगरयणविमलमहरिहतवणिज्जउज्जलविचित्तदंडाओ'ति नानामणिकनकरत्नानां विमलस्य महार्हस्य महार्घस्य वा तपनीयस्य च सत्कावुज्ज्वलौ विचित्रौ दण्डौ ययोस्ते तथा, अथात्र कनकतपनीययोः को विशेषः ?, उच्यते, कनकं पीतं तपनीयं रक्तमिति, 'चिल्लियाओ'त्ति दीप्यमाने लीने इत्येके 'संखंककुंददगरयअमयमहियफेणपुंजसंनिगासाओ'त्ति शङ्खाङ्ककुन्ददकरजसाममृतस्य

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षार्थै अनुमतिः सू ३८५

॥४७८॥

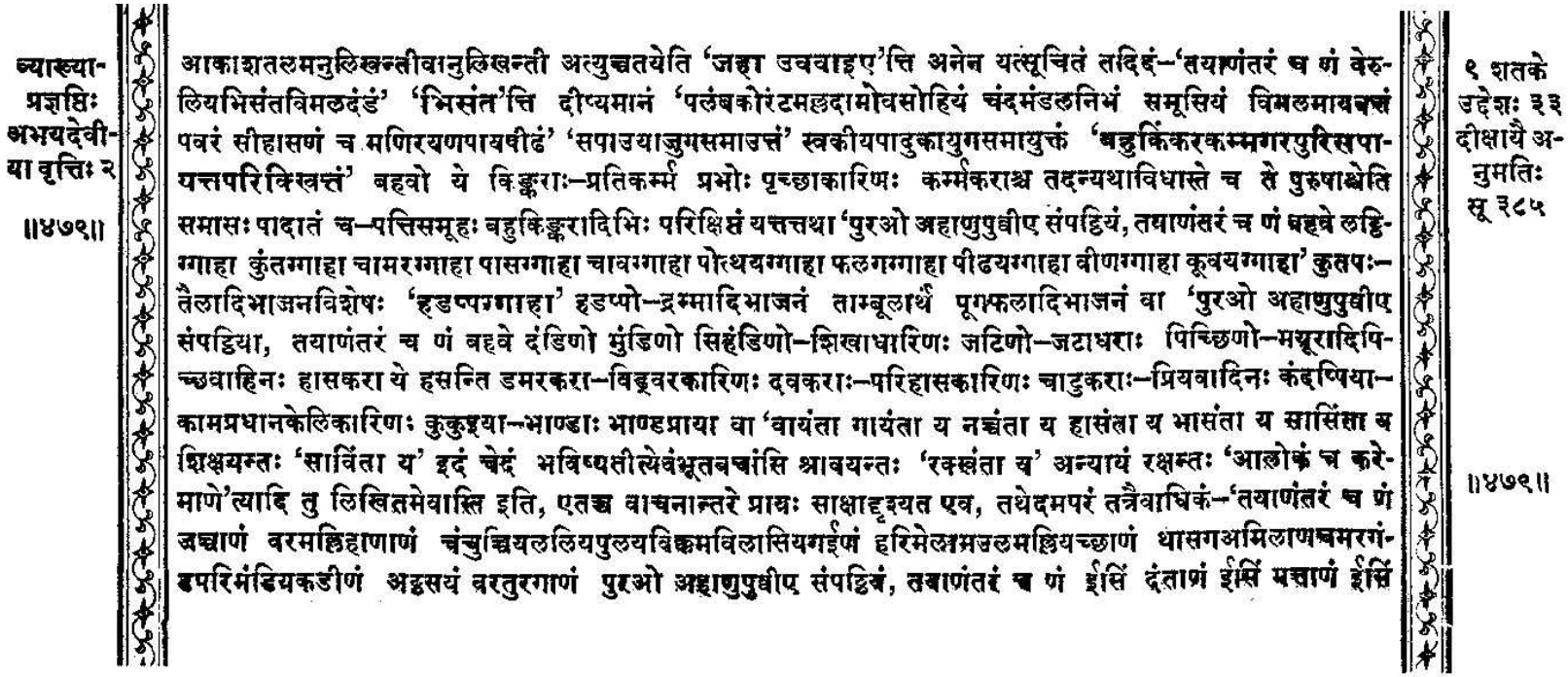
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



मथितस्य सतो यः फेनपुञ्जस्तस्य च संनिकाशे–सदृशे ये ते तथा, इह चाङ्को रत्नविशेष इति, 'चामराओ'त्ति यद्यपि चामरशब्दो नपुंसकलिङ्गो रूढस्तथाऽपीह स्त्रीलिङ्गतया निर्दिष्टस्तथैव क्वचिद्रूढत्वादिति ॥ 'मत्तगयमहामुहाकिइसमाणं'ति मत्तगजस्य यन्महामुखं तस्य याऽऽकृतिः–आकारस्तया समानं यत्तत्तथा 'एगाभरणवसणगहियणिज्जोय'त्ति एकः–एकादृश आभरणवसनलक्षणो गृहीतो निर्योगः–परिकरो यैस्ते तथा ॥ 'तप्पढमयाए'त्ति तेषां विवक्षितानां मध्ये प्रथमता तत्प्रथमता तया 'अट्ठट्ठमंगलग'त्ति अष्टावष्टाविति वीप्सायां द्विर्वचनं मङ्गलकानि–माङ्गल्यवस्तूनि, अन्ये त्वाहुः–अष्टसङ्ख्यानि अष्टमङ्गलकसञ्ज्ञानि वस्तूनि 'जाव दप्पणं'ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'नंदियावत्तवद्धमाणगभद्दासणकलसमच्छ'त्ति तत्र वर्द्धमानकं–शरावं (वसंपुटं) पुरुषारूढपुरुष इत्यन्ये स्वस्तिकपञ्चकमित्यन्ये प्रासादविशेषमित्यन्ये 'जहा उववाइए'त्ति, अनेन च यदुपात्तं तद्वाचनान्तरे साक्षादेवास्ति, तच्चेदं–'दिव्वा य छत्तपडागा'दिव्येव दिव्या–प्रधाना छत्रसहिता पताका छत्रपताका तथा 'सचामरादरसरइयआलोयदरिसणिज्जा वाउद्धुयविजयवेजयंती य ऊसिय'त्ति सह चामराभ्यां या सा सचामरा आदर्शो रचितो यस्यां साऽऽदर्शरचिता आलोकं–दृष्टिगोचरं यावद्दृश्यतेऽत्युच्चत्वेन या साऽऽलोकदर्शनीया, ततः कर्म्मधारयः, 'सचामरा दंसणरइयआलोयदरिसणिज्ज'त्ति पाठान्तरे तु सचामरेति भिन्नपदं, तथा दर्शने–जमालेर्दृष्टिपथे रचिता–विहिता दर्शनरचिता दर्शने वा सति रतिदा–सुखप्रदा दर्शनरतिदा सा चासावालोकदर्शनीया चेति कर्म्मधारयः, काऽसौ ? इत्याह–वातोद्धूता विजयसूचिका वैजयन्ती–पार्श्वतो लघुपताकिकाद्वययुक्ता पताकाविशेषा वातोद्धूतविजयवैजयन्ती 'उच्छ्रिता' उच्चा, कथमिव ?–'गगणतलमणुलिहंती'ति गगनतलं–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४७९॥

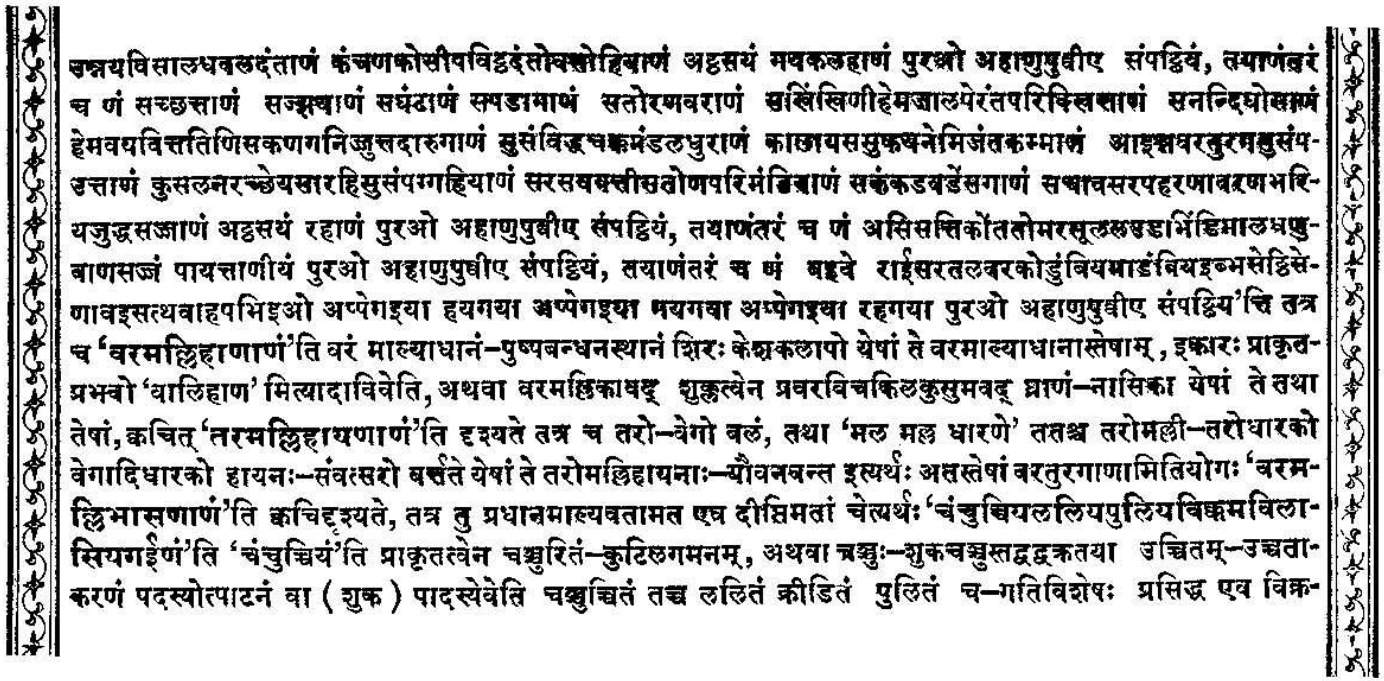
आकाशतलमनुलिखन्तीवानुलिखन्ती अत्युच्चतयेति 'जहा उववाइए'त्ति अनेन यत्सूचितं तदिदं–'तयाणंतरं च णं वेरु-लियभिसंतविमलदंडं' 'भिसंत'त्ति दीप्यमानं 'पलंबकोरंटमल्लदामोवसोहियं चंदमंडलनिभं समूसियं विमलमायवत्तं पवरं सीहासणं च मणिरयणपायपीढं' 'सपाउयाजुगसमाउत्तं' स्वकीयपादुकायुगसमायुक्तं 'बहुकिंकरकम्मगरपुरिसपा-यत्तपरिक्खित्तं' बहवो ये किङ्कराः–प्रतिकर्म्म प्रभोः पृच्छाकारिणः कर्म्मकराश्च तदन्यथाविधास्ते च ते पुरुषाश्चेति समासः पादातं च–पत्तिसमूहः बहुकिङ्करादिभिः परिक्षिप्तं यत्तत्तथा 'पुरओ अहाणुपुवीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं बहवे लट्ठि-ग्गाहा कुंतग्गाहा चामरग्गाहा पासग्गाहा चावग्गाहा पोत्थयग्गाहा फलगग्गाहा पीढयग्गाहा वीणग्गाहा कूवयग्गाहा' कुतपः–तैलादिभाजनविशेषः 'हडप्पग्गाहा' हडप्पो–द्रम्मादिभाजनं ताम्बूलार्थं पूगफलादिभाजनं वा 'पुरओ अहाणुपुवीए संपट्ठिया, तयाणंतरं च णं बहवे दंडिणो मुंडिणो सिहंडिणो–शिखाधारिणः जटिणो–जटाधराः पिच्छिणो–मयूरादिपि-च्छवाहिनः हासकरा ये हसन्ति डमरकरा–विडूवरकारिणः दवकराः–परिहासकारिणः चाटुकराः–प्रियवादिनः कंदप्पिया–कामप्रधानकेलिकारिणः कुक्कुइया–भाण्डाः भाण्डप्राया वा 'वायंता गायंता य नच्चंता य हासंता य भासंता य सासिंता य शिक्षयन्तः 'सावेंता य' इदं चेदं भविष्यतीत्येवंभूतवचांसि श्रावयन्तः 'रक्खंता य' अन्यायं रक्षन्तः 'आलोकं च करे-माणे'त्यादि तु लिखितमेवास्ति इति, एतच्च वाचनान्तरे प्रायः साक्षादृश्यत एव, तथेदमपरं तत्रैवाधिकं–'तयाणंतरं च णं जच्चाणं वरमल्लिहाणाणं चंचुच्चियललियपुलयविक्कमविलासियगईणं हरिमेलामउलमल्लियच्छाणं धासगअभिलाणचमरगं-डपरिमंडियकडीणं अट्ठसयं वरतुरगाणं पुरओ अहाणुपुवीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं ईसिं दंताणं ईसिं मत्ताणं ईसिं

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अ-नुमतिः सू ३८५

॥४७९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	जमाली-चरित्रं



उन्नयविसालधवलदंताणं कंचणकोसीपविट्ठदंतोवसोहियाणं अट्ठसयं मयकलहाणं पुरओ अहाणुपुवीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं सच्छत्ताणं सज्झयाणं सघंटाणं सपडागाणं सतोरणवराणं सखिंखिणीहेमजालपेरंतपरिक्खित्ताणं सनन्दिघोसाणं हेमवयचित्ततिणिसकणगनिज्जुत्तदारुगाणं सुसंविद्धचक्कमंडलधुराणं कालायससुकयनेमिजंतकम्माणं आइण्णवरतुरगसुसंपउत्ताणं कुसलनरच्छेयसारहिसुसंपग्गहियाणं सरसवसत्तीसतोणपरिमंडियाणं सकंकडवडेंसगाणं सचावसरपहरणावरणभरियजुद्धसज्जाणं अट्ठसयं रहाणं पुरओ अहाणुपुवीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं असिसत्तिकोंततोमरसूललउडभिंडिमालभणुबाणसज्जं पायत्ताणीयं पुरओ अहाणुपुवीए संपट्ठियं, तयाणंतरं च णं बहवे राईसरतलवरकोडुंबियमाडंबियइब्भसेट्ठिसेणावइसत्थवाहपभिइओ अप्पेगइया हयगया अप्पेगइया गयगया अप्पेगइया रहगया पुरओ अहाणुपुवीए संपट्ठिय'त्ति तत्र च 'वरमल्लिहाणाणं'ति वरं माल्याधानं–पुष्पबन्धनस्थानं शिरः केशकलापो येषां ते वरमाल्याधानास्तेषाम्, इकारः प्राकृतप्रभवो 'वालिहाण' मित्यादाविवेति, अथवा वरमल्लिकावद् शुक्लत्वेन प्रवरविचकिलकुसुमवद् घ्राणं–नासिका येषां ते तथा तेषां, क्वचित् 'तरमल्लिहायणाणं'ति दृश्यते तत्र च तरो–वेगो बलं, तथा 'मल मल्ल धारणे' ततश्च तरोमल्ली–तरोधारको वेगादिधारको हायनः–संवत्सरो वर्त्तते येषां ते तरोमल्लिहायनाः–यौवनवन्त इत्यर्थः अतस्तेषां वरतुरगाणामितियोगः 'वरमल्लिभासणाणं'ति क्वचिद्दृश्यते, तत्र तु प्रधानमाल्यवतामत एव दीप्तिमतां चेत्यर्थः 'चंचुच्चियललियपुलियविक्कमविलासियगईणं'ति 'चंचुच्चियं'ति प्राकृतत्वेन चञ्चुरितं–कुटिलगमनम्, अथवा चञ्चुः–शुकचञ्चुस्तद्वद्वक्रतया उच्चितम्–उच्चताकरणं पदस्योत्पाटनं वा (शुक) पादस्येवेति चञ्चुच्चितं तच्च ललितं क्रीडितं पुलितं च–गतिविशेषः प्रसिद्ध एव विक्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४८०॥

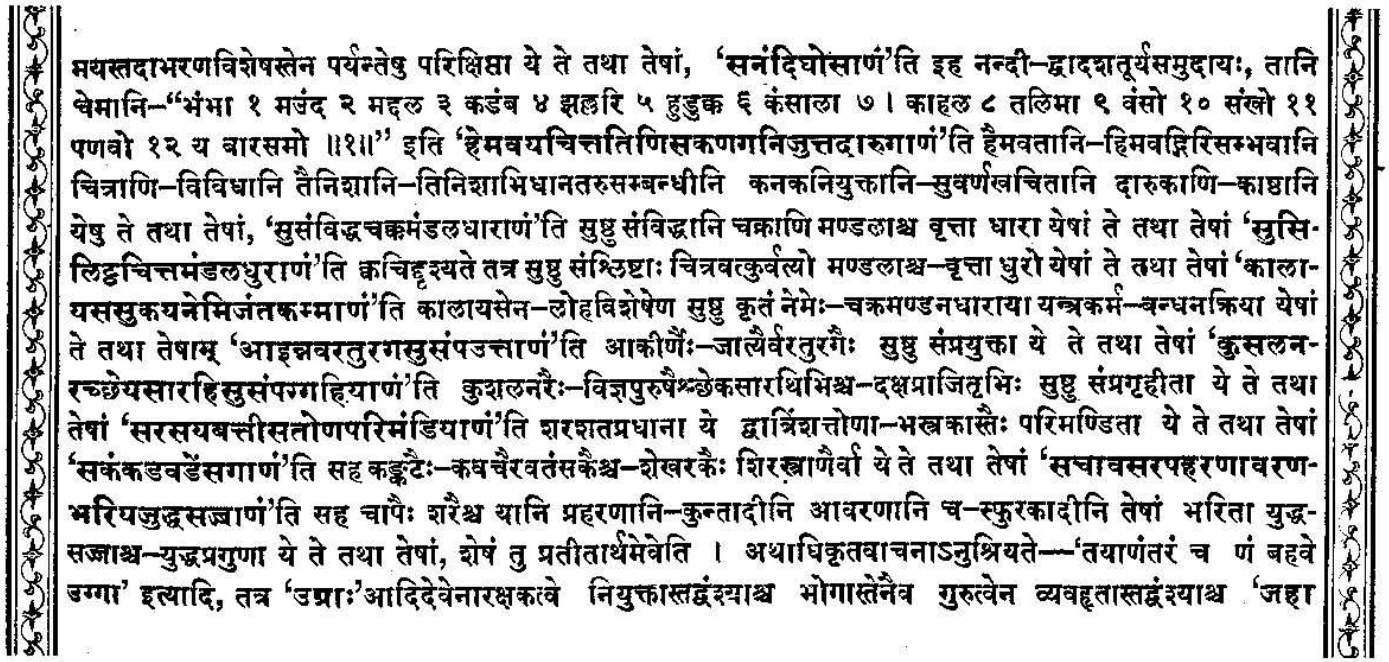
मश्च–विशिष्टं क्रमणं क्षेत्रलङ्घनमिति द्वंद्वस्तदेतत्प्रधाना विलासिता–विशेषेणोल्लासिता गतिर्यैस्ते तथा तेषां, क्वचिदिदं विशेषणमेवं दृश्यते–'चंचुच्चियललियपुलियचलचवलचंचलगईणं'ति तत्र च चञ्चुरितललितपुलितरूपा चलानां–अस्थिराणां सतां चञ्चलेभ्यः सकाशाच्चञ्चला–अतीवचटुला गतिर्येषां ते तथा तेषां 'हरिमेलमउलमल्लियच्छाणं'ति हरिमेलको–वनस्पतिविशेषस्तस्य मुकुलं–कुड्मलं मल्लिका च–विचकिलस्तद्वदक्षिणी येषां, शुक्लाक्षाणामित्यर्थः, 'थासगअमिलाणचामरगंडपरिमंडियकरीणं'ति स्थासका–दर्पणाकारा अश्वालङ्कारविशेषास्तैरम्लानचामरैर्गण्डैश्च–अमलिनचामरदण्डैः परिमण्डिता कटिर्येषां ते तथा तेषां, क्वचित्पुनरेवमिदं विशेषणमेवं दृश्यते–'मुहभंडगओचूलगथासगमिलाणचामरगण्डपरिमंडियकडीणं'ति तत्र मुखभाण्डकं–मुखाभरणम् अवचूलाश्च–प्रलम्बमानपुच्छाः स्थासकाः–प्रतीताः 'मिलाण'त्ति पर्यायाणि च येषां सन्ति ते तथा मत्वर्थीयलोपदर्शनात्, चमरी(चामर)गण्डपरिमण्डितकटय इति पूर्ववत्, ततश्च कर्म्मधारयोऽतस्तेषां, क्वचित्पुनरेवमिदं दृश्यते–'थासगअहिलाणचामरगंडपरिमंडियकडीणं'ति तत्र तु अहिलाणं–मुखसंयमनं ततश्च 'थासगअहिलाण' इत्यत्र मत्वर्थीयलोपेनोत्तरपदेन सह कर्म्मधारयः कार्यः, तथा 'ईसिं दंताणं'ति 'ईषद्दान्तानां' मनागग्राहितशिक्षाणां गजकलभानामिति योगः 'ईसिं उच्छंगउन्नयविसालधवलदंताणं'ति उत्सङ्गः–पृष्ठदेशः ईषदुत्सङ्गे उन्नता विशालाश्च ये यौवनारम्भवर्त्तित्वात्ते तथा ते च ते धवलदन्ताश्चेति समासोऽतस्तेषां 'कंचणकोसीपविट्ठदंतोवसोहियाणं'ति इह काञ्चनकोशी–सुवर्णमयी खोला, रथवर्णके तु 'सज्झयाणं सपडागाणं' इत्यत्र गरुडादिरूपयुक्तो ध्वजः तदितरा तु पताका 'सखिखिणीहेमजालपेरंतपरिक्खित्ताणं'ति सकिङ्किणीकं–क्षुद्रघण्टिकोपेतं यद् हेमजालं–सुवर्ण-

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अनुमतिः सू ३८५

॥४८०॥

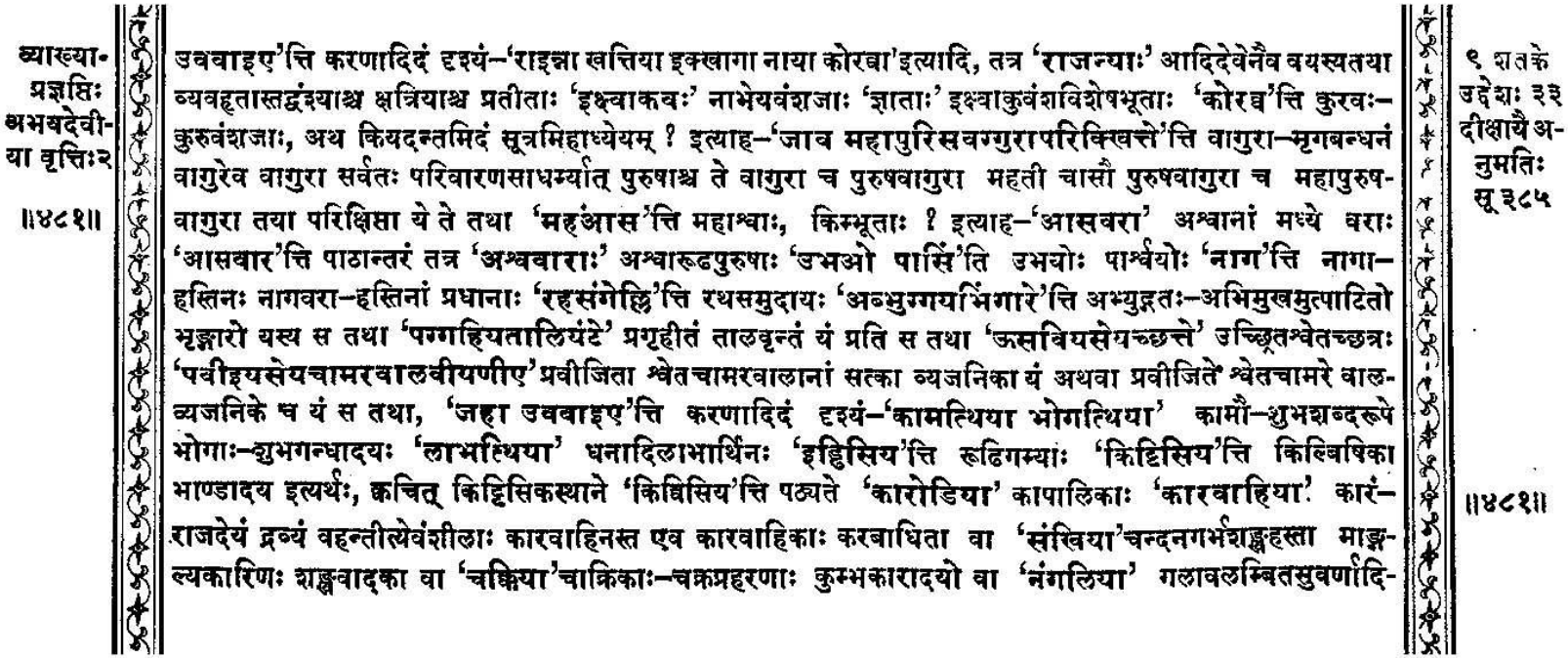
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	जमाली-चरित्रं



मयस्तदाभरणविशेषस्तेन पर्यन्तेषु परिक्षिप्ता ये ते तथा तेषां, 'सनंदिघोसाणं'ति इह नन्दी–द्वादशतूर्यसमुदायः, तानि चेमानि–"भंभा १ मउंद २ मद्दल ३ कडंब ४ झल्लरि ५ हुडुक्क ६ कंसाला ७ । काहल ८ तलिमा ९ वंसो १० संखो ११ पणवो १२ य बारसमो ॥१॥" इति 'हेमवयचित्ततिणिसकणगनिजुत्तदारुगाणं'ति हैमवतानि–हिमवद्गिरिसम्भवानि चित्राणि–विविधानि तैनिशानि–तिनिशाभिधानतरुसम्बन्धीनि कनकनियुक्तानि–सुवर्णखचितानि दारुकाणि–काष्ठानि येषु ते तथा तेषां, 'सुसंविद्धचक्कमंडलधुराणं'ति सुष्ठु संविद्धानि चक्राणि मण्डलाश्च वृत्ता धारा येषां ते तथा तेषां 'सुसिलिट्ठचित्तमंडलधुराणं'ति क्वचिद्दृश्यते तत्र सुष्ठु संश्लिष्टाः चित्रवत्कुर्वत्यो मण्डलाश्च–वृत्ता धुरो येषां ते तथा तेषां 'कालायससुकयनेमिजंतकम्माणं'ति कालायसेन–लोहविशेषेण सुष्ठु कृतं नेमेः–चक्रमण्डनधारायाः यन्त्रकर्म–बन्धनक्रिया येषां ते तथा तेषाम् 'आइन्नवरतुरगसुसंपउत्ताणं'ति आकीर्णैः–जात्यैर्वरतुरगैः सुष्ठु संप्रयुक्ता ये ते तथा तेषां 'कुसलनरच्छेयसारहिसुसंपग्गहियाणं'ति कुशलनरैः–विज्ञपुरुषैश्छेकसारथिभिश्च–दक्षप्राजितृभिः सुष्ठु संप्रगृहीता ये ते तथा तेषां 'सरसयबत्तीसतोणपरिमंडियाणं'ति शरशतप्रधाना ये द्वात्रिंशत्तोणा–भस्त्रकास्तैः परिमण्डिता ये ते तथा तेषां 'सकंकडवडेंसगाणं'ति सह कङ्कटैः–कवचैरवतंसकैश्च–शेखरकैः शिरस्त्राणैर्वा ये ते तथा तेषां 'सचावसरपहरणावरणभरियजुद्धसज्जाणं'ति सह चापैः शरैश्च यानि प्रहरणानि–कुन्तादीनि आवरणानि च–स्फुरकादीनि तेषां भरिता युद्धसज्जाश्च–युद्धप्रगुणा ये ते तथा तेषां, शेषं तु प्रतीतार्थमेवेति । अथाधिकृतवाचनाऽनुश्रियते–'तयाणंतरं च णं बहवे उग्गा' इत्यादि, तत्र 'उग्राः'आदिदेवेनारक्षकत्वे नियुक्तास्तद्वंश्याश्च भोगास्तेनैव गुरुत्वेन व्यवहृतास्तद्वंश्याश्च 'जहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥४८१॥

उववाइए'त्ति करणादिदं दृश्यं–'राइन्ना खत्तिया इक्खागा नाया कोरवा'इत्यादि, तत्र 'राजन्याः' आदिदेवेनैव वयस्यतया व्यवहृतास्तद्वंश्याश्च क्षत्रियाश्च प्रतीताः 'इक्ष्वाकवः' नाभेयवंशजाः 'ज्ञाताः' इक्ष्वाकुवंशविशेषभूताः 'कोरव्व'त्ति कुरवः–कुरुवंशजाः, अथ कियदन्तमिदं सूत्रमिहाध्येयम् ? इत्याह–'जाव महापुरिसवग्गुरापरिक्खित्ते'त्ति वागुरा–मृगबन्धनं वागुरेव वागुरा सर्वतः परिवारणसाधर्म्यात् पुरुषाश्च ते वागुरा च पुरुषवागुरा महती चासौ पुरुषवागुरा च महापुरुष-वागुरा तया परिक्षिप्ता ये ते तथा 'महंआस'त्ति महाश्वाः, किम्भूताः ? इत्याह–'आसवरा' अश्वानां मध्ये वराः 'आसवार'त्ति पाठान्तरं तत्र 'अश्ववाराः' अश्वारूढपुरुषाः 'उभओ पासिं'ति उभयोः पार्श्वयोः 'नाग'त्ति नागा–हस्तिनः नागवरा–हस्तिनां प्रधानाः 'रहसंगेल्लि'त्ति रथसमुदायः 'अब्भुग्गयभिंगारे'त्ति अभ्युद्गतः–अभिमुखमुत्पाटितो भृङ्गारो यस्य स तथा 'पग्गहियतालियंटे' प्रगृहीतं तालवृन्तं यं प्रति स तथा 'ऊसवियसेयच्छत्ते' उच्छ्रितश्वेतच्छत्रः 'पवीइयसेयचामरवालवीयणीए' प्रवीजिता श्वेतचामरवालानां सत्का व्यजनिका यं अथवा प्रवीजिते श्वेतचामरे वाल-व्यजनिके च यं स तथा, 'जहा उववाइए'त्ति करणादिदं दृश्यं–'कामत्थिया भोगत्थिया' कामौ–शुभशब्दरूपे भोगाः–शुभगन्धादयः 'लाभत्थिया' धनादिलाभार्थिनः 'इड्ढिसिय'त्ति रूढिगम्याः 'किट्टिसिय'त्ति किल्बिषिका भाण्डादय इत्यर्थः, क्वचित् किट्टिसिकस्थाने 'किविसिय'त्ति पठ्यते 'कारोडिया' कापालिकाः 'कारवाहिया' कारं–राजदेयं द्रव्यं वहन्तीत्येवंशीलाः कारवाहिनस्त एव कारवाहिकाः करबाधिता वा 'संखिया'चन्दनगर्भशङ्खहस्ता माङ्ग-ल्यकारिणः शङ्खवादका वा 'चक्किया'चाक्रिकाः–चक्रप्रहरणाः कुम्भकारादयो वा 'नंगलिया' गलावलम्बितसुवर्णादि-

९ शतके उद्देशः ३३ दीक्षायै अ-नुमतिः सू ३८५

॥४८१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	जमाली-चरित्रं

मयलाङ्गलप्रतिकृतिधारिणो भट्टविशेषाः कर्षका वा **'मुहमंगलिया'** मुखे मङ्गलं येषामस्ति ते मुखमङ्गलिकाः–चाटुकारिणः **'वद्धमाणा'** स्कन्धारोपितपुरुषाः **'पूसमाणवा'** मागधाः **'इज्जिसिया पिंडिसिया घंटिय'**त्ति क्वचिद्दृश्यते, तत्र च इज्यां–पूजामिच्छन्त्येषयन्ति वा ये ते इज्यैषास्त एव स्वार्थिकेकप्रत्ययविधानाद् इज्यैषिकाः, एवं पिण्डैषिका अपि, नवरं पिण्डो–भोजनं, घाण्टिकास्तु ये घण्टया चरन्ति तां वा वादयन्तीति, **'ताहिं'**ति ताभिर्विवक्षिताभिरित्यर्थः, विवक्षितत्वमेवाह–**'इट्ठाहिं'** इष्यन्ते स्मेतीष्टास्ताभिः, प्रयोजनवशादिष्टमपि किञ्चित्स्वरूपतः कान्तं स्यादकान्तं चेत्यत आह– **'कंताहिं'** कमनीयशब्दाभिरित्यर्थः **'पियाहिं'** प्रियार्थाभिः **'मणुन्नाहिं'** मनसा ज्ञायन्ते सुन्दरतया यास्ता मनोज्ञा भावतः सुन्दरा इत्यर्थः ताभिः **'मणामाहिं'** मनसाऽभ्यन्ते–गम्यन्ते पुनः पुनर्याः सुन्दरत्वातिशयात्ता मनोऽमास्ताभिः **'ओरालाहिं'** उदाराभिः शब्दतोऽर्थतश्च **'कल्लाणाहिं'** कल्याणप्राप्तिसूचिकाभिः **'सिवाहिं'** उपद्रवरहिताभिः शब्दार्थदूषणरहिताभिरित्यर्थः **'धन्नाहिं'** धनलम्भिकाभिः **'मंगल्लाहिं'** मङ्गले–अनर्थप्रतिघाते साध्वीभिः **'सस्सिरीयाहिं'** शोभायुक्ताभिः **'हिययगमणिज्जाहिं'** गम्भीरार्थतः सुबोधाभिरित्यर्थः **'हिययपल्हायणिज्जाहिं'** हृदयगतकोपशोकादिग्रन्थिविलयनकरीभिरित्यर्थः **'मियमहुरगंभीरगाहियाहिं'** मिताः–परिमिताक्षरा मधुराः–कोमलशब्दाः गम्भीरा–महाध्वनयो दुरवधार्यमप्यर्थं श्रोतॄन् ग्राहयन्ति यास्ता ग्राहिकास्ततः पदचतुष्टयस्य कर्म्मधारयोऽतस्ताभिः **'मियमहुरगंभीरसस्सिरीयाहिं'**ति क्वचिद् दृश्यते, तत्र च मिताः अक्षरतो मधुराः शब्दतो गम्भीरा–अर्थतो ध्वनितश्च स्वश्रीः–आत्मसम्पद् यासां तास्तथा ताभिः **'अट्ठसइयाहिं'** अर्थशतानि यासु सन्ति ता अर्थशतिकास्ताभिः, अथवा सइ–बहु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

फलत्वं अर्थतः सइयाओ अट्ठसइयाओ 'ताहिं अपुणरुत्ताहिं वग्गूहिं' वाग्भिर्गीर्भिरेकार्थिकानि वा प्राय इष्टादीनि वाग्विशेषणानीति 'अणवरयं' सन्ततम् 'अभिनंदंता ये'त्यादि तु लिखितमेवास्ते, तत्र चाभिनन्दयन्तो–जय जीवेत्यादि भणन्तोऽभिवृद्धिमाचक्षाणाः 'जय जये'त्याशीर्वचनं भक्तिसम्भ्रमे च द्विर्वचनं 'नंदा धम्मेणं'ति 'नन्द' वर्द्धस्व धर्मेण एवं तपसाऽपि, अथवा जय जय विपक्षं, केन ?–धर्मेण हे नन्द ! इत्येवमक्षरघटनेति 'जय २ नंदा ! भद्दं ते' जय त्वं हे जगन्नन्दिकर ! भद्रं ते भवतादिति गम्यं 'जियविग्घोऽवियं'त्ति जितविघ्नश्च 'वसाहि तं देव ! सिद्धिमज्झे'त्ति वस त्वं हे देव ! सिद्धिमध्ये देवसिद्धिमध्ये वा 'निहणाहि ये' त्यादि निर्घातय च रागद्वेषमल्लौ तपसा, कथम्भूतः सन् ? इत्याह— धृतिरेव धनिकं अत्यर्थं बद्धा कक्षा [कच्छोटा] येन स तथा, मल्लो हि मल्लान्तरजयसमर्थो भवति गाढबद्धकक्षः सन्निति कृत्वोक्तं 'धिइधणिये'त्यादि, तथा 'अप्पमत्तो' इत्यादि, 'हराहि'त्ति गृहाण आराधना–ज्ञानादिसम्यक्पालना सैव पताका जयप्राप्तनटग्राह्या आराधनापताका तां त्रैलोक्यमेव रङ्गमध्यं–मल्लयुद्धद्रष्टृमहाजनमध्यं तत्र,'हंता परीसहचमूं'ति हत्वा परीषहसैन्यं, अथवा 'हन्ता' घातकः परीषहचम्वा इति विभक्तिपरिणामात् शीलार्थकतृन्नन्तत्वाद्वा हन्ता परीषहचमूमिति 'अभिभविय'त्ति अभिभूय–जित्वा 'गामकंटकोवसग्गाणं'ति इन्द्रियग्रामप्रतिकूलोपसर्गानित्यर्थः णं वाक्यालङ्कारे अथवा 'अभिभविता' जेता ग्रामकण्टकोपसर्गाणामिति, किं बहुना ?–'धम्मे ते' इत्यादि ॥ 'नयणमालासहस्सेहिं'ति नयनमालाः– श्रेणीभूतजननेत्रपङ्क्तयः 'एवं जहा उववाइए'त्ति अनेन यत्सूचितं तदिदं–'वयणमालासहस्सेहिं अभिथुवमाणे २ हिययमालासहस्सेहिं अभिनंदिज्जमाणे २' जनमनःसमूहैः समृद्धिमुपनीयमानो जय जीव नन्दे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

त्यादिपर्यालोचनादिति भावः 'मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे २' एतस्य पादमूले वत्स्याम इत्यादिभिर्जनविकल्पैर्विशेषेण स्पृश्यमान इत्यर्थः 'कंतिरूवसोहग्गजोव्वणगुणेहिं पत्थिज्जमाणे २' कान्त्यादिभिर्गुणैर्हेतुभूतैः प्रार्थ्यमानो भर्तृतया स्वामितया वा जनैरिति 'अंगुलिमालासहस्सेहिं दाइज्जमाणे २' 'दाहिणहत्थेणं बहूणं नरनारिसहस्साणं अंजलिमालासहस्साइं पडिच्छेमाणे २ भवणभित्ती(पन्ती)सहस्साइं''समइच्छिमाणे २' समतिक्रामन्नित्यर्थः 'तंतीतलताल-गीयवाइयरवेणं' तन्त्री–वीणा तलाः–हस्ताः तालाः–कांसिकाः तलताला वा–हस्ततालाः गीतवादिते–प्रतीते एषां यो रवः स तथा तेन 'महुरेणं मणहरेणं' 'जय २ सद्दुग्घोसमीसएणं' जयेतिशब्दस्य यद् उद्घोषणं तेन मिश्रो यः स तथा तेन तथा 'मंजुमंजुणा घोसेणं' अतिकोमलेन ध्वनिना स्तावकलोकसम्बन्धिना नूपुरादिभूषणसम्बन्धिना वा 'अप्पडिबुज्झमाणे'त्ति अप्रतिबुद्ध्यमानः–शब्दान्तराण्यनवधारयन् अप्रत्युह्यमानो वा–अनपह्रियमाणमानसो वैराग्यगतमानसत्वादिति 'कंदरगिरिविवरकुहरगिरिवरपासादुद्धघणभवणदेवकुलसिंघाडगतिगचउक्कचच्चरआरामुज्जाणकाणणसभप्पवप्पदेसदेसभागे'त्ति कन्दराणि–भूमिविवराणि गिरीणां विवरकुहराणि–गुहाः पर्वतान्तराणि वा गिरिवराः–प्रधानपर्वताः प्रासादाः–सप्तभूमिकादयः ऊर्द्धधनभवनानि–उच्चाविरलगेहानि देवकुलानि–प्रतीतानि शृङ्गाटकत्रिकचतुष्कचत्वराणि प्राग्वत् आरामाः–पुष्पजातिप्रधाना वनखण्डाः उद्यानानि–पुष्पादिमद्वृक्षयुक्तानि काननानि–नगराद् दूरवर्त्तीनि सभा–आस्थायिकाः प्रपा–जलदानस्थानानि एतेषां ये प्रदेशदेशरूपा भागास्ते तथा तान् , तत्र प्रदेशा–लघुतरा भागाः देशास्तु महत्तराः, अयं पुनर्दण्डकः क्वचिदन्यथा दृश्यते–'कंदरदरिकुहरविवरगिरिपायारट्टालचरियदारगोउरपा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८५]

दीप अनुक्रम [४६५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४८३॥

सायदुवारभवणदेवकुलआरामुज्जाणकाणणसभपएस'त्ति प्रतीतार्थश्चायं, 'पडिसुयासयसहस्ससंकुले करेमाणे'त्ति प्रतिश्रुच्छतसहस्रसङ्कुलान् प्रतिशब्दलक्षसङ्कुलानित्यर्थः कुर्वन् २ निर्गच्छतीति सम्बन्धः 'हयहेसियहत्थिगुलगुलाइयरहघणघणाइयसद्दमीसएणं महया कलकलरवेण य जणस्स सुमहुरेणं पूरेंतोऽंबरं समंता सुयंधवरकुसुमचुन्नउविद्धवासरेणुमइलं णभं करेंते' सुगन्धीनां–वरकुसुमानां चूर्णानां च 'उविद्धः' ऊर्द्धंगतो यो वासरेणुः–वासकं रजस्तेन मलिनं यत्तत्तथा 'कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवनिवहेण जीवलोगमिव वासयंते' कालागुरुः–गन्धद्रव्यविशेषःप्रवरकुन्दुरुक्कं–वरचीडा तुरुक्कं–सिल्हकं धूपः–तदन्यः एतल्लक्षणो वा एषामेतस्य वा यो निवहः स तथा तेन जीवलोकं वासयन्निवेति 'समंतओ खुभियचक्कवालं' क्षुभितानि चक्रवालानि–जनमण्डलानि यत्र गमने तत्तथा तद्यथा भवत्येवं निर्गच्छतीति सम्बन्धः 'पउरजणबालवुड्ढपमुइयतुरियपहावियविउलाउलबोलबहुलं नभं करेंते' पौरजनाश्च अथवा प्रचुरजनाश्च बाला वृद्धाश्च ये प्रमुदिताः त्वरितप्रधाविताश्च–शीघ्रं गच्छन्तस्तेषां व्याकुलाकुलानां–अतिव्याकुलानां यो बोलः स बहुलो यत्र तत्तथा तदेवम्भूतं नभः कुर्वन्निति 'खत्तियकुंडग्गामस्स नगरस्स मज्झंमज्झेणं'ति, शेषं तु लिखितमेवास्त इति ॥ 'पउमेइ व'त्ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'कुमुदेइ वा नलिणेइ वा सुभगेइ वा सोगंधिएइ वा' इत्यादि, एषां च भेदो रूढिगम्यः,'कामेहिं जाए'त्ति कामेषु–शब्दादिरूपेषु जातः 'भोगेहिं संवुड्ढे'त्ति भोगा–गन्धरसस्पर्शास्तेषु मध्ये संवृद्धो–वृद्धिमुपगतः 'नोवलिप्पइ कामरएण'त्ति कामलक्षणं रजः कामरजस्तेन कामरजसा कामरतेन वा–कामानुरागेण 'मित्तनाई' इत्यादि, मित्राणि–प्रतीतानि ज्ञातयः–स्वजातीयाः निजका–मातुलादयः स्वजनाः–पितृपितृव्यादयः सम्बन्धिनः–श्वशुरादयः परिजनो–दासादिः, इह

९ शतक उद्देशः ३३ दीक्षायै अनुमतिः सू ३८५

॥४८३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

समाहारद्वन्द्वस्ततस्तेन नोपलिप्यते–स्नेहतः सम्बद्धो न भवतीत्यर्थः 'हारवारि' इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'धारासिंदुवारच्छिन्नमुत्तावलिपयासाइं अंसूणि'त्ति॥ 'जइयव्वं'ति प्राप्तेषु संयमयोगेषु प्रयत्नः कार्यः 'जाया!' हे पुत्र! 'घडियव्वं'ति अप्राप्तानां संयमयोगानां प्राप्तये घटना कार्या 'परिक्कमियव्वं'ति पराक्रमः कार्यः पुरुषत्वाभिमानः सिद्धफलः कर्त्तव्य इति भावः, किमुक्तं भवति?–'अस्सिं चे'त्यादि, अस्मिंश्चार्थे–प्रव्रज्यानुपालनलक्षणे न प्रमादयितव्यमिति, 'एवं जहा उसभदत्तो' इत्यनेन यत्सूचितं तदिदं–'तेणामेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं पकरेइ २ वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–आलित्ते णं भंते! लोए' इत्यादि, व्याख्यातं चेदं प्रागिति।

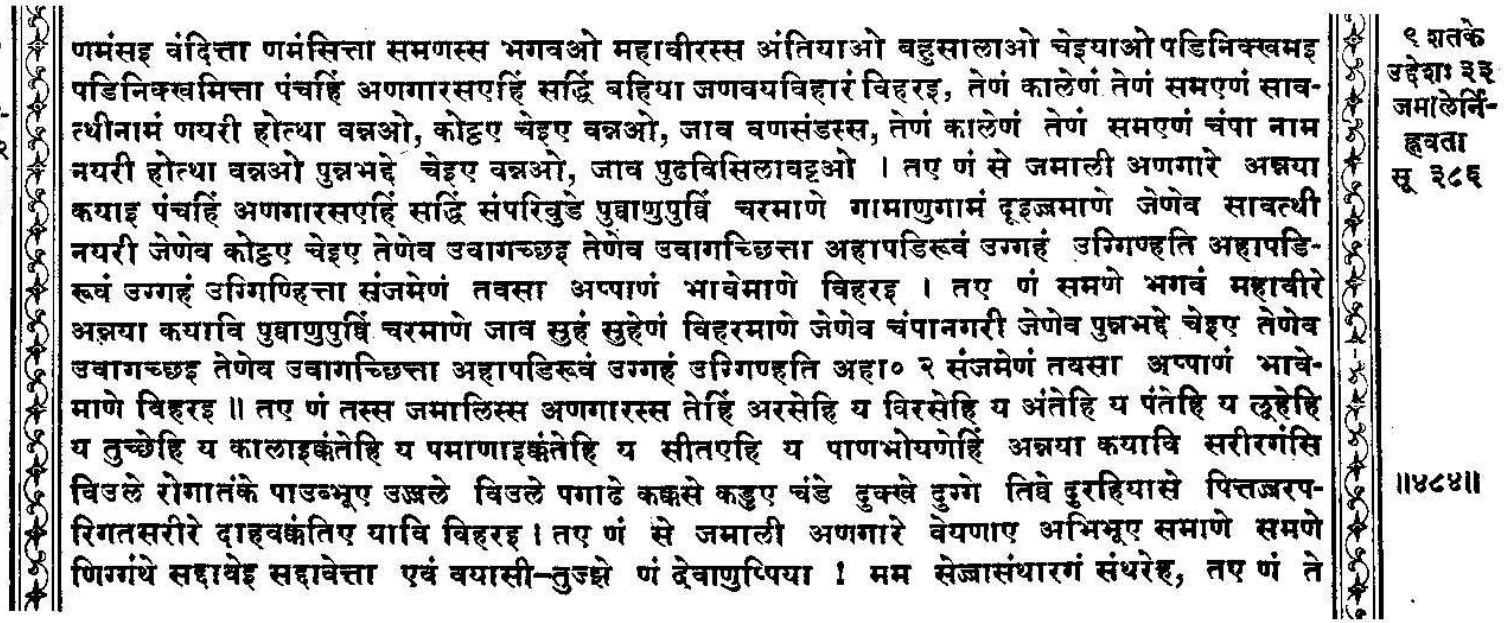
तए णं से जमाली अणगारे अन्नया कयाइं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छइत्ता समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति वंदित्ता २ एवं वयासी–इच्छामि णं भंते! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं बहिया जणवयविहारं विहरित्तए, तए णं से समणे भगवं महावीरे जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं णो आढाइ णो परिजाणाइ तुसिणीए संचिट्ठइ। तए णं से जमाली अणगारे समणं भगवं महावीरं दोच्चंपि तच्चंपि एवं वयासी–इच्छामि णं भंते! तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं जाव विहरित्तए, तए णं समणे भगवं महावीरे जमालिस्स अणगारस्स दोच्चंपि तच्चंपि एयमट्ठं णो आढाइ जाव तुसिणीए संचिट्ठइ। तए णं से जमाली अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदइ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८६--३८७]

दीप अनुक्रम [४६६--४६७]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४८४॥

णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ बहुसालाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं बहिया जणवयविहारं विहरइ, तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थीनामं णयरी होत्था वन्नओ, कोट्ठए चेइए वन्नओ, जाव वणसंडस्स, तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नाम नयरी होत्था वन्नओ पुन्नभद्दे चेइए वन्नओ, जाव पुढविसिलावट्टओ । तए णं से जमाली अणगारे अन्नया कयाइ पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव सावत्थी नयरी जेणेव कोट्ठए चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हति अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ । तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयावि पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव सुहं सुहेणं विहरमाणे जेणेव चंपानगरी जेणेव पुन्नभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हति अहा० २ संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ तए णं तस्स जमालिस्स अणगारस्स तेहिं अरसेहि य विरसेहि य अंतेहि य पंतेहि य लूहेहि य तुच्छेहि य कालाइक्कंतेहि य पमाणाइक्कंतेहि य सीतएहि य पाणभोयणेहिं अन्नया कयावि सरीरगंसि विउले रोगातंके पाउब्भूए उज्जले विउले पगाढे कक्कसे कडुए चंडे दुक्खे दुग्गे तिव्वे दुरहियासे पित्तज्जरपरिगतसरीरे दाहवक्कंतिए यावि विहरइ । तए णं से जमाली अणगारे वेयणाए अभिभूए समाणे समणे णिग्गंथे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! मम सेज्जासंथारगं संथरेह, तए णं ते

९ शतके उद्देशः ३३ जमालेर्निह्नवता सू ३८६

॥४८४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८६--३८७]

दीप अनुक्रम [४६६--४६७]

समणा णिग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति पडिसुणेत्ता जमालिस्स अणगारस्स सेज्जासंथारगं संथरेंति, तए णं से जमाली अणगारे बलियतरं वेदणाए अभिभूए समाणे दोच्चंपि समणे निग्गंथे सद्दावेइ २ त्ता दोच्चंपि एवं वयासी–ममन्नं देवाणुप्पिया ! सेज्जासंथारए किं कडे कज्जइ ?, एवं वुत्ते समाणे समणा निग्गंथा बिंति–भो सामी ! कीरइ, तए णं ते समणा निग्गंथा जमालिं अणगारं एवं वयासी–णो खलु देवाणुप्पियाणं सेज्जासंथारए कडे कज्जति, तए णं तस्स जमालिस्स अणगारस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–जन्नं समणे भगवं महावीरे एवं आइक्खइ जाव एवं परूवेइ–एवं खलु चलमाणे चलिए उदीरिज्जमाणे उदीरिए जाव निज्जरिज्जमाणे णिज्जिन्ने तं णं मिच्छा इमं च णं पच्चक्खमेव दीसइ सेज्जासंथारए कज्जमाणे अकडे संथरिज्जमाणे असंथरिए जम्हा णं सेज्जासंथारए कज्जमाणे अकडे संथरिज्जमाणे असंथरिए तम्हा चलमाणेवि अचलिए जाव निज्जरिज्जमाणेवि अणिज्जिन्ने, एवं संपेहेइ एवं संपेहेत्ता समणे निग्गंथे सद्दावेइ समणे निग्गंथे सद्दावेत्ता एवं वयासी–जन्नं देवाणुप्पिया ! समणे भगवं महावीरे एवं आइक्खइ जाव परूवेइ–एवं खलु चलमाणे चलिए तं चेव सव्वं जाव णिज्जरिज्जमाणे अणिज्जिन्ने। तए णं जमालिस्स अणगारस्स एवं आइक्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स अत्थेगइया समणा निग्गंथा एयमट्ठं सद्दहंति पत्तियंति रोयंति अत्थेगइया समणा निग्गंथा एयमट्ठं णो सद्दहंति ३, तत्थ णं जे ते समणा निग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं सद्दहंति ३ ते णं जमालिं चेव अणगारं उवसंपज्जित्ताणं विहरंति, तत्थ णं जे ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८६--३८७]

दीप अनुक्रम [४६६--४६७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४८५॥

समणा णिग्गथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं णो सद्दहंति णो पत्तियंति णो रोयंति ते णं जमालिस्स अणगारस्स अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमंति २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइ० जेणेव चंपानयरी जेणेव पुन्नभद्दे चेइए जेणेव समणं भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति २ त्ता वंदइ णमंसइ २ समणं भगवं महावीरं उवसंपज्जित्ता णं विहरंति । (सूत्रं ३८६) तए णं से जमाली अणगारे अन्नया कयावि ताओ रोगायंकाओ विप्पमुक्के हट्ठे तुट्ठे जाए अरोए बलियसरीरे सावत्थीओ नयरीओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव चंपा नयरी जेणेव पुन्नभद्दे चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिचा समणं भगवं महावीरं एवं वयासी–जहा णं देवाणुप्पियाणं बहवे अंतेवासी समणा निग्गंथा छउमत्था भवेत्ता छउमत्थावक्कमणेणं अवक्कंता णो खलु अहं तहा छउमत्थे भवित्ता छउमत्थावक्कमणेणं अवक्कमिए, अहन्नं उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली भवित्ता केवलिअवक्कमणेणं अवक्कमिए, तए णं भगवं गोयमे जमालिं अणगारं एवं वयासी–णो खलु जमाली ! केवलिस्स णाणे वा दंसणे वा सेलंसि वा थंभंसि वा थूभंसि वा आवरिज्जइ वा णिवारिज्जइ वा, जइ णं तुमं जमाली ! उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली भवित्ता केवलिअवक्कमणेणं अवक्कंते तो णं इमाइं दो वागरणाइं वागरेहि–सासए लोए जमाली ! असासए लोए जमाली ?, सासए जीवे जमाली ! असासए

९ शतके उद्देशः ३३ जमालेर्निरुत्तरता सू ३८७

॥४८५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

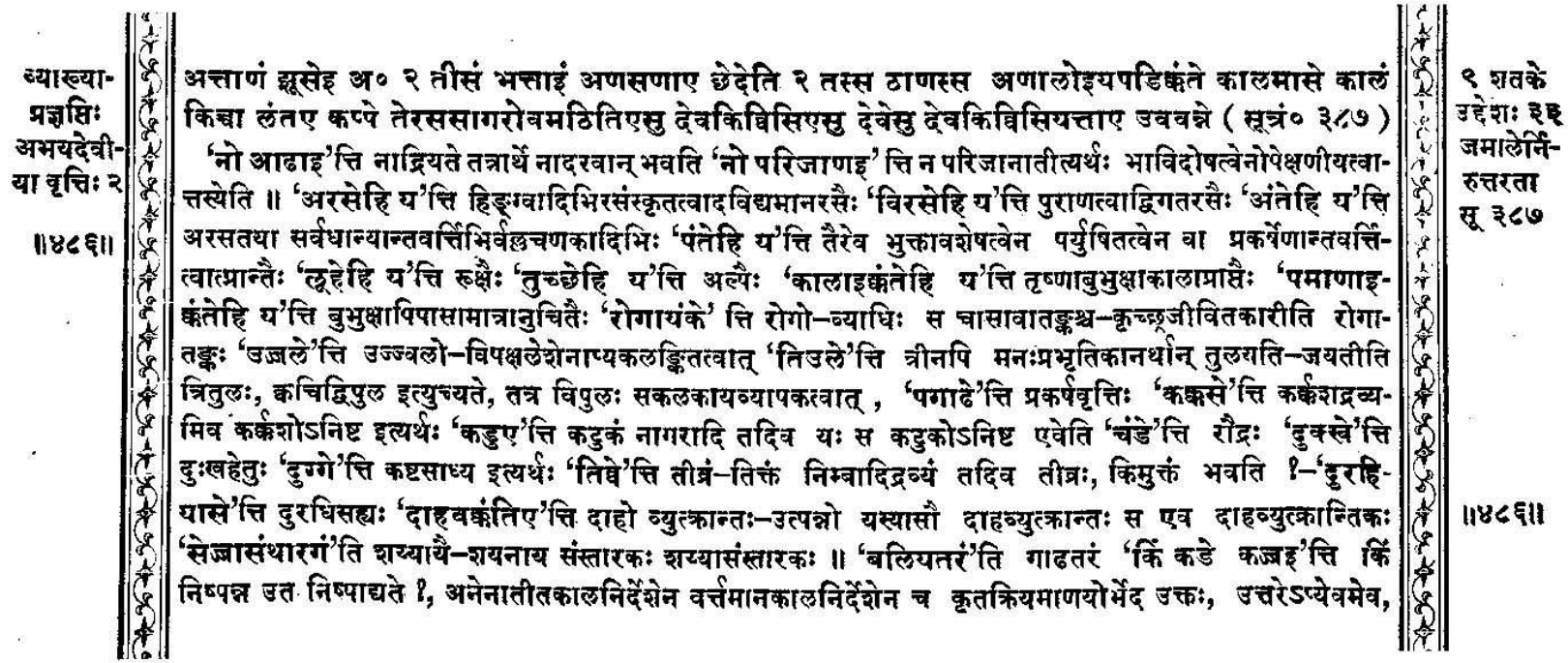
प्रत सूत्रांक [३८६--३८७]

दीप अनुक्रम [४६६--४६७]

जीवे जमाली !, तए णं से जमाली अणगारे भगवया गोयमेणं एवं वुत्ते समाणे संकिए कंखिए जाव कलुससमावन्ने जाए यावि होत्था, णो संचाएति भगवओ गोयमस्स किंचिवि पमोक्खमाइक्खित्तए तुसिणीए संचिट्ठइ, जमालीति समणे भगवं महावीरे जमालिं अणगारं एवं वयासी–अत्थि णं जमाली ममं बहवे अंतेवासी समणा निग्गंथा छउमत्था जे णं एयं वागरणं वागरित्तए जहाणं अहं नो चेव णं एयप्पगारं भासं भासित्तए जहा णं तुमं, सासए लोए जमाली ! जन्न कयावि णासि ण कयावि ण भवति ण कदावि ण भविस्सइ भुविं च भवइ य भविस्सइ य धुवे णितिए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे, असासए लोए जमाली ! जओ ओसप्पिणी भवित्ता उस्सप्पिणी भवइ उस्सप्पिणी भवित्ता ओसप्पिणी भवइ, सासए जीवे जमाली ! जं न कयाइ णासि जाव णिच्चे असासए जीवे जमाली जन्नं नेरइए भवित्ता तिरिक्खजोणिए भवइ तिरिक्खजोणिए भवित्ता मणुस्से भवइ मणुस्से भवित्ता देवे भवइ । तए णं से जमाली अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स एवमाइक्खमणस्स जाव एवं परूवेमाणस्स एयमट्ठं णो सद्दहइ णो पत्तिएइ णो रोएइ एयमट्ठं असद्दहमाणे अपत्तियमाणे अरोएमाणे दोच्चंपि समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ आयाए अवक्कमइ दोच्चंपि आयाए अवक्कमित्ता बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणे वुप्पाएमाणे बहूयाइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणइ २ अद्धमासियाए संलेहणाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४८६॥

अत्ताणं झूसेइ अ० २ तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेति २ तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे तेरससागरोवमठितिएसु देवकिब्बिसिएसु देवेसु देवकिब्बिसियत्ताए उववन्ने (सूत्रं० ३८७)

'नो आढाइ'त्ति नाद्रियते तत्रार्थे नादरवान् भवति 'नो परिजाणइ' त्ति न परिजानातीत्यर्थः भाविदोषत्वेनोपेक्षणीयत्वात्तस्येति ॥ 'अरसेहि य'त्ति हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतत्वादविद्यमानरसैः 'विरसेहि य'त्ति पुराणत्वाद्विगतरसैः 'अंतेहि य'त्ति अरसतया सर्वधान्यान्तवर्त्तिभिर्वल्लचणकादिभिः 'पंतेहि य'त्ति तैरेव भुक्तावशेषत्वेन पर्युषितत्वेन वा प्रकर्षेणान्तवर्त्तित्वात्प्रान्तैः 'लूहेहि य'त्ति रूक्षैः 'तुच्छेहि य'त्ति अल्पैः 'कालाइक्कंतेहि य'त्ति तृष्णाबुभुक्षाकालप्राप्तैः 'पमाणाइक्कंतेहि य'त्ति बुभुक्षापिपासामात्रानुचितैः 'रोगायंके' त्ति रोगो–व्याधिः स चासावातङ्कश्च–कृच्छ्रजीवितकारीति रोगातङ्कः 'उज्जले'त्ति उज्ज्वलो–विपक्षलेशेनाप्यकलङ्कितत्वात् 'तिउले'त्ति त्रीनपि मनःप्रभृतिकानर्थान् तुलयति–जयतीति त्रितुलः, क्वचिद्विपुल इत्युच्यते, तत्र विपुलः सकलकायव्यापकत्वात् , 'पगाढे'त्ति प्रकर्षवृत्तिः 'कक्कसे'त्ति कर्कशद्रव्यमिव कर्कशोऽनिष्ट इत्यर्थः 'कडुए'त्ति कटुकं नागरादि तदिव यः स कटुकोऽनिष्ट एवेति 'चंडे'त्ति रौद्रः 'दुक्खे'त्ति दुःखहेतुः 'दुग्गे'त्ति कष्टसाध्य इत्यर्थः 'तिव्वे'त्ति तीव्रं–तिक्तं निम्बादिद्रव्यं तदिव तीव्रः, किमुक्तं भवति ?–'दुरहियासे'त्ति दुरधिसह्यः 'दाहवक्कंतिए'त्ति दाहो व्युत्क्रान्तः–उत्पन्नो यस्यासौ दाहव्युत्क्रान्तः स एव दाहव्युत्क्रान्तिकः 'सेज्जासंथारगं'ति शय्यार्थं–शयनाय संस्तारकः शय्यासंस्तारकः ॥ 'बलियतरं'ति गाढतरं 'किं कडे कज्जइ'त्ति किं निष्पन्न उत निष्पाद्यते ?, अनेनातीतकालनिर्देशेन वर्त्तमानकालनिर्देशेन च कृतक्रियमाणयोर्भेद उक्तः, उत्तरेऽप्येवमेव,

९ शतके उद्देशः ३३ जमालेर्निरुत्तरता सू ३८७

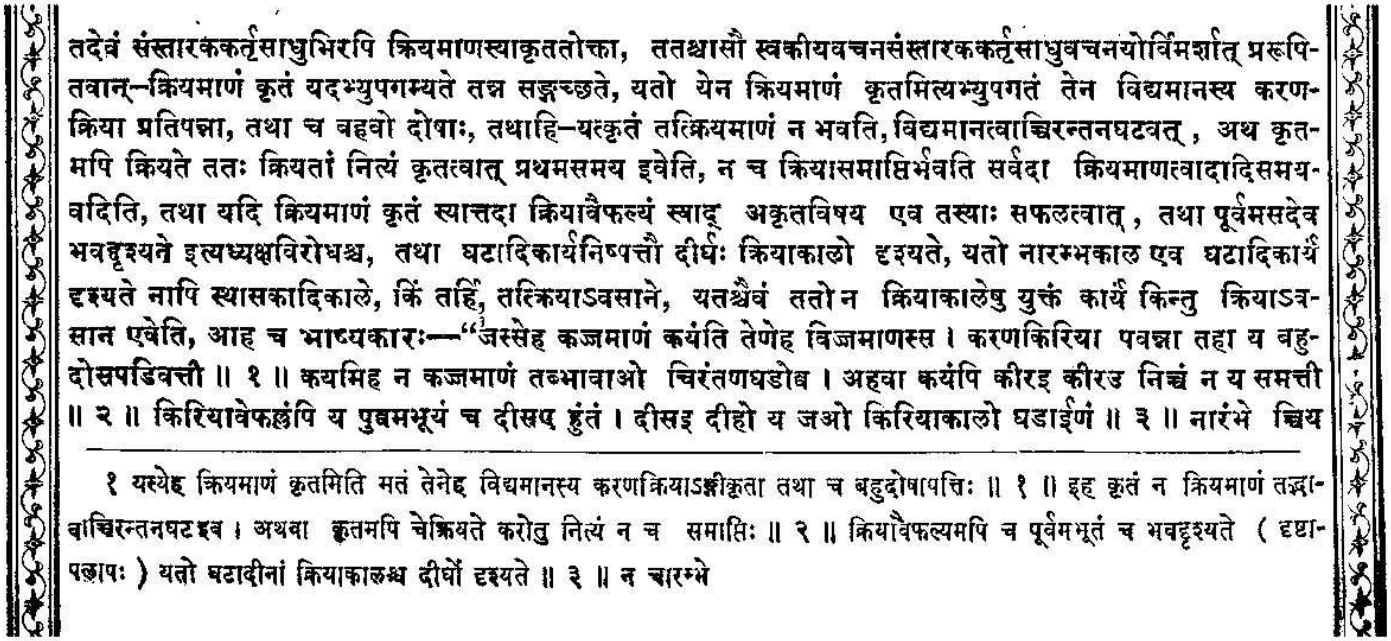
॥४८६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८६--३८७]

दीप अनुक्रम [४६६--४६७]



तदेवं संस्तारककर्तृसाधुभिरपि क्रियमाणस्याकृततोक्ता, ततश्चासौ स्वकीयवचनसंस्तारककर्तृसाधुवचनयोर्विमर्शात् प्ररूपितवान्–क्रियमाणं कृतं यदभ्युपगम्यते तन्न सङ्गच्छते, यतो येन क्रियमाणं कृतमित्यभ्युपगतं तेन विद्यमानस्य करणक्रिया प्रतिपन्ना, तथा च बहवो दोषाः, तथाहि–यत्कृतं तत्क्रियमाणं न भवति, विद्यमानत्वाच्चिरन्तनघटवत्, अथ कृतमपि क्रियते ततः क्रियतां नित्यं कृतत्वात् प्रथमसमय इवेति, न च क्रियासमाप्तिर्भवति सर्वदा क्रियमाणत्वादादिसमयवदिति, तथा यदि क्रियमाणं कृतं स्यात्तदा क्रियावैफल्यं स्याद् अकृतविषय एव तस्याः सफलत्वात्, तथा पूर्वमसदेव भवद्दृश्यते इत्यध्यक्षविरोधश्च, तथा घटादिकार्यनिष्पत्तौ दीर्घः क्रियाकालो दृश्यते, यतो नारम्भकाल एव घटादिकार्यं दृश्यते नापि स्थासकादिकाले, किं तर्हि, तत्क्रियाऽवसाने, यतश्चैवं ततो न क्रियाकालेषु युक्तं कार्यं किन्तु क्रियाऽवसान एवेति, आह च भाष्यकारः—"जस्सेह कज्जमाणं कयंति तेणेह विज्जमाणस्स। करणकिरिया पवन्ना तहा य बहुदोसपडिवत्ती ॥ १ ॥ कयमिह न कज्जमाणं तब्भावाओ चिरंतणघडोव्व। अहवा कयंपि कीरइ कीरउ निच्चं न य समत्ती ॥ २ ॥ किरियावेफल्लंपि य पुव्वमभूयं च दीसए हुंतं। दीसइ दीहो य जओ किरियाकालो घडाईणं ॥ ३ ॥ नारंभे च्चिय

१ यस्येह क्रियमाणं कृतमिति मतं तेनेह विद्यमानस्य करणक्रियाऽङ्गीकृता तथा च बहुदोषापत्तिः ॥ १ ॥ इह कृतं न क्रियमाणं तद्भावाच्चिरन्तनघटइव। अथवा कृतमपि चेत्क्रियते करोतु नित्यं न च समाप्तिः ॥ २ ॥ क्रियावैफल्यमपि च पूर्वमभूतं च भवद्दृश्यते (दृष्टापलापः) यतो घटादीनां क्रियाकालश्च दीर्घो दृश्यते ॥ ३ ॥ न चारम्भे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८६--३८७]

दीप अनुक्रम [४६६--४६७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥४८७॥

दीसइ न सिवादद्धाइ दीसइ तदंते । तो नहि किरियाकाले जुत्तं कज्जं तदंतंमि ॥ ४ ॥" इति । 'अत्थेगइया समणा णिग्गंथा एयमट्ठं णो सद्दहंति'त्ति ये च न श्रद्दधति तेषां मतमिदं–नाकृतं अभूतमविद्यमानमित्यर्थः क्रियते अभावात् खपुष्पवत्, यदि पुनरकृतमपि असदपीत्यर्थः क्रियते तदा खरविषाणमपि क्रियतामसत्त्वाविशेषात्, अपि च–ये कृतकरणपक्षे नित्यक्रियादयो दोषा भणितास्ते च असत्करणपक्षेऽपि तुल्या वर्त्तन्ते, तथाहि–नात्यन्तमसत् क्रियतेऽसद्भावात् खरविषाणमिव, अथात्यन्तासदपि क्रियते तदा नित्यं तत्करणप्रसङ्गः, न चात्यन्तासतः करणे क्रियासमाप्तिर्भवति, तथाऽत्यन्तासतः करणे क्रियावैफल्यं च स्यादसत्त्वादेव खरविषाणवत्, अथ च अविद्यमानस्य करणाभ्युपगमे नित्यक्रियादयो दोषाः कष्टतरका भवन्ति, अत्यन्ताभावरूपत्वात् खरविषाण इवेति, विद्यमानपक्षे तु पर्यायविशेषेणापर्ययणात् स्यादपि क्रियाव्यपदेशो यथाऽऽकाशं कुरु, तथा च नित्यक्रियादयो दोषा न भवन्ति, न पुनरयं न्यायोऽत्यन्तासति खरविषाणादावस्तीति, यच्चोक्तं–'पूर्वमसदेवोत्पद्यमानं दृश्यत इति प्रत्यक्षविरोधः', तत्रोच्यते, यदि पूर्वमभूतं सद्भवद्दृश्यते तदा पूर्वमभूतं सद्भवत् कस्मात्त्वया खरविषाणमपि न दृश्यते, यच्चोक्तं–'दीर्घः क्रियाकालो दृश्यते, तत्रोच्यते', प्रतिसमयमुत्पन्नानां परस्परेणेषद्विलक्षणानां सुबह्वीनां स्थासकोसादीनामारम्भसमयेष्वेव निष्ठानुयायिनीनां कार्यकोटीनां दीर्घः क्रियाकालो यदि दृश्यते तदा किमत्र घटस्यायातं ? येनोच्यते–दृश्यते दीर्घश्च क्रियाकालो घटादीनामिति, यच्चोक्तं–'नारम्भएव दृश्यते' इत्यादि, तत्रोच्यते, कार्यान्तरारम्भे कार्यान्तरं कथं दृश्यतां पटारम्भे घटवत् ?, शिवकस्थासकादयश्च कार्य-

१ दृश्यते (घटादि) न स्थासकाद्यद्धायां किन्तु तदन्ते ततः क्रियाकाले कार्यं न युक्तं युक्तम् तदन्त एव ॥ ४ ॥

९ शतके उद्देशः ३३ कृतक्रियमाणता सू ३८७

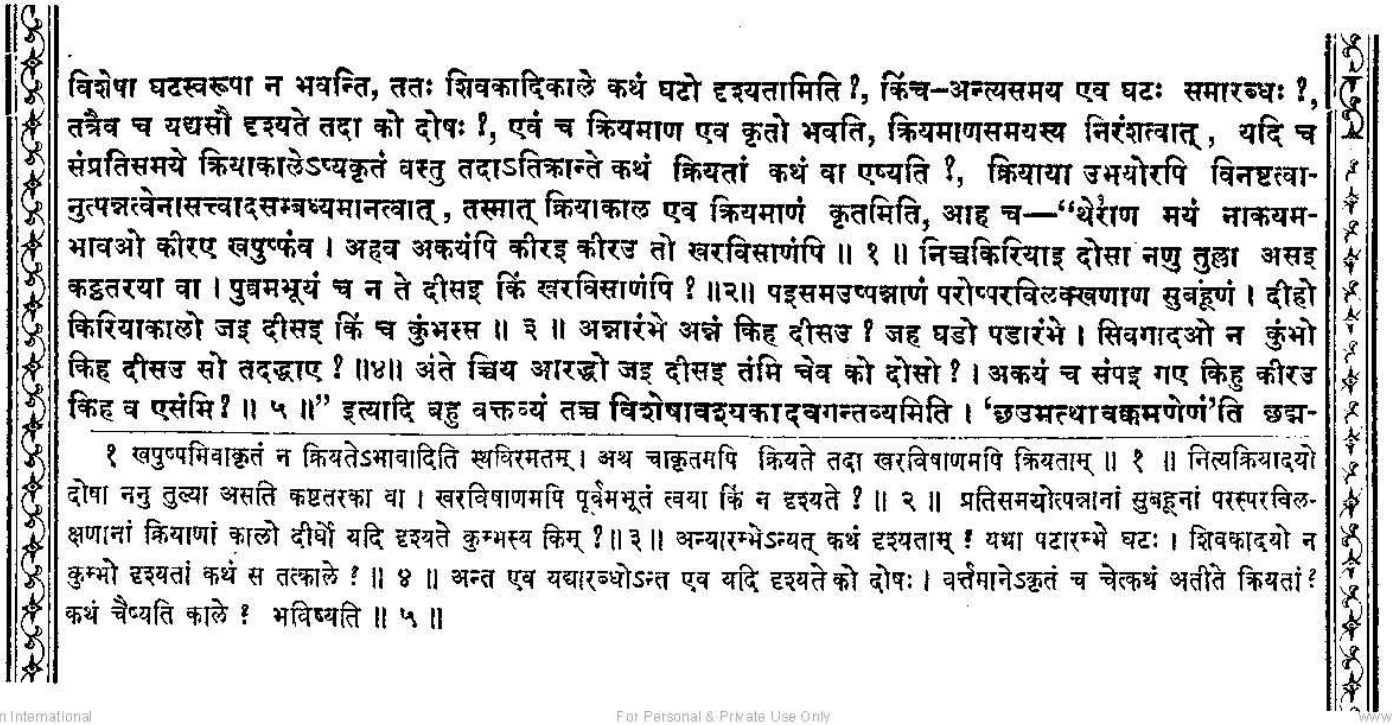
॥४८७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८६--३८७]

दीप अनुक्रम [४६६--४६७]



विशेषा घटस्वरूपा न भवन्ति, ततः शिवकादिकाले कथं घटो दृश्यतामिति ?, किंच–अन्त्यसमय एव घटः समारब्धः ?, तत्रैव च यद्यसौ दृश्यते तदा को दोषः ?, एवं च क्रियमाण एव कृतो भवति, क्रियमाणसमयस्य निरंशत्वात्, यदि च संप्रतिसमये क्रियाकालेऽप्यकृतं वस्तु तदाऽतिक्रान्ते कथं क्रियतां कथं वा एष्यति ?, क्रियाया उभयोरपि विनष्टत्वानुत्पन्नत्वेनासत्त्वादसम्बध्यमानत्वात्, तस्मात् क्रियाकाल एव क्रियमाणं कृतमिति, आह च—"थेराण मयं नाकयमभावओ कीरए खपुप्फंव। अहव अकयंपि कीरइ कीरउ तो खरविसाणंपि ॥ १ ॥ निच्चकिरियाइ दोसा नणु तुल्ला असइ कट्ठतरया वा। पुव्वमभूयं च न ते दीसइ किं खरविसाणंपि ? ॥२॥ पइसमउप्पन्नाणं परोप्परविलक्खणाण सुबहूणं। दीहो किरियाकालो जइ दीसइ किं च कुंभस्स ॥ ३ ॥ अन्नारंभे अन्नं किह दीसउ ? जह घडो पडारंभे। सिवगादओ न कुंभो किह दीसउ सो तदद्धाए ? ॥४॥ अंते च्चिय आरद्धो जइ दीसइ तंमि चेव को दोसो ?। अकयं च संपइ गए किहु कीरउ किह व एसंमि ? ॥ ५ ॥" इत्यादि बहु वक्तव्यं तच्च विशेषावश्यकादवगन्तव्यमिति। 'छउमत्थावक्कमणेणं'ति छद्म-

१ खपुष्पमिवाकृतं न क्रियतेऽभावादिति स्थविरमतम्। अथ चाकृतमपि क्रियते तदा खरविषाणमपि क्रियताम् ॥ १ ॥ नित्यक्रियादयो दोषा ननु तुल्या असति कष्टतरका वा। खरविषाणमपि पूर्वमभूतं त्वया किं न दृश्यते ? ॥ २ ॥ प्रतिसमयोत्पन्नानां सुबहूनां परस्परविलक्षणानां क्रियाणां कालो दीर्घो यदि दृश्यते कुम्भस्य किम् ? ॥ ३ ॥ अन्यारम्भेऽन्यत् कथं दृश्यताम् ? यथा पटारम्भे घटः। शिवकादयो न कुम्भो दृश्यतां कथं स तत्काले ? ॥ ४ ॥ अन्त एव यदारब्धोऽन्त एव यदि दृश्यते को दोषः। वर्त्तमानेऽकृतं च चेत्कथं अतीते क्रियतां ? कथं चैष्यति काले ? भविष्यति ॥ ५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८६--३८७]

दीप अनुक्रम [४६६--४६७]

स्थानां सतामपक्रमणं–गुरुकुलान्निर्गमनं छद्मस्थापक्रमणं तेन, 'आवरिज्जइ'त्ति ईषद्व्रियते 'निवारिज्जइ'त्ति नितरां वार्यते प्रतिहन्यत इत्यर्थः 'न कयाइ नासी'त्यादि तत्र न कदाचिन्नासीदनादित्वात् न कदाचिन्न भवति सदैव भावात् न कदाचिन्न भविष्यति अपर्यवसितत्वात्, किं तर्हि ?,'भुविं चे'त्यादि ततश्चायं त्रिकालभावित्वेनाचलत्वाद् ध्रुवो मेर्वादिवत् ध्रुवत्वादेव 'नियतः' नियताकारो नियतत्वादेव शाश्वतः प्रतिक्षणमप्यसत्त्वस्याभावात् शाश्वतत्त्वादेव 'अक्षयः' निर्विनाशः, अक्षयत्वादेवाव्ययः प्रदेशापेक्षया, अवस्थितो द्रव्यापेक्षया, नित्यस्तदुभयापेक्षया, एकार्था वैते शब्दाः ।

तए णं से भगवं गोयमे जमालिं अणगारं कालगयं जाणित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ ते० २ समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी कुसिस्से जमालिणामं अणगारे से णं भंते ! जमाली अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिं गए कहिं उववन्ने ?, गोयमादि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! ममं अंतेवासी कुसिस्से जमाली नामं से णं तदा मम एवं आइक्खमाणस्स ४ एयमट्ठं णो सद्दहइ ३ एयमट्ठं असद्दहमाणे ३ दोच्चंपि ममं अंतियाओ आयाए अवक्कमइ २ बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं तं चेव जाव देवकिब्बिसियत्ताए उववन्ने (सूत्रं ३८८)

कतिविहा णं भंते ! देवकिब्बिसिया पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा देवकिब्बिसिया पण्णत्ता, तंजहा–तिपलिओवमट्ठिइया तिसागरोवमट्ठिइया तेरससागरोवमट्ठिइया, कहि णं भंते ! तिपलिओवमट्ठितीया देवकिब्बिसिया परिवसंति ?, गोयमा ! उप्पिं जोइसियाणं हिट्ठिं सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु एत्थ णं तिपलिओवम-

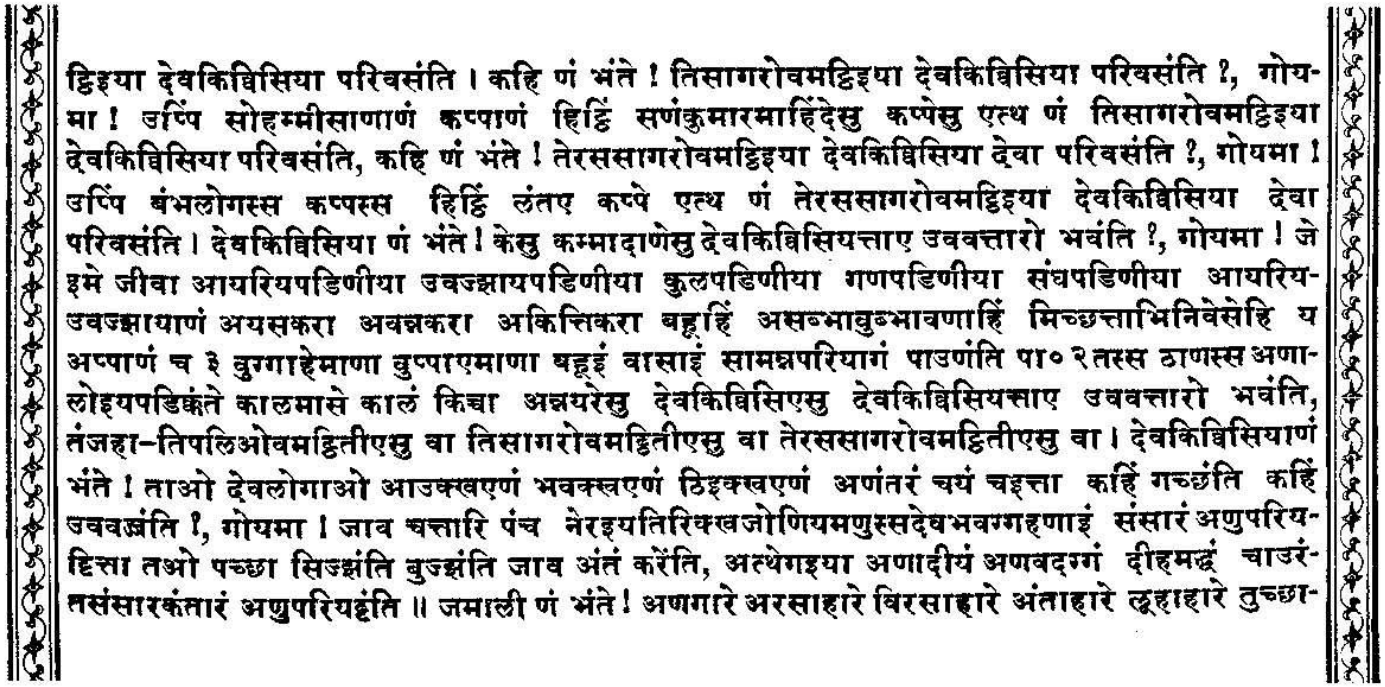
॥४८८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८८--३९०]

दीप अनुक्रम [४६८--४७०]



ट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति । कहि णं भंते ! तिसागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति ?, गोयमा ! उप्पिं सोहम्मीसाणाणं कप्पाणं हिट्ठिं सणंकुमारमाहिंदेसु कप्पेसु एत्थ णं तिसागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति, कहि णं भंते ! तेरससागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया देवा परिवसंति ?, गोयमा ! उप्पिं बंभलोगस्स कप्पस्स हिट्ठिं लंतए कप्पे एत्थ णं तेरससागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया देवा परिवसंति । देवकिब्बिसिया णं भंते ! केसु कम्मादाणेसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति ?, गोयमा ! जे इमे जीवा आयरियपडिणीया उवज्झायपडिणीया कुलपडिणीया गणपडिणीया संघपडिणीया आयरिय-उवज्झायाणं अयसकरा अवन्नकरा अकित्तिकरा बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य अप्पाणं च २ वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणंति पा० २ तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवकिब्बिसिएसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति, तंजहा–तिपलिओवमट्ठितीएसु वा तिसागरोवमट्ठितीएसु वा तेरससागरोवमट्ठितीएसु वा । देवकिब्बिसियाणं भंते ! ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति ?, गोयमा ! जाव चत्तारि पंच नेरइयतिरिक्खजोणियमणुस्सदेवभवग्गहणाइं संसारं अणुपरियट्टित्ता तओ पच्छा सिज्झंति बुज्झंति जाव अंतं करेंति, अत्थेगइया अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टंति ॥ जमाली णं भंते ! अणगारे अरसाहारे विरसाहारे अंताहारे लूहाहारे तुच्छा-

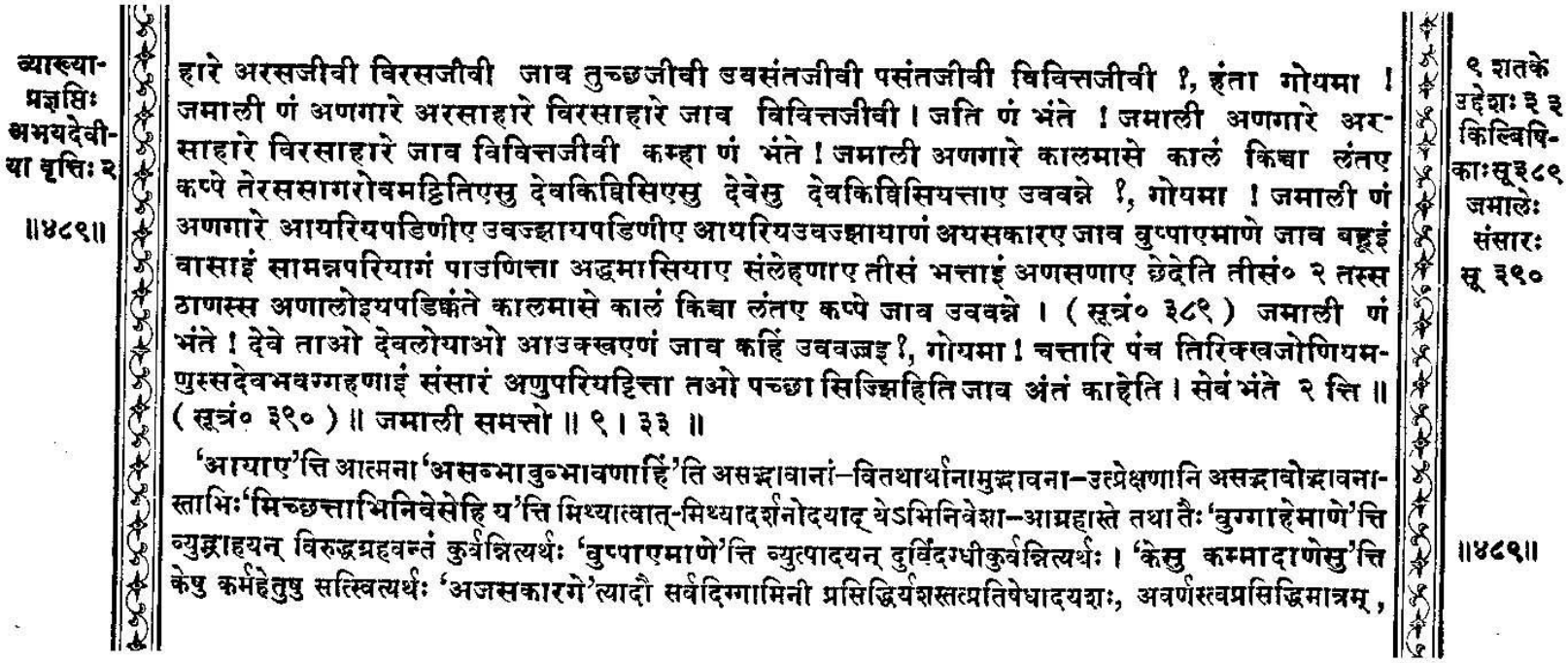
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३८८--३९०]

दीप अनुक्रम [४६८--४७०]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४८९॥

हारे अरसजीवी विरसजीवी जाव तुच्छजीवी उवसंतजीवी पसंतजीवी विवित्तजीवी ?, हंता गोयमा ! जमाली णं अणगारे अरसाहारे विरसाहारे जाव विवित्तजीवी। जति णं भंते ! जमाली अणगारे अरसाहारे विरसाहारे जाव विवित्तजीवी कम्हा णं भंते ! जमाली अणगारे कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे तेरससागरोवमट्ठितिएसु देवकिब्बिसिएसु देवेसु देवकिब्बिसियत्ताए उववन्ने ?, गोयमा ! जमाली णं अणगारे आयरियपडिणीए उवज्झायपडिणीए आयरियउवज्झायाणं अयसकारए जाव बुप्पाएमाणे जाव बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेति तीसं० २ तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे जाव उववन्ने । (सूत्रं० ३८९) जमाली णं भंते ! देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं जाव कहिं उववज्जइ ?, गोयमा ! चत्तारि पंच तिरिक्खजोणियमणुस्सदेवभवग्गहणाइं संसारं अणुपरियट्टित्ता तओ पच्छा सिज्झिहिति जाव अंतं काहेति। सेवं भंते २ त्ति ॥ (सूत्रं० ३९०) ॥ जमाली समत्तो ॥ ९। ३३ ॥

'आयाए'त्ति आत्मना 'असब्भावुब्भावणाहिं'ति असद्भावानां–वितथार्थानामुद्भावना–उत्प्रेक्षणानि असद्भावोद्भावनास्ताभिः 'मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य'त्ति मिथ्यात्वात्-मिथ्यादर्शनोदयाद् येऽभिनिवेशा–आग्रहास्ते तथा तैः 'वुग्गाहेमाणे'त्ति व्युद्ग्राहयन् विरुद्धग्रहवन्तं कुर्वन्नित्यर्थः 'वुप्पाएमाणे'त्ति व्युत्पादयन् दुर्विदग्धीकुर्वन्नित्यर्थः। 'केसु कम्मादाणेसु'त्ति केषु कर्महेतुषु सत्स्वित्यर्थः 'अजसकारगे'त्यादौ सर्वदिग्गामिनी प्रसिद्धिर्यशस्तत्प्रतिषेधादयशः, अवर्णस्त्वप्रसिद्धिमात्रम्,

९ शतके उद्देशः ३३ किल्बिषिकाः सू३८९ जमालेः संसारः सू ३९०

॥४८९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली-चरित्रं

प्रत सूत्रांक [३८८--३९०]

दीप अनुक्रम [४६८--४७०]

अकीर्त्तिः पुनरेकदिग्गामिन्यप्रसिद्धिरिति 'अरसाहारे'त्यादि, इह च 'अरसाहारे' इत्याद्यपेक्षया 'अरसजीवी'त्यादि न पुनरुक्तं शीलादिप्रत्ययार्थेन भिन्नार्थत्वादिति, 'उवसंतजीवि'त्ति उपशान्तोऽन्तर्वृत्त्या जीवतीत्येवंशील उपशान्तजीवी, एवं प्रशान्तजीवी नवरं प्रशान्तो बहिर्वृत्त्या, 'विवित्तजीवि'त्ति इह विविक्तः स्त्र्यादिसंसक्तासनादिवर्जनत इति । अथ भगवता श्रीमन्महावीरेण सर्वज्ञत्वादमुं तद्व्यतिकरं जानताऽपि किमिति प्रव्राजितोऽसौ ? इति, उच्यते, अवश्यम्भाविभावानां महानुभावैरपि प्रायो लङ्घयितुमशक्यत्वाद् इत्थमेव वा गुणविशेषदर्शनाद्, अमूढलक्षा हि भगवन्तोऽर्हन्तो न निष्प्रयोजनं क्रियासु प्रवर्त्तन्त इति ॥ नवमशते त्रयस्त्रिंशत्तम उद्देशकः समाप्तः ॥ ९ । ३३ ॥

अनन्तरोद्देशके गुरुप्रत्यनीकतया स्वगुणव्याघात उक्तश्चतुस्त्रिंशत्तमे तु पुरुषव्याघातेन तदन्यजीवव्याघात उच्यत इत्यैवंसंबद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव एवं वयासी–पुरिसे णं भंते ! पुरिसं हणमाणे किं पुरिसं हणइ नोपुरिसं हणइ ?, गोयमा ! पुरिसंपि हणइ नोपुरिसेवि हणति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ पुरिसंपि हणइ नोपुरिसेवि हणइ ?, गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ एवं खलु अहं एगं पुरिसं हणामि से णं एगं पुरिसं हणमाणे अणेगजीवा हणइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुचइ पुरिसंपि हणइ नोपुरिसेवि हणति । पुरिसे णं भंते ! आसं हणमाणे किं आसं हणइ नोआसेवि हणइ ?, गोयमा ! आसंपि हणइ नोआसेवि हणइ, से केणट्ठेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र नवमे शतके त्रयस्त्रिंशत-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ नवमे शतके चतुस्त्रिंशत-उद्देशक: आरभ्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४९०॥

अट्ठो तहेव, एवं हत्थिं सीहं वग्घं जाव चिल्ललगं। पुरिसे णं भंते ! अन्नयरं तसपाणं हणमाणे किं अन्नयरं तसपाणं हणइ नोअन्नयरे तसपाणे हणइ ?, गोयमा ! अन्नयरंपि तसपाणं हणइ नोअन्नयरेवि तसे पाणे हणइ, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अन्नयरंपि तसं पाणं नोअन्नयरेवि तसे पाणे हणइ ?, गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ एवं खलु अहं एगं अन्नयरं तसं पाणं हणामि से णं एगं अन्नयरं तसं पाणं हणमाणे अणेगे जीवे हणइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! तं चेव एए सव्वेवि एक्कगमा। पुरिसे णं भंते ! इसिं हणमाणे किं इसिं हणइ नोइसिं हणइ ?, गोयमा ! इसिंपि हणइ नोइसिंपि हणइ, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव नोइसिंपि हणइ ?, गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ एवं खलु अहं एगं इसिं हणामि, से णं एगं इसिं हणमाणे अणंते जीवे हणइ से तेणट्ठेणं निक्खेवओ। पुरिसे णं भंते ! पुरिसं हणमाणे किं पुरिसवेरेणं पुट्ठे नोपुरिसवेरेणं पुट्ठे ?, गोयमा ! नियमा ताव पुरिसवेरेणं पुट्ठे अहवा पुरिसवेरेण य णोपुरिसवेरेण य पुट्ठे अहवा पुरिसवेरेण य नोपुरिसवेरेहि य पुट्ठे, एवं आसं एवं जाव चिल्ललगं जाव अहवा चिल्ललगवेरेण य णो चिल्ललगवेरेहि य पुट्ठे, पुरिसे णं भंते ! इसिं हणमाणे किं इसिवेरेणं पुट्ठे नोइसिवेरेणं ?, गोयमा ! नियमा इसिवेरेण य नोइसिवेरेहि य पुट्ठे ॥ (सूत्रं० ३९१)

'तेण'मित्यादि, 'नोपुरिसं हणइ'त्ति पुरुषव्यतिरिक्तं जीवान्तरं हन्ति 'अणेगे जीवे हणइ'त्ति 'अनेकान् जीवान्' यूकाशतपदिकाकृमिगण्डोलकादीन् तदाश्रितान् तच्छरीरावष्टब्धांस्तद्रुधिरप्लावितादींश्च हन्ति, अथवा स्वकायस्याकुञ्च-

९ शतके उद्देशः ३४ पुरुषऋषि-वैरादि सू. ३९१

॥४९०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३९१]

दीप अनुक्रम [४७१]

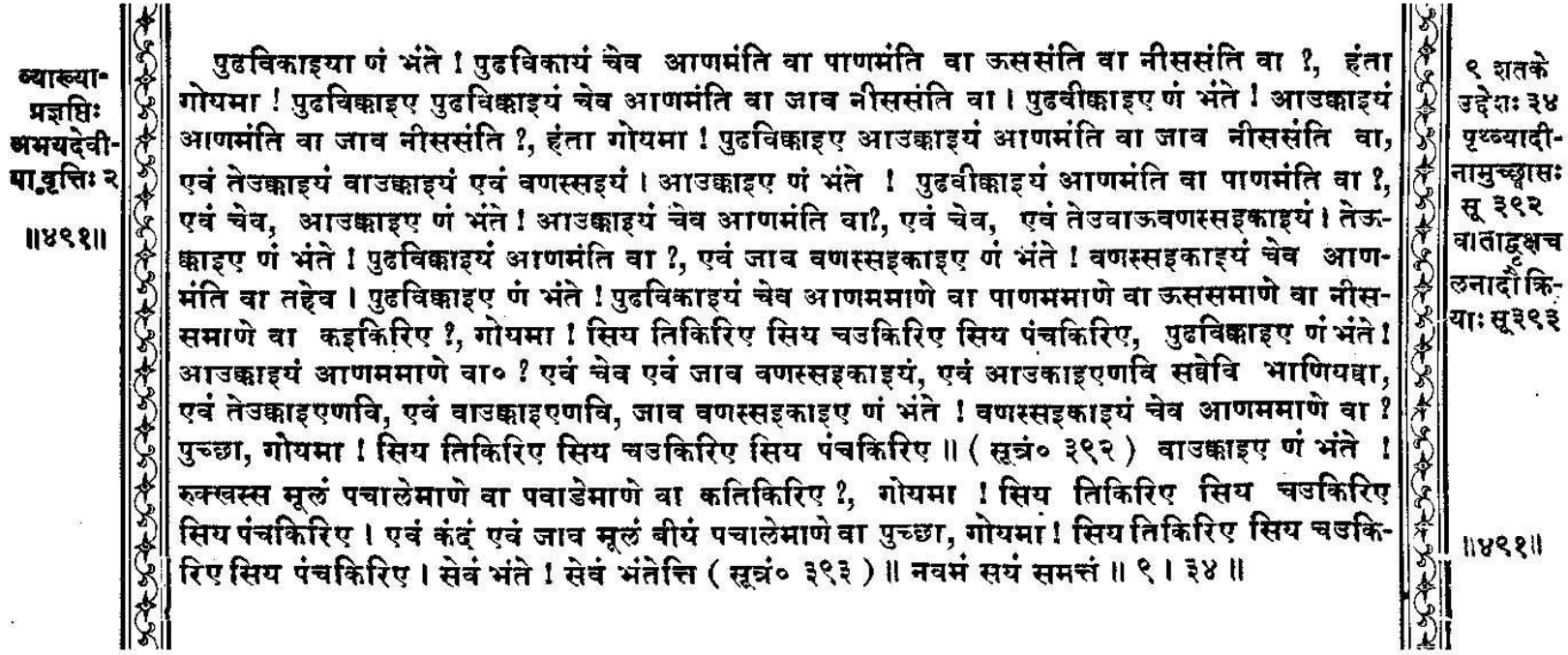
नप्रसरणादिनेति, 'छणइ'त्ति क्वचित्पाठस्तत्रापि स एवार्थः, क्षणधातोर्हिंसार्थत्वात्, बाहुल्याश्रयं चेदं सूत्रं, तेन पुरुषं घ्नन् तथाविधसामग्रीवशात् कश्चित्तमेव हन्ति कश्चिदेकमपि जीवान्तरं हन्तीत्यपि द्रष्टव्यं, वक्ष्यमाणभङ्गकत्रयान्यथाऽनुपपत्तेरिति, 'एते सव्वे एक्कगमा' 'एते' हस्त्यादयः 'एकगमाः' सदृशाभिलापाः 'इसिं'ति ऋषिम् 'अणंते जीवे हणइ'त्ति ऋषिं घ्नन्ननन्तान् जीवान् हन्ति, यतस्तद्घातेऽनन्तानां घातो भवति, मृतस्य तस्य विरतेरभावेनानन्तजीवघातकत्वभावात्, अथवा ऋषिर्जीवन् बहून् प्राणिनः प्रतिबोधयति, ते च प्रतिबुद्धाः क्रमेण मोक्षमासादयन्ति, मुक्ताश्चानन्तानामपि संसारिणामघातका भवन्ति, तद्वधे चैतत्सर्वं न भवत्यतस्तद्वधेऽनन्तजीववधो भवतीति, 'निक्खेवओ'त्ति निगमनं। 'नियमा पुरिसवेरेणे'त्यादि, पुरुषस्य हतत्वान्नियमात्पुरुषवधपापेन स्पृष्ट इत्येको भङ्गः, तत्र च यदि प्राण्यन्तरमपि हतं तदा पुरुषवैरेण नोपुरुषवैरेण चेति द्वितीयः, यदि तु बहवः प्राणिनो हतास्तत्र तदा पुरुषवैरेण नोपुरुषवैरैश्चेति तृतीयः, एवं सर्वत्र त्रयम्, ऋषिपक्षे तु ऋषिवैरेण नोऋषिवैरैश्चेत्येवमेक एव, ननु यो मृतो मोक्षं यास्यत्यविरतो न भविष्यति तस्यर्षेर्वधे ऋषिवैरमेव भवत्यतः प्रथमविकल्पसम्भवः, अथ चरमशरीरस्य निरुपक्रमायुष्कत्वान्न हननसम्भवस्ततोऽचरमशरीरापेक्षया यथोक्तभङ्गकसम्भवो, नैवं, यतो यद्यपि चरमशरीरो निरुपक्रमायुष्कस्तथाऽपि तद्वधाय प्रवृत्तस्य यमुनराजस्येव वैरमस्त्येवेति प्रथमभङ्गकसम्भव इति, सत्यं, किन्तु यस्य ऋषेः सोपक्रमायुष्कत्वात् पुरुषकृतो वधो भवति तमाश्रित्येदं सूत्रं प्रवृत्तं, तस्यैव हननस्य मुख्यवृत्त्या पुरुषकृतत्वादिति ॥ प्राग् हननमुक्तं, हननं चोच्छ्वासादिवियोगोऽत उच्छ्वासादिवक्तव्यतामाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३९२--३९३]

दीप अनुक्रम [४७२--४७३]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४९१॥

पुढविकाइया णं भंते ! पुढविकायं चेव आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा ?, हंता गोयमा ! पुढविक्काइए पुढविक्काइयं चेव आणमंति वा जाव नीससंति वा। पुढवीक्काइए णं भंते ! आउक्काइयं आणमंति वा जाव नीससंति ?, हंता गोयमा ! पुढविक्काइए आउक्काइयं आणमंति वा जाव नीससंति वा, एवं तेउक्काइयं वाउक्काइयं एवं वणस्सइयं। आउक्काइए णं भंते ! पुढवीक्काइयं आणमंति वा पाणमंति वा ?, एवं चेव, आउक्काइए णं भंते ! आउक्काइयं चेव आणमंति वा?, एवं चेव, एवं तेउवाऊवणस्सइकाइयं। तेऊक्काइए णं भंते ! पुढविक्काइयं आणमंति वा ?, एवं जाव वणस्सइकाइए णं भंते ! वणस्सइकाइयं चेव आणमंति वा तहेव। पुढविक्काइए णं भंते ! पुढविकाइयं चेव आणममाणे वा पाणममाणे वा ऊससमाणे वा नीससमाणे वा कइकिरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए, पुढविक्काइए णं भंते ! आउक्काइयं आणममाणे वा० ? एवं चेव एवं जाव वणस्सइकाइयं, एवं आउकाइएणवि सवेवि भाणियव्वा, एवं तेउक्काइएणवि, एवं वाउक्काइएणवि, जाव वणस्सइकाइए णं भंते ! वणस्सइकाइयं चेव आणममाणे वा ? पुच्छा, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए ॥ (सूत्रं० ३९२) वाउक्काइए णं भंते ! रुक्खस्स मूलं पचालेमाणे वा पवाडेमाणे वा कतिकिरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए। एवं कंदं एवं जाव मूलं बीयं पचालेमाणे वा पुच्छा, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं० ३९३) ॥ नवमं सयं समत्तं ॥ ९। ३४ ॥

९ शतके उद्देशः ३४ पृथ्व्यादीनामुच्छ्वासः सू ३९२ वाताद्यूक्षचलनादौ क्रियाः सू३९३

॥४९१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३९२--३९३]

दीप अनुक्रम [४७२--४७३]

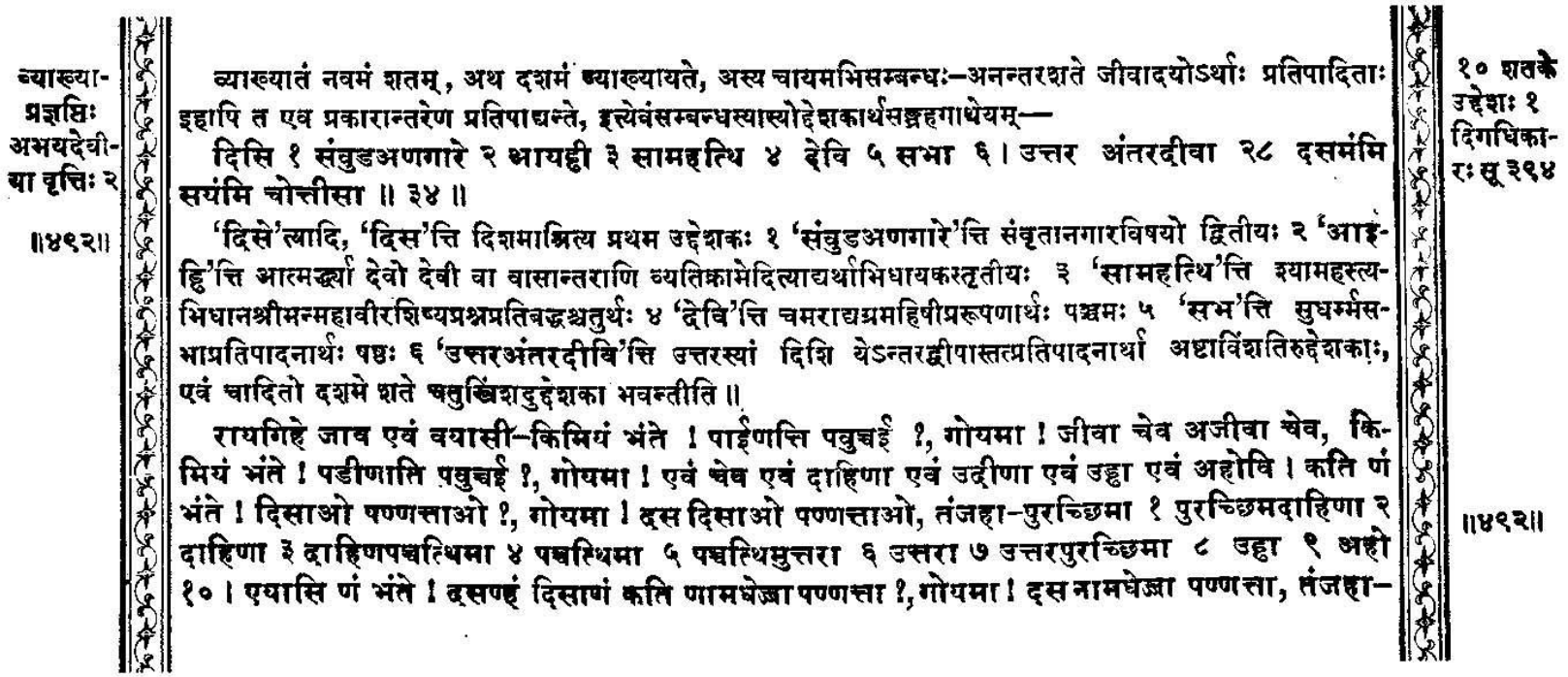
'पुढविक्काइए णं भंते' इत्यादि, इह पूज्यव्याख्या यथा वनस्पतिरन्यस्योपर्यन्यः स्थितस्तत्तेजोग्रहणं करोति एवं पृथिवीकायिकादयोऽप्यन्योऽन्यसंबद्धत्वात्तत्तद्रूपं प्राणापानादि कुर्वन्तीति, तत्रैकः पृथिवीकायिकोऽन्यं स्वसंबद्धं पृथिवीकायिकम् अनिति–तद्रूपमुच्छ्वासं करोति, यथोदरस्थितकर्पूरः पुरुषः कर्पूरस्वभावमुच्छ्वासं करोति, एवमप्कायादिकानिति, एवं पृथिवीकायिकसूत्राणि पञ्च, एवमेवाप्कायादयः प्रत्येकं पञ्च सूत्राणि लभन्त इति पञ्चविंशतिः सूत्राण्येतानीति । क्रियासूत्राण्यपि पञ्चविंशतिस्तत्र 'सिय तिकिरिए'त्ति यदा पृथिवीकायिकादिः पृथिवीकायिकादिरूपमुच्छ्वासं कुर्वन्नपि न तस्य पीडामुत्पादयति स्वभावविशेषात्तदाऽसौ कायिक्यादित्रिक्रियः स्यात्, यदा तु तस्य पीडामुत्पादयति तदा पारितापनिकीक्रियाभावाच्चतुष्क्रियः, प्राणातिपातसद्भावे तु पञ्चक्रिय इति ॥ क्रियाधिकारादेवेदमाह—'वाउक्काइए ण'मित्यादि, इह च वायुना वृक्षमूलस्य प्रचलनं प्रपातनं वा तदा संभवति यथा नदीभित्त्यादिषु पृथिव्या अनावृत्तं तत्स्यादिति । अथ कथं प्रपातेन त्रिक्रियत्वं परितापादेः सम्भवात् ?, उच्यते, अचेतनमूलापेक्षयेति ॥ नवमशते चतुस्त्रिंशत्तमः ॥ ९ । ३४ ॥ अस्मन्मनोव्योमतलप्रचारिणा, श्रीपार्श्वसूर्यस्य विसर्प्पतेजसा । दुर्धृष्यसंमोहतमोऽपसारणाद्, विभक्तमेवं नवमं शतं मया १

॥ समाप्तं नवमं शतम् ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीमदभयदेवसूरिविरचितवृत्तियुतं नवमं शतकं समाप्तं ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र नवमे शतके चतुस्त्रिंशत-उद्देशकः परिसमाप्तः तत् समाप्ते नवमं शतकं अपि समाप्तं



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥४९२॥

व्याख्यातं नवमं शतम्, अथ दशमं व्याख्यायते, अस्य चायमभिसम्बन्धः–अनन्तरशते जीवादयोऽर्थाः प्रतिपादिताः इहापि त एव प्रकारान्तरेण प्रतिपाद्यन्ते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्योद्देशकार्थसङ्ग्रहगाथेयम्—

दिसि १ संवुडअणगारे २ आयड्ढी ३ सामहत्थि ४ देवि ५ सभा ६। उत्तर अंतरदीवा २८ दसमंमि सयंमि चोत्तीसा ॥ ३४ ॥

'दिसे'त्यादि, 'दिस'त्ति दिशमाश्रित्य प्रथम उद्देशकः १ 'संवुडअणगारे'त्ति संवृतानगारविषयो द्वितीयः २ 'आइड्ढि'त्ति आत्मर्द्ध्या देवो देवी वा वासान्तराणि व्यतिक्रामेदित्याद्यर्थाभिधायकस्तृतीयः ३ 'सामहत्थि'त्ति श्यामहस्त्यभिधानश्रीमन्महावीरशिष्यप्रश्नप्रतिबद्धश्चतुर्थः ४ 'देवि'त्ति चमराद्यग्रमहिषीप्ररूपणार्थः पञ्चमः ५ 'सभ'त्ति सुधर्म्मसभाप्रतिपादनार्थः षष्ठः ६ 'उत्तरअंतरदीवि'त्ति उत्तरस्यां दिशि येऽन्तरद्वीपास्तत्प्रतिपादनार्था अष्टाविंशतिरुद्देशकाः, एवं चादितो दशमे शते चतुस्त्रिंशदुद्देशका भवन्तीति ॥

रायगिहे जाव एवं वयासी–किमियं भंते ! पाईणत्ति पवुच्चइ ?, गोयमा ! जीवा चेव अजीवा चेव, किमियं भंते ! पडीणत्ति पवुच्चइ ?, गोयमा ! एवं चेव एवं दाहिणा एवं उदीणा एवं उड्ढा एवं अहोवि। कति णं भंते ! दिसाओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! दस दिसाओ पण्णत्ताओ, तंजहा–पुरच्छिमा १ पुरच्छिमदाहिणा २ दाहिणा ३ दाहिणपच्चत्थिमा ४ पच्चत्थिमा ५ पच्चत्थिमुत्तरा ६ उत्तरा ७ उत्तरपुरच्छिमा ८ उड्ढा ९ अहो १०। एयासि णं भंते ! दसण्हं दिसाणं कति णामधेज्जा पण्णत्ता ?, गोयमा ! दस नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा–

१० शतके उद्देशः १ दिगधिकारः सू ३९४

॥४९२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

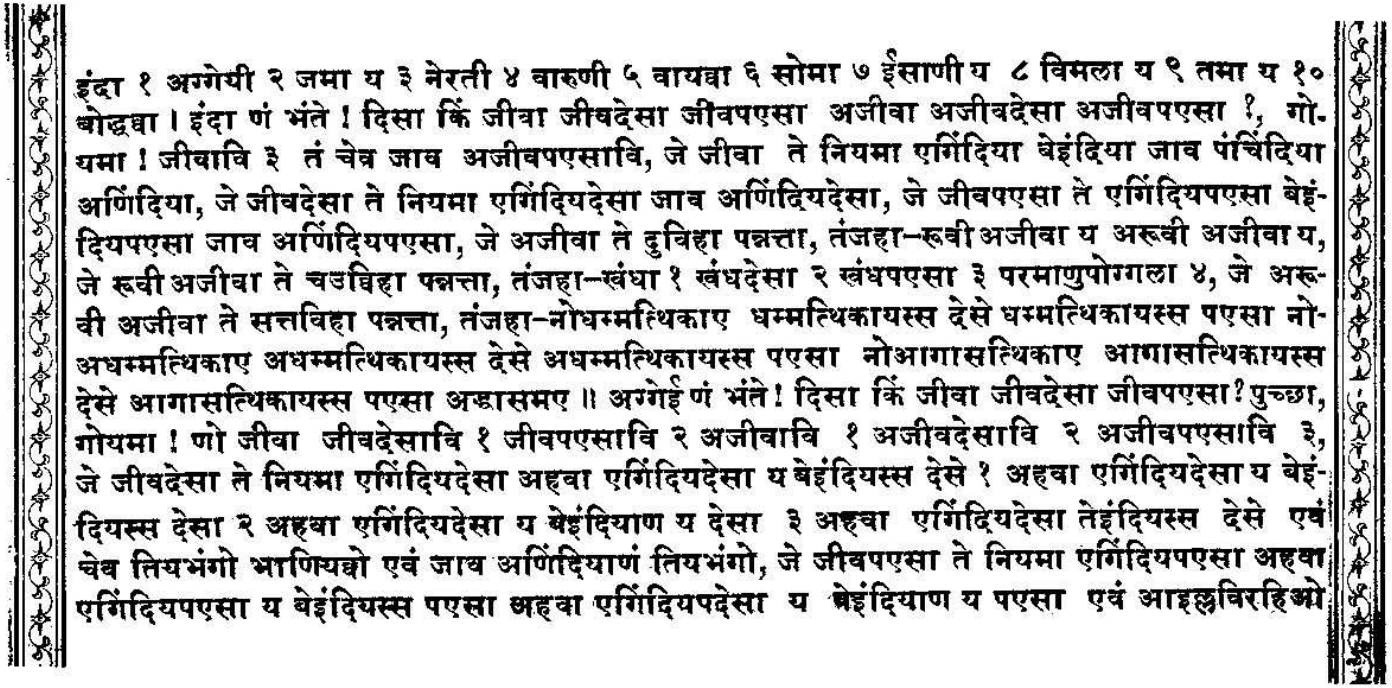
अथ दशमं शतकं आरब्धं

अत्र दशमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरभ्यते

*****अत्र मूल-संपादने सूत्र-क्रमांकने एका स्खलना दृश्यते–गाथा स्थाने ॥३४॥ लिखितं, तत्र ॥१॥ एव वर्तते**

प्रत सूत्रांक [३९४] + गाथा

दीप अनुक्रम [४७४--४७५]



इंदा १ अग्गेयी २ जमा य ३ नेरती ४ वारुणी ५ वायवा ६ सोमा ७ ईसाणी य ८ विमला य ९ तमा य १० बोद्धव्वा । इंदा णं भंते ! दिसा किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा ?, गोयमा ! जीवावि ३ तं चेव जाव अजीवपएसावि, जे जीवा ते नियमा एगिंदिया बेइंदिया जाव पंचिंदिया अणिंदिया, जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा जाव अणिंदियदेसा, जे जीवपएसा ते एगिंदियपएसा बेइंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा, जे अजीवा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–रूवी अजीवा य अरूवी अजीवा य, जे रूवी अजीवा ते चउविहा पन्नत्ता, तंजहा–खंधा १ खंधदेसा २ खंधपएसा ३ परमाणुपोग्गला ४, जे अरूवी अजीवा ते सत्तविहा पन्नत्ता, तंजहा–नोधम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायस्स पएसा नोअधम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकायस्स देसे अधम्मत्थिकायस्स पएसा नोआगासत्थिकाए आगासत्थिकायस्स देसे आगासत्थिकायस्स पएसा अद्धासमए ॥ अग्गेई णं भंते! दिसा किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा? पुच्छा, गोयमा ! णो जीवा जीवदेसावि १ जीवपएसावि २ अजीवावि १ अजीवदेसावि २ अजीवपएसावि ३, जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसे १ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसा २ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियाण य देसा ३ अहवा एगिंदियदेसा तेइंदियस्स देसे एवं चेव तियभंगो भाणियव्वो एवं जाव अणिंदियाणं तियभंगो, जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियस्स पएसा अहवा एगिंदियपदेसा य बेइंदियाण य पएसा एवं आइल्लविरहिओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाव अणिंदियाणं, जे अजीवा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–रूविअजीवा य अरूवीअजीवा य जे रूवी अजीवा ते चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा–खंधा जाव परमाणुपोग्गला ४, जे अरूवी अजीवा ते सत्तविहा पन्नत्ता, तंजहा–नो धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायस्स पएसा एवं अधम्मत्थिकायस्सवि जाव आगासत्थिकायस्स पएसा अद्धासमए । विदिसासु नत्थि जीवा देसे भंगो य होइ सव्वत्थ । जमा णं भंते ! दिसा किं जीवा जहा इंदा तहेव निरवसेसा नेरई य जहा अग्गेयी वारुणी जहा इंदा वायव्वा जहा अग्गेयी सोमा जहा इंदा ईसाणी जहा अग्गेयी, विमलाए जीवा जहा अग्गेयी, अजीवा जहा इंदा, एवं तमाएवि, नवरं अरूवी छव्विहा अद्धासमयो न भन्नति ॥ (सूत्रं ३९४)

'किमियं भंते ! पाईणत्ति पवुच्चइ'त्ति किमेतद्वस्तु यत् प्रागेव प्राचीनं दिग्विवक्षायां 'प्राची वा'प्राची पूर्वेति प्रोच्यते, उत्तरं तु जीवाश्चैव अजीवाश्चैव, जीवा–जीवरूपा प्राची, तत्र जीवा–एकेन्द्रियादयः अजीवास्तु–धर्मास्तिकायादिदेशादयः, इदमुक्तं भवति–प्राच्यां दिशि जीवा अजीवाश्च सन्तीति । 'इंदे'त्यादि, इन्द्रो देवता यस्याः सैन्द्री 'अग्निर्देवता यस्याः साऽऽग्नेयी, एवं यमो देवता, याम्या निर्ऋतिर्देवता नैर्ऋती वरुणो देवता वारुणी वायुर्देवता वायव्या सोमदेवता सौम्या ईशानदेवता ऐशानी विमलतया विमला तमा–रात्रिस्तदाकारत्वात्तमाऽन्धकारेत्यर्थः, अत्र ऐन्द्री पूर्वा शेषाः क्रमेण, विमला तूर्द्ध्वा तमा पुनरधोदिगिति, इह च दिशः शकटोद्धिसंस्थिताः विदिशस्तु मुक्तावल्याकाराः ऊर्ध्वाधोदिशौ च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रुचकाकारे, आह च–"[1]सगडुद्धिसंठियाओ महादिसाओ हवंति चत्तारि। मुत्तावलीव चउरो दो चेव य होंति रुयगनिभे ॥ १ ॥" इति। 'जीवावी'त्यादि, ऐन्द्री दिग् जीवा तस्यां जीवानामस्तित्वात्, एवं जीवदेशा जीवप्रदेशाश्चेति, तथाऽजीवानां पुद्गलादीनामस्तित्वादजीवाः धर्मास्तिकायादिदेशानां पुनरस्तित्वादजीवदेशाः एवमजीवप्रदेशा अपीति, तत्र ये जीवास्त एकेन्द्रियादयोऽनिन्द्रियाश्च केवलिनः, ये तु जीवदेशास्त एकेन्द्रियादीनाम् ६, एवं जीवप्रदेशा अपि, 'जे अरूवी अजीवा ते सत्तविह'त्ति, कथं ?, नोधम्मत्थिकाए, अयमर्थः–धर्मास्तिकायः समस्त एवोच्यते, स च प्राचीदिग् न भवति, तदेकदेशभूतत्वात्तस्याः, किन्तु धर्मास्तिकायस्य देशः, सा तदेकदेशभागरूपेति १, तथा तस्यैव प्रदेशाः सा भवति, असङ्ख्येयप्रदेशात्मकत्वात्तस्याः २, एवमधर्म्मास्तिकायस्य देशः प्रदेशाश्च ३–४, एवमाकाशास्तिकायस्यापि देशः प्रदेशाश्च ५–६, अद्धासमयश्चेति ७, तदेवं सप्तप्रकारारूप्यजीवरूपा ऐन्द्री दिगिति ॥ 'अग्गेयी ण'मित्यादिप्रश्नः, उत्तरे तु जीवा निषेधनीयाः, विदिशामेकप्रदेशिकत्वादेकप्रदेशे च जीवानामवगाहाभावात्, असङ्ख्यातप्रदेशावगाहित्वात्तेषां, तत्र 'जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेस'त्ति एकेन्द्रियाणां सकललोकव्यापकत्वादाग्नेय्यां नियमादेकेन्द्रियदेशाः सन्तीति, 'अहवे'त्यादि, एकेन्द्रियाणां सकललोकव्यापकत्वादेव द्वीन्द्रियाणां चाल्पत्वेन क्वचिदेकस्यापि तस्य सम्भवादुच्यते एकेन्द्रियाणां देशाश्च द्वीन्द्रियस्य देशश्चेति द्विकयोगे प्रथमः, अथवैकेन्द्रियपदं तथैव द्वीन्द्रियपदे त्वेकवचनं देशपदे पुनर्बहुवचनमिति द्वितीयः, अयं च यदा द्वीन्द्रियो द्व्यादिभिर्देशैस्तां स्पृशति तदा स्यादिति, अथवैकेन्द्रियपदं तथैव द्वीन्द्रियपदं

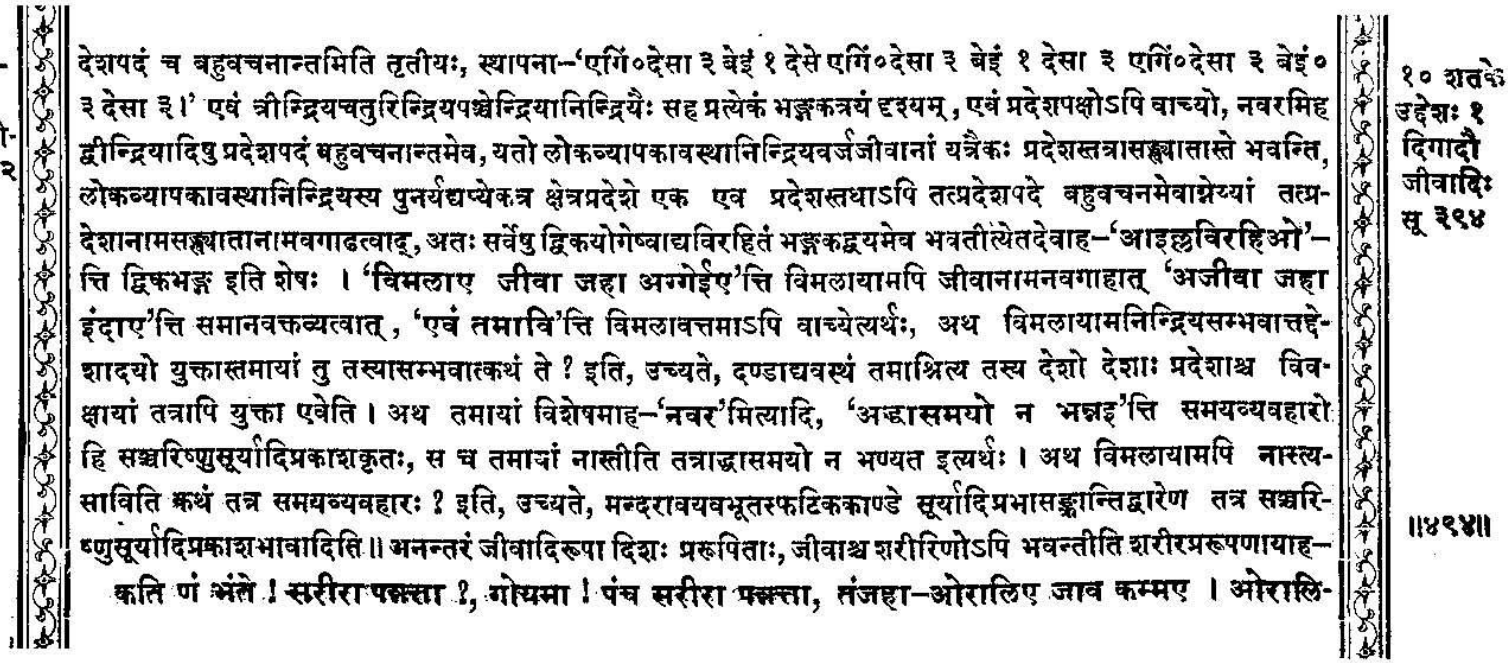
१ शकटोद्धिसंस्थिताश्चतस्रो महादिशो भवन्ति चतस्रो मुक्तावलीव द्वे च रुचकनिभे भवतः ॥ १ ॥ (ऊर्द्ध्वाधोदिशौ)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३९४] + गाथा

दीप अनुक्रम [४७४--४७५]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥४९४॥

देशपदं च बहुवचनान्तमिति तृतीयः, स्थापना–'एगिं०देसा ३ बेइं १ देसे एगिं०देसा ३ बेइं १ देसा ३ एगिं०देसा ३ बेइं० ३ देसा ३।' एवं त्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियपञ्चेन्द्रियानिन्द्रियैः सह प्रत्येकं भङ्गकत्रयं दृश्यम्, एवं प्रदेशपक्षोऽपि वाच्यो, नवरमिह द्वीन्द्रियादिषु प्रदेशपदं बहुवचनान्तमेव, यतो लोकव्यापकावस्थानिन्द्रियवर्जजीवानां यत्रैकः प्रदेशस्तत्रासङ्ख्यातास्ते भवन्ति, लोकव्यापकावस्थानिन्द्रियस्य पुनर्यद्यप्येकत्र क्षेत्रप्रदेशे एक एव प्रदेशस्तथाऽपि तत्प्रदेशपदे बहुवचनमेवाग्नेय्यां तत्प्रदेशानामसङ्ख्यातानामवगाढत्वाद्, अतः सर्वेषु द्विकयोगेष्वाद्यविरहितं भङ्गकद्वयमेव भवतीत्येतदेवाह–'आइल्लविरहिओ'–त्ति द्विकभङ्ग इति शेषः । 'विमलाए जीवा जहा अग्गेईए'त्ति विमलायामपि जीवानामनवगाहात् 'अजीवा जहा इंदाए'त्ति समानवक्तव्यत्वात्, 'एवं तमावि'त्ति विमलावत्तमाऽपि वाच्येत्यर्थः, अथ विमलायामनिन्द्रियसम्भवात्तद्देशादयो युक्तास्तमायां तु तस्यासम्भवात्कथं ते ? इति, उच्यते, दण्डाद्यवस्थं तमाश्रित्य तस्य देशो देशाः प्रदेशाश्च विवक्षायां तत्रापि युक्ता एवेति । अथ तमायां विशेषमाह–'नवर'मित्यादि, 'अद्धासमयो न भन्नइ'त्ति समयव्यवहारो हि सञ्चरिष्णुसूर्यादिप्रकाशकृतः, स च तमायां नास्तीति तत्राद्धासमयो न भण्यत इत्यर्थः । अथ विमलायामपि नास्त्यसाविति कथं तत्र समयव्यवहारः ? इति, उच्यते, मन्दरावयवभूतस्फटिककाण्डे सूर्यादिप्रभासङ्क्रान्तिद्वारेण तत्र सञ्चरिष्णुसूर्यादिप्रकाशभावादिति ॥ अनन्तरं जीवादिरूपा दिशः प्ररूपिताः, जीवाश्च शरीरिणोऽपि भवन्तीति शरीरप्ररूपणायाह–

कति णं भंते ! सरीरा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंच सरीरा पन्नत्ता, तंजहा–ओरालिए जाव कम्मए । ओरालि-

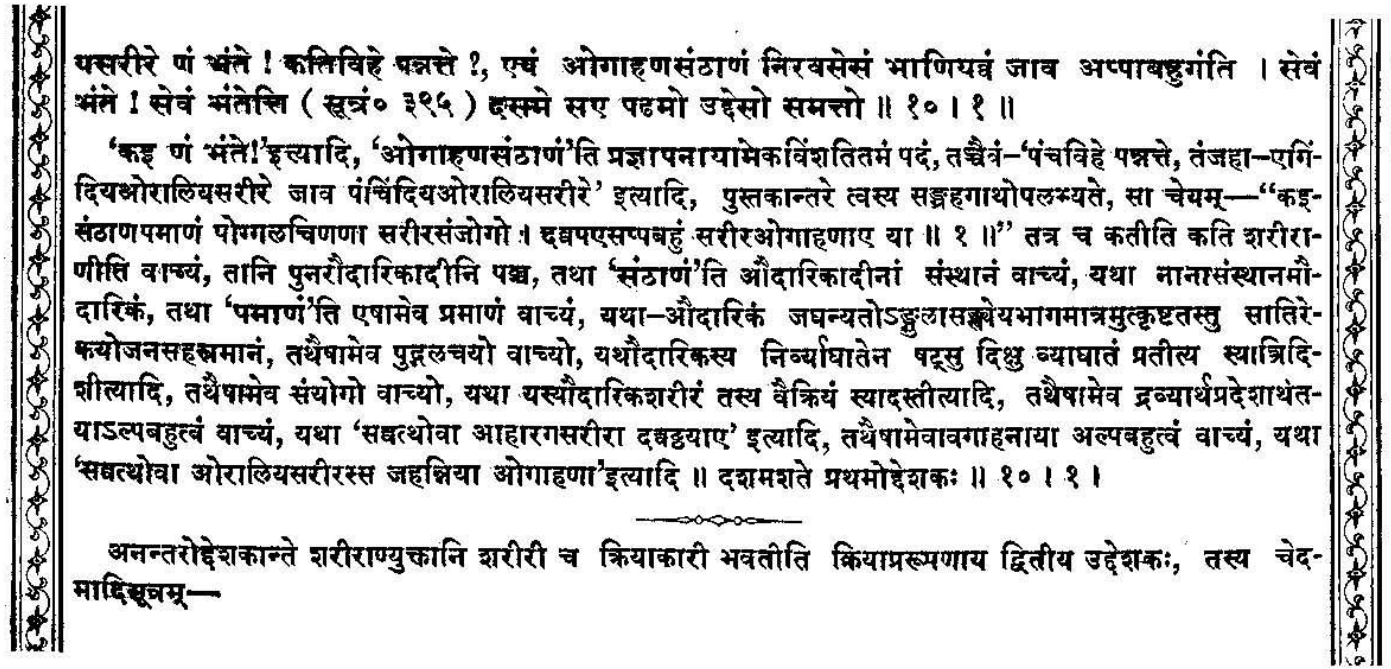
१० शतके उद्देशः १ दिगादौ जीवादिः सू ३९४

॥४९४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [३९५]

दीप अनुक्रम [४७६]



यसरीरे णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, एवं ओगाहणसंठाणं निरवसेसं भाणियव्वं जाव अप्पाबहुगंति । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं० ३९५) दसमे सए पढमो उद्देसो समत्तो ॥ १० । १ ॥

'कइ णं भंते!'इत्यादि, 'ओगाहणसंठाणं'ति प्रज्ञापनायामेकविंशतितमं पदं, तच्चैवं–'पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा–एगिंदियओरालियसरीरे जाव पंचिंदियओरालियसरीरे' इत्यादि, पुस्तकान्तरे त्वस्य सङ्ग्रहगाथोपलभ्यते, सा चेयम्—"कइसंठाणपमाणं पोग्गलचिणणा सरीरसंजोगो । दव्वपएसप्पबहुं सरीरओगाहणाए या ॥ १ ॥" तत्र च कतीति कति शरीराणीति वाच्यं, तानि पुनरौदारिकादीनि पञ्च, तथा 'संठाणं'ति औदारिकादीनां संस्थानं वाच्यं, यथा नानासंस्थानमौदारिकं, तथा 'पमाणं'ति एषामेव प्रमाणं वाच्यं, यथा–औदारिकं जघन्यतोऽङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्रमुत्कृष्टतस्तु सातिरेकयोजनसहस्रमानं, तथैषामेव पुद्गलचयो वाच्यो, यथौदारिकस्य निर्व्याघातेन षट्सु दिक्षु व्याघातं प्रतीत्य स्यात्त्रिदिशीत्यादि, तथैषामेव संयोगो वाच्यो, यथा यस्यौदारिकशरीरं तस्य वैक्रियं स्यादस्तीत्यादि, तथैषामेव द्रव्यार्थप्रदेशार्थतयाऽल्पबहुत्वं वाच्यं, यथा 'सबत्थोवा आहारगसरीरा दबट्ठयाए' इत्यादि, तथैषामेवावगाहनाया अल्पबहुत्वं वाच्यं, यथा 'सबत्थोवा ओरालियसरीरस्स जहन्निया ओगाहणा'इत्यादि ॥ दशमशते प्रथमोद्देशकः ॥ १० । १ ।

अनन्तरोद्देशकान्ते शरीराण्युक्तानि शरीरी च क्रियाकारी भवतीति क्रियाप्ररूपणाय द्वितीय उद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

१० शतक उद्देशः १ शरीराधि. सू ३९५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र दशमे शतके प्रथम-उद्देशकः परिसमाप्तः

अथ दशमे शतके द्वितीय-उद्देशकः आरभ्यते

रायगिहे जाव एवं वयासी–संवुडस्स णं भंते! अणगारस्स वीयीपंथे ठिचा पुरओ रूवाइं निज्झायमाणस्स मग्गओ रूवाइं अवयक्खमाणस्स पासओ रूवाइं अवलोएमाणस्स उड्ढं रूवाइं ओलोएमाणस्स अहे रूवाइं आलोएमाणस्स तस्स णं भंते ! किं ईरियावहिया किरिया कज्जइ संपराइया किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! संवुडस्स णं अणगारस्स वीयीपंथे ठिचा जाव तस्स णं णो ईरियावहिया किरिया कज्जइ संपराइया किरिया कज्जइ, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ संवड० जाव संपराइया किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! जस्स णं कोहमाण-मायालोभा एवं जहा सत्तमसए पढमोद्देसए जाव से णं उस्सुत्तमेव रीयति, से तेणट्ठेणं जाव संपराइया किरिया कज्जइ । संवुडस्स णं भंते ! अणगारस्स अवीयीपंथे ठिचा पुरओ रूवाइं निज्झायमाणस्स जाव तस्स णं भंते ! किं ईरियावहिया किरिया कज्जइ ?, पुच्छा, गोयमा ! संवुड० जाव तस्स णं ईरियावहिया किरिया कज्जइ नो संपराइया किरिया कज्जइ, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जहा सत्तमे सए पढमोद्देसए जाव से णं अहासुत्तमेव रीयति से तेणट्ठेणं जाव नो संपराइया किरिया कज्जइ ॥ (सूत्रं० ३९६)

'रायगिहे' इत्यादि, तत्र 'संवुडस्स' त्ति संवृतस्य सामान्येन प्राणातिपाताद्याश्रवद्वारसंवरोपेतस्य 'वीईपंथे ठिचे' ति वीचिशब्दः सम्प्रयोगे, स च सम्प्रयोगोर्द्वयोर्भवति, ततश्चेह कषायाणां जीवस्य च सम्बन्धो वीचिशब्दवाच्यः ततश्च वीचिमतः कषायवतो मतुप्प्रत्ययस्य षष्ठ्याश्च लोपदर्शनात्, अथवा 'विचिर् पृथग्भावे' इति वचनाद् विविच्य–पृथग्भूय यथाऽऽख्यातसंयमात् कषायोदयमनपवार्येत्यर्थः, अथवा विचिन्त्य रागादिविकल्पादित्यर्थः, अथवा विरूपा कृतिः–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

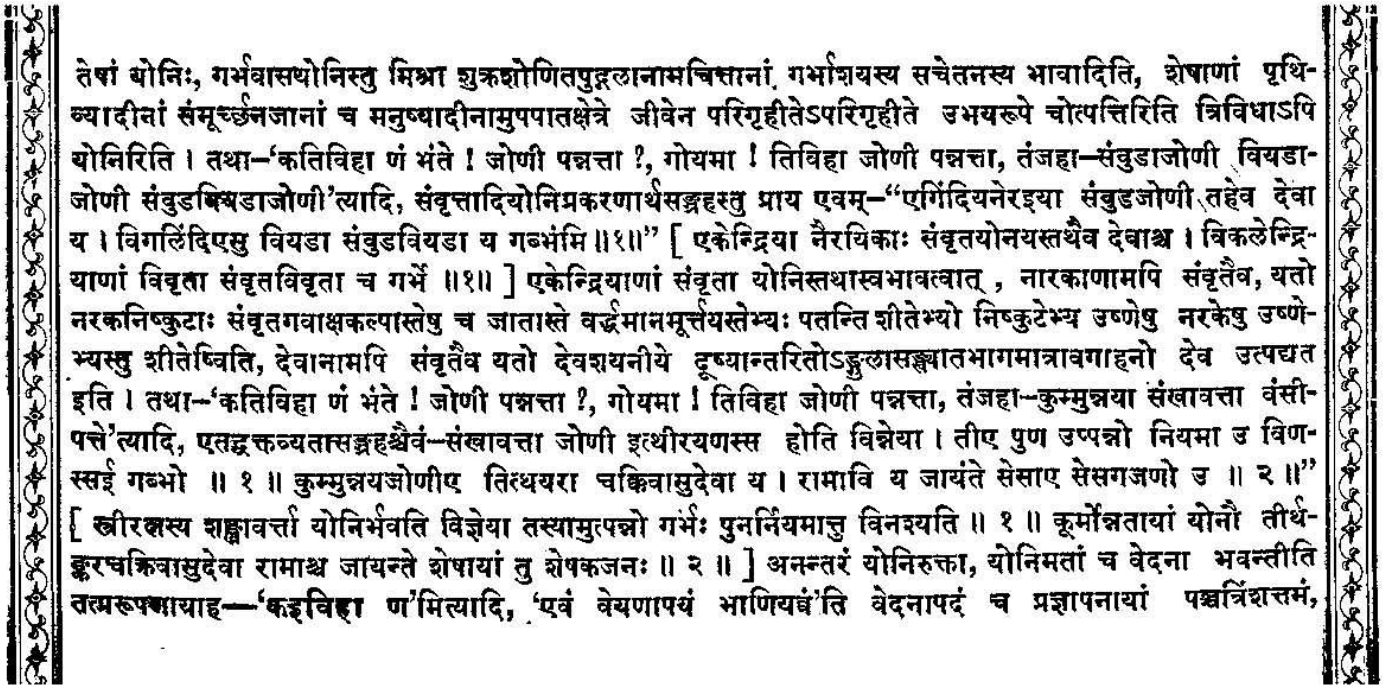
क्रिया सरागत्वात् यस्मिन्नवस्थाने तद्विकृति यथा भवतीत्येवं स्थित्वा 'पंथे'त्ति मार्गे 'अवयक्खमाणस्स'त्ति अवकाङ्क्षतोऽपेक्षमाणस्य वा, पथिग्रहणस्य चोपलक्षणत्वादन्यत्राप्याधारे स्थित्वेति द्रष्टव्यं, 'नो ईरियावहिया किरिया कज्जइ'त्ति न केवलयोगप्रत्यया कर्म्मबन्धक्रिया भवति सकषायत्वात्तस्येति । 'जस्स णं कोहमाणमायालोभा' इह 'एवं जहे'त्याद्यतिदेशादिदं दृश्यं–'वोच्छिन्ना भवंति तस्स णं ईरियावहिया किरिया कज्जइ, जस्स णं कोहमाणमायालोभा अवोच्छिन्ना भवंति तस्स णं संपराइया किरिया कज्जइ, अहासुत्तं रीयं रीयमाणस्स ईरियावहिया किरिया कज्जइ, उस्सुत्तं रीयं रीयमाणस्स संपराइया किरिया कज्जइ'त्ति व्याख्या चास्य प्राग्वदिति । 'से णं उस्सुत्तमेव'त्ति स पुनरुत्सूत्रमेवागमातिक्रमणत एव 'रीयइ'त्ति गच्छति । 'संवुडस्से'त्याद्युक्तविपर्ययसूत्रं, तत्र च 'अवीइ'त्ति 'अवीचिमतः' अकषायसम्बन्धवतः 'अविचित्य' वा अपृथग्भूय यथाऽऽख्यातसंयमात्, अविचिन्त्य वा रागविकल्पाभावेनेत्यर्थः अविकृति वा यथा भवतीति ॥ अनन्तरं क्रियोक्ता, क्रियावतां च प्रायो योनिप्राप्तिर्भवतीति योनिप्ररूपणायाह—

कइविहा णं भंते ! जोणी पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा जोणी पण्णत्ता, तंजहा–सीया उसिणा सीतोसिणा, एवं जोणीपयं निरवसेसं भाणियव्वं ॥ (सूत्रं३९७) कतिविहा णं भंते ! वेयणा पन्नत्ता ?, गोयमा! तिविहा वेयणा पन्नत्ता, तंजहा–सीया उसिणा सीओसिणा, एवं वेयणापयं निरवसेसं भाणियव्वं जाव नेरइयाणं भंते ! किं दुक्खं वेदणं वेदेंति सुहं वेयणं वेयंति अदुक्खमसुहं वेयणं वेयंति ?, गोयमा ! दुक्खंपि वेयणं वेयंति सुहंपि वेयणं वेयंति अदुक्खमसुहंपि वेयणं वेयंति ॥ (सूत्रं ३९८)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'कतिविहा ण'मित्यादि,तत्र च 'जोणि'त्ति 'यु मिश्रणे' इतिवचनाद् युवन्ति–तैजसकार्म्मणशरीरवन्तं औदारिकादिशरीरयोग्यस्कन्धसमुदायेन मिश्रीभवन्ति जीवा यस्यां सा योनिः, सा च त्रिविधा शीतादिभेदात् , तत्र 'सीय'त्ति शीतस्पर्शा 'उसिण'त्ति उष्णस्पर्शा 'सीओसिण'त्ति द्विस्वभावा 'एवं जोणीपयं निरवसेसं भाणियव्वं'ति योनिपदं च प्रज्ञापनायां नवमं पदं, तच्चेदं–'नेरइयाणं भंते ! किं सीया जोणी उसिणा जोणी सीओसिणा जोणी ?, गोयमा ! सीयावि जोणी उसिणावि जोणी नो सीओसिणा जोणी'त्यादि, अयमर्थः–'सीयावि जोणि'त्ति आद्यासु तिसृषु नरकपृथिवीषु चतुर्थ्यां च केषुचिन्नरकावासेषु नारकाणां यदुपपातक्षेत्रं तच्छीतस्पर्शपरिणतमिति तेषां शीताऽपि योनिः, 'उसिणावि जोणि'त्ति शेषासु पृथिवीषु चतुर्थपृथिवीनरकावासेषु च केषुचिन्नारकाणां यदुपपातक्षेत्रं तदुष्णस्पर्शपरिणतमिति तेषामुष्णाऽपि योनिः, 'नो सीओसिणा जोणि'त्ति न मध्यमस्वभावा योनिस्तथास्वभावत्वात् , शीतादियोनिप्रकरणार्थसङ्ग्रहस्तु प्रायेणैवं–"सीओसिणजोणीया सव्वे देवा य गब्भवक्कंती । उसिणा य तेउकाए दुह निरए तिविह सेसेसु ॥१॥" 'गब्भवक्कंति'त्ति गर्भोत्पत्तिकाः, । [शीतोष्णयोनिकाः सर्वे देवाश्च गर्भव्युत्पत्तिकाः उष्णा च तेजःकाये द्विधा नरके त्रिविधा शेषेषु ॥१॥] तथा–'कतिविहा णं भंते ! जोणी पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा जोणी पन्नत्ता, तंजहा–सच्चित्ता अचित्ता मीसिया'इत्यादि, सच्चित्तादियोनिप्रकरणार्थसङ्ग्रहस्तु प्रायेणैवम्–"अचित्ता खलु जोणी नेरइयाणं तहेव देवाणं । मीसा य गब्भवासे तिविहा पुण होइ सेसेसु ॥ २ ॥" [अचित्ता खलु योनिर्नारकाणां तथैव देवानां । मिश्रा च गर्भवासे त्रिविधा पुनर्भवति शेषेषु ॥ १ ॥] सत्यप्येकेन्द्रियसूक्ष्मजीवनिकायसम्भवे नारकदेवानां यदुपपातक्षेत्रं तत्र केनचिज्जीवेन परिगृहीतमित्यचित्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



तेषां योनिः, गर्भवासयोनिस्तु मिश्रा शुक्रशोणितपुद्गलानामचित्तानां गर्भाशयस्य सचेतनस्य भावादिति, शेषाणां पृथिव्यादीनां संमूर्च्छनजानां च मनुष्यादीनामुपपातक्षेत्रे जीवेन परिगृहीतेऽपरिगृहीते उभयरूपे चोत्पत्तिरिति त्रिविधाऽपि योनिरिति । तथा–'कतिविहा णं भंते ! जोणी पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा जोणी पन्नत्ता, तंजहा–संवुडाजोणी वियडाजोणी संवुडवियडाजोणी'त्यादि, संवृत्तादियोनिप्रकरणार्थसङ्ग्रहस्तु प्राय एवम्–"एगिंदियनेरइया संवुडजोणी तहेव देवा य । विगलिंदिएसु वियडा संवुडवियडा य गब्भंमि ॥१॥" [एकेन्द्रिया नैरयिकाः संवृतयोनयस्तथैव देवाश्च । विकलेन्द्रियाणां विवृता संवृतविवृता च गर्भे ॥१॥] एकेन्द्रियाणां संवृता योनिस्तथास्वभावत्वात् , नारकाणामपि संवृतैव, यतो नरकनिष्कुटाः संवृतगवाक्षकल्पास्तेषु च जातास्ते वर्द्धमानमूर्त्तयस्तेभ्यः पतन्ति शीतेभ्यो निष्कुटेभ्य उष्णेषु नरकेषु उष्णेभ्यस्तु शीतेष्विति, देवानामपि संवृतैव यतो देवशयनीये दूष्यान्तरितोऽङ्गुलासङ्ख्यातभागमात्रावगाहनो देव उत्पद्यत इति । तथा–'कतिविहा णं भंते ! जोणी पन्नत्ता ?, गोयमा ! तिविहा जोणी पन्नत्ता, तंजहा–कुम्मुन्नया संखावत्ता वंसीपत्ते'त्यादि, एतद्वक्तव्यतासङ्ग्रहश्चैवं–संखावत्ता जोणी इत्थीरयणस्स होति विन्नेया । तीए पुण उप्पन्नो नियमा उ विणस्सई गब्भो ॥ १ ॥ कुम्मुन्नयजोणीए तित्थयरा चक्किवासुदेवा य । रामावि य जायंते सेसाए सेसगजणो उ ॥ २ ॥" [स्त्रीरत्नस्य शङ्खावर्त्ता योनिर्भवति विज्ञेया तस्यामुत्पन्नो गर्भः पुनर्नियमात्तु विनश्यति ॥ १ ॥ कूर्मोन्नतायां योनौ तीर्थङ्करचक्रिवासुदेवा रामाश्च जायन्ते शेषायां तु शेषकजनः ॥ २ ॥] अनन्तरं योनिरुक्ता, योनिमतां च वेदना भवन्तीति तत्प्ररूपणायाह—'कइविहा णं'मित्यादि, 'एवं वेयणापयं भाणियव्वं'ति वेदनापदं च प्रज्ञापनायां पञ्चत्रिंशत्तमं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [३९७--३९८]

दीप अनुक्रम [४७८--४७९]

तच्च लेशतो दर्श्यते–'नेरइयाणं भंते ! किं सीयं वेयणं वेयंति ३ ?, गोयमा ! सीयंपि वेयणं वेयंति एवं उसिणंपि णो सीओसिणं' एवमसुरादयो वैमानिकान्ताः 'एवं चउव्विहा वेयणा दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ' तत्र पुद्गल-द्रव्यसम्बन्धाद्द्रव्यवेदना नारकादिक्षेत्रसम्बन्धात्क्षेत्रवेदना नारकादिकालसम्बन्धात्कालवेदना शोककोधादिभावसम्ब-न्धाद्भाववेदना, सर्वे संसारिणश्चतुर्विधामपि, तथा 'तिविहा वेयणा–सारीरा माणसा सारीरमाणसा' समनस्कास्त्रि-विधामपि असञ्ज्ञिनस्तु शारीरीमेव, तथा 'तिविहा वेयणा साया असाया सायासाया' सर्वे संसारिणस्त्रिविधामपि, तथा 'तिविहा वेयणा–दुक्खा सुहा अदुक्खमसुहा' सर्वे त्रिविधामपि, सातासातसुखदुःखयोश्चायं विशेषः–सातासाते अनुक्रमेणोदयप्राप्तानां वेदनीयकर्मपुद्गलानामनुभवरूपे, सुखदुःखे तु परोदीर्यमाणवेदनीयानुभवरूपे, तथा 'दुविहा वेयणा–अब्भुवगमिया उवक्कमिया' आभ्युपगमिकी या स्वयमभ्युपगम्य वेद्यते यथा साधवः केशोल्लुञ्चनाताप-नादिभिर्वेदयन्ति औपक्रमिकी तु स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन चोदयमुपनीतस्य वेद्यस्यानुभवात्, द्विविधामपि पञ्चे-न्द्रियतिर्यञ्चो मनुष्याश्च शेषास्त्वौपक्रमिकीमेवेति, तथा 'दुविहा वेयणा–निदा य अनिदा य' निदा–चित्तवती विपरीता त्वनिदेति, सञ्ज्ञिनो द्विविधामसञ्ज्ञिनस्त्वनिदामेवेति। इह च प्रज्ञापनायां द्वारगाथाऽस्ति, सा चेयं—"सीया य दव्व सारीर साय तह वेयणा हवइ दुक्खा। अब्भुवगमुवक्कमिया निदा य अनिदा य नायव्वा ॥१॥" अस्याश्च पूर्वार्द्धोक्तान्येव द्वाराण्यधि-कृतवाचनायां सूचितानि यतस्तत्राप्युक्तं 'निदा य अनिदा य वज्जं'ति ॥ वेदनाप्रस्तावाद्वेदनाहेतुभूतां प्रतिमां निरूपयन्नाह–

मासियण्णं भंते ! भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चं वोसट्ठे काये चियत्ते देहे, एवं मासिया भिक्खु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पडिमा निरवसेसा भाणियव्वा [जाव दसाहिं] जाव आराहिया भवइ। (सूत्रं३९९) भिक्खू य अन्नयरं अकिच्चट्ठाणं पडिसेवित्ता से णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालं करेइ नत्थि तस्स आराहणा, से णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेइ अत्थि तस्स आराहणा, भिक्खू य अन्नयरं अकिच्चट्ठाणं पडिसेवित्ता तस्स णं एवं भवइ पच्छावि णं अहं चरमकालसमयंसि एयस्स ठाणस्स आलोएस्सामि जाव पडिवज्जिस्सामि, से णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते जाव नत्थि तस्स आराहणा, से णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेइ अत्थि तस्स अराहणा, भिक्खू य अन्नयरं अकिच्चट्ठाणं पडिसेवित्ता तस्स णं एवं भवइ–जइ ताव समणोवासगावि कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति किमंग पुण अहं अन्नपन्नियदेवत्तणंपि नो लभिस्सामित्तिकट्टु से णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालं करेइ नत्थि तस्स आराहणा से णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेइ अत्थि तस्स आराहणा । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ४००) ॥ १० । २ ॥

'मासियण्ण'मित्यादि, मासः परिमाणं यस्याः सा मासिकी तां 'भिक्षुप्रतिमां' साधुप्रतिज्ञाविशेषं 'वोसट्ठे काए'त्ति व्युत्सृष्टे स्नानादिपरिकर्म्मवर्जनात् 'चियत्ते देहे'त्ति त्यक्ते वधबन्धाद्यवारणात्, अथवा 'चियत्ते' संमते प्रीतिविषये धर्म-साधनेषु प्रधानत्वाद्देहस्येति 'एवं मासिया भिक्खुपडिमा'इत्यादि, अनेन च यदतिदिष्टं तदिदं–'जे केइ परीसहोव-सग्गा उप्पज्जंति, तंजहा–दिवा वा माणुसा वा तिरिक्खजोणिया वा ते उप्पन्ने सम्मं सहइ खमइ तितिक्खइ अहियासेई'–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [३९९--४००]

दीप अनुक्रम [४८०--४८१]

त्यादि, तत्र सहते स्थानाविचलनतः क्षमते क्रोधाभावात् तितिक्षते दैन्याभावात् क्रमेण वा मनःप्रभृतिभिः, किमुक्तं भवति ?–अधिसहत इति ॥ आराहिया भवतीत्युक्तमथाराधनाः यथा न स्याद्यथा च स्यात्तद्दर्शयन्नाह—'भिक्खू य अन्नयरं अकिच्चट्ठाण'मित्यादि, इह चशब्दश्चेदित्येतस्यार्थे वर्त्तते, स च भिक्षोरकृत्यस्थानासेवनस्य प्रायेणासम्भवप्रदर्शनपरः, 'पडिसेवित्त'त्ति अकृत्यस्थानं प्रतिसेविता भवतीति गम्यं, वाचनान्तरे त्वस्य स्थाने 'पडिसेविज्ज'त्ति दृश्यते, 'से णं'ति स भिक्षुः 'तस्स ठाणस्स'त्ति तत्स्थानम् 'अणपन्नियदेवत्तणंपि नो लभिस्सामि'त्ति अणपन्निका–व्यन्तरनिकायविशेषास्तत्सम्बन्धिदेवत्वमणपन्निकदेवत्वं तदपि नोपलप्स्य इति ॥ दशमशतस्य द्वितीयोद्देशकः ॥ १० । २ ॥

द्वितीयोद्देशकान्ते देवत्वमुक्तम् , अथ तृतीये देवस्वरूपमभिधीयते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–आइड्ढीए णं भंते ! देवे जाव चत्तारि पंच देवावासंतराइं वीतिकंते तेण परं परिड्ढीए ?, हंता गोयमा ! आइड्ढीए णं तं चेव, एवं असुरकुमारेवि, नवरं असुरकुमारावासंतराइं सेसं तं चेव, एवं एएणं कमेणं जाव थणियकुमारे, एवं वाणमंतरे जोइसवेमाणिय जाव तेण परं परिड्ढीए । अप्पड्ढिए णं भंते ! देवे से महड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवइज्जा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे । समिड्ढीए णं भंते ! देवे समड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, पमत्तं पुण वीइवएज्जा, से णं भंते ! किं विमोहित्ता पभू अविमोहित्ता पभू ?, गोयमा ! विमोहेत्ता पभू नो अविमोहेत्ता पभू । से भंते ! किं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र दशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ दशमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरभ्यते

पुव्विं विमोहेत्ता पच्छा वीइवएज्जा पुव्विं वीइवएत्ता पच्छा विमोहेज्जा ?, गोयमा ! पुव्विं विमोहेत्ता पच्छा वीइवएज्जा णो पुव्विं वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा । महिड्ढीए णं भंते ! देवे अप्पड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, हंता वीइवएज्जा, से णं भंते ! किं विमोहित्ता पभू अविमोहेत्ता पभू ?, गोयमा ! विमोहेत्तावि पभू अविमोहेत्तावि पभू, से भंते ! किं पुव्विं विमोहेत्ता पच्छा वीइवइज्जा पुव्विं वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा ?, गोयमा ! पुव्विं वा विमोहेत्ता पच्छा वीइवएज्जा पुव्विं वा वीइवएत्ता पच्छा विमोहेज्जा । अप्पिड्ढिए णं भंते ! असुरकुमारे महड्ढीयस्स असुरकुमारस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, णो इणट्ठे समट्ठे, एवं असुरकुमारेवि तिन्नि आलावगा भाणियव्वा जहा ओहिएणं देवेणं भणिया, एवं जाव थणियकुमाराणं, वाणमंतरजोइसियवेमाणिएणं एवं चेव । अप्पड्ढिए णं भंते ! देवे महिड्ढियाए देवीए मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, णो इणट्ठे समट्ठे, समड्ढिए णं भंते ! देवे समिड्ढीयाए देवीए मज्झंमज्झेणं०; एवं तहेव देवेण य देवीण य दंडओ भाणियव्वो जाव वेमाणियाए । अप्पड्ढिया णं भंते ! देवी महड्ढीयस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं एवं एसोवि तइओ दंडओ भाणियव्वो जाव महड्ढिया वेमाणिणी अप्पड्ढियस्स वेमाणियस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, हंता वीइवएज्जा । अप्पड्ढिया णं भंते ! देवी महिड्ढियाए देवीए मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, णो इणट्ठे समट्ठे, एवं समड्ढिया देवी समड्ढियाए देवीए, तहेव, महड्ढियावि देवी अप्पड्ढियाए देवीए तहेव, एवं एक्केके तिन्नि २ आलावगा भाणियव्वा जाव महड्ढिया णं भंते ! वेमाणिणी अप्पड्ढियाए वेमाणिणीए मज्झंमज्झेणं वीइव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एज्जा ?, हंता वीइवएज्जा, सा भंते ! किं विमोहित्ता पभू तहेव जाव पुर्विं वा वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा एए चत्तारि दंडगा ॥ (सू० ४०१)

'रायगिहे'इत्यादि, 'आइड्ढीए णं'ति आत्मर्द्ध्या स्वकीयशक्त्या, अथवाऽऽत्मन एव ऋद्धिर्यस्यासावात्मर्द्धिकः 'देवे'-त्ति सामान्यः 'देवावासंतराइं'ति देवावासविशेषान् 'वीइक्कंते'त्ति 'व्यतिक्रान्तः' लङ्घितवान् , क्वचिद् व्यतिव्रजतीति पाठः, 'तेण परं'ति ततः परं 'परिड्ढीए'त्ति परर्द्ध्या परर्द्धिको वा 'विमोहित्ता पभु'त्ति 'विमोह्य' महिकाद्यन्धकारकरणेन मोहमुत्पाद्य अपश्यन्तमेव तं व्यतिक्रामेदिति भावः । 'एवं असुरकुमारेणवि तिन्नि आलावग'त्ति अल्पर्द्धिकमहर्द्धिकयोरेकः समर्द्धिकयोरन्यः महर्द्धिकाल्पर्द्धिकयोरपर इत्येवं त्रयः,'ओहिएणं देवेणं'ति सामान्येन देवेन १, एवमालापकत्रयोपेतो देवदेवीदण्डको वैमानिकान्तोऽन्यः २, एवमेव च देवीदेवदण्डको वैमानिकान्त एवापरः ३, एवमेव च देव्योर्दण्डकोऽन्यः ४ इत्येवं चत्वार एते दण्डकाः॥ अनन्तरं देवक्रियोक्ता,सा चातिविस्मयकारिणीति विस्मयकरं वस्त्वन्तरं प्रश्नयन्नाह–

आसस्स णं भंते ! धावमाणस्स किं खुखुत्ति करेति ?, गोयमा ! आसस्स णं धावमाणस्स हिदयस्स य जगयस्स य अंतरा एत्थ णं कव्वडए नामं वाए संमुच्छइ जेणं आसस्स धावमाणस्स खुखुत्ति करेइ ॥ (सू० ४०२) अह भंते ! आसइस्सामो सइस्सामो चिट्ठिस्सामो निसिइस्सामो तुयट्टिस्सामो आमंतणि आणवणी जायणि तह पुच्छणी य पण्णवणी । पच्चक्खाणी भासा भासा इच्छाणुलोमा य ॥ १ ॥ अणभिग्गहिया भासा भासा य अभिग्गहंमि बोद्धव्वा । संसयकरणी भासा वोयडमव्वोयडा चेव ॥ २ ॥ पन्नवणी णं

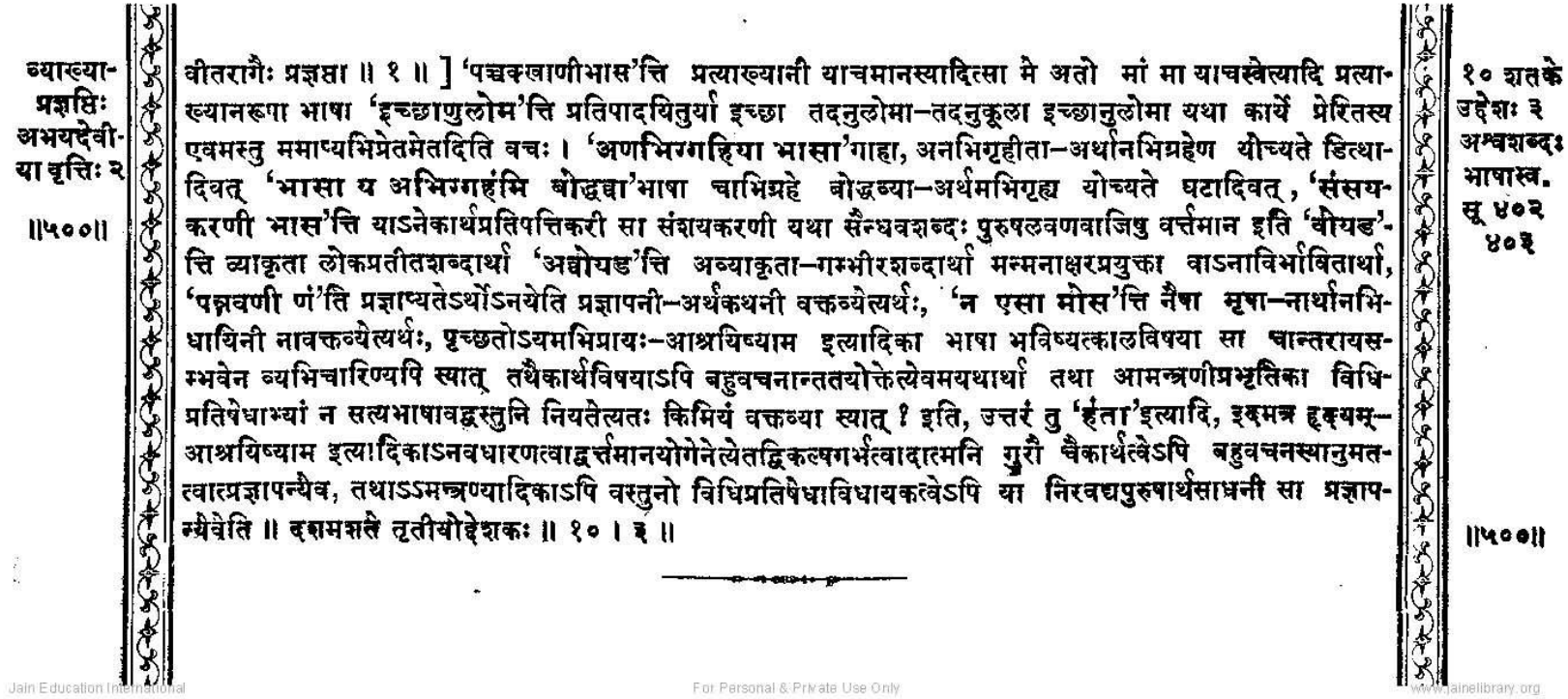
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एसा न एसा भासा मोसा?, हंता गोयमा! आसइस्सामो तं चेव जाव न एसा भासा मोसा। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ४०३) दसमे सए तईओ उद्देसो ॥ १०—३ ॥

'आसस्से'त्यादि, 'हिययस्स य जगयस्स य'त्ति हृदयस्य यकृतश्च–दक्षिणकुक्षिगतोदरावयवविशेषस्य 'अन्तरा' अन्तराले ॥ अनन्तरं 'खुखु'त्ति प्ररूपितं तच्च शब्दः, स च भाषारूपोऽपि स्यादिति भाषाविशेषान् भाषणीयत्वेन प्रदर्शयितुमाह—'अह भंते!' इत्यादि, अथेति परिप्रश्नार्थः 'भंते!'ति भदन्त! इत्येवं भगवन्तं महावीरमामन्त्र्य गौतमः पृच्छति–'आसइस्सामो'त्ति आश्रयिष्यामो वयमाश्रयणीयं वस्तु 'सइस्सामो'त्ति शयिष्यामः 'चिट्ठिस्सामो'त्ति ऊर्द्ध्वस्थानेन स्थास्यामः 'निसिइस्सामो'त्ति निषेत्स्याम उपवेक्ष्याम इत्यर्थः 'तुयट्टिस्सामो'त्ति संस्तारके भविष्याम इत्यादिका भाषा किं प्रज्ञापनी? इति योगः ॥ अनेन चोपलक्षणपरवचनेन भाषाविशेषाणामेवंजातीयानां प्रज्ञापनीयत्वं पृष्टमथ भाषाजातीनां तत्पृच्छति–'आमंतणि'गाहा, तत्र आमन्त्रणी' हे देवदत्त! इत्यादिका, एषा च किल वस्तुनोऽविधायकत्वादनिषेधकत्वाच्च सत्यादिभाषात्रयलक्षणवियोगतश्चासत्यामृषेति प्रज्ञापनादावुक्ता, एवमाज्ञापन्यादिकामपि, 'आणवणि'त्ति आज्ञापनी कार्ये परस्य प्रवर्त्तनी यथा घटं कुरु 'जायणि'त्ति याचनी–वस्तुविशेषस्य देहीत्येवंमार्गणरूपा तथेति समुच्चये 'पुच्छणी य'त्ति प्रच्छनी–अविज्ञातस्य संदिग्धस्य वाऽर्थस्य ज्ञानार्थं तदभियुक्तप्रेरणरूपा 'पण्णवणि'त्ति प्रज्ञापनी–विनेयस्योपदेशदानरूपा यथा–"पाणवहाओ नियत्ता भवंति दीहाउया अरोगा य। एमाई पन्नवणी पन्नत्ता वीयरागेहिं ॥ १ ॥" [प्राणवधान्निवृत्ता दीर्घायुषोऽरोगाश्च भवन्तीत्यादिः प्रज्ञापनी भाषा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४०२--४०३] + गाथा: दीप अनुक्रम [४८३-४८६]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५००॥

वीतरागैः प्रज्ञप्ता ॥ १ ॥] 'पच्चक्खाणीभास'त्ति प्रत्याख्यानी याचमानस्यादित्सा मे अतो मां मा याचस्वेत्यादि प्रत्याख्यानरूपा भाषा 'इच्छाणुलोम'त्ति प्रतिपादयितुर्या इच्छा तदनुलोमा–तदनुकूला इच्छानुलोमा यथा कार्ये प्रेरितस्य एवमस्तु ममाप्यभिप्रेतमेतदिति वचः । 'अणभिग्गहिया भासा'गाहा, अनभिगृहीता–अर्थानभिग्रहेण योच्यते डित्थादिवत् 'भासा य अभिग्गहंमि बोद्धव्वा'भाषा चाभिग्रहे बोद्धव्या–अर्थमभिगृह्य योच्यते घटादिवत्, 'संसयकरणी भास'त्ति याऽनेकार्थप्रतिपत्तिकरी सा संशयकरणी यथा सैन्धवशब्दः पुरुषलवणवाजिषु वर्त्तमान इति 'वोयड'त्ति व्याकृता लोकप्रतीतशब्दार्था 'अव्वोयड'त्ति अव्याकृता–गम्भीरशब्दार्था मन्मनाक्षरप्रयुक्ता वाऽनाविर्भावितार्था, 'पन्नवणी णं'ति प्रज्ञाप्यतेऽर्थोऽनयेति प्रज्ञापनी–अर्थकथनी वक्तव्येत्यर्थः, 'न एसा मोस'त्ति नैषा मृषा–नार्थानभिधायिनी नावक्तव्येत्यर्थः, पृच्छतोऽयमभिप्रायः–आश्रयिष्याम इत्यादिका भाषा भविष्यत्कालविषया सा चान्तरायसम्भवेन व्यभिचारिण्यपि स्यात् तथैकार्थविषयाऽपि बहुवचनान्ततयोक्तेत्येवमयथार्था तथा आमन्त्रणीप्रभृतिका विधिप्रतिषेधाभ्यां न सत्यभाषावद्वस्तुनि नियतेत्यतः किमियं वक्तव्या स्यात् ? इति, उत्तरं तु 'हंता'इत्यादि, इदमत्र हृदयम्–आश्रयिष्याम इत्यादिकाऽनवधारणत्वाद्वर्त्तमानयोगेनेत्येतद्विकल्पगर्भत्वादात्मनि गुरौ चैकार्थत्वेऽपि बहुवचनस्यानुमतत्वात्प्रज्ञापन्येव, तथाऽऽमन्त्रण्यादिकाऽपि वस्तुनो विधिप्रतिषेधाविधायकत्वेऽपि या निरवद्यपुरुषार्थसाधनी सा प्रज्ञापन्येवेति ॥ दशमशते तृतीयोद्देशकः ॥ १० । ३ ॥

१० शतके उद्देशः ३ अश्वशब्दः भाषास्व. सू ४०२ ४०३

॥५००॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र दशमे शतके तृतीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

प्रत सूत्रांक [४०४]

दीप अनुक्रम [४८७]

तृतीयोद्देशके देववक्तव्यतोक्ता, चतुर्थेऽप्यसावेवोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे नाम नयरे होत्था वन्नओ, दूतिपलासए चेइए, सामी समोसढे, जाव परिसा पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे जाव उड्ढंजाणू जाव विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी सामहत्थी नामं अणगारे पयइभद्दए जहा रोहे जाव उड्ढंजाणू जाव विहरइ, तए णं ते सामहत्थी अणगारे जायसड्ढे जाव उट्ठाए उट्ठेत्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता भगवं गोयमं तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–अत्थि णं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमारस्स तायत्तीसगा देवा ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमारस्स तायत्तीसगा देवा ता० २ ?, एवं खलु सामहत्थी ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे कायंदी नामं नयरी होत्था वन्नओ, तत्थ णं कायंदीए नयरीए तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासगा परिवसइ अड्ढा जाव अपरिभूया अभिगयजीवाजीवा उवलद्धपुण्णपावा विहरंति जाव तए णं ते तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासया पुव्विं उग्गा उग्गविहारी संविग्गा संविग्गविहारी भवित्ता तओ पच्छा पासत्था पासत्थविहारी ओसन्ना ओसन्नविहारी कुसीला कुसीलविहारी अहाछंदा अहाछंदविहारी बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणंति २ अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेंति अत्ताणं झूसेत्ता तीसं भत्ताइं अण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ दशमे शतके चतुर्थ-उद्देशकः आरभ्यते

श्यामहस्ती अनगारः कृत प्रश्नः

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५०१॥

सणाए छेदेंति २ तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसगदेवत्ताए उववन्ना, जप्पभिइं च णं भंते ! कायंदगा तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासगा चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसदेवत्ताए उववन्ना तप्पभिइं च णं भंते ! एवं वुच्चइ चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसगा देवा ?, तए णं भगवं गोयमे सामहत्थिणा अणगारेणं एवं वुत्ते समाणे संकिए कंखिए वितिगिच्छिए उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठाए उट्ठेत्ता सामहत्थिणा अणगारेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–अत्थि णं भंते! चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो तायत्तीसगा देवा ता० २?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?, एवं तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव तप्पभिइं च णं एवं वुच्चइ चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसगा देवा २ ?, णो इणट्ठे समट्ठे, गोयमा ! चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो तायत्तीसगाणं देवाणं सासए नामधेज्जे पण्णत्ते, जं न कयाइ नासी न कदावि न भवति ण कयाई ण भविस्सई जाव निच्चे अव्वोच्छित्तिनयट्ठयाए अन्ने चयंति अन्ने उववज्जंति । अत्थि णं भंते! बलिस्स वइरोयणिंदस्स वइरोयणरन्नो तायत्तीसगा देवा? ता० २?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते !एवं वुच्चइ बलिस्स वइरोयणिंदस्स जाव तायत्तीसगा देवा ता० २ ?, एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे बिभेले णामं संनिवेसे होत्था वन्नओ, तत्थ णं बिभेले संनिवेसे जहा चमरस्स जाव

१० शतक उद्देशः ४ त्रायस्त्रिंशाः सू ४०४

॥५०१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्यामहस्ती अनगार: कृत प्रश्न:

उववन्ना, जप्पभिइं च णं भंते ! ते बिभेलगा तायत्तीसं सहाया गाहावइसमणोवासगा बलिस्स वइ० सेसं तं चेव जाव निच्चे अद्धोच्छित्तिणयट्ठयाए अन्ने चयंति अन्ने उववज्जंति । अत्थि णं भंते ! धरणस्स णागकुमारिंदस्स नागकुमाररन्नो तायत्तीसगा देवा ता० २ ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं जाव तायत्तीसगा देवा २ ?, गोयमा ! धरणस्स नागकुमारिंदस्स नागकुमाररन्नो तायत्तीसगाणं देवाणं सासए नामधेज्जे पन्नत्ते जं न कयाइ नासी जाव अन्ने चयंति अन्ने उववज्जंति, एवं भूयाणंदस्सवि एवं जाव महाघोसस्स। अत्थि णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो पुच्छा, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं जाव तायत्तीसगा देवा २ ?, एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूदीवे दीवे भारहे वासे पालासए नामं संनिवेसे होत्था वन्नओ, तत्थ णं पालासए सन्निवेसे तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासया जहा चमरस्स जाव विहरंति, तए णं तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासगा पुव्विंपि पच्छावि उग्गा उग्गविहारी संविग्गा संविग्गविहारी बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेइ झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति २ आलोइयपडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा जाव उववन्ना, जप्पभिइं च णं भंते ! पालासिगा तायत्तीससहाया गाहावई समणोवासगा सेसं जहा चमरस्स जाव उववज्जंति । अत्थि णं भंते ! ईसाणस्स एवं जहा सक्कस्स नवरं चंपाए नयरीए जाव उववन्ना, जप्पभिइं च णं भंते ! चंपिज्जा तायत्तीसं सहाया, सेसं तं चेव जाव अन्ने उववज्जंति । अत्थि णं भंते ! सणंकुमारस्स देविंदस्स देवरन्नो पुच्छा, हंता अत्थि, से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्यामहस्ती अनगारः कृत प्रश्नः

प्रत सूत्रांक [४०४]

दीप अनुक्रम [४८७]

व्याख्या-प्रशस्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५०२॥

केणट्ठेणं जहा धरणस्स तहेव एवं जाव पाणयस्स एवं अच्चुयस्स जाव अन्ने उववज्जंति । सेवं भंते ! सेवं भंते !॥ (सूत्रं ४०४) ॥ दसमस्स चउत्थो ॥ १० । ४ ॥

'तेण'मित्यादि, 'तायत्तीसग'त्ति त्रायस्त्रिंशा–मन्त्रिविकल्पाः 'तायत्तीसं सहाया गाहावइ'त्ति त्रयस्त्रिंशत्परिमाणाः 'सहायाः' परस्परेण साहायककारिणः 'गृहपतयः'कुटुम्बनायकाः 'उग्ग'त्ति उग्रा उदात्ता भावतः 'उग्गविहारि'त्ति उदात्ताचाराः सदनुष्ठानत्वात् 'संविग्ग'त्ति संविग्नाः–मोक्षं प्रति प्रचलिताः संसारभीरवो वा 'संविग्गविहारि'त्ति संविग्नविहारः–संविग्नानुष्ठानमस्ति येषां ते तथा 'पासत्थि'त्ति ज्ञानादिबहिर्वर्त्तिनः 'पासत्थविहारी'त्ति आकालं पार्श्वस्थसमाचाराः 'ओसण्णि'त्ति अवसन्ना इव–श्रान्ता इवावसन्ना आलस्यादनुष्ठानासम्यक्करणात् 'ओसन्नविहार'त्ति आजन्म शिथिलाचारा इत्यर्थः 'कुसील'त्ति ज्ञानाद्याचारविराधनात् 'कुसीलविहारि'त्ति आजन्मापि ज्ञानाद्याचारविराधनात् 'अहाछंद'त्ति यथाकथञ्चिन्नागमपरतन्त्रतया छन्दः–अभिप्रायो बोधः प्रवचनार्थेषु येषां ते यथाच्छन्दाः, ते चैकदाऽपि भवन्तीत्यत आह–'अहाच्छंदविहारि'त्ति आजन्मापि यथाच्छन्दा एवेति । 'तप्पभिइं च णं'ति यत्प्रभृति त्रयस्त्रिंशत्सङ्ख्योपेतास्ते श्रावकास्तत्रोत्पन्नास्तत्प्रभृति न पूर्वमिति ॥ दशमशते चतुर्थोद्देशकः समाप्तः ॥ १० । ४ ॥

चतुर्थोद्देशके देववक्तव्यतोक्ता, पञ्चमे तु देवीवक्तव्यतोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नगरे गुणसिलए चेइए जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं

१० शतके उद्देशः ३ त्रायस्त्रिंशाः सू ४०४

॥५०२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र दशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ दशमे शतके पंचम-उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०५-४०६]

दीप अनुक्रम [४८८--४८९]

समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे अंतेवासी थेरा भगवंतो जाइसंपन्ना जहा अट्ठमे सए सत्तमुद्देसए जाव विहरंति। तए णं ते थेरा भगवंतो जायसड्ढा जाव संसया जहा गोयमसामी जाव पज्जुवासमाणा एवं वयासी–चमरस्स णं भंते! असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ?, अज्जो! पंच अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–काली राती रयणी विज्जु मेहा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए अट्ठट्ठ देवीसहस्सा परिवारो पन्नत्तो, पभू णं भंते! ताओ एगमेगा देवी अन्नाइं अट्ठट्ठदेवीसहस्साइं परिवारं विउवित्तए?, एवामेव सपुव्वावरेणं चत्तालीसं देवीसहस्सा, से तं तुडिए, पभू णं भंते! चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंचाए रायहाणीए सभाए चमरंसि सीहासणंसि तुडिएणं सद्धिं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ नो पभू चमरे असुरिंदे चमरचंचाए रायहाणीए जाव विहरित्तए?, अज्जो चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए माणवए चेइयखंभे वइरामएसु गोलवट्टसमुग्गएसु बहूओ जिणसकहाओ संनिक्खित्ताओ चिट्ठंति, जाओ णं चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो अन्नेसिं च बहूणं असुरकुमाराणं देवाण य देवीण य अच्चणिज्जाओ वंदणिज्जाओ नमंसणिज्जाओ पूयणिज्जाओ सक्कारणिज्जाओ सम्माणणिज्जाओ कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासणिज्जाओ भवंति तेसिं पणिहाए नो पभू, से तेणट्ठेणं अज्जो! एवं वुच्चइ–नो पभू चमरे असुरिंदे जाव राया चमरचंचाए जाव विहरित्तए। पभू णं अज्जो! चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंचाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अग्रमहिष्यः विषयक प्रश्नोत्तरः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०५-४०६]

दीप अनुक्रम [४८८--४८९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५०३॥

रायहाणीए सभासुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्ठीए सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए जाव अन्नेहिं च बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे महयाहय जाव भुंजमाणे विहरित्तए० केवलं परियारिड्ढीए नो चेव णं मेहुणवत्तियं ॥ (सूत्रं ४०५) चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो सोमस्स महारन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ ?, अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा– कणगा कणगलया चित्तगुत्ता वसुंधरा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए एगमेगंसि देविसहस्सं परिवारो पन्नत्तो, पभू णं ताओ एगमेगाए देवीए अन्नं एगमेगं देवीसहस्सं परियारं विउव्वित्तए, एवामेव सपुव्वावरेणं चत्तारि देविसहस्सा, सेत्तं तुडिए, पभू णं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो सोमे महाराया सोमाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए सोमंसि सीहासणंसि तुडिएणं अवसेसं जहा चमरस्स, नवरं परियारो जहा सूरियाभस्स, सेसं तं चेव, जाव णो चेव णं मेहुणवत्तियं । चमरस्स णं भंते ! जाव रन्नो जमस्स महारन्नो कति अग्गमहिसीओ ?, एवं चेव नवरं जमाए रायहाणीए सेसं जहा सोमस्स एवं वरुणस्सवि, नवरं वरुणाए रायहाणीए, एवं वेसमणस्सवि नवरं वेसमणाए रायहाणीए सेसं तं चेव जाव मेहुणवत्तियं । बलिस्स णं भंते ! वइरोयणिंदस्स पुच्छा, अज्जो ! पंच २ अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–सुभा निसुंभा रंभा निरंभा मदणा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए अट्ठट्ठ सेसं जहा चमरस्स, नवरं बलिचंचाए रायहाणीए परियारो जहा मोउद्देसए, सेसं तं चेव, जाव मेहुणवत्तियं । बलिस्स णं भंते ! वइरोयणिंदस्स वइरोयणरन्नो सोमस्स महारन्नो कति अग्गमहि-

१० शतके उद्देशः ५ अग्रमहिष्यः सू४०५

॥५०३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अग्रमहिष्य: विषयक प्रश्नोत्तर:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०५-४०६]

दीप अनुक्रम [४८८--४८९]

सीओ पन्नत्ताओ ?, अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–मीणगा सुभद्दा विजया असणी, तत्थ णं एगमेगाए देवीए सेसं जहा चमरसोमस्स, एवं जाव वेसमणस्स ॥ धरणस्स णं भंते ! नागकुमारिंदस्स नाग-कुमाररन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ ?, अज्जो छ अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–इला सुक्का सदारा सोदामणी इंदा घणविज्जुया, तत्थ णं एगमेगाए देवीए छ छ देविसहस्सा परिवारो पन्नत्तो, पभू णं भंते ! ताओ एगमेगाए देवीए अन्नाइं छ छ देविसहस्साइं परियारं विउव्वित्तए एवामेव सपुव्वावरेणं छत्तीसं देविसहस्साइं, सेत्तं तुडिए । पभू णं भंते ! धरणे सेसं तं चेव, नवरं धरणाए रायहाणीए धरणंसि सीहासणंसि सओ परियाओ संसे तं चेव । धरणस्स णं भंते ! नागकुमारिंदस्स कालवालस्स लोगपालस्स महारन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ ?, अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–असोगा विमला सुप्पभा सुदंसणा, तत्थ णं एगमेगाए अवसेसं जहा चमरस्स लोगपालाणं, एवं सेसाणं तिण्हवि । भूयाणंदस्स णं भंते ! पुच्छा, अज्जो ! छ अग्गमहिस्सीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–रूया रूयंसा सुरूया रुयगावती रुयकंता रुयप्पभा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए अवसेसं जहा धरणस्स, भूयाणंदस्स णं भंते ! नागवित्तस्स पुच्छा अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तंजहा–सुणंदा सुभद्दा सुजाया सुमणा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए अवसेसं जहा चमरलोग-पालाणं एवं सेसाणं तिण्हवि लोगपालाणं, जे दाहिणिल्लाणिंदा तेसिं जहा धरणिंदस्स, लोगपालाणंपि तेसिं जहा धरणस्स लोगपालाणं, उत्तरिल्लाणं इंदाणं जहा भूयाणंदस्स, लोगपालाणवि तेसिं जहा भूयाणंदस्स

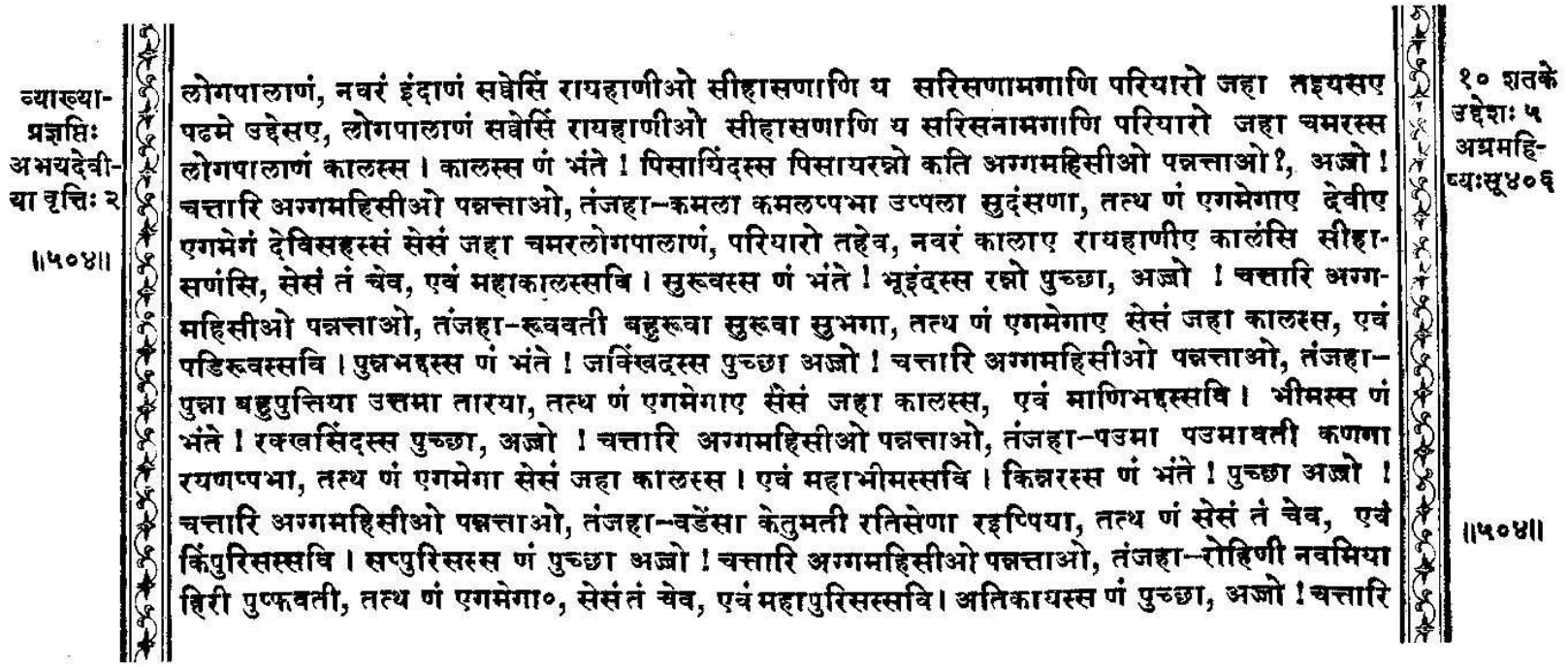
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अग्रमहिष्य: विषयक प्रश्नोत्तर:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०५-४०६]

दीप अनुक्रम [४८८--४८९]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५०४॥

लोगपालाणं, नवरं इंदाणं सवेसिं रायहाणीओ सीहासणाणि य सरिसणामगाणि परियारो जहा तइयसए पढमे उद्देसए, लोगपालाणं सवेसिं रायहाणीओ सीहासणाणि य सरिसनामगाणि परियारो जहा चमरस्स लोगपालाणं कालस्स । कालस्स णं भंते ! पिसायिंदस्स पिसायरन्नो कति अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ?, अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–कमला कमलप्पभा उप्पला सुदंसणा, तत्थ णं एगमेगाए देवीए एगमेगं देविसहस्सं सेसं जहा चमरलोगपालाणं, परियारो तहेव, नवरं कालाए रायहाणीए कालंसि सीहासणंसि, सेसं तं चेव, एवं महाकालस्सवि । सुरूवस्स णं भंते ! भूइंदस्स रन्नो पुच्छा, अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–रूववती बहुरूवा सुरूवा सुभगा, तत्थ णं एगमेगाए सेसं जहा कालस्स, एवं पडिरूवस्सवि । पुन्नभद्दस्स णं भंते ! जक्खिंदस्स पुच्छा अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–पुन्ना बहुपुत्तिया उत्तमा तारया, तत्थ णं एगमेगाए सेसं जहा कालस्स, एवं माणिभद्दस्सवि । भीमस्स णं भंते ! रक्खसिंदस्स पुच्छा, अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–पउमा पउमावती कणगा रयणप्पभा, तत्थ णं एगमेगा सेसं जहा कालस्स । एवं महाभीमस्सवि । किन्नरस्स णं भंते ! पुच्छा अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–वडेंसा केतुमती रतिसेणा रइप्पिया, तत्थ णं सेसं तं चेव, एवं किंपुरिसस्सवि । सप्पुरिसस्स णं पुच्छा अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–रोहिणी नवमिया हिरी पुप्फवती, तत्थ णं एगमेगा०, सेसं तं चेव, एवं महापुरिसस्सवि । अतिकायस्स णं पुच्छा, अज्जो ! चत्तारि

१० शतके उद्देशः ५ अग्रमहिष्यः सू४०६

॥५०४॥

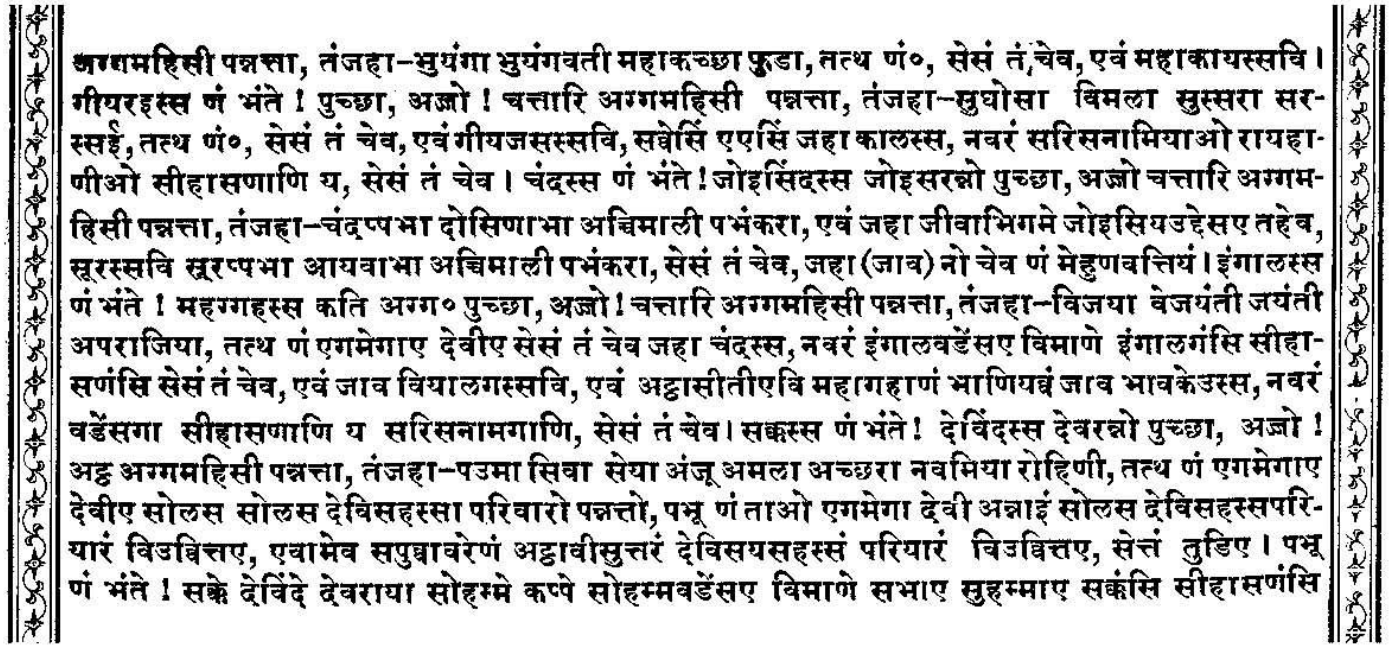
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अग्रमहिष्य: विषयक प्रश्नोत्तर:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०५-४०६]

दीप अनुक्रम [४८८--४८९]



अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–भुयंगा भुयंगवती महाकच्छा फुडा, तत्थ णं०, सेसं तं चेव, एवं महाकायस्सवि। गीयरइस्स णं भंते ! पुच्छा, अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–सुघोसा विमला सुस्सरा सरस्सई, तत्थ णं०, सेसं तं चेव, एवं गीयजसस्सवि, सव्वेसिं एएसिं जहा कालस्स, नवरं सरिसनामियाओ रायहाणीओ सीहासणाणि य, सेसं तं चेव। चंदस्स णं भंते! जोइसिंदस्स जोइसरन्नो पुच्छा, अज्जो चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–चंदप्पभा दोसिणाभा अच्चिमाली पभंकरा, एवं जहा जीवाभिगमे जोइसियउद्देसए तहेव, सूरस्सवि सूरप्पभा आयवाभा अच्चिमाली पभंकरा, सेसं तं चेव, जहा (जाव) नो चेव णं मेहुणवत्तियं। इंगालस्स णं भंते ! महग्गहस्स कति अग्ग० पुच्छा, अज्जो! चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–विजया वेजयंती जयंती अपराजिया, तत्थ णं एगमेगाए देवीए सेसं तं चेव जहा चंदस्स, नवरं इंगालवडेंसए विमाणे इंगालगंसि सीहासणंसि सेसं तं चेव, एवं जाव वियालगस्सवि, एवं अट्ठासीतीएवि महागहाणं भाणियव्वं जाव भावकेउस्स, नवरं वडेंसगा सीहासणाणि य सरिसनामगाणि, सेसं तं चेव। सक्कस्स णं भंते! देविंदस्स देवरन्नो पुच्छा, अज्जो ! अट्ठ अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–पउमा सिवा सेया अंजू अमला अच्छरा नवमिया रोहिणी, तत्थ णं एगमेगाए देवीए सोलस सोलस देविसहस्सा परिवारो पन्नत्तो, पभू णं ताओ एगमेगा देवी अन्नाइं सोलस देविसहस्सपरियारं विउव्वित्तए, एवामेव सपुव्वावरेणं अट्ठावीसुत्तरं देविसयसहस्सं परियारं विउव्वित्तए, सेत्तं तुडिए। पभू णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडेंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सक्कंसि सीहासणंसि

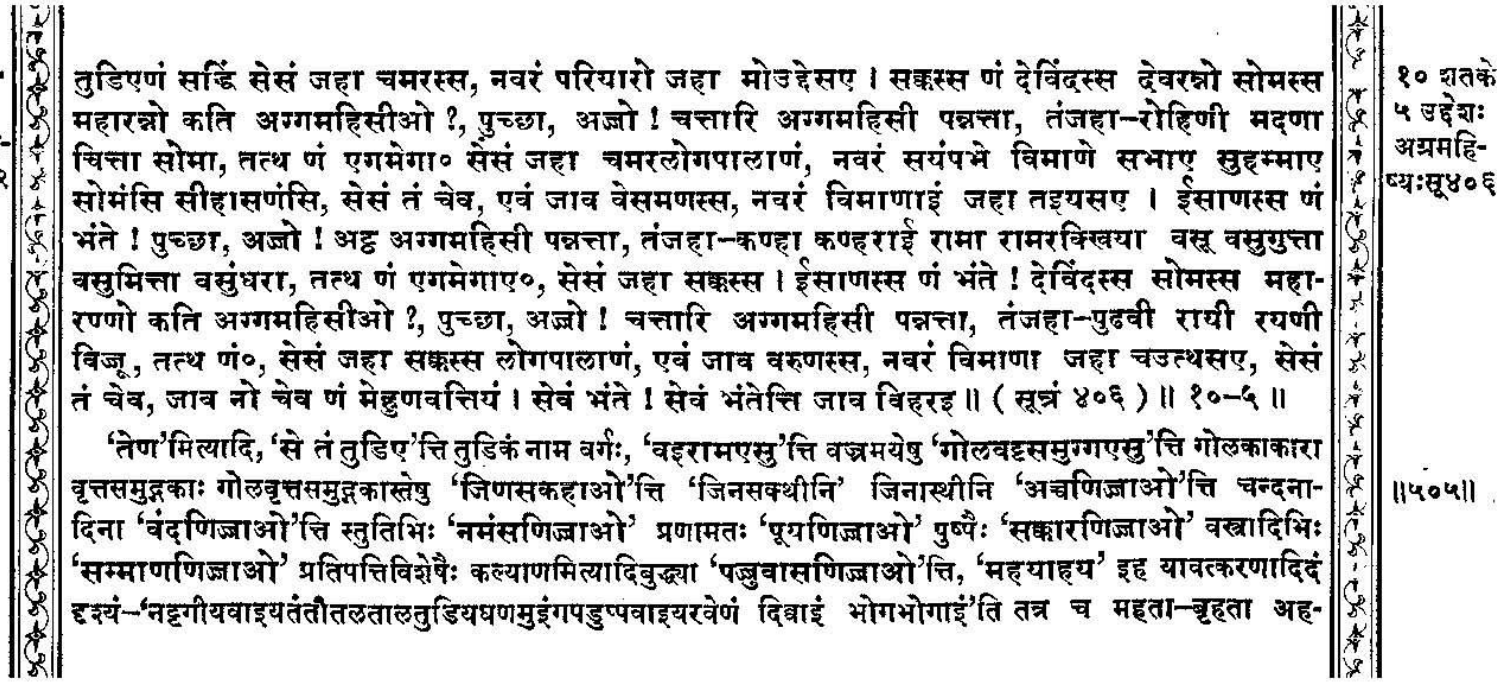
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अग्रमहिष्यः विषयक प्रश्नोत्तरः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०५-४०६]

दीप अनुक्रम [४८८--४८९]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥५०५॥

तुडिएणं सद्धिं सेसं जहा चमरस्स, नवरं परियारो जहा मोउद्देसए । सक्कस्स णं देविंदस्स देवरन्नो सोमस्स महारन्नो कति अग्गमहिसीओ ?, पुच्छा, अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–रोहिणी मदणा चित्ता सोमा, तत्थ णं एगमेगा० सेसं जहा चमरलोगपालाणं, नवरं सयंपभे विमाणे सभाए सुहम्माए सोमंसि सीहासणंसि, सेसं तं चेव, एवं जाव वेसमणस्स, नवरं विमाणाइं जहा तइयसए । ईसाणस्स णं भंते ! पुच्छा, अज्जो ! अट्ठ अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–कण्हा कण्हराई रामा रामरक्खिया वसू वसुगुत्ता वसुमित्ता वसुंधरा, तत्थ णं एगमेगाए०, सेसं जहा सक्कस्स । ईसाणस्स णं भंते ! देविंदस्स सोमस्स महारण्णो कति अग्गमहिसीओ ?, पुच्छा, अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसी पन्नत्ता, तंजहा–पुढवी राती रयणी विज्जू, तत्थ णं०, सेसं जहा सक्कस्स लोगपालाणं, एवं जाव वरुणस्स, नवरं विमाणा जहा चउत्थसए, सेसं तं चेव, जाव नो चेव णं मेहुणवत्तियं । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ४०६) ॥ १०–५ ॥

'तेण'मित्यादि, 'से तं तुडिए'त्ति तुडिकं नाम वर्गः, 'वइरामएसु'त्ति वज्रमयेषु 'गोलवट्टसमुग्गएसु'त्ति गोलकाकारा वृत्तसमुद्गकाः गोलवृत्तसमुद्गकास्तेषु 'जिणसकहाओ'त्ति 'जिनसक्थीनि' जिनास्थीनि 'अच्चणिज्जाओ'त्ति चन्दनादिना 'वंदणिज्जाओ'त्ति स्तुतिभिः 'नमंसणिज्जाओ' प्रणामतः 'पूयणिज्जाओ' पुष्पैः 'सक्कारणिज्जाओ' वस्त्रादिभिः 'सम्माणणिज्जाओ' प्रतिपत्तिविशेषैः कल्याणमित्यादिबुद्ध्या 'पज्जुवासणिज्जाओ'त्ति, 'महयाहय' इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'नट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं'ति तत्र च महता–बृहता अह-

१० शतके ५ उद्देशः अग्रमहिष्यःसू४०६

॥५०५॥

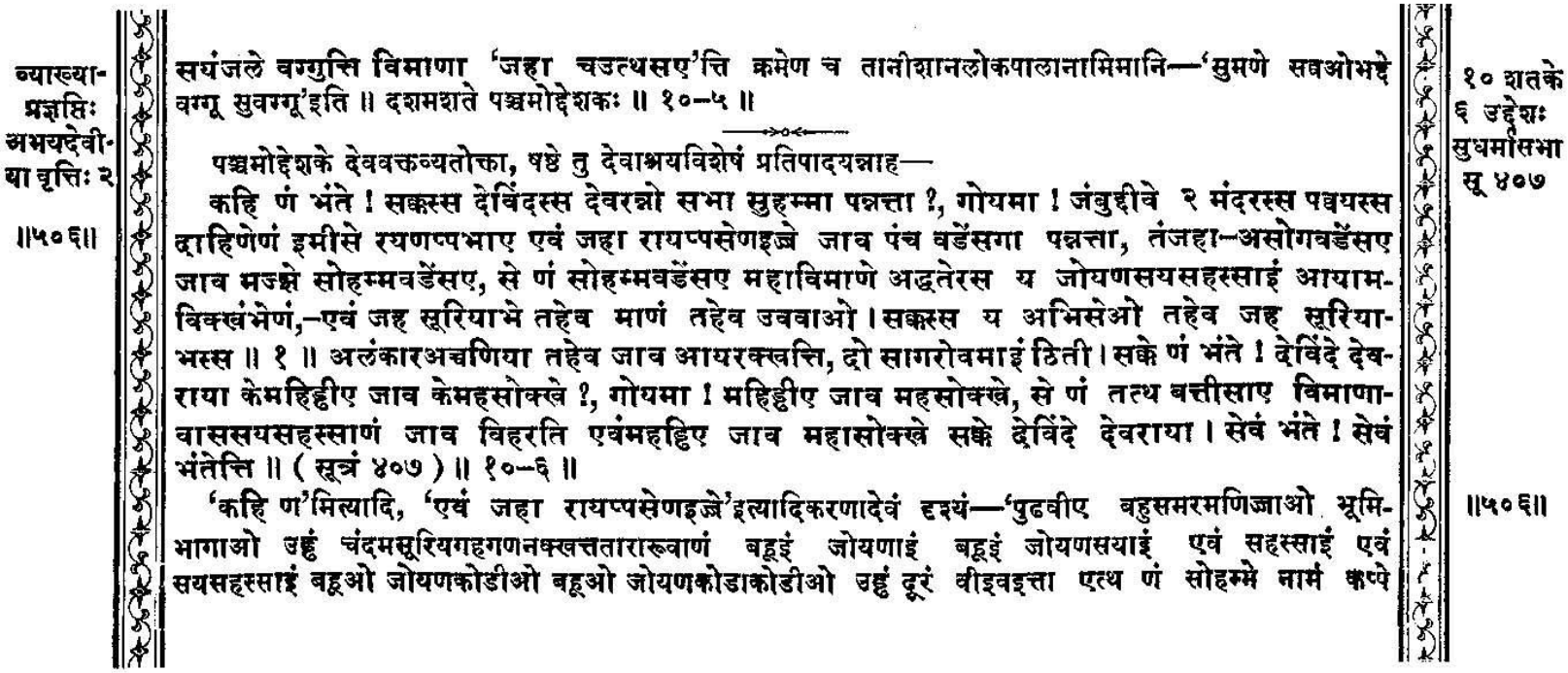
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अग्रमहिष्य: विषयक प्रश्नोत्तर:

तानि–अच्छिन्नानि आख्यानकप्रतिबद्धानि वा यानि नाट्यगीतवादितानि तेषां तन्त्रीतलतालानां च 'तुडिय'त्ति शेषतूर्याणां च घनमृदङ्गस्य च–मेघसमानध्वनिमर्दलस्य पटुना पुरुषेण प्रवादितस्य यो रवः स तथा तेन प्रभुर्भोगान् भुञ्जानो विहर्त्तुमित्युक्तं, तत्रैव विशेषमाह—'केवलं परियारिड्ढीए'त्ति 'केवलं' नवरं परिवारः–परिचारणा स चेह स्त्रीशब्दश्रवणरूपसंदर्शनादिरूपः स एव ऋद्धिः–सम्पत् परिवारर्द्धिस्तया परिवारर्द्ध्या वा कलत्रादिपरिजनपरिचारणामात्रेणेत्यर्थः 'नो चेव णं मेहुणवत्तियं'ति नैव च मैथुनप्रत्ययं यथा भवति एवं भोगभोगान् भुञ्जानो विहर्त्तुं प्रभुरिति प्रकृतमिति ॥ 'परियारो जहा मोउद्देसए'त्ति तृतीयशतस्य प्रथमोद्देशके इत्यर्थः 'सओ परिवारो'त्ति धरणस्य स्वकः परिवारो वाच्यः, स चैवं–'छहिं सामाणियसाहस्सीहिं तायत्तीसाए तायत्तीसएहिं चउहिं लोगपालेहिं छहिं अग्गमहिसीहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं चउवीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अन्नेहि य बहूहिं नागकुमारेहिं देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे'त्ति 'एवं जहा जीवाभिगमे'इत्यादि, अनेन च यत्सूचितं तदिदं–'तत्थ णं एगमेगाए देवीए चत्तारि २ देविसाहस्सीओ परिवारो पन्नत्तो, पहू णं ताओ एगमेगा देवी अन्नाइं चत्तारि २ देवीसहस्साइं परिवारं विउव्वित्तए, एवामेव सपुव्वावरेणं सोलस देविसाहस्सीओ पन्नत्ताओ'इति 'सेत्तं तुडिय'मित्यादीति, 'एवं अट्ठासीतिएवि महागहाणं भाणियव्वं'ति, तत्र द्वयोर्वक्तव्यतोक्तैव शेषाणां तु लोहिताक्षशनैश्चराधुणिकप्राधुणिककणककणकणादीनां सा वाच्येति । 'विमाणाइं जहा तइयसए'त्ति तत्र सोमस्योक्तमेव यमवरुणवैश्रमणानां तु क्रमेण वरसिट्ठे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अग्रमहिष्य: विषयक प्रश्नोत्तर:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५०६॥

सयंजले वग्गुत्ति विमाणा 'जहा चउत्थसए'त्ति क्रमेण च तानीशानलोकपालानामिमानि—'सुमणे सव्वओभद्दे वग्गू सुवग्गू'इति ॥ दशमशते पञ्चमोद्देशकः ॥ १०–५ ॥

पञ्चमोद्देशके देववक्तव्यतोक्ता, षष्ठे तु देवाश्रयविशेषं प्रतिपादयन्नाह—

कहि णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो सभा सुहम्मा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जंबुद्दीवे २ मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए एवं जहा रायप्पसेणइज्जे जाव पंच वडेंसगा पन्नत्ता, तंजहा–असोगवडेंसए जाव मज्झे सोहम्मवडेंसए, से णं सोहम्मवडेंसए महाविमाणे अद्धतेरस य जोयणसयसहस्साइं आयाम-विक्खंभेणं,–एवं जह सूरियाभे तहेव माणं तहेव उववाओ। सक्कस्स य अभिसेओ तहेव जह सूरिया-भस्स ॥ १ ॥ अलंकारअचणिया तहेव जाव आयरक्खत्ति, दो सागरोवमाइं ठिती। सक्के णं भंते ! देविंदे देव-राया केमहिड्ढीए जाव केमहसोक्खे ?, गोयमा ! महिड्ढीए जाव महसोक्खे, से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणा-वाससयसहस्साणं जाव विहरति एवंमहिड्ढिए जाव महासोक्खे सक्के देविंदे देवराया। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ४०७) ॥ १०–६ ॥

'कहि ण'मित्यादि, 'एवं जहा रायप्पसेणइज्जे'इत्यादिकरणादेवं दृश्यं—'पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमि-भागाओ उड्ढं चंदमसूरियगहगणनक्खत्ततारारूवाणं बहूइं जोयणाइं बहूइं जोयणसयाइं एवं सहस्साइं एवं सयसहस्साइं बहूओ जोयणकोडीओ बहूओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढं दूरं वीइवइत्ता एत्थ णं सोहम्मे नामं कप्पे

१० शतके ६ उद्देशः सुधर्मासभा सू ४०७

॥५०६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र दशमे शतके पंचम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ दशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: आरभ्यते

पन्नत्ते'इत्यादि, 'असोगवडेंसए' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'सत्तवन्नवडेंसए चंपगवडेंसए चूयवडेंसए'त्ति, विवक्षिताभिधेयसूचिका चेयमतिदेशगाथा—'एवं जह सूरियाभे तहेव माणं तहेव उववाओ। सक्कस्स य अभिसेओ तहेव जह सूरियाभस्स ॥ १ ॥' इति, 'एवम्' अनेन क्रमेण यथा सूरिकाभे विमाने राजप्रश्नकृताख्यग्रन्थोक्ते प्रमाणमुक्तं तथैवास्मिन् वाच्यं, तथा यथा सूरिकाभाभिधानदेवस्य देवत्वेन तत्रोपपात उक्तस्तथैवोपपातः शक्रस्येह वाच्योऽभिषेकश्चेति, तत्र प्रमाणं–आयामविष्कम्भसम्बन्धि दर्शितं, शेषं पुनरिदम्—'ऊयालीसं च सयसहस्साइं बावन्नं सहस्साइं अट्ठ य अडयाले जोयणसए परिक्खेवेणं'ति। उपपातश्चैवं—'तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के देविंदे देवराया अहुणोववन्नमेत्ते चेव समाणे पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावं गच्छइ, तंजहा–आहारपज्जत्तीए ५' इत्यादि। अभिषेकः पुनरेवं–'तए णं सक्के देविंदे देवराया जेणेव अभिसेयसभा तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता अभिसेयसभं अणुप्पयाहिणीकरेमाणे २ पुरच्छिमिल्लेणं दारेणं अणुपविसइ जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता सीहासणवरगते पुरच्छाभिमुहे निसन्ने, तए णं तस्स सक्कस्स ३ सामाणियपरिसोववन्नगा देवा आभिओगिए देवे सद्दावेंति सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सक्कस्स ३ महत्थं महरिहं विउलं इंदाभिसेयं उवट्ठवेह'इत्यादि,'अलंकार अच्चणिया य तहेव'त्ति यथा सूरिकाभस्य तथैवालङ्कारः अर्चनिका चेन्द्रस्य वाच्या, तत्रालङ्कारः–'तए णं से सक्के देवे तप्पढमयाए पम्हलसूमालाए सुरभीए गंधकासाईयाए गायाइं लूहेइ २ सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपइ २ नासानीसासवायवोज्झं चक्खुहरं वन्नफरिसजुत्तं हयलालापेलवातिरेगं धवलकणगखचियंतकम्मं आगासफालियसमप्पभं दिव्वं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४०७] + गाथा

दीप अनुक्रम [४९०--४९२]

देवदूसजुयलं नियंसेति २ हारं पिणद्धेती'त्यादीति, अर्चनिकालेशस्त्वेवं–'तए णं से सक्के ३ सिद्धायययणं पुरच्छिमिल्लेणं दारेणं अणुप्पविसइ २ जेणेव देवच्छंदए जेणेव जिणपडिमा तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता जिण-पडिमाणं आलोए पणामं करेइ २ लोमहत्थगं गेण्हइ २ जिणपडिमाओ लोमहत्थएणं पमज्जइ २ जिणपडिमाओ सुरभिणा गंधोदएणं ण्हाणेइ'त्ति,'जाव आयरक्ख'त्ति अर्चनिकायाः परो ग्रन्थस्तावद्वाच्यो यावदात्मरक्षाः, स चैवं लेशतः—'तए णं से सक्के ३ सभं सुहम्मं अणुप्पविसइ २ सीहासणे पुरच्छाभिमुहे निसीयइ, तए णं तस्स सक्कस्स ३ अवरुत्तरेणं उत्तर-पुरच्छिमेणं चउरासीई सामाणियसाहस्सीओ निसीयंति पुरच्छिमेणं अट्ठ अग्गमहिसीओ दाहिणपुरच्छिमेणं अब्भितरिया परिसा बारस देवसाहस्सीओ निसीयंति दाहिणेणं मज्झिमियाए परिसाए चोद्दस देवसाहस्सीओ दाहिणपच्चत्थिमेणं बाहिरियाए परिसाए सोलस देवसाहस्सीओ पच्चत्थिमेणं सत्त अणियाहिवईणो, तए णं तस्स सक्कस्स ३ चउदिसिं चत्तारि आयरक्खदेवचउरासीसाहस्सीओ निसीयंती'त्यादीति,'केमहड्ढीए' इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'केमहज्जुइए केम-हाणुभागे केमहायसे केमहाबले ?'त्ति, 'बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्साणं' इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'चउरासीए सामाणियसाहस्सीणं तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं [ग्रन्थाग्रम् ११०००] अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं जाव अन्नेसिं च बहूणं जाव देवाणं देवीण य आहेवच्चं जाव कारेमाणे पालेमाणे'त्ति ॥ दशमशते षष्ठोद्देशकः ॥ १०–६ ॥

षष्ठोद्देशके सुधर्म्मसभोक्ता, सा चाश्रय इत्याश्रयाधिकारादाश्रयविशेषानन्तरद्वीपाभिधानान् मेरोरुत्तरदिग्वर्त्तिशिख-रिपर्वतदंष्ट्रागतान् लवणसमुद्रान्तर्वर्त्तिनोऽष्टाविंशतिमभिधित्सुरष्टाविंशतिमुद्देशकानाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

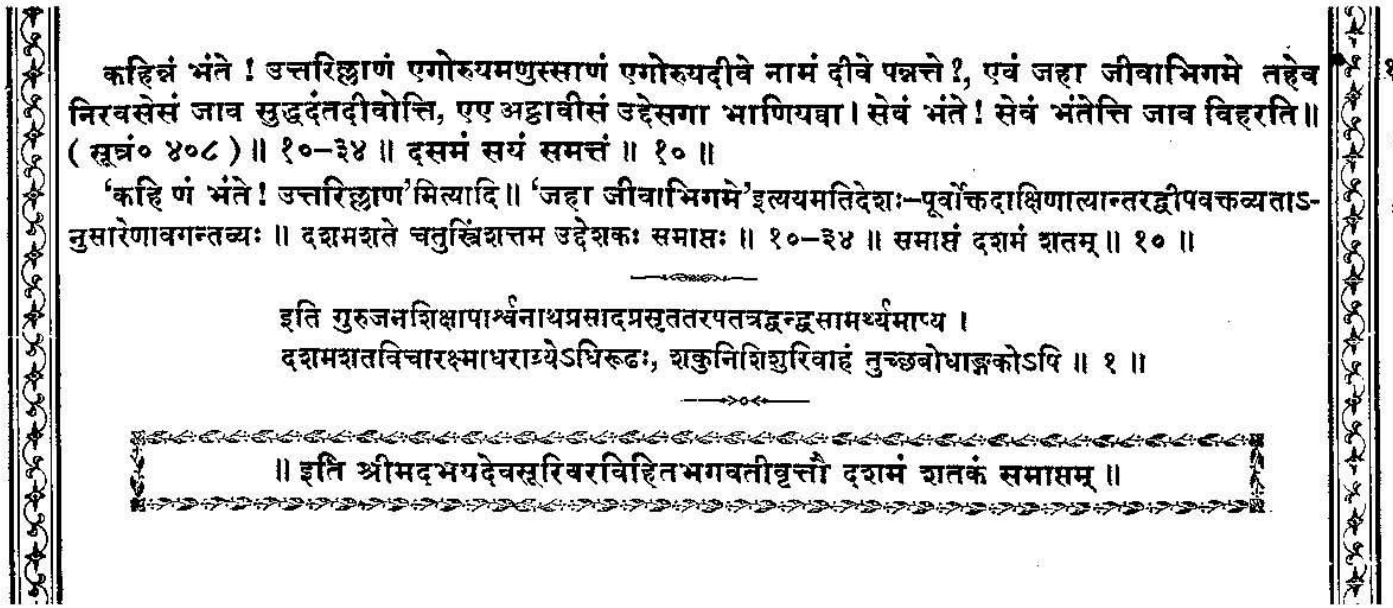
अत्र दशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ दशमे शतके सप्तमात् चतुस्त्रिंशत पर्यन्ता: उद्देशका: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४०८]

दीप अनुक्रम [४९३]



कहिन्नं भंते ! उत्तरिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयदीवे नामं दीवे पन्नत्ते ?, एवं जहा जीवाभिगमे तहेव निरवसेसं जाव सुद्धदंतदीवोत्ति, एए अट्ठावीसं उद्देसगा भाणियव्वा। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरति॥ (सूत्रं० ४०८) ॥ १०–३४ ॥ दसमं सयं समत्तं ॥ १० ॥

'कहि णं भंते ! उत्तरिल्लाण'मित्यादि॥ 'जहा जीवाभिगमे'इत्ययमतिदेशः–पूर्वोक्तदाक्षिणात्यान्तरद्वीपवक्तव्यताऽनुसारेणावगन्तव्यः ॥ दशमशते चतुस्त्रिंशत्तम उद्देशकः समाप्तः ॥ १०–३४ ॥ समाप्तं दशमं शतम् ॥ १० ॥

इति गुरुजनशिक्षापार्श्वनाथप्रसादप्रसृततरपतत्रद्वन्द्वसामर्थ्यमाप्य ।
दशमशतविचारक्ष्माधराग्येऽधिरूढः, शकुनिशिशुरिवाहं नुच्छबोधाङ्ककोऽपि ॥ १ ॥

॥ इति श्रीमदभयदेवसूरिवरविहितभगवतीवृत्तौ दशमं शतकं समाप्तम् ॥

१० शतके ७-३४ उत्तरान्तद्वीपाः सू ४०८

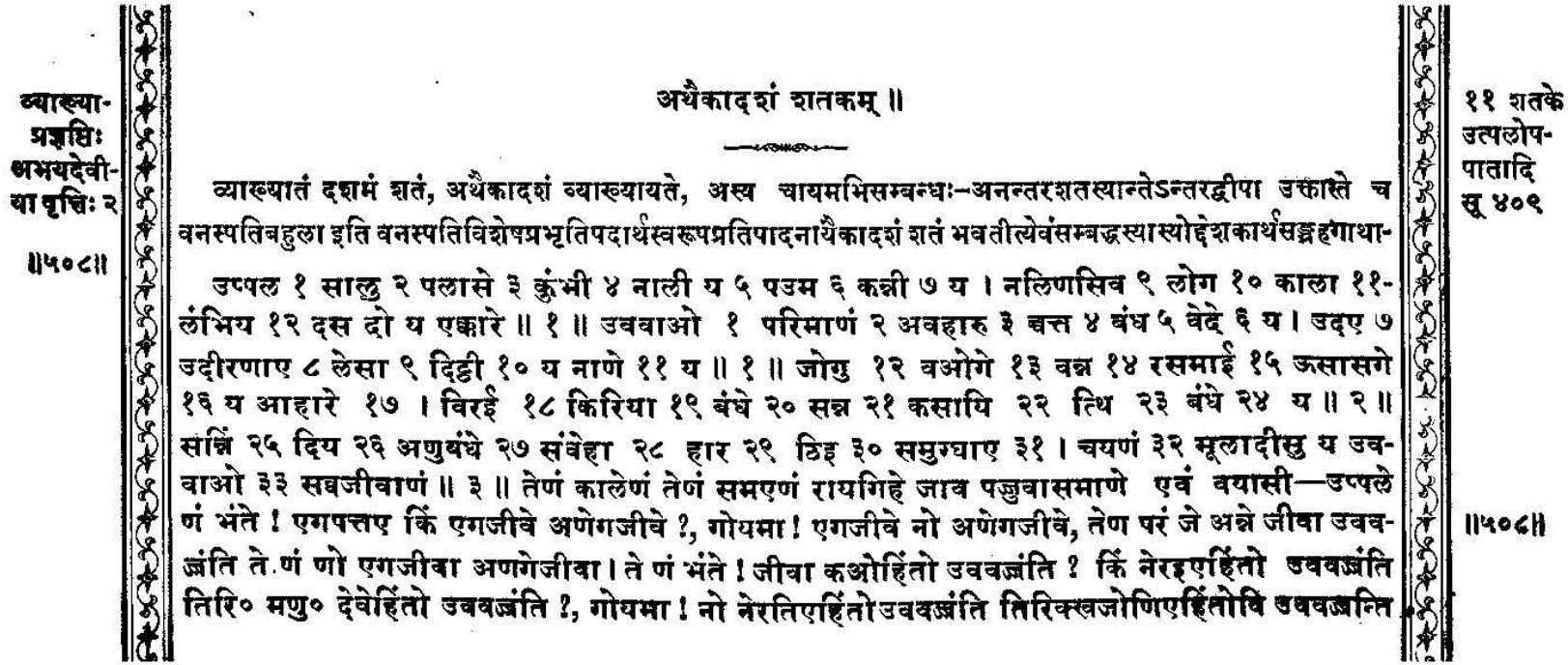
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र दशमे शतके ७-३४ उद्देशका: परिसमाप्ता: तत् समाप्ते दशमं शतकं अपि समाप्तं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४०९] + गाथा:

दीप अनुक्रम [४९४--४९८]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५०८॥

अथैकादशं शतकम् ॥

११ शतके उत्पलोप-पातादि सू ४०९

व्याख्यातं दशमं शतं, अथैकादशं व्याख्यायते, अस्य चायमभिसम्बन्धः–अनन्तरशतस्यान्तेऽन्तरद्वीपा उक्तास्ते च वनस्पतिबहुला इति वनस्पतिविशेषप्रभृतिपदार्थस्वरूपप्रतिपादनायैकादशं शतं भवतीत्येवंसम्बद्धस्यास्योद्देशकार्थसङ्ग्रहगाथा-

उप्पल १ सालु २ पलासे ३ कुंभी ४ नाली य ५ पउम ६ कन्नी ७ य । नलिणसिव ९ लोग १० काला ११-लंभिय १२ दस दो य एक्कारे ॥ १ ॥ उववाओ १ परिमाणं २ अवहारु ३ च्चत्त ४ बंध ५ वेदे ६ य । उदए ७ उदीरणाए ८ लेसा ९ दिट्ठी १० य नाणे ११ य ॥ १ ॥ जोगु १२ वओगे १३ वन्न १४ रसमाई १५ ऊसासगे १६ य आहारे १७ । विरई १८ किरिया १९ बंधे २० सन्न २१ कसायि २२ त्थि २३ बंधे २४ य ॥ २ ॥ सन्नि २५ दिय २६ अणुबंधे २७ संवेहा २८ हार २९ ठिइ ३० समुग्घाए ३१ । चयणं ३२ मूलादीसु य उववाओ ३३ सव्वजीवाणं ॥ ३ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—उप्पलेणं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?, गोयमा ! एगजीवे नो अणेगजीवे, तेण परं जे अन्ने जीवा उववज्जंति ते णं णो एगजीवा अणेगजीवा । ते णं भंते ! जीवा कओहिंतो उववज्जंति ? किं नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरि० मणु० देवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! नो नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरिक्खजोणिएहिंतोवि उववज्जन्ति

॥५०८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ एकादशमं शतकं आरब्धं

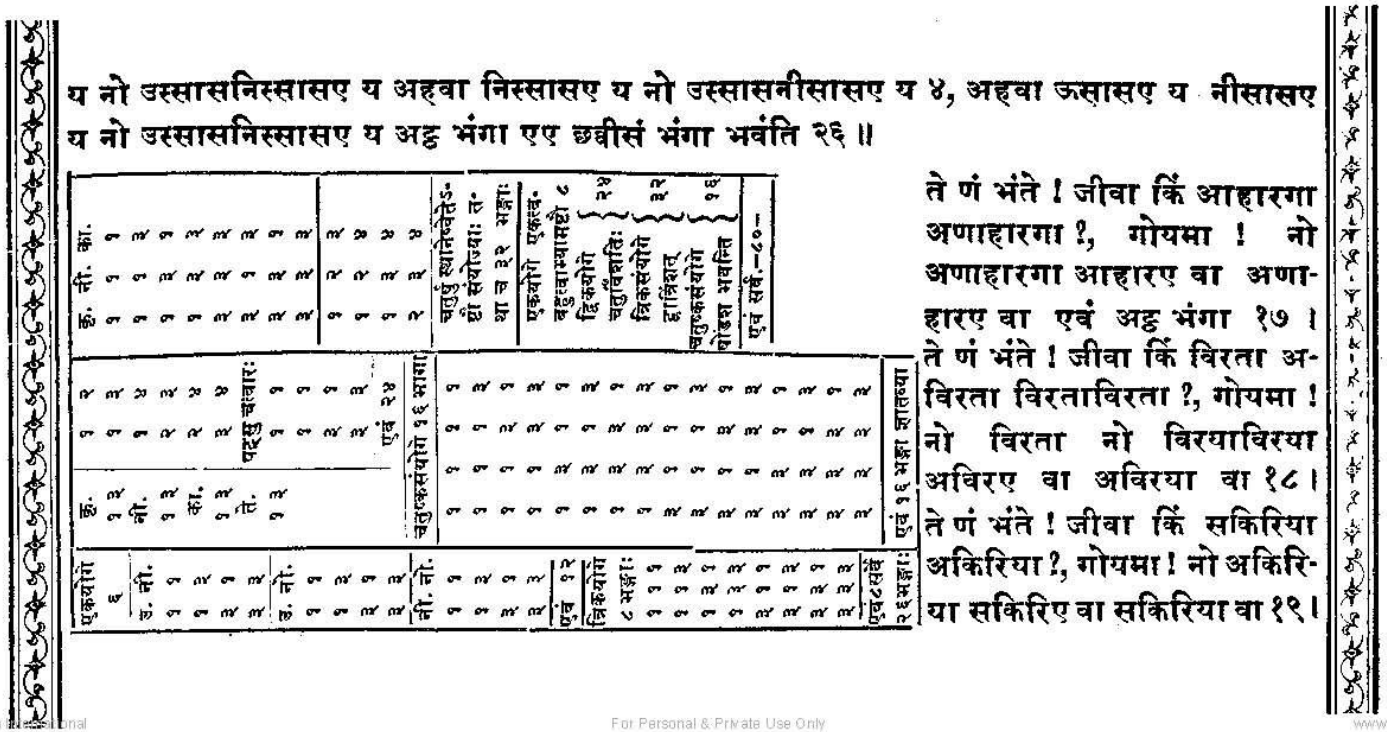
अथ एकादशमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरभ्यते

मणुस्सेहिंतो० देवेहिंतोवि उववज्जंति, एवं उववाओ भाणियव्वो, जहा वक्कंतीए वणस्सइकाइयाणं जाव ईसाणेति १। ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति ?, गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति २। ते णं भंते ! जीवा समए २ अवहीरमाणा २ केवतिकालेणं अवहीरंति ?, गोयमा ! ते णं असंखेज्जा समए २ अवहीरमाणा २ असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणिओसप्पिणीहिं अवहीरंति नो चेव णं अवहिया सिया ३। तेसि णं भंते ! जीवाणं केमहालिया सरीरोगाहणा पण्णत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं सातिरेगं जोयणसहस्सं ४। ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधगा अबंधगा ?, गोयमा ! नो अबंधगा बंधए वा बंधगा वा एवं जाव अंतराइयस्स, नवरं आउयस्स पुच्छा, गोयमा ! बंधए वा अबंधए वा बंधगा वा अबंधगा वा अहवा बंधए य अबंधए य अहवा बंधए य अबंधगा य अहवा बंधगा य अबंधए य अहवा बंधगा य अबंधगा य ८ एते अट्ठ भंगा ५। ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं वेदगा अवेदगा ?, गोयमा ! नो अवेदगा वेदए वा वेदगा वा एवं जाव अंतराइयस्स, ते णं भंते ! जीवा किं सायावेयगा असायावेयगा ?, गोयमा ! सायावेदए वा असायावेयए वा अट्ठ भंगा ६। ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं उदई अणुदई ?, गोयमा ! नो अणुदई उदई वा उदइणो वा, एवं जाव अंतराइयस्स ७॥ ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किं उदीरगा०?, गोयमा ! नो अणुदीरगा उदीरए वा उदीरगा वा, एवं जाव अंतराइयस्स, नवरं वेयणिज्जा-उएसु अट्ठ भंगा ८। ते णं भंते ! जीवा किं कण्हलेसा नीललेसा काउलेसा तेउलेसा ?, गोयमा ! कण्हलेसे वा जाव तेउलेसे वा कण्हलेस्सा वा नीललेस्सा वा काउलेस्सा वा तेउलेसा वा अहवा कण्हलेसे य नील-लेस्से य एवं एए दुयासंजोगतियासंजोगचउक्कसंजोगेणं असीती भंगा भवंति ९ ॥ ते णं भंते ! जीवा किं सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी ?, गोयमा ! नो सम्मदिट्ठी नो सम्मामिच्छादिट्ठी मिच्छादिट्ठी वा मिच्छादिट्ठिणो वा १०। ते णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नो नाणी अण्णाणी वा अन्नाणिणो वा ११। ते णं भंते ! जीवा किं मणजोगी वयजोगी कायजोगी ?, गोयमा ! नो मणजोगी णो वयजोगी कायजोगी वा कायजोगिणो वा १२। ते णं भंते ! जीवा किं सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता ?, गोयमा ! सागारोवउत्ते वा अणागारोवउत्ते वा अट्ठ भंगा १३। तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरगा कतिवन्ना कतिगंधा कतिरसा कतिफासा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंचवन्ना पंचरसा दुगंधा अट्ठफासा पन्नत्ता, ते पुण अप्पणा अवन्ना अगंधा अरसा अफासा पन्नत्ता १४–१५ ॥ ते णं भंते ! जीवा किं उस्सासा निस्सासा नो उस्सासनिसासा ?, गोयमा ! उस्सासए वा १ निस्सासए वा २ नो उस्सासनिस्सासए वा ३ उस्सासगा वा ४ निस्सासगा वा ५ नो उस्सासनीसासगा वा ६, अहवा उस्सासए य निस्सासए य ४ अहवा उस्सासए

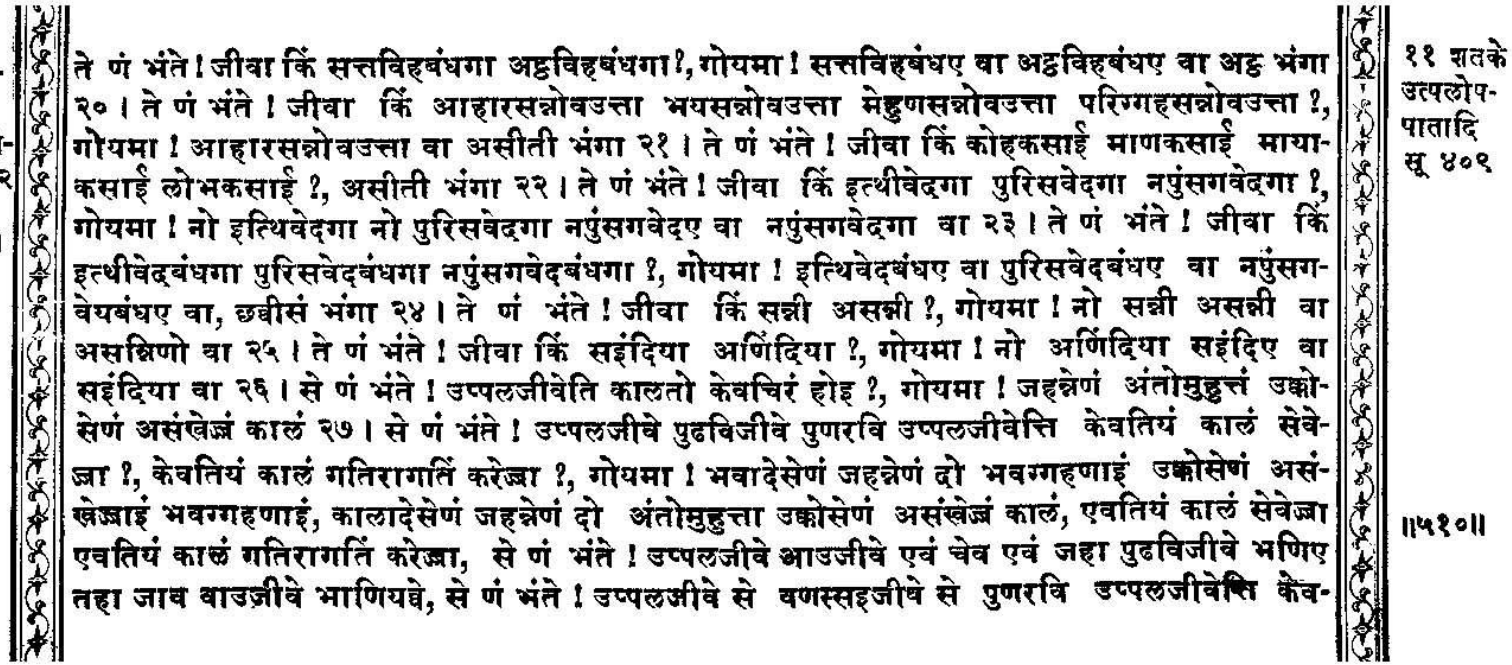
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



य नो उस्सासनिस्सासए य अहवा निस्सासए य नो उस्सासनीसासए य ४, अहवा ऊसासए य नीसासए य नो उस्सासनिस्सासए य अट्ठ भंगा एए छव्वीसं भंगा भवंति २६ ॥

ते णं भंते ! जीवा किं आहारगा अणाहारगा ?, गोयमा ! नो अणाहारगा आहारए वा अणाहारए वा एवं अट्ठ भंगा १७ । ते णं भंते ! जीवा किं विरता अविरता विरताविरता ?, गोयमा ! नो विरता नो विरयाविरया अविरए वा अविरया वा १८ । ते णं भंते ! जीवा किं सकिरिया अकिरिया ?, गोयमा ! नो अकिरिया सकिरिए वा सकिरिया वा १९ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५१०॥

ते णं भंते ! जीवा किं सत्तविहबंधगा अट्ठविहबंधगा ?, गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा अट्ठ भंगा २० । ते णं भंते ! जीवा किं आहारसन्नोवउत्ता भयसन्नोवउत्ता मेहुणसन्नोवउत्ता परिग्गहसन्नोवउत्ता ?, गोयमा ! आहारसन्नोवउत्ता वा असीती भंगा २१ । ते णं भंते ! जीवा किं कोहकसाई माणकसाई मायाकसाई लोभकसाई ?, असीती भंगा २२ । ते णं भंते ! जीवा किं इत्थीवेदगा पुरिसवेदगा नपुंसगवेदगा ?, गोयमा ! नो इत्थिवेदगा नो पुरिसवेदगा नपुंसगवेदए वा नपुंसगवेदगा वा २३ । ते णं भंते ! जीवा किं इत्थीवेदबंधगा पुरिसवेदबंधगा नपुंसगवेदबंधगा ?, गोयमा ! इत्थिवेदबंधए वा पुरिसवेदबंधए वा नपुंसगवेयबंधए वा, छब्बीसं भंगा २४ । ते णं भंते ! जीवा किं सन्नी असन्नी ?, गोयमा ! नो सन्नी असन्नी वा असन्निणो वा २५ । ते णं भंते ! जीवा किं सइंदिया अणिंदिया ?, गोयमा ! नो अणिंदिया सइंदिए वा सइंदिया वा २६ । से णं भंते ! उप्पलजीवेति कालतो केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं २७ । से णं भंते ! उप्पलजीवे पुढविजीवे पुणरवि उप्पलजीवेत्ति केवतियं कालं सेवेज्जा ?, केवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा ?, गोयमा ! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं असंखेज्जाइं भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा, से णं भंते ! उप्पलजीवे आउजीवे एवं चेव एवं जहा पुढविजीवे भणिए तहा जाव वाउजीवे भाणियव्वे, से णं भंते ! उप्पलजीवे से वणस्सइजीवे से पुणरवि उप्पलजीवेत्ति केव-

११ शतके उत्पलोप-पातादि सू ४०९

॥५१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इयं कालं सेवेज्जा केवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जइ ?, गोयमा ! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अणंताइं भवग्गहणाइं, कालाएसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं अणंतं कालं तरुकालं एवइयं कालं सेवेज्जा एवइयं कालं गतिरागतिं करेज्जइ, से णं भंते ! उप्पलजीवे बेइंदियजीवे पुणरवि उप्पलजीवेत्ति केवइयं कालं सेवेज्जा केवइयं कालं गतिरागतिं करेज्जइ ?,गोयमा ! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं संखेज्जाइं भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ता उक्कोसेणं संखेज्जं कालं एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जइ, एवं तेइंदियजीवे, एवं चउरिंदियजीवेवि, से णं भंते ! उप्पलजीवे पंचेंदियतिरिक्खजोणियजीवे पुणरवि उप्पलजीवेत्ति पुच्छा, गोयमा ! भवादेसेणं जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्ताइं उक्कोसेणं पुव्वकोडिपुहुत्ताइं एवतियं कालं सेवेज्जा एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा, एवं मणुस्सेणवि समं जाव एवतियं कालं गतिरागतिं करेज्जा २८। ते णं भंते ! जीवा किमाहारमाहारेंति ?, गोयमा ! दव्वओ अणंतपएसियाइं दव्वाइं एवं जहा आहारुद्देसए वणस्सइकाइयाणं आहारो तहेव जाव सव्वप्पणयाए आहारमाहारेंति नवरं नियमा छद्दिसिं सेसं तं चेव २९। तेसि णं भंते ! जीवाणं केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं दस वाससहस्साइं ३०। तेसि णं भंते ! जीवाणं कति समुग्घाया पण्णत्ता ?, गोयमा ! तओ समुग्घाया पण्णत्ता, तंजहा–वेदणासमुग्घाए कसायस० मारणंतियस० ३१। ते णं भंते ! जीवा मारणंतियसमुग्घाएणं किं समोहया मरंति असमोहया मरंति ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! समोहयावि मरंति असमोहयावि मरंति ३२। ते णं भंते ! जीवा अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति किं नेरइएसु उववज्जंति तिरिक्खजोणिएसु उवव० एवं जहा वक्कंतीए उव्वट्टणाए वणस्सइकाइयाणं तहा भाणियव्वं। अह भंते ! सव्वपाणा सव्वभूया सव्वजीवा सव्वसत्ता उप्पलमूलत्ताए उप्पलकंदत्ताए उप्पलनालत्ताए उप्पलपत्तत्ताए उप्पलकेसरत्ताए उप्पलकन्नियत्ताए उप्पलथिभुगत्ताए उववन्नपुव्वा ?, हंता गोयमा ! असतिं अदुवा अणंतक्खुत्तो। सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति ३३॥ (सू० ४०९)॥ उप्पलुद्देसए॥११–१॥

'उप्पले'त्यादि, उत्पलार्थः प्रथमोद्देशकः १ 'सालु'त्ति शालूकं–उत्पलकन्दस्तदर्थो द्वितीयः २ 'पलासे'त्ति पलाशः–किंशुकस्तदर्थस्तृतीयः ३ 'कुंभी'ति वनस्पतिविशेषस्तदर्थश्चतुर्थः ४ नाडीवद्यस्य फलानि स नाडीको–वनस्पतिविशेष एव तदर्थः पञ्चमः ५ 'पउम'त्ति पद्मार्थः षष्ठः ६ 'कन्नीय'त्ति कर्णिकार्थः सप्तमः ७ 'नलिण'त्ति नलिनार्थोऽष्टमः ८ यद्यपि चोत्पलपद्मनलिनानां नामकोशे एकार्थतोच्यते तथाऽपीह रूढेर्विशेषोऽवसेयः, 'सिव'त्ति शिवराजर्षिवक्तव्यतार्थो नवमः ९ 'लोग'त्ति लोकार्थो दशमः १० 'कालालभिए'त्ति कालार्थ एकादशः ११ आलभिकायां नगर्यां यत्प्ररूपितं तत्प्रतिपादक उद्देशकोऽप्यालभिक इत्युच्यते ततोऽसौ द्वादश १२, 'दस दो य एक्कारे'त्ति द्वादशोद्देशका एकादशे शते भवन्तीति। तत्र प्रथमोद्देशकद्वारसङ्ग्रहगाथा वाचनान्तरे दृष्टास्ताश्चेमाः—'उववाओ'इत्यादि, एतासां चार्थ उद्देशकार्थाधिगमगम्य इति ॥ 'उप्पले णं भंते ! एगपत्तए'इत्यादि, 'उत्पलं' नीलोत्पलादि एकं पत्रं यत्र तदेकपत्रकं अथवा एकं च तत्पत्रं चैकपत्रं तदेवैकपत्रकं तत्र सति, एकपत्रकं चेह किशलयावस्थाया उपरि द्रष्टव्यम्, 'एगजीवे'त्ति यदा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हि एकपत्रावस्थं तदैकजीवं तत्, यदा तु द्वितीयादिपत्रं तेन समारब्धं भवति तदा नैकपत्रावस्था तस्येति बहवो जीवास्तत्रोत्पद्यन्त इति, एतदेवाह—'तेण पर'मित्यादि,'तेण परं'ति ततः–प्रथमपत्रात् परतः 'जे अन्ने जीवा उववज्जंति'त्ति येऽन्ये–प्रथमपत्रव्यतिरिक्ता जीवा जीवाश्रयत्वात्पत्रादयोऽवयवा उत्पद्यन्ते ते 'नैकजीवाः' नैकजीवाश्रयाः किन्त्वनेकजीवाश्रया इति, अथवा 'तेणे'त्यादि, ततः–एकपत्रात्परतः शेषपत्रादिष्वित्यर्थः येऽन्ये जीवा उत्पद्यन्ते ते 'नैकजीवा' नैककाः किन्त्वनेकजीवा अनेके इत्यर्थः ॥ 'ते णं भंते ! जीव'त्ति ये उत्पले प्रथमपत्राद्यवस्थायामुत्पद्यन्ते 'जहा वक्कंतीए'त्ति प्रज्ञापनायाः षष्ठपदे, स चैवमुपपातः—'जइ तिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति किं एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! एगिंदियतिरिक्खजोणिएहिंतोवि उववज्जंति'इत्यादि, एवं मनुष्यभेदा वाच्याः—'जइ देवेहिंतो उववज्जंति किं भवणवासी'त्यादि प्रश्नो निर्वचनं च ईशानान्तदेवेभ्य उत्पद्यन्त इत्युपयुज्य वाच्यमिति, तदेतेनोपपात उक्तः ॥ 'जहन्नेण एक्को वे'त्यादिना तु परिमाणम् २। 'ते णं असंखेज्जा समए'इत्यादिना त्वपहार उक्तः, एवं द्वारयोजना कार्या ३। उच्चत्वद्वारे 'साइरेगं जोयणसहस्सं'ति तथाविधसमुद्रगोतीर्थकादाविदमुच्चत्वमुत्पलस्यावसेयम् ४। बन्धद्वारे 'बंधए बंधया व'त्ति एकपत्रावस्थायां बन्धक एकत्वात् द्व्यादिपत्रावस्थायां च बन्धका बहुत्वादिति, एवं सर्वकर्मसु, आयुष्के तु तदबन्धावस्थाऽपि स्यात् तदपेक्षया चाबन्धकोऽपि अबन्धका अपि च भवन्तीति, एतदेवाह—'नवर'मित्यादि, इह बन्धकाबन्धकपदयोरेकत्वयोगे एकवचनेन द्वौ विकल्पौ बहुवचनेन च द्वौ द्विकयोगे तु यथायोगमेकत्वबहुत्वाभ्यां चत्वारः इत्येवमष्टौ विकल्पाः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्थापना—बं १, अ १, बं २, अ २, बं १ अ १, बं १ अ २, बं २ अ १, बं २ अबं २। ५। वेदनद्वारे ते भदन्त! जीवा ज्ञानावरणीयस्य कर्मणः किं वेदका अवेदकाः ?, अत्रापि एकपत्रतायामेकवचनान्तता अन्यत्र तु बहुवचनान्तता एवं यावदन्तरायस्य, वेदनीये सातासाताभ्यां पूर्ववदष्टौ भङ्गाः, इह च सर्वत्र प्रथमपत्रापेक्षयैकवचनान्तता, ततः परं तु बहुवचनान्तता, वेदनं अनुक्रमोदितस्योदीरणोदीरितस्य वा कर्म्मणोऽनुभवः, उदयश्चानुक्रमोदितस्यैवेति वेदकत्वप्ररूपणेऽपि भेदेनोदयित्वप्ररूपण ७ मिति ॥ उदीरणाद्वारे 'नो अणुदीरग'त्ति तस्यामवस्थायां तेषामनुदीरकत्वस्यासम्भवात्। 'वेयणिज्जाउएसु अट्ठ भंग'त्ति वेदनीये–सातासातापेक्षया आयुषि पुनरुदीरकत्वानुदीरकत्वापेक्षयाऽष्टौ भङ्गाः, अनुदीरकत्वं चायुष उदीरणायाः कादाचित्कत्वादिति ॥ लेश्याद्वारेऽशीतिर्भङ्गाः, कथम् ?, एककयोगे एकवचनेन चत्वारो बहुवचनेनापि चत्वार एव, द्विकयोगे तु यथायोगमेकवचनबहुवचनाभ्यां चतुर्भङ्गी, चतुर्णां च पदानां षड् द्विकयोगास्ते च चतुर्गुणाश्चतुर्विंशतिः, त्रिकयोगे तु त्रयाणां पदानामष्टौ भङ्गाः, चतुर्णां च पदानां चत्वारस्त्रिकसंयोगास्ते चाष्टाभिर्गुणिता द्वात्रिंशत्, चतुष्कसंयोगे तु षोडश भङ्गाः, सर्वमीलने चाशीतिरिति, अत एवोक्तं 'गोयमा! कण्हलेसे वे'त्यादि ॥ वर्णादिद्वारे 'ते पुण अप्पणा अवन्न'त्ति शरीराण्येव तेषां पञ्चवर्णादीनि ते पुनरुत्पलजीवाः 'अप्पण'त्ति स्वरूपेण 'अवर्णा' वर्णादिवर्जिताः अमूर्त्तत्वात्तेषामिति ॥ उच्छ्वासकद्वारे 'नो उस्सासनिस्सासए'त्ति अपर्याप्तावस्थायाम्, इह च षड्विंशतिर्भङ्गाः, कथम् ?, एककयोगे एकवचनान्तास्त्रयः बहुवचनान्ता अपि त्रयः, द्विकयोगे तु यथायोगमेकत्वबहुत्वाभ्यां तिस्रश्चतुर्भङ्गिका इति द्वादश, त्रिकयोगे त्वष्टाविति, अत एवाह–'एए छव्वीसं भंगा भवंति'त्ति ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आहारकद्वारे 'आहारए वा अणाहारए व'त्ति विग्रहगतावनाहारकोऽन्यदा त्वाहारकस्तत्र चाष्टौ भङ्गाः पूर्ववत् । सञ्ज्ञाद्वारे कषायद्वारे चाशीतिर्भङ्गाः लेश्याद्वारवक्तव्याख्येयाः । 'से णं भंते ! उप्पलजीवे'त्ति इत्यादिनोत्पलत्वस्थिति-रनुबन्धपर्यायतयोक्ता । 'से णं भंते ! उप्पलजीवे पुढविजीवे'त्ति इत्यादिना तु संवेधस्थितिरुक्ता, तत्र च 'भवा-देसेणं'ति भवप्रकारेण भवमाश्रित्येत्यर्थः 'जहन्नेणं दो भवग्गहणाइं'ति एकं पृथिवीकायिकत्वे ततो द्वितीयमुत्पलत्वे ततः परं मनुष्यादिगतिं गच्छेदिति । 'कालादेसेणं जहन्नेणं दो अंतोमुहुत्त'त्ति पृथिवीत्वेनान्तर्मुहूर्त्तं पुनरुत्पलत्वे नान्तर्मुहूर्त्तमित्येवं कालादेशेन जघन्यतो द्वे अन्तर्मुहूर्त्ते इति, एवं द्वीन्द्रियादिषु नेयम् , 'उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गह-णाइं'ति चत्वारि पञ्चेन्द्रियतिरश्चश्चत्वारि चोत्पलस्थेत्येवमष्टौ भवग्रहणान्युत्कर्षत इति, 'उक्कोसेणं पुव्वकोडीपुहुत्तं'ति चतुर्षु पञ्चेन्द्रियतिर्यग्भवग्रहणेषु चतस्रः पूर्वकोट्यः उत्कृष्टकालस्य विवक्षितत्वेनोत्पलकायोद्वृत्तजीवयोग्योत्कृष्टपञ्चेन्द्रिय-तिर्यक्स्थितेर्ग्रहणात् , उत्पलजीवितं त्वेतास्वधिकमित्येवमुत्कृष्टतः पूर्वकोटीपृथक्त्वं भवतीति । 'एवं जहा आहारुद्दे-सए वणस्सइकाइयाण'मित्यादि, अनेन च यदतिदिष्टं तदिदं—'खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं कालओ अन्नयरका-लट्ठिइयाइं भावओ वन्नमंताइं'इत्यादि, 'सव्वप्पणयाए'त्ति सर्वात्मना 'नवरं नियमा छद्दिसिं'ति पृथिवीकायिकादयः सूक्ष्मतया निष्कुटगतत्वेन स्यादिति स्यात् तिसृषु दिक्षु स्याच्चतसृषु दिक्षु इत्यादिनापि प्रकारेणाहारमाहारयन्ति, उत्पल-जीवास्तु बादरत्वेन तथाविधनिष्कुटेष्वभावान्नियमात्षट्सु दिक्ष्वाहारयन्तीति । 'वक्कंतीए'त्ति प्रज्ञापनायाः षष्ठपदे 'उव-ट्टणाए'त्ति उद्वर्त्तनाधिकारे, तत्र चेदमेवं सूत्रं—'मणुएसु उववज्जंति देवेसु उववज्जंति ?, गोयमा ! नो नेरइएसु उव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४०९, ४१०--४१३]

दीप अनुक्रम [४९४--५०२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५१३॥

वज्जंति तिरिएसु उववज्जंति मणुएसु उववज्जंति नो देवेसु उववज्जंति''उप्पलकेसरत्ताए'त्ति इह केसराणि–कर्णिकायाः परितोऽवयवाः 'उप्पलकन्नियत्ताए'त्ति इह तु कर्णिका–बीजकोशः 'उप्पलथिभुगत्ताए'त्ति थिभुगा च यतः पत्राणि प्रभवन्ति ॥ एकादशशते प्रथमोद्देशकः ॥ ११–१ ॥

सालुए णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?, गोयमा ! एगजीवे एवं उप्पलुद्देसगवत्तव्वया अपरिसेसा भाणियव्वा जाव अणंतखुत्तो, नवरं सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं धणुपुहुत्तं, सेसं तं चेव । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ४१०) ११–२ ॥

पलासे णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?, एवं उप्पलुद्देसगवत्तव्वया अपरिसेसा भाणियव्वा, नवरं सरीरोगाहणा जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं गाउयपुहुत्ता, देवा एएसु चेव न उववज्जंति । लेसासु ते णं भंते ! जीवा किं कण्हलेसे नीललेसे काउलेसे० ?, गोयमा ! कण्हलेस्से वा नीललेस्से वा काउलेस्से वा छव्वीसं भंगा, सेसं तं चेव । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ४११) ॥ ११–३ ॥

कुंभिए णं भंते जीवे एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?, एवं जहा पलासुद्देसए तहा भाणियव्वे, नवरं ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं वासपुहुत्तं, सेसं तं चेव । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सू० ४१२) ११–४॥

नालिए णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?, एवं कुंभिउद्देसगवत्तव्वया निरवसेसं भाणियव्वा । सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति ॥ (सूत्रं ४१३) ॥ ११–५ ॥

११ शतक २-५उद्देशाः शालूकादिधकारः सू ४१०-४१३

॥५१३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकादशमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकादशमे शतके द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-पंचमा उद्देशका: आरब्धा: एवं परिसमाप्ता:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४१४--४१६]

दीप अनुक्रम [५०३--५०५]

पउमे णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?, एवं उप्पलुद्देसगवत्तव्वया निरवसेसा भाणियव्वा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ॥ (सूत्रं ४१४) ॥ ११–६ ॥

कण्णिए णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे०?, एवं चेव निरवसेसं भाणियव्वं सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति (सूत्रं ४१५) ११-७।

नलिणे णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?, एवं चेव निरवसेसं जाव अणंतक्खुत्तो ॥ सेवं भंते सेवं भंते-त्ति (सूत्रं ४१६) ११–८ ॥

शालूकोद्देशकादयः सप्तोद्देशकाः प्राय उत्पलोद्देशकसमानगमाः, विशेषः पुनर्यो यत्र स तत्र सूत्रसिद्ध एव, नवरं पलाशोद्देशके यदुक्तं 'देवेसु न उववज्जंति'त्ति तस्यायमर्थः–उत्पलोद्देशके हि देवेभ्य उद्वृत्ता उत्पले उत्पद्यन्त इत्युक्तमिह तु पलाशे नोत्पद्यन्त इति वाच्यम्, अप्रशस्तत्वात्तस्य, यतस्ते प्रशस्तेष्वेवोत्पलादिवनस्पतिषूत्पद्यन्त इति । तथा 'लेसासु'त्ति लेश्याद्वारे इदमध्येयमिति वाक्यशेषः, तदेव दर्श्यते—'ते ण'मित्यादि, इयमत्र भावना–यदा किल तेजोलेश्यायुतो देवो देवभवादुद्वृत्त्य वनस्पतिषूत्पद्यते तदा तेषु तेजोलेश्या लभ्यते, न च पलाशे देवत्वोद्वृत्त उत्पद्यते पूर्वोक्तयुक्तेः, एवं चेह तेजोलेश्या न संभवति, तदभावादाद्या एव तिस्रो लेश्या इह भवन्ति, एतासु च षड्विंशतिभङ्गकाः, त्रयाणां

१ शाले धनुःपृथक्त्वं भवति पलाशे च गव्यूतपृथक्त्वं । योजनसहस्रमधिकमवशेषाणां तु षण्णामपि ॥ १ ॥ कुंभ्यां नालिकायां वर्षपृथक्त्वं तु स्थितिर्बोद्धव्या । दश वर्षसहस्राणि अवशेषाणां तु षण्णामपि ॥ २ ॥ कुंभ्यां नालिकायां भवन्ति पलाशे च तिस्रो लेश्याः । चतस्रो लेश्यासु अवशेषाणां पञ्चानां तु ॥ ३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ एकादशमे शतके षष्ठ-सप्तम-अष्टमा उद्देशकाः आरब्धाः

प्रत सूत्रांक [४१४--४१६]

दीप अनुक्रम [५०३--५०५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५१४॥

पदानामेतावतामेव भावादिति । एतेषु चोद्देशकेषु नानात्वसङ्ग्रहार्थास्तिस्रो गाथाः—"सालंमि धणुपुहत्तं होइ पलासे य गाउयपुहत्तं । जोयणसहस्समहियं अवसेसाणं तु छण्हंपि ॥ १ ॥ कुंभीए नालियाए वासपुहत्तं ठिई उ बोद्धव्वा । दस वाससहस्साइं अवसेसाणं तु छण्हंपि ॥ २ ॥ कुंभीए नालियाए होंति पलासे य तिन्नि लेसाओ । चत्तारि उ लेसाओ अवसेसाणं तु पंचण्हं ॥ ३ ॥" एकादशशते द्वितीयादयोऽष्टमान्ताः ॥ ११–८ ॥

अनन्तरमुत्पलादयोऽर्था निरूपिताः, एवंभूतांश्चार्थान् सर्वज्ञ एव यथावज्ज्ञातुं समर्थो न पुनरन्यो, द्वीपसमुद्रानिव शिवराजर्षिः, इति सम्बन्धेनु शिवराजर्षिसंविधानकं नवमोद्देशकं प्राह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं हत्थिणापुरे नामं नगरे होत्था वन्नओ, तस्स णं हत्थिणागपुरस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभागे एत्थ णं सहसंबवणे णामं उज्जाणे होत्था सव्वोउयपुप्फफलसमिद्धे रम्मे णंदणवणसंनिप्पगासे सुहसीयलच्छाए मणोरमे सादुफले अकंटए पासादीए जाव पडिरूवे, तत्थ णं हत्थिणापुरे नगरे सिवे नामं राया होत्था महयाहिमवंत० वन्नओ, तस्स णं सिवस्स रन्नो धारिणी नामं देवी होत्था सुकुमाल पाणिपाया वन्नओ, तस्स णं सिवस्स रन्नो पुत्ते धारणीए अत्तए सिवभद्दए नामं कुमारे होत्था सुकुमाल०जहा सूरियकंते जाव पच्चुवेक्खमाणे पच्चुवेक्खमाणे विहरइ, तए णं तस्स सिवस्स रन्नो अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि रज्जधुरं चिंतेमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–अत्थि ता मे पुरा पोराणाणं जहा तामलिस्स जाव पुत्तेहिं वड्ढामि पसूहिं वड्ढामि रज्जेणं वड्ढामि एवं रट्ठेणं बलेणं वाहणेणं

११ शतके ६-७-८ उद्देशाः पद्मादि सू ४१४-४१६ ११ शतके ९ उद्देशः शिवराजर्षे-स्तापसता सू ४१७

॥५१४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

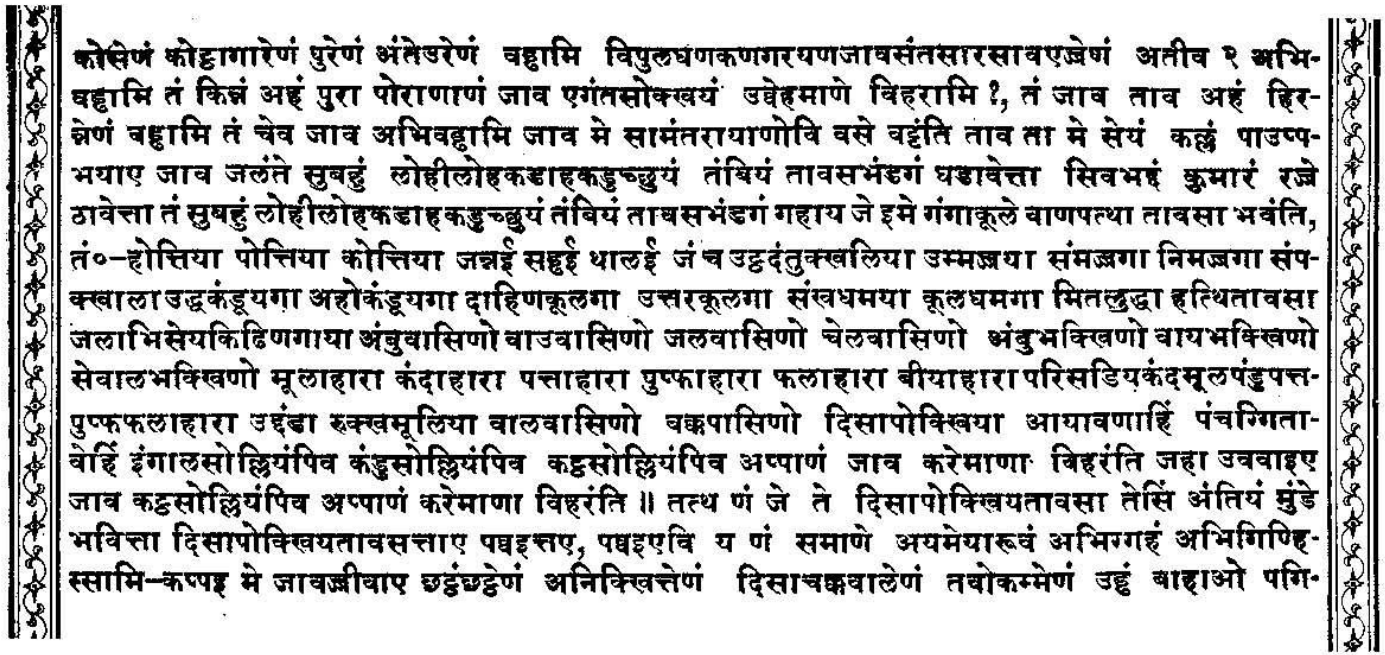
अत्र एकादशमे शतके षष्ठ-सप्तम-अष्टमा उद्देशका: परिसमाप्ता:

अथ एकादशमे शतके नवम-उद्देशक: आरभ्यते

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७--४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६--५०८]



कोसेणं कोट्ठागारेणं पुरेणं अंतेउरेणं वहामि विपुलधणकणगरयणजावसंतसारसावएज्जेणं अतीव २ अभिवहामि तं किन्नं अहं पुरा पोराणाणं जाव एगंतसोक्खयं उवेहमाणे विहरामि ?, तं जाव ताव अहं हिरन्नेणं वहामि तं चेव जाव अभिवहामि जाव मे सामंतरायाणोवि वसे वट्टंति ताव ता मे सेयं कल्लं पाउप्पभयाए जाव जलंते सुबहुं लोहीलोहकडाहकडुच्छुयं तंबियं तावसभंडगं घडावेत्ता सिवभद्दं कुमारं रज्जे ठावेत्ता तं सुबहुं लोहीलोहकडाहकडुच्छुयं तंबियं तावसभंडगं गहाय जे इमे गंगाकूले वाणपत्था तावसा भवंति, तं०–होत्तिया पोत्तिया कोत्तिया जन्नई सड्ढई थालई जं च उड्ढदंतुक्खलिया उम्मज्जया संमज्जगा निमज्जगा संपक्खाला उद्धकंडूयगा अहोकंडूयगा दाहिणकूलगा उत्तरकूलगा संखधमया कूलधमगा मियलुद्धा हत्थितावसा जलाभिसेयकिढिणगाया अंबुवासिणो वाउवासिणो जलवासिणो चेलवासिणो अंबुभक्खिणो वायभक्खिणो सेवालभक्खिणो मूलाहारा कंदाहारा पत्ताहारा पुप्फाहारा फलाहारा बीयाहारा परिसडियकंदमूलपंडुपत्तपुप्फफलाहारा उद्दंडा रुक्खमूलिया वालवासिणो वक्कपासिणो दिसापोक्खिया आयावणाहिं पंचग्गितावेहिं इंगालसोल्लियंपिव कंडुसोल्लियंपिव कट्ठसोल्लियंपिव अप्पाणं जाव करेमाणा विहरंति जहा उववाइए जाव कट्ठसोल्लियंपिव अप्पाणं करेमाणा विहरंति ॥ तत्थ णं जे ते दिसापोक्खियतावसा तेसिं अंतियं मुंडे भवित्ता दिसापोक्खियतावसत्ताए पव्वइत्तए, पव्वइएवि य णं समाणे अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हिस्सामि–कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं दिसाचक्कवालेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७--४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६--५०८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५१५॥

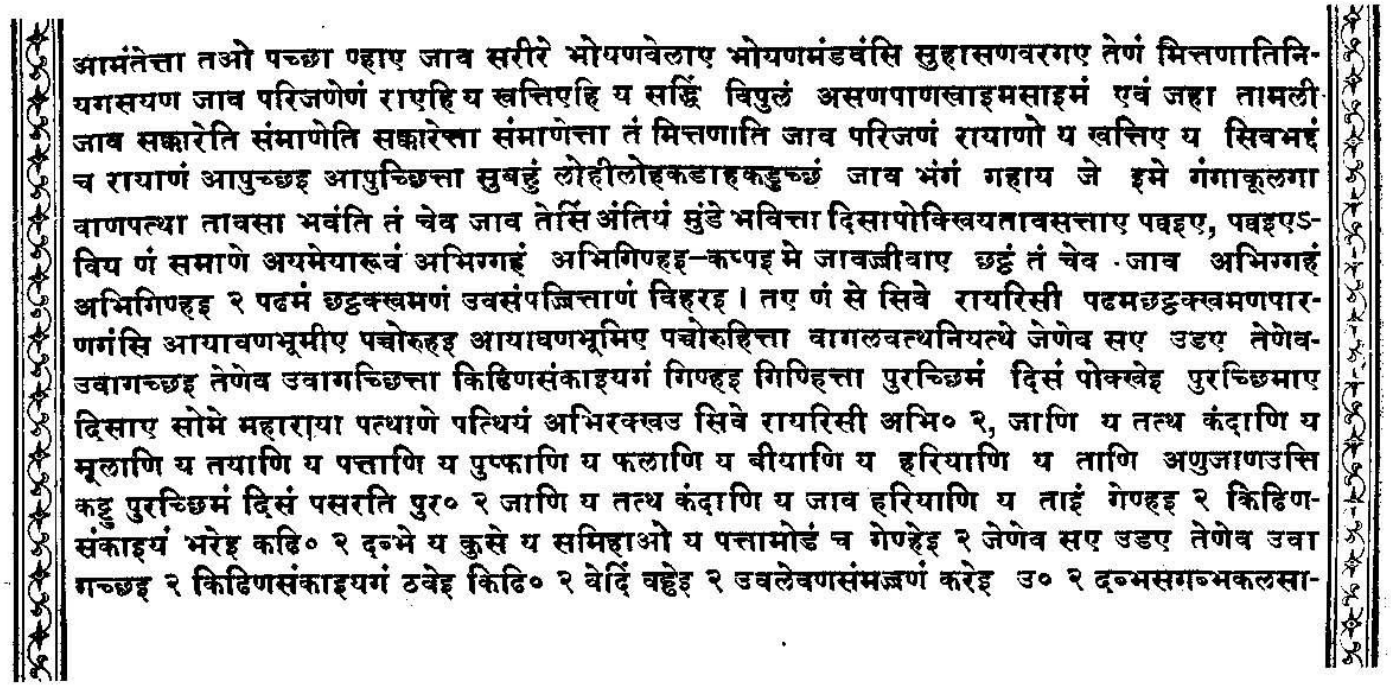
जिणय २ जाव विहरित्तएत्तिकट्टु, एवं संपेहेति संपेहेत्ता कल्लं जाव जलंते सुबहुं लोहीलोह जाव घडावेत्ता कोडुं बियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! हत्थिणागपुरं नगरं सब्भिंतर-बाहिरियं आसिय जाव तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से सिवे राया दोच्चंपि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेंति २ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सिवभद्दस्स कुमारस्स महत्थं ३ विउलं रायाभिसेयं उवट्ठवेह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव उवट्ठवेंति, तए णं से सिवे राया अणेगगणनायगदंडनायग जाव संधिपाल सद्धिं संपरिवुडे सिवभद्दं कुमारं सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहं निसीयावेन्ति २ अट्ठसएणं सोवन्नियाणं कल-साणं जाव अट्ठसएणं भोमेज्जाणं कलसाणं सव्विड्ढीए जाव रवेणं महया २ रायाभिसेएणं अभिसिंचइ २ पम्हल-सुकुमालाए सुरभिए गंधकासाईए गायाइं लूहेइ पम्ह० २ सरसेणं गोसीसेणं एवं जहेव जमालिस्स अलं-कारो तहेव जाव कप्परुक्खगंपिव अलंकियविभूसियं करेंति २ करयल जाव कट्टु सिवभद्दं कुमारं जएणं विजएणं वद्धावेंति जएणं विजएणं वद्धावेत्ता ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं जहा उववाइए कोणियस्स जाव परमाउं पालयाहि इट्ठजणसंपरिवुडे हत्थिणपुरस्स नगरस्स अन्नेसिं च बहूणं गामागरनगर जाव विह-राहित्तिकट्टु जयजयसद्दं पउंजंति, तए णं से सिवभद्दे कुमारे राया जाए महया हिमवंत० वन्नओ जाव विह-रइ, तए णं से सिवे राया अन्नया कयाइं सोभणंसि तिहिकरणदिवसमुहुत्तनक्खत्तंसि विपुलं असणपाण-खाइमसाइमं उवक्खडावेंति उवक्खडावेत्ता मित्तणाइनियगजावपरिजणं रायाणो य खत्तिया आमंतेति

११शतके ९ उद्देशः शिवराजर्षे-स्तापसता

॥५१५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा



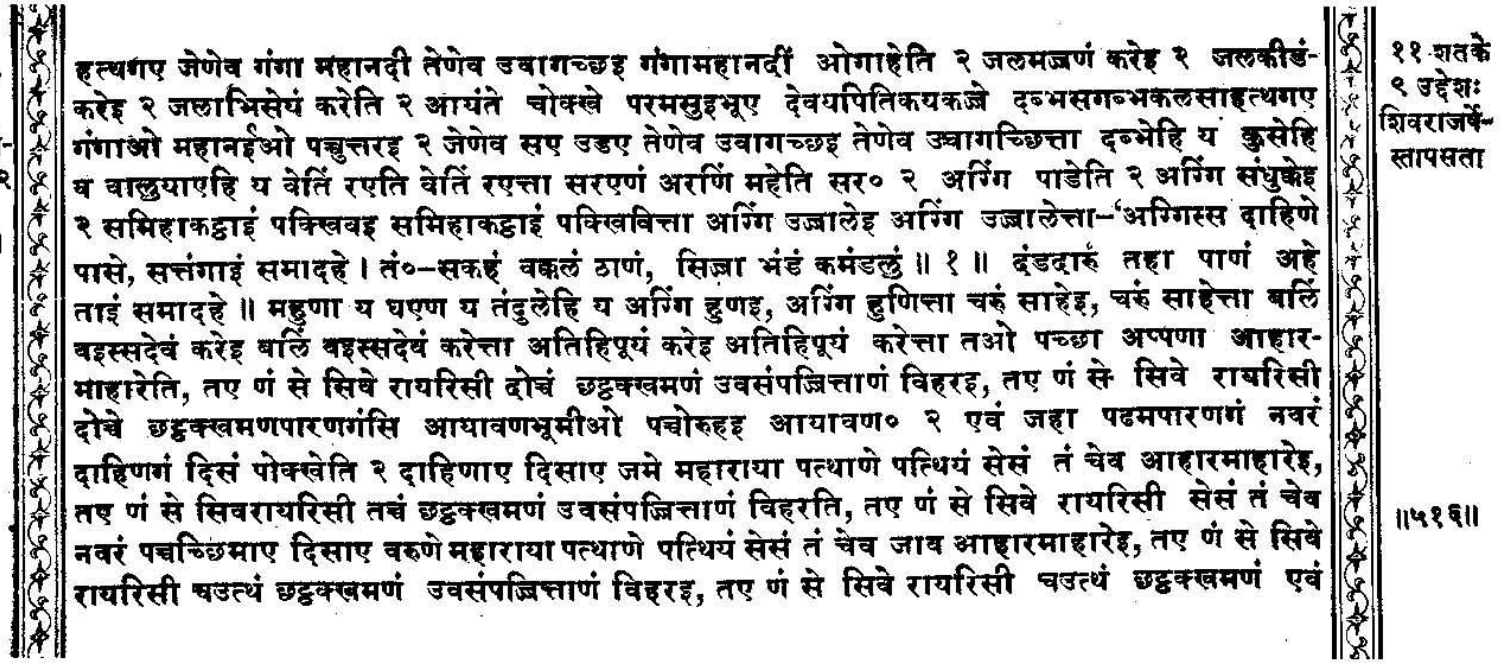
आमंतेत्ता तओ पच्छा ण्हाए जाव सरीरे भोयणवेलाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए तेणं मित्तणातिनियगसयण जाव परिजणेणं रायहि य खत्तिएहि य सद्धिं विपुलं असणपाणखाइमसाइमं एवं जहा तामली जाव सक्कारेति संमाणेति सक्कारेत्ता संमाणेत्ता तं मित्तणाति जाव परिजणं रायाणो य खत्तिए य सिवभद्दं च रायाणं आपुच्छइ आपुच्छित्ता सुबहुं लोहीलोहकडाहकडुच्छं जाव भंगं गहाय जे इमे गंगाकूलगा वाणपत्था तावसा भवंति तं चेव जाव तेसिं अंतियं मुंडे भवित्ता दिसापोक्खियतावसत्ताए पव्वइए, पव्वइएऽवि य णं समाणे अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ–कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठं तं चेव जाव अभिग्गहं अभिगिण्हइ २ पढमं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तए णं से सिवे रायरिसी पढमछट्ठक्खमणपारणगंसि आयावणभूमीए पच्चोरुहइ आयावणभूमिए पच्चोरुहित्ता वागलवत्थनियत्थे जेणेव सए उडए तेणेवउवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता किढिणसंकाइयगं गिण्हइ गिण्हित्ता पुरच्छिमं दिसं पोक्खेइ पुरच्छिमाए दिसाए सोमे महाराया पत्थाणे पत्थियं अभिरक्खउ सिवे रायरिसी अभि० २, जाणि य तत्थ कंदाणि य मूलाणि य तयाणि य पत्ताणि य पुप्फाणि य फलाणि य बीयाणि य हरियाणि य ताणि अणुजाणउत्ति कट्टु पुरच्छिमं दिसं पसरति पुर० २ जाणि य तत्थ कंदाणि य जाव हरियाणि य ताइं गेण्हइ २ किढिणसंकाइयं भरेइ किढि० २ दब्भे य कुसे य समिहाओ य पत्तामोडं च गेण्हेइ २ जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ २ किढिणसंकाइयगं ठवेइ किढि० २ वेदिं वड्ढेइ २ उवलेवणसंमज्जणं करेइ उ० २ दब्भसगब्भकलसा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७--४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६--५०८]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५१६॥

हत्थगए जेणेव गंगा महानदी तेणेव उवागच्छइ गंगामहानदीं ओगाहेति २ जलमज्जणं करेइ २ जलकीडं-करेइ २ जलाभिसेयं करेति २ आयंते चोक्खे परमसुइभूए देवयपितिकयकज्जे दब्भसगब्भकलसाहत्थगए गंगाओ महानईओ पच्चुत्तरइ २ जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता दब्भेहि य कुसेहि य वालुयाएहि य वेतिं रएति वेतिं रएत्ता सरएणं अरणिं महेति सर० २ अग्गिं पाडेति २ अग्गिं संधुक्केइ २ समिहाकट्ठाइं पक्खिवइ समिहाकट्ठाइं पक्खिवित्ता अग्गिं उज्जालेइ अग्गिं उज्जालेत्ता–'अग्गिस्स दाहिणे पासे, सत्तंगाइं समादहे। तं०–सकहं वक्कलं ठाणं, सिज्जा भंडं कमंडलुं ॥ १ ॥ दंडदारुं तहा पाणं अहे ताइं समादहे ॥ महुणा य घएण य तंदुलेहि य अग्गिं हुणइ, अग्गिं हुणित्ता चरुं साहेइ, चरुं साहेत्ता बलिं वइस्सदेवं करेइ बलिं वइस्सदेवं करेत्ता अतिहिपूयं करेइ अतिहिपूयं करेत्ता तओ पच्छा अप्पणा आहार-माहारेति, तए णं से सिवे रायरिसी दोच्चं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तए णं से सिवे रायरिसी दोच्चे छट्ठक्खमणपारणगंसि आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ आयावण० २ एवं जहा पढमपारणगं नवरं दाहिणगं दिसं पोक्खेति २ दाहिणाए दिसाए जमे महाराया पत्थाणे पत्थियं सेसं तं चेव आहारमाहारेइ, तए णं से सिवरायरिसी तच्चं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरति, तए णं से सिवे रायरिसी सेसं तं चेव नवरं पच्चच्छिमाए दिसाए वरुणे महाराया पत्थाणे पत्थियं सेसं तं चेव जाव आहारमाहारेइ, तए णं से सिवे रायरिसी चउत्थं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तए णं से सिवे रायरिसी चउत्थं छट्ठक्खमणं एवं

११ शतके ९ उद्देशः शिवराजर्षे-स्तापसता

॥५१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७--४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६--५०८]

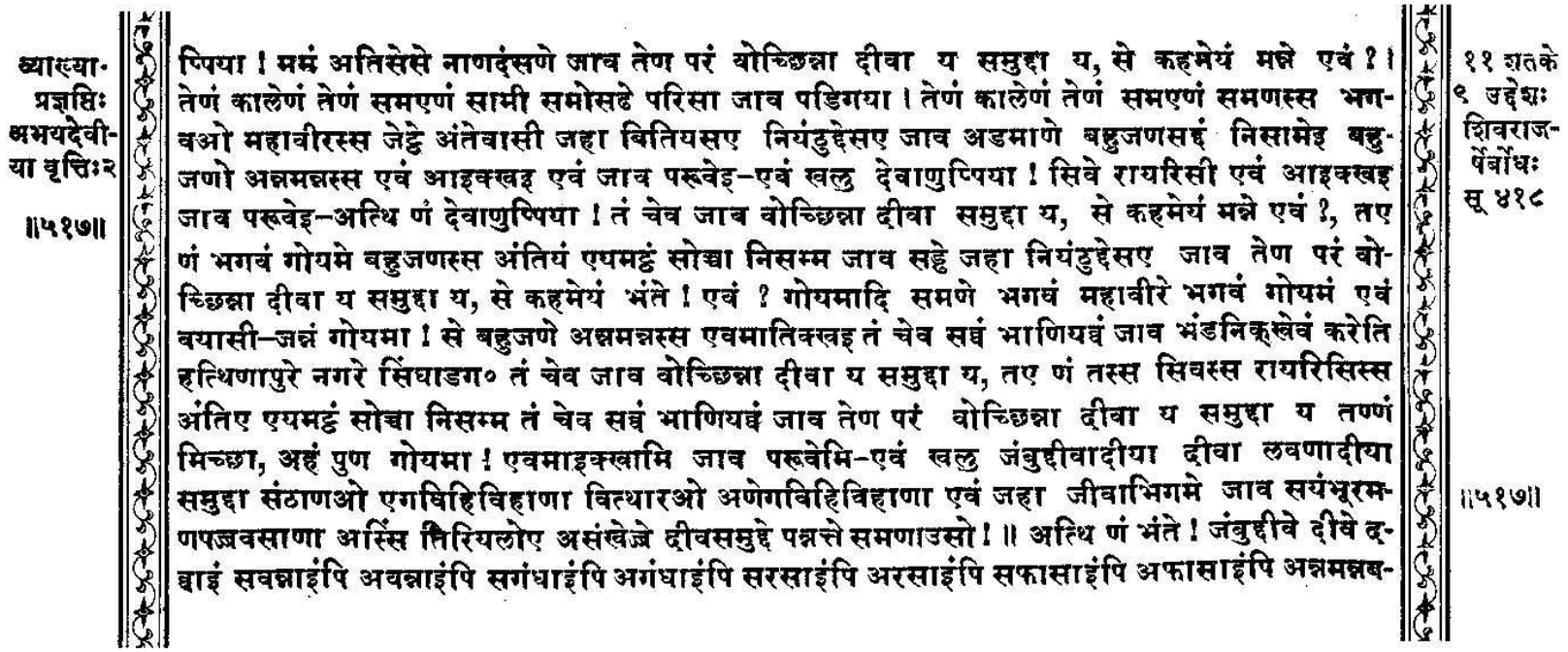
तं चेव नवरं उत्तरदिसं पोक्खेइ उत्तराए दिसाए वेसमणे महाराया पत्थाणे पत्थियं अभिरक्खउ सिवं, सेसं तं चेव जाव तओ पच्छा अप्पणा आहारमाहारेइ (सूत्रं ४१७) तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं दिसाचक्कवालेणं जाव आयावेमाणस्स पगइभद्दयाए जाव विणीययाए अन्नया कयावि तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स विब्भंगे नामं अन्नाणे समुप्पन्ने, से णं तेणं विब्भंगनाणेणं समुप्पन्नेणं पासइ अस्सिं लोए सत्त दीवे सत्त समुद्दे तेण परं न जाणति न पासति, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–अत्थि णं ममं अइसेसे नाणदंसणे समुप्पन्ने एवं खलु अस्सिं लोए सत्त दीवा सत्त समुद्दा तेण परं वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य, एवं संपेहेइ एवं० २ आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ आ० २ वागलवत्थनियत्थे जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ २ सुबहुं लोहीलोहकडाहकडुच्छुयं जाव भंडगं किढिणसंकाइयं च गेण्हइ २ जेणेव हत्थिणापुरे नगरे जेणेव तावसावसहे तेणेव उवागच्छइ उवा० २ भंडनिक्खेवं करेइ २ हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडगतिगजावपहेसु बहुजणस्स एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेइ–अत्थि णं देवाणुप्पिया ! ममं अतिसेसे नाणदंसणे समुप्पन्ने, एवं खलु अस्सिं लोए जाव दीवा य समुद्दा य, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडगतिगजाव पहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेइ–एवं खलु देवाणुप्पिया ! सिवे रायरिसी एवं आइक्खइ जाव परूवेइ–अत्थि णं देवाणु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७--४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६--५०८]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥५१७॥

प्पिया ! मम अतिसेसे नाणदंसणे जाव तेण परं वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य, से कहमेयं मन्ने एवं ?। तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे परिसा जाव पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी जहा बितियसए नियंठुद्देसए जाव अडमाणे बहुजणसद्दं निसामेइ बहुजणो अन्नमन्नस्स एवं आइक्खइ एवं जाव परूवेइ–एवं खलु देवाणुप्पिया ! सिवे रायरिसी एवं आइक्खइ जाव परूवेइ–अत्थि णं देवाणुप्पिया ! तं चेव जाव वोच्छिन्ना दीवा समुद्दा य, से कहमेयं मन्ने एवं ?, तए णं भगवं गोयमे बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म जाव सद्धे जहा नियंठुद्देसए जाव तेण परं वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य, से कहमेयं भंते ! एवं ? गोयमादि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–जन्नं गोयमा ! से बहुजणे अन्नमन्नस्स एवमातिक्खइ तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव भंडनिक्खेवं करेति हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडग० तं चेव जाव वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव तेण परं वोच्छिन्ना दीवा य समुद्दा य तण्णं मिच्छा, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि–एवं खलु जंबुद्दीवादीया दीवा लवणादीया समुद्दा संठाणओ एगविहिविहाणा वित्थारओ अणेगविहिविहाणा एवं जहा जीवाभिगमे जाव सयंभूरमणपज्जवसाणा अस्सिं तिरियलोए असंखेज्जे दीवसमुद्दे पन्नत्ते समणाउसो ! ॥ अत्थि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दव्वाइं सवन्नाइंपि अवन्नाइंपि सगंधाइंपि अगंधाइंपि सरसाइंपि अरसाइंपि सफासाइंपि अफासाइंपि अन्नमन्नब-

११ शतके ९ उद्देशः शिवराज-र्षेर्बोधः सू ४१८

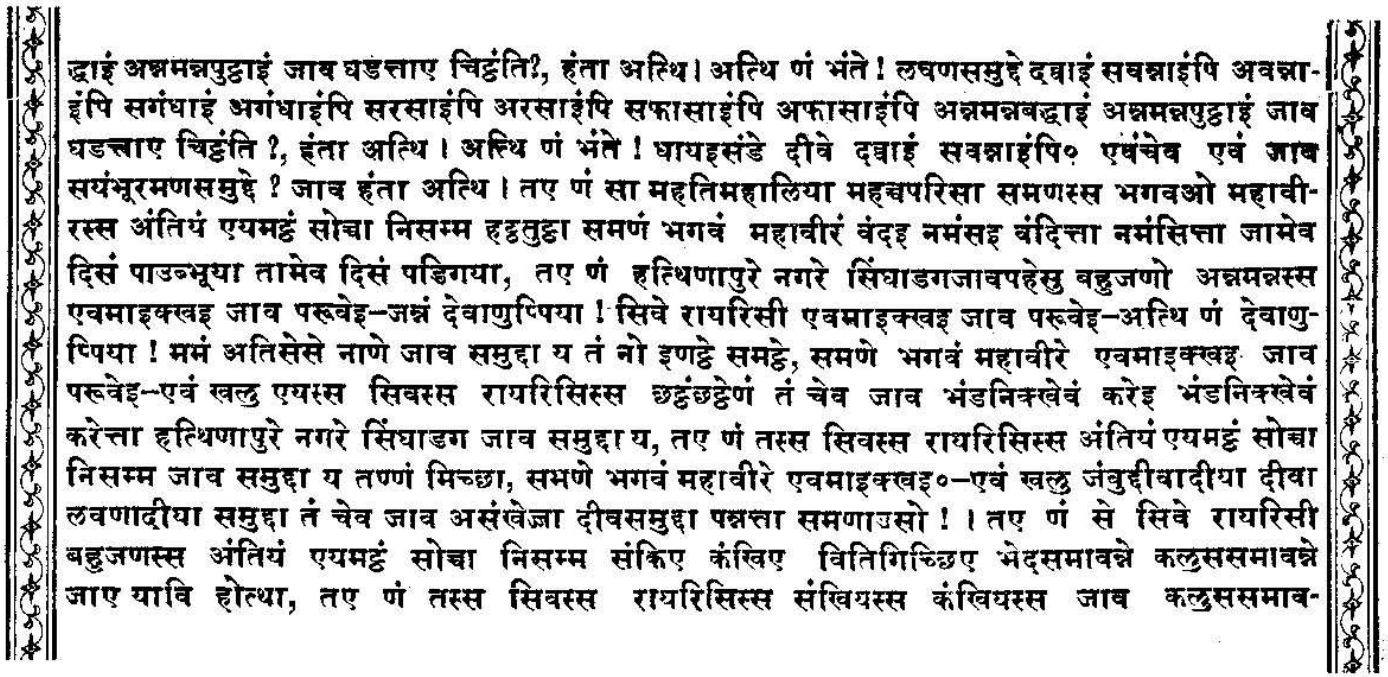
॥५१७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७--४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६--५०८]



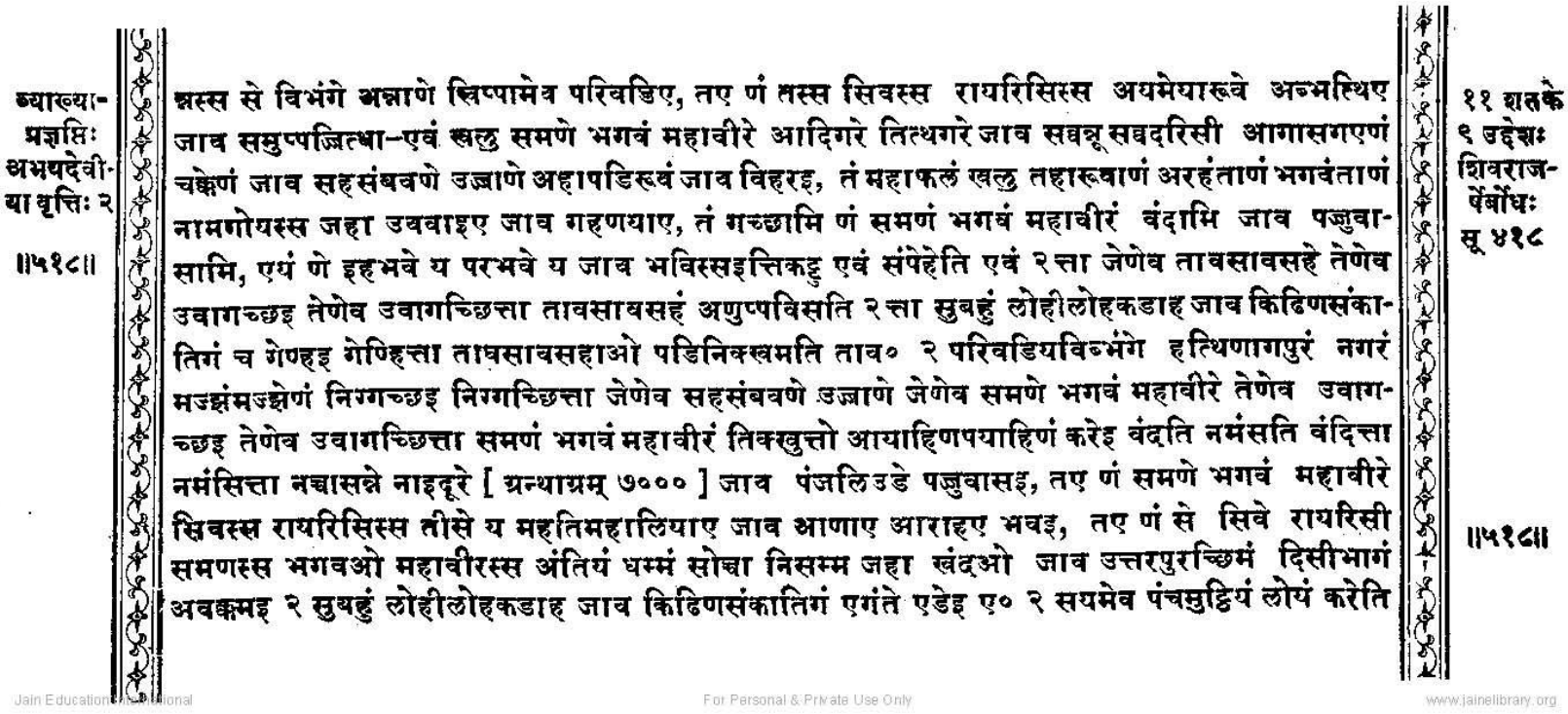
द्धाइं अन्नमन्नपुट्ठाइं जाव घडत्ताए चिट्ठंति?, हंता अत्थि। अत्थि णं भंते! लवणसमुद्दे दव्वाइं सवन्नाइंपि अवन्नाइंपि सगंधाइं अगंधाइंपि सरसाइंपि अरसाइंपि सफासाइंपि अफासाइंपि अन्नमन्नबद्धाइं अन्नमन्नपुट्ठाइं जाव घडत्ताए चिट्ठंति?, हंता अत्थि। अत्थि णं भंते! धायइसंडे दीवे दव्वाइं सवन्नाइंपि० एवंचेव एवं जाव सयंभूरमणसमुद्दे? जाव हंता अत्थि। तए णं सा महतिमहालिया महच्चपरिसा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया, तए णं हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडगजावपहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेइ–जन्नं देवाणुप्पिया! सिवे रायरिसी एवमाइक्खइ जाव परूवेइ–अत्थि णं देवाणुप्पिया! ममं अतिसेसे नाणे जाव समुद्दा य तं नो इणट्ठे समट्ठे, समणे भगवं महावीरे एवमाइक्खइ जाव परूवेइ–एवं खलु एयस्स सिवस्स रायरिसिस्स छट्ठंछट्ठेणं तं चेव जाव भंडनिक्खेवं करेइ भंडनिक्खेवं करेत्ता हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडग जाव समुद्दा य, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म जाव समुद्दा य तण्णं मिच्छा, समणे भगवं महावीरे एवमाइक्खइ०–एवं खलु जंबुद्दीवादीया दीवा लवणादीया समुद्दा तं चेव जाव असंखेज्जा दीवसमुद्दा पन्नत्ता समणाउसो!। तए णं से सिवे रायरिसी बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म संकिए कंखिए वितिगिच्छिए भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने जाए यावि होत्था, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स संकियस्स कंखियस्स जाव कलुससमाव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७--४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६--५०८]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५१८॥

११ शतके ९ उद्देशः शिवराज-र्षेर्बोधः सू ४१८

स्स से विभंगे अन्नाणे खिप्पामेव परिवडिए, तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु समणे भगवं महावीरे आदिगरे तित्थगरे जाव सव्वन्नू सव्वदरिसी आगासगएणं चक्केणं जाव सहसंबवणे उज्जाणे अहापडिरूवं जाव विहरइ, तं महाफलं खलु तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं नामगोयस्स जहा उववाइए जाव गहणयाए, तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि जाव पज्जुवासामि, एयं णे इहभवे य परभवे य जाव भविस्सइत्तिकट्टु एवं संपेहेति एवं २त्ता जेणेव तावसावसहे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता तावसावसहं अणुप्पविसति २त्ता सुबहुं लोहीलोहकडाह जाव किढिणसंकातिगं च गेण्हइ गेण्हित्ता तावसावसहाओ पडिनिक्खमति ताव० २ परिवडियविब्भंगे हत्थिणागपुरं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छित्ता जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता नचासन्ने नाइदूरे [ग्रन्थाग्रम् ७०००] जाव पंजलिउडे पज्जुवासइ, तए णं समणे भगवं महावीरे सिवस्स रायरिसिस्स तीसे य महतिमहालियाए जाव आणाए आराहए भवइ, तए णं से सिवे रायरिसी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म जहा खंदओ जाव उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमइ २ सुबहुं लोहीलोहकडाह जाव किढिणसंकातिगं एगंते एडेइ ए० २ सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेति

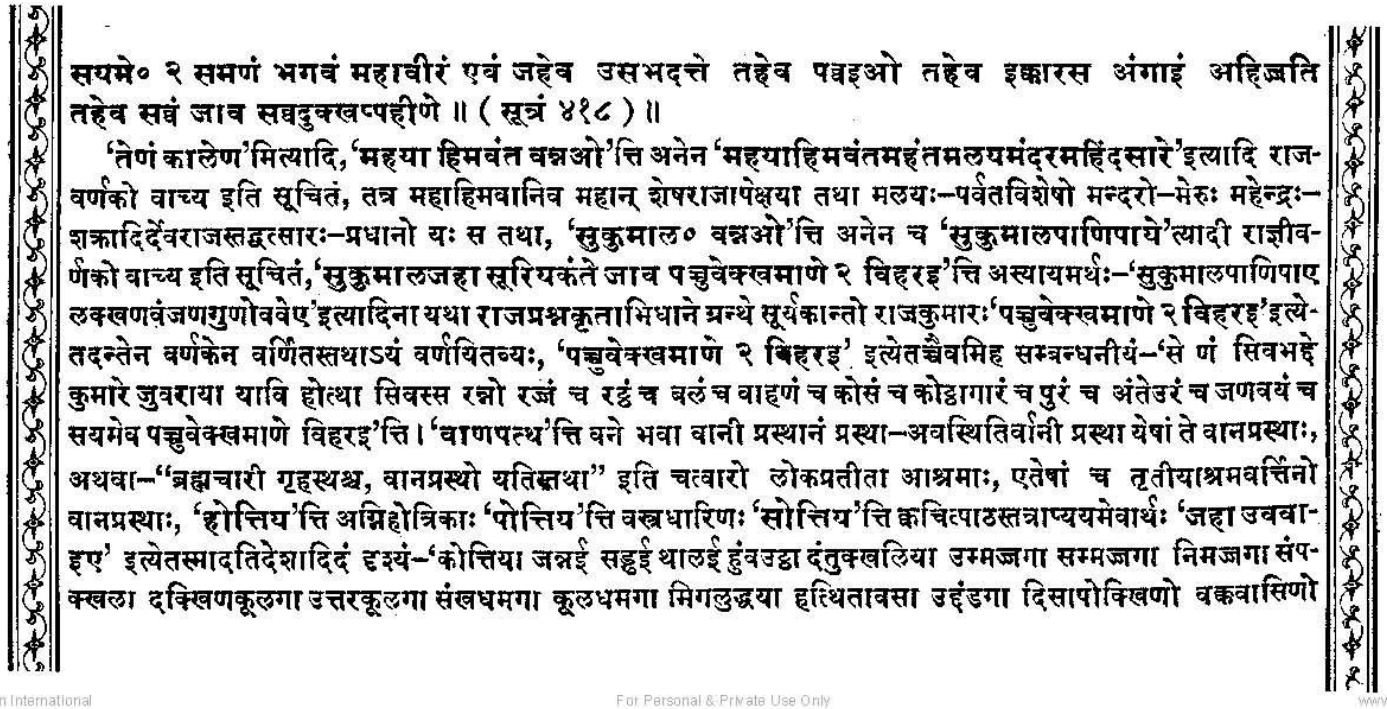
॥५१८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७--४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६--५०८]



सयमे० २ समणं भगवं महावीरं एवं जहेव उसभदत्ते तहेव पव्वइओ तहेव इक्कारस अंगाइं अहिज्जति तहेव सवं जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ (सूत्रं ४१८) ॥

'तेणं कालेण'मित्यादि, 'महया हिमवंत वन्नओ'त्ति अनेन 'महयाहिमवंतमहंतमलयमंदरमहिंदसारे'इत्यादि राजवर्णको वाच्य इति सूचितं, तत्र महाहिमवानिव महान् शेषराजापेक्षया तथा मलयः–पर्वतविशेषो मन्दरो–मेरुः महेन्द्रः–शक्रादिर्देवराजस्तद्वत्सारः–प्रधानो यः स तथा, 'सुकुमाल० वन्नओ'त्ति अनेन च 'सुकुमालपाणिपाये'त्यादी राज्ञीवर्णको वाच्य इति सूचितं, 'सुकुमालजहा सूरियकंते जाव पच्चुवेक्खमाणे २ विहरइ'त्ति अस्यायमर्थः–'सुकुमालपाणिपाए लक्खणवंजणगुणोववेए'इत्यादिना यथा राजप्रश्नकृताभिधाने ग्रन्थे सूर्यकान्तो राजकुमारः'पच्चुवेक्खमाणे २ विहरइ'इत्येतदन्तेन वर्णकेन वर्णितस्तथाऽयं वर्णयितव्यः, 'पच्चुवेक्खमाणे २ विहरइ' इत्येतच्चैवमिह सम्बन्धनीयं–'से णं सिवभद्दे कुमारे जुवराया यावि होत्था सिवस्स रन्नो रज्जं च रट्ठं च बलं च वाहणं च कोसं च कोट्ठागारं च पुरं च अंतेउरं च जणवयं च सयमेव पच्चुवेक्खमाणे विहरइ'त्ति। 'वाणपत्थ'त्ति वने भवा वानी प्रस्थानं प्रस्था–अवस्थितिर्वानी प्रस्था येषां ते वानप्रस्थाः, अथवा–"ब्रह्मचारी गृहस्थश्च, वानप्रस्थो यतिस्तथा" इति चत्वारो लोकप्रतीता आश्रमाः, एतेषां च तृतीयाश्रमवर्त्तिनो वानप्रस्थाः, 'होत्तिय'त्ति अग्निहोत्रिकाः 'पोत्तिय'त्ति वस्त्रधारिणः 'सोत्तिय'त्ति क्वचित्पाठस्तत्राप्ययमेवार्थः 'जहा उववाइए' इत्येतस्मादतिदेशादिदं दृश्यं–'कोत्तिया जन्नई सड्ढई थालई हुंवउट्ठा दंतुक्खलिया उम्मज्जगा सम्मज्जगा निमज्जगा संपक्खला दक्खिणकूलगा उत्तरकूलगा संखधमगा कूलधमगा मिगलुद्धया हत्थितावसा उद्दंडगा दिसापोक्खिणो वक्कवासिणो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७-४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६-५०८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५१९॥

चेलवासिणो जलवासिणो रुक्खमूलिया अंबुभक्खिणो वाउभक्खिणो सेवालभक्खिणो मूलाहारा कंदाहारा तयाहारा पत्ताहारा पुप्फाहारा फलाहारा बीयाहारा परिसडियकंदमूलतयपत्तपुप्फफलाहारा जलाभिसेयकढिणगाया आयावणाहिं पंचग्गिता-वेहिं इंगालसोल्लियं कंदुसोल्लियं'ति तत्र 'कोत्तिय'त्ति भूमिशायिनः 'जन्नइ'त्ति यज्ञयाजिनः 'सड्ढइ'त्ति श्राद्धाः 'थालइ'त्ति गृहीतभाण्डाः 'हुंबउट्ठं'त्ति कुण्डिकाश्रमणाः 'दंतुक्खलिय'त्ति फलभोजिनः 'उम्मज्जग'त्ति उन्मज्जनमात्रेण ये स्नान्ति 'संमज्जग'त्ति उन्मज्जनस्यैवासकृत्करणेन ये स्नान्ति 'निमज्जग'त्ति स्थानार्थं निमग्ना एव ये क्षणं तिष्ठन्ति 'संपक्खाल'-त्ति मृत्तिकादिघर्षणपूर्वकं येऽङ्गं क्षालयन्ति 'दक्खिणकूलग'त्ति यैर्गङ्गाया दक्षिणकूल एव वासव्यम् 'उत्तरकूलग'त्ति उक्तविपरीताः 'संखधमग'त्ति शङ्खं ध्मात्वा ये जेमन्ति यद्यन्यः कोऽपि नागच्छतीति 'कूलधमग'त्ति ये कूले स्थित्वा शब्दं कृत्वा भुञ्जते 'मियलुद्धय'त्ति प्रतीता एव 'हत्थितावस'त्ति ये हस्तिनं मारयित्वा तेनैव बहुकालं भोजनतो यापयन्ति 'उद्दंडग'त्ति ऊर्द्ध्वकृतदण्डा ये संचरन्ति 'दिसापोक्खिणो'त्ति उदकेन दिशः प्रोक्ष्य ये फलपुष्पादि समुचिन्वन्ति 'वक्कलवासिणो'त्ति वल्कलवाससः 'चेलवासिणो'त्ति व्यक्तं पाठान्तरे 'वेलवासिणो'त्ति समुद्रवेलासंनिधिवासिनः 'जल-वासिणो'त्ति ये जलनिमग्ना एवासते, शेषाः प्रतीता, नवरं 'जलाभिसेयकिढिणगाय'त्ति येऽस्नात्वा न भुंजते स्नानाद्वा पा-ण्डुरीभूतगात्रा इति वृद्धाः, क्वचित् 'जलाभिसेयकढिणगायभूय'त्ति दृश्यते तत्र जलाभिषेककठिनं गात्रं भूताः–प्राप्ता ये ते तथा, 'इंगालसोल्लियं'ति अङ्गारैरिव पक्वं 'कंदुसोल्लियं'ति कन्दुपक्वमिवेति । 'दिसाचक्कवालएणं तवोकम्मेणं'ति एकत्र पारणके पूर्वस्यां दिशि यानि फलादीनि तान्याहृत्य भुङ्क्ते द्वितीये तु दक्षिणस्यामित्येवं दिक्चक्रवालेन यत्र तपः-

११ शतके ९ उद्देशः शिवराज-र्षिवृत्तं

॥५१९॥

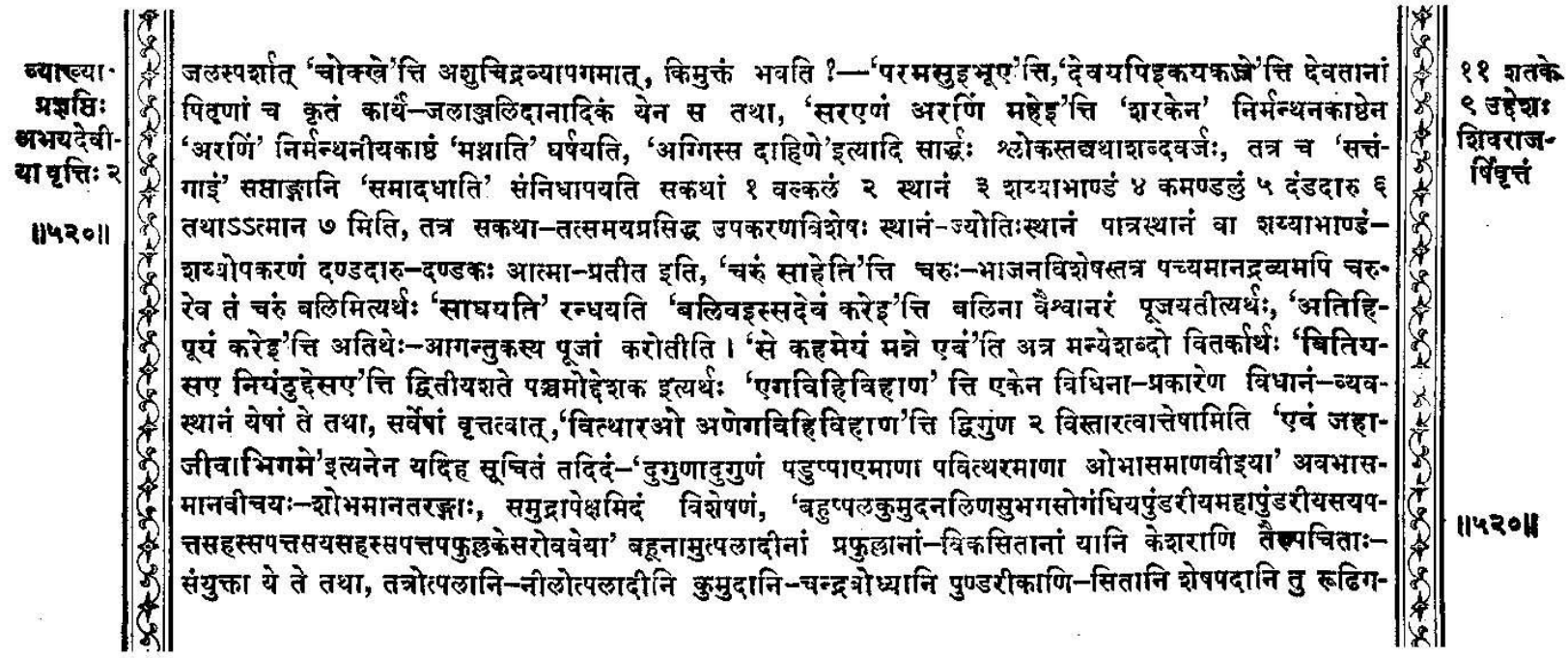
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

कर्मणि पारणककरणं तत्तपःकर्म्म दिक्चक्रवालमुच्यते तेन तपःकर्म्मणेति 'ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं' इत्यत्र 'एवं जहा उववाइए' इत्येतत्करणादिदं दृश्यं—'मणुन्नाहिं मणामाहिं जाव वग्गूहिं अणवरयं अभिनंदंता य अभिथुणंता य एवं वयासी–जय २ नंदा जय जय भद्दा! जय २ नंदा ! भद्दं ते अजियं जिणाहि जियं पालियाहि जियमज्झे वसाहि अजियं च जिणाहि सत्तुपक्खं जियं च पालेहि मित्तपक्खं जियविग्घोऽवियं वसाहि तं देव ! सयणमज्झे इंदो इव देवाणं चंदो इव ताराणं धरणो इव नागाणं भरहो इव मणुयाणं बहूइं वासाइं बहूइं वाससयाइं बहूइं वाससहस्साइं अणहसमग्गे य हट्ठतुट्ठो'त्ति, एतच्च व्यक्तमेवेति ॥ 'वागलवत्थनियत्थे'त्ति वल्कले–वल्कलस्येदं वाल्कलं तद्वस्त्रं निवसितं येन स वाल्कलवस्त्रनिवसितः 'उडए'त्ति उटजः–तापसगृहं 'किढिणसंकाइयगं'ति 'किढिण'त्ति वंशमयस्तापसभाजनविशेषस्ततश्च तयोः साङ्काथिकं–भारोद्वहनयन्त्रं किढिणसाङ्काथिकं 'महाराय'त्ति लोकपालः 'पत्थाणे पत्थियं'ति 'प्रस्थाने' परलोकसाधनमार्गे 'प्रस्थितं' प्रवृत्तं फलाद्याहरणार्थं गमने वा प्रवृत्तं शिवराजर्षिं 'दब्भे य'त्ति समूलान् 'कुसे य'त्ति दर्भानेव निर्मूलान् 'समिहाओ य'त्ति समिधः–काष्ठिकाः 'पत्तामोडं च' तरुशाखामोटितपत्राणि 'वेदिं वड्ढेइ'त्ति वेदिकां–देवार्चनस्थानं वर्द्धनी–बहुकरिका तां प्रयुङ्क्ते इति वर्द्धयति–प्रमार्जयतीत्यर्थः 'उवलेवणसंमज्जणं करेइ'त्ति इहोपलेपनं गोमयादिना संमर्जनं तु जलेन संमार्जनं वा शोधनं 'दब्भकलसाहत्थगए'त्ति दर्भाश्च कलशश्च हस्ते गता यस्य स तथा 'दब्भसगब्भकलसगहत्थगए'त्ति क्वचित् तत्र दर्भेण सगर्भो यः कलशकः स हस्ते गतो यस्य स तथा 'जलमज्जणं'ति जलेन देहशुद्धिमात्रं 'जलकीडं'ति देहशुद्धावपि जलेनाभिरतं 'जलाभिसेयं'ति जलक्षरणम् 'आयंते'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५२०॥

जलस्पर्शात् 'चोक्खे'त्ति अशुचिद्रव्यापगमात्, किमुक्तं भवति ?—'परमसुइभूए'त्ति,'देवयपिइकयकज्जे'त्ति देवतानां पितॄणां च कृतं कार्यं—जलाञ्जलिदानादिकं येन स तथा, 'सरएणं अरणिं महेइ'त्ति 'शरकेन' निर्मन्थनकाष्ठेन 'अरणिं' निर्मन्थनीयकाष्ठं 'मन्थति' घर्षयति, 'अग्गिस्स दाहिणे'इत्यादि सार्द्धः श्लोकस्तथाशब्दवर्जः, तत्र च 'सत्त-गाइं' सप्ताङ्गानि 'समादधाति' संनिधापयति सकथां १ वल्कलं २ स्थानं ३ शय्याभाण्डं ४ कमण्डलुं ५ दंडदारु ६ तथाऽऽत्मान ७ मिति, तत्र सकथा—तत्समयप्रसिद्ध उपकरणविशेषः स्थानं-ज्योतिःस्थानं पात्रस्थानं वा शय्याभाण्डं—शय्योपकरणं दण्डदारु—दण्डकः आत्मा—प्रतीत इति, 'चरुं साहेति'त्ति चरुः—भाजनविशेषस्तत्र पच्यमानद्रव्यमपि चरु-रेव तं चरुं बलिमित्यर्थः 'साधयति' रन्धयति 'बलिवइस्सदेवं करेइ'त्ति बलिना वैश्वानरं पूजयतीत्यर्थः, 'अतिहि-पूयं करेइ'त्ति अतिथेः—आगन्तुकस्य पूजां करोतीति । 'से कहमेयं मन्ने एवं'ति अत्र मन्येशब्दो वितर्कार्थः 'बितिय-सए नियंठुद्देसए'त्ति द्वितीयशते पञ्चमोद्देशक इत्यर्थः 'एगविहिविहाण' त्ति एकेन विधिना—प्रकारेण विधानं—व्यव-स्थानं येषां ते तथा, सर्वेषां वृत्तत्वात्,'वित्थारओ अणेगविहिविहाण'त्ति द्विगुण २ विस्तारत्वात्तेषामिति 'एवं जहा-जीवाभिगमे'इत्यनेन यदिह सूचितं तदिदं—'दुगुणादुगुणं पडुप्पाएमाणा पवित्थरमाणा ओभासमाणवीइया' अवभास-मानवीचयः—शोभमानतरङ्गाः, समुद्रापेक्षमिदं विशेषणं, 'बहुप्पलकुमुदनलिणसुभगसोगंधियपुंडरीयमहापुंडरीयसयप-त्तसहस्सपत्तसयसहस्सपत्तपफुल्लकेसरोववेया' बहूनामुत्पलादीनां प्रफुल्लानां—विकसितानां यानि केशराणि तैरुपचिताः—संयुक्ता ये ते तथा, तत्रोत्पलानि—नीलोत्पलादीनि कुमुदानि—चन्द्रबोध्यानि पुण्डरीकाणि—सितानि शेषपदानि तु रूढिग-

११ शतके ९ उद्देशः शिवराज-र्षिवृत्तं

॥५२०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

प्रत सूत्रांक [४१७--४१८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५०६--५०८]

म्यानि 'पत्तेयं पत्तेयं पउमवरवेइयापरिक्खित्ता पत्तेयं २ वणसंडपरिक्खित्त'त्ति ॥ 'सवन्नाइंपि'त्ति पुद्गलद्रव्याणि 'अवन्नाइंपि'त्ति धर्म्मास्तिकायादीनि 'अन्नमन्नबद्धाइं'ति परस्परेण गाढाश्लेषाणि 'अन्नमन्नपुट्ठाइं'ति परस्परेण गाढाश्लेषाणि, इह यावत्करणादिदमेवं दृश्यम्—'अन्नमन्नबद्धपुट्ठाइं अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति' तत्र चान्योऽन्यबद्धस्पृष्टान्यनन्तरोक्तगुणद्वययोगात्, किमुक्तं भवति ?–अन्योऽन्यघटतया–परस्परसम्बद्धतया तिष्ठन्ति 'तावसावसहे'त्ति तापसावसथः–तापसमठ इति ॥ अनन्तरं शिवराजर्षेः सिद्धिरुक्ता, तां च संहननादिभिर्निरूपयन्निदमाह—

भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरंमि संघयणे सिज्झंति ?, गोयमा ! वयरोसभणारायसंघयणे सिज्झंति एवं जहेव उववाइए तहेव संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च परिवसणा, एवं सिद्धिगंडिया निरवसेसा भाणियव्वा जाव अव्वाबाहं सोक्खं अणुहवं (हुंती)ति सासया सिद्धा । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं०४१९) सिवो समत्तो ॥११–९॥

'भंते त्ति'इत्यादि, अथ लाघवार्थमतिदेशमाह–'एवं जहेवे'त्यादि, 'एवम्' अनन्तरदर्शितेनाभिलापेन यथौपपातिके सिद्धानधिकृत्य संहननाद्युक्तं तथैवेहापि वाच्यं, तत्र च संहननादिद्वाराणां सङ्ग्रहाय गाथापूर्वार्द्धं–'संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च परिवसण'त्ति तत्र संहननमुक्तमेव, संस्थानादि त्वेवं–तत्र संस्थाने षण्णां संस्थानानामन्यतरस्मिन् सिद्ध्यन्ति, उच्चत्वे तु जघन्यतः सप्तरत्निप्रमाणे उत्कृष्टतस्तु पञ्चधनुःशतके, आयुषि पुनर्जघन्यतः सातिरेकाष्टवर्षप्रमाणे उत्कृष्टतस्तु पूर्वकोटीमाने, परिवसना पुनरेवं–रत्नप्रभादिपृथिवीनां सौधर्मादीनां चेषत्प्राग्भारान्तानां क्षेत्रविशेषाणामधो न परिव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवराजर्षि-कथा

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५२१॥

सन्ति सिद्धाः किन्तु सर्वार्थसिद्धमहाविमानस्योपरितनात्स्तूपिकाग्रादूर्द्धं द्वादश योजनानि व्यतिक्रम्येषत्प्राग्भारा नाम पृथिवी पञ्चचत्वारिंशद्योजनलक्षप्रमाणाऽऽयामविष्कम्भाभ्यां वर्णतः श्वेताऽत्यन्तरम्याऽस्ति तस्याश्चोपरि योजने लोकान्तो भवति, तस्य च योजनस्योपरितनगव्यूतोपरितनषड्भागे सिद्धाः परिवसन्तीति, 'एवं सिद्धिगंडिया निरवसेसा भाणियव्व'त्ति एवमिति–पूर्वोक्तसंहननादिद्वारनिरूपणक्रमेण 'सिद्धिगण्डिका' सिद्धिस्वरूपप्रतिपादनपरा वाक्यपद्धतिरौपपातिकप्रसिद्धाऽध्येया, इयं च परिवसनद्वारं यावदर्थलेशतो दर्शिता, तत्परतस्त्वेवं–'कहिं पडिहया सिद्धा कहिं सिद्धा पइट्ठिया ?'इत्यादिका, अथ किमन्तेयम् ? इत्याह—'जावे'त्यादि । 'अव्वाबाहं सोक्ख'मित्यादि चेह गाथोत्तरार्द्धमधीतं, समग्रगाथा पुनरियं—"निच्छिन्नसव्वदुक्खा जाइजरामरणबंधणविमुक्का । अव्वाबाहं सोक्खं अणुहुंती सासयं सिद्धा ॥ १ ॥" इति ॥ एकादशशते नवमोद्देशकः ॥ ११–९ ॥

११शतके ९ उद्देशः सिद्धगण्डिका सू ४१९

नवमोद्देशकस्यान्ते लोकान्ते सिद्धपरिवसनोक्तेत्यतो लोकस्वरूपमेव दशमे प्राह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–कतिविहे णं भंते ! लोए पन्नत्ते ?, गोयमा ! चउव्विहे लोए पन्नत्ते, तंजहा–दव्वलोए खेत्तलोए काललोए भावलोए । खेत्तलोए णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! तिविहे पन्नत्ते, तंजहा–अहोलोयखेत्तलोए १ तिरियलोयखेत्तलोए २ उड्ढलोयखेत्तलोए ३ । अहोलोयखेत्तलोए णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! सत्तविहे पन्नत्ते, तंजहा–रयणप्पभापुढविअहेलोयखेत्तलोए जाव अहेसत्तमापुढविअहोलोयखेत्तलोए । तिरियलोयखेत्तलोए णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! असंखेज्जविहे पन्नत्ते,

॥५२१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकादशमे शतके नवम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकादशमे शतके दशम-उद्देशक: आरभ्यते

लोक-स्वरूपं एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

प्रत सूत्रांक [४२०]

दीप अनुक्रम [५१०]

तंजहा–जंबुद्दीवे तिरियखेत्तलोए जाव सयंभूरमणसमुद्दे तिरियलोयखेत्तलोए। उड्ढलोगखेत्तलोए णं भंते! कतिविहे पन्नत्ते?, गोयमा! पन्नरसविहे पन्नत्ते, तंजहा–सोहम्मकप्पउड्ढलोगखेत्तलोए जाव अच्चुयउड्ढलोए गेवेज्जविमाणउड्ढलोए अणुत्तरविमाण० ईसिंपब्भारपुढविउड्ढलोगखेत्तलोए। अहोलोगखेत्तलोए णं भंते! किंसंठिए पन्नत्ते?, गोयमा! तप्पागारसंठिए पन्नत्ते। तिरियलोयखेत्तलोए णं भंते! किंसंठिए पन्नत्ते?, गोयमा! झल्लरिसंठिए पन्नत्ते। उड्ढलोयखेत्तलोयपुच्छा उड्ढमुइंगाकारसंठिए पन्नत्ते। लोए णं भंते! किंसंठिए पन्नत्ते?, गोयमा सुपइट्ठगसंठिए लोए पन्नत्ते, तंजहा–हेट्ठा विच्छिन्ने मज्झे संखित्ते जहा सत्तमसए पढमुद्देसए जाव अंतं करेंति। अलोए णं भंते! किंसंठिए पन्नत्ते?, गोयमा! झुसिरगोलसंठिए पन्नत्ते॥ अहेलोगखेत्तलोए णं भंते! किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा? एवं जहा इंदा दिसा तहेव निरवसेसं भाणियव्वं जाव अद्धासमए। तिरियलोयखेत्तलोए णं भंते! किं जीवा०?, एवं चेव, एवं उड्ढलोयखेत्तलोएवि, नवरं अरूवी छव्विहा अद्धासमओ नत्थि॥ लोए णं भंते! किं जीवा जहा बितियसए अत्थिउद्देसए लोयागासे, नवरं अरूवी सत्तवि जाव अहम्मत्थिकायस्स पएसा नो आगासत्थिकाये आगासत्थिकायस्स देसे आगासत्थिकायपएसा अद्धासमए सेसं तं चेव॥ अलोए णं भंते! किं जीवा०? एवं जहा अत्थिकायउद्देसए अलोयागासे तहेव निरवसेसं जाव अणंतभागूणे॥ अहेलोगखेत्तलोगस्स णं भंते! एगंमि आगासपएसे किं जीवा जीवदेसा जीवप्पएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा?, गोयमा! नो जीवा जीवदेसावि जीवपएसावि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोक-स्वरूपं एवं तस्य भेद-प्रभेदाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४२०]

दीप अनुक्रम [५१०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५२२॥

अजीवावि अजीवदेसावि अजीवपएसावि, जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा १ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसे २ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियाण य देसा ३ एवं मज्झिल्लविरहिओ जाव अणिंदिएसु जाव अहवा एगिंदियदेसा य अणिंदियदेसा य, जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा १ अहवा एगिंदियपएसा य बेंदियस्स पएसा २ अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियाण य पएसा ३ एवं आइल्लविरहिओ जाव पंचिंदिएसु अणिंदिएसु तियभंगो, जे अजीवा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–रूवी अजीवा य अरूवी अजीवा य, रूवी तहेव, जे अरूवी अजीवा ते पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा–नो धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे १ धम्मत्थिकायस्स पएसे २ एवं अहम्मत्थिकायस्सवि ४ अद्धासमए ५ । तिरियलोगखेत्तलोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे किं जीवा० ?, एवं जहा अहोलोगखेत्तलोगस्स तहेव, एवं उड्ढलोगखेत्तलोगस्सवि, नवरं अद्धासमओ नत्थि, अरूवी चउव्विहा । लोगस्स जहा अहेलोगखेत्तलोगस्स एगंमि आगासपएसे ॥ अलोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे पुच्छा, गोयमा ! नो जीवा नो जीवदेसा तं चेव जाव अणंतेहिं अगुरुयलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासस्स अणंतभागूणे ॥ दव्वओ णं अहेलोगखेत्तलोए अणंताइं जीवदव्वाइं अणंताइं अजीवदव्वाइं अणंता जीवाजीवदव्वा एवं तिरियलोयखेत्तलोएवि, एवं उड्ढलोयखेत्तलोएवि, दव्वओ णं अलोए णेवत्थि जीवदव्वा नेवत्थि अजीवदव्वा नेवत्थि जीवाजीवदव्वा एगे अजीवदव्वदेसे जाव सव्वागासअणंतभागूणे । कालओ णं अहेलोयखेत्तलोए न कयाइ नासि जाव निच्चे एवं जाव अहोलोगे । भाव-

११ शतके १० उद्देशः द्रव्यक्षेत्रा-दिलोकः सू ४२० ॥५२२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोक-स्वरूपं एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

प्रत सूत्रांक [४२०]

दीप अनुक्रम [५१०]

ओ णं अहेलोगखेत्तलोए अणंता वण्णपज्जवा जहा खंदए जाव अणंता अगुरुयलहुयपज्जवा एवं जाव लोए, भावओ णं अलोए नेवत्थि वण्णपज्जवा जाव नेवत्थि अगुरुयलहुयपज्जवा एगे अजीवदव्वदेसे जाव अणंतभागूणे। (सूत्रं ४२०) ॥

'रायगिहे' इत्यादि, 'दव्वलोए' त्ति द्रव्यलोक आगमतो नोआगमतश्च, तत्रागमतो द्रव्यलोको लोकशब्दार्थज्ञस्तत्रानुपयुक्तः 'अनुपयोगो द्रव्य'मिति वचनात्, आह च मङ्गलं प्रतीत्य द्रव्यलक्षणम्—"आगमओऽणुवउत्तो मंगलसद्दाणुवासिओ वत्ता। तन्नाणलद्धिजुत्तो उ नोवउत्तोत्ति दवं ॥ १ ॥"ति [आगमतो मङ्गलशब्दानुवासितोऽनुपयुक्तो वक्ता तज्ज्ञानलब्धियुक्तोऽप्यनुपयुक्त इति द्रव्यमिति ॥ १ ॥] नोआगमतस्तु ज्ञशरीरभव्यशरीरतद्व्यतिरिक्तभेदात्त्रिविधः, तत्र लोकशब्दार्थज्ञस्य शरीरं मृतावस्थं ज्ञानापेक्षया भूतलोकपर्यायतया घृतकुम्भवल्लोकः स च ज्ञशरीररूपो द्रव्यभूतो लोको ज्ञशरीरद्रव्यलोकः, नोशब्दश्चेह सर्वनिषेधे, तथा लोकशब्दार्थं ज्ञास्यति यस्तस्य शरीरं सचेतनं भाविलोकभावत्वेन मधुघटवद् भव्यशरीरद्रव्यलोकः, नोशब्द इहापि सर्वनिषेध एव, ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तश्च द्रव्यलोको द्रव्याण्येव धर्मास्तिकायादीनि, आह च—"जीवमजीवे रूविमरूवि सपएस अप्पएसे य। जाणाहि दवलोयं निच्चमणिच्चं च जं दवं ॥ १ ॥" [जीवा अजीवा रूपिणोऽरूपिणः सप्रदेशा अप्रदेशाश्च जानीहि द्रव्यलोकं नित्यमनित्यं च यद्द्रव्यम् ॥ १ ॥] इहापि नोशब्दः सर्वनिषेधे आगमशब्दवाच्यस्य ज्ञानस्य सर्वथा निषेधात्, 'खेत्तलोए' त्ति क्षेत्ररूपो लोकः स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोक-स्वरूपं एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥५२३॥

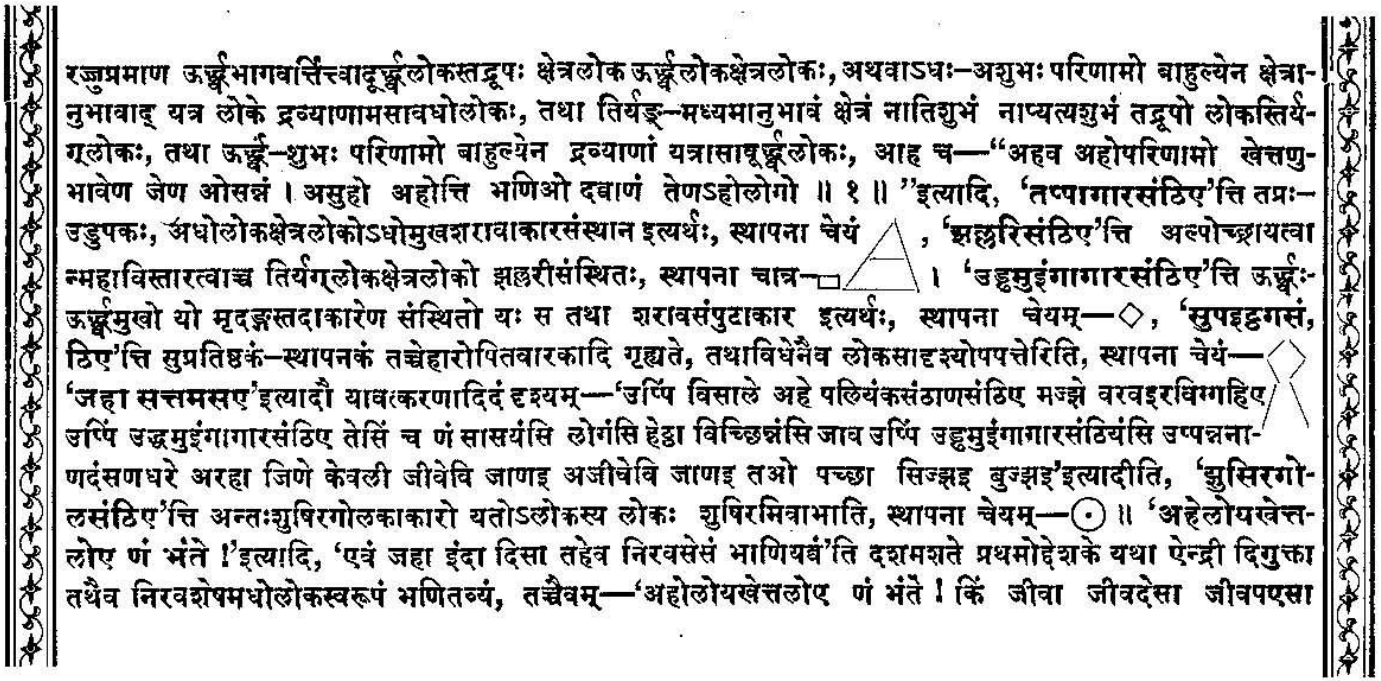
क्षेत्रलोकः, आह च—"आगासस्स पएसा उड्ढं च अहे य तिरियलोए य । जाणाहि खेत्तलोयं अणंतजिणदेसियं सम्मं ॥ १ ॥" [आकाशस्य प्रदेशा ऊर्द्धं चाधश्च तिर्यग्लोके च । जानीहि क्षेत्रलोकमनन्तजिनदेशितं सम्यक् ॥ १ ॥] 'काललोए'त्ति कालः–समयादिः तद्रूपो लोकः काललोकः, आह च—"समयावली मुहुत्ता दिवसअहोरत्तपक्खमासा य । संवच्छरजुगपलिया सागरउस्सप्पिपरियट्टा ॥ १ ॥" [समय आवलिका मुहूर्त्तः दिवसः अहोरात्रं पक्षो मासश्च संवत्सरो युगं पल्यः सागरः उत्सर्पिणी परावर्त्तः ॥ १ ॥] 'भावलोए'त्ति भावलोको द्वेधा–आगमतो नोआगमतश्च, तत्रागमतो लोकशब्दार्थज्ञस्तत्र चोपयुक्तः भावरूपो लोको भावलोक इति नो आगमतस्तु भावा–औदयिकादयस्तद्रूपो लोको भावलोकः, आह च—"ओदइए उवसमिए खइए य तहा खओवसमिए य । परिणामसन्निवाए य छव्विहो भावलोगो उ ॥ १ ॥" [औदयिक औपशमिकः क्षायिकश्च तथा क्षायोपशमिकश्च । पारिणामिकश्च सन्निपातश्च षड्विधो भावलोकस्तु ॥ १ ॥] इति, इह नोशब्दः सर्वनिषेधे मिश्रवचनो वा, आगमस्य ज्ञानत्वात् क्षायिकक्षायोपशमिकज्ञानस्वरूपभावविशेषेण च मिश्रत्वादौदयिकादिभावलोकस्येति । 'अहेलोयखेत्तलोए'त्ति अधोलोकरूपः क्षेत्रलोकोऽधोलोकक्षेत्रलोकः, इह किलाष्टप्रदेशो रुचकस्तस्य चाधस्तनप्रतरस्याधो नव योजनशतानि यावत्तिर्यग्लोकस्ततः परेणाधःस्थितत्वादधोलोकः साधिकसप्तरज्जुप्रमाणः,'तिरियलोयखेत्तलोए'त्ति रुचकापेक्षयाऽध उपरि च नव २ योजनशतमानस्तिर्यगूरूपत्वात्तिर्यग्लोकस्तद्रूपः क्षेत्रलोकस्तिर्यग्लोकक्षेत्रलोकः, 'उड्ढलोयखेत्तलोए'त्ति तिर्यग्लोकस्योपरि देशोनसप्त-

११ शतके १० उद्देशः द्रव्यक्षेत्रादिलोकः सू ४२०

॥५२३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

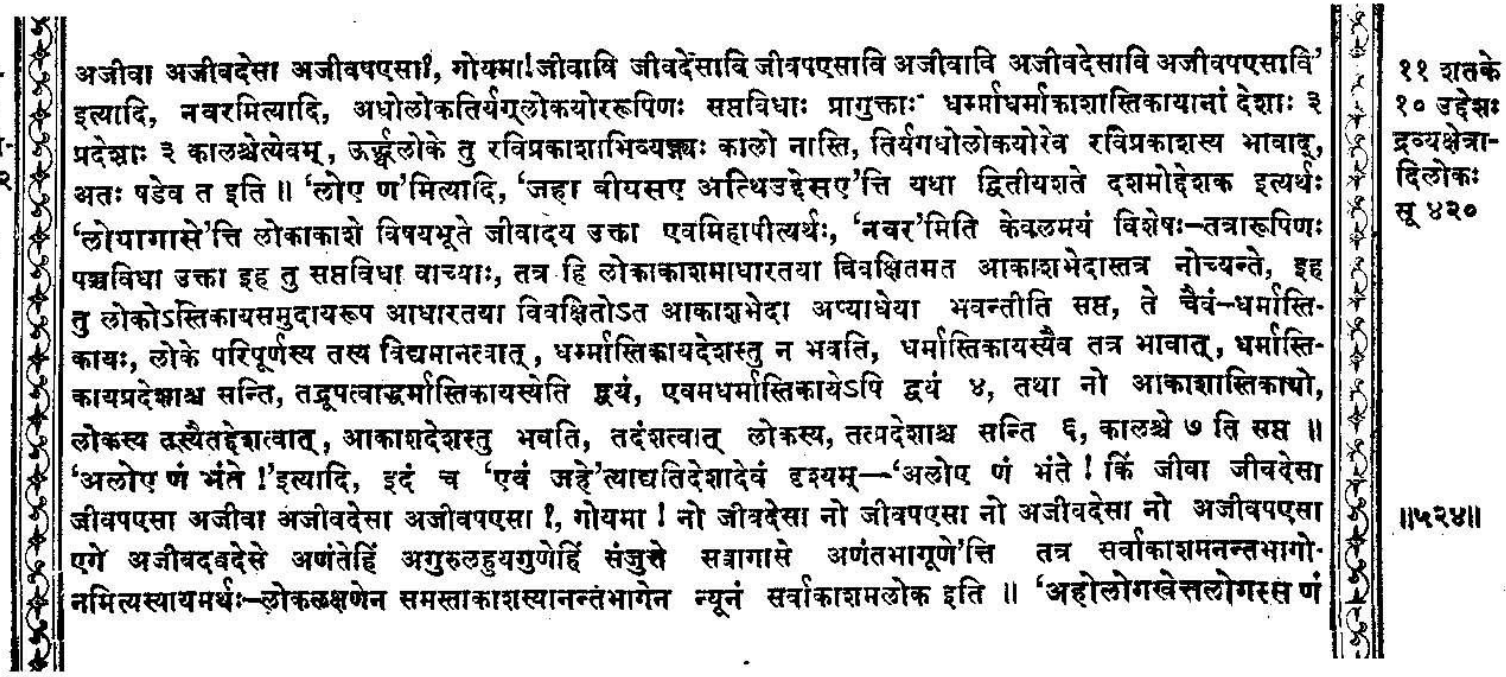
लोक-स्वरूपं एवं तस्य भेद-प्रभेदा:



रज्जुप्रमाण ऊर्द्ध्वभागवर्त्तित्वादूर्द्ध्वलोकस्तद्रूपः क्षेत्रलोक ऊर्द्ध्वलोकक्षेत्रलोकः, अथवाऽधः–अशुभः परिणामो बाहुल्येन क्षेत्रानुभावाद् यत्र लोके द्रव्याणामसावधोलोकः, तथा तिर्यङ्–मध्यमानुभावं क्षेत्रं नातिशुभं नाप्यत्यशुभं तद्रूपो लोकस्तिर्यग्लोकः, तथा ऊर्द्ध्व–शुभः परिणामो बाहुल्येन द्रव्याणां यत्रासावूर्द्ध्वलोकः, आह च—"अहव अहोपरिणामो खेत्तणुभावेण जेण ओसन्नं । असुहो अहोत्ति भणिओ दवाणं तेणऽहोलोगो ॥ १ ॥ "इत्यादि, 'तप्पागारसंठिए'त्ति तप्रः–उडुपकः, अधोलोकक्षेत्रलोकोऽधोमुखशरावाकारसंस्थान इत्यर्थः, स्थापना चेयं △, 'झल्लरिसंठिए'त्ति अल्पोच्छ्रायत्वान्महाविस्तारत्वाच्च तिर्यग्लोकक्षेत्रलोको झल्लरीसंस्थितः, स्थापना चात्र–□△। 'उड्ढमुइंगागारसंठिए'त्ति ऊर्द्ध्वः-ऊर्द्ध्वमुखो यो मृदङ्गस्तदाकारेण संस्थितो यः स तथा शरावसंपुटाकार इत्यर्थः, स्थापना चेयम्—◇, 'सुपइट्ठगसंठिए'त्ति सुप्रतिष्ठकं–स्थापनकं तच्चेहारोपितवारकादि गृह्यते, तथाविधेनैव लोकसादृश्योपपत्तेरिति, स्थापना चेयं—⧖ 'जहा सत्तमसए'इत्यादौ यावत्करणादिदं दृश्यम्—'उप्पिं विसाले अहे पलियंकसंठाणसंठिए मज्झे वरवइरविग्गहिए उप्पिं उड्ढमुइंगागारसंठिए तेसिं च णं सासयंसि लोगंसि हेट्ठा विच्छिन्नंसि जाव उप्पिं उड्ढमुइंगागारसंठियंसि उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली जीवेवि जाणइ अजीवेवि जाणइ तओ पच्छा सिज्झइ बुज्झइ'इत्यादीति, 'झुसिरगोलसंठिए'त्ति अन्तःशुषिरगोलकाकारो यतोऽलोकस्य लोकः शुषिरमिवाभाति, स्थापना चेयम्—⊙ ॥ 'अहेलोयखेत्तलोए णं भंते !'इत्यादि, 'एवं जहा इंदा दिसा तहेव निरवसेसं भाणियव्वं'ति दशमशते प्रथमोद्देशके यथा ऐन्द्री दिगुक्ता तथैव निरवशेषमधोलोकस्वरूपं भणितव्यं, तच्चैवम्—'अहोलोयखेत्तलोए णं भंते ! किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोक-स्वरूपं एवं तस्य भेद-प्रभेदा:



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५२४॥

अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा?, गोयमा! जीवावि जीवदेसावि जीवपएसावि अजीवावि अजीवदेसावि अजीवपएसावि' इत्यादि, नवरमित्यादि, अधोलोकतिर्यग्लोकयोररूपिणः सप्तविधाः प्रागुक्ताः धर्म्माधर्माकाशास्तिकायानां देशाः ३ प्रदेशाः ३ कालश्चेत्येवम्, ऊर्द्धलोके तु रविप्रकाशाभिव्यङ्ग्यः कालो नास्ति, तिर्यगधोलोकयोरेव रविप्रकाशस्य भावाद्, अतः षडेव त इति ॥ 'लोए ण'मित्यादि, 'जहा बीयसए अत्थिउद्देसए'त्ति यथा द्वितीयशते दशमोद्देशक इत्यर्थः 'लोयागासे'त्ति लोकाकाशे विषयभूते जीवादय उक्ता एवमिहापीत्यर्थः, 'नवर'मिति केवलमयं विशेषः–तत्रारूपिणः पञ्चविधा उक्ता इह तु सप्तविधा वाच्याः, तत्र हि लोकाकाशमाधारतया विवक्षितमत आकाशभेदास्तत्र नोच्यन्ते, इह तु लोकोऽस्तिकायसमुदायरूप आधारतया विवक्षितोऽत आकाशभेदा अप्याधेया भवन्तीति सप्त, ते चैवं–धर्मास्तिकायः, लोके परिपूर्णस्य तस्य विद्यमानत्वात्, धर्म्मास्तिकायदेशस्तु न भवति, धर्मास्तिकायस्यैव तत्र भावात्, धर्मास्तिकायप्रदेशाश्च सन्ति, तद्रूपत्वाद्धर्मास्तिकायस्येति द्वयं, एवमधर्मास्तिकायेऽपि द्वयं ४, तथा नो आकाशास्तिकायो, लोकस्य तस्यैतद्देशत्वात्, आकाशदेशस्तु भवति, तदंशत्वात् लोकस्य, तत्प्रदेशाश्च सन्ति ६, कालश्चे ७ ति सप्त ॥ 'अलोए णं भंते !'इत्यादि, इदं च 'एवं जहे'त्याद्यतिदेशादेवं दृश्यम्—'अलोए णं भंते ! किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा ?, गोयमा ! नो जीवदेसा नो जीवपएसा नो अजीवदेसा नो अजीवपएसा एगे अजीवदव्वदेसे अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासे अणंतभागूणे'त्ति तत्र सर्वाकाशमनन्तभागोनमित्यस्यायमर्थः–लोकलक्षणेन समस्ताकाशस्यानन्तभागेन न्यूनं सर्वाकाशमलोक इति ॥ 'अहोलोगखेत्तलोगस्स णं

११ शतके १० उद्देशः द्रव्यक्षेत्रादिलोकः सू ४२०

॥५२४॥

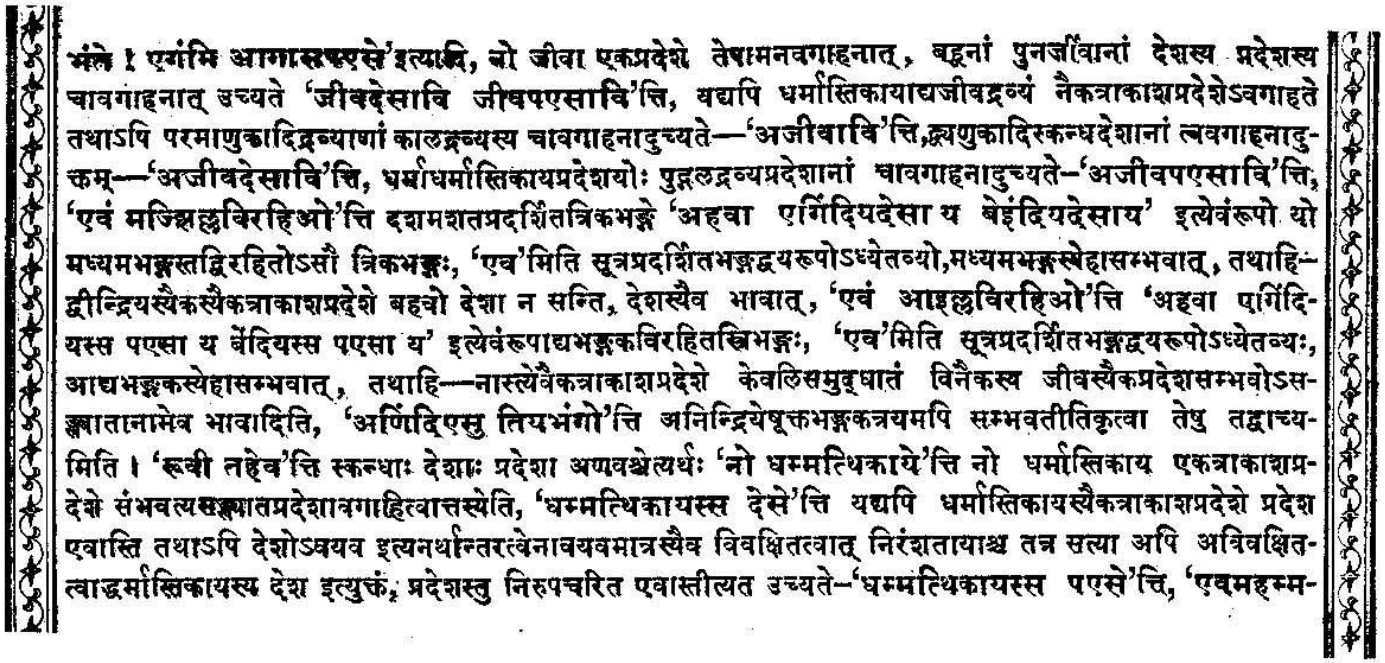
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोक-स्वरूपं एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४२०]

दीप अनुक्रम [५१०]



भंते ! एगंमि आगासपएसे'इत्यादि, नो जीवा एकप्रदेशे तेषामनवगाहनात्, बहूनां पुनर्जीवानां देशस्य प्रदेशस्य चावगाहनात् उच्यते 'जीवदेसावि जीवपएसावि'त्ति, यद्यपि धर्मास्तिकायाद्यजीवद्रव्यं नैकत्राकाशप्रदेशेऽवगाहते तथाऽपि परमाणुकादिद्रव्याणां कालद्रव्यस्य चावगाहनादुच्यते—'अजीवावि'त्ति,द्व्यणुकादिस्कन्धदेशानां त्ववगाहनादुक्तम्—'अजीवदेसावि'त्ति, धर्माधर्मास्तिकायप्रदेशयोः पुद्गलद्रव्यप्रदेशानां चावगाहनादुच्यते–'अजीवपएसावि'त्ति, 'एवं मज्झिल्लुविरहिओ'त्ति दशमशतप्रदर्शितत्रिकभङ्गे 'अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियदेसाय' इत्येवंरूपो यो मध्यमभङ्गस्तद्विरहितोऽसौ त्रिकभङ्गः, 'एव'मिति सूत्रप्रदर्शितभङ्गद्वयरूपोऽध्येतव्यो,मध्यमभङ्गस्येहासम्भवात्, तथाहि–द्वीन्द्रियस्यैकस्यैकत्राकाशप्रदेशे बहवो देशा न सन्ति, देशस्यैव भावात्, 'एवं आइल्लुविरहिओ'त्ति 'अहवा एगिंदियस्स पएसा य बेंदियस्स एसा य' इत्येवंरूपाद्यभङ्गकविरहितस्त्रिभङ्गः, 'एव'मिति सूत्रप्रदर्शितभङ्गद्वयरूपोऽध्येतव्यः, आद्यभङ्गकस्येहासम्भवात्, तथाहि—नास्त्येवैकत्राकाशप्रदेशे केवलिसमुद्घातं विनैकस्य जीवस्यैकप्रदेशसम्भवोऽसङ्ख्यातानामेव भावादिति, 'अणिंदिएसु तियभंगो'त्ति अनिन्द्रियेषूक्तभङ्गकत्रयमपि सम्भवतीतिकृत्वा तेषु तद्वाच्यमिति। 'रूवी तहेव'त्ति स्कन्धाः देशाः प्रदेशा अणवश्चेत्यर्थः 'नो धम्मत्थिकाये'त्ति नो धर्मास्तिकाय एकत्राकाशप्रदेशे संभवत्यसङ्ख्यातप्रदेशावगाहित्वात्तस्येति, 'धम्मत्थिकायस्स देसे'त्ति यद्यपि धर्मास्तिकायस्यैकत्राकाशप्रदेशे प्रदेश एवास्ति तथाऽपि देशोऽवयव इत्यनर्थान्तरत्वेनावयवमात्रस्यैव विवक्षितत्वात् निरंशतायाश्च तत्र सत्या अपि अविवक्षितत्वाद्धर्मास्तिकायस्य देश इत्युक्तं, प्रदेशस्तु निरुपचरित एवास्तीत्यत उच्यते–'धम्मत्थिकायस्स पएसे'त्ति, 'एवमहम्म-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोक-स्वरूपं एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

प्रत सूत्रांक [४२०]

दीप अनुक्रम [५१०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५२५॥

११ शतके १० उद्देशः लोकालो-कमहत्ता सू ४२१

त्थिकायस्सवि'त्ति 'नो अधम्मत्थिकाए अहम्मत्थिकायस्स देसे अहम्मत्थिकायस्स पएसे' इत्येवमधर्मास्तिकायसूत्रं वाच्य-मित्यर्थः, 'अद्धासमओ नत्थि, अरूवी चउव्विह'त्ति ऊर्ध्वलोकेऽद्धासमयो नास्तीति अरूपिणश्चतुर्विधाः–धर्मास्तिकाय-देशादयः ऊर्ध्वलोक एकत्राकाशप्रदेशे सम्भवन्तीति। 'लोगस्स जहा अहोलोगखेत्तलोगस्स एगंमि आगासप-एसे'त्ति अधोलोकक्षेत्रलोकस्यैकत्राकाशप्रदेशे यद्वक्तव्यमुक्तं तल्लोकस्याप्येकत्राकाशप्रदेशे वाच्यमित्यर्थः, तच्चेदं–लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे किं जीवा० ? पुच्छा गोयमा ! 'नो जीवे'त्यादि प्राग्वत्। 'अहेलोयखेत्तलोए अणंता वन्नपज्जव'त्ति अधोलोकक्षेत्रलोकेऽनन्ता वर्णपर्यवाः एकगुणकालकादीनामनन्तगुणकालाद्यवसानानां पुद्गलानां तत्र भावात्॥ अलोकसूत्रे 'नेवत्थि अगुरुलहुयपज्जव'त्ति अगुरुलघुपर्यवोपेतद्रव्याणां पुद्गलादीनां तत्राभावात्॥

लोए णं भंते ! केमहालए पन्नत्ते ?, गोयमा ! अयन्नं जंबुद्दीवे २ सव्वदीवा० जाव परिक्खेवेणं, तेणं का-लेणं तेणं समएणं छ देवा महिड्ढीया जाव महेसक्खा जंबुद्दीवे २ मंदरे पव्वए मंदरचूलियं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ताणं चिट्ठेज्जा, अहे णं चत्तारि दिसाकुमारीओ महत्तरियाओ चत्तारि बलिपिंडे गहाय जंबुद्दी-वस्स २ चउसुवि दिसासु बहियाभिमुहीओ ठिच्चा ते चत्तारि बलिपिंडे जमगसमगं बहिगाभिमुहे पक्खिवेज्जा, पभू णं गोयमा ! ताओ एगमेगे देवे ते चत्तारि बलिपिंडे धरणितलमसंपत्ते खिप्पामेव पडिसाहरित्तए, ते णं गोयमा ! देवा ताए उक्किट्ठाए जाव देवगइए एगे देवे पुरच्छाभिमुहे पयाते एवं दाहिणाभिमुहे एवं पच्चत्था-भिमुहे एवं उत्तराभिमुहे एवं उड्ढाभि० एगे देवे अहोभिमुहे पयाए, तेणं कालेणं तेणं समएणं वाससहस्साउए

॥५२५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोक-स्वरूपं एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

प्रत सूत्रांक [४२१--४२३]

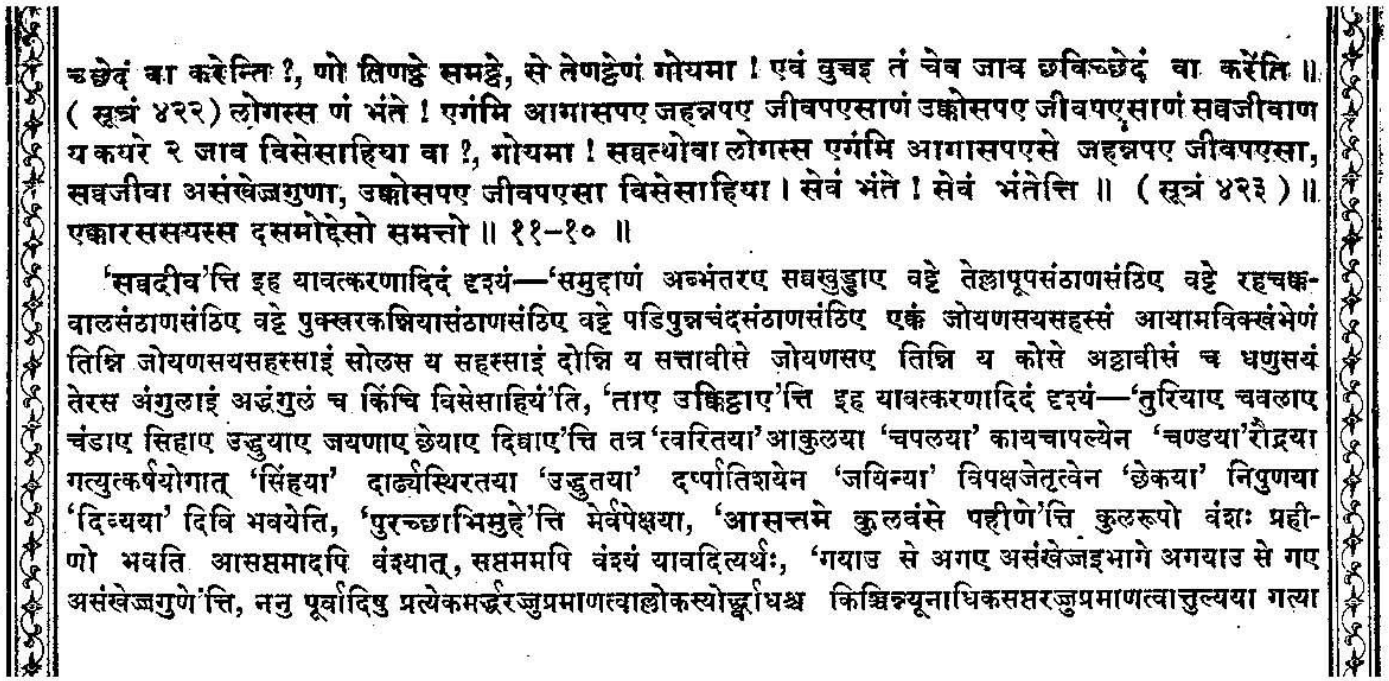
दीप अनुक्रम [५११--५१३]

दारए पयाए, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पहीणा भवंति णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति, तए णं तस्स दारगस्स आउए पहीणे भवति, णो चेव णं जाव संपाउणंति, तए णं तस्स दारगस्स अट्ठि-मिंजा पहीणा भवंति णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति, तए णं तस्स दारगस्स आसत्तमेवि कुलवंसे पहीणे भवति णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति, तए णं तस्स दारगस्स नामगोएवि पहीणे भवति णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति, तेसि णं भंते ! देवाणं किं गए बहुए अगए बहुए ?, गोयमा ! गए बहुए नो अगए बहुए, गयाउ से अगए असंखेज्जइभागे अगयाउ से गए असंखेज्जगुणे, लोए णं गोयमा ! एमहालए पन्नत्ते । अलोए णं भंते ! केमहालए पन्नत्ते ?, गोयमा ! अयन्नं समयखेत्ते पणयालीसं जोयणसय-सहस्साइं आयामविक्खंभेणं जहा खंदए जाव परिक्खेवेणं, तेणं कालेणं तेणं समएणं दस देवा महिड्ढिया तहेव जाव संपरिक्खित्ताणं संचिट्ठेज्जा, अहे णं अट्ठ दिसाकुमारीओ महत्तरियाओ अट्ठ बलिपिंडे गहाय माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स चउसुवि दिसासु चउसुवि विदिसासु बहियाभिमुहीओ ठिचा अट्ठ बलिपिंडे गहाय माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जमगसमगं बहियाभिमुहीओ पक्खिवेज्जा, पभू णं गोयमा ! तओ एगमेगे देवे ते अट्ठ बलिपिंडे धरणितलमसंपत्ते खिप्पामेव पडिसाहरित्तए, ते णं गोयमा ! देवा ताए उक्किट्ठाए जाव देव-गईए लोगंसि ठिचा असब्भावपट्ठवणाए एगे देवे पुरच्छाभिमुहे पयाए एगे देवे दाहिणपुरच्छाभिमुहे पयाए एवं जाव उत्तरपुरच्छाभिमुहे एगे देवे उड्ढाभिमुहे एगे देवे अहोभिमुहे पयाए, तेणं कालेणं तेणं समएणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वाससयसहस्साउए दारए पयाए, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पहीणा भवंति नो चेव णं ते देवा अलोयंतं संपाउणंति, तं चेव०, तेसि णं देवाणं किं गए बहुए अगए बहुए ?, गोयमा ! नो गए बहुए अगए बहुए गयाउ से अगए अणंतगुणे अगयाउ से गए अणंतभागे, अलोए णं गोयमा ! एमहालए पन्नत्ते ॥(सूत्रं४२१) लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे जे एगिंदियपएसा जाव पंचिंदियपएसा अणिंदियपदेसा अन्नमन्नबद्धा अन्नमन्नपुट्ठा जाव अन्नमन्नसमभरघडत्ताए चिट्ठंति, अत्थि णं भंते ! अन्नमन्नस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पायंति छविच्छेदं वा करेंति?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ लोगस्स णं एगंमि आगासपएसे जे एगिंदियपएसा जाव चिट्ठंति णत्थि णं भंते ! अन्नमन्नस्स किंचि आबाहं वा जाव करेंति ?, गोयमा ! से जहानामए नट्टिया सिया सिंगारागारचारुवेसा जाव कलिया रंगट्ठाणंसि जणसयाउलंसि जणसयसहस्साउलंसि बत्तीसइविहस्स नट्टस्स अन्नयरं नट्टविहिं उवदंसेज्जा, से नूणं गोयमा ! ते पेच्छगा तं नट्टियं अणिमिसाए दिट्ठीए सव्वओ समंता समभिलोएंति ?, हंता समभिलोएंति, ताओ णं गोयमा ! दिट्ठीओ तंसि नट्टियंसि सव्वओ समंता संनिपडियाओ ?, हंता सन्निपडियाओ, अत्थि णं गोयमा ! ताओ दिट्ठीओ तीसे नट्टियाए किंचिवि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएंति छविच्छेदं वा करेंति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, अहवा सा नट्टिया तासिं दिट्ठीणं किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएंति छविच्छेदं वा करेइ ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, ताओ वा दिट्ठीओ अन्नमन्नाए दिट्ठीए किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएंति छवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



छेदं वा करेन्ति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुचइ तं चेव जाव छविच्छेदं वा करेंति ॥ (सूत्रं ४२२) लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपए जहन्नपए जीवपएसाणं उक्कोसपए जीवपएसाणं सव्वजीवाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा लोगस्स एगंमि आगासपएसे जहन्नपए जीवपएसा, सव्वजीवा असंखेज्जगुणा, उक्कोसपए जीवपएसा विसेसाहिया । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ४२३) ॥ एक्कारससयस्स दसमोद्देसो समत्तो ॥ ११–१० ॥

'सव्वदीव'त्ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'समुद्दाणं अब्भंतरए सव्वखुड्डाए वट्टे तेल्लापूपसंठाणसंठिए वट्टे रहचक्कवालसंठाणसंठिए वट्टे पुक्खरकण्णियासंठाणसंठिए वट्टे पडिपुन्नचंदसंठाणसंठिए एक्कं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं तिन्नि जोयणसयसहस्साइं सोलस य सहस्साइं दोन्नि य सत्तावीसे जोयणसए तिन्नि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस अंगुलाइं अद्धंगुलं च किंचि विसेसाहियं'ति, 'ताए उक्किट्ठाए'त्ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'तुरियाए चवलाए चंडाए सिहाए उद्धुयाए जयणाए छेयाए दिव्वाए'त्ति तत्र 'त्वरितया' आकुलया 'चपलया' कायचापल्येन 'चण्डया' रौद्रया गत्युत्कर्षयोगात् 'सिंहया' दार्ढ्यस्थिरतया 'उद्धुतया' दर्पातिशयेन 'जयिन्या' विपक्षजेतृत्वेन 'छेकया' निपुणया 'दिव्यया' दिवि भवयेति, 'पुरच्छाभिमुहे'त्ति मेर्वपेक्षया, 'आसत्तमे कुलवंसे पहीणे'त्ति कुलरूपो वंशः प्रहीणो भवति आसप्तमादपि वंश्यात्, सप्तममपि वंश्यं यावदित्यर्थः, 'गयाउ से अगए असंखेज्जइभागे अगयाउ से गए असंखेज्जगुणे'त्ति, ननु पूर्वादिषु प्रत्येकमर्द्धरज्जुप्रमाणत्वाल्लोकस्योर्द्ध्वाधश्च किञ्चिन्यूनाधिकसप्तरज्जुप्रमाणत्वात्तुल्यया गत्या

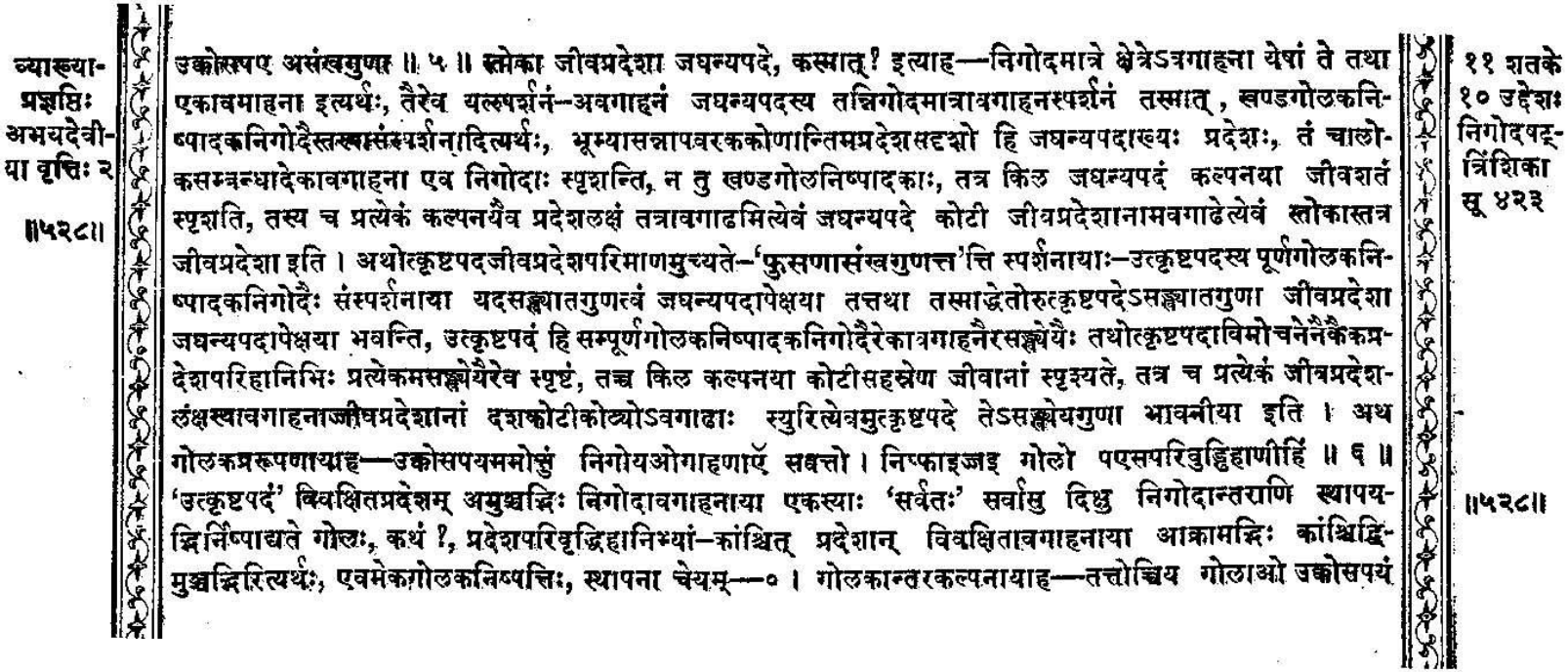
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गच्छतां देवानां कथं षट्स्वपि दिक्षु गतादगतं क्षेत्रमसङ्ख्यातभागमात्रं अगताच्च गतमसङ्ख्यातगुणमिति ?, क्षेत्रवैषम्यादिति भावः, अत्रोच्यते, घनचतुरस्रीकृतस्य लोकस्यैव कल्पितत्वान्न दोषः, ननु यद्युक्तस्वरूपयाऽपि गत्या गच्छन्तो देवा लोकान्तं बहुनापि कालेन न लभन्ते तदा कथमच्युताजिनजन्मादिषु द्रागवतरन्ति? बहुत्वात्क्षेत्रस्याल्पत्वादवतरणकालस्येति, सत्यं, किन्तु मन्देयं गतिः जिनजन्माद्यवतरणगतिस्तु शीघ्रतमेति । 'असब्भावपट्ठवणाए'त्ति असद्भूतार्थकल्पनयेत्यर्थः ॥ पूर्वं लोकालोकवक्तव्यतोक्ता, अथ लोकैकप्रदेशगतं वक्तव्यविशेषं दर्शयन्नाह—'लोगस्स ण'मित्यादि, 'अत्थि णं भंते'त्ति अस्त्ययं भदन्त ! पक्षः, इह च त इति शेषो दृश्यः, 'जाव करिय'त्ति इह यावत्करणादेवं दृश्यं—'संगयगयहसियभणियचिट्ठियविलाससललियसंलावनिउणजुत्तोवयारकलिय'त्ति, 'बत्तीसइविहस्स नट्टस्स'त्ति द्वात्रिंशद् विधा–भेदा यस्य तत्तथा तस्य नाट्यस्य, तत्र ईहामृगऋषभतुरगनरमकरविहगव्यालकिन्नरादिभक्तिचित्रो नामैको नाट्यविधिः, एतच्चरिताभिनयनमिति संभाव्यते, एवमन्येऽप्येकत्रिंशद्विधयो राजप्रश्नकृतानुसारतो वाच्याः । लोकैकप्रदेशाधिकारादेवेदमाह—'लोगस्स ण'मित्यादि, अस्य व्याख्या–यथा किलैतेषु त्रयोदशसु प्रदेशेषु त्रयोदशप्रदेशकानि दिग्दशकस्पर्शानि त्रयोदश द्रव्याणि स्थितानि तेषां च प्रत्याकाशप्रदेशं त्रयोदश त्रयोदश प्रदेशा भवन्ति, एवं लोकाकाशप्रदेशेऽनन्तजीवावगाहेनैकैकस्मिन्नाकाशप्रदेशेऽनन्ता जीवप्रदेशा भवन्ति, लोके च सूक्ष्मा अनन्तजीवात्मका निगोदाः पृथिव्यादिसर्वजीवासङ्ख्येयकतुल्याः सन्ति, तेषां चैकैकस्मिन्नाकाशप्रदेशे जीवप्रदेशा अनन्ता भवन्ति, तेषां च जघन्यपदे एकत्राकाशप्रदेशे सर्वस्तोका जीवप्रदेशाः, तेभ्यश्च सर्वजीवा असङ्ख्येयगुणाः, उत्कृष्टपदे पुनस्तेभ्यो विशेषाधिका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवप्रदेशा इति ॥ अयं च सूत्रार्थोऽमूभिर्वृद्धोक्तगाथाभिर्भावनीयः–लोगस्सेगपएसे जहन्नयपयंमि जियपएसाणं । उक्कोसपए य तहा सवजियाणं च के बहुया ? ॥ १ ॥ इति प्रश्नः, उत्तरं पुनरत्र–थोवा जहण्णयपए जियप्पएसा जिया असंखगुणा । उक्कोसपयपएसा तओ विसेसाहिया भणिया ॥ २ ॥ अथ जघन्यपदमुत्कृष्टपदं चोच्यते—तत्थ पुण जहन्नपयं लोगंतो जत्थ फासणा तिदिसिं । छद्दिसिमुक्कोसपयं समत्तगोलंमि णण्णत्थ ॥ ३ ॥ तत्र–तयोर्जघन्येतरपदयोर्जघन्यपदं लोकान्ते भवति 'जत्थ'त्ति यत्र गोलके स्पर्शना निगोददेशैस्तिसृष्वेव दिक्षु भवति, शेषदिशामलोकेनावृतत्वात्, सा च खण्डगोल एव भवतीति भावः, 'छद्दिसिं'ति यत्र पुनर्गोलके षट्स्वपि दिक्षु निगोददेशैः स्पर्शना भवति तत्रोत्कृष्टपदं भवति, तच्च समस्तगौलैः परपूर्णगोलके भवति, नान्यत्र, खण्डगोलके न भवतीत्यर्थः, सम्पूर्णगोलकश्च लोकमध्य एव स्यादिति ॥ अथ परिवचनमाशङ्कमान आह—उक्कोसमसंखगुणं जहन्नयाओ पयं हवइ किं तु ? । नणु तिदिसिंफुसणाओ छद्दिसिफुसणा भवे दुगुणा ॥ ४ ॥ उत्कर्ष–उत्कृष्टपदमसङ्ख्यातगुणं जीवप्रदेशापेक्षया जघन्यकात्पदादिति गम्यं, भवति 'किन्तु' कथं तु, न भवतीत्यर्थः, कस्मादेवम् ? इत्याह—'ननु'निश्चितम्, अक्षमायां वा ननुशब्दः, त्रिदिक्स्पर्शनायाः सकाशात् षड्दिक्स्पर्शना भवेद्द्विगुणेति, इह च काकुपाठाद्धेतुत्वं प्रतीयत इति, अतो द्विगुणमेवोत्कृष्टं पदं स्यादसङ्ख्यातगुणं च तदिष्यते, जघन्यपदाश्रितजीवप्रदेशापेक्षयाऽसङ्ख्यातगुणसर्वजीवेभ्यो विशेषाधिकजीवप्रदेशोपेतत्वात्तस्येति । इहोत्तरम्—थोवा जहन्नयपए निगोयमित्तावगाहणाफुसणा । फुसणासंखगुणत्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५२८॥

उक्कोसपए असंखगुणा ॥ ५ ॥ स्तोका जीवप्रदेशा जघन्यपदे, कस्मात्? इत्याह—निगोदमात्रे क्षेत्रेऽवगाहना येषां ते तथा एकावमाहना इत्यर्थः, तैरेव यत्स्पर्शनं—अवगाहनं जघन्यपदस्य तन्निगोदमात्रावगाहनस्पर्शनं तस्मात्, खण्डगोलकनिष्पादकनिगोदैस्तत्स्पर्शनादित्यर्थः, भूम्यासन्नापवरककोणान्तिमप्रदेशसदृशो हि जघन्यपदाख्यः प्रदेशः, तं चालोकसम्बन्धादेकावगाहना एव निगोदाः स्पृशन्ति, न तु खण्डगोलनिष्पादकाः, तत्र किल जघन्यपदं कल्पनया जीवशतं स्पृशति, तस्य च प्रत्येकं कल्पनयैव प्रदेशलक्षं तत्रावगाढमित्येवं जघन्यपदे कोटी जीवप्रदेशानामवगाढेत्येवं स्तोकास्तत्र जीवप्रदेशा इति । अथोत्कृष्टपदजीवप्रदेशपरिमाणमुच्यते–'फुसणासंखगुणत्ति'त्ति स्पर्शनायाः—उत्कृष्टपदस्य पूर्णगोलकनिष्पादकनिगोदैः संस्पर्शनाया यदसङ्ख्यातगुणत्वं जघन्यपदापेक्षया तत्तथा तस्माद्धेतोरुत्कृष्टपदेऽसङ्ख्यातगुणा जीवप्रदेशा जघन्यपदापेक्षया भवन्ति, उत्कृष्टपदं हि सम्पूर्णगोलकनिष्पादकनिगोदैरेकावगाहनैरसङ्ख्येयैः तथोत्कृष्टपदाविमोचनेनैकैकप्रदेशपरिहानिभिः प्रत्येकमसङ्ख्येयैरेव स्पृष्टं, तच्च किल कल्पनया कोटीसहस्रेण जीवानां स्पृश्यते, तत्र च प्रत्येकं जीवप्रदेशलक्षस्यावगाहनाज्जीवप्रदेशानां दशकोटीकोट्योऽवगाढाः स्युरित्येवमुत्कृष्टपदे तेऽसङ्ख्येयगुणा भावनीया इति । अथ गोलकप्ररूपणायाह—उक्कोसपयममोसुं निगोयओगाहणाएँ सव्वत्तो । निप्फाइज्जइ गोलो पएसपरिवुड्ढिहाणीहिं ॥ ६ ॥ 'उत्कृष्टपदं' विवक्षितप्रदेशम् अमुञ्चद्भिः निगोदावगाहनाया एकस्याः 'सर्वतः' सर्वासु दिक्षु निगोदान्तराणि स्थापयद्भिर्निष्पाद्यते गोलः, कथं ?, प्रदेशपरिवृद्धिहानिभ्यां–कांश्चित् प्रदेशान् विवक्षितावगाहनाया आक्रामद्भिः कांश्चिद्विमुञ्चद्भिरित्यर्थः, एवमेकगोलकनिष्पत्तिः, स्थापना चेयम्—० । गोलकान्तरकल्पनायाह—तत्तोच्चिय गोलाओ उक्कोसपयं

११ शतके १० उद्देशः निगोदषट्त्रिंशिका सू ४२३

॥५२८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निगोद-षट्त्रिंशिका

मुइत्तु जो अन्नो । होइ निगोओ तंमिवि अन्नो निप्फज्जती गोलो ॥ ७ ॥ तमेवोक्तलक्षणं गोलकमाश्रित्यान्यो गोलको निष्पद्यते, कथम् ?, उत्कृष्टपदं प्राक्तनगोलकसम्बन्धि विमुच्य थोऽन्यो भवति निगोदस्तस्मिन्नुत्कृष्टपदकल्पनेनेति । तथा च यत्स्यात्तदाह—एवं निगोयमेत्ते खेत्ते गोलस्स होइ निप्फत्ती । एवं निप्पज्जंते लोगे गोला असंखिज्जा ॥ ८ ॥ 'एवम्' उक्तक्रमेण निगोदमात्रे क्षेत्रे गोलकस्य भवति निष्पत्तिः, विवक्षितनिगोदावगाहातिरिक्तनिगोददेशानां गोलकान्तरानुप्रवेशात्, एवं च निष्पद्यन्ते लोके गोलका असङ्ख्येयाः, असङ्ख्येयत्वात् निगोदावगाहनानां, प्रतिनिगोदावगाहनं च गोलकनिष्पत्तेरिति ॥ अथ किमिदमेव प्रतिगोलकं यदुक्तमुत्कृष्टपदं तदेवेह ग्राह्यमुतान्यत् ? इत्यस्यामाशङ्कायामाह—ववहारनएण इमं उक्कोसपयावि एत्तिया चेव । जं पुण उक्कोसपयं नेच्छइयं होइ तं वोच्छं ॥ ९ ॥ 'व्यवहारनयेन' सामान्येन 'इदम्' अनन्तरोक्तमुत्कृष्टपदमुक्तं, काक्का चेदमध्येयं, तेन नेहेदं ग्राह्यमित्यर्थः स्यात्, अथ कस्मादेवम् ? इत्याह—'उक्कोसपयावि एत्तिया चेव'त्ति न केवलं गोलका असङ्ख्येयाः उत्कर्षपदान्यपि परिपूर्णगोलकप्ररूपितानि एतावन्त्येव—असङ्ख्येयान्येव भवन्ति यस्मात्ततो न नियतमुत्कृष्टपदं किञ्चन स्यादिति भावः, यत्पुनरुत्कृष्टपदं नैश्चयिकं भवति सर्वोत्कर्षयोगाद् यदिह ग्राह्यमित्यर्थः तद्वक्ष्ये । तदेवाह—बायरनिगोयविग्गहगइयाई जत्थ समहिया अन्ने । गोला हुज्ज सुबहुला नेच्छइयपयं तदुक्कोसं ॥ १० ॥ बादरनिगोदानां—कन्दादीनां विग्रहगतिकादयो बादरनिगोदविग्रहगतिकादयः, आदिशब्दश्चेहाविग्रहगतिकावरोधार्थः, यत्रोत्कृष्टपदे समधिका अन्ये—सूक्ष्मनिगोदगोलकेभ्योऽपरे गोलका भवेयुः सुबहवो नैश्चयिकपदं तदुत्कर्षं, बादरनिगोदा हि पृथिव्यादिषु पृथ्व्यादयश्च स्वस्थानेषु स्वरूपतो भवन्ति न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥५२९॥

सूक्ष्मनिगोदवत्सर्वत्रेत्यतो यत्र क्वचित्ते भवन्ति तदुत्कृष्टपदं तात्त्विकमिति भावः। एतदेव दर्शयन्नाह–इहरा पडुच्च सुहुमा बहुतुल्ला पायसो सगलगोला। तो बायराइगहणं कीरइ उक्कोसयपयंमि ॥ ११ ॥ 'इहर'त्ति बादरनिगोदाश्रयणं विना सूक्ष्मनिगोदान् प्रतीत्य बहुतुल्याः–निगोदसङ्ख्यया समानाः प्रायशः, प्रायोग्रहणमेकादिना न्यूनाधिकत्वे व्यभिचार-परिहारार्थं, क एते ? इत्याह–सकलगोलाः, न तु खण्डगोलाः, अतो न नियतं किञ्चिदुत्कृष्टपदं लभ्यते, यत एवं ततो बादरनिगोदादिग्रहणं क्रियते उत्कृष्टपदे ॥ अथ गोलकादीनां प्रमाणमाह–गोला य असंखेज्जा होंति निओया असंखया गोले। एक्केको उ निगोओ अणंतजीवो मुणेयव्वो ॥ १२ ॥ अथ जीवप्रदेशपरिमाणप्ररूपणापूर्वकं निगोदादीनामवगाह-नामानमभिधित्सुराह—लोगस्स य जीवस्स य होन्ति पएसा असंखया तुल्ला। अंगुलअसंखभागो निगोयजियगोलगो-गाहो ॥ १३ ॥ लोकजीवयोः प्रत्येकमसङ्ख्येयाः प्रदेशा भवन्ति ते च परस्परेण तुल्या एव, एषां च सङ्कोचविशेषाद् अङ्गु-लासङ्ख्येयभागो निगोदस्य तज्जीवस्य गोलकस्य चावगाह इति निगोदादिसमावगाहना। तामेव समर्थयन्नाह—जंमि जिओ तंमेव उ निगोअ तो तम्मि चेव गोलोवि। निप्फज्जइ जं खेत्ते तो ते तुल्लावगाहणया ॥ १४ ॥ यस्मिन् क्षेत्रे जीवो-ऽवगाहते तस्मिन्नेव निगोदो, निगोदव्याप्या जीवस्यावस्थानात्, 'तो'त्ति ततः–तदनन्तरं तस्मिन्नेव गोलोऽपि निष्प-द्यते, विवक्षितनिगोदावगाहनातिरिक्तायाः शेषनिगोदावगाहनाया गोलकान्तरप्रवेशेन निगोदमात्रत्वाद् गोलकावगाह-नाया इति, यद्–यस्मात्क्षेत्रे–आकाशे ततस्ते–जीवनिगोदगोलाः 'तुल्यावगाहनाकाः' समानावगाहनाका इति। अथ जीवा-द्यवगाहनासमतासामर्थ्येन यदेकत्र प्रदेशे जीवप्रदेशमानं भवति तद्भिधित्सुस्तत्प्रस्तावनार्थं प्रश्नं कारयन्नाह—उक्कोसपय-

११ शतके १० उद्देशः निगोदषट्-त्रिंशिका सू ४२३

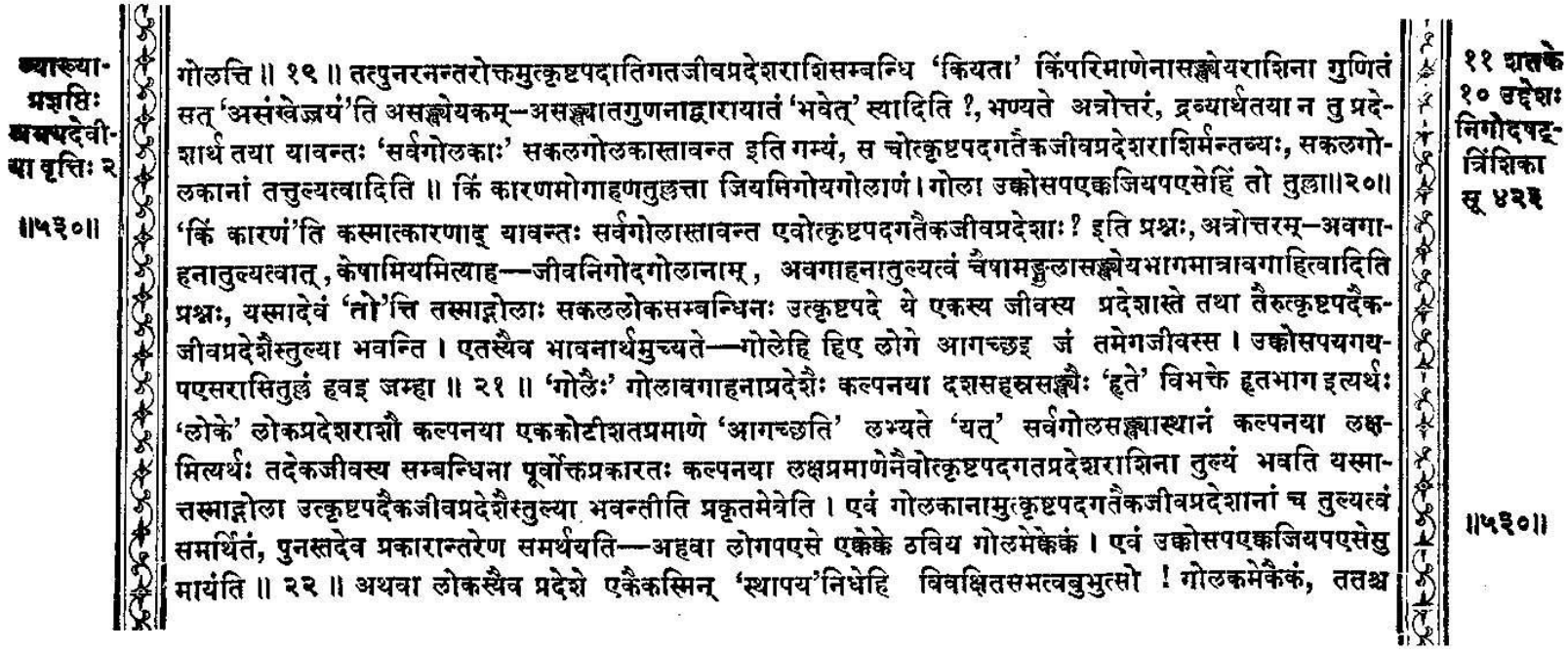
॥५२९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निगोद-षट्त्रिंशिका

पएसे किमेगजीवप्पएसरासिस्स । होज्जेगनिगोयस्स व गोलस्स व किं समोगाढं ? ॥ १५ ॥ तत्र जीवमाश्रित्योत्तरम्—
जीवस्स लोगमेत्तस्स सुहुमओगाहणावगाढस्स । एक्केक्कंमि पएसे होंति पएसा असंखेज्जा ॥ १६ ॥ ते च किल कल्पनया
कोटीशतसङ्ख्यस्य जीवप्रदेशराशेः प्रदेशदशसहस्रीस्वरूपजीवावगाहनया भागे हृते लक्ष्यमाना भवन्तीति ॥ अथ निगोदमा-
श्रित्याह—लोगस्स हिए भागे निगोयओगाहणाएँ जं लद्धं । उक्कोसपएऽतिगयं एत्तियमेक्केकजीवाओ ॥ १७ ॥ 'लोकस्य'
कल्पनया प्रदेशकोटीशतमानस्य हृते भागे निगोदावगाहनया कल्पनातः प्रदेशदशसहस्रीमानया यल्लब्धं तच्च किल लक्ष-
परिमाणमुत्कृष्टपदेऽतिगतं–अवगाढमेतावदेकैकजीवात्, अनन्तजीवात्मकनिगोदसम्बन्धिन एकैकजीवसत्कमित्यर्थः ।
अनेन निगोदसत्कमुत्कृष्टपदे यदवगाढं तद्दर्शितमथ गोलकसत्कं यत्तत्रावगाढं तद्दर्शयति—एवं दव्वट्ठाओ सव्वेसिं एक-
गोलजीवाणं । उक्कोसपयमइगया होंति पएसा असंखगुणा ॥ १८ ॥ यथा निगोदजीवेभ्योऽसङ्ख्येयगुणास्तत्प्रदेशा उत्कृ-
ष्टपदेऽतिगता एवं 'द्रव्यार्थात्' द्रव्यार्थतया न तु प्रदेशार्थतया 'सव्वेसिं'ति सर्वेभ्य एकगोलगतजीवद्रव्येभ्यः सका-
शादुत्कृष्टपदमतिगता भवन्ति प्रदेशा असङ्ख्यातगुणाः । इह किलानन्तजीवोऽपि निगोदः कल्पनया लक्षजीवः, गोलक-
श्चासङ्ख्यातनिगोदोऽपि कल्पनया लक्षनिगोदः, ततश्च लक्षस्य लक्षगुणने कोटीसहस्रसङ्ख्याः कल्पनया गोलके जीवा
भवन्ति, तत्प्रदेशानां च लक्षं लक्षमुत्कृष्टपदेऽतिगतं, अतश्चैकगोलकजीवसङ्ख्यया लक्षगुणने कोटीकोटीदशकसङ्ख्या एकत्र
प्रदेशे कल्पनया जीवप्रदेशा भवन्तीति । गोलकजीवेभ्य सकाशादेकत्र प्रदेशेऽसङ्ख्येयगुणा जीवप्रदेशा भवन्तीत्युक्तमथ तत्र
गुणकारराशेः परिमाणनिर्णयार्थमुच्यते—तं पुण केवइएणं गुणियमसंखेज्जयं भवेज्जाहि । भन्नइ दव्वट्ठाइ जावइया सव्व-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



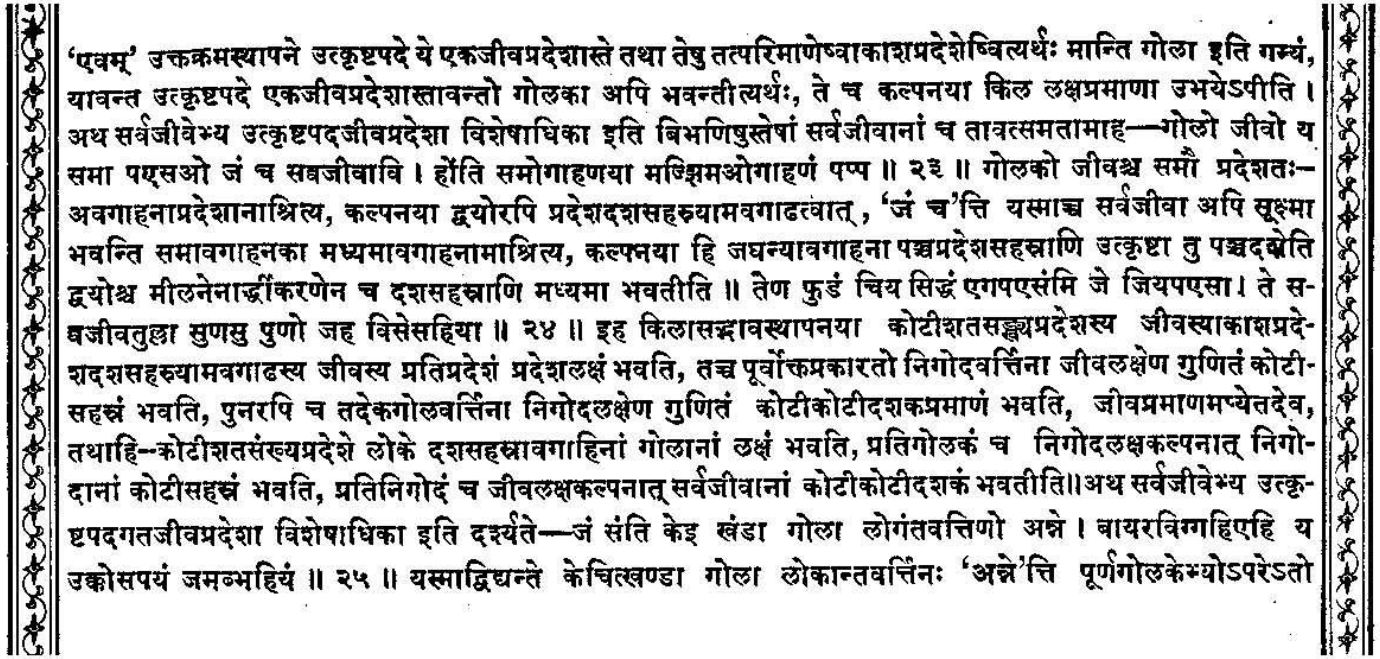
व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५३०॥

गोलत्ति ॥ १९ ॥ तत्पुनरनन्तरोक्तमुत्कृष्टपदातिगतजीवप्रदेशराशिसम्बन्धि 'कियता' किंपरिमाणेनासङ्ख्येयराशिना गुणितं सत् 'असंखेज्जयं'ति असङ्ख्येयकम्–असङ्ख्यातगुणनाद्वारायातं 'भवेत्' स्यादिति ?, भण्यते अत्रोत्तरं, द्रव्यार्थतया न तु प्रदेशार्थ तया यावन्तः 'सर्वगोलकाः' सकलगोलकास्तावन्त इति गम्यं, स चोत्कृष्टपदगतैकजीवप्रदेशराशिर्मन्तव्यः, सकलगोलकानां तत्तुल्यत्वादिति ॥ किं कारणमोगाहणतुल्लत्ता जियमिगोयगोलाणं। गोला उक्कोसपएकजियपएसेहिं तो तुल्ला॥२०॥ 'किं कारणं'ति कस्मात्कारणाद् यावन्तः सर्वगोलास्तावन्त एवोत्कृष्टपदगतैकजीवप्रदेशाः ? इति प्रश्नः, अत्रोत्तरम्–अवगाहनातुल्यत्वात्, केषामियमित्याह—जीवनिगोदगोलानाम्, अवगाहनातुल्यत्वं चैषामङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्रावगाहित्वादिति प्रश्नः, यस्मादेवं 'तो'त्ति तस्माद्गोलाः सकललोकसम्बन्धिनः उत्कृष्टपदे ये एकस्य जीवस्य प्रदेशास्ते तथा तैरुत्कृष्टपदैकजीवप्रदेशैस्तुल्या भवन्ति । एतस्यैव भावनार्थमुच्यते—गोलेहि हिए लोगे आगच्छइ जं तमेगजीवस्स । उक्कोसपयगयपएसरासितुलं हवइ जम्हा ॥ २१ ॥ 'गोलैः' गोलावगाहनाप्रदेशैः कल्पनया दशसहस्रसङ्ख्यैः 'हृते' विभक्ते हृतभाग इत्यर्थः 'लोके' लोकप्रदेशराशौ कल्पनया एककोटीशतप्रमाणे 'आगच्छति' लभ्यते 'यत्' सर्वगोलसङ्ख्यास्थानं कल्पनया लक्षमित्यर्थः तदेकजीवस्य सम्बन्धिना पूर्वोक्तप्रकारतः कल्पनया लक्षप्रमाणेनैवोत्कृष्टपदगतप्रदेशराशिना तुल्यं भवति यस्मात्तस्माद्गोला उत्कृष्टपदैकजीवप्रदेशैस्तुल्या भवन्तीति प्रकृतमेवेति । एवं गोलकानामुत्कृष्टपदगतैकजीवप्रदेशानां च तुल्यत्वं समर्थितं, पुनस्तदेव प्रकारान्तरेण समर्थयति—अहवा लोगपएसे एक्केके ठविय गोलमेक्केक्कं । एवं उक्कोसपएकजियपएसेसु मायंति ॥ २२ ॥ अथवा लोकस्यैव प्रदेशे एकैकस्मिन् 'स्थापय'निधेहि विवक्षितसमत्वबुभुत्सो ! गोलकमेकैकं, ततश्च

११ शतके १० उद्देशः निगोदषट्त्रिंशिका सू ४२३

॥५३०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



'एवम्' उक्तक्रमस्थापने उत्कृष्टपदे ये एकजीवप्रदेशास्ते तथा तेषु तत्परिमाणेष्वाकाशप्रदेशेष्वित्यर्थः मान्ति गोला इति गम्यं, यावन्त उत्कृष्टपदे एकजीवप्रदेशास्तावन्तो गोलका अपि भवन्तीत्यर्थः, ते च कल्पनया किल लक्षप्रमाणा उभयेऽपीति। अथ सर्वजीवेभ्य उत्कृष्टपदजीवप्रदेशा विशेषाधिका इति बिभणिषुस्तेषां सर्वजीवानां च तावत्समतामाह—गोलो जीवो य समा पएसओ जं च सव्वजीवावि। होंति समोगाहणया मज्झिमओगाहणं पप्प ॥ २३ ॥ गोलको जीवश्च समौ प्रदेशतः—अवगाहनाप्रदेशानाश्रित्य, कल्पनया द्वयोरपि प्रदेशदशसहस्रयामवगाढत्वात्, 'जं च'त्ति यस्माच्च सर्वजीवा अपि सूक्ष्मा भवन्ति समावगाहनका मध्यमावगाहनामाश्रित्य, कल्पनया हि जघन्यावगाहना पञ्चप्रदेशसहस्राणि उत्कृष्टा तु पञ्चदशेति द्वयोश्च मीलनेनार्द्धीकरणेन च दशसहस्राणि मध्यमा भवतीति ॥ तेण फुडं चिय सिद्धं एगपएसंमि जे जियपएसा। ते सव्वजीवतुल्ला सुणसु पुणो जह विसेसहिया ॥ २४ ॥ इह किलासद्भावस्थापनया कोटीशतसङ्ख्यप्रदेशस्य जीवस्याकाशप्रदेशदशसहस्रयामवगाढस्य जीवस्य प्रतिप्रदेशं प्रदेशलक्षं भवति, तच्च पूर्वोक्तप्रकारतो निगोदवर्त्तिना जीवलक्षेण गुणितं कोटीसहस्रं भवति, पुनरपि च तदेकगोलवर्त्तिना निगोदलक्षेण गुणितं कोटीकोटीदशकप्रमाणं भवति, जीवप्रमाणमप्येतदेव, तथाहि--कोटीशतसंख्यप्रदेशे लोके दशसहस्रावगाहिनां गोलानां लक्षं भवति, प्रतिगोलकं च निगोदलक्षकल्पनात् निगोदानां कोटीसहस्रं भवति, प्रतिनिगोदं च जीवलक्षकल्पनात् सर्वजीवानां कोटीकोटीदशकं भवतीति॥अथ सर्वजीवेभ्य उत्कृष्टपदगतजीवप्रदेशा विशेषाधिका इति दर्श्यते—जं संति केइ खंडा गोला लोगंतवत्तिणो अन्ने। बायरविग्गहिएहिं य उक्कोसपयं जमब्भहियं ॥ २५ ॥ यस्माद्विद्यन्ते केचित्खण्डा गोला लोकान्तवर्त्तिनः 'अन्ने'त्ति पूर्णगोलकेभ्योऽपरेऽतो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५३१॥

जीवराशिः कल्पनया कोटीकोटीदशकरूप ऊनो भवति पूर्णगोलकतायामेव तस्य यथोक्तस्य भावात्, ततश्च येन जीव-राशिना खण्डगोलका पूर्णीभूताः स सर्वजीवराशेरपनीयते असद्भूतत्वात्तस्य, स च किल कल्पनया कोटीमानः, तत्र चापनीते सर्वजीवराशिः स्तोकतरो भवति, उत्कृष्टपदं तु यथोक्तप्रमाणमेवेति तत्त्वतो विशेषाधिकं भवति, समता पुनः खण्डगोलानां पूर्णताविवक्षणादुक्तेति, तथा बादरविग्रहिकैश्च–बादरनिगोदादिजीवप्रदेशैश्चोत्कृष्टपदं यद्–यस्मात्सर्वजीव-राशेरभ्यधिकं ततः सर्वजीवेभ्य उत्कृष्टपदे जीवप्रदेशा विशेषाधिका भवन्तीति, इयमत्र भावना–बादरविग्रहगतिकादी-नामनन्तानां जीवानां सूक्ष्मजीवासङ्ख्येयभागवर्त्तिनां कल्पनया कोटीप्रायसङ्ख्यानां पूर्वोक्तजीवराशिप्रमाणे प्रक्षेपणेन समताप्राप्तावपि तस्य बादरादिजीवराशेः कोटीप्रायसङ्ख्यस्य मध्यादुत्कर्षतोऽसङ्ख्येयभागस्य कल्पनया शतसङ्ख्यस्य विव-क्षितसूक्ष्मगोलकावगाहनायामवगाहनात् एकैकस्मिंश्च प्रदेशे प्रत्येकं जीवप्रदेशलक्षस्यावगाढत्वात् लक्षस्य च शतगुणत्वेन कोटीप्रमाणत्वात् तस्याश्चोत्कृष्टपदे प्रक्षेपात्पूर्वोक्तमुत्कृष्टपदजीवप्रदेशमानं कोट्याऽधिकं भवतीति । यस्मादेवं—तम्हा सबेहिंतो जीवेहिंतो फुडं गहेयबं । उक्कोसपयपएसा होंति विसेसाहिया नियमा ॥ २६ ॥ इदमेव प्रकारान्तरेण भाव्यते–अहवा जेण बहुसमा सुहुमा लोएऽवगाहणाए य । तेणेक्केकं जीवं बुद्धीऍ विरलए लोए ॥ २७ ॥ यतो बहुसमाः–प्रायेण समाना जीवसङ्ख्यया कल्पनया एकैकावगाहनायां जीवकोटीसहस्रस्यावस्थानात्, खण्डगोलकैर्व्यभिचार-परिहारार्थं चेह बहुग्रहणं, 'सूक्ष्माः' सूक्ष्मनिगोदगोलकाः कल्पनया लक्षकल्पाः 'लोके' चतुर्दशरज्वात्मके, तथा-ऽवगाहनया च समाः, कल्पनया दशसु दशसु प्रदेशसहस्रेष्ववगाढत्वात्, तस्मादेकप्रदेशावगाढजीवप्रदेशानां सर्वजी-

११ शतके १० उद्देशः निगोदषट्-त्रिंशिका सू ४२३

॥५३१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निगोद-षट्त्रिंशिका

वानां च समतापरिज्ञानार्थमेकैकं जीवं बुद्ध्या 'विरल्लए'त्ति केवलिसमुद्घातगत्या विस्तारयेल्लोके, अयमत्र भावार्थः— यावन्तो गोलकस्यैकत्र प्रदेशे जीवप्रदेशा भवन्ति कल्पनया कोटीरदशकप्रमाणास्तावन्त एव विस्तारितेषु जीवेषु लोकस्यैकत्र प्रदेशे ते भवन्ति, सर्वजीवा अप्येतत्समाना एवेति, अत एवाह—एवंपि समा जीवा एगपएसगयजियपएसेहिं । बायरबाहुल्ला पुण होंति पएसा विसेसहिया ॥ २८ ॥ एवमपि न केवलं 'गोलो जीवो य समा' इत्यादिना पूर्वोक्तन्यायेन समा जीवा एकप्रदेशगतैर्जीवप्रदेशैरिति, उत्तरार्द्धस्य तु भावना प्राग्वदवसेयेति । अथ पूर्वोक्तराशीनां निदर्शनान्यभिधित्सुः प्रस्तावयन्नाह—तेसिं पुण रासीणं निदरिसणमिणं भणामि पच्चक्खं । सुहगहणगाहणत्थं ठवणारासिप्पमाणेहिं ॥ २९ ॥ गोलाण लक्खमेकं गोले २ निगोयलक्खं तु । एक्केक्कं य निगोए जीवाणं लक्खमेक्केक्कं ॥ ३० ॥ कोडिसयमेगजीवप्पएसमाणं तमेव लोगस्स । गोलनिगोयजियाणं दस उ सहस्सा समोगाहो ॥३१॥ जीवस्सेक्केक्कस्स य दससाहस्सावगाहिणो लोगे । एक्केक्कंमि पएसे पएसलक्खं समोगाढं ॥ ३२ ॥ जीवसयस्स जहन्ने पयंमि कोडी जियप्पएसाणं । ओगाढा उक्कोसे पयंमि वोच्छं पएसग्गं ॥ ३३ ॥ कोडिसहस्सजियाणं कोडाकोडीदसप्पएसाणं । उक्कोसे ओगाढा सव्वजियाऽवेत्तिया चेव ॥ ३४ ॥ कोडी उक्कोसपयंमि बायरजियप्पएसपक्खेवो । सोहणयमेत्तियं चिय कायव्वं खंडगोलाणं ॥ ३५ ॥ उत्कृष्टपदे सूक्ष्मजीवप्रदेशराशेरुपरि कोटीप्रमाणो बादरजीवप्रदेशानां प्रक्षेपः कार्यः, शतकल्पत्वाद्विवक्षितसूक्ष्मगोलकावगाढबादरजीवानां, तेषां च प्रत्येकं प्रदेशलक्षस्योत्कृष्टपदेऽवस्थितत्वात्, तन्मीलने च कोटीसद्भावादिति, तथा सर्वजीवराशेर्मध्याच्छोधनकं–अपनयनम् 'एत्तियं चिय'त्ति एतावतामेव–कोटीसङ्ख्यानामेव कर्त्तव्यं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४२१--४२३]

दीप अनुक्रम [५११--५१३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५३२॥

'खण्डगोलानां' खण्डगोलकपूर्णताकरणे नियुक्तजीवानां तेषामसङ्ख्याविकत्वादिति ॥ एएसिं जहासंभवमत्थोवणयं करेज्ज रासीणं । सब्भावओ य जाणिज्ज ते अणंता असंखा वा ॥ ३६ ॥ इहार्थोपनयो यथास्थानं प्रायः प्राग् दर्शित एव, 'अणंत'त्ति निगोदे जीवा यद्यपि लक्षमाना उक्तास्तथाऽप्यनन्ताः, एवं सर्वजीवा अपि, तथा निगोदादयो ये लक्षमाना उक्तास्तेऽप्यसङ्ख्येया अवसेया इति ॥ एकादशशते दशमोद्देशकः समाप्तः ॥ ११–१० ॥

अनन्तरोद्देशके लोकवक्तव्यतोक्ता, इह तु लोकवर्त्तिकालद्रव्यवक्तव्यतोच्यते, इत्येवंसम्बद्धस्यास्यैकादशोद्देशकस्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे नामं नगरे होत्था वन्नओ, दूतिपलासे चेइए वन्नओ जाव पुढविसिलापट्टओ, तत्थ णं वाणियगामे नगरे सुदंसणे नामं सेट्ठी परिवसइ अड्ढे जाव अपरिभूए समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ, सामी समोसढे जाव परिसा पज्जुवासइ, तए णं से सुदंसणे सेट्ठी इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठे ण्हाए कय जाव पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए साओ गिहाओ पडिनिक्खमइ साओ गिहाओ पडिनिक्खमित्ता सकोरेंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं पायविहारचारेणं महया पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ते वाणियगामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छित्ता जेणेव दूतिपलासे चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं पंचवि-

११ शतके ११ उद्देशः कालस्वरूपं सू ४२४

॥५३२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकादशमे शतके दशम-उद्देशकः परिसमाप्तः

अथ एकादशमे शतके एकादशम-उद्देशकः आरभ्यते

निगोद-षट्त्रिंशिका

प्रत सूत्रांक [४२४]

दीप अनुक्रम [५१४]

हेणं अभिगमेणं अभिगच्छति, तं०– सचित्ताणं दव्वाणं जहा उसभदत्तो जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ । तए णं समणे भगवं महावीरे सुदंसणस्स सेट्ठिस्स तीसे य महतिमहालयाए जाव आराहए भवइ। तए णं से सुदंसणे सेट्ठी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० उट्ठाए उट्ठेइ२त्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी–कइविहे णं भंते ! काले पन्नत्ते ?, सुदंसणा ! चउव्विहे काले पन्नत्ते, तंजहा–पमाणकाले १ अहाउनिव्वत्तिकाले २ मरणकाले ३ अद्धाकाले ४, से किं तं पमाणकाले ?, २ दुविहे पन्नत्ते, तंजहा—दिवसप्पमाणकाले १ राइप्पमाणकाले य २, चउपोरिसिए दिवसे चउपोरिसिया राई भवइ (सू० ४२४) ॥

'तेण'मित्यादि, 'पमाणकाले'त्ति प्रमीयते–परिच्छिद्यते येन वर्षशतादि तत् प्रमाणं स चासौ कालश्चेति प्रमाणकालः प्रमाणं वा–परिच्छेदनं वर्षादेस्तत्प्रधानस्तदर्थो वा कालः प्रमाणकालः–अद्धाकालस्य विशेषो दिवसादिलक्षणः, आह च– "दुविहो पमाणकालो दिवसपमाणं च होइ राई य । चउपोरिसिओ दिवसो राई चउपोरिसी चेव ॥ १ ॥ " [द्विविधः प्रमाणकालो दिवसप्रमाणश्च भवति रात्रिश्च । चतुष्पौरुषीको दिवसो रात्रिश्चतुष्पौरुषीका चैव ॥ १ ॥] 'अहाउनिव्वत्तिकाले'त्ति यथा–येन प्रकारेणायुषो निर्वृत्तिः–बन्धनं तथा यः कालः–अवस्थितिरसौ यथायुर्निर्वृत्तिकालो–नारकाद्यायुष्कलक्षणः, अयं चाद्धाकाल एवायुःकर्मानुभवविशिष्टः सर्वेषामेव संसारिजीवानां स्यात्, आह च—"नेरइयतिरियमणुया देवाण अहाउयं तु जं जेणं । निवत्तियमन्नभवे पालेंति अहाउकालो सो ॥ १ ॥ " [नैरयिकतिर्यग्मनुजानां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४२४]

दीप अनुक्रम [५१४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५३३॥

देवानामथायुर्यद्येनान्यस्मिन् भवे निर्वर्त्तितं तथा पालयन्ति स यथाऽऽयुष्कालः ॥ २ ॥] 'मरणकाले'त्ति मरणेन किअद्धा–शिष्टः कालः मरणकालः–अद्धाकालः एव, मरणमेव वा कालो मरणस्य कालपर्यायत्वान्मरणकालः, 'अद्धाकाले'त्ति समयादयो विशेषास्तद्रूपः कालोऽद्धाकालः–चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्त्ती समयादिः, आह च— "समयावलियमुहुत्ता दिवसअहोरत्तपक्खमासा य । संवच्छरजुगपलिया सागरओस्सप्पिपरियट्टा ॥ १ ॥ " [समय आवलिका मुहूर्त्तो दिवसोऽहोरात्रं पक्षो मासश्च । संवत्सरो युगं पल्यः सागर उत्सर्पिणी परावर्त्तः ॥ १ ॥] इति । अनन्तरं चतुष्पौरुषीको दिवसश्चतुष्पौरुषीका च रात्रिर्भवतीत्युक्तमथ पौरुषीमेव प्ररूपयन्नाह—

उक्कोसिया अद्धपंचमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, जदा णं भंते ! उक्कोसिया अद्धपंचमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवति तदा णं कतिभागमुहुत्तभागेणं परिहायमाणी परि० २ जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवति ?, जदा णं जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवति तदा णं कतिभागमुहुत्तभागेणं परिवड्ढमाणी २ उक्कोसिया अद्धपंचमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ ?, सुदंसणा ! जदा णं उक्कोसिया अद्धपंचमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ तदा णं बावीससयभागमुहुत्तभागेणं परिहायमाणी परि० २ जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, जदा णं जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ तया णं बावीससयभागमुहुत्तभागेणं परिवड्ढमाणी

११ शतके ११ उद्देशः पौरुषीमानं सू ४२५

॥५३३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४२५]

दीप अनुक्रम [५१५]

परि० २ उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवति । कदा णं भंते ! उक्कोसिआ अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स राईए वा पोरिसी भवइ ? कदा वा जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ ?, सुदंसणा ! जदा णं उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ तदा णं उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स पोरिसी भवइ जहन्निया तिमुहुत्ता राईए पोरिसी भवइ, जया णं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्तिआ राई भवति जहन्निए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ तदा णं उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता राईए पोरिसी भवइ जहन्निया तिमुहुत्ता दिवसस्स पोरिसी भवइ । कदा णं भंते ! उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ ? कदा वा उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति जहन्नए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ ?, सुदंसणा ! आसाढपुन्निमाए उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ, पोसस्स पुन्निमाए णं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ जहन्नए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ ॥ अत्थि णं भंते ! दिवसा य राईओ य समा चेव भवन्ति ?, हंता ! अत्थि, कदा णं भंते ! दिवसा य राईओ य समा चेव भवन्ति ?, सुदंसणा ! चित्तासोयपुन्निमासु णं, एत्थ णं दिवसा य राईओ य समा चेव भवन्ति, पन्नरसमुहुत्ते दिवसे पन्नरसमुहुत्ता राई भवइ चउभागमुहुत्तभागूणा चउमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, सेत्तं पमाणकाले ॥ (सूत्रं ४२५) ॥

'उक्कोसिये'त्यादि, 'अद्धपंचमुहुत्त'त्ति अष्टादशमुहूर्त्तस्य दिवसस्य रात्रेर्वा चतुर्थो भागो यस्मादर्द्धपञ्चममुहूर्त्ता नव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

घटिका इत्यर्थः ततोऽर्द्धपञ्चमा मुहूर्त्ता यस्यां सा तथा,'तिमुहुत्त'त्ति द्वादशमुहूर्त्तस्य दिवसादेश्चतुर्थो भागस्त्रिमुहूर्त्तो भवति अतस्त्रयो मुहूर्त्ताः–षट् घटिका यस्यां सा तथा, 'कइभागमुहुत्तभागेणं'ति कतिभागः–कतिथभागस्तद्रूपो मुहूर्त्तभागः कतिभागमुहूर्त्तभागस्तेन, कतिथेन मुहूर्त्तांशेनेत्यर्थः 'बावीससयभागमुहुत्तभागेणं'ति इहार्द्धपञ्चमानां त्रयाणां च मुहूर्त्तानां विशेषः सार्द्धो मुहूर्त्तः, स च त्र्यशीत्यधिकेन दिवसशतेन वर्द्धते हीयते च, स च सार्द्धो मुहूर्त्तस्त्र्यशीत्यधिकशतभागतया व्यवस्थाप्यते, तत्र च मुहूर्त्ते द्वाविंशत्यधिकं भागशतं भवत्यतोऽभिधीयते–'बावीसे'त्यादि, द्वाविंशत्यधिकशततमभागरूपेण मुहूर्त्तभागेनेत्यर्थः। 'आसाढपुन्निमाए'इत्यादि, इह 'आषाढपौर्णमास्या'मिति यदुक्तं तत् पञ्चसंवत्सरिकयुगस्यान्तिमवर्षापेक्षयाऽवसेयं, यतस्तत्रैवाषाढपौर्णमास्यामष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति, अर्द्धपञ्चममुहूर्त्ता च तत्पौरुषी भवति, वर्षान्तरे तु यत्र दिवसे कर्कसङ्क्रान्तिर्जायते तत्रैवासौ भवतीति समवसेयमिति, एवं पौषपौर्णमास्यामप्यौचित्येन वाच्यमिति ॥ अनन्तरं रात्रिदिवसयोर्वैषम्यमभिहितं, अथ तयोरेव समतां दर्शयन्नाह—'अत्थि ण'मित्यादि, इह च 'चेत्तासोयपुन्निमाएसु ण'मित्यादि यदुच्यते तद्व्यवहारनयापेक्षं, निश्चयतस्तु कर्कमकरसङ्क्रान्तिदिनादारभ्य यद् द्विनवतितममहोरात्रं तस्यार्द्धे समा दिवरात्रिप्रमाणतेति, तत्र च पञ्चदशमुहूर्त्ते दिने रात्रौ वा पौरुषीप्रमाणं त्रयो मुहूर्त्तास्त्रयश्च मुहूर्त्तचतुर्भागा भवन्ति, दिनचतुर्भागरूपत्वात्तस्याः, एतदेवाह—'चउभागे'त्यादि, चतुर्भागरूपो यो मुहूर्त्तभागस्तेनोना चतुर्भागमुहूर्त्तभागोना चत्वारो मुहूर्त्ता यस्यां पौरुष्यां सा तथेति ॥

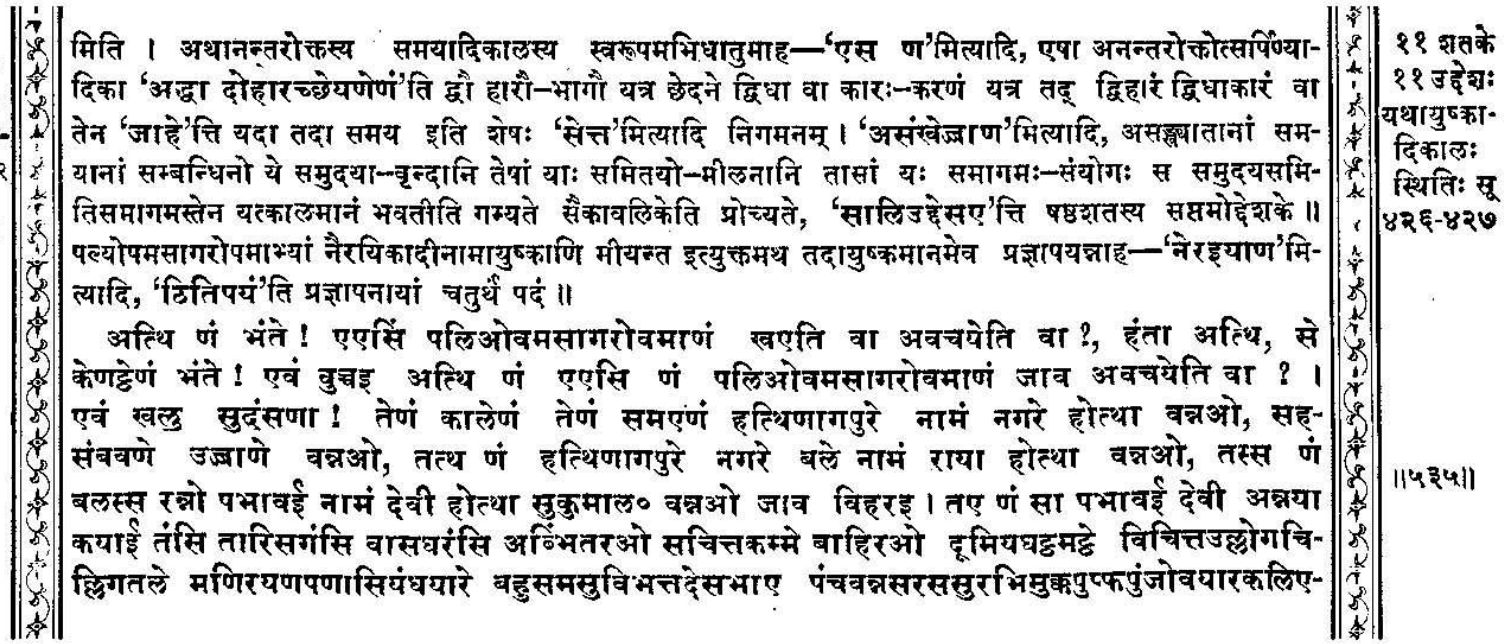
से किं तं अहाउनिव्वत्तिकाले ?, अहा० २ जन्नं जेणं नेरइएण वा तिरिक्खजोणिएण वा मणुस्सेण वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवेण वा अहाउयं निवत्तियं सेत्तं पालेमाणे अहाउनिवत्तिकाले। से किं तं मरणकाले ?, २ जीवो वा सरीराओ सरीरं वा जीवाओ, सेत्तं मरणकाले ॥ से किं तं अद्धाकाले ?, अद्धा० २ अणेगविहे पन्नत्ते, से णं समयट्ठयाए आवलियट्ठयाए जाव उस्सप्पिणीट्ठयाए । एस णं सुदंसणा ! अद्धा दोहारच्छेदेणं छिज्जमाणी जाहे विभागं नो हव्वमागच्छइ सेत्तं समए, समयट्ठयाए असंखेज्जाणं समयाणं समुदयसमिइसमागमेणं सा एगा आवलियत्ति पवुच्चइ, संखेज्जाओ आवलियाओ जहा सालिउद्देसए जाव सागरोवमस्स उ एगस्स भवे परिमाणं। एएहि णं भंते ! पलिओवमसागरोवमेहिं किं पयोयणं ?, सुदंसणा ! एएहिं पलिओवमसागरोवमेहिं नेरइयतिरिक्खजोणियमणुस्सदेवाणं आउयाइं मविज्जंति (सू० ४२६) ॥ नेरइयाणं भंते! केवइयं कालं ठिई पन्नत्ता ?, एवं ठिइपदं निरवसेसं भाणियव्वं जाव अजहन्नमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता (सूत्रं ४२७)

'से किं तं अहाउनिवत्तियकाले'इत्यादि, इह च 'जेणं'ति सामान्यनिर्देशे ततश्च येन केनचिन्नारकाद्यन्यतमेन 'अहाउयं निवत्तियं'ति यत्प्रकारमायुष्कं-जीवितमन्तर्मुहूर्त्तादि यथाऽऽयुष्कं 'निर्वर्त्तितं' निबद्धं। 'जीवो वा सरीरे'त्यादि, जीवो वा शरीरात् शरीरं वा जीवात् वियुज्यत इति शेषः, वाशब्दौ शरीरजीवयोरवधिभावस्येच्छानुसारिताप्रतिपादनार्थाविति ॥ 'से किं तं अद्धाकाले'इत्यादि, अद्धाकालोऽनेकविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—'समयट्ठयाए'त्ति समयरूपोऽर्थः समयार्थस्तद्भावस्तत्ता तया समयभावेनेत्यर्थः एवमन्यत्रापि, यावत्करणात् 'मुहुत्तट्ठयाए'इत्यादि दृश्य-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥५३५॥

मिति । अथानन्तरोक्तस्य समयादिकालस्य स्वरूपमभिधातुमाह—'एस ण'मित्यादि, एषा अनन्तरोक्तोत्सर्पिण्यादिका 'अद्धा दोहारच्छेयणेणं'ति द्वौ हारौ–भागौ यत्र छेदने द्विधा वा कारः–करणं यत्र तद् द्विहारं द्विधाकारं वा तेन 'जाहे'त्ति यदा तदा समय इति शेषः 'सेत्त'मित्यादि निगमनम् । 'असंखेज्जाण'मित्यादि, असङ्ख्यातानां समयानां सम्बन्धिनो ये समुदया–वृन्दानि तेषां याः समितयो–मीलनानि तासां यः समागमः–संयोगः स समुदयसमितिसमागमस्तेन यत्कालमानं भवतीति गम्यते सैकावलिकेति प्रोच्यते, 'सालिउद्देसए'त्ति षष्ठशतस्य सप्तमोद्देशके ॥ पल्योपमसागरोपमाभ्यां नैरयिकादीनामायुष्काणि मीयन्त इत्युक्तमथ तदायुष्कमानमेव प्रज्ञापयन्नाह—'नेरइयाण'मित्यादि, 'ठितिपयं'ति प्रज्ञापनायां चतुर्थं पदं ॥

अत्थि णं भंते ! एएसिं पलिओवमसागरोवमाणं खएति वा अवचयेति वा ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ अत्थि णं एएसि णं पलिओवमसागरोवमाणं जाव अवचयेति वा ? । एवं खलु सुदंसणा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं हत्थिणागपुरे नामं नगरे होत्था वन्नओ, सहसंबवणे उज्जाणे वन्नओ, तत्थ णं हत्थिणागपुरे नगरे बले नामं राया होत्था वन्नओ, तस्स णं बलस्स रन्नो पभावई नामं देवी होत्था सुकुमाल० वन्नओ जाव विहरइ । तए णं सा पभावई देवी अन्नया कयाई तंसि तारिसगंसि वासघरंसि अब्भिंतरओ सचित्तकम्मे बाहिरओ दूमियघट्ठमट्ठे विचित्तउल्लोगचिल्लिगतले मणिरयणपणासियंधयारे बहुसमसुविभत्तदेसभाए पंचवन्नसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिए-

११ शतके ११ उद्देशः यथायुष्कादिकालः स्थितिः सू ४२६-४२७

॥५३५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]

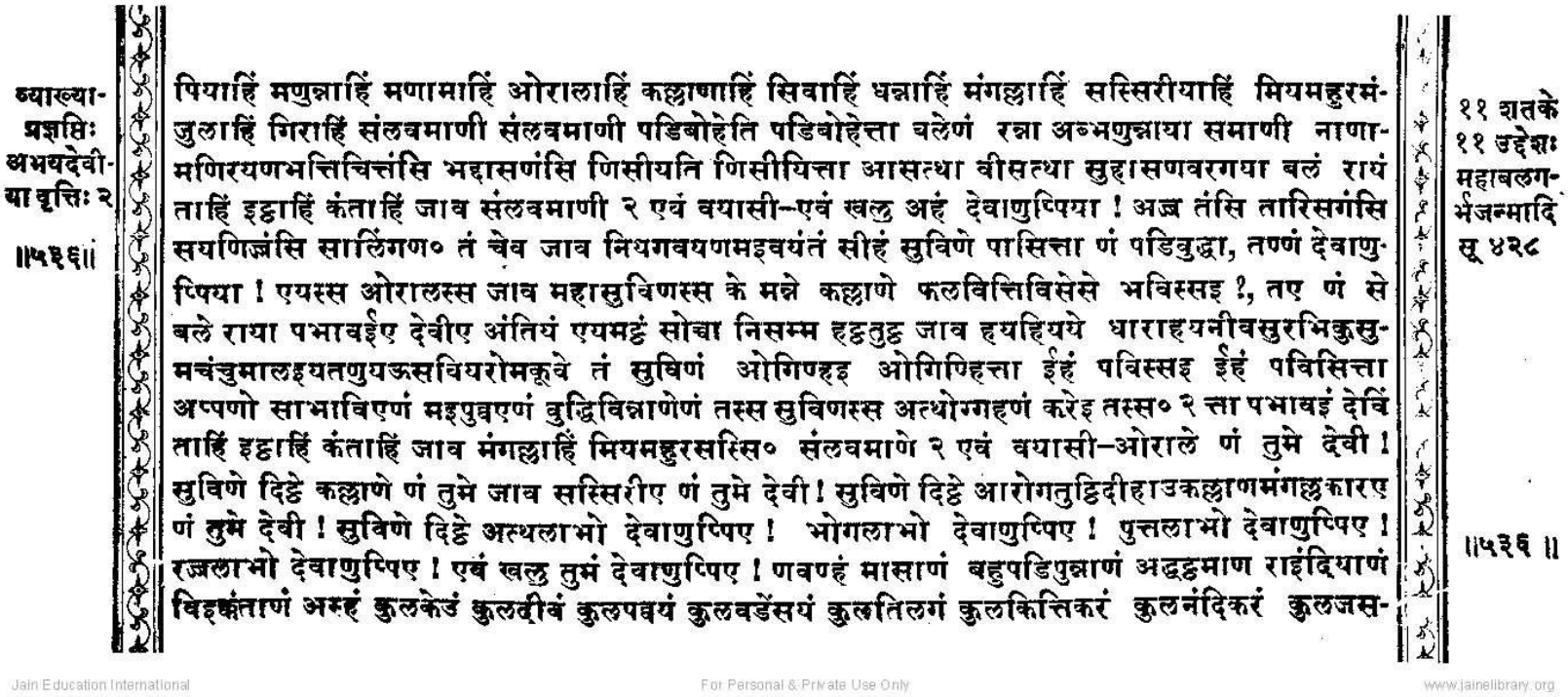
कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे सुगंधिवरगंधिए गंधवट्टिभूए तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए उभओ विब्बोयणे दुहओ उन्नए मज्झेणयगंभीरे गंगापुलिणवालुयउद्दालसालिसए उवचियखोमियदुगुल्लपट्टपडिच्छन्ने सुविरइयरयत्ताणे रत्तंसुयसंवुए सुरम्मे आइणगरूयबूरणवणीयतूलफासे सुगंधवरकुसुमचुन्नसयणोवयारकलिए अद्धरत्तकालसमयंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी २ अयमेयारूवं ओरालं कल्लाणं सिवं धन्नं मंगल्लं सस्सिरीयं महासुविणं पासित्ताणं पडिबुद्धा हाररययखीरसागररससंककिरणदगरयरययमहासेलपंडुरतरोरुरमणिज्जपेच्छणिज्जं थिरलट्ठपउट्ठवट्टपीवरसुसिलिट्ठविसिट्ठतिक्खदाढाविडंबियमुहं परिकम्मियजच्चकमलकोमलमाइयसोभंतलट्ठउट्ठं रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुजीहं मूसागयपवरकणगतावियआवत्तायंतवट्टतडिविमलसरिसनयणं विसालपीवरोरुं पडिपुन्नविमलखंधं मिउविसयसुहुमलक्खणपसत्थविच्छिन्नकेसरसडोवसोभियं ऊसियसुनिम्मियसुजायअप्फोडियलंगूलं सोमं सोमाकारं लीलायंतं जंभायंतं नहयलाओ ओवयमाणं नियगवयणमतिवयंतं सीहं सुविणे पासित्ताणं पडिबुद्धा। तए णं सा पभावती देवी अयमेयारूवं ओरालं जाव सस्सिरीयं महासुविणं पासित्ता णं पडिबुद्धा समाणी हट्ठतुट्ठ जाव हियया धाराहयकलंबपुप्फगं पिव समूससियरोमकूवा तं सुविणं ओगिण्हति ओगिण्हित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवलमसंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव बलस्स रन्नो सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता बलं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५३६॥

पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरीयाहिं मियमहुरसंजुलाहिं गिराहिं संलवमाणी संलवमाणी पडिबोहेति पडिबोहेत्ता बलेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि भद्दासणंसि णिसीयति णिसीयित्ता आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया बलं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव संलवमाणी २ एवं वयासी–एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगण० तं चेव जाव नियगवयणमइवयंतं सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा, तण्णं देवाणुप्पिया ! एयस्स ओरालस्स जाव महासुविणस्स के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ?, तए णं से बले राया पभावईए देवीए अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हयहियये धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइयतणुयऊसवियरोमकूवे तं सुविणं ओगिण्हइ ओगिण्हित्ता ईहं पविस्सइ ईहं पविसित्ता अप्पणो साभाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धिविन्नाणेणं तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करेइ तस्स० २ त्ता पभावइं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव मंगल्लाहिं मियमहुरसस्सि० संलवमाणे २ एवं वयासी–ओराले णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे कल्लाणे णं तुमे जाव सस्सिरीए णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे आरोगतुट्ठिदीहाउकल्लाणमंगल्लकारए णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे अत्थलाभो देवाणुप्पिए ! भोगलाभो देवाणुप्पिए ! पुत्तलाभो देवाणुप्पिए ! रज्जलाभो देवाणुप्पिए ! एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए ! णवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण राइंदियाणं विइक्कंताणं अम्हं कुलकेउं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडेंसयं कुलतिलगं कुलकित्तिकरं कुलनंदिकरं कुलजस-

११ शतके ११ उद्देशः महाबलग-र्भजन्मादि सू ४२८

॥५३६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]

करं कुलाधारं कुलपायवं कुलविवद्धणकरं सुकुमालपाणिपायं अहीण[पडि]पुन्नपंचिंदियसरीरं जाव ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं देवकुमारसमप्पभं दारगं पयाहिसि। सेऽवि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते सूरे वीरे विक्कंते वित्थिन्नविउलबलवाहणे रज्जवई राया भविस्सइ, तं उराले णं तुमे जाव सुमिणे दिट्ठे आरोग्गतुट्ठि जाव मंगल्लकारए णं तुमे देवी! सुविणे दिट्ठेत्तिकट्टु पभावतिं देविं ताहिं इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं दोच्चंपि तच्चंपि अणुवूहति। तए णं सा पभावती देवी बलस्स रन्नो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० करयल जाव एवं वयासी–एवमेयं देवाणुप्पिया! तहमेयं देवाणुप्पिया! अवितहमेयं देवाणुप्पिया! असंदिद्धमेयं दे० इच्छियमेयं देवाणुप्पिया! पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! से जहेयं तुज्झे वदहत्तिकट्टु तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ पडिच्छित्ता बलेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी णाणामणिरयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवल जाव गतीए जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता सयणिज्जंसि निसीयति निसीइत्ता एवं वयासी–मा मे से उत्तमे पहाणे मंगल्ले सुविणे अन्नेहिं पावसुमिणेहिं पडिहम्मिस्सइत्तिकट्टु देवगुरुजणसंबद्धाहिं पसत्थाहिं मंगल्लाहिं धम्मियाहिं कहाहिं सुविणजागरियं पडिजागरमाणी २ विहरति। तए णं से बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अज्ज सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं गंधोदयसित्तसुइयसंमज्जिओवलित्तं सुगंधवरपंचवन्नपुप्फो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५३७॥

वयारकलियं कालागुरुपवरकुंदुरुक्कजाव गंधवट्टिभूयं करेह य करावेह य करेत्ता करावेत्ता सीहासणं रएह सीहासणं रयावेत्ता ममेतं जाव पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबियजाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं जाव पच्चप्पिणंति, तए णं से बले राया पच्चूसकालसमयंसि सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेत्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ पायपीढाओ पच्चोरुहित्ता जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छति अट्टणसालं अणुपविसइ जहा उववाइए तहेव अट्टणसाला तहेव मज्जणघरे जाव ससिव पियदंसणे नरवई मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरच्छाभिमुहे निसीयइ निसीइत्ता अप्पणो उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए अट्ठ भद्दासणाइं सेयवत्थपच्चुत्थुयाइं सिद्धत्थगकयमंगलोवयाराइं रयावेइ रयावेत्ता अप्पणो अदूरसामंते णाणामणिरयणमंडियं अहियपेच्छणिज्जं महग्घवरपट्टणुग्गयं सण्हपट्टबहुभत्तिसयचित्तताणं ईहामियउसभजाव-भत्तिचित्तं अब्भिंतरियं जवणियं अंछावेइ अंछावेत्ता नाणामणिरयणभत्तिचित्तं अच्छरयमउयमसूरगोच्छगं सेयवत्थपच्चुत्थुयं अंगसुहफासुयं सुमउयं पभावतीए देवीए भद्दासणं रयावेइ रयावेत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अट्ठंगमहानिमित्तसुत्तत्थधारए विविहसत्थकुसले सुविणलक्खणपाढए सद्दावेह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पडिसुणेत्ता बलस्स रन्नो अंतियाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता सिग्घं तुरियं चवलं चंडं वेइयं हत्थिणपुरं नगरं मज्झंमज्झेणं

११ शतके ११ उद्देशः महाबलग-भंजन्मादि सू ४२८

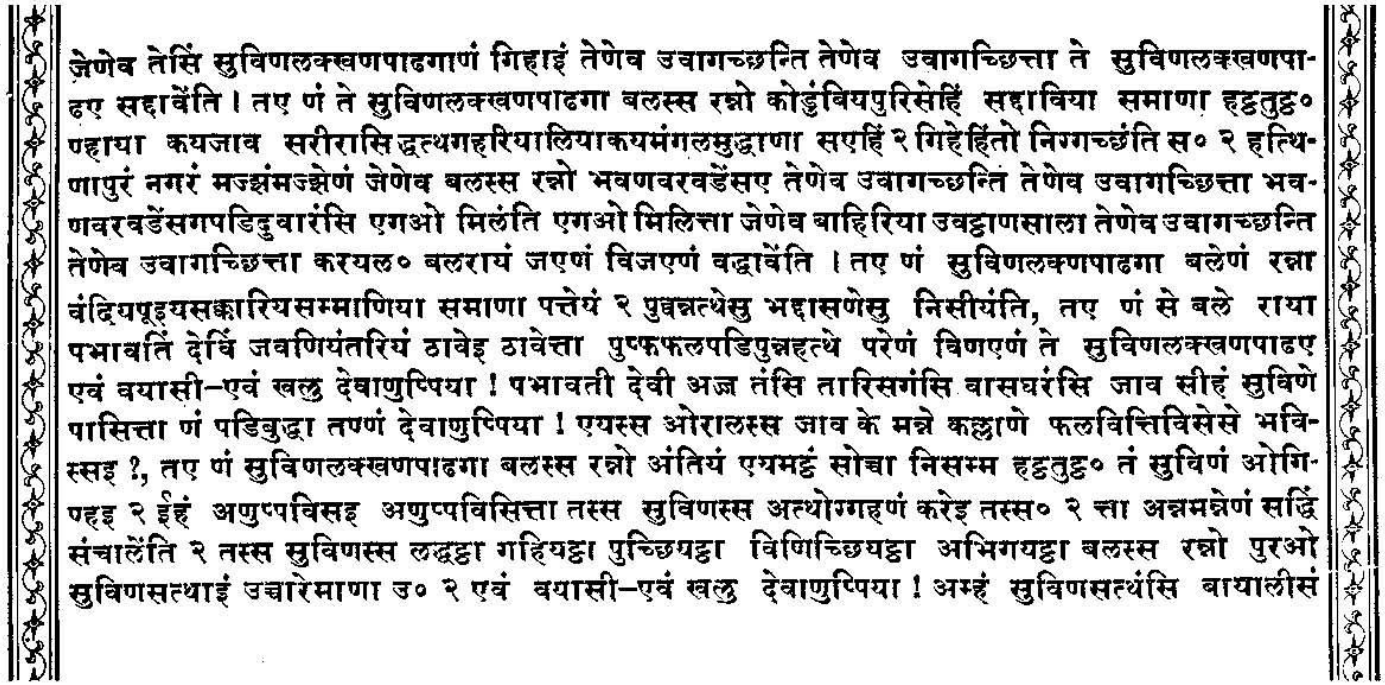
॥५३७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]



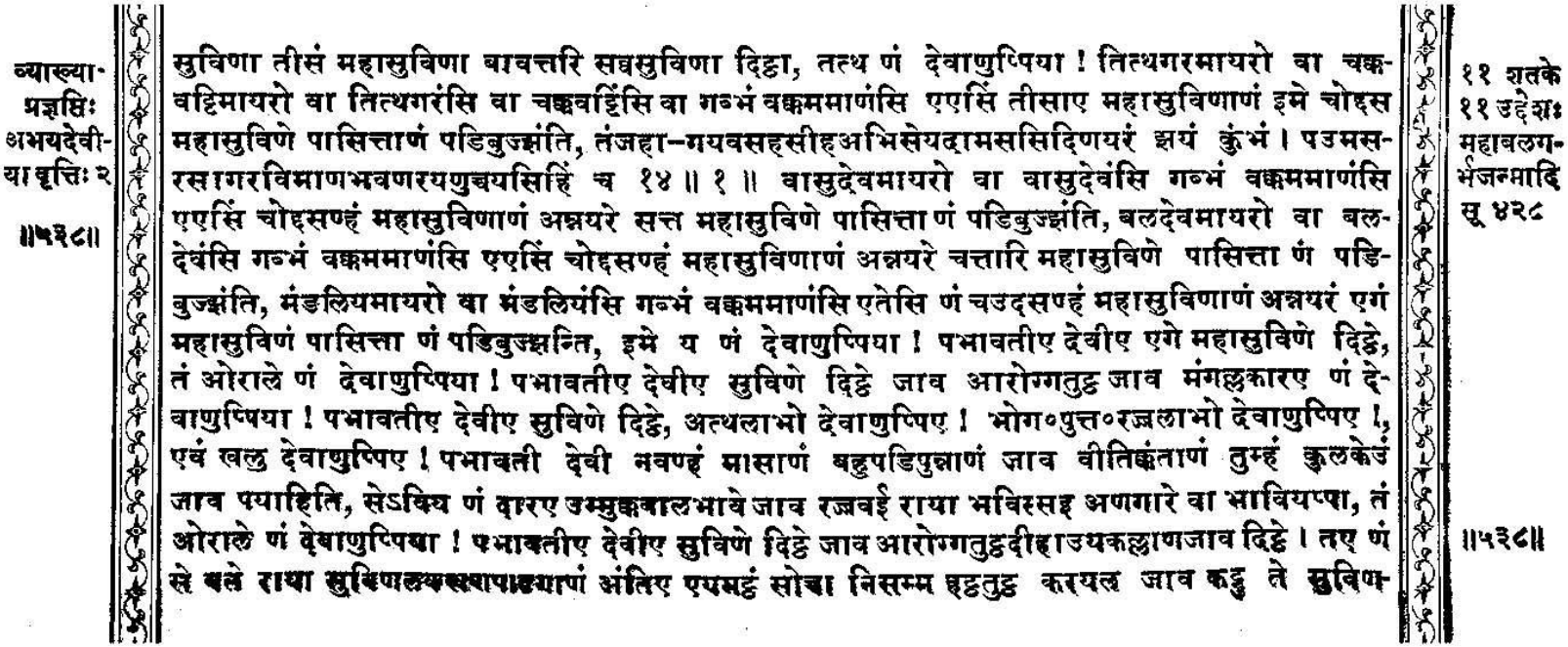
जेणेव तेसिं सुविणलक्खणपाढगाणं गिहाइं तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता ते सुविणलक्खणपाढए सद्दावेंति । तए णं ते सुविणलक्खणपाढगा बलस्स रन्नो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठ० ण्हाया कयजाव सरीरासिद्धत्थगहरियालियाकयमंगलमुद्धाणा सएहिं २ गिहेहिंतो निग्गच्छंति स० २ हत्थिणापुरं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव बलस्स रन्नो भवणवरवडेंसए तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता भवणवरवडेंसगपडिदुवारंसि एगओ मिलंति एगओ मिलित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता करयल० बलरायं जएणं विजएणं वद्धावेंति । तए णं सुविणलक्खणपाढगा बलेणं रन्ना वंदियपूइयसक्कारियसम्माणिया समाणा पत्तेयं २ पुव्वन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति, तए णं से बले राया पभावतिं देविं जवणियंतरियं ठावेइ ठावेत्ता पुप्फफलपडिपुन्नहत्थे परेणं विणएणं ते सुविणलक्खणपाढए एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! पभावती देवी अज्ज तंसि तारिसगंसि वासघरंसि जाव सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा तण्णं देवाणुप्पिया ! एयस्स ओरालस्स जाव के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ?, तए णं सुविणलक्खणपाढगा बलस्स रन्नो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० तं सुविणं ओगिण्हइ २ ईहं अणुप्पविसइ अणुप्पविसित्ता तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करेइ तस्स० २ त्ता अन्नमन्नेणं सद्धिं संचालेंति २ तस्स सुविणस्स लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अभिगयट्ठा बलस्स रन्नो पुरओ सुविणसत्थाइं उच्चारेमाणा उ० २ एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं सुविणसत्थंसि बायालीसं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५३८॥

सुविणा तीसं महासुविणा बावत्तरि सव्वसुविणा दिट्ठा, तत्थ णं देवाणुप्पिया ! तित्थगरमायरो वा चक्क-वट्टिमायरो वा तित्थगरंसि वा चक्कवट्टिंसि वा गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुविणाणं इमे चोद्दस महासुविणे पासित्ताणं पडिबुज्झंति, तंजहा–गयवसहसीहअभिसेयदामससिदिणयरं झयं कुंभं । पउमस-रसागरविमाणभवणरयणुच्चयसिहिं च १४ ॥ १ ॥ वासुदेवमायरो वा वासुदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुविणाणं अन्नयरे सत्त महासुविणे पासित्ताणं पडिबुज्झंति, बलदेवमायरो वा बल-देवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुविणाणं अन्नयरे चत्तारि महासुविणे पासित्ता णं पडि-बुज्झंति, मंडलियमायरो वा मंडलियंसि गब्भं वक्कममाणंसि एतेसि णं चउद्दसण्हं महासुविणाणं अन्नयरं एगं महासुविणं पासित्ता णं पडिबुज्झन्ति, इमे य णं देवाणुप्पिया ! पभावतीए देवीए एगे महासुविणे दिट्ठे, तं ओराले णं देवाणुप्पिया ! पभावतीए देवीए सुविणे दिट्ठे जाव आरोग्गतुट्ठ जाव मंगल्लकारए णं दे-वाणुप्पिया ! पभावतीए देवीए सुविणे दिट्ठे, अत्थलाभो देवाणुप्पिए ! भोग०पुत्त०रज्जलाभो देवाणुप्पिए !, एवं खलु देवाणुप्पिए ! पभावती देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं जाव वीतिक्कंताणं तुम्हं कुलकेउं जाव पयाहिति, सेऽवि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे जाव रज्जवई राया भविस्सइ अणगारे वा भावियप्पा, तं ओराले णं देवाणुप्पिया ! पभावतीए देवीए सुविणे दिट्ठे जाव आरोग्गतुट्ठदीहाउयकल्लाणजाव दिट्ठे । तए णं से बले राया सुविणलक्खणपाढगाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ करयल जाव कट्टु ते सुविण-

११ शतके ११ उद्देशः महाबलग-र्भजन्मादि सू ४२८

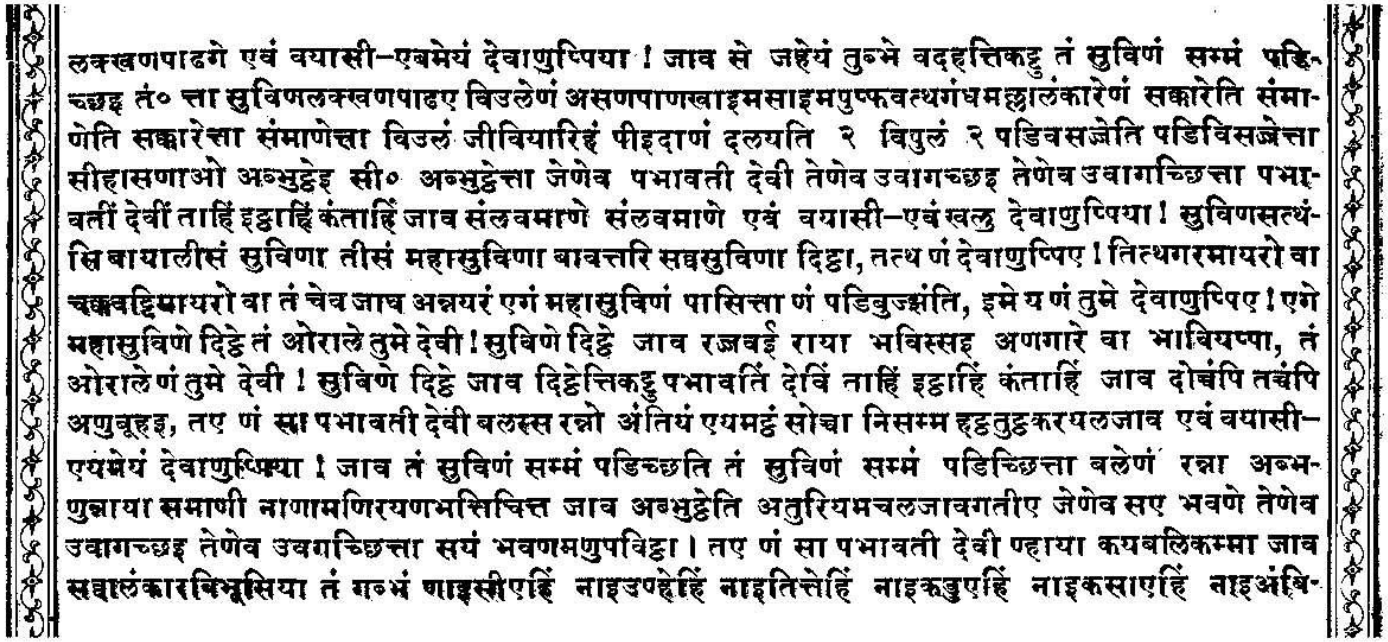
॥५३८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]



लक्खणपाढगे एवं वयासी–एवमेयं देवाणुप्पिया ! जाव से जहेयं तुब्भे वदहत्तिकट्टु तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ तं० त्ता सुविणलक्खणपाढए विउलेणं असणपाणखाइमसाइमपुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेति संमाणेति सक्कारेत्ता संमाणेत्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयति २ विपुलं २ पडिविसज्जेति पडिविसज्जेत्ता सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ सी० अब्भुट्ठेत्ता जेणेव पभावती देवी तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता पभावतीं देवीं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव संलवमाणे संलवमाणे एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! सुविणसत्थंसि बायालीसं सुविणा तीसं महासुविणा बावत्तरि सव्वसुविणा दिट्ठा, तत्थ णं देवाणुप्पिए ! तित्थगरमायरो वा चक्कवट्टिमायरो वा तं चेव जाव अन्नयरं एगं महासुविणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति, इमे य णं तुमे देवाणुप्पिए ! एगे महासुविणे दिट्ठे तं ओराले तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे जाव रज्जवई राया भविस्सइ अणगारे वा भावियप्पा, तं ओराले णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे जाव दिट्ठेत्तिकट्टु पभावतिं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव दोच्चंपि तच्चंपि अणुवूहइ, तए णं सा पभावती देवी बलस्स रन्नो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठकरयलजाव एवं वयासी–एयमेयं देवाणुप्पिया ! जाव तं सुविणं सम्मं पडिच्छति तं सुविणं सम्मं पडिच्छित्ता बलेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नाणामणिरयणभत्तिचित्ते जाव अब्भुट्ठेति अतुरियमचलजावगतीए जेणेव सए भवणे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता सयं भवणमणुपविट्ठा । तए णं सा पभावती देवी ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सव्वालंकारविभूसिया तं गब्भं णाइसीएहिं नाइउण्हेहिं नाइतित्तेहिं नाइकडुएहिं नाइकसाएहिं नाइअंबि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]

लेहिं नाइमहुरेहिं उज्जभयमाणसुहेहिं भोयणच्छायणगंधमल्लेहिं जं तस्स गब्भस्स हियं मितं पत्थं गब्भ-पोसणं तं देसे य काले य आहारमाहारेमाणी विवित्तमउएहिं सयणासणेहिं पइरिक्कसुहाए मणाणुकूलाए विहारभूमीए पसत्थदोहला संपुन्नदोहला सम्माणियदोहला अवमाणियदोहला वोच्छिन्नदोहला ववणीय दोहला ववगयरोगमोहभयपरित्तासा तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहति। तए णं सा पभावती देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण राइंदियाणं वीतिक्कंताणं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेयं जाव ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारयं पयाया। तए णं तीसे पभाव-तीए देवीए अंगपडियारियाओ पभावतिं देविं पसूयं जाणेत्ता जेणेव बले राया तेणेव उवागच्छन्ति तेणेव उवागच्छित्ता करयल जाव बलं रायं जयेणं विजएणं वद्धावेंति जएणं विजएणं वद्धावेत्ता एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया! पभावती पियट्ठयाए पियं निवेदेमो पियं भे भवउ। तए णं से बले राया अंगपडिया-रियाणं अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव धाराहयणीव जावरोमकूवे तासिं अंगपडियारियाणं मउडवज्जं जहामालियं ओमोयं दलयति २ सेतं रययामयं विमलसलिलपुन्नं भिंगारं च गिण्हइ गिण्हित्ता मत्थए धोवइ मत्थए धोवित्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयति पीइदाणं दलयित्ता सक्कारेति सम्मा-णेति (सूत्रं ४२८)॥

अथ पल्योपमसागरोपमयोरतिप्रचुरकालत्वेन क्षयमसम्भावयन् प्रश्नयन्नाह—'अत्थि ण'मित्यादि, 'खये'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

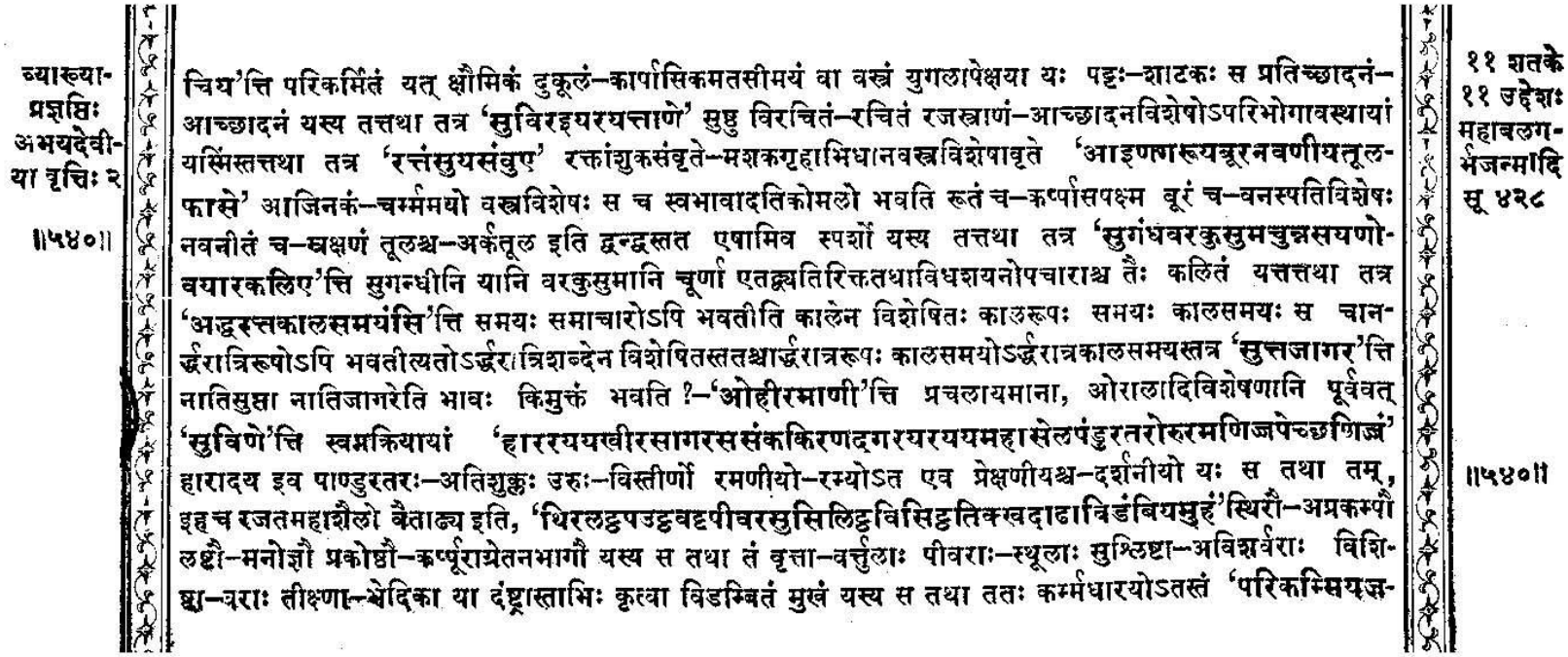
प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]

सर्वविनाशः 'अवचए'त्ति देशतोऽपगम इति ॥ अथ पल्योपमादिक्षयं तस्यैव सुदर्शनस्य चरितेन दर्शयन्निद-माह—'एवं खलु सुदंसणे'त्यादि, 'तंसि तारिसगंसि'त्ति तस्मिंस्तादृशके–वक्तुमशक्यस्वरूपे पुण्यवतां योग्य इत्यर्थः 'दूमियघट्ठमट्ठ'त्ति दूमितं–धवलितं घृष्टं कोमलपाषाणादिना अत एव मृष्टं–मसृणं यत्तत्तथा तस्मिन् 'विचित्तउल्लोयचिल्लियतले'त्ति विचित्रो–विविधचित्रयुक्तः उल्लोकः–उपरिभागो यत्र 'चिल्लियं'ति दीप्य-मानं तलं च–अधोभागो यत्र तत्तथा तत्र 'पंचवन्नसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिए'त्ति पञ्चवर्णेन सरसेन सुर-भिणा च मुक्तेन–क्षिप्तेन पुष्पपुञ्जलक्षणेनोपचारेण–पूजया कलितं यत्तत्तथा तत्र 'कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघ-मघंतगंधुद्धुयाभिरामे'त्ति कालागुरुप्रभृतीनां धूपानां यो मघमघायमानो गन्ध उद्भूतः–उद्भूतस्तेनाभिरामं–रम्यं यत्तत्तथा तत्र, कुन्दुरुक्का–चीडा तुरुक्कं–सिल्हकं, 'सुगंधिवरगंधिए'त्ति सुगन्धयः–सद्गन्धाः वरगन्धाः–वरवासाः सन्ति यत्र तत्तथा तत्र, 'गंधवट्टिभूए'त्ति सौरभ्यातिशयाद्गन्धद्रव्यगुटिकाकल्पे 'सालिंगणवट्टिए'त्ति सहालिङ्गनवर्त्त्या–शरीरप्रमाणो-पधानेन यत्तत्तथा तत्र 'उभओ विब्बोयणे' उभयतः–शिरोऽन्तपादान्तावाश्रित्य विब्बोयणे–उपधानके यत्र तत्तथा तत्र 'दुहओ उन्नए' उभयत उन्नते 'मज्झेणयगंभीरे' मध्ये नतं च–निम्नं गम्भीरं च महत्त्वाद् यत्तत्तथा तत्र, अथवा मध्येन च–मध्यभागेन च गम्भीरे यत्तत्तथा, (पण्णत्त)'गंडविब्बोयणे'त्ति क्वचिद् दृश्यते तत्र च सुपरिकर्मितगण्डोपधाने इत्यर्थः 'गंगापुलिणवालुउद्दालसालिसए' गङ्गापुलिनवालुकाया योऽवदालः–अवदलनपादादिन्यासेऽधोगमनमित्यर्थः तेन सदृ-शकमतिमृदुत्वाद्यत्तत्तथा तत्र, दृश्यते च हंसतूल्यादीनामयं न्याय इति, 'उवचियखोमियदुगुल्लपट्टपडिच्छायणे''उव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५४०॥

चिय'त्ति परिकर्मितं यत् क्षौमिकं दुकूलं–कार्पासिकमतसीमयं वा वस्त्रं युगलापेक्षया यः पट्टः–शाटकः स प्रतिच्छादनं–आच्छादनं यस्य तत्तथा तत्र **'सुविरइयरयत्ताणे'** सुष्ठु विरचितं–रचितं रजस्त्राणं–आच्छादनविशेषोऽपरिभोगावस्थायां यस्मिंस्तत्तथा तत्र **'रत्तंसुयसंवुए'** रक्तांशुकसंवृते–मशकगृहाभिधानवस्त्रविशेषावृते **'आइणगरूयबूरनवणीयतूल-फासे'** आजिनकं–चर्म्ममयो वस्त्रविशेषः स च स्वभावादतिकोमलो भवति रूतं च–कर्प्पासपक्ष्म बूरं च–वनस्पतिविशेषः नवनीतं च–अक्षणं तूलश्च–अर्कतूल इति द्वन्द्वस्तत एषामिव स्पर्शो यस्य तत्तथा तत्र **'सुगंधवरकुसुमचुन्नसयणो-वयारकलिए'**त्ति सुगन्धीनि यानि वरकुसुमानि चूर्णा एतद्व्यतिरिक्ततथाविधशयनोपचाराश्च तैः कलितं यत्तत्तथा तत्र **'अद्धरत्तकालसमयंसि'**त्ति समयः समाचारोऽपि भवतीति कालेन विशेषितः कालरूपः समयः कालसमयः स चानर्द्धरात्रिरूपोऽपि भवतीत्यतोऽर्द्धरात्रिशब्देन विशेषितस्ततश्चार्द्धरात्ररूपः कालसमयोऽर्द्धरात्रकालसमयस्तत्र **'सुत्तजागर'**त्ति नातिसुप्ता नातिजागरेति भावः किमुक्तं भवति ?–**'ओहीरमाणी'**त्ति प्रचलायमाना, ओरालादिविशेषणानि पूर्ववत् **'सुविणे'**त्ति स्वप्नक्रियायां **'हाररययखीरसागरससंककिरणदगरयरययमहासेलपंडुरतरोरुरमणिज्जपेच्छणिज्जं'** हारादय इव पाण्डुरतरः–अतिशुक्लः उरुः–विस्तीर्णो रमणीयो–रम्योऽत एव प्रेक्षणीयश्च–दर्शनीयो यः स तथा तम्, इह च रजतमहाशैलो वैताढ्य इति, **'थिरलट्ठपउट्ठवट्टपीवरसुसिलिट्ठविसिट्ठतिक्खदाढाविडंबियमुहं'**स्थिरौ–अग्रकम्पौ लष्टौ–मनोज्ञौ प्रकोष्ठौ–कर्प्पराग्रेतनभागौ यस्य स तथा तं वृत्ता–वर्त्तुलाः पीवराः–स्थूलाः सुश्लिष्टा–अविशीर्णवराः विशिष्टा–वराः तीक्ष्णा–भेदिका या दंष्ट्रास्ताभिः कृत्वा विडम्बितं मुखं यस्य स तथा ततः कर्म्मधारयोऽतस्तं **'परिकम्मियज-**

११ शतके ११ उद्देशः महाबलग-र्भजन्मादि सू ४२८

॥५४०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा दीप अनुक्रम [५१८--५२०]	**महाबलकुमार-कथा**

चक्रमलकोमलमाइयसोहंतलट्ठउट्ठं' परिकर्मितं–कृतपरिकर्म यज्जात्यकमलं तद्वत्कोमलौ मात्रिकौ–प्रमाणोपपन्नौ शोभमानानां मध्ये लष्टौ–मनोज्ञौ ओष्ठौ–दशनच्छदौ यस्य स तथा तं 'रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुजीहं' रक्तोत्पलपत्रवत् मृदूनां मध्ये सुकुमाले तालुजिह्वे यस्य स तथा तं, वाचनान्तरे तु 'रत्तुप्पलपत्तमउयसुकुमालतालुनिल्लालियग्गजीहं मद्दुगुलियाभिसंतपिंगलच्छं'ति तत्र च रक्तोत्पलपत्रवत् सुकुमालं तालु निर्लालिताग्रा च जिह्वा यस्य स तथा तं मधुगुटिकादिवत् 'भिसंत'त्ति दीप्यमाने पिङ्गले अक्षिणी यस्य स तथा तं 'मूसागयपवरकणगतावियआवत्तायं-तवट्टतडिविमलसरिसनयणं' मूषा–स्वर्णादितापनभाजनं तद्गतं यत्प्रवरकनकं तापितं–कृताग्नितापम् 'आवत्तायंत'त्ति आवर्त्तं कुर्वाणं तद्वद् ये वर्णतः वृत्ते च तडिदिव विमले च सदृशे च परस्परेण नयने–लोचने यस्य स तथा तं 'विसालपीवरोरुपडिपुन्नविपुलखंधं' विशाले–विस्तीर्णे पीवरे–उपचिते ऊरू–जङ्घे यस्य परिपूर्णो विपुलश्च स्कन्धो यस्य स तथा तं 'मिउविसयसुहुमलक्खणपसत्थविच्छिन्नकेसरसडोवसोहियं' मृदवः 'विसद'त्ति स्पष्टाः सूक्ष्माः 'लक्खणपसत्थ'त्ति प्रशस्तलक्षणाः विस्तीर्णाः पाठान्तरेण विकीर्णा याः केशरसटाः–स्कन्धकेशच्छटास्ताभिरुपशोभितो यः स तथा तम् 'ऊसियसुनिम्मियसुजायअप्फोडियलंगूलं' उच्छ्रितं–ऊर्द्ध्वीकृतं सुनिर्मितं–सुष्ठु अधोमुखीकृतं सुजातं–शोभनतया जातं आस्फोटितं च–भूमावास्फालितं लाङ्गूलं येन स तथा तम् ॥ 'अतुरियमचवलं'ति देहमनश्चापल्यरहितं यथा भवत्येवम् 'असंभंताए'त्ति अनुत्सुकया 'रायहंससरिसीए'त्ति राजहंसगतिसदृश्येत्यर्थः 'आसत्थ'त्ति आश्वस्ता गतिजनितश्रमाभावात् 'वीसत्थ'त्ति विश्वस्ता सङ्क्षोभाभावात् अनुत्सुका वा 'सुहासणवरगए'त्ति सुखेन सुखं वा शुभं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८-५२०]

वा आसनवरं गता या सा तथा 'धाराहयनीवसुरहिकुसुमचंचुमालइयतणु'त्ति धाराहतनीपसुरभिकुसुममिव 'चंचुमालइय'त्ति पुलकिता तनुः–शरीरं यस्य स तथा, किमुक्तं भवति ?–'ऊसवियरोमकूवे'त्ति उच्छ्रितानि रोमाणि कूपेषु–तद्रन्ध्रेषु यस्य स तथा, 'मइपुव्वेणं'ति आभिनिबोधिकप्रभवेन 'बुद्धिविन्नाणेणं'ति मतिविशेषभूतौत्पत्तिक्या-दिबुद्धिरूपपरिच्छेदेन 'अत्थोग्गहणं'ति फलनिश्चयम् 'आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाणमंगल्लकारए णं'ति इह कल्या-णानि–अर्थप्राप्तयो मङ्गलानि–अनर्थप्रतिघाताः 'अत्थलाभो देवाणुप्पिए !' भविष्यतीति शेषः 'कुलकेउं'ति केतुश्चिह्नं ध्वज इत्यनर्थान्तरं केतुरिव केतुरद्भुतत्वात् कुलस्य केतुः कुलकेतुस्तं, एवमन्यत्रापि, 'कुलदीवं'ति दीप इव दीपः प्रकाश-कत्वात् 'कुलपव्वयं'ति पर्वतोऽनभिभवनीयस्थिराश्रयतासाधर्म्यात् 'कुलवडेंसयं'ति कुलावतंसकं कुलस्यावतंसकः–शेखर उत्तमत्वात् 'कुलतिलयं'ति तिलको–विशेषको भूषकत्वात् 'कुलकित्तिकरं'ति इह कीर्त्तिरेकदिग्गामिनी प्रसिद्धिः 'कुलनंदिकरं'ति तत्समृद्धिहेतुत्वात् 'कुलजसकरं'ति इह यशः–सर्वदिग्गामी प्रसिद्धिविशेषः 'कुलपायवं'ति पादपश्चा-श्रयणीयच्छायत्वात् 'कुलविवड्ढणकरं'ति विविधैः प्रकारैर्वर्द्धनं विवर्धनं तत्करणशीलं 'अहीणपुन्नपंचिंदियसरीरं'ति अहीनानि–स्वरूपतः पूर्णानि–सङ्ख्यया पुण्यानि वा–पूतानि पञ्चेन्द्रियाणि यत्र तत्तथा तदेवंविधं शरीरं यस्य स तथा तं, यावत्करणात् 'लक्खणवंजणगुणोववेय'मित्यादि दृश्यं, तत्र लक्षणानि–स्वस्तिकादीनि व्यञ्जनानि–मषतिलकादीनि तेषां यो गुणः–प्रशस्तता तेनोपपेतो–युक्तो यः स तथा तं 'ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं' शशिवत् सौम्या-कारं कान्तं च–कमनीयं अत एव प्रियं द्रष्टृणां दर्शनं–रूपं यस्य स तथा तं 'विन्नायपरिणयमित्ते'त्ति विज्ञ एव विज्ञकः

११ शतके ११ उद्देशः महाबलग-भंजन्मादि-सू ४२८

॥५४१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

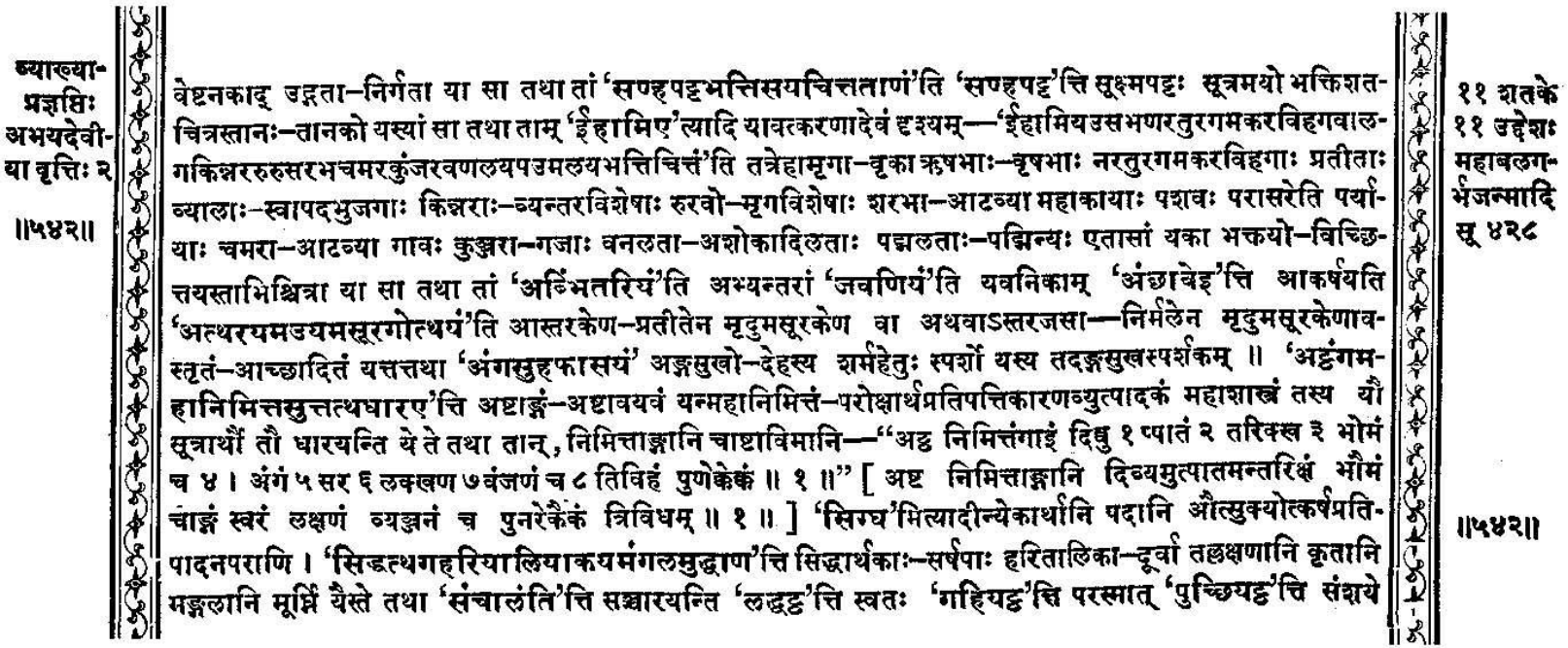
प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]

स चासौ परिणतमात्रश्च कलादिष्विति गम्यते विज्ञकपरिणतमात्रः **'सूरे'**त्ति दानतोऽभ्युपेतनिर्वाहणतो वा **'वीरे'**त्ति सङ्गामतः **'विक्कंते'**त्ति विक्रान्तः–परकीयभूमण्डलाक्रमणतः **'विच्छिन्नविपुलबलवाहणे'**त्ति विस्तीर्णविपुले–अतिविस्तीर्णे बलवाहने–सैन्यगजादिके यस्य स तथा **'रज्जवइ'**त्ति स्वतन्त्र इत्यर्थः **'मा मे से'**त्ति मा ममासौ स्वप्न इत्यर्थः **'उत्तमे'**त्ति स्वरूपतः **'पहाणे'**त्ति अर्थप्राप्तिरूपप्रधानफलतः **'मंगल्ले'**त्ति अनर्थप्रतिघातरूपफलापेक्षयेति **'सुमिणजागरियं'**ति स्वप्नसंरक्षणाय जागरिका–निद्रानिषेधः स्वप्नजागरिका तां **'पडिजागरमाणी२'**ति प्रतिजाग्रती–कुर्वन्ती, आभीक्ष्ण्ये च द्विर्वचनम् । **'गंधोदयसित्तसुइयसम्मज्जिओवलित्तं'**ति गन्धोदकेन सिक्ता शुचिका–पवित्रा संमार्जिता कचवरापनयनेन उपलिप्ता छगणादिना या सा तथा तां, इदं च विशेषणं गन्धोदकसिक्तसंमार्जितोपलिप्तशुचिकामित्येवं दृश्यं, सिक्ताद्यनन्तरभावित्वाच्छुचिकत्वस्येति, **'अट्टणसालं'**त्ति व्यायामशाला **'जहा उववाइए तहेव अट्टणसाला तहेव मज्जणघरे'**त्ति यथौपपातिकेऽट्टणशालाव्यतिकरो मज्जनगृहव्यतिकरश्चाधीतस्तथेहाप्यध्येतव्य इत्यर्थः, स चायम्—**'अणेगवायामजोग्गवग्गणवामद्दणमल्लयुद्धकरणेहिं संते'**इत्यादि, तत्र चानेकानि व्यायामार्थं यानि योग्यादीनि तानि तथा तैः, तत्र योग्या–गुणनिका वल्गनं–उल्ललनं व्यामर्दनं–परस्परेणाङ्गमोटनमिति, **मज्जनगृहव्यतिकरस्तु 'जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ समंतजालाभिरामे'** समन्ततो जालकाभिरमणीये **'विचित्तमणिरयणकुट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि णाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहनिसण्णे'**इत्यादिरिति । **'महग्घवरपट्टणुग्गयं'**ति महार्घा च सा वरपत्तनोद्गता च–वरवस्त्रोत्पत्तिस्थानसम्भवेति समासोऽतस्तां वरपट्टनाद्वा–प्रधान-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५४२॥

वेष्टनकाद् उद्गता–निर्गता या सा तथा तां 'सण्हपट्टभत्तिसयचित्ततणं'ति 'सण्हपट्ट'त्ति सूक्ष्मपट्टः सूत्रमयो भक्तिशत-चित्रस्तानः–तानको यस्यां सा तथा ताम् 'ईहामिए'त्यादि यावत्करणादेवं दृश्यम्—'ईहामियउसभणरतुरगमकरविहगवाल-गकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं'ति तत्रेहामृगा–वृका ऋषभाः–वृषभाः नरतुरगमकरविहगाः प्रतीताः व्यालाः–स्वापदभुजगाः किन्नराः–व्यन्तरविशेषाः रुरवो–मृगविशेषाः शरभा–आटव्या महाकायाः पशवः परासरेति पर्या-याः चमरा–आटव्या गावः कुञ्जरा–गजाः वनलता–अशोकादिलताः पद्मलताः–पद्मिन्यः एतासां यका भक्तयो–विच्छि-त्तयस्ताभिश्चित्रा या सा तथा तां 'अब्भितरियं'ति अभ्यन्तरां 'जवणियं'ति यवनिकाम् 'अंछावेइ'त्ति आकर्षयति 'अत्थरयमउयमसूरगोत्थयं'ति आस्तरकेण–प्रतीतेन मृदुमसूरकेण वा अथवाऽस्तरजसा—निर्मलेन मृदुमसूरकेणाव-स्तृतं–आच्छादितं यत्तत्तथा 'अंगसुहफासयं' अङ्गसुखो–देहस्य शर्महेतुः स्पर्शो यस्य तदङ्गसुखस्पर्शकम् ॥ 'अट्ठंगम-हानिमित्तसुत्तत्थधारए'त्ति अष्टाङ्गं–अष्टावयवं यन्महानिमित्तं–परोक्षार्थप्रतिपत्तिकारणव्युत्पादकं महाशास्त्रं तस्य यौ सूत्रार्थौ तौ धारयन्ति ये ते तथा तान्, निमित्ताङ्गानि चाष्टाविमानि—"अट्ठ निमित्तंगाइं दिट्ठु १ प्पातं २ तरिक्ख ३ भोमं च ४ । अंगं ५ सर ६ लक्खण ७ वंजणं च ८ तिविहं पुणेकेकं ॥ १ ॥" [अष्ट निमित्ताङ्गानि दिव्यमुत्पातमन्तरिक्षं भौमं चाङ्गं स्वरं लक्षणं व्यञ्जनं च पुनरेकैकं त्रिविधम् ॥ १ ॥] 'सिग्घ'मित्यादीन्येकार्थानि पदानि औत्सुक्योत्कर्षप्रति-पादनपराणि । 'सिद्धत्थगहरियालियाकयमंगलमुद्धाण'त्ति सिद्धार्थकाः–सर्षपाः हरितालिका–दूर्वा तल्लक्षणानि कृतानि मङ्गलानि मूर्ध्नि यैस्ते तथा 'संचालंति'त्ति सञ्चारयन्ति 'लद्धट्ठ'त्ति स्वतः 'गहियट्ठ'त्ति परस्मात् 'पुच्छियट्ठ'त्ति संशये

११ शतके ११ उद्देशः महाबलग-भंजन्मादि सू ४२८

॥५४२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]

सति परस्परतः 'विणिच्छियट्ठ'त्ति प्रश्नानन्तरं अत एवाभिगतार्था इति॥'सुविण'त्ति सामान्यफलत्वात् 'महासुविण'त्ति महाफलत्वात् 'बावत्तरिं'ति त्रिंशतो द्विचत्वारिंशतश्च मीलनादिति'गब्भं वक्कममाणंसि'त्ति गर्भं व्युत्क्रामति–प्रविशति सतीत्यर्थः, 'गयवसहे'त्यादि, इह च 'अभिसेय'त्ति लक्ष्म्या अभिषेकः 'दाम'त्ति पुष्पमाला,'विमाणभवण'त्ति एकमेव, तत्र विमानाकारं भवनं विमानभवनं, अथवा देवलोकाद्योऽवतरति तन्माता विमानं पश्यति वस्तु नरकात् तन्माता भवनमिति, इह च गाथायां केषुचित्पदेष्वनुस्वारस्याश्रवणं गाथाऽनुलोम्याद् दृश्यमिति॥ 'जीवियारिहं'ति जीविकोचितम् । 'उउभुयमाणसुहेहिं'ति ऋतौ २ भज्यमानानि यानि सुखानि–सुखहेतवः शुभानि वा तानि तथा तैः 'हियं'ति तमेव गर्भमपेक्ष्य 'मियं'ति परिमितं–नाधिकमूनं वा 'पत्थं'ति सामान्येन पथ्यं, किमुक्तं भवति ?–'गब्भपोसणं'ति गर्भपोषकमिति 'देसे य'त्ति उचितभूप्रदेशे 'काले य'त्ति तथाविधावसरे 'विवित्तमउएहिं'ति विविक्तानि–दोषविमुक्तानि लोकान्तरासङ्कीर्णानि वा मृदुकानि च–कोमलानि यानि तानि तथा तैः 'पइरिक्कसुहाए'त्ति प्रतिरिक्तत्वेन तथाविधजनापेक्षया विजनत्वेन सुखा शुभा वा या सा तथा तया 'पसत्थदोहल'त्ति अनिन्द्यमनोरथा 'संपुन्नदोहला' अभिलषितार्थपूरणात् 'संमाणियदोहला' प्राप्तस्याभिलषितार्थस्य भोगात् 'अविमाणियदोहल'त्ति क्षणमपि लेशेनापि च नापूर्णमनोरथेत्यर्थः अत एव 'वोच्छिन्नदोहल'त्ति त्रुटितवाञ्छेत्यर्थः, दोहदव्यवच्छेदस्यैव प्रकर्षाभिधानायाह–'विणीयदोहल'त्ति 'ववगए'इत्यादि, इह च मोहो–मूढता भयं–भीतिमात्रं परित्रासः–अकस्माद्भयम् , इह स्थाने वाचनान्तरे 'सुहंसुहेणं आसयइ सुयइ चिट्ठइ निसीयइ तुयट्टइ'त्ति दृश्यते तत्र च 'सुहंसुहेणं'ति गर्भानाबाधया 'आसयइ'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२८] + गाथा

दीप अनुक्रम [५१८--५२०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५४३॥

आश्रयत्याश्रयणीयं वस्तु 'सुयइ'त्ति शेते 'चिट्ठइ'त्ति ऊर्द्ध्वस्थानेन तिष्ठति 'निसीयइ'त्ति उपविशति 'तुयट्टइ'त्ति शय्यायां वर्त्तत इति ॥ 'पियट्ठयाए'त्ति प्रियार्थतायै–प्रीत्यर्थमित्यर्थः 'पियं निवेएमो'त्ति 'प्रियम्' इष्टवस्तु पुत्रजन्म-लक्षणं निवेदयामः 'पियं भे भवउ'त्ति एतच्च प्रियनिवेदनं प्रियं भवतां भवतु तदन्यद्वा प्रियं भवत्विति । 'मउडवज्जं'-ति मुकुटस्य राजचिह्नत्वात् स्त्रीणां चानुचितत्वात्तस्येति तद्वर्जनं 'जहामालियं'ति यथामालितं–यथा धारितं यथा परिहितमित्यर्थः 'ओमोयं'ति अवमुच्यते–परिधीयते यः सोऽवमोकः–आभरणं तं 'मत्थए धोवइ'त्ति अङ्गप्रतिचारि-काणां मस्तकानि क्षालयति दासत्वापनयनार्थं, स्वामिना धौतमस्तकस्य हि दासत्वमपगच्छतीति लोकव्यवहारः ॥

तए णं से बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! हत्थि-णापुरे नयरे चारगसोहणं करेह चारग० २ माणुम्माणवद्धणं करेह मा० २ हत्थिणापुरं नगरं सब्भिंतरबाहि-रियं आसियसंमज्जिओवलित्तं जाव करेह कारवेह करेत्ता य कारवेत्ता य जूयसहस्सं वा चक्कसहस्सं वा पूयामहामहिमसक्कारं वा उस्सवेह २ ममेतमाणत्तियं पच्चप्पिणह, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा बलेणं रन्ना एवं वुत्ता० जाव पच्चप्पिणंति । तए णं से बले राया जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छति तेणेव उवाग-च्छित्ता तं चेव जाव मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता उस्सुक्कं उक्करं उक्किट्ठं अदिज्जं अमिज्जं अभडप्पवेसं अदंडकोडंडिमं अधरिमं गणियावरनाडइज्जकलियं अणेगतालाचराणुचरियं अणुद्धुयमुइंगं अमिलायमल्लदामं पमुइयपक्कीलियं सपुरजणजाणवयं दसदिवसे ठिइवडियं करेति । तए णं से बले राया

११ शतके ११ उद्देशः महाबल-नामकरणं सू ४२९

॥५४३॥

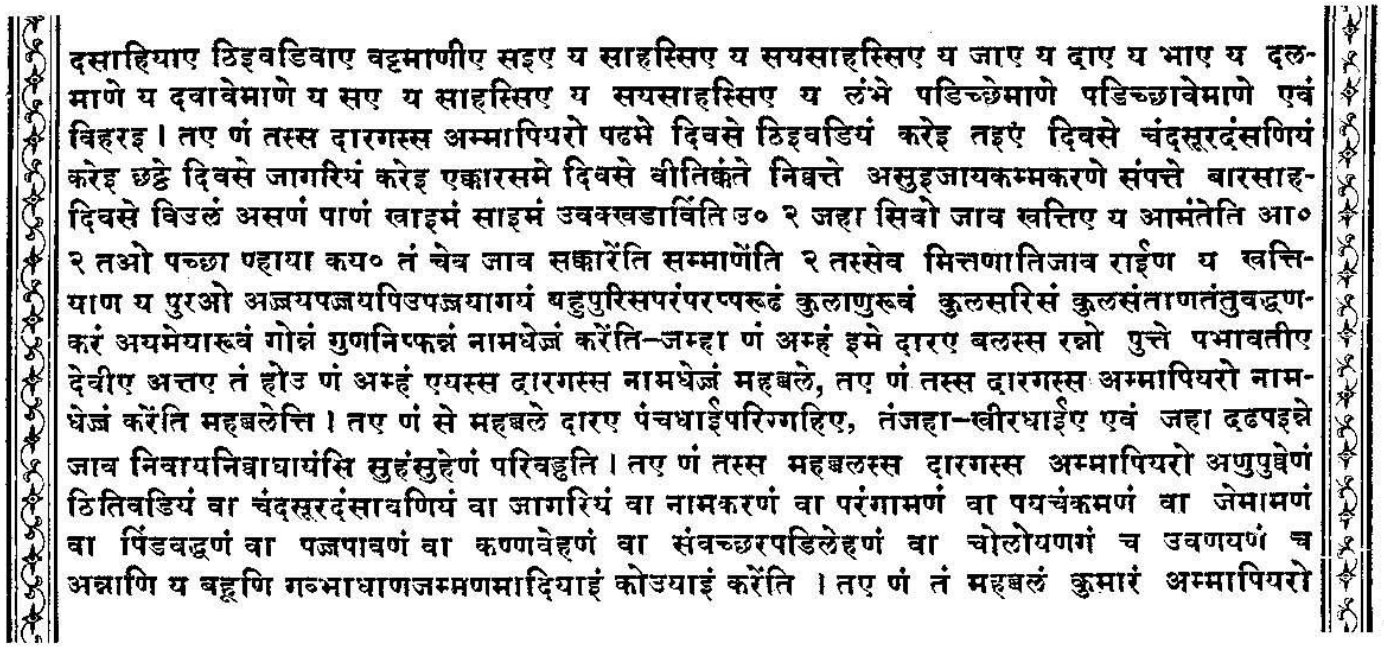
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४२९]

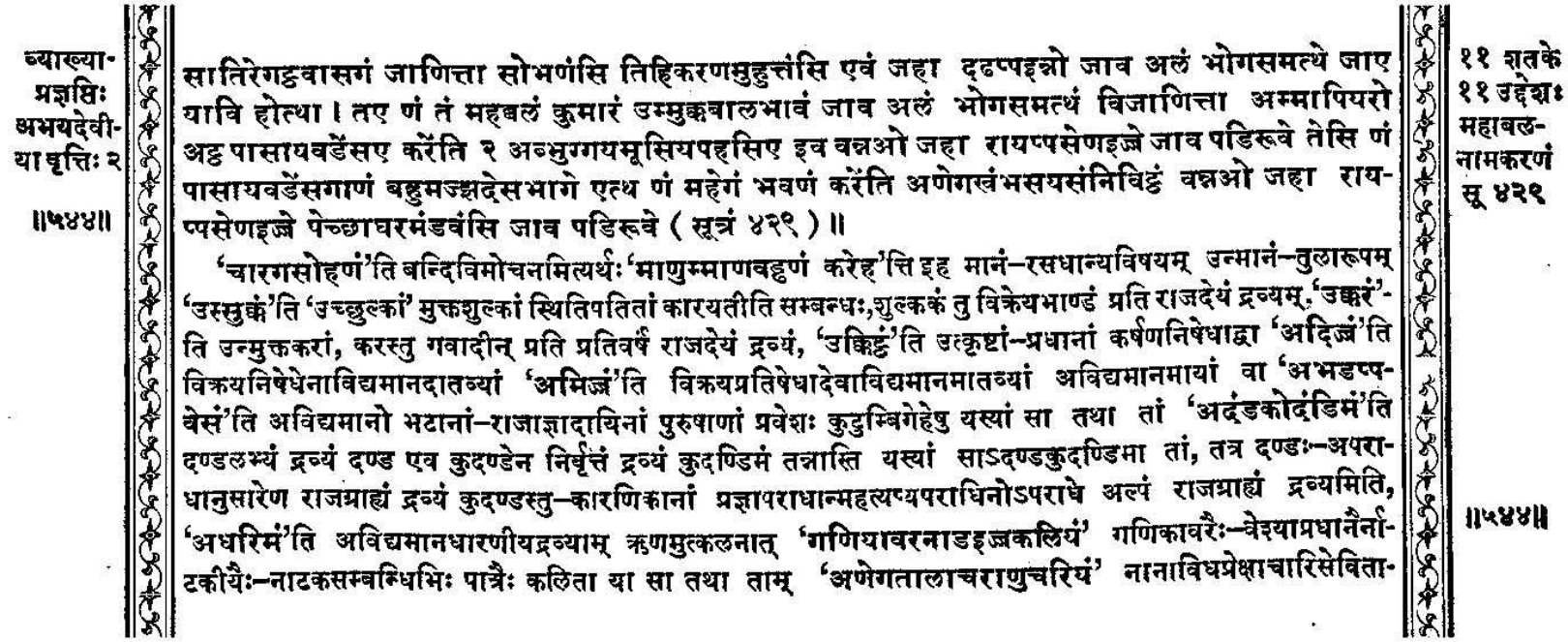
दीप अनुक्रम [५२१]



दसाहियाए ठिइवडिवाए वट्टमाणीए सइए य साहस्सिए य सयसाहस्सिए य जाए य दाए य भाए य दल-
माणे य दवावेमाणे य सए य साहस्सिए य सयसाहस्सिए य लंभे पडिच्छेमाणे पडिच्छावेमाणे एवं
विहरइ। तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे ठिइवडियं करेइ तइए दिवसे चंदसूरदंसणियं
करेइ छट्ठे दिवसे जागरियं करेइ एक्कारसमे दिवसे वीतिक्कंते निवत्ते असुइजायकम्मकरणे संपत्ते बारसाह-
दिवसे विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति उ० २ जहा सिवो जाव खत्तिए य आमंतेंति आ०
२ तओ पच्छा ण्हाया कय० तं चेव जाव सक्कारेंति सम्माणेंति २ तस्सेव मित्तणातिजाव राईण य खत्ति-
याण य पुरओ अज्जयपज्जयपिउपज्जयागयं बहुपुरिसपरंपरप्पसूढं कुलाणुरूवं कुलसरिसं कुलसंताणतंतुवद्धण-
करं अयमेयारूवं गोन्नं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं करेंति–जम्हा णं अम्हं इमे दारए बलस्स रन्नो पुत्ते पभावतीए
देवीए अत्तए तं होउ णं अम्हं एयस्स दारगस्स नामधेज्जं महबले, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नाम-
धेज्जं करेंति महबलेत्ति। तए णं से महबले दारए पंचधाईपरिग्गहिए, तंजहा–खीरधाईए एवं जहा दढपइन्ने
जाव निवायनिव्वाघायंसि सुहंसुहेणं परिवड्ढति। तए णं तस्स महबलस्स दारगस्स अम्मापियरो अणुपुव्वेणं
ठितिवडियं वा चंदसूरदंसावणियं वा जागरियं वा नामकरणं वा परंगामणं वा पयचंकमणं वा जेमामणं
वा पिंडवद्धणं वा पज्जपावणं वा कण्णवेहणं वा संवच्छरपडिलेहणं वा चोलोयणगं च उवणयणं च
अन्नाणि य बहूणि गब्भाधाणजम्मणमादियाइं कोउयाइं करेंति। तए णं तं महबलं कुमारं अम्मापियरो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५४४॥

सातिरेगट्ठवासगं जाणित्ता सोभणंसि तिहिकरणमुहुत्तंसि एवं जहा दढप्पइन्नो जाव अलं भोगसमत्थे जाए यावि होत्था। तए णं तं महब्बलं कुमारं उम्मुक्कबालभावं जाव अलं भोगसमत्थं विजाणित्ता अम्मापियरो अट्ठ पासायवडेंसए करेंति २ अब्भुग्गयमूसियपहसिए इव वन्नओ जहा रायप्पसेणइज्जे जाव पडिरूवे तेसि णं पासायवडेंसगाणं बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं महेगं भवणं करेंति अणेगखंभसयसंनिविट्ठं वन्नओ जहा रायप्पसेणइज्जे पेच्छाघरमंडवंसि जाव पडिरूवे (सूत्रं ४२९) ॥

'चारगसोहणं'ति बन्दिविमोचनमित्यर्थः 'माणुम्माणवड्ढणं करेह'त्ति इह मानं–रसधान्यविषयम् उन्मानं–तुलारूपम् 'उस्सुक्कं'ति 'उच्छुल्कां' मुक्तशुल्कां स्थितिपतितां कारयतीति सम्बन्धः,शुल्कं तु विक्रेयभाण्डं प्रति राजदेयं द्रव्यम्,'उक्करं'-ति उन्मुक्तकरां, करस्तु गवादीन् प्रति प्रतिवर्षं राजदेयं द्रव्यं, 'उक्किट्ठं'ति उत्कृष्टां–प्रधानां कर्षणनिषेधाद्वा 'अदिज्जं'ति विक्रयनिषेधेनाविद्यमानदातव्यां 'अमिज्जं'ति विक्रयप्रतिषेधादेवाविद्यमानमातव्यां अविद्यमानमायां वा 'अभडप्प-वेसं'ति अविद्यमानो भटानां–राजाज्ञादायिनां पुरुषाणां प्रवेशः कुटुम्बिगेहेषु यस्यां सा तथा तां 'अदंडकोदंडिमं'ति दण्डलभ्यं द्रव्यं दण्ड एव कुदण्डेन निर्वृत्तं द्रव्यं कुदण्डिमं तन्नास्ति यस्यां साऽदण्डकुदण्डिमा तां, तत्र दण्डः–अपरा-धानुसारेण राजग्राह्यं द्रव्यं कुदण्डस्तु–कारणिकानां प्रज्ञापराधान्महत्यप्यपराधिनोऽपराधे अल्पं राजग्राह्यं द्रव्यमिति, 'अधरिमं'ति अविद्यमानधारणीयद्रव्याम् ऋणमुत्कलनात् 'गणियावरनाडइज्जकलियं' गणिकावरैः–वेश्याप्रधानैर्ना-टकीयैः–नाटकसम्बन्धिभिः पात्रैः कलिता या सा तथा ताम् 'अणेगतालाचराणुचरियं' नानाविधप्रेक्षाचारिसेविता-

११ शतके ११ उद्देशः महाबल-नामकरणं सू ४२९

॥५४४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

मित्यर्थः 'अणुद्धुइयमुइंग'त्ति अनुद्धूता–वादनार्थं वादकैरविमुक्ता मृदङ्गा यस्यां सा तथा ताम् 'अमिलायमल्लदामं' अम्लानपुष्पमालां 'पमुइयपक्कीलियं'ति प्रमुदितजनयोगात्प्रमुदिता प्रक्रीडितजनयोगात्प्रक्रीडिता ततः कर्मधारयोऽतस्तां 'सपुरजणजाणवयं' सह पुरजनेन जानपदेन च–जनपदसम्बन्धिजनेन या वर्त्तते सा तथा तां, वाचनान्तरे 'विजयवेजइयं'ति दृश्यते तत्र चातिशयेन विजयो विजयविजयः स प्रयोजनं यस्याः सा विजयवैजयिकी तां 'ठिइवडियं'ति स्थितौ–कुलस्य लोकस्य वा मर्यादायां पतिता–गता या पुत्रजन्ममहप्रक्रिया सा स्थितिपतिताऽतस्तां 'दसाहियाए'त्ति दशाहिकायां–दशदिवसप्रमाणायां 'जाए य'त्ति यागान्–पूजाविशेषान् 'दाए य'त्ति दायांश्च दानानि 'भाए य'त्ति भागांश्च–विवक्षितद्रव्यांशान् 'चंदसूरदंसणियं'ति चन्द्रसूर्यदर्शनाभिधानमुत्सवं 'जागरियं'ति रात्रिजागरणरूपमुत्सवविशेषं 'निवत्ते असुइजायकम्मकरणे'त्ति 'निवृत्ते' अतिक्रान्ते अशुचीनां जातकर्म्मणां करणमशुचिजातकर्म्मकरणं तत्र 'संपत्ते बारसाहदिवसे'त्ति संप्राप्ते द्वादशाख्यदिवसे, अथवा द्वादशानामह्नां समाहारो द्वादशाहं तस्य दिवसो द्वादशाहदिवसो येन स पूर्यते तत्र, 'कुलाणुरूवं'ति कुलोचितं, कस्मादेवम् ? इत्याह—'कुलसरिसं'ति कुलसदृशं, तत्कुलस्य बलवत्पुरुषकुलत्वान्महाबल इति नाम्नश्च बलवदर्थाभिधायकत्वात् तत्कुलस्य महाबल इति नाम्नश्च सादृश्यमिति 'कुलसंताणतंतुवद्धणकरं'ति कुलरूपो यः सन्तानः स एव तन्तुर्दीर्घत्वात्तद्वर्द्धनकरं माङ्गल्यत्वाद् यत्र तत्तथा 'अयमेयारूवं'ति इदमेतद्रूपं 'गोणं'ति गौणं तच्चामुख्यमप्युच्यत इत्यत आह—'गुणनिप्फन्नं'ति, 'जम्हा णं अम्हं'इत्यादि अस्माकमयं दारकः प्रभावतीदेव्यात्मजो यस्माद्बलस्य राज्ञः पुत्रस्तस्मात्पितुर्नामानुसारिनामास्य दारकस्यास्तु महाबल इति । 'जहा दढपइन्ने'-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

त्ति यथौपपातिके दृढप्रतिज्ञोऽधीतस्तथाऽयं वक्तव्यः, तच्चैवं—'मज्जणघाईए मंडणघाईए कीलावणघाईए अंकघाईए'इत्यादि, 'निवायनिव्वाघायंसी'त्यादि च वाक्यमिहैवं सम्बन्धनीयं 'गिरिकंदरमल्लीणेव्व चंपगपायवे निवायनिव्वाघायंसि सुहंसुहेणं परिवहइ'त्ति । 'परंगामणंति भूमौ सर्प्पणं 'पयचंकामणं'ति पादाभ्यां सञ्चारणं 'जेमामणं'ति भोजनकारणं 'पिंडवद्धणं'ति कवलवृद्धिकारणं 'पज्जपावणं'ति प्रजल्पनकारणं 'कण्णवेहणं'ति प्रतीतं 'संवच्छरपडिलेहणं'ति वर्षग्रन्थिकरणं 'चोलोयणं' चूडाधरणम् 'उवणयणं'ति कलाग्राहणं 'गब्भाहाणजम्मणमाइयाइं कोउयाइं करेंति'त्ति गर्भाधानादिषु यानि कौतुकानि–रक्षाविधानादीनि तानि गर्भाधानादीन्येवोच्यन्त इति गर्भाधानजन्मादिकानि कौतुकानीत्येवं समानाधिकरणतया निर्देशः कृतः, 'एवं जहा दढपइन्नो'इत्यनेन यत्सूचितं तदेवं दृश्यं—'सोहणंसि तिहिकरणनक्खत्तमुहुत्तंसि ण्हायं कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारविभूसियं महया इड्ढिसक्कारसमुदएणं कलायरियस्स उवणयंती'त्यादीति । 'अब्भुग्गयमूसियपहसिते इव' अभ्युद्गतोच्छ्रितान्–अत्युच्चान् इह चैवं व्याख्यानं द्वितीयाबहुवचनलोपदर्शनात्, 'पहसिते इव'त्ति प्रहसितानिव–श्वेतप्रभापटलप्रबलतया हसत इवेत्यर्थः 'वन्नओ जहा रायप्पसेणइज्जे'इत्यनेन यत्सूचितं तदिदं—'मणिकणगरयणभत्तिचित्तवाउद्धुयविजयवेजयंतीपडागाछत्ताइच्छत्तकलिए तुंगे गगणतलमभिलंघमाणसिहरे'इत्यादि, एतच्च प्रतीतार्थमेव, नवरं 'मणिकनकरत्नानां भक्तिभिः–विच्छित्तिभिश्चित्रा ये ते तथा, वातोद्धूता या विजयसूचिका वैजयन्त्यभिधानाः पताकाश्छत्रातिच्छत्राणि च तैः कलिता ये ते तथा ततः कर्मधारयस्ततस्तान् 'अणेगखंभसयसंनिविट्ठं'ति अनेकेषु स्तम्भशतेषु संनिविष्टं यदने-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४२९]

दीप अनुक्रम [५२१]

कानि वा स्तम्भशतानि संनिविष्टानि यत्र तत्तथा 'वन्नओ जहा रायप्पसेणइज्जे पेच्छाघरमंडवंसि'त्ति यथा राजप्रश्नकृते प्रेक्षागृहमण्डपविषयो वर्णक उक्तस्तथाऽस्य वाच्य इत्यर्थः, स च 'लीलट्ठियसालिभंजियाग'मित्यादिरिति ।

तए णं तं महब्बलं कुमारं अम्मापियरो अन्नया कयावि सोभणंसि तिहिकरणदिवसनक्खत्तमुहुत्तंसि पहायं कयबलिकम्मं कयकोउयमंगलपाय० सव्वालंकारविभूसियं पमक्खणगण्हाणगीयवाइयपसाहणट्ठंगतिलगकंकणअविहववहुउवणीयं मंगलसुजंपिएहि य वरकोउयमंगलोवयारकयसंतिकम्मं सरिसयाणं सरित्तयाणं सरिव्वयाणं सरिसलावन्नरूवजोव्वणगुणोववेयाणं विणीयाणं कयकोउयमंगलपायच्छित्ताणं सरिसएहिं रायकुलेहिंतो आणिल्लियाणं अट्ठण्हं रायवरकन्नाणं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हाविंसु । तए णं तस्स महाबलस्स कुमारस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं पीइदाणं दलयंति तं०–अट्ठ हिरन्नकोडीओ अट्ठ सुवन्नकोडीओ अट्ठ मउडे मउडप्पवरे अट्ठ कुंडलजुए कुंडलजुयप्पवरे अट्ठ हारे हारप्पवरे अट्ठ अद्धहारे अद्धहारप्पवरे अट्ठ एगावलीओ एगावलिप्पवराओ एवं मुत्तावलीओ एवं कणगावलीओ एवं रयणावलीओ अट्ठ कडगजोए कडगजोयप्पवरे एवं तुडियजोए अट्ठ खोमजुयलाइं खोमजुयलप्पवराइं एवं वडगजुयलाइं एवं पट्टजुयलाइं एवं दुगुल्लजुयलाइं अट्ठ सिरीओ अट्ठ हिरीओ एवं धिईओ कित्तीओ बुद्धीओ लच्छीओ अट्ठ नंदाइं अट्ठ भद्दाइं अट्ठ तले तलप्पवरे सव्वरयणामए णियगवरभवणकेऊ अट्ठ झए झयप्पवरे अट्ठ वये वयप्पवरे दसगोसाहस्सिएणं वएणं अट्ठ नाडगाइं नाडगप्पवराइं बत्तीसबद्धेणं नाडएणं अट्ठ आसे आसप्पवरे सव्वरयणामए

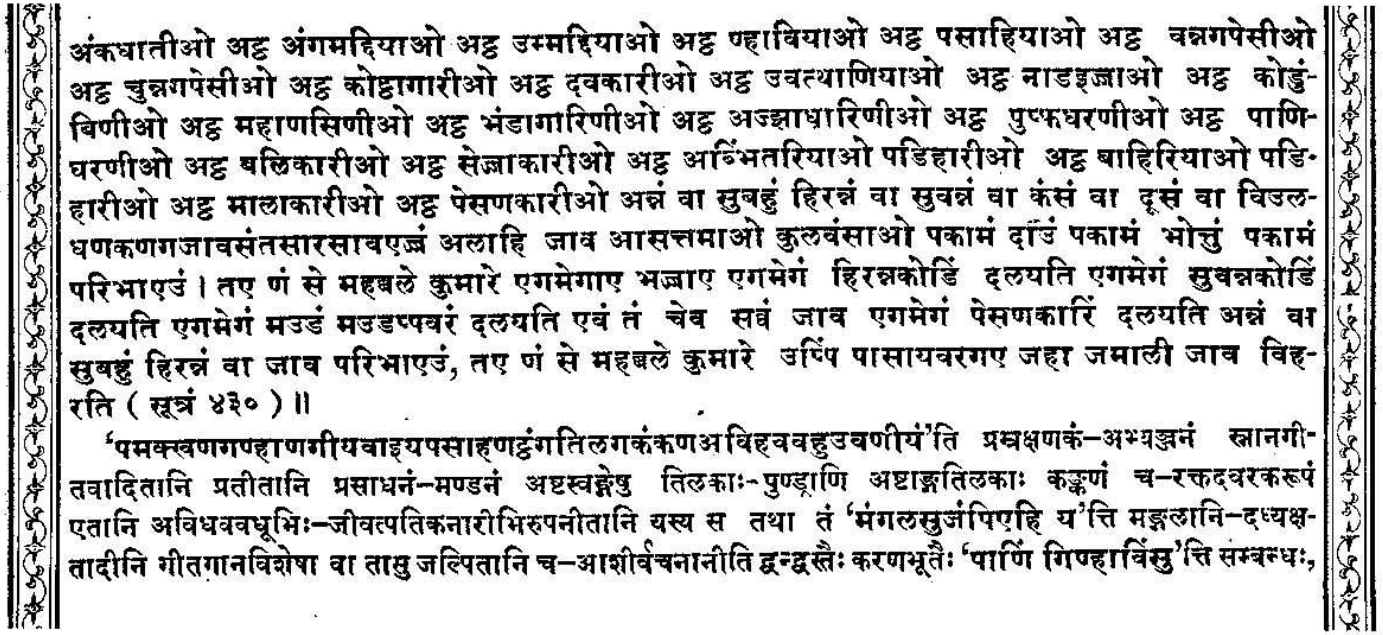
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

सिरिघरपडिरूवए अट्ठ हत्थी हत्थिप्पवरे सव्वरयणामए सिरिघरपडिरूवए अट्ठ जाणाइं जाणप्पवराइं अट्ठ जुगाइं जुगप्पवराइं एवं सिबियाओ एवं संदमाणीओ एवं गिल्लीओ थिल्लीओ अट्ठ वियडजाणाइं वियड-जाणप्पवराइं अट्ठरहे पारिजाणिए अट्ठ रहे संगामिए अट्ठ आसे आसप्पवरे अट्ठ हत्थी हत्थिप्पवरे अट्ठ गामे गामप्पवरे दसकुलसाहस्सिएणं गामेणं अट्ठ दासे दासप्पवरे एवं चेव दासीओ एवं किंकरे एवं कंचुइज्जे एवं वरिसघरे एवं महत्तरए अट्ठ सोवन्निए ओलंबणदीवे अट्ठ रुप्पामए ओलंबणदीवे अट्ठ सुवन्नरुप्पामए ओलं-बणदीवे अट्ठ सोवन्निए उक्कंचणदीवे एवं चेव तिन्निवि अट्ठ सोवन्निए थाले अट्ठ रुप्पमए थाले अट्ठ सुवन्नरुप्प-मए थाले अट्ठ सोवन्नियाओ पत्तीओ ३ अट्ठ सोवन्नियाइं थासयाइं ३ अट्ठ सोवन्नियाइं मंगल्लाइं ३ अट्ठ सोवन्नियाओ तलियाओ अट्ठ सोवन्नियाओ कावइआओ अट्ठ सोवन्निए अवएडए अट्ठ सोवन्नियाओ अव-यक्काओ अट्ठ सोवण्णिए पायपीढए ३ अट्ठ सोवन्नियाओ भिसियाओ अट्ठ सोवन्नियाओ करोडियाओ अट्ठ सोवन्निए पल्लंके अट्ठ सोवन्नियाओ पडिसेज्जाओ अट्ठ हंसासणाइं अट्ठ कोंचासणाइं एवं गरुलासणाइं उन्न-यासणाइं पणयासणाइं दीहासणाइं भद्दासणाइं पक्खासणाइं मगरासणाइं अट्ठ पउमासणाइं अट्ठ दिसासो-वत्थियासणाइं अट्ठ तेल्लसमुग्गे जहा रायप्पसेणइज्जे जाव अट्ठ सरिसवसमुग्गे अट्ठ खुज्जाओ जहा उववाइए जाव अट्ठ पारिसीओ अट्ठ छत्ते अट्ठ छत्तधारिओ चेडीओ अट्ठ चामराओ अट्ठ चामरधारीओ चेडीओ अट्ठ तालियंटे अट्ठ तालियंटधारीओ चेडीओ अट्ठ करोडियाधारीओ चेडीओ अट्ठ खीरधातीओ जाव अट्ठ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

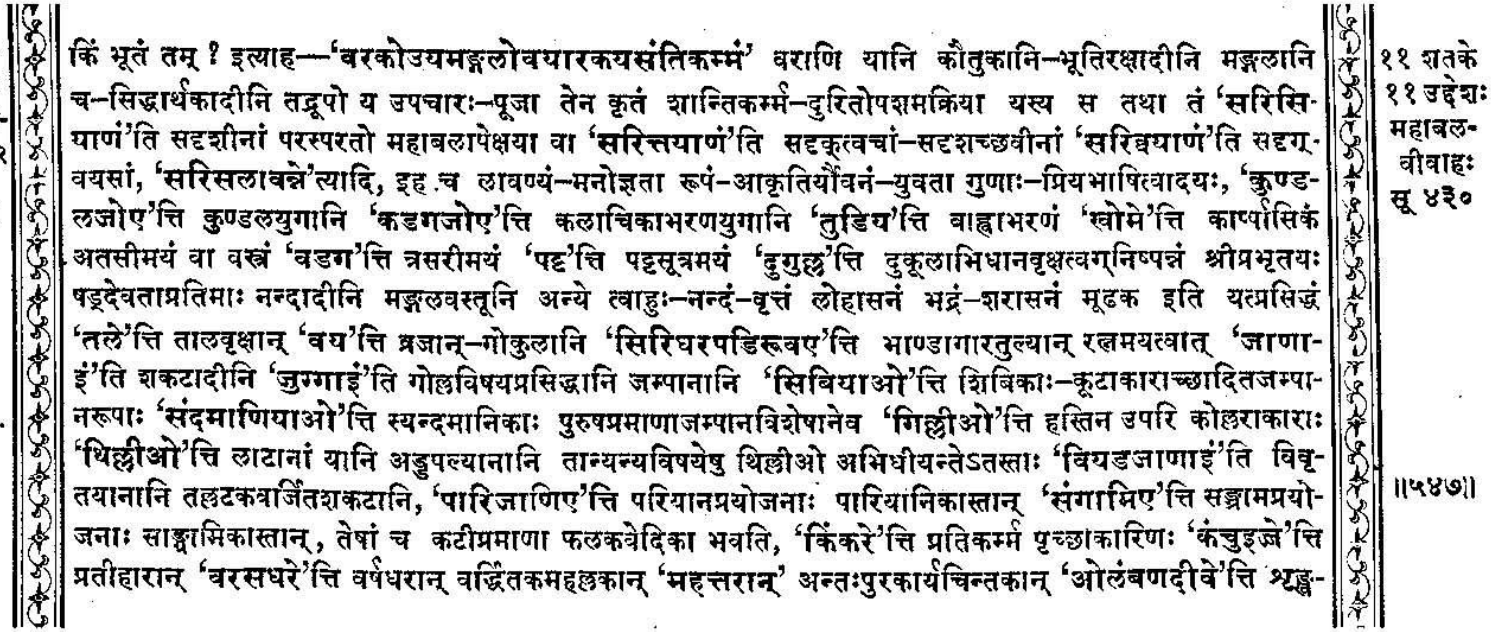
महाबलकुमार-कथा



अंकघातीओ अट्ठ अंगमद्दियाओ अट्ठ उम्मद्दियाओ अट्ठ ण्हाविआओ अट्ठ पसाहियाओ अट्ठ वन्नगपेसीओ अट्ठ चुन्नगपेसीओ अट्ठ कोट्ठागारीओ अट्ठ दवकारीओ अट्ठ उवत्थाणियाओ अट्ठ नाडइज्जाओ अट्ठ कोडुंबिणीओ अट्ठ महाणसिणीओ अट्ठ भंडागारिणीओ अट्ठ अज्झाधारिणीओ अट्ठ पुप्फधरणीओ अट्ठ पाणिधरणीओ अट्ठ बलिकारीओ अट्ठ सेज्जाकारीओ अट्ठ अब्भिंतरियाओ पडिहारीओ अट्ठ बाहिरियाओ पडिहारीओ अट्ठ मालाकारीओ अट्ठ पेसणकारीओ अन्नं वा सुबहुं हिरन्नं वा सुवन्नं वा कंसं वा दूसं वा विउलधणकणगजावसंतसारसावएज्जं अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पकामं दाउं पकामं भोत्तुं पकामं परिभाएउं। तए णं से महब्बले कुमारे एगमेगाए भज्जाए एगमेगं हिरन्नकोडिं दलयति एगमेगं सुवन्नकोडिं दलयति एगमेगं मउडं मउडप्पवरं दलयति एवं तं चेव सव्वं जाव एगमेगं पेसणकारिं दलयति अन्नं वा सुबहुं हिरन्नं वा जाव परिभाएउं, तए णं से महब्बले कुमारे उप्पिं पासायवरगए जहा जमाली जाव विहरति (सूत्रं ४३०) ॥

'पमक्खणगण्हाणगीयवाइयपसाहणट्ठंगतिलगकंकणअविहववहुउवणीयं'ति प्रम्रक्षणकं–अभ्यङ्गनं स्नानगीतवादितानि प्रतीतानि प्रसाधनं–मण्डनं अष्टस्वङ्गेषु तिलकाः-पुण्ड्राणि अष्टाङ्गतिलकाः कङ्कणं च–रक्तदवरकरूपं एतानि अविधववधूभिः–जीवत्पतिकनारीभिरुपनीतानि यस्य स तथा तं 'मंगलसुजंपिएहि य'त्ति मङ्गलानि–दध्यक्षतादीनि गीतगानविशेषा वा तासु जल्पितानि च–आशीर्वचनानीति द्वन्द्वस्तैः करणभूतैः 'पाणिं गिण्हाविंसु'त्ति सम्बन्धः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥५४७॥

किं भूतं तम् ? इत्याह—'वरकोउयमङ्गलोवयारकयसंतिकम्मं' वराणि यानि कौतुकानि–भूतिरक्षादीनि मङ्गलानि च–सिद्धार्थकादीनि तद्रूपो य उपचारः–पूजा तेन कृतं शान्तिकर्म्म–दुरितोपशमक्रिया यस्य स तथा तं 'सरिसियाणं'ति सदृशीनां परस्परतो महाबलापेक्षया वा 'सरित्तयाणं'ति सदृक्त्वचां–सदृशच्छवीनां 'सरिव्वयाणं'ति सदृग्वयसां, 'सरिसलावन्ने'त्यादि, इह च लावण्यं–मनोज्ञता रूपं–आकृतिर्यौवनं–युवता गुणाः–प्रियभाषित्वादयः, 'कुण्डलजोए'त्ति कुण्डलयुगानि 'कडगजोए'त्ति कलाचिकाभरणयुगानि 'तुडिय'त्ति बाह्वाभरणं 'खोमे'त्ति कार्प्पासिकं अतसीमयं वा वस्त्रं 'वडग'त्ति त्रसरीमयं 'पट्ट'त्ति पट्टसूत्रमयं 'दुगुल्ल'त्ति दुकूलाभिधानवृक्षत्वग्निष्पन्नं श्रीप्रभृतयः षड्देवताप्रतिमाः नन्दादीनि मङ्गलवस्तूनि अन्ये त्वाहुः–नन्दं–वृत्तं लोहासनं भद्रं–शरासनं मूढक इति यत्प्रसिद्धं 'तले'त्ति तालवृक्षान् 'वय'त्ति व्रजान्–गोकुलानि 'सिरिघरपडिरूवए'त्ति भाण्डागारतुल्यान् रत्नमयत्वात् 'जाणाइं'ति शकटादीनि 'जुग्गाइं'ति गोल्लविषयप्रसिद्धानि जम्पानानि 'सिबियाओ'त्ति शिबिकाः–कूटाकाराच्छादितजम्पानरूपाः 'संदमाणियाओ'त्ति स्यन्दमानिकाः पुरुषप्रमाणाजम्पानविशेषानेव 'गिल्लीओ'त्ति हस्तिन उपरि कोल्लराकाराः 'थिल्लीओ'त्ति लाटानां यानि अड्डपल्यानानि तान्यन्यविषयेषु थिल्लीओ अभिधीयन्तेऽतस्ताः 'वियडजाणाइं'ति विवृतयानानि तल्लटकवर्जितशकटानि, 'पारिजाणिए'त्ति परियानप्रयोजनाः पारियानिकास्तान् 'संगामिए'त्ति सङ्ग्रामप्रयोजनाः साङ्ग्रामिकास्तान्, तेषां च कटीप्रमाणा फलकवेदिका भवति, 'किंकरे'त्ति प्रतिकर्म्म पृच्छाकारिणः 'कंचुइज्जे'त्ति प्रतीहारान् 'वरसधरे'त्ति वर्षधरान् वर्द्धितकमहल्लकान् 'महत्तरान्' अन्तःपुरकार्यचिन्तकान् 'ओलंबणदीवे'त्ति शृङ्ग-

११ शतके ११ उद्देशः महाबल-वीवाहः सू ४३०

॥५४७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

लाबद्धदीपान् 'उक्कंचणदीवे'त्ति उत्कञ्चनदीपान् ऊर्द्ध्वदण्डवतः 'एवं चेव तिन्निवि'त्ति रूप्यसुवर्णसुवर्णरूप्यभेदात् 'पंजरदीवे'त्ति अभ्रपटलादिपञ्जरयुक्तान् 'थासगाइं'ति आदर्शकाकारान् 'तलियाओ'त्ति पात्रीविशेषान् 'कविचियाओ'त्ति कलाचिकाः 'अवएडए'त्ति तापिकाहस्तकान् 'अवयक्काओ'त्ति अवपाक्यास्तापिका इति संभाव्यते 'भिसियाओ'त्ति आसनविशेषान् 'पडिसेज्जाओ'त्ति उत्तरशय्याः हंसासनादीनि हंसाद्याकारोपलक्षितानि उन्नताद्याकारोपलक्षितानि च शब्दतोऽवगन्तव्यानि, 'जहा रायप्पसेणइज्जे'इत्यनेन यत्सूचितं तदिदम्—'अट्ठ कुट्ठसमुग्गे एवं पत्तचोयतगरएलहरियालहिंगुलयमणोसिलअंजणसमुग्गे'त्ति, 'जहा उववाइए'इत्यनेन यत्सूचितं तदिहैव देवानन्दाव्यतिकरेऽस्तीति तत एव दृश्यं, 'करोडियाधारीओ'त्ति स्थगिकाधारिणीः 'अट्ठ अंगमद्दियाओ अट्ठ ओमद्दियाओ'त्ति इहाङ्गमर्दिकानामुन्मर्दिकानां चाल्पबहुमर्दनकृतो विशेषः 'पसाहियाओ'त्ति मण्डनकारिणीः 'वन्नगपेसीओ'त्ति चन्दनपेषणकारिका हरितालादिपेषिका वा 'चुन्नगपेसीओ'त्ति इह चूर्णः–ताम्बूलचूर्णो गन्धद्रव्यचूर्णो वा 'दवकारीओ'त्ति परिहासकारिणीः 'उवत्थाणियाओ'त्ति या आस्थानगतानां समीपे वर्त्तन्ते 'नाडइज्जाओ'त्ति नाटकसम्बन्धिनीः 'कुडुंबिणीओ'त्ति पदातिरूपाः 'महाणसिणीओ'त्ति रसवतीकारिकाः शेषपदानि रूढिगम्यानि ।

तेणं कालेणं २ विमलस्स अरहओ पओप्पए धम्मघोसे नामं अणगारे जाइसंपन्ने वन्नओ जहा केसिसामिस्स जाव पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूतिज्जमाणे जेणेव हत्थिणागपुरे नगरे जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ २ अहापडिरूवं उग्गहं ओगिण्हति २ संज-

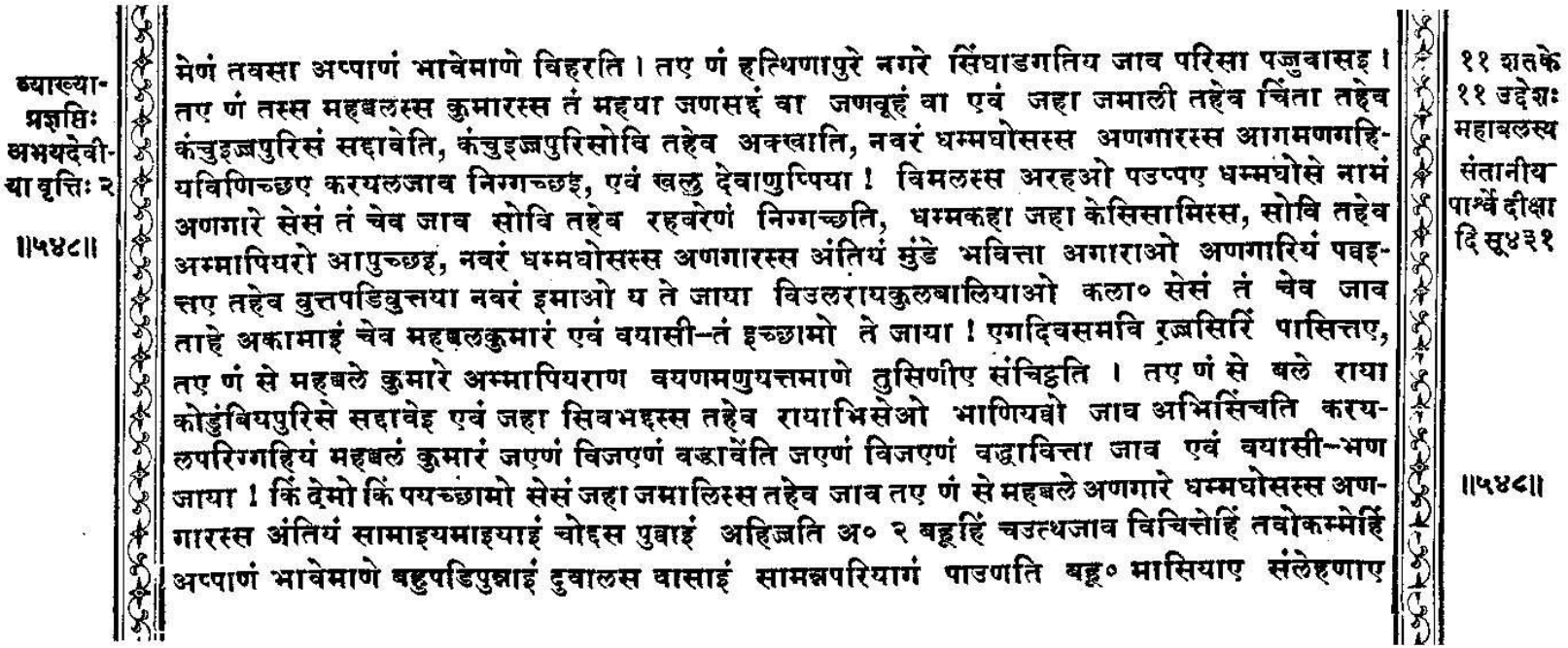
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४३१--४३२]

दीप अनुक्रम [५२३--५२४]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५४८॥

मेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति । तए णं हत्थिणापुरे नगरे सिंघाडगतिय जाव परिसा पज्जुवासइ । तए णं तस्स महब्बलस्स कुमारस्स तं महया जणसद्दं वा जणवूहं वा एवं जहा जमाली तहेव चिंता तहेव कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेति, कंचुइज्जपुरिसोवि तहेव अक्खाति, नवरं धम्मघोसस्स अणगारस्स आगमणगहियविणिच्छए करयलजाव निग्गच्छइ, एवं खलु देवाणुप्पिया ! विमलस्स अरहओ पउप्पए धम्मघोसे नामं अणगारे सेसं तं चेव जाव सोवि तहेव रहवरेणं निग्गच्छति, धम्मकहा जहा केसिसामिस्स, सोवि तहेव अम्मापियरो आपुच्छइ, नवरं धम्मघोसस्स अणगारस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पवइस्सए तहेव वुत्तपडिवुत्तया नवरं इमाओ य ते जाया विउलरायकुलबालियाओ कला० सेसं तं चेव जाव ताहे अकामाइं चेव महब्बलकुमारं एवं वयासी–तं इच्छामो ते जाया ! एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासित्तए, तए णं से महब्बले कुमारे अम्मापियराण वयणमणुयत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठति । तए णं से बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ एवं जहा सिवभद्दस्स तहेव रायाभिसेओ भाणियव्वो जाव अभिसिंचति करयलपरिग्गहियं महब्बलं कुमारं जएणं विजएणं वद्धावेंति जएणं विजएणं वद्धावित्ता जाव एवं वयासी–भण जाया ! किं देमो किं पयच्छामो सेसं जहा जमालिस्स तहेव जाव तए णं से महब्बले अणगारे धम्मघोसस्स अणगारस्स अंतियं सामाइयमाइयाइं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जति अ० २ बहूहिं चउत्थजाव विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुन्नाइं दुवालस वासाइं सामन्नपरियागं पाउणति बहू० मासियाए संलेहणाए

११ शतके ११ उद्देशः महाबलस्य संतानीय पार्श्वे दीक्षा दि सू४३१

॥५४८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४३१--४३२]

दीप अनुक्रम [५२३--५२४]

सट्ठिभत्ताइं अणसणाए० आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदसूरिय जहा अम्मडो जाव बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववन्ने, तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता, तत्थ णं महबलस्सवि दस सागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता, से णं तुमं सुदंसणा ! बंभलोगे कप्पे दस सागरोवमाइं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्ता ताओ चेव देवलोगाओ आउक्खएणं ३ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव वाणियगामे नगरे सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाए (सूत्रं ४३१) ॥ तए णं तुमे सुदंसणा ! उम्मुक्कबालभावेणं विन्नायपरिणयमेत्तेणं जोव्वणगमणुप्पत्तेणं तहारूवाणं थेराणं अंतियं केवलिपन्नत्ते धम्मे निसंते, सेऽविय धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए तं सुट्ठु णं तुमं सुदंसणा ! इदाणिं पकरेसि। से तेणट्ठेणं सुदंसणा ! एवं वुच्चइ–अत्थि णं एतेसिं पलिओवमसागरोवमाणं खयेति वा अवचयेति वा, तए णं तस्स सुदंसणस्स सेट्ठिस्स समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म सुभेणं अज्झवसाणेणं सुभेणं परिणामेणं लेसाहिं विसुज्झमाणीहिं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स सन्नीपुव्वे जातीसरणे समुप्पन्ने एयमट्ठं सम्मं अभिसमेति, तए णं से सुदंसणे सेट्ठी समणेणं भगवया महावीरेणं संभारियपुव्वभवे दुगुणाणीयसद्धसंवेगे आणंदंसुपुन्ननयणे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आ० २ वं० नमं० २ त्ता एवं वयासी–एवमेयं भंते ! जाव से जहेयं तुज्झे वदहत्तिकट्टु उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमइ सेसं जहा उसभदत्तस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, नवरं चोद्दस पुव्वाइं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४३१--४३२]

दीप अनुक्रम [५२३--५२४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५४९॥

अहिज्जइ, बहुपडिपुन्नाइं दुवालस वासाइं सामन्नपरियागं पाउणइ, सेसं तं चेव । सेवं भंते ! सेवं भंते ! ॥ (सूत्रं ४३२) ॥ महबलो समत्तो ॥ ११–११ ॥

'विमलस्स'त्ति अस्यामवसर्पिण्यां त्रयोदशजिनेन्द्रस्य 'पउप्पए'त्ति प्रपौत्रकः–प्रशिष्यः अथवा प्रपौत्रिके–शिष्य-सन्ताने 'जहा केसिसामिस्स'त्ति यथा केशिनाम्न आचार्यस्य राजप्रश्नकृताधीतस्य वर्णक उक्तस्तथाऽस्य वाच्यः, स च 'कुलसंपन्ने बलसंपन्ने रूवसंपन्ने विणयसंपन्ने'इत्यादिरिति, 'वुत्तपडिवुत्तय'त्ति उक्तप्रत्युक्तिका भणितानि मातुः प्रतिभणितानि च महाबलस्येत्यर्थः, नवरमित्यादि, जमालिचरिते हि विपुलकुलबालिका इत्यधीतमिह तु विपुलराजकुलबालिका इत्येतदध्येतव्यं, कला इत्यनेन चेदं सूचितं–'कलाकुसलसवकाललालियसुहोइयाओ'त्ति, 'सिवभद्दस्स'त्ति एकादशशतनवमोद्देशकाभिहितस्य शिवराजर्षिपुत्रस्य, 'जहा अम्मडो'त्ति यथौपपातिके अम्मडोऽधीतस्तथाऽयमिह वाच्यः, तत्र च यावत्करणादेतत्सूत्रमेवं दृश्यं—'गहगणनक्खत्ततारारूवाणं बहूइं जोयणाइं बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं जोयणसयसहस्साइं बहूई जोयणकोडाकोडीओ उड्ढं दूरं उप्पइत्ता सोहम्मीसाणसणंकुमारमाहिंदे कप्पे वीईवइत्त'त्ति, इह च किल चतुर्दशपूर्वधरस्य जघन्यतोऽपि लान्तके उपपात इष्यते, "जावंति लंतगाओ चउदसपुव्वी जहन्नउववाओ"त्ति वचनादेतस्य चतुर्दशपूर्वधरस्यापि यद् ब्रह्मलोके उपपात उक्तस्तत् केनापि मनाग् विस्मरणादिना प्रकारेण चतुर्दशपूर्वाणामपरिपूर्णत्वादिति संभावयन्तीति । 'सन्नी पुव्वजाईसरणे'त्ति सञ्ज्ञिरूपा या पूर्वा जातिस्तस्याः स्मरणं यत्तत्तथा 'अहिसमेइ'त्ति अधिगच्छतीत्यर्थः 'दुगुणाणीयसद्धसंवेगे'त्ति पूर्वकालापेक्षया द्विगुणावा-

११ शतके ११ उद्देशः महाबल-दीक्षादि सू ४३१ सुदर्शन दीक्षादि सू ४३२

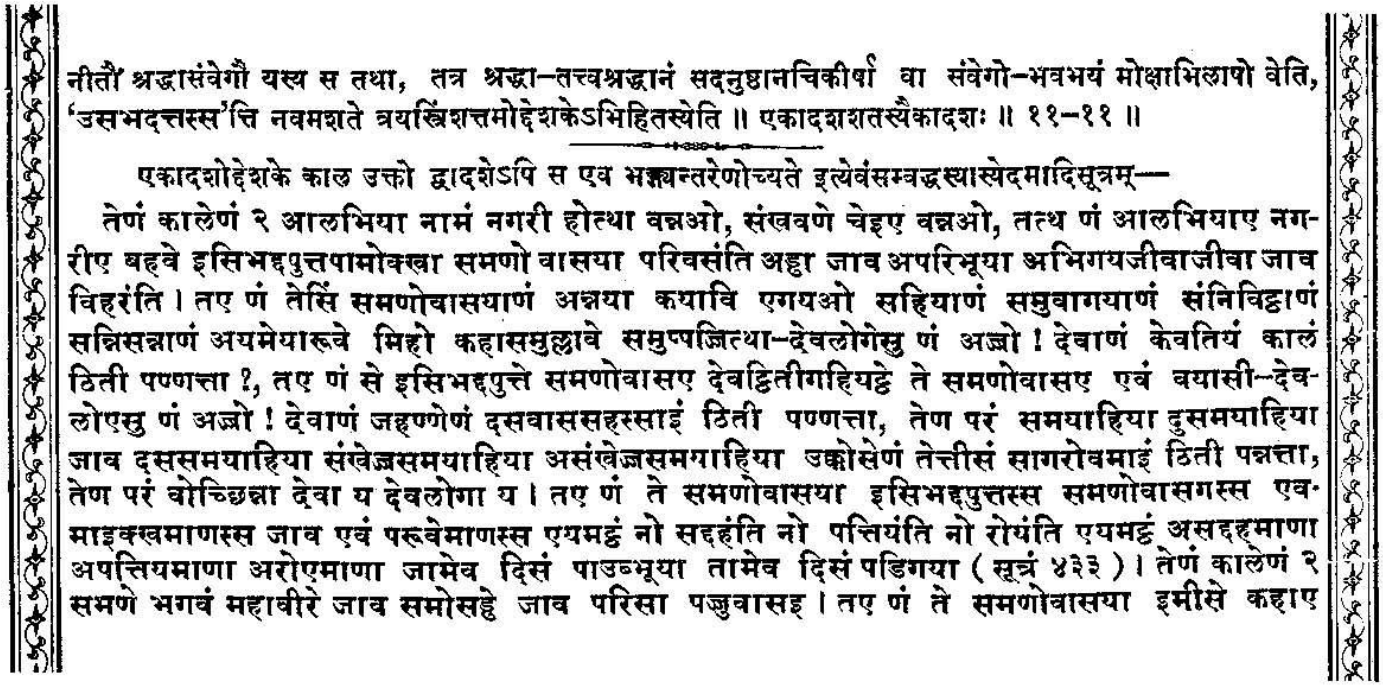
॥५४९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाबलकुमार-कथा

प्रत सूत्रांक [४३१--४३२]

दीप अनुक्रम [५२३--५२४]



नीतौ श्रद्धासंवेगौ यस्य स तथा, तत्र श्रद्धा–तत्त्वश्रद्धानं सदनुष्ठानचिकीर्षा वा संवेगो–भवभयं मोक्षाभिलाषो वेति, 'उसभदत्तस्स'त्ति नवमशते त्रयस्त्रिंशत्तमोद्देशकेऽभिहितस्येति ॥ एकादशशतस्यैकादशः ॥ ११–११ ॥

एकादशोद्देशके काल उक्तो द्वादशेऽपि स एव भङ्ग्यन्तरेणोच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ आलभिया नामं नगरी होत्था वन्नओ, संखवणे चेइए वन्नओ, तत्थ णं आलभियाए नगरीए बहवे इसिभद्दपुत्तपामोक्खा समणोवासया परिवसंति अड्ढा जाव अपरिभूया अभिगयजीवाजीवा जाव विहरंति। तए णं तेसिं समणोवासयाणं अन्नया कयावि एगयओ सहियाणं समुवागयाणं संनिविट्ठाणं सन्निसन्नाणं अयमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था–देवलोगेसु णं अज्जो ! देवाणं केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ?, तए णं से इसिभद्दपुत्ते समणोवासए देवट्ठितीगहियट्ठे ते समणोवासए एवं वयासी–देवलोएसु णं अज्जो ! देवाणं जहण्णेणं दसवाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता, तेण परं समयाहिया दुसमयाहिया जाव दससमयाहिया संखेज्जसमयाहिया असंखेज्जसमयाहिया उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता, तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य। तए णं ते समणोवासया इसिभद्दपुत्तस्स समणोवासगस्स एवमाइक्खमाणस्स जाव एवं परूवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहंति नो पत्तियंति नो रोयंति एयमट्ठं असद्दहमाणा अपत्तियमाणा अरोएमाणा जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया (सूत्रं ४३३)। तेणं कालेणं २ समणे भगवं महावीरे जाव समोसढे जाव परिसा पज्जुवासइ। तए णं ते समणोवासया इमीसे कहाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकादशमे शतके एकादशम-उद्देशकः परिसमाप्तः

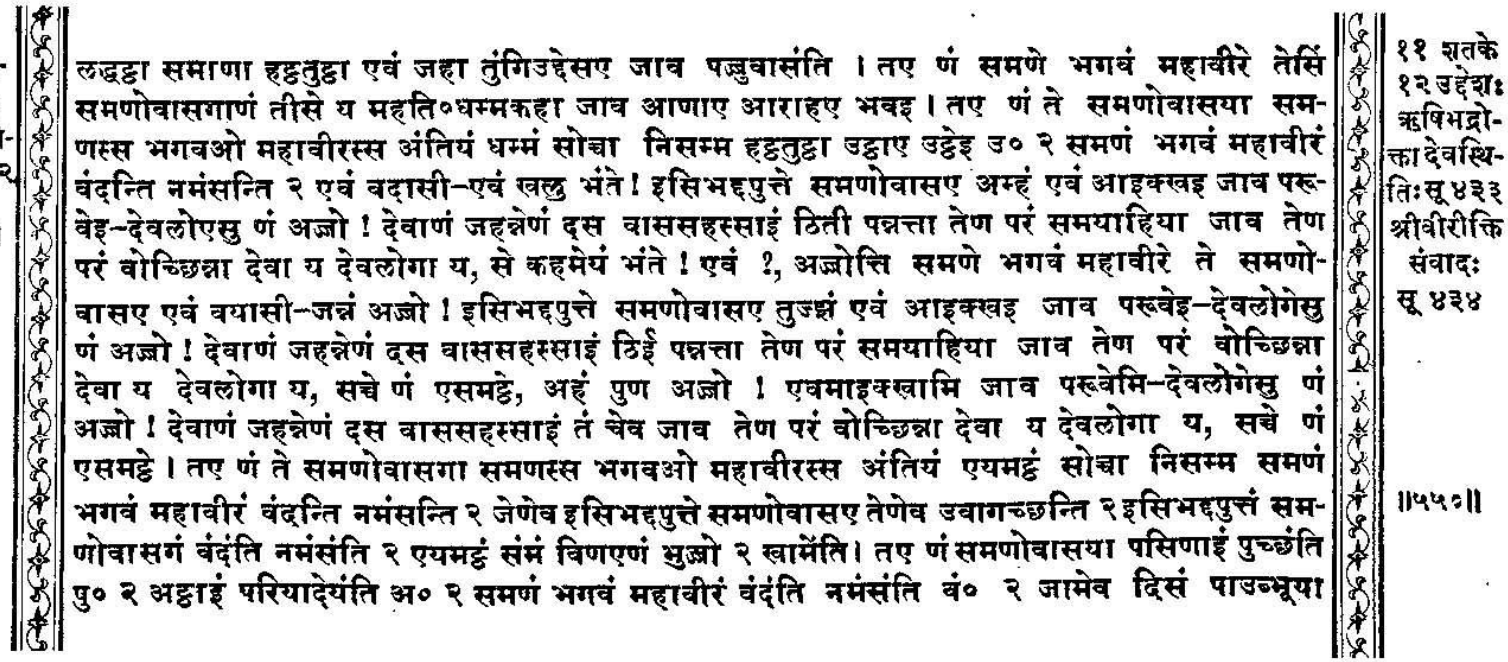
अथ एकादशमे शतके द्वादशम-उद्देशकः आरभ्यते

ऋषिभद्रपुत्र अनगारः कृता प्ररुपणा एवं तस्य आगामी-भवाः

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४३३--४३६]

दीप अनुक्रम [५२५--५२८]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५५०॥

लद्धट्ठा समाणा हट्ठतुट्ठा एवं जहा तुंगिउद्देसए जाव पज्जुवासंति । तए णं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं तीसे य महति०धम्मकहा जाव आणाए आराहए भवइ । तए णं ते समणोवासया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा उट्ठाए उट्ठेइ उ० २ समणं भगवं महावीरं वंदन्ति नमंसन्ति २ एवं वदासी–एवं खलु भंते! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए अम्हं एवं आइक्खइ जाव परूवेइ–देवलोएसु णं अज्जो ! देवाणं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं ठिती पन्नत्ता तेण परं समयाहिया जाव तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य, से कहमेयं भंते ! एवं ?, अज्जोत्ति समणे भगवं महावीरे ते समणोवासए एवं वयासी–जन्नं अज्जो ! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए तुज्झं एवं आइक्खइ जाव परूवेइ–देवलोगेसु णं अज्जो ! देवाणं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं ठिई पन्नत्ता तेण परं समयाहिया जाव तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य, सच्चे णं एसमट्ठे, अहं पुण अज्जो ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि–देवलोगेसु णं अज्जो ! देवाणं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं तं चेव जाव तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य, सच्चे णं एसमट्ठे । तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म समणं भगवं महावीरं वंदन्ति नमंसन्ति २ जेणेव इसिभद्दपुत्ते समणोवासए तेणेव उवागच्छन्ति २ इसिभद्दपुत्तं समणोवासगं वंदंति नमंसंति २ एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो २ खामेंति। तए णं समणोवासया पसिणाइं पुच्छंति पु० २ अट्ठाइं परियादेयंति अ० २ समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति वं० २ जामेव दिसं पाउब्भूया

११ शतके १२ उद्देशः ऋषिभद्रोक्ता देवस्थितिः सू ४३३ श्रीवीरोक्ति संवादः सू ४३४

॥५५०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषिभद्रपुत्र अनगार: कृता प्ररुपणा एवं तस्य आगामी-भवा:

प्रत सूत्रांक [४३३--४३६]

दीप अनुक्रम [५२५--५२८]

तामेव दिसं पडिगया (सूत्रं ४३४) । भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ वं० २ एवं वयासी–पभू णं भंते ! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे, गोयमा ! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए बहूहिं सीलव्वयगुणवयवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणिहिति ब० २ मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेहिति मा० २ सट्ठिं भत्ताइं अणसणाइं छेदेहिति २ आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे अरुणाभे विमाणे देवत्ताए उववज्जिहिति, तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता, तत्थ णं इसिभद्दपुत्तस्सवि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिती भविस्सति । से णं भंते ! इसिभद्दपुत्ते देवे तातो देवलोगाओ आउक्खएणं भव० ठिइक्खएणं जाव कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहेति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं गोयमे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ (सूत्रं ४३५) । तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयावि आलभियाओ नगरीओ संखवणाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ । तेणं कालेणं तेणं समएणं आलभिया नामं नगरी होत्था वन्नओ, तत्थ णं संखवणे णामं चेइए होत्था वन्नओ, तस्स णं संखवणस्स अदूरसामंते पोग्गले नामं परिव्वायए परिवसति रिउव्वेदजजुरवेदजावनएसु सुपरिनिट्ठिए छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढ

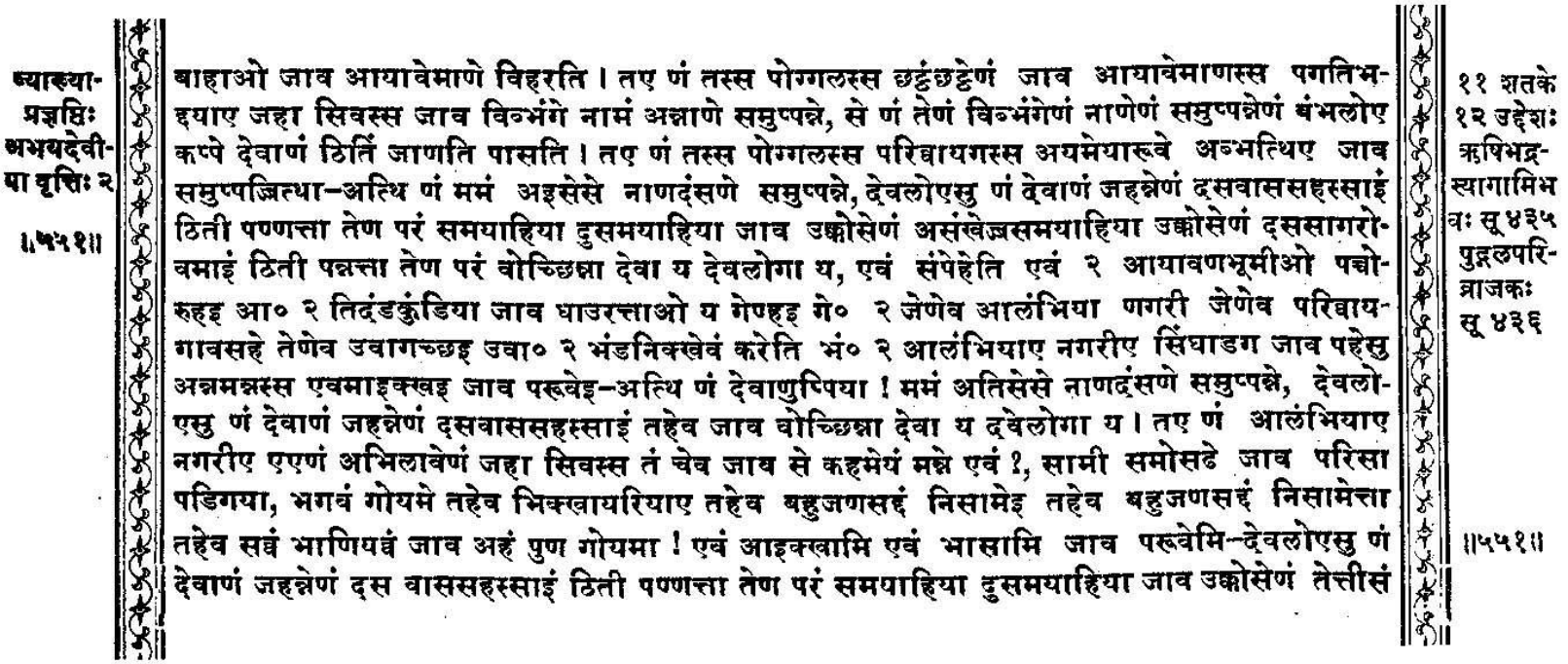
Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषिभद्रपुत्र अनगार: कृता प्ररुपणा एवं तस्य आगामी-भवा:,
पुद्गल नामक परिव्राजकस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४३३--४३६]

दीप अनुक्रम [५२५--५२८]



व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५५१॥

बाहाओ जाव आयावेमाणे विहरति। तए णं तस्स पोग्गलस्स छट्ठंछट्ठेणं जाव आयावेमाणस्स पगतिभ-द्दयाए जहा सिवस्स जाव विब्भंगे नामं अन्नाणे समुप्पन्ने, से णं तेणं विब्भंगेणं नाणेणं समुप्पन्नेणं बंभलोए कप्पे देवाणं ठितिं जाणति पासति। तए णं तस्स पोग्गलस्स परिव्वायगस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–अत्थि णं ममं अइसेसे नाणदंसणे समुप्पन्ने, देवलोएसु णं देवाणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता तेण परं समयाहिया दुसमयाहिया जाव उक्कोसेणं असंखेज्जसमयाहिया उक्कोसेणं दससागरो-वमाइं ठिती पन्नत्ता तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य, एवं संपेहेति एवं २ आयावणभूमीओ पचो-रुहइ आ० २ तिदंडकुंडिया जाव धाउरत्ताओ य गेण्हइ गे० २ जेणेव आलंभिया णगरी जेणेव परिव्वाय-गावसहे तेणेव उवागच्छइ उवा० २ भंडनिक्खेवं करेति भं० २ आलंभियाए नगरीए सिंघाडग जाव पहेसु अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेइ–अत्थि णं देवाणुप्पिया ! ममं अतिसेसे नाणदंसणे समुप्पन्ने, देवलो-एसु णं देवाणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं तहेव जाव वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य। तए णं आलंभियाए नगरीए एएणं अभिलावेणं जहा सिवस्स तं चेव जाव से कहमेयं मन्ने एवं ?, सामी समोसढे जाव परिसा पडिगया, भगवं गोयमे तहेव भिक्खायरियाए तहेव बहुजणसद्दं निसामेइ तहेव बहुजणसद्दं निसामेत्ता तहेव सव्वं भाणियव्वं जाव अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि एवं भासामि जाव परूवेमि–देवलोएसु णं देवाणं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता तेण परं समयाहिया दुसमयाहिया जाव उक्कोसेणं तेत्तीसं

११ शतके १२ उद्देशः ऋषिभद्र-स्यागामिभ वः सू ४३५ पुद्गलपरि-व्राजकः सू ४३६

॥५५१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषिभद्रपुत्र अनगार: कृता प्ररुपणा एवं तस्य आगामी-भवा:
पुद्गल नामक परिव्राजकस्य कथा

सागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता, तेण परं वोच्छिन्ना देवा य देवलोगा य। अत्थि णं भंते ! सोहम्मे कप्पे दव्वाइं सवन्नाइंपि अवन्नाइंपि तहेव जाव हंता अत्थि, एवं ईसाणेवि, एवं जाव अच्चुए, एवं गेवेज्जविमाणेसु अणुत्तरविमाणेसुवि, ईसिपब्भाराएवि जाव हंता अत्थि, तए णं सा महतिमहालिया जाव पडिगया, तए णं आलंभियाए नगरीए सिंघाडगतिय० अवसेसं जहा सिवस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणे नवरं तिदंडकुंडियं जाव धाउरत्तवत्थपरिहिए परिवडियविब्भंगे आलंभियं नगरं मज्झं० निग्गच्छति जाव उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमति अ० २ तिदंडकुंडियं च जहा खंदओ जाव पवइओ सेसं जहा सिवस्स जाव अव्वाबाहं सोक्खं अणुभवंति सासयं सिद्धा। सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ४३६) ॥ ११–१२ ॥ एक्कारसमं सयं समत्तं ॥ ११ ॥

'तेण'मित्यादि, 'एगओ'त्ति एकत्र 'समुवागयाणं'ति समायातानां 'सहियाणं'ति मिलितानां 'समुविट्ठाणं'ति आसनग्रहणेन 'सन्निसन्नाणं'ति संनिहिततया निषण्णानां 'मिहो'त्ति परस्परं 'देवट्ठितिगहियट्ठे'त्ति देवस्थितिविषये गृहीतार्थो–गृहीतपरमार्थो यः स तथा। 'तुंगिउद्देसए'त्ति द्वितीयशतस्य पञ्चमे ॥ एकादशशते द्वादशः ॥ ११–१२ ॥ ॥ एकादशं शतं समाप्तम् ॥ ११ ॥

एकादशशतमेवं व्याख्यातमबुद्धिनाऽपि यन्मयका। हेतुस्तत्राग्रहिता श्रीवाग्देवीप्रसादो वा ॥ १ ॥

॥ इति श्रीमदभयदेवसूरिवरविवृतायां भगवत्यां शतकमेकादशम् ॥

अत्र एकादशमे शतके द्वादशम्-उद्देशकः परिसमाप्तः तत् समाप्ते एकादशं शतकं अपि समाप्तं

Jain Education www.jainelibrary.org

भाग 9	भगवती-अंगसूत्र- [५/२] मूलं एवं अभयदेवसूरिजी रचिता टीका परिसमाप्ता: **मूल संशोधकः सम्पादकश्च पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब** किंचित् वैशिष्ट्य समर्पितेन सह पुनः संकलनकर्ता मुनि दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
01	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १,२		३१४
02	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- ३ से ९, श्रुतस्कन्ध- २		५८६
03	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १ से १३		४९८
04	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन १४ से १६, श्रुतस्कन्ध-२		३९२
05	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ स्थान- १ से ४		५९४
06	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ स्थान- ५ से १० संपूर्ण		४९४
07	आगम ०४ समवाय मूलं एवं वृत्ति.		३३८
08	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ शतक- १ से ६		५९२
09	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ शतक- ७ से ११		५५२
10	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ शतक- १२ से २०		५१४
11	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ शतक- २१ से ४१ संपूर्ण		३८४
12	आगम ०६ ज्ञाताधर्मकथा मूलं एवं वृत्ति.		५२२
13	आगम-७,८,९,१०उपासकदशा, अंतकृतदशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण मूलं एवं वृत्ति.		५३८
14	आगम-११,१२, विपाक, उववाई मूलं एवं वृत्ति.		३८४
15	आगम १३ राजप्रश्नीय मूलं एवं वृत्ति.		३१४
16	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १ से १३८		४८०
17	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १३९ से प्रतिपत्ती-१० संपूर्ण		४८८
18	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. पद- १ से ५		४२६
19	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. पद- ६ से २२		५१४
20	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. पद- २३ से ३६ संपूर्ण		३३६
21	आगम १६ सूर्यप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१०

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
22	आगम १७ चन्द्रप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१४
23	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- १ एवं २.		३७६
24	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ३ एवं ४.		४२६
25	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ५ से ७.		३४४
26	आगम १९ थी ३२ निरयावलिका, कल्पवतंसिका, पुष्पिका, पुष्पचूलिका, वृष्णिदशा, चतु:शरण, आतुरपरत्याख्यान, महाप्रत्याख्यान, भक्तपरिज्ञा, तंदुलवैचारिक, संस्तारक, गच्छाचार, गणिविद्या, देवेन्द्रस्तव मूलं एवं छाया		३१२
27	आगम ३३ थी ३९ मरणसमाधि मूलं एवं छाया, निशीथ, ब्रुहत्कल्प, व्यवहार, दशाश्रुतस्कंध, जीतकल्प/पंचकल्प, महानिशीथ मूलं एव		३३०
28	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, निर्युक्ति- १ से ५२१		४६६
29	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, निर्युक्ति- ५२२ से ९५१		४४२
30	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ निर्युक्ति- ९५२ से १२७३ अपूर्ण, [अध्ययन- १ से ४ अपूर्ण]		४६४
31	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ निर्युक्ति- १२७३ अपूर्ण से १६२३, [अध्ययन- ४ अपूर्ण से ६ संपूर्ण]		४२६
32	आगम ४१/१ ओघनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		४७२
33	आगम ४१/२ पिंडनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		३७६
34	आगम ४२ दशवैकालिक मूलं एवं वृत्ति.		५९०
35	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, अध्ययन- १ से ५		५२२
36	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, अध्ययन- ६ से २१		४८२
37	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-३, अध्ययन- २२ से ३६		४६६
38	आगम ४४ नन्दिसूत्र मूलं एवं वृत्ति.		५२८
39	आगम ४५ अनुयोगद्वार् मूलं एवं वृत्ति.		५६०
40	कल्प[बारसा]सूत्र... चतु:शरण, तन्दुलवैचारिक, गच्छाचार मूलं एवं वृत्ति.		३९४

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरूभ्यो नमः

05/2

पूज्य आगमोध्धारक आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरेण संशोधितः संपादितश्च

“भगवती सूत्र”भाग-२ [मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचित वृत्तिः] शतक- ७ से ११

(किंचित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

मुनि दीपरत्नसागरेण पुनः संकलितः

“भगवती” मूलं एवं वृत्तिः” नामेण परिसमाप्तः

“सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि” श्रेणि, भाग- 9



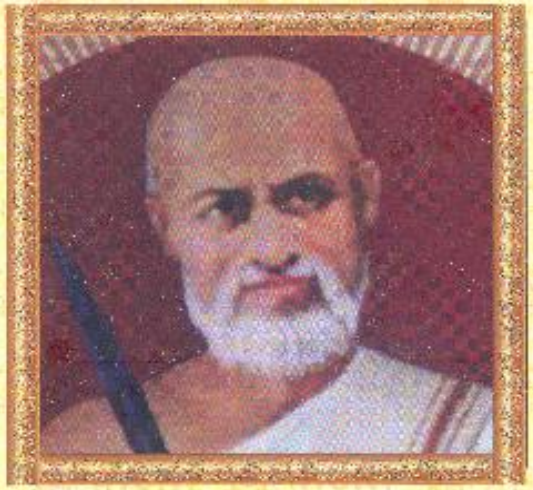
आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

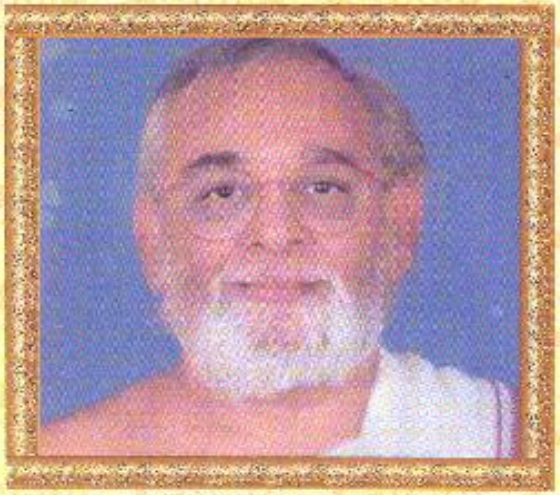
सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक



पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

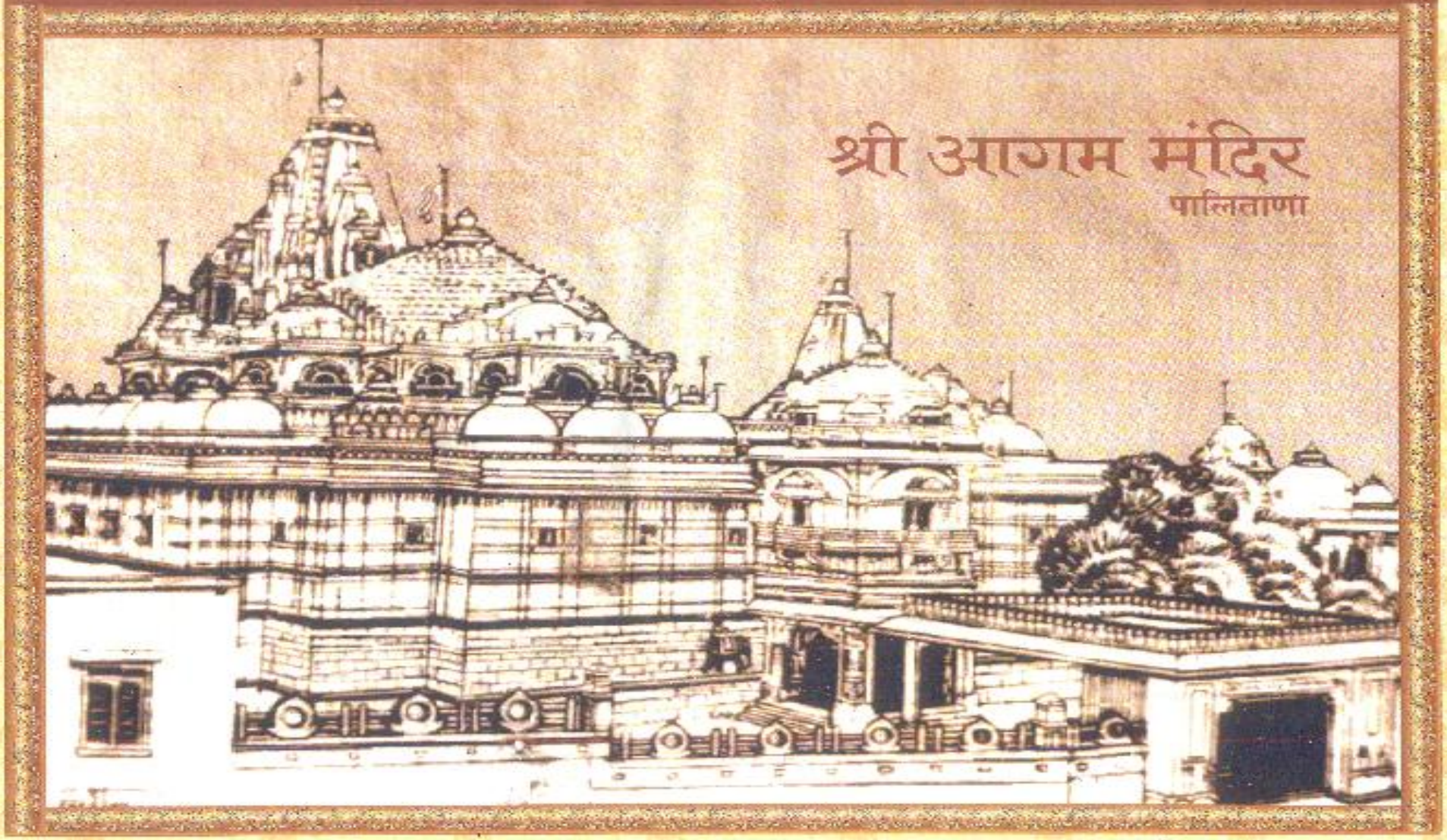
अभिनव-संकलनकर्ता

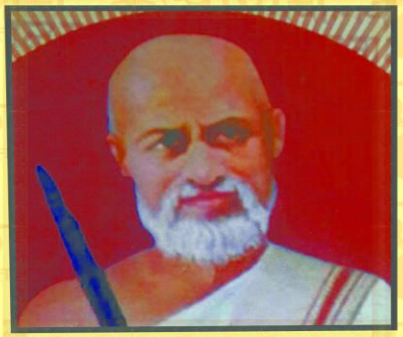


आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदाबाद Mo 9825598855 / 9825306275

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता





मूल संशोधक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य

श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

आगम - ५

'भगवती' मूलं एवं वृत्तिः [२]

अभिनव-संकलनकर्ता

आगम दिवाकर **मुनिश्री दीपरत्नसागरजी**

[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

